कृष्णदास संस्कृत सीरीज

४३

सचित्र-

मानसागरी

'मनोरमा' हिन्दी व्याख्यया समलङ्कृता

सम्पादकोऽनुवादकश्च

डा० रामचन्द्रपाण्डेयः

रीडर, ज्यौतिषविभाग

प्राच्यविद्या धर्मविज्ञान संकाय

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

कृष्णदास अकादमी, वाराणसी-२२१००१

१९८३

प्रकाशक : कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी

संस्करण : प्रथम, वि० सं० २०४०

मूल्य रु० : Rs 40 P 00

Rs 40 P 00

पो० बा० ११८

चौक, (चित्रा सिनेमा बिल्डिंग), वाराणसी–२२१००१

(भारत)

अपरं च प्राप्तिस्थानम्

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस

के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन

पो० बा० ८, वाराणसी–२२१००१ (भारत)

फोन : ६३१४५

KRISHNADAS SANSKRIT SERIES
43

Sachitra-

MĀNASĀGARĪ

*[AN ASTROLOGICAL TEXT
WITH
MANORAMA HINDI COMMENTARY]*

Edited and Translated
by
Dr. Ramchandra Pandey
Reader in Jyotish
Faculty of Oriental Learning and Theology
Banaras Hindu University
VARANASI

KRISHNADAS ACADEMY
VARANASI–221001
1983

Oriental Publishers & Distributors

Post Box No. 118

Chowk, (Chitra Cinema Building), Varanasi–221001

(INDIA)

First Edition

Price Rs. [redacted]–00

Rs 40P. 00

Also can be had from

Chowkhamba Sanskrit Series Office

K. 37/99, Gopal Mandir Lane

POST BOX 8

Varanasi–221001 (India)

Phone : 63145

भूमिका

आकाशीय ज्योतिष्पिण्डों का विवेचन भारतीय ज्योतिषशास्त्र में विविध प्रकार से किया गया है। ग्रहों का स्वरूप, कक्षा, परिभ्रमणकाल, उदय-अस्त आदि विषयों का गणितशास्त्रीय विश्लेषण आज भी अपना विशिष्ट स्थान रखता है। बिना किसी यन्त्र या उपकरण के अभीष्ट समय मे समस्त ग्रहों की स्थिति ज्ञात करने की क्षमता केवल भारतीय ज्योतिष शास्त्र में है। यद्यपि ग्रहों के सम्बन्ध में भौतिक एवं सैद्धान्तिक ज्ञान हेतु आधुनक विज्ञान भी सतत प्रयत्नशील है; परन्तु इनका समस्त प्रयास यन्त्राधीन होन के कारण सर्वजन सुलभ नहीं है। भारतीय ज्योतिष-शास्त्र की दूसरी तथा महत्त्वपूर्ण विशेषता है इन आकाशीय पिण्डों का पृथ्वी अथवा पृथ्वी वासियों पर पड़ने वाले प्रभाव का तलस्पर्शी विवेचन। भारतीय ज्योतिष शास्त्र की यही विशेषता इसकी लोकप्रियता का हेतु है एव इसे जन-मानस से जोड़ती है। करोड़ों मील दूर स्थित ग्रहों का हमसे कितना निकटतम सम्बन्ध है तथा हम उनसे कितने अधिक प्रभावित हैं इस गूढ़ ग्रन्थि को सुलझाने का श्रेय भारतीय ज्योतिष को है।

अनन्त आकाश में बिखरे हुये तारों के बीच हमारे सौर मण्डल के ग्रह भी रात्रि में टिमटिमाते हुए दिखाई देते हैं। उन्हीं में हमारी पृथ्वी भी प्रकाशित ग्रह के रूप में अन्य ग्रह पिण्डों से देखी जा सकती है। जैसे अन्य ग्रहपिण्डों की रचना हुई है लगभग उन्हीं तत्त्वों से पृथ्वी की रचना हुई है तथा पृथ्वी भी सूर्य की परिक्रमा उसी प्रकार करती है जैसे अन्य ग्रह पिण्ड। इस सौर परिवार की रचना के सम्बन्ध में भगवान भास्कर ने सूर्य सिद्धान्त में लिखा है—

> अग्निसोमौ भानुचन्द्रौ ततस्त्वङ्गारकादयः।
> तेजो भूखाम्बुवातेभ्यः क्रमशः पञ्च जज्ञिरे ॥ सू. सि. १२।२४।

अभिप्राय यह कि सूर्य पूर्ण रूप से तैजस है क्योंकि इसकी उत्पत्ति अग्नि तत्त्व से हुई है। आधुनिक अनुसन्धानों से भी ज्ञात होता है कि सूर्य हीलियम नामक दाहक गैस का समूह है। सूर्य मण्डल के चारों तरफ लाखों मील लम्बी-लम्बी ज्वालायें निकलती रहती हैं तथा बिम्ब के मध्य में भी ज्वालाओं का तूफान उठता रहा है।

चन्द्रमा सोमात्मक है। सोम शब्द का प्रयोग वैदिक[1] साहित्य में कई अर्थों में किया गया है। सोम एक प्रकार का रस भी होता है। यहाँ रसात्मक सोम ही अभीष्ट है। चन्द्रमा ही रसोत्पादक है। वनस्पतियों का विकास, पुष्पों का विकसित होना आदि प्राकृतिक प्रभाव चन्द्रमा का सोमात्मक होना सिद्ध करता है।

---

१. ऋ. १०।८५।३, ६।८७।६

भौमादि पाँच तारा ग्रहों की उत्पत्ति भी क्रम से अग्नि, भू, आकाश, जल और वायु तत्वों से हुई हैं। यद्यपि सभी पिण्डों में पञ्च महाभूतों का मिश्रण है। सभी तत्वों के सम्मिश्रण से ही भौतिक पिण्डों की रचना हुई है परन्तु भौम में अग्नि तत्व की प्रधानता या आधिक्य होने से उसे अग्नि तत्व से उत्पन्न कहा गया है। इसी प्रकार बुध में पृथ्वी तत्व की, गुरु में आकाश तत्व की, शुक्र में जल तत्व तथा शनि में वायु तत्व की प्रधानता है।

इनके अतिरिक्त दो ग्रह राहु और केतु नाम से विख्यात है जिनका भौतिक अस्तित्व आकाश में नहीं है। ये दोनों ही आकाश मण्डल में दो निश्चित स्थानों के सूचक है। चन्द्र विमण्डल (कक्षा) और सूर्य कक्षा (क्रान्ति मण्डल, आधुनिक मतानुसार भूभ्रमण मार्ग) के दोनों सम्पातों को राहु और केतु कहा जाता है। यही कारण है कि राहु से केतु की दूरी निरन्तर ६ राशि (३०×६=१८०° अंश) तुल्य होती है। इन्हें तमो ग्रह भी कहा जाता है। आकाश में पिण्ड के रूप में न होने से वराह मिहिर प्रभृति कुछ आचार्यों ने इन दोनों ग्रहों को ग्रह कोटि में स्वीकार नहीं किया है।

इस प्रकार नवग्रहों को चार कोटि में विभक्त कर आचार्यों ने यह व्यक्त कर दिया कि सूर्य और चन्द्रमा का पृथक्-पृथक् गुण-धर्म और अस्तित्व है। पाँच तारा ग्रह (भौम, बुध. गुरु, शुक्र, शनि) एक कोटि में गिने गये हैं इनका भौतिक और आकाशीय लक्षणों के आधार पर पृथक् वर्गीकरण किया है। राहु और केतु दोनों पात ग्रह हैं। ग्रहण काल में इनका विशेष महत्त्व होता है। सूर्य या चन्द्र ग्रहण इन्हीं राहु और केतु नामक पात स्थानों में ही होता है। ग्रह गणित की दृष्टि से इन पातस्थानों का अपना महत्त्व है अतः इन पात स्थानों की भी गणना ग्रहों की ही तरह की जाती है। तथा इन पात स्थानों से ग्रहों पर पड़ने वाले प्रभावों का भी अध्ययन कर भारतीय मनीषियों ने इन्हें भी ग्रह का स्थान दिया है।

आधुनिक मतानुसार सूर्य को तारा, चन्द्रमा को उपग्रह, मंगल, पृथ्वी, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, हर्शल (यूरेनस), नेपच्यून और प्लूटो को ग्रह, राहु और केतु को पात ग्रह माना जाता है।

पुराणों ने भी सूर्य का अस्तित्व ग्रहों से भिन्न माना है। पुराणों के अनुसार सभी ग्रह सूर्य से ही उत्पन्न हुये हैं।[1] तथा सूर्य की विभिन्न किरणें पृथक्-पृथक् ग्रहों को प्रकाशित करती है। सूर्य की प्रत्येक राशि का नाम, गुण और धर्म पृथक्-पृथक् है। प्रत्येक ग्रह पिण्ड से परावर्तित होकर जब वे रश्मियाँ पृथ्वी पर आती हैं तब उनमे तत्तद् ग्रहों के भी गुण धर्म मिश्रित हो जाते हैं। कूर्म पुराण[2] के आधार पर सूर्य रश्मियाँ तथा उनसे पोषित ग्रहो के नाम इस प्रकार हैं।

---

१. नक्षत्र ग्रह सोमानां प्रतिष्ठा यानि रेव च।
चन्द्रऋक्ष ग्रहा सर्वे विज्ञेया सूर्य सम्भवा ॥ मत्स्य पु. १२७.२९

२. कू. पु. १.४१.३-७

सूर्य रश्मि	प्रकाशित ग्रह
१. सुषुम्ना	चन्द्रमा
२. हरिकेश	नक्षत्र
३. विश्वकर्मा	बुध
४. विश्वव्यचा	शुक्र
५. संयद्वसु	भौम
६. अर्वावसु	बृहस्पति
७. सुराट्	शनि

मानव शरीर भी पाञ्चभौतिक ही है। रचना में भेद है। अस्थि-मांस-रक्त-स्नायु-चर्म प्रभृति शारीरिक द्रव्यों से निर्मित शरीर पर सभी ग्रहों का समान रूप से प्रभाव नहीं पड़ता है अपितु प्रत्येक ग्रह किसी अवयव विशिष्ट से सम्बन्धित होते हैं तथा उन ग्रहों के शुभाशुभ प्रभाव उनसे सम्बन्धित अवयवों पर विशेष रूप से पड़ते हैं। यथा—

ग्रह	प्रभावित अंग
सूर्य	पित्त, अस्थि एवं केश
चन्द्रमा	कफ, वायु, रुधिर और, वाणी,
मंगल	पित्त, रक्त और मज्जा
बुध	त्रिधातु, चर्म, स्नायु और वाणी
गुरु	कफ, मांस, अस्थि और बुद्धि,
शुक्र	कफ, वायु, शुक्र तथा केश
शनि	वायु, स्नायु, नख, दांत, और रोम
राहु तथा केतु	वायु, दांत और ओष्ठ,

इस प्रकार हम समझ सकते हैं कि ये दूरस्थ ग्रह हमारे अत्यन्त समीपस्थ है। ग्रहों का सम्बन्ध मात्र शारीरिक अवयवों से संक्षेप में दर्शाया गया है इस सम्बन्ध में विस्तृत ज्ञान अन्य ग्रन्थों से किया जा सकता है। इन ग्रहों का प्रभाव विभिन्न राशियों के संसर्ग से तथा जन्म लग्न के सम्बन्ध से प्रत्येक व्यक्ति के लिए पृथक्-पृथक् रूप से दृष्टिगत होता है इनका समुचित ज्ञान ग्रन्थों के अवलोकन तथा जन्म पत्रों के अभ्यास से ही सम्भव है।

जन्मचक्र—जन्मचक्र या जन्माङ्गचक्र आकाश का मानचित्र होता है। जन्म समय में आकाश के किस भाग में कौन सी राशि थी तथा किन-किन राशियों से किन ग्रहों का सम्बन्ध था इस मान चित्र से ज्ञात हो जाता है। जन्म लग्न आकाशीय राशिचक्र (क्रान्ति वृत्त) का वह भाग होता है जो जन्म काल में स्थानीय क्षितिज को स्पर्श करता है। क्षितिज पर जो राशि होती है उसी को लग्न तथा मध्य आकाश में जो राशि होती है उसे दशम भाव या दशम लग्न तथा नीचे आकाश मध्य में जो राशि होती है उसे चतुर्थ भाव तथा अस्त क्षितिज पर जो राशि होती है उसे सप्तम भाव कहते हैं। इन्हीं चारों स्थानों की केन्द्र संज्ञा होती है। इस चक्र के निर्माण की विधि इसी ग्रन्थ में देखें।

उपयोगिता—इस शास्त्र के माध्यम से मनुष्य अपनी शारीरिक एवं मानसिक ह्रास-वृद्धि का समयानुसार ज्ञान कर सकता है। इतना ही नहीं मनुष्य जीवन के हर क्षेत्र में जातक शास्त्र का सहयोग प्राप्त कर सकता है। वराह मिहिर[1] ने लिखा है कि मनुष्य पूर्वजन्म के शुभाशुभ कर्मों का परिणाम किस प्रकार इस जन्म में प्राप्त करेगा इसे ज्योतिष शास्त्र उसी प्रकार प्रकट कर देता है जैसे अन्धकार में पड़ी हुई वस्तु को प्रकाश।

कहने का अभिप्राय यह कि मनुष्य का जन्म अपने पूर्वजन्म के कर्मानुसार शुभाशुभ योगो में होता है। मनुष्य का भविष्य अन्धकार मे होता है। आगे आने वाले क्षणों को कोई नहीं जानता। मनुष्य अज्ञात एवं अन्धकार पूर्ण मार्ग में भटकता है यदि उसे प्रकाश की एक रेखा मिल जाय तो वह अपना गन्तव्य स्थल और गन्तव्य मार्ग ज्ञात कर लेता है तथा सरलता पूर्वक पहुंचने का प्रयास करता हैं। यह प्रकाश ज्योतिषशास्त्र के होरा भाग से प्राप्त होता है। भास्कराचार्य ने कहा है—

"ज्योतिःशास्त्रफलं पुराणगणकैरादेश इत्युच्यते"[2]

प्राचीन दैवज्ञों ने ज्योतिषशास्त्र के फल को आदेश कहा है। अर्थात् उन्हें इसकी प्रामाणिकता पर रञ्चमात्र भी सन्देह नहीं था।

मानसागरी—ज्योतिष शास्त्र के होरा स्कन्ध का एक संग्रह ग्रन्थ है। मानसागरी ग्रन्थ अपनी विशेषताओं के कारण अब तक पर्याप्त लोकप्रिय एवं प्रसिद्ध हो चुका है। जन्म-पत्र निर्माण विधि, लेखन विधि, एवं फलादेश विधि से सम्पन्न यह ग्रन्थ ज्योतिषानुरागी व्यक्तियों के लिए कल्पद्रुम सदृश हैं। ग्रन्थ कर्त्ता ने इस ग्रन्थ में विभिन्न मानक ग्रन्थों से आवश्यक विषयों का संकलन कर संग्रहीत किया है। यद्यपि विषयों का संकलन कई ग्रन्थों से किया गया है फिर भी बृहत्पाराशर होराशास्त्र का इसपर सर्वाधिक प्रभाव है। बहुत से स्थलों पर तो बृहत्पाराशरहोरा ग्रन्थ के श्लोक ही यथावत उद्धृत हैं। इसके अतिरिक्त बृहज्जातक, नीलकण्ठी, ग्रहलाघव प्रभृति ग्रन्थों के भी श्लोक मिलते हैं।

इस ग्रन्थ के प्रायः सभी संस्करणों में अत्यधिक अशुद्धियां हैं। इस संस्करण में अशुद्धियों को निकालने का पूर्ण प्रयास किया गया है। साथ ही इस बात पर भी ध्यान दिया गया है कि ग्रन्थ की मौलिकता नष्ट न हो। कहीं कही पर असंगत पाठ होने पर मैंने भी श्लोक बदल कर सम्बन्धित ग्रन्थ बृहत्पाराशर होरा या बृहज्जातक का श्लोक रख दिया है। अधिकांश अशुद्धियां लेखन और मुद्रणकाल में प्रमाद से ही उत्पन्न प्रतीत होती हैं। अस्तु प्रस्तुत संस्करण यथासम्भव संशोधनों द्वारा नये परिवेश में प्रस्तुत किया जा रहा है।

---

१. यदुपचितमन्यजन्मनि शुभाऽशुभं तस्य कर्मणः पंक्तिम्।
व्यञ्जयति शास्त्रमेतत् तमसि द्रव्याणि दीप इव॥
(लघुजातक श्लो. ३)

२. सिद्धान्तशिरोमणि गोलाध्यायः ६

रचनाकाल –इस ग्रन्थ के सम्बन्ध में यद्यपि कोई समुचित संकेत नहीं मिलता है जिसके आधार पर ग्रन्थ रचना काल और ग्रन्थकर्ता के सम्बन्ध में कोई पुष्ट प्रमाण प्रस्तुत किया जा सके। ग्रहलाघव, नीलकण्ठी, सारावली आदि ग्रन्थों का मानसागरी में उद्धरण प्राप्त होने से इतना तो सुनिश्चित है कि इसका संग्रह इन ग्रन्थों के बाद ही हुआ है।

संवत्सर ज्ञान के प्रसङ्ग में ग्रन्थकर्त्ता ने लिखा है—

> शाकं रामाक्षि संयोज्य षष्टि भागेन हारयेत्।
> शेषं संवत्सरं ज्ञेयं लब्धं तत् परिवर्त्तकम्॥

इस पद्य की उपपत्ति[1] में पं. श्री अनूप मिश्र ने दिखलाया है कि शक १७६५ को आधार मान कर उक्त प्रक्रिया संवत्सर ज्ञान हेतु सिद्ध होती है। अतः ग्रन्थ रचना काल में शकाब्द १७६५ ही रहा होगा यह अनुमान किया जा सकता है।

ग्रन्थारम्भ में लेखक ने कई धर्मों के अनुरूप मंगलाचरण प्रस्तुत किया है। सर्वप्रथम जैन धर्म सम्मत तथा अन्त में एक मङ्गलाचरण यवन धर्म के अनुरूप पैगम्बर रहमान की प्रशस्ति में किया गया है—

> यः पश्चिमाभिमुखसंस्थित विद्यमानो,
> ह्यव्यक्तमूर्त्ति परिवर्तित विश्वभोगः।
> दुर्लक्ष्यविक्रमततिः कृतकर्म लक्ष्या,
> राजश्रियं दिशतु वो रहमाण एषः॥

इस मङ्गला चरण के आधार पर यह अनुमान किया जाता है कि ग्रन्थकर्त्ता किसी यवनशासक का दरबारी पण्डित रहा होगा। १७६५ शकाब्द के आसन्न भारत में यावनों का ही शासन काल था।

सन् १८३७ से १८५७ तक द्वितीय बहादुर शाह के शासन कालका प्रमाण मिलता है। अतः इस ग्रन्थ की रचना बहादुर शाह के शासन काल में सन् १८४३ (शकाब्द १७६५) में हुई होगी।

---

१. पं. श्री अनूपमिश्र कृता उपपत्ति :—

प्रथमप्रकारेणागत गतवत्सरस्वरूपम्–

$$\text{इ श} + \frac{\text{२२ इ.श.} + \text{४२९१}}{\text{१८७५}}$$

अत्र द्वितीयखण्डस्य व्यक्तीकरणप्रयासेन इष्टशकस्थाने १७६५ ग्रहणात्,

$$\text{द्वि. खं.} = \frac{\text{२२} \times \text{१७६५} + \text{४२९१}}{\text{१८७५}} = \frac{\text{४३१२१}}{\text{१८७५}} = \frac{\text{४३१२१} + \text{४} - \text{४}}{\text{१८७५}}$$

$$\frac{\text{४३१२५}}{\text{१८७५}} - \frac{\text{४}}{\text{१८७५}} = \text{२३} - \frac{\text{४}}{\text{१८७५}}$$

इह ऋणात्मकखण्डमतीवाल्पत्वात्त्यक्तं तदा द्वितीय खण्डं=२३
अतः उत्थापनात् गतवत्सरः=इ श+२३ फलमिदं सैकं तदा वर्तमानं स्यादित्यनेन पद्यनिर्माणो जायते। इत्थं ग्रन्थविरचनकालः १७६५ तमः शकाब्दः।

ग्रन्थकर्त्ता—सम्पूर्ण ग्रन्थ में ग्रन्थकर्त्ता ने अपना परिचय कहीं भी नहीं दिया है। ग्रन्थ के अन्त में लिखा है—

आसीद् गुर्जरमण्डले द्विजवरः शाण्डिल्यगोत्रोद्भवः-
श्रीमद्याज्ञिकवंशमण्डनमणिर्ज्योतिर्विदामग्रणीः ।
श्रौतस्मार्तरतो जनार्दन इति ख्यातः स्वकीयैर्गुणै-
स्तत्सूनुर्हरजी दशां स्फुटतरां चक्रे परां योगिनीम् ॥

इस पद्य में (गुजरात) देश वास्तव्य शाण्डिल्य गोत्रोत्पन्न जनार्दन पुत्र हरजी का नाम आया है परन्तु इसमें यह भी लिखा है—हर जी ने योगिनी दशा को स्पष्ट रूप से यहाँ संग्रहीत किया। अतः हरजी ने सम्पूर्ण मानसागरी की रचना की हो यह सम्भव नहीं है। परन्तु हरजी के पिता जनार्दन दैवज्ञ ने इसकी रचना की हो यह माना जा सकता है।

कुछ विद्वानों का मत है कि 'मानसागरी' नाम ग्रन्थ कर्त्ता ने अपने नाम पर किया होगा। इसके आधार पर ग्रन्थकर्त्ता का नाम 'मानसागर' हो सकता है। साथ-साथ यह भी कल्पना की जाती है कि मानसिंह के आश्रित रह कर किसी दैवज्ञ ने राजा की प्रशस्ति अथवा स्मृति में 'मानसागरी' नाम से संग्रह ग्रन्थ की रचना की। इस प्रकार साक्ष्य के अभाव में केवल कल्पना के आधार पर ग्रन्थ कर्त्ता का नाम 'मानसागर' ही माना जाता है।

प्रतिपाद्यविषय—इस ग्रन्थ के माध्यम से लेखक ने जन्मपत्र विषयक व्यावहारिक ज्ञान से जनसाधारण को परिचित कराने का प्रयास किया है। प्रारम्भ में जन्मपत्र-निर्माण एवं लेखन विधि दी गई है पश्चात् जन्मपत्र के लगभग सभी पहलुओं का फल निर्देश किया गया है। इस प्रकार यह ग्रन्थ अपने आप में पूर्ण ग्रन्थ है। यद्यपि ज्योतिष अत्यन्त गहन और विस्तृत है कि समस्त विषयों का समावेश एक ही लघुकाय ग्रन्थ में सम्भव नहीं है फिर भी व्यवहारोपयोगी विषयों का एकत्र संग्रह इस ग्रन्थ में किया गया है।

जन्मकालिक ग्रहस्थिति के अनुसार नवजातशिशु के शारीरिक एवं मानसिक विकास एवं ह्रास को समय से पूर्व जाना जा सकता है तथा विकास में बाधक हेतुओं के निराकरण का प्रयास भी किया जा सकता है इसके लिए अरिष्टादि बहुत सी विधियाँ दी गई है। कहा भी है—सर्व प्रथम जातक के आयु का ज्ञान करना चाहिये। यदि आयु (जीवन) ही नहीं रहेगी तो राजयोगादि सुखों का उपभोग कौन करेगा ?[1]

अरिष्टज्ञान हेतु जन्मचक्र में स्थित ग्रहों का सूक्ष्म दृष्टि से अवलोकन करना चाहिये। यदि शरीर में कष्ट के योग हैं तो कष्ट किस प्रकार का होगा इसका भी अन्वेषण करना चाहिये। यथा—किसी शिशु का जन्म मेष लग्न में हुआ। लग्नेश मंगल छठें भाव में, चन्द्रमा अष्टम भाव में तथा चतुर्थ भाव में शनि स्थित

१. पञ्चस्वरा ६,७

हो तो ऐसी स्थिति में नवजात शिशु की परिचर्या बहुत सावधानी से करनी होगी अन्यथा शिशु ज्वर-अतिसार और वमन से पीड़ित होकर पोलियो जैसी गम्भीर बीमारियों का शिकार हो सकता है।

इसी प्रकार अन्य योगों में भी इस प्रकार की बीमारियों का भय उत्पन्न हो सकता है। यथा--शुक्र से शनि युत हो गुरु से रवि युत हो तथा इनको शुभग्रह न देखते हों तो पैर से लंगडा हो सकता है।[1]

यदि लग्नेश पापाक्रान्त हो सूर्य से सप्तस्थ चन्द्रमा राहु अथवा केतु से युक्त हो तो शारीरिक दृष्टि से ठीक होते हुये भी जातक का मानसिक विकास अवरुद्ध हो सकता है।

इस प्रकार हम विभिन्न ग्रहस्थितियों के कारण जातक की शारीरिक अवस्थाओं को जानकर उनके निराकरण का यथासम्भव प्रयास शास्त्रीय विधि से तथा आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान के सहयोग से कर सकते हैं।

इतना ही नहीं जातक की शिक्षा, व्यवसाय एवं यात्रा आदि के सम्बन्ध में भी जन्मपत्र का सहयोग मिलता है। हम किसी भी विवादास्पद स्थिति में अपनी जन्मपत्री के सहयोग से भी निर्णय ले सकते हैं।

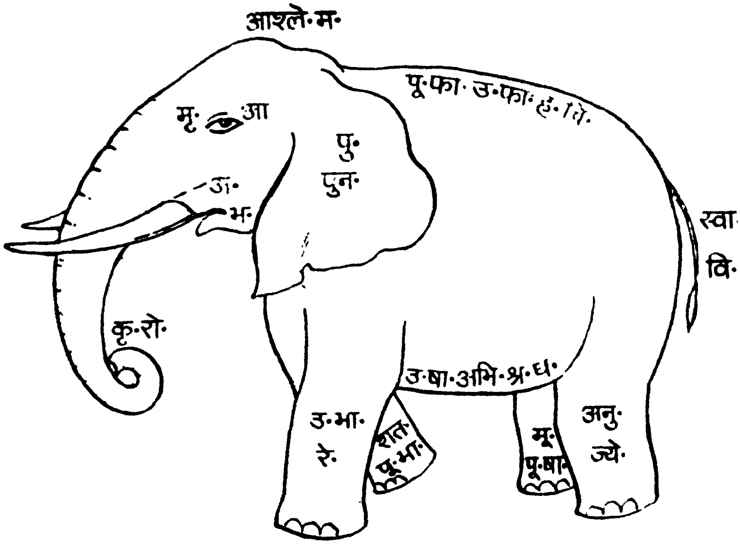
इन विषयों के ज्ञान हेतु कई प्रकार के योगों का वर्णन इस ग्रन्थ में सग्रहीत है। योगों के अतिरिक्त शुभाशुभ समय के ज्ञान हेतु सभी ग्रहों की दशाओं एवं अन्तर आदि सूक्ष्म दशाओं का भी विस्तृत विवेचन किया गया है। इनके आधार पर समयानुसार कार्य करने का निर्णय लिया जा सकता है।

दीर्घकालिक यात्रा, युद्ध, अथवा दीर्घकालिक बीमारियों के ज्ञान हेतु नक्षत्र पुरुष, सूर्य कालानल आदि विविध प्रकार के चक्रों का निर्माण किया गया है। इनके उपयोग से यात्रा के लिए उपयुक्त समय, युद्ध के लिए उपयुक्त काल एवं दिशा का निर्णय, अस्वस्थ व्यक्ति के लिए चिकित्सा सम्बन्धी निर्णय लिया जा सकता है। इन सभी चक्रों का वर्णन इस ग्रन्थ में सचित्र एवं सोदाहरण किया गया है। इन चक्रों में से अश्वचक्र, गजचक्र तथा कालद्रंष्ट्रा चक्रों के सम्बन्ध में परम्परागत पद्धति के अतिरिक्त पुनर्विचार की आवश्यकता प्रतीत होती है।

मातङ्गनायक (गज) चक्र के सम्बन्ध में इस ग्रन्थ में लिखा है (द्र. ४.५६३-६६) कि मुख, शुण्डाग्र, नेत्र आदि अंगों में २-२ नक्षत्र तथा पृष्ठ और उदर में ४-४ नक्षत्रों का स्थापन करना चाहिये। इस क्रम मे दो-दो नक्षत्रों को स्थापना करने के बाद अन्तिम आठ नक्षत्रों का स्थापना गज के पृष्ठ और पेट पर होता है। परन्तु मेरी दृष्टि में अङ्गों के क्रम से दो दो नक्षत्रों की स्थापना करते हुये पृष्ठ पर चार नक्षत्र पुनः पुच्छादि अंगों में दो-दो नक्षत्र स्थापित कर उदर में ४ नक्षत्र

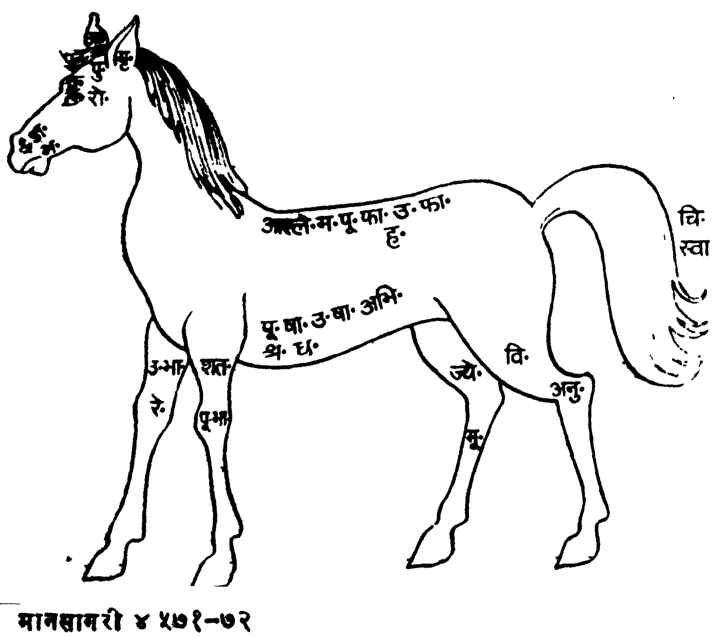
१. कविना सहितो मन्दो गुरुणा सहितः रविः।
शुभग्रहाः न पश्यन्ति पादखञ्जो भवेन्नरः॥ मा. सा. ४।१२४

तथा अग्रपाद में दो-दो नक्षत्र स्थापित कर गज चक्र का निर्माण करना चाहिये स्पष्टार्थ मातङ्ग नायक चक्र देखें —



इसी प्रकार अश्व चक्र[1] में भी अङ्गों के क्रमानुसार नक्षत्रों का क्रम से स्थापन

अश्व चक्र



---

१. मानसागरी ४ ५७१-७२

करते हुए मुख, नेत्र, कर्ण में दो-दो नक्षत्र, पृष्ठ पर ५ नक्षत्र, पुच्छ, पिछले पैरों पर २-२ नक्षत्र, उदर पर ५ नक्षत्र तथा अगले पैरों पर दो-दो नक्षत्रों का स्थापन कर अश्वचक्र का निर्माण करना चाहिए। (द्र. अश्वचक्र)

कालपुरुष एवं नक्षत्रपुरुष[1] का निर्माण भी इसी क्रम से हुआ है। ग्रहों के पुरुषाकार चक्र में भी अङ्गों के क्रम का ध्यान रखा गया है। कुछ ही अन्तरों के साथ लगभग सभी ग्रहों के पुरुष चक्रों का निर्माण किया गया है। अतः मातङ्गचक्र और अश्वचक्र में भी उसी परम्परा का अनुगमन उपयुक्त होगा।

कालदंष्ट्रा चक्र[2] के निर्माण में भी मैंने कुछ आवश्यक संशोधन किया है। प्राचीन पुस्तकों में काल दंष्ट्रा चक्र के निर्माण में पूर्ण सर्प का चित्र बनाकर उसके अङ्गों में नक्षत्रों का न्यास किया गया है। परन्तु सर्प के सम्पूर्ण शरीर में नक्षत्रों का न्यास करने से श्लोकोक्त विधि घटित नहीं होती है। सर्प का दांत सर्प के पीठ पर कल्पना कर दंष्ट्रा स्थित नक्षत्रों का न्यास किया गया है जो सर्वथा अनुपयुक्त है। बहुत प्रयत्नों के बाद मैंने ग्रन्थोक्त रीति से उचित स्थानों में नक्षत्र स्थापन करने में सफलता प्राप्त कर ली। कालदंष्ट्रा चक्र केवल सर्प का फण है। केवल फण में निर्दिष्ट विधि के अनुसार नक्षत्रों का न्यास करने से सर्प के दांतों एवं मुख में स्थित नक्षत्र स्वयमेव इन स्थानों में आ जाते हैं। तथा जिन नक्षत्रों का परित्याग करना होता है वे स्वतः नाडी से बाहर स्थित हो जाते हैं।[3]

सर्पाकार त्रिनाडी चक्र (अ. ४ श्लो. ६०३) में भी मैंने परम्परागत चक्र को छोड़कर नये ढङ्ग से चक्र का निर्माण किया है। सर्प के शरीर में मुख से पुच्छ तक तीन नाडी बनाकर आर्द्रा से आरम्भ कर मृगशिरा पर्यन्त २७ नक्षत्रों को क्रम से प्रत्येक नाडी में स्थापित करने से "मध्ये मूलं प्रतिष्ठितम्" स्वयमेव सिद्ध हो जाता है।

इस प्रकार कुछ महत्त्वपूर्ण संशोधन कर मूल ग्रन्थ के वास्तविक अभिप्राय को प्रकट करने का प्रयास किया गया है। चन्द्र साधन एवं अन्तर्दशा साधन में कुछ आधुनिकता लाने का भी प्रयास किया गया है जो अत्यन्त सुगम है।

प्रस्तुत संस्करण—मानसागरी के इस संस्करण के सम्पादन में मानसागरी के उपलब्ध संस्करणों का सहयोग लिया गया है। तथा विषयवस्तु को शुद्ध और सरल ढङ्ग से प्रस्तुत करने के लिए बृहत्पाराशरहोरा, बृहज्जातक, ग्रहलाघव, मुहूर्त्त चिन्तामणि, नरपतिजयचर्या एवं मुकुन्दविजय प्रभृति ग्रन्थों का भी सहयोग लिया

---

१. बृहत्संहिता १०४.१-५

२. मानसागरी ४·५९८–६०२

३. (द्रष्टव्य पृ. ३४५)।

४. (द्र. पृ. ३४६)।

गया है। मूल ग्रन्थ की रचना में भी इन ग्रन्थों का उपयोग किया गया है इसका आभास बहुत से स्थलों पर सरलता पूर्वक हो जाता है। अतएव इन्हीं ग्रन्थों के सहयोग से यथासम्भव शुद्ध पाठ प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

आधुनिक सम्पादन प्रक्रिया के अनुसार श्लोक संख्या के क्रम को बीच-बीच में न तोड़ कर प्रत्येक अध्याय में क्रमानुसार संख्या कर दी गई है। इस प्रक्रिया से श्लोकों के अन्वेषण में, उद्धरण देने में अथवा उद्धृत संख्या के आधार पर श्लोकों को ढूढने में अत्यन्त सरलता हो जाती है।

ग्रन्थ को सरल बनाने की दृष्टि से स्थान-स्थान पर तालिका एवं उदाहरण दिये गये हैं। गूढ़ ग्रन्थियों को सुलझाने के लिए टिप्पणियाँ दी गई हैं। जिनके सहयोग से पाठक गण को कहीं भी अवरोध नहीं प्रतीत होगा।

इस ग्रन्थ में कुल पाँच अध्याय है। प्रथम अध्याय में ३३६ श्लोक, द्वितीय अध्याय में २७५ श्लोक, तृतीय अध्याय में ४६३ श्लोक, चतुर्थ अध्याय में ७२४ श्लोक तथा पञ्चम अध्याय में ४४७ श्लोक हैं। समस्त श्लोकों की संख्या २२४५ है।

ग्रन्थ के अन्त में एक लघु परिशिष्ट है। जिसमें जन्मपत्र निर्माण सम्बन्धी प्रारम्भिक एवं आवश्यक विषयों का दिग्दर्शन कराया गया है।

इन संवर्द्धनो के साथ मानसागरी नये कलेवर एवं नवीन शैली में पाठकों के समक्ष उपस्थित हो रही है। आशा है पाठक गण इससे लाभान्वित होगें।

ग्रन्थ सम्पादन का श्रेय चौखम्बा परिवार के वरिष्ठ सदस्य श्री विट्ठलदास गुप्त जी को है जिनकी प्रेरणा से मैंने इस ग्रन्थ के सम्पादन एवं हिन्दी भाषानुवाद का कार्य अपने हाथ में लिया। श्री गुप्ता जी के सतत प्रयत्न एवं निष्ठा के कारण इस ग्रन्थ का प्रकाशन अति शीघ्र सम्भव हो सका। मेरे अनन्य मित्र डा० सुधाकर मालवीय जी विशेष धन्यवादार्हं है, इनके सतत प्रोत्साहन से ही अत्यन्त व्यस्तता के क्षणों में भी मैं इस कार्य को पूर्ण कर पाया।

मेरे प्रयासों की सफलता विद्वज्जनों की सन्तुष्टि पर निर्भर करती है। कहा भी है "आपरितोषाद् विदुषां न साधु मन्ये प्रयोगविज्ञानम्।[1]

गंगादशहरा
२०४०

रामचन्द्रपाण्डेय
वाराणसी

१. अभिज्ञानशाकुन्तलम् (पृ. रं. २.)

विषयानुक्रमणी

॥ श्रीः ॥

मानसागरी

'मनोरमा' हिन्दीव्याख्योपेता

जन्म-पत्र हेतु मङ्गल श्लोक—

स्वस्ति श्रीसौख्यधात्री सुतजयजननी तुष्टिपुष्टिप्रदात्री
माङ्गल्योत्साहकर्त्री गतभवमदसत्कर्मगां व्यञ्जयित्री।
नानासम्पद्विधात्री धनकुलयशसामायुषां वर्द्धयित्री।
दुष्टापद्विघ्नहर्त्री गुणगणवसतिर्लिख्यते जन्मपत्री ॥ १ ॥

टीकाकारकृत् मङ्गलाचरण

प्रणम्य संविन्मणिमेदुरान्वला लसत्तरङ्गा सुधियोऽधिमानसम्।
दिगन्तरालोकनदीप्तिदीधितिर्विभासतां सम्प्रति मानसागरी ॥

कल्याण समृद्धि एवं सुख को देनेवाली, पुत्र तथा विजय प्राप्त कराने वाली, सन्तोष एवं संवर्धन करने वाली, मङ्गल कार्यों मे उत्साह बढ़ाने वाली, भूत एवं भविष्य के शुभाशुभ कर्मों को प्रकट करने वाली, विविध प्रकार की सम्पत्तियों को देनेवाली, धन, कुल (परिवार), सम्मान तथा आयु को बढ़ाने वाली, दुष्ट जन (शत्रु), विपत्ति एवं विघ्न का हरण करने वाली, गुणों के समूह की मूर्ति जन्मपत्री को लिख रहा हूँ ॥

श्रीआदिनाथप्रमुखा जिनेशाः श्रीपुण्डरीकप्रमुखा गणेशाः।
सूर्यादिखेटर्क्षयुताश्च भावाः शिवाय सन्तु प्रकटप्रभावाः ॥ २ ॥

श्री आदिनाथ आदि जिनेश (जैन धर्म के जिनावतार), श्री पुण्डरीक प्रभृति गणपति तथा सूर्यादि नवग्रहों एवं नक्षत्रों से युक्त बारहो भाव कल्याण हेतु समर्थ हों ॥

दशावतारो भुवनैकमल्लो गोपाङ्गनासेवितपादपद्मः।
श्रीकृष्णचन्द्रः पुरुषोत्तमोऽयं ददातु वः सर्वसमीहितं मे ॥ ३ ॥

दशावतार (दश बार विभिन्न रूपों में अवतरित होने वाले), समस्त संसार के एक मात्र योद्धा, गोपकन्याओं से पूजित चरण कमल वाले, पुरुषों में श्रेष्ठ ये भगवान् श्री कृष्णचन्द्र हमारी कामनाओं की पूर्ति करें ॥ ३ ॥

श्रीमानस्मानवतु भगवान् पार्श्वनाथः प्रियं वो
श्रेयो लक्ष्म्या क्षितिपतिगणैः सादरं स्तूयमानः।

भर्तुर्यस्य स्मरणकरणात्तेऽपि सर्वे विवस्वन्-
मुख्याः खेटा ददतु कुशलं सर्वदा देहभाजाम् ॥ ४ ॥

लक्ष्मी एवं भूपालों द्वारा आदर पूर्वक वन्द्यमान श्रीमान् भगवान् पार्श्वनाथ (जैनतीर्थङ्कर) हमलोगों के प्रिय (अभीष्ट) एवं कल्याण की रक्षा करें। जिस प्रभु का स्मरण करने से भी सभी, सूर्यादि ग्रह सभी शरीर धारियों (प्राणियों) की रक्षा करें तथा सदैव कुशलता प्रदान करें ॥ ४ ॥

सूर्यः शौर्यमथेन्दुरुच्चपदवीं सन्मङ्गलं मङ्गलः
सद्बुद्धिं च बुधो गुरुश्च गुरुतां शुक्रः सुखं शं शनिः ।
राहुर्बाहुबलं करोतु विपुलं केतुः कुलस्योन्नतिं
नित्यं प्रीतिकरा भवन्तु भवतां सर्वे प्रसन्ना ग्रहाः ॥ ५ ॥

सूर्य शौर्य तथा चन्द्रमा उन्नतपद प्रदान करें, मङ्गल शुभ, बुध सद्बुद्धि, गुरु गौरव, शुक्र सुख, शनि कल्याण, राहु विपुल बाहुबल, एवं केतु परिवार की उन्नति करें। सभी ग्रह प्रसन्नता पूर्वक निरन्तर आपके लिए प्रीतिकारक होवें ॥ ५ ॥

कल्याणं कमलासनः स भगवान् विष्णुः सजिष्णुः स्वयं
प्रालेयाद्रिसुतापतिः सतनयो ज्ञानं च निर्विघ्नताम् ।
चन्द्रज्ञास्फुजिदर्कभौमधिषणच्छायासुतैरन्वित-
ज्योतिश्चक्रमिदं सदैव भवतामायुश्चिरं यच्छतु ॥ ६ ॥

भगवान् विष्णु एवं इन्द्र सहित ब्रह्मा कल्याण प्रदान करें, अपने पुत्र सहित स्वयं पार्वतीपति (शिवजी) ज्ञान एवं निर्विघ्नता, चन्द्र, बुध, शुक्र, सूर्य, भौम, गुरु, शनि तथा समस्त ज्योतिश्चक्र (नक्षत्र मण्डल) आपको निरन्तर दीर्घायुष्य प्रदान करें ॥ ६ ॥

सूर्यो यच्छतु भूपतां द्विजपतिः प्रीतिं परां तन्वतां
माङ्गल्यं विदधातु भूमितनयो बुद्धिं विधत्तां बुधः ।
गौरं गौरवमातनोतु च गुरुः शुक्रः सशुक्रार्थदः
सौरिर्वैरिविनाशनं वितनुतां रोगक्षयं सैंहिकः ॥ ७ ॥

सूर्य राजत्व प्रदान करें, चन्द्रमा उत्तम प्रीति बढ़ावें, भूमिपुत्र भौम मङ्गल करें, बुध बुद्धि प्रदान करें, गुरु श्रेष्ठ गौरव तथा शुक्र बल एवं धन देवें, शनि शत्रु का नाश तथा राहु रोगों का विनाश करें ॥ ७ ॥

श्रीमान् पङ्कजिनीपतिः कुमुदिनीप्राणेश्वरो भूमिभूः ।
शशाङ्कः सुरराजवन्दितपदो दैत्येन्द्रमन्त्री शनिः ।
स्वर्भानुः शिखिनां गणो गणपतिर्ब्रह्मेशलक्ष्मीधरा-
स्तं रक्षन्तु सदैव यस्य विमला पत्री त्वियं लिख्यते ॥ ८ ॥

श्रीमान् सूर्य, चन्द्रमा, मङ्गल, बुध, गुरु, शुक्र शनि राहु तथा केतु, (नवग्रहों का समूह) एवं गणेश, ब्रह्मा, शिव तथा लक्ष्मीधर विष्णु सभी उसकी सदैव रक्षा करें जिसकी यह दोषरहित जन्म-पत्री लिखी जा रही है ॥ ८ ॥

कृतं मया नोदकयन्त्रसाधनं न भेक्षणं चापि न शङ्कुधारणम् ।
परोपदेशात्समयावबोधकं विलिख्यते जन्मफलं नराणाम् ॥ ९ ॥

[शुद्ध समय ज्ञान हेतु] मैंने घटीयन्त्र का साधन नहीं किया, नक्षत्रों का वेध तथा शंकु (छाया द्वारा समय बोधक यन्त्र) का भी उपयोग नहीं किया, दूसरों द्वारा बताये गये समय के आधार पर जातक का जन्म फल लिख रहा हूँ ॥ ९ ॥

ललाटपट्टे लिखिता विधात्रा षष्ठीदिने याऽक्षरमालिका च ।
तां जन्मपत्री प्रकटीं विधत्ते दीपो यथा वस्तु घनान्धकारे ॥ १० ॥

षष्ठी (छठी, जन्म से छठवें दिन) के दिन ब्रह्मा ने ललाट रूपी पट्ट पर जो अक्षरमाला लिख दी, उसी (शुभाशुभ कर्म फल) को जन्म-पत्री प्रकट करती है। जैसे घने अन्धकार में पड़ी हुई वस्तु को दीपक प्रत्यक्ष कराता है ॥ १० ॥

यावन्मेरुर्धरापीठे यावच्चन्द्रदिवाकरौ ।
तावन्नन्दतु बालोऽयं यस्यैषा जन्मपत्रिका ॥ ११ ॥

जब तक पृथ्वीपर मेरु पर्वत है तथा जबतक सूर्य और चन्द्रमा हैं तब तक यह बालक आनन्द पूर्वक रहे जिसकी यह जन्म-पत्रिका है ॥ ११ ॥

यस्य नास्ति किल जन्मपत्रिका या शुभाऽशुभफलप्रदर्शिनी ।
अन्धकं भवति तस्य जीवितं दीपहीनमिव मन्दिरं निशि ॥ १२ ॥

शुभाशुभ प्रकट करने वाली जन्म-पत्री जिसके पास नहीं है उसका जीवन उसी प्रकार अन्धकारमय है जैसे रात्रि में बिना दीपक का गृह ॥ १२ ॥

वंशो विस्तरतां यातु कीर्तिर्यातु दिगन्तरम् ।
आयुर्विपुलतां यातु यस्यैषा जन्मपत्रिका ॥ १३ ॥

जिस व्यक्ति की यह जन्म पत्री है उसके वंश का विस्तार हो, दिगन्तर (दूर-दूर) तक कीर्ति व्याप्त हो तथा आयु की वृद्धि हो ॥ १३ ॥

यं ब्रह्म वेदान्तविदो वदन्ति परं प्रधानं पुरुषं तथान्ये ।
विश्वोद्गतेः कारणमीश्वरं वा तस्मै नमो विघ्नविनाशनाय ॥ १४ ॥

जिसको वेदान्ती लोग ब्रह्म कहते है अन्य (सांख्य शास्त्रज्ञ) लोग प्रधान पुरुष कहते हैं तथा जिसे संसार की उत्पत्ति का कारण स्वरूप ईश्वर मानते हैं उन (परब्रह्म) को मैं विघ्नों के विनाश हेतु प्रणाम करता हूँ ॥ १४ ॥

आदित्याद्या ग्रहाः सर्वे सनक्षत्राः सराशयः ।
सर्वान् कामान् प्रयच्छन्तु यस्यैषा जन्मपत्रिका ॥ १५ ॥

सूर्य आदि सभी नव ग्रह समस्त नक्षत्रों एवं राशियों सहित उसकी सभी कामनाओं की पूर्ति करें जिसकी यह जन्मपत्रिका है ॥ १५ ॥

जननी जन्मसौख्यानां वर्धिनी कुलसम्पदाम् ।
पदवी पूर्वपुण्यानां लिख्यते जन्मपत्रिका ॥ १६ ॥

जन्म-सम्बन्धी सुखों को उत्पन्न करने वाली, कुल-सम्पदा को बढ़ाने वाली पूर्व पुण्यों की आधार भूत जन्म पत्री को लिख रहा हूँ ॥ १६ ॥

एकदन्तो महाबुद्धिः सर्वज्ञो गणनायकः ।
सर्वसिद्धिकरो देवो गौरीपुत्रो विनायकः ॥ १७ ॥

एक दाँत वाले अत्यन्त बुद्धिमान् सर्वज्ञ (सभी शास्त्रों को जानने वाले) गणों के नायक, गौरीपुत्र विनायक सभी प्रकार से सिद्धिकारक हों ॥ १७ ॥

ब्रह्मा करोतु दीर्घायुर्विष्णुः कुर्याच्च सम्पदम् ।
हरो रक्षतु गात्राणि यस्यैषा जन्मपत्रिका ॥ १८ ॥

जिसकी यह जन्म पत्री है उसे ब्रह्मा दीर्घायु करें, विष्णु सम्पत्ति प्रदान करें तथा शिव उसके शरीर की रक्षा करें ॥ १८ ॥

गणाधिपो ग्रहाश्चैव गोत्रजा मातरो ग्रहाः ।
सर्वे कल्याणमिच्छन्तु यस्यैषा जन्मपत्रिका ॥ १९ ॥

गणपति, सभी ग्रह, गोत्रज (अपने कुल में उत्पन्न) लोग, तथा माता (मातृपक्ष के लोग) सभी लोग उनके कल्याण की कामना करें जिसकी यह जन्मपत्रिका है ॥ १९ ॥

कल्याणानि दिवामणिः सुललितां कीर्तिं कलानां निधि-
र्लक्ष्मीं क्ष्मातनयो बुधश्च बुधतां जीवश्चरञ्जीविताम् ।
साम्राज्यं भृगुजोऽर्कजो विजयतां राहुर्बलोत्कर्षतां
केतुर्यच्छतु तस्य वाञ्छितमियं पत्री यदीयोत्तमा ॥ २० ॥

सूर्य कल्याण, चन्द्रमा मनोहर कान्ति, मङ्गल धन सम्पत्ति, बुध विद्वत्ता, गुरु दीर्घायुष्य, शुक्र साम्राज्य, शनि विजय, राहु बल का उत्कर्ष, तथा केतु, इच्छित फल उसे प्रदान करें जिसकी यह उत्तम जन्म-पत्री है ॥ २० ॥

श्रीजन्मपत्री शुभदीपकेन व्यक्तं भवेद्भावि फलं समग्रम् ।
क्षपाप्रदीपेन यथा गृहस्थघटादिजातं प्रकटत्वमेति ॥ २१ ॥

श्री जन्मपत्री रूपी शुभ दीपक द्वारा समस्त भविष्य फल उसी प्रकार प्रकट होता है जैसे रात्रि में गृह में स्थित घट आदि वस्तु दीपक के प्रकाश से प्रकट (दृश्य) होती है ॥ २१ ॥

ये कुर्वन्ति शुभाशुभानि जगतां यच्छन्ति ते सम्पदो
ये पूजाबलिदानहोमविधिभिर्निघ्नन्ति विघ्नानि च ।
ये संयोगवियोगजीवितकृतः सर्वेश्वराः खेचरा-
स्ते तिग्मांशुपुरोगमा ग्रहगणाः शान्तिं प्रयच्छन्तु वः ॥ २२ ॥

जो संसार का शुभ-अशुभ करते हैं, जो सम्पत्ति प्रदान करते हैं, जो पूजा, बलिदान होम आदि विधियों से विघ्नों का विनाश करते हैं तथा जिनसे संयोग-वियोग का क्रम चल रहा है ऐसे सभी के स्वामी आकाश में संचरण करने वाले सूर्यादि ग्रहगण तुम्हें शान्ति प्रदान करें ॥ २२ ॥

येनोत्पाट्य समूलमन्दरगिरिश्छत्रीकृतो गोकुले
राहुर्येन महाबली सुररिपुः कायार्द्धशीर्षीकृतः ।
कृत्वा त्रीणि पदानि येन वसुधां बद्धो बलिर्लीलया
स त्वां पातु युगे युगे युगपतिस्त्रैलोक्यनाथो हरिः ॥ २३ ॥

जिसने जड़ से मन्दर गिरि को उखाड़ कर गोकुल में छत्र की तरह धारण किया, देवताओं के शत्रु महाबली राहु को जिसने अर्धशरीर किया, जिसने पृथ्वी को तीन पग में माप कर लीला (छल) से बलि को बाँध लिया वही युगों के स्वामी त्रिलोकी नाथ विष्णु युग-युग तुम्हारी रक्षा करें ॥ २३ ॥

पूषा पुष्टिं दिशतु सततं सन्ततिं शीतरोचि-
र्भौमो भाग्यं सितकरसुतः शान्तिमाङ्गल्यमेवम् ।
जीवो राज्यं चिरशुभगतां भार्गवा भूमिमार्की
राहुः सौख्यं शिखिन इति ते कीर्तिमभ्रंलिहं च ॥ २४ ॥

सूर्य सदैव पुष्टि, चन्द्रमा सन्तति, मङ्गल भाग्य, बुध शान्ति और मङ्गल (शुभ), गुरु राज्य, शुक्र चिरसौभाग्य, शनि भूमि, राहु और केतु सुख प्रदान करें तथा सभी (ग्रह) आकाश पर्यन्त (देशदेशान्तर तक) कीर्ति दें ॥ २४ ॥

ग्रहा राज्यं प्रयच्छन्ति ग्रहा राज्यं हरन्ति च ।
ग्रहैर्व्याप्तमिदं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥ २५ ॥

ग्रह राज्य प्रदान करते है तथा ग्रह राज्य का हरण करते हैं। ग्रहों के द्वारा स्थावर जंगम सहित यह समस्त त्रैलोक्य व्याप्त है ॥ २५ ॥

उमा गौरी शिवा दुर्गा भद्रा भगवती तथा ।
कुलदेव्यथ चामुण्डा रक्षन्तां बालकं सदा ॥ २६ ॥

उमा (पार्वती), गौरी, शिवा, दुर्गा, भद्रा, भगवती, कुलदेवी तथा चामुण्डा ये देवियाँ सदैव बालक (जातक) की रक्षा करें ॥ २६ ॥

अविरलमदजलनिवहं भ्रमरकुलानीकसेवितकपोलम् ।
अभिमतफलदातारं कामेशं गणपतिं वन्दे ॥ २७ ॥

निरन्तर-मदजल राशि एवं भ्रमरकुलों से सेवित (अच्छादित) कपोलवाले, अभीष्ट फल को देने वाले, कामनाओं के अधिपति गणपति (गणेश जी) की वन्दना करता हूँ ॥ २७ ॥

रहमान (यवनों के ईश्वर खुदा) की प्रशस्ति—

यः पश्चिमाभिमुखसंस्थितविद्यमानो ह्यव्यक्तमूर्तिपरिवर्तितविश्वभोगः ।
दुर्लक्ष्यविक्रमगतिः कृतकर्मलक्ष्यो राज्याश्रयं दिशतु वो रहमाण एषः ॥ २८ ॥

जो पश्चिम की ओर मुखकर आराधना करने वालों (मुसलमानों) के लिए विद्यमान है तथा विश्व के ऐश्वर्य को परिवर्तित कर अव्यक्त (निराकार) रूप है जिसके पराक्रम की दुर्बोध (कठिनाई से समझने योग्य) गति उनके द्वारा किये गये कर्मों से ही लक्षित होती है ऐसे वे 'रहमान' तुम्हें राज्यश्री प्रदान करें ॥ २८ ॥

"अथ श्रीमन्नृपविक्रमार्कराज्यादमुकसंवत्सरेऽमुकशाके करणगताब्दाधिकमासावमदिनाहर्गणामुकायनामुकगोलगते श्रीसूर्येऽमुकऋतावमुकमासेऽमुकपक्षेऽमुकतिथावमुकवासरे घटीपलामुकनक्षत्रे घटीपलामुकयोगे घटीपलामुककरणेऽत्र दिने सूर्योदयाद्दिनगतघटीपलामुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते चन्द्रे, अमुकराशिस्थिते भौमे, बुधे गुरौ शुक्रे शनौ राहौ केतौ वा अमुकराशिनवांशेऽमुकलग्नाधिपतावमुकराश्यधिपतौ, एवं पुण्यतिथौ पञ्चाङ्गशुद्धौ शुभग्रहनिरीक्षतकल्याणवत्यां वेलायां तात्कालिकामुकलग्नोदये संक्रान्तिगतांशघटीपलायनांशाः घटीपलमिश्रप्रमाणघटीपलदिनार्धप्रमाणघटीपलाक्षरनिशार्धप्रमाणघटीपलाक्षरदिनप्रमाणघटीपलरात्रिप्रमाणघटीपलसंमीलनेऽहोरात्रप्रमाणघटीपलरविभोग्यलङ्कोदयाद् गतघटीपल उन्नतघटीपलसूर्यपुरुषाकारनक्षत्रं अमुकस्थाने पतितं तत्र कैलासगिरिशिखर उमामहेश्वरसंवादविंशोत्तरीदशाप्रमाणेनादावमुकदशामध्ये जन्मामुकसंध्यायाममुकयामकेऽमुकवंशोद्भवगङ्गानीरपवित्रोपमामुकान्वयेऽमुकगोत्रेऽमुकपुत्रे, अमुकगृहे भार्याऽमुकनाम्नी पुत्ररत्नमजीजनत् । अत्र होराशास्त्रप्रमाणेनामुकनक्षत्रेऽमुकचरणेऽमुकाक्षरेऽमुकयोनावमुकनाड्याममुकगणेऽमुकवर्णेऽमुकवर्गेऽमुकयुंजायां तस्य चिरञ्जीवामुकनाम प्रतिष्ठितं स च जिनप्रसादाद्दीर्घायुर्भवतु इति ।

जन्मपत्र की विषयानुक्रमणी—

अथजन्मकुण्डली—कलियुगफलं संवत्सरफलायनफलगोलफल-ऋतुफलमासफलपक्षफलतिथिवारफलदिनजातफल-योगफलकरणफलगणफलयोनिफलवारायुर्लग्नफलांशफलानामग्रे चन्द्रकुण्डलिकाचक्रं चन्द्रकुण्डलीफलम् । चन्द्रात्फल-

राश्यायुर्भावसाधनार्थं सूर्यादिकमध्यमसूर्यादिकस्पष्टसूर्यादिकतात्कालिकभावचक्रविधिफलद्वादशभवने नवग्रहाणां द्वादशभवननिरीक्षणविधिद्वादशभवने नवग्रहाणां फलं द्वादशभवनेशफलं द्वादशभवने द्वादशलग्नफलं द्वादशलग्नानां स्वामिफलं षड्वर्गमैत्रीचक्रं षड्वर्गकुण्डलीचक्रं पञ्चमहापुरुषयोगफलं सुनफाऽनफादुरुधराकेमद्रुमवोसिवेश्युभयचरीयोगिनी–फलराजयोगद्वादशायुर्गतिनवग्रहफलदीप्तस्वस्थनवप्रकारग्रहफलम्, अरिष्टभङ्गराजयोगचक्रम्, अश्वचक्रम्, शतपदचक्रम्, सूर्यकालानलचन्द्रकालानलयमदंष्ट्रात्रिनाडियन्त्रसर्वतोभद्रचक्रम्, चन्द्रावस्थाचक्रं रश्मिचक्रं रश्मिफलं चतुर्विध बलाष्टवर्गाष्टवर्गफलं सर्वाष्टकवर्गचक्रं मैत्रीचक्रं महादशाफलंविंशोत्तर्यष्टोत्तरीसंध्यापचकचक्रमन्तर्दशाफलमुपदशाचक्रमुपदशाफलम् ।"

संवत से शक ज्ञान—

विक्रमादित्यराज्याब्दात् पञ्चत्रिंशोत्तरं शतम् ।
पातयित्वा भवेच्छाकं चैत्रार्द्धात्तिथयः स्मृताः ॥ १ ॥

विक्रम संवत् से १३५ (एक सौ पैंतिस) घटाने पर शकाब्द होता है। चैत्र मास के आधे (चैत्र शुक्ल प्रतिपदा) से तिथियों की गणना आरम्भ होती है ॥ १ ॥

उदाहरण—वि० संवत् २०३७ इसमें से १३५ घटाया २०३७–१३५=१९०२ शेष रहा यही शकाब्द हुआ ।

तदनन्तरं करणगताब्दाधिकमासाऽहर्गणाद्या यस्मिन् ।
ग्रन्थमते ज्ञायन्ते तस्मिन्नेव ग्रन्थे विलोक्य लेख्याः ॥

युग साधन—

द्वात्रिंशच्च सहस्राणि कलौ लक्षचतुष्टयम् ।
वेदाग्निनेत्रैर्गुण्यं हि कृतं त्रेता च द्वापरम् ॥ २ ॥

कलियुग का मान ४३२००० सौर वर्ष है। इस (कलियुग) के मान को ४ से गुणा करने पर कृत (सत्य) युग, ३ से गुणा करने पर त्रेता युग तथा २ से गुणा करने पर द्वापर का मान सौर वर्षों में होता है ॥ २ ॥

४३२०००×१=	४३२०००	सौर वर्ष	कलियुग
४३२०००×२=	८६४०००	,,	द्वापर
४३२०००×३=	१२९६०००	,,	त्रेता
४३२०००×४=	१७२८०००	,,	कृतयुग
	४३२००००	,,	एक महायुग

कलियुग का फल—

पापात्मा दुःखसंयुक्तो धनहीनोऽयशा नरः ।
दुष्टबुद्धिर्दुराचारो जायते च कलौ युगे ॥ ३ ॥

कलियुग में पापात्मा, दुःखी, निर्धन, अपयशी, दुष्ट-बुद्धि एवं दुराचारी पुरुष (प्राणी) उत्पन्न होते हैं ॥ ३ ॥

प्रभवादि साठ संवत्सरों के नाम—

प्रभवो विभवः शुक्लः प्रमोदोऽथ प्रजापतिः।
अङ्गिराः श्रीमुखो भावो युवा धाता तथैव च ॥ ४ ॥
ईश्वरा बहुधान्यश्च प्रमाथी विक्रमो वृषः।
चित्रभानुः सुभानुश्च तारणः पार्थिवो व्ययः ॥ ५ ॥
सर्वजित् सर्वधारी च विरोधी विकृतिः खरः।
नन्दनो विजयश्चैव जयो मन्मथदुर्मुखौ ॥ ६ ॥
हेमलम्बी विलम्बी च विकारी शार्वरी प्लवः।
शुभकृत् शोभकृत् क्रोधी विश्वावसुपराभवौ ॥ ७ ॥
प्लवङ्गः कीलकः सौम्यः साधारण-विरोधकृत्।
परिधावी प्रमादी च, आनन्दो राक्षसो नलः ॥ ८ ॥
पिङ्गलः कालयुक्तश्च सिद्धार्थी रौद्रदुर्मती।
दुन्दुभी रुधिरोद्गारी रक्ताक्षी क्रोधनः क्षयः ॥ ९ ॥

[इन साठ संवत्सरों के नाम सारणी में सरलता के लिए क्रम से दिए गए हैं। प्रथम से बीसवें संवत्सर तक ब्रह्मविंशतिका २१ वें से ४० वें तक विष्णु विंशतिका तथा ४१ से ६० वें संवत्सर तक रुद्रविंशतिका कहते हैं।]

संवत्सरबोधक सारणी

ब्रह्मविंशतिका	विष्णु विंशतिका	रुद्रविंशतिका
१ प्रभव	२१ सर्वजित्	४१ प्लवङ्ग
२ विभव	२२ सर्वधारी	४२ कीलक
३ शुक्ल	२३ विरोधी	४३ सौम्य
४ प्रमोद	२४ विकृति	४४ साधारण
५ प्रजापति	२५ खर	४५ विरोधकृत्
६ अङ्गिरा	२६ नन्दन	४६ परिधावी
७ श्रीमुख	२७ विजय	४७ प्रमादी
८ भाव	२८ जय	४८ आनन्द
९ युवा	२९ मन्मथ	४९ राक्षस
१० धाता	३० दुर्मुख	५० नल
११ ईश्वर	३१ हेमलम्बी	५१ पिङ्गल
१२ बहुधान्य	३२ विलम्बी	५२ कालयुक्त
१३ प्रमाथी	३३ विकारी	५३ सिद्धार्थी
१४ विक्रम	३४ शार्वरी	५४ रौद्र
१५ वृष	३५ प्लव	५५ दुर्मति
१६ चित्रभानु	३६ शुभकृत्	५६ दुन्दुभि
१७ सुभानु	३७ शोभकृत	५७ रुधिरोद्गारी
१८ तारण	३८ क्रोधी	५८ रक्ताक्षी
१९ पार्थिव	३९ विश्वावसु	५९ क्रोधन
२० व्यय	४० पराभव	६० क्षय

इष्ट संवत्सर साधन-विधि—

शकेन्द्रकाल: पृथगाकृतिघ्न: शशाङ्कनन्दाश्वियुगै: ४२९१ समेत: ।
शराद्रिवस्विन्दु-१८७५ हृत: सलब्ध: षष्ट्याप्तशेषे प्रभवादयोऽब्दा: ।। १० ।।

अभी शकाब्द को २२ से गुणाकर गुणनफल में ४२९१ जोड़ कर १८७५ से भाग देने पर जो लब्धि प्राप्त हो उसे अभीष्ट शकाब्द में जोड़ कर ६० का भाग देने से शेष गत संवत्सर होता है। शेष में १ जोड़ने से वर्तमान संवत्सर की संख्या होती है ।। १० ।।

उदाहरण—अभीष्ट शक १९०२

१९०२ × २२ = ४१८४४ + ४२९१ = ४६१३५

१८७५ का भाग देने से $\frac{४६१३५}{१८७५}$ = लब्धि २४ प्राप्त हुई इसे शकाब्द १९०२

में जोड़ कर ६० का भाग दिया १९०२ + २४ = $\frac{१९२६}{६०}$ = लब्धि ३२ शेष ६

शेष तुल्य ६ठाँ गत संवत्सर ६ + १ = ७वाँ श्रीमुख वर्तमान संवत्सर हुआ।

विशेष—

बृहस्पति के मध्यमान से एक राशि के भोग काल को एक संवत्सर कहते हैं। इनकी गणना सिद्धान्त ग्रन्थों में विजयादि क्रम से है। अर्थात् जहाँ पर सृष्टयादि से अहर्गण एवं ग्रहगणना पद्धति विहित है वहाँ प्रथम संवत्सर 'विजय' होता है। अनन्तर जय मन्मथ प्रभृति क्रम से संवत्सर होते हैं। तथा जहाँ शकाब्द (करण-ग्रन्थों में) से ग्रहगणना की गई है वहाँ प्रभव, विभव आदि क्रम से संवत्सर की गणना की गई है।

अभीष्ट समय में संवत्सर का ज्ञान करने के लिए भिन्न-भिन्न ग्रन्थों में भिन्न-भिन्न विधियाँ दी गई है। कहीं शकाब्द से कहीं विक्रमाब्द से संवत्सर सिद्ध किया जाता है। विक्रम संवत् से संवत्सर जानने की विधि इस प्रकार है—

संवत्कालस्त्वङ्कयुत: कृत्वा शून्यरसैर्हृत: ।
शेष: संवत्सरो ज्ञेय: प्रभवादिर्बुधै: क्रमात् ।।

विक्रम संवत् में ९ जोड़ कर ६० से भाग दें शेष गत संवत्सर तथा शेष में एक जोड़ने से वर्तमान् संवत्सर होता है। यथा संवत् २०३७ शक १९०२ में संवत्सर ज्ञान अभीष्ट है। अतः संवत् (विक्रमाब्द) २०३७ + ९ = २०४६ योगफल में ६० का भाग दिया—

```
६०) २०४६ (३४
    १८०
    ---
     २४६
     २४०
    ---
       ६  गत संवत्सर
```

६ + १ = ७वाँ वर्तमान् श्रीमुख संवत्सर हुआ।

कुछ विद्वानों ने वर्तमान संवत्सर के गतमासादि निकालने की भी विधि लिखी है। ग्रन्थोक्त विधि से शकाब्द द्वारा संवत्सरानयन विधि में २२ गुणित शकाब्द में ४२९१ जोड़कर १८७५ का भाग देने से जो शेष रह जाता है उसे १२ से गुणा कर १८७५ का भाग देने से लब्धि गत मास तथा शेष को ३० से गुणा कर १८७५ से भाग देने पर लब्धि दिन एवं पुनः शेष को ६० से गुणा कर १८७५ से भाग देने पर लब्धि घटी होती है।

शकाब्द से प्रकारान्तर द्वारा संवत्सर साधन—

शाकं रामाक्षि-संयोज्यं षष्टिभागेन हारयेत्।
शेषं संवत्सरं ज्ञेयं लब्धं तत्परिवर्तकम्॥ ११॥

अभीष्ट शकाब्द में २३ जोड़कर ६० का भाग देने से शेष प्रभवादि (गत) संवत्सर होते हैं। लब्धि अभीष्ट शकाब्द तक ६० संवत्सरों की चक्र भ्रमण संख्या होती है। यह विधि अत्यन्त स्थूल है। इससे शुद्ध संवत्सर का ज्ञान नहीं हो पाता है। यथा—

शकाब्द १९०२

१९०२+२३=१९२५ योगफल में ६० का भाग दिया—

```
६० ) १९२५ ( ३२
     १८०
     ———
      १२५
      १२०
      ———
        ५ गतसंवत्सर
```

५+१=६ वर्तमान संवत्सर अंगिरा हुआ। परन्तु यह अशुद्ध है क्यों कि उक्त शकाब्द में सातवा श्रीमुख संवत्सर था जैसा कि गणित द्वारा भी सिद्ध हो चुका है। अतः इस प्रक्रिया में २३ के स्थान पर २४ जोड़कर ६० का भाग दें तो गत संवत्सर आयेगा॥ ११॥

संवत्सरों के फल

प्रभव—

जातिस्वकुलधर्मात्मा विद्यावांश्च महाबलः।
क्रूरश्च कृतविद्यश्च जायते प्रभवोदयः॥ १२॥

प्रभवसंवत्सर में उत्पन्न हुआ व्यक्ति अपनी जाति एवं कुल के धर्मों का आचरण करने वाला, विद्वान्, शक्तिशाली, क्रूर तथा शास्त्रों का मर्मज्ञ होता है॥ १२॥

विभव—

स्त्रीस्वभावश्च चपलस्तस्करः स धनी तथा ।
परोपकारी पुरुषो जायते विभवोदये ॥ १३ ॥

विभव संवत्सर में उत्पन्न पुरुष स्त्री की तरह स्वभाव एवं चञ्चल प्रकृति वाला, तस्कर (चोर), धनी तथा दूसरों का उपकार करने वाला होता है ॥ १३ ॥

शुक्ल—

शुद्धः शान्तः सुशीलश्च परदाराभिलाषुकः ।
परोपकारकर्ता च निर्धनः स हि शुक्लजः ॥ १४ ॥

जो शुद्ध (अन्तः करण युक्त), शान्त, सुशील, अन्य स्त्रियों में आसक्त, परोपकार करने वाला तथा निर्धन होता है वही शुक्ल संवत्सर में होता है ॥ १४ ॥

प्रमोद—

क्वचिल्लक्ष्मीः क्वचिद्भार्या बन्धुमित्रारिविग्रहः ।
राजपूज्यः प्रधानश्च प्रमोदाब्दभवो नरः ॥ १५ ॥

जो प्रमोद नामक संवत्सर में उत्पन्न होता है वह कहीं लक्ष्मी (धन), कहीं पत्नी, भाई, मित्र और शत्रु से विरोध करने वाला, राजा से पूजित तथा प्रधान पुरुष होता है।

प्रजापति—

प्रजापालनसन्तुष्टो दाता भोक्ता बहुप्रजः ।
विदेशेषु समाख्यातो वित्तहेतोः प्रजापतौ ॥ १६ ॥

प्रजापति संवत्सर में उत्पन्न व्यक्ति अपनी प्रजा के पालन में सन्तुष्ट रहने वाला, दानी, उपभोग करने वाला, अधिक सन्तान वाला तथा अपने (अत्यधिक) धन के कारण विदेशों में ख्याति प्राप्त करने वाला होता है ॥ १६ ॥

अङ्गिरा—

क्रियाद्याचारसम्पन्नो धर्मशास्त्रागमादिषु ।
आतिथ्यमित्रभक्तोऽयमङ्गिरोजात उच्यते ॥ १७ ॥

अङ्गिरा में उत्पन्न हुआ व्यक्ति (धर्म) क्रिया आदि आचारों से युक्त, धर्मशास्त्र, वेद आदि में दक्ष, अतिथि एव मित्रों का आदर करने वाला होता है ॥ १७ ॥

श्रीमुख—

धनवान् देवभक्तश्च धातुव्यवहृतौ कृती ।
पाखण्डकृतकर्मा च श्रीमुखे तु भवेन्नरः ॥ १८ ॥

श्रीमुख नामक संवत्सर में उत्पन्न हुआ व्यक्ति धनवान्, देवताओं में भक्ति रखने वाला, धातुओं के व्यवहार (धातु सम्बन्धी कार्यों) में निपुण, तथा पाखण्ड युक्त कार्य करने वाला होता है ॥ १८ ॥

भाव—

भावनां कुरुते नित्यं कर्मकर्ता पुमान् भवेत् ।
मत्स्यमांसप्रियश्चैव जायते भाववत्सरे ॥ १९ ॥

जो व्यक्ति भाव नामक संवत्सर में उत्पन्न होता है, वह प्रतिदिन भावना करने वाला, कार्य-कुशल तथा मत्स्य एवं मांस का प्रेमी होता है ॥ १९ ॥

युवा—

भार्यार्तो जलभीतश्च व्याधिदुःखादिपीडितः ।
सर्वदा प्रीतिसंयुक्तो युवसंवत्सरे फलम् ॥ २० ॥

पत्नी से दुःखी, जल से भयभीत, व्याधि एवं दुःखों से पीडित तथा सदैव प्रसन्नता युक्त युवा संवत्सर में उत्पन्न व्यक्ति का फल होता है ॥ २० ॥

धाता—

सर्वलोकगुणगौरवयुक्तः सुन्दरोऽप्यतितरां गुरुभक्तः ।
शिल्पशास्त्रकुशलश्च सुशीलो धातृवत्सरभवो हि नरः स्यात् ॥ २१ ॥

धाता संवत्सर में उत्पन्न व्यक्ति सभी प्रकार के गुणों एवं गौरव से युक्त, सुन्दर शरीर वाला, अतिशय गुरुभक्ति-सम्पन्न, शिल्प शास्त्र में निपुण तथा सुशील होता है ॥ २१ ॥

ईश्वर—

धनी भोगी तथा कामी पशुपालप्रियो भवेत् ।
अर्थधर्मसमायुक्तो नर ईश्वरसम्भवः ॥ २२ ॥

ईश्वर नामक संवत्सर में उत्पन्न हुआ व्यक्ति धनवान, भोगी (भौतिक सुखों का उपभोग करने वाला), कामी, पशुपालन में रुचि रखने वाला तथा अर्थ एवं धर्म से सदैव युक्त रहने वाला होता है ॥ २२ ॥

बहुधान्य—

वेदशास्त्ररतो नित्यं कलागान्धर्वगायनः ।
नातिगर्वी सुरापश्च जायते बहुधान्यके ॥ २३ ॥

बहुधान्य संवत्सरमें उत्पन्न होने वाला व्यक्ति निरन्तर वेद शास्त्रों के अध्ययन में रत रहने वाला, कला एवं नृत्य-गीत का ज्ञाता, अधिक गर्व न करने वाला तथा सुरापान करने वाला होता है ॥ २३ ॥

प्रमाथी—

परदाराभिलाषी च परद्रव्यरतो नरः ।
व्यसनी द्यूतवादी च प्रमाथिनो भवेन्नरः ॥ २४ ॥

प्रमाथी नामक संवत्सर में उत्पन्न हुआ व्यक्ति पर स्त्री एवं दूसरों के धन में आसक्त, व्यसन (नशा) करने वाला तथा जुआरी होता है ॥ २४ ॥

विक्रम—

संतुष्टो व्यसने सक्तः सप्रतापो जितेन्द्रियः ।
शूरश्च कृतविद्यश्च विक्रमे जायते नरः ॥ २५ ॥

विक्रम संवत्सर में उत्पन्न हुआ व्यक्ति सन्तोषी, व्यसन में आसक्त, प्रतापी, इन्द्रियों को जीतने वाला, शूर तथा शास्त्रज्ञ होता है ॥ २५ ॥

वृष—

स्थूलोदरः स्थूलकचोऽल्पपाणिः कुलापवादी कुलसेवकश्च ।
धर्मार्थयुक्तो बहुवित्तहारी वृषे प्रजातश्च भवेन्मनुष्यः ॥ २६ ॥

वृष नामक संवत्सर में समुत्पन्न व्यक्ति मोटे (तुन्दिल) पेट, मोटे बाल तथा छोटे हाथों वाला, कुलनिन्दक, कुल की सेवा करने वाला, धर्म-अर्थ से युक्त एवं बहुत अधिक धन संग्रह करने वाला होता है ॥ २६ ॥

चित्रभानु—

तेजस्वी ह्यतिगर्वी च हीनकर्मकृतस्थितिः ।
देवपूजाप्रियो नित्यं चित्रभानौ भवेन्नरः ॥ २७ ॥

चित्रभानु संवत्सर में उत्पन्न व्यक्ति तेजस्वी, घमण्डी, हीन कार्यों में रुचि रखने वाला, तथा देवाराधन का प्रेमी होता है ॥ २७ ॥

सुभानु—

सर्वाणि शुभकार्याणि मित्रामित्रफलं लभेत् ।
सर्वसंग्रहकर्त्ता च सुभानौ जायते नरः ॥ २८ ॥

सुभानु संवत्सर में जन्म लेने वाला प्राणी सभी प्रकार के शुभ कार्यों को करने वाला, मित्र एवं शत्रु के (शुभ अशुभ) परिणामों से युक्त तथा सभी प्रकार की वस्तुओं का संग्रह करने वाला होता है ॥ २८ ॥

तारण—

सर्वलोकप्रियो नित्यं सर्वधर्मवहिष्कृतः ।
राजपूजाप्तवित्तश्च तारणे जायते नरः ॥ २९ ॥

जो तारण संवत्सर में जन्म लेता है वह सदैव सर्वत्र जनप्रिय, सभी धर्मों से वहिष्कृत, राजा की सेवा (राजकीय सेवा) से धन अर्जित करने वाला व्यक्ति होता है ॥ २९ ॥

पार्थिव—

शिवब्रह्मविकर्मा च शुभसौख्यप्रदायकः ।
भव्ययुक्तश्च धर्मात्मा पार्थिवे जायते नरः ॥ ३० ॥

पार्थिव संवत्सर में उत्पन्न होने वाला मनुष्य शिव एवं ब्रह्म की उपासना करने वाला, कल्याण एवं सुख को देने वाला, सौन्दर्य युक्त तथा धर्मात्मा होता है ॥३०॥

व्यय—

दाता भोक्ता प्रधानत्वं जन्मकर्मणि सौख्यकम् ।
बहुधा मित्रलाभश्च जायते व्ययवत्सरे ॥ ३१ ॥

व्यय संवत्सर में जन्म लेने वाला दानी, विषयोपभोग करने वाला, अपने जन्म तथा कर्मों से प्रतिष्ठित, सुख-प्राप्त करने वाला, अनेक बार मित्रों का लाभ प्राप्त करने वाला होता है ॥ ३१ ॥

सर्वजित—

जित्वा च सकलाँल्लोकान् विष्णुधर्मपरायणः ।
पुण्यानि सर्वकर्माणि सर्वजिज्जो भवेन्नरः ॥ ३२ ॥

समस्त जगत को जीतकर विष्णु की अराधना मे लीन (वैष्णव), तथा पुण्य-दायक सभी कर्मों को करने वाला व्यक्ति सर्वजित् नामक संवत्सर में उत्पन्न होता है ॥ ३२ ॥

सर्वधारि—

पितृमातृप्रियो नित्यं गुरुभक्तो भवेन्नरः ।
शूरः शान्तः प्रतापी च सर्वधारिभवो नरः ॥ ३३ ॥

सर्वधारि संवत्सर में उत्पन्न होने वाला व्यक्ति माता पिता का प्रिय, गुरुभक्त, वीर, शान्त एवं प्रतापी होता है ॥ ३३ ॥

विरोधी—

विरोधी कर्मशार्दूलो मत्स्यमांसकृतादरः ।
धर्मबुद्धिरतो नित्यं प्रशस्तो लोकपूजित ॥ ३४ ॥

विरोधी नामक संवत्सर में जन्म लेने वाला व्यक्ति निर्भीक कार्यकर्त्ता, मत्स्य एवं मांस का प्रेमी, सदा धर्माचरण करने वाला, श्रेष्ठ एवं समाज में आदरणीय (प्रतिष्ठित) होता है ॥ ३४ ॥

विकृति

चित्रवादी च नृत्यज्ञो गान्धर्वो भिन्नसंशयः ।
दाता मानी तथा भोगी विकृतौ जायते नरः ॥ ३५ ॥

विकृति संवत्सर में जन्म लेने वाला पुरुष विचित्र वचन बोलने वाला (हास्य-व्यंग करने वाला), नृत्य का ज्ञाता, गान्धर्व (गीत आदि) कला में निपुण, संशय-रहित, दानी, स्वाभिमानी, एवं सुखोपभोग करने वाला होता है ॥ ३५ ॥

खर—

परहिंसापरो मैत्र्या परद्रव्यरतो भवेत्।
कुटुम्बभारकोत्साही जायते खरवत्सरे॥ ३६॥

दूसरों की हिंसा करने वाला, मित्रता द्वारा दूसरों के धन में आसक्त, परिवार का भरण-पोषण करने वाला व्यक्ति खर नामक संवत्सर में उत्पन्न होता है॥ ३६॥

नन्दन—

सर्वदा प्रीतिसंयुक्तो गृहे कल्याणकारकः।
राजमान्योऽपि पुरुषो नन्दने जायते नरः॥ ३७॥

सदैव प्रीति से युक्त, गृह में कल्याण करने वाला, तथा राजा-द्वारा सम्मानित पुरुष नन्दन नामक संवत्सर में उत्पन्न होता है॥ ३७॥

विजय—

कीर्तिरायुर्यशः सौख्यं सर्वकर्मशुभान्वितः।
युद्धे शूरोऽरिणाशक्तो विजये वत्सरे फलम्॥ ३८॥

कीर्ति, आयु, यश, सुख, सभी प्रकार के कार्यों में सफलता, युद्ध में शूर, शत्रु से अजेय, यह सब विजय संवत्सर (में जन्म लेने) का फल होता है॥ ३८॥

जय—

जेता युद्धे कलत्राणि मित्रामित्रफलं लभेत्।
व्यापारकर्मसंयुक्तो जयसंवत्सरे फलम्॥ ३९॥

युद्ध में विजयी, स्त्री सुख से युक्त, शत्रु एवं मित्र के (शुभाशुभ) फल को प्राप्त करने वाला, व्यापार कर्म से युक्त, जय संवत्सर में जन्म लेने वाला व्यक्ति होता है॥ ३९॥

मन्मथ—

अतिकामी चातिबुद्धिस्तृष्णावान् बहुमानितः।
निष्ठुरो भोगबलवान् मन्मथे जायते नरः॥ ४०॥

मन्मथ नामक संवत्सर में उत्पन्न व्यक्ति अत्यन्त कामी, अत्यधिक बुद्धिमान, लोभी, समाज में सम्मानित, निष्ठुर, सुख के साधन एवं बल से सम्पन्न होता है॥ ४०॥

दुर्मुख—

शुचिः शान्तः सुदक्षश्च सर्वत्र गुणपूजितः।
परोपकारी वादी च दुर्मुखे दुर्मुखीप्रियः॥ ४१॥

दुर्मुख नामक संवत्सर में उत्पन्न हुआ व्यक्ति पवित्र आत्मा, शान्त, परमनिपुण,

अपने गुणों द्वारा सर्वत्र पूजित, परोपकार करने वाला, वाद-विवाद करने वाला तथा दुष्ट मुख वाली स्त्री का प्रिय होता है ।। ४१ ।।

हेमलम्बी—

मणिमुक्तोस्तथा रत्नमष्टधातुसमन्वितः ।
अदाता कृपणः पूज्यो हेमलम्बी नरो भवेत् ।। ४२ ।।

हेमलम्बी संवत्सर में उत्पन्न हुआ व्यक्ति मणि, मुक्ता (मोती), रत्न (हीरा, पन्ना आदि) तथा अष्टधातुओं[1] (१. स्वर्ण, ३. ताँबा, ४. राँगा, ५. जस्ता, ६. सीसा, ७. लोहा, ८. पारा) से युक्त होता है । दान न देने वाला, कृपण परन्तु पूज्य (सम्मानित) होता है ।। ४२ ।।

विलम्बी—

अलसः सततं जातो व्याधिदुःखसमन्वितः ।
कुटुम्बधारको वापि विलम्बी जायते नरः ।। ४३ ।।

विलम्बी नामक संवत्सर में जन्म लेने वाला व्यक्ति आलसी, निरन्तर होने वाली व्याधियों के दुःख से युक्त तथा कुटुम्ब का भार वहन करने वाला होता है ।। ४३ ।।

विकारी—

रक्तवैकारयुक्तश्च रक्ताक्षः पित्तसम्भवः ।
वनप्रियो धनैर्हीनो विकारी तु भवेन्नरः ।। ४४ ।।

विकारी नामक संवत्सर में उत्पन्न व्यक्ति रक्तदोष से युक्त, लाल आँखों वाला पित्तविकार से युक्त, जंगल का प्रेमी तथा धन से हीन होता है ।। ४४ ।।

शर्वरी—

वेदशास्त्रप्रियो देवब्राह्मणे शुचिभक्तिमान् ।
शर्करारसभोगी च शार्वरी जायते नरः ।। ४५ ।।

जिसका जन्म शर्वरी नामक संवत्सर में होता है वह वेद-शास्त्र का प्रेमी, देवता तथा ब्राह्मणों में पवित्र भक्ति रखने वाला, शर्करा आदि मधुर पदार्थों का सेवन करने वाला होता है ।। ४५ ।।

प्लव—

सुनिद्रो बहुभोगी च व्यवसायी यशोऽन्वितः ।
पूजितः सर्वलोकानां प्लवसंवत्सरे फलम् ।। ४६ ।।

---

१. स्वर्णं रूप्यं च ताम्रं च, रङ्गं यशदमेव च ।
सीसं लौहं रसश्चेति धातवोष्टौ प्रकीर्तिता ।।

प्लव नामक संवत्सर में जन्म लेने वाला व्यक्ति सुन्दर (प्रगाढ) निद्रा में सोने ..मा अधिक सुखभोग करने वाला, व्यापारी, यशस्वी तथा लोक में पूजित (समाज में प्रतिष्ठित) होता है ॥ ४६ ॥

शुभ—

कर्मवान् सुयशाः प्रोक्तो धर्मशीलस्तपस्करः ।
प्रजापालः सुनिष्णातः शुभसंवत्सरे फलम् ॥ ४७ ॥

कर्मठ, सुन्दर यश, धर्मपरायण, तपस्वी, प्रजा (आश्रित) का पालन करने वाला, अत्यन्त निपुण शुभ संवत्सर में जन्म लेने वाले व्यक्ति का फल कहा गया है ॥४७॥

शोभन—

सुचित्तः शान्तचित्तश्च शूरो दाता ह्यनेकधा ।
नातिवृद्धो न पूर्णत्वं शोभने फलमश्नुते ॥ ४८ ॥

शोभन संवत्सर में उत्पन्न हुआ व्यक्ति निर्मल चित्त एवं शान्तचित्त वाला, शूर, अनेक बार दान करने वाला होता है । न अधिक वृद्ध होता है और न पूर्णता को प्राप्त करता है । इस प्रकार के फल का भोग करता है ॥ ४८ ॥

क्रोधी—

अतिक्रोधीमतिः शूरो विज्ञानौषधिसंग्रही ।
परापवादी सर्वत्र क्रोधसंवत्सरे फलम् ॥ ४९ ॥

अत्यन्त क्रोधी स्वभाव वाला, शूर, विज्ञान और औषधि का संग्रह करने वाला दूसरों का सर्वत्र अपवाद (निन्दा) करने वाला व्यक्ति क्रोध नामक संवत्सर में उत्पन्न होता है ॥ ४९ ॥

विश्व—

छत्रदण्डपताकादिचामरादिविभूषितः ।
प्रधानपुरुषो जातो विश्वसंवत्सरे फलम् ॥ ५० ॥

छत्र, दण्ड, पताका (झण्डा), चँवर आदि राजचिह्नों से युक्त तथा प्रधान (श्रेष्ठ) पुरुष विश्व संवत्सर में जन्म लेने वाला होता है ॥ ५० ॥

पराभव—

भयार्त्तः शीतभीतश्च कातरो जायते नरः ।
अधर्मपरघाती च पराभवभवो मतः ॥ ५१ ॥

पराभव नामक संवत्सर में उत्पन्न हुआ व्यक्ति भय से पीड़ित, शीत से डरने वाला, कातर (कायर), धर्म से रहित तथा दूसरों का घात (प्रहार, धोखा) करने वाला होता है ॥ ५२ ॥

प्लवङ्ग—

रौद्रस्तस्करकर्मा च क्षितिपालो नरेश्वरः ।
योगाभ्यासरतो नित्यं प्लवङ्गे जायते नरः ॥ ५२ ॥

प्लवङ्ग नामक संवत्सर में उत्पन्न व्यक्ति उग्र स्वभाव वाला, तस्कर कर्म (चोरी से अवैध व्यापार) करने वाला, भूमि का रक्षक, एवं राजा होता है, तथा प्रतिदिन योगाभ्यास में लीन रहता है ॥ ५२ ॥

कीलक—

चित्रकर्ता समानश्च सुखी स्याद्ब्राह्मणप्रियः ।
पितृमातृषु भक्तश्च जायते कीलके फलम् ॥ ५३ ॥

कीलक संवत्सर में जन्म लेने वाला, चित्र बनाने वाला, समान प्रकृति वाला, सुखी, ब्राह्मणों का आदर करने वाला तथा माता-पिता का भक्त होता है ॥ ५३ ॥

सौम्य—

शुचिः शीलः समो दक्षः सप्रतापो जितेन्द्रियः ।
अतिव्याकुलभक्तश्च सौम्ये सौम्यफलं भवेत् ॥ ५४ ॥

सौम्य संवत्सर में जन्म लेने वाले पवित्र, शीलवान् (चरित्रवान्), सम (तटस्थ), सुखी, निपुण, प्रतापी, इन्द्रियों को जीतने वाले, तथा रोगियों की सेवा करने वाले होते हैं ॥ ५४ ॥

साधारण—

व्यवसायी चाल्पतुष्टो धर्मकर्मरतः सदा ।
शीघ्रागमोऽपि तत्रैव फलं साधारणे मतम् ॥ ५५ ॥

साधारण संवत्सर में उत्पन्न व्यक्ति व्यापारी, थोड़े में सन्तुष्ट रहने वाला, धर्म कार्य में सदैव रत तथा धार्मिक कार्यों में शीघ्र आने वाला (भाग लेने वाला) होता है ॥ ५५ ॥

विरोधकृत्—

विरोधकृति सञ्जातो विरोधी बान्धवैः सह ।
क्षणं सौम्यः क्षणं हीनो दुर्वारो जायते नरः ॥ ५६ ॥

विरोधकृत संवत्सर में उत्पन्न व्यक्ति अपने बन्धुओं से विरोध करने वाला, क्षण में सौम्य (सुशील) क्षण में हीन (दुष्ट), किसी भी प्रकार न रोका जाने वाला होता है ॥ ५६ ॥

परिधावि—

स्वल्पबुद्धिः क्रियास्वल्पो देशं भ्राम्यति मानवः ।
देवतीर्थप्रियो नित्यं परिधाविनि जायते ।। ५७ ।।

पारिधावि नामक संवत्सर में जन्म लेने वाला व्यक्ति अल्प बुद्धि वाला, अल्प कार्य करने वाला, देश में भ्रमण करने वाला, देवता एवं तीर्थों म निरन्तर प्रीति रखने वाला होता है ।। ५७ ।।

प्रमादी—

शर्वभक्तिप्रियो नित्यं गन्धमाल्यानुलेपनैः ।
शौचक्रियानुरक्तश्च प्रमादिप्रभवो नरः ।। ५८ ।।

प्रमादी में उत्पन्न व्यक्ति शिव में भक्ति रखने वाला तथा गन्ध (सुगन्धित द्रव्य) माला चन्दन से नित्य उनकी पूजा करने वाला, तथा पवित्र कार्यों में लीन रहने वाला होता है ।। ५८ ।।

आनन्द—

सर्वदानन्दसंयुक्तः सर्वदातिथिपूजकः ।
स्वजनार्थागमो नित्यमानन्दे जायते नरः ।। ५९ ।।

आनन्द नामक संवत्सर में उत्पन्न व्यक्ति सदैव आनन्द से युक्त, निरन्तर अतिथियों का सत्कार करने वाला, अपने बन्धुवर्ग से नित्य धन प्राप्त करने वाला होता है ।। ५९ ।।

राक्षस—

मत्स्यमांसप्रियो नित्यं नित्यं लुब्धकवृत्तिमान् ।
सुराहारी वृथापापी जायते राक्षसे नरः ।। ६० ।।

राक्षस नामक सवत्सर में उत्पन्न हुआ मनुष्य नित्य मछली मांस का प्रेमी (भक्षक), प्रतिदिन शिकार खेलने वाला, सुरापान करने वाला, व्यर्थ पाप करने वाला होता है ।। ६० ।।

नल—

बहुपुत्रोऽनन्तमित्रो द्रव्यलोभी कलिप्रियः ।
हानिः शोकस्तथा दुःखं नले जातो भवेन्नरः ।। ६१ ।।

नल संवत्सर म उत्पन्न पुरुष बहुत पुत्रों तथा असख्य मित्रों से युक्त, धन का लोभ करने वाला, झगड़ालू, हानि, दुःख तथा शोक प्राप्त करने वाला होता है ।। ६१ ।।

पिङ्गल—

पित्तप्रकोपसर्वात्मा नानाव्याधिरनेकधा ।
वाहनैश्च समायुक्तः पिङ्गले जायते नरः ॥ ६२ ॥

पिङ्गल संवत्सर में जन्म होने से पित्त के प्रकोप से मनुष्य के शरीर में अनेक प्रकार की व्याधियाँ होती हैं। तथा वह कई प्रकार के वाहनों से युक्त होता है ॥६२॥

कालयुक्त—

कृषिवाणिज्यकर्त्ता च तैलभाण्डादिसंग्रही ।
क्रयविक्रयकर्त्ता च कालयुक्ते भवेन्नरः ॥ ६३ ॥

कृषि कर्म एवं व्यापार करने वाला, तेल, वर्तन आदि का संग्रह करने वाला, क्रय एवं विक्रय करने वाला पुरुष कालयुक्त संवत्सर में उत्पन्न होता है ॥ ६३ ॥

सिद्धार्थी—

वेदशास्त्रप्रभावज्ञः सिद्धचित्तश्च कोमलः ।
सुकुमारो नृपैः पूज्यः कविः सिद्धार्थिजो नरः ॥ ६४ ॥

सिद्धार्थी संवत्सर में उत्पन्न पुरुष वेद शास्त्र के प्रभाव को जानने वाला, शान्तचित्त, एवं कोमल प्रकृति वाला सुकुमार, राजाओं से सम्मानित तथा कवि होता है ॥ ६४ ॥

रुद्र—

तस्करश्चपलो धृष्टः परद्रव्यरतः सदा ।
निन्द्यानि सर्वकर्माणि कुरुते रुद्रसम्भवः ॥ ६५ ॥

रुद्र संवत्सर में उत्पन्न व्यक्ति चोर, चञ्चल, धृष्ट, सदैव दूसरों के धन में आसक्त, तथा सभी निन्दित कर्मों को करने वाला होता है ॥ ६५ ॥

दुर्मति—

पापबुद्धिरतो नित्यं पापात्मा पापसंश्रितः ।
वधकर्मसमायोगो दुर्मती जायते नरः ॥ ६६ ॥

दुर्मति नामक संवत्सर में उत्पन्न पुरुष सदैव पापबुद्धि में रत (पापाचरण करनेवाला), पापी एवं पापियों के आश्रित रहने वाला तथा हत्या (वधकर्म) में संलग्न रहता है ॥ ६६ ॥

दुन्दुभि—

गीतवाद्यानि शिल्पानि मन्त्रमौषधिमेव च ।
सर्वाङ्गगुणसम्पन्नो नरो दुन्दुभिसम्भवः ॥ ६७ ॥

दुन्दुभि संवत्सर में उत्पन्न व्यक्ति गीत-वाद्य-मूर्तिकला, मन्त्र, औषधि को जानने वाला सभी प्रकार के गुणों से सम्पन्न होता है ॥ ६७ ॥

रुधिरोद्गारि—

वातशोणितसंयुक्तः कफमारुतमेव च ।
कौटसाक्ष्यरतश्चैव रुधिरोद्गारिसम्भवः ॥ ६८ ॥

रुधिरोद्गारि संवत्सर में जन्म लेने वाला व्यक्ति वायु-रक्त एवं कफ-वायु विकारों से युक्त, छलप्रपञ्च (मिथ्यावाद) में लीन रहने वाला होता है ॥ ६८ ॥

रक्ताक्षी—

देशत्यागो धनभ्रंशो हानिः सर्वत्र जायते ।
धृता-विवाहिता भार्या रक्ताक्षेयो नरो भवेत् ॥ ६९ ॥

रक्ताक्षी संवत्सर में उत्पन्न पुरुष अपने देश का त्याग एवं धन का नाश करने वाला सर्वत्र हानि प्राप्त करने वाला, स्वेच्छा से (बिना विधि के) पत्नी रखने वाला होता है ॥ ६९ ॥

क्रोधन—

क्रोधी क्रोधसमुत्पादी सिंहतुल्यपराक्रमः ।
ब्राह्मणः परजीवी च क्रोधसंवत्सरे नरः ॥ ७० ॥

क्रोध नामक संवत्सर में उत्पन्न व्यक्ति स्वयं क्रोधी है तथा दूसरों को भी क्रोधित करता है । सिंह के समान पराक्रमी ब्राह्मण (वेद अथवा दर्शन का ज्ञाता), दूसरों के सहारे जीविका प्राप्त करने वाला होता है ॥ ७० ॥

क्षय—

कुटुम्बकलहो नित्यं मद्यवेश्यारतो नरः ।
धर्माधर्मविचारो नो जायते क्षयवत्सरे ॥ ७१ ॥

क्षय नामक संवत्सर में उत्पन्न हुआ व्यक्ति प्रतिदिन पारिवारिक कलह, मदिरा एवं वेश्या में अनुरक्त रहता है तथा उसे धर्म अधर्म का विचार नहीं होता ॥ ७१ ॥

पञ्च संवत्सरात्मक युगानयन—

[1]युगं भवेद्वत्सरपञ्चकेन युगानि च द्वादश वर्षषष्ट्याम् ।

---

१. पञ्चसंवत्सरात्मक युग की कल्पना वेदाङ्ग जोतिष में मिलती है । परन्तु वहाँ साठ संवत्सरों के साथ उनके सम्बन्ध का कोई उल्लेख नहीं है । वैदिक साहित्य में पाँच संवत्सरों के नाम इस प्रकार हैं—१. संवत्सर, २. परिवत्सर, ३. इदावत्सर, ४. अनुवत्सर, ५. इद्वत्सर । (द्र० भारतीय ज्योतिष पृ० ३७)

पाँच संवत्सरों का एक युग होता है। ६० संवत्सरों में बारह युग होते हैं।

प्रथम युग का फल—

मद्यमांसप्रियो नित्यं परदाररतः सदा।
कविः शिल्परतः प्राज्ञो जायते प्रथमे युगे ॥ ७२ ॥

प्रथम युग (प्रभव से प्रजापतिपर्यन्त पाँच संवत्सरों) में उत्पन्न व्यक्ति नित्य मदिरा-मांस का सेवन करने वाला, सदैव परस्त्री मे आसक्त, कविता करने वाला, मूर्तिकला में लीन एवं बुद्धिमान् होता हैं ॥ ७२ ॥

द्वितीय युग का फल—

वाणिज्ये व्यवहारी च धर्मिष्ठः सत्यसङ्गतः।
द्रव्यं लुम्यत्यपापात्मा युगे जातो द्वितीयके ॥ ७३ ॥

द्वितीय युग (अङ्गिरा से धाता पर्यन्त पाँच संवत्सरों) में समुत्पन्न पुरुष व्यापार में व्यवहारी, धार्मिक, सत्य का अनुसरण करने वाला, धन का लोभी तथा पाप से रहित अन्तःकरण वाला होता है ॥ ७३ ॥

तृतीय युग का फल—

भोक्ता दाता कृतप्रज्ञो देवब्राह्मणपूजकः।
तेजस्वी धनयुक्तश्च तृतीये फलमश्नुते ॥ ७४ ॥

तृतीय युग (ईश्वर से ष तक पाँच वर्षों) मे उत्पन्न व्यक्ति सुखभोग करने वाला, दानी, बुद्धिमान्, देवता और ब्राह्मणों की पूजा करने वाला, तेजस्वी तथा धन से युक्त होता है ॥ ७४ ॥

चतुर्थ युग का फल—

वाटिकाक्षेत्रलोभी स्यादोषधीप्रियमानवः।
धातुवादे स्वार्थनाशी जायते च चतुर्थके ॥ ७५ ॥

चतुर्थ युग (चित्रभानु से व्यय तक ५ वर्षों) मे जन्म लेने वाला मनुष्य बाग तथा खेत का लोभी, औषधि का प्रेमी तथा धातुवाद (धातुओं के व्यापार या आदान-प्रदान) में अपना धन नष्ट करने वाला होता है ॥ ७५ ॥

पञ्चमयुग का फल—

पुत्रोत्पत्तिः सदा प्रोक्तो धनवांश्च जितेन्द्रियः।
पितृमातृप्रियश्चैव जायते पञ्चमे युगे ॥ ७६ ॥

पाँचवें युग (सर्वजित से खर पर्यन्त ५ वर्षों) में जन्म लेने वाले को सदैव पुत्र उत्पन्न करने वाला, धनवान्, जितेन्द्रिय तथा माता-पिता का प्रिय कहा गया है ॥ ७६ ॥

षष्ठ युग का फल—

सर्वदा नीचशत्रुश्च सर्वदा महिषीप्रियः।
पट्टघातो भयार्त्तश्च युगे षष्ठे च जायते ॥ ७७ ॥

छठे युग (नन्दन से दुर्मुख तक ५ वर्षों) में जन्म लेने वाला सदैव नीच व्यक्तियों का शत्रु सदा भैंस पालने वाला, पत्थर से घायल तथा भय से पीड़ित होता है ॥७७॥

सप्तम युग का फल—

बहुमित्रप्रियश्चैव व्यापारे कुटिला गतिः।
शीघ्रगामी तथा कामी जायते सप्तमे युगे ॥ ७८ ॥

सातवें युग (हेमलम्ब से प्लव पर्यन्त ५ वर्षों) में उत्पन्न होने वाला बहुत मित्रों का प्रिय, व्यापार में कुटिल (धोखा का) व्यवहार करने वाला, शीघ्रगामी तथा कामी होता है ॥ ७८ ॥

अष्टम युग का फल—

पापकर्त्ता च संतुष्टो व्याधिदुःखान्वितस्तथा।
कर्त्ता च परहिंसाया जायते त्वष्टमे युगे ॥ ७९ ॥

आठवें युग (शुभकृत् से पराभव तक ५ वर्षों) में उत्पन्न पुरुष पापी, सन्तोषी, व्याधि एवं दुःखों से युक्त तथा दूसरों को कष्ट देने वाला होता है ॥ ७९ ॥

नवम युग का फल—

वापीकूपतडागादिदेवदीक्षातिथिप्रियः ।
भूपतिर्वृत्रहातुल्यो जायते नवमे युगे ॥ ८० ॥

जिसका जन्म नवम युग (प्लवङ्ग से विरोधकृत् तक ५ वर्षों) में होता है वह बावली, कूप, तालाब आदि देवता, मन्त्र एवं अतिथियों का प्रेमी तथा इन्द्र के समान राजा होता है ॥ ८० ॥

दशम युग का फल—

राजाधिराजमन्त्री च स्थानप्राप्तिमहासुखः।
सुवेषरूपो दाता च जायते दशमे युगे ॥ ८१ ॥

दसवें युग (परिधावि से नल तक ५ वर्षों) में जिसका जन्म होता है वह राजाधिराज का मन्त्री, स्थान मिलने से सुखी, सुन्दर वेष एवं स्वरूप वाला तथा दानी होता है ॥ ८१ ॥

एकादश युग फल—

बुद्धिमांश्च सुशीलश्च स्थापकश्चासुरद्विषाम्।
संग्रामे च भवेच्छूरो जात एकादशे युगे ॥ ८२ ॥

ग्यारहवें युग (पिङ्गल से दुर्मति तक पाँच वर्षों) में जन्म लेने वाला बुद्धिमान्, सुशील, देवताओं की (मूर्ति) स्थापना करने वाला तथा संग्राम में पराक्रमी होता है ॥ ८२ ॥

द्वादश युग का फल—

तेजस्वी च लसन्नात्मा नरमध्ये महाजनः ।
कृषिवाणिज्यकर्त्ता च जायते द्वादशे युगे ॥ ८३ ॥

जो व्यक्ति बारहवें युग (दुन्दुभि से क्षय तक पाँच वर्षों) में जन्म लेता है वह तेजस्वी, प्रसन्न हृदय, मानवों में श्रेष्ठ, कृषि तथा व्यापार करने वाला होता है ॥८३॥

अयन—

मकरादिगते षट्के सूर्यस्यैवोत्तरायणम् ।
कर्कादिषट्कगे सूर्ये दक्षिणायनमुच्यते ॥ ८४ ॥

मकर आदि छः राशियों (मकर, कुम्भ, मीन, मेष, वृष, मिथुन) में सूर्य हो तो उत्तरायण, कर्क आदि छः राशियों (कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु) में सूर्य हो तो दक्षिणायन कहा जाता है ॥ ८४ ॥

उत्तरायन का फल—

उत्तरायणे नरो जातः सर्वशास्त्रविशारदः ।
धर्मार्थकामशीलश्च गुणवांश्च सुरूपवान् ॥ ८५ ॥

उत्तरायण में उत्पन्न हुआ व्यक्ति सभी शास्त्रों का मर्मज्ञ, धर्म-अर्थ और काम से युक्त गुणवान तथा स्वरूपवान् होता है ॥ ८५ ॥

दक्षिणायन का फल—

याम्यायने नरो जातः कूटसाक्षी सदानृतः ।
अधर्मी चाथ रोगी च बहुव्याधिः सदा भवेत् ॥ ८६ ॥

दक्षिणायन में जन्म लेने वाला मनुष्य छल-प्रपञ्च एवं मिथ्या भाषण करने वाला, अधर्मी, रोगी तथा बहुत तरह की व्याधियों से सदैव युक्त रहता है ॥८६॥

गोल—

मेषादिषट्कगे सूर्ये उत्तरो गोल उच्यते ।
तुलादिषट्कगे सूर्ये याम्यगोलः स उच्यते ॥ ८७ ॥

मेष से कन्या पर्यन्त छः राशियों में सूर्य हो तो उत्तर गोल, तुला से मीन पर्यन्त छः राशियों में सूर्य हो तो दक्षिण गोल कहा जाता है ॥ ८७ ॥

उत्तर गोल का फल—

यो जात उत्तरे गोले धनवान् विद्ययान्वितः ।
पुत्रपौत्रादियुक्तश्च राजमान्यो नरो भवेत् ॥ ८८ ॥

जो व्यक्ति उत्तर गोल में उत्पन्न होता है वह धनवान्, विद्या से युक्त, पुत्र-पौत्र आदि से सम्पन्न तथा राजा द्वारा सम्मानित होता है ॥ ८८ ॥

दक्षिण गोल का फल—

याम्यगोले तु यो जातः सदा स सुखवर्जितः ।
कूटसाक्षी दुराचारो हीनाङ्गश्चापि निर्धनः ॥ ८९ ॥

दक्षिण गोल में जो उत्पन्न होता है वह सदैव सुख से रहित, जालसाजी करने वाला, दुराचारी, हीनाङ्ग (विकलाङ्ग) तथा निर्धन होता है ॥ ८९ ॥

ऋतुज्ञान—

मृगादिराशिद्वयभानुभोगात् षट्कं ऋतूनां शिशिरो वसन्तः ।
ग्रीष्मश्च वर्षा शरदश्च तद्वद्धेमन्तनामा कथितोऽत्र षष्ठः ॥ ९० ॥

मकर आदि दो-दो राशियों में सूर्य के रहने से छः ऋतुयें होती हैं । जो क्रम से शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद् तथा छठीं हेमन्त नाम से कही गई है ॥९०॥

[अर्थात् मकर कुम्भ में सूर्य हो तो शिशिर, मीन, मेष में वसन्त, वृष मिथुन में ग्रीष्म, कर्क सिंह में वर्षा, कन्या तुला मे शरद्, वृश्चिक-धनु में हेमन्त ऋतुयें होती हैं ।]

शिशिर का फल—

रूपयौवनसम्पन्नो दीर्घसूत्री मदोत्कटः ।
साधुयुक्तः कामुकश्च शिशिरे जायते नरः ॥ ९१ ॥

शिशिर ऋतु में जन्म लेने वाला प्राणी रूप यौवन से सम्पन्न, आलसी, मतवाला, सज्जन पुरुषों के साथ रहने वाला तथा कामी होता है ॥ ९१ ॥

वसन्त का फल—

महोद्यमी मनस्वी च तेजस्वी वहुकार्यकृत् ।
नानादेशरसाभिज्ञो वसन्ते जायते नरः ॥ ९२ ॥

वसन्त ऋतु में उत्पन्न होने वाला व्यक्ति महान् उद्योगी स्वाभिमानी, तेजस्वी, बहुत कार्य करने वाला, अनेक देशों तथा रसों को जानने वाला होता है ॥ ९२ ॥

ग्रीष्म का फल—

बह्वारम्भो जितक्रोधः क्षुधालुः कामुको नरः ।
दीर्घः शठो बुद्धिमांश्च ग्रीष्मे जातः सदाऽशुचिः ॥ ९३ ॥

ग्रीष्म ऋतु में जन्म लेने वाला व्यक्ति बहुत से कार्यों को आरम्भ करने वाला, क्रोध को जीतने वाला, बुभूक्षित, कामी, लम्बी शरीर वाला, दुष्ट, बुद्धिमान् तथा सदा अपवित्र रहने वाला होता है ॥ ९३ ॥

वर्षा फल—

गुणवान् भोगयुक्तश्च राजपूज्यो जितेन्द्रियः ।
कुशलोऽर्थानुवादी च वर्षाकाले भवेन्नरः ॥ ९४ ॥

जिसका जन्म वर्षा ऋतु में होता है वह गुणवान्, भोगसाधन युक्त, राजा द्वारा सम्मानित, जितेन्द्रिय, चतुर तथा उपयुक्त वचन बोलने वाला होता है ॥९४॥

शरद् का फल—

वाणिज्यकृषिवृत्तिश्च धनधान्यसमृद्धिमान् ।
तेजस्वी बहुमान्यश्च शरज्जातो भवेन्नरः ॥ ९५ ॥

शरद् ऋतु में उत्पन्न व्यक्ति व्यापार तथा कृषिकर्म करने वाला, धन-धान्य आदि समृद्धियों से युक्त, तेजस्वी तथा सम्मानित होता है ॥ ९५ ॥

हेमन्त का फल—

बहुव्याधिर्हीनतेजास्त्रासयुक्तः प्रणिष्ठुरः ।
ह्रस्वपीनगलो भीरुर्हेमन्ते जायते नरः ॥ ९६ ॥

हेमन्त ऋतु में जो जन्म लेता है वह नाना प्रकार की व्याधियों से युक्त, कान्ति-हीन, भय से युक्त, निष्ठुर, छोटा एवं स्थूल गर्दन वाला तथा कायर होता है ॥९६॥

चैत्र मास फल—

चैत्रे च दृष्टिभाग्यजातः साहङ्कारः शुभाकरः ।
रक्तेक्षणः सरोषश्च स्त्रीलोलः स भवेत् सदा ॥ ९७ ॥

जिसका जन्म चैत्र मास में होता है वह स्वरूपवान्, अहंकारी, मङ्गल कार्यों से युक्त, लाल आँखों वाला, क्रोधी तथा सदैव स्त्रियों में लुब्ध रहता है ॥ ९७ ॥

वैशाख मास फल—

भोगी धनी सुचित्तश्च सक्रोधश्च सुलोचनः ।
सुरूपो वल्लभः स्त्रीणां माधवे जायते नरः ॥ ९८ ॥

वैशाख में उत्पन्न होने वाला व्यक्ति भोगी, धनी, अच्छे विचारों वाला, क्रोध-युक्त, सुन्दर नेत्र एवं सुन्दर स्वरूप वाला तथा स्त्रियों का प्रिय होता है ॥ ९८ ॥

ज्येष्ठ मास फल—

परदेशरतश्चैव शुभचित्तो धनान्वितः ।
दीर्घायुश्च सुबुद्धिश्च ज्येष्ठे सुष्ठु धनी भवेत् ॥ ९९ ॥

ज्येष्ठ मास में जन्म होने से परदेश में रहने वाला, सद्विचारी, धनयुक्त, दीर्घायु तथा अच्छी बुद्धि वाला व्यक्ति होता है ॥ ९९ ॥

आषाढ़ मास का फल—

पुत्रपौत्रान्वितो धर्मी वित्तनाशेन पीडितः।
सुवर्णश्चाल्पसुखितो ह्याषाढे च भवेन्नरः॥ १०० ॥

आषाढ़ मास में उत्पन्न होने से पुत्र-पौत्र से युक्त, धार्मिक, धन नाश से दुःखी, सुन्दर वर्ण (गौर) वाला तथा अल्प सुखी होता है ॥ १०० ॥

श्रावण मास फल—

सुखे दुःखे तथा हानौ लाभे च समचित्तकः।
स्थूलदेहः सुरूपश्च श्रावणे जायते नरः॥ १०१ ॥

जिसका जन्म श्रावण मास में होता है वह सुख, दुःख, हानि तथा लाभ-में-सम-बुद्धि रखने वाला, स्थूल शरीर तथा सुन्दर स्वरूप वाला होता है ॥ १०१ ॥

भाद्रपद मास फल—

नित्यप्रमोदी जल्पाकः पुत्रयुक्तः सुखी भवेत्।
मृदुभाषी सुशीलश्च भाद्रजातो भवेन्नरः॥ १०२ ॥

भाद्रपद मास में जो जन्म लेता है वह निरन्तर हास-परिहास करने वाला, व्यर्थ बोलने वाला, पुत्र से युक्त, सुखी, मधुर वचन बोलने वाला तथा सुशील होता है ॥ १०२ ॥

आश्विन मास का फल—

सुरूपश्च सुखैर्युक्तः काव्यकर्ता परः शुचिः।
गुणवान् धनवान् कामी ह्याश्विने जायते नरः॥ १०३ ॥

आश्विन मास में उत्पन्न व्यक्ति सुन्दर रूप एवं सुख से युक्त, काव्य रचना करने वाला, श्रेष्ठ, पवित्र, गुणवान्, धनवान् तथा कामी होता है ॥ १०३ ॥

कार्तिक मास फल—

सुधनी कामबुद्धिश्च दुरात्मा क्रयविक्रयी।
पापीयान् दुष्टचित्तश्च कार्तिके जायते नरः॥ १०४ ॥

जिसका जन्म कार्तिक मास में होता है वह अधिक धनी, कामुक, दुरात्मा, क्रय-विक्रय करने वाला, पापी तथा दुष्ट बुद्धि वाला होता है ॥ १०४ ॥

मार्ग शीर्ष मास फल—

मृदुभाषी धनी धर्मी बहुमित्रः पराक्रमी।
परोपकारी जातश्च मार्गशीर्षे भवेन्नरः॥ १०५ ॥

जो व्यक्ति मार्ग शीर्ष में उत्पन्न होता है। वह मधुर बोलने वाला, धनवान्, धार्मिक, बहुत मित्रों वाला, पराक्रमी, दूसरों का हित करने वाला होता है ॥ १०५ ॥

पौष मास फल--

शूर उग्रप्रतापी च पितृदेवविवर्जितः ।
ऐश्वर्यजन्मकारी च पौषे मासे नरो भवेत् ॥ १०६ ॥

पौष मास में उत्पन्न होने वाला व्यक्ति शूर, उग्र (क्रोधी), पराक्रमी, पितर तथा देवताओं की भक्ति से रहित, धन सम्पत्ति पैदा करने वाला होता है ॥१०६॥

माघ मास फल--

मतिमान् धनवांश्चैव शूरो निष्ठुरभाषकः ।
कामुकश्च रणे धीरो माघजातो भवेन्नरः ॥ १०७ ॥

माघ मास में जन्म लेने से बुद्धिमान्, धनवान्, शूर, कटु वचन बोलने वाला, कामी तथा संग्राम में धैर्य रखने वाला व्यक्ति होता है ॥ १०७ ॥

फाल्गुन मास फल

शुक्तः परोपकारी च धनविद्यासुखान्वितः ।
विदेशे भ्रमते नित्यं फाल्गुने जायते नरः ॥ १०८ ॥

फाल्गुन मास में जन्म लेने वाला व्यक्ति स्वच्छ (गौर) वर्ण वाला, परोपकारी, धन, विद्या और सुख से युक्त, तथा विदेश में भ्रमण करने वाला होता है ॥१०८॥

अधिमास का फल—

विषयहीनमतिः सुचरित्रदृगविविधतीर्थकरश्च निरामयः ।
सकलवल्लभ आत्महितङ्करः खलु मलिम्लुचमासभवो नरः ॥१०९॥

मलिम्लुच (अधिकमास) में उत्पन्न व्यक्ति विषय-वासनाओं से रहित बुद्धि-वाला, सच्चरित्र एवं सुन्दर नेत्रों वाला, विभिन्न तीर्थों की यात्रा करने वाला, रोग-रहित, सभी लोगों का प्रिय तथा अपना हित करने वाला होता है ॥ १०९ ॥

कृष्ण पक्ष का फल—

निष्ठुरो दुर्मुखश्चैव स्त्रीद्वेषी मतिहीनकः ।
परप्रेक्षो जनैर्युक्तः कृष्णपक्षे प्रजायते ॥ ११० ॥

जिसका जन्म कृष्ण पक्ष में होता है वह निष्ठुर, विभत्स मुख वाला, स्त्री का द्वेषी, बुद्धिहीन, पराश्रित, तथा लोगों से युक्त (सामाजिक) होता है ॥ ११० ॥

शुक्ल पक्ष का फल—

पूर्णचन्द्रनिभः श्रीमान् सोद्यमो बहुशास्त्रवित् ।
कुशलो ज्ञानसंपन्नः शुक्लपक्षे भवेन्नरः ॥ १११ ॥

जिसका जन्म शुक्ल पक्ष में होता है वह पूर्ण चन्द्रमा की तरह कान्ति वाला, उद्योगी, बहुत शास्त्रों को जानने वाला, निपुण, तथा ज्ञान सम्पन्न होता है ॥ १११ ॥

प्रतिपदा—

क्रूरसङ्गो धनैर्हीनः कुलसंतापकारकः ।
व्यसनासक्तचित्तश्च प्रतिपत्तिथिजो नरः ॥ ११२ ॥

प्रतिपदा में उत्पन्न व्यक्ति क्रूर (हिंसक) लोगों का साथी, धन से हीन, कुल (परिवार) को सन्तप्त करने वाला तथा बुद्धि को व्यसन में लीन रखने वाला होता है ॥ ११२ ॥

द्वितीया—

परदाररतो नित्यं सत्यशौचविवर्जितः ।
तस्करः स्नेहहीनश्च द्वितीयासम्भवो नरः ॥ ११३ ॥

जो द्वितीया में जन्म लेता है वह सदा दूसरों की स्त्रियों में आसक्त, सत्य और पवित्रता से रहित, चोर, तथा स्नेह से रहित होता है ॥ ११३ ॥

तृतीया—

अचेतनोऽतिविकलो निर्द्रव्यः पुरुषः सदा ।
परद्वेषरतो नित्यं तृतीयायां भवेन्नरः ॥ ११४ ॥

तृतीया में जिसका जन्म होता है वह चेतना हीन (ज्ञान शून्य), अत्यन्त व्यग्र, निर्धन, तथा सदैव दूसरों से द्वेष करने वाला होता है ॥ ११४ ॥

चतुर्थी—

महाभोगी च दाता च मित्रस्नेही विचक्षणः ।
धनसंतानयुक्तश्च चतुर्थ्यां यदि जायते ॥ ११५ ॥

जिसका जन्म चतुर्थी तिथि में होता है वह अधिक सुख भोग करने वाला, दानी, मित्रों से स्नेह करने वाला, विद्वान्, धन तथा पुत्र से युक्त होता है ॥ ११५ ॥

पञ्चमी—

व्यवहारी गुणग्राही पितृमात्रोश्च रक्षकः ।
दाता भोक्ता तनुप्रीतः पञ्चमीसम्भवो नरः ॥ ११६ ॥

पञ्चमी तिथि में जो उत्पन्न होता है वह व्यावहारिक, गुण को ग्रहण करने वाला, माता-पिता की रक्षा करने वाला, दानी, भोगी, तथा प्रफुल्लित शरीर वाला होता है ॥ ११६ ॥

षष्ठी—

नानादेशाभिगामी च सदा कलहकारकः ।
नित्यं जठरपोषी च षष्ठ्यां जातो भवेन्नरः ॥ ११७ ॥

षष्ठी तिथि में उत्पन्न व्यक्ति बहुत से देशों में भ्रमण करने वाला, सदा कलह करने वाला, तथा निरन्तर अपना उदरपोषण करने वाला होता है ॥ ११७ ॥

सप्तमी—

अल्पतोषी च तेजस्वी सौभाग्यगुणसंयुक्तः।
पुत्रवान् धनसम्पन्नः सप्तम्यां जायते नरः ॥ ११८ ॥

जो सप्तमी में जन्म लेता है वह थोड़े में सन्तुष्ट होने वाला, तेजस्वी, सौभाग्य एवं गुणों से युक्त, पुत्रवान् तथा धन से सम्पन्न होता है ॥ ११८ ॥

अष्टमी—

धर्मिष्ठः सत्यवादी च दाता भोक्ता च वत्सलः।
गुणज्ञः सर्वकार्यज्ञो ह्यष्टमीसम्भवो नरः ॥ ११९ ॥

अष्टमी में उत्पन्न व्यक्ति धार्मिक, सत्य बोलने वाला, दानी, भोगी, दयाभाव रखने वाला, गुणी, तथा सभी प्रकार के कार्यों को जानने वाला होता है ॥ ११९ ॥

नवमी—

देवताराधकः पुत्री धनस्त्रीसक्तमानसः।
शास्त्राभ्यासरतो नित्यं नवम्यां जायते यदि ॥ १२० ॥

नवमी तिथि में जन्म लेने वाला व्यक्ति देवता की आराधना करने वाला, पुत्रवान्, धन और स्त्री में आसक्त चित्त वाला, तथा निरन्तर शास्त्रों का अभ्यास करने वाला होता है ॥ १२० ॥

दशमी—

दशम्यां धर्मशास्त्रज्ञो देवमैत्री च याजकः।
तेजस्वी सौख्यसंयुक्तो जायते मानवः सदा ॥ १२१ ॥

जिसका जन्म दशमी तिथि में होता है वह धर्मशास्त्र का मर्मज्ञ, देवताओं का सेवक, यज्ञ करने वाला, तेजस्वी, तथा सदैव सुख से युक्त होता है ॥ १२१ ॥

एकादशी—

अल्पतोषी नरेन्द्रस्य गेहगामी शुचिर्भवेत्।
धनी पुत्री भवेद्धीमानेकादश्यां भवेन्नरः ॥ १२२ ॥

जो एकादशी में जन्म लेता है वह थोड़े में सन्तुष्ट, राजा के घर में जाने वाला, पवित्रात्मा, धनवान्, पुत्रवान् तथा बुद्धिमान् होता है ॥ १२२ ॥

द्वादशी—

चपलश्चपलज्ञानी सदा क्षीणवपुः स्मृतः।
देशभ्रमणशीलश्च द्वादशीजातको भवेत् ॥ १२३ ॥

द्वादशी में जन्मलेने वाले व्यक्ति को चञ्चल बुद्धि, सदैव कृश शरीर तथा देशाटन में रुचि रखने वाला समझें ॥ १२३ ॥

त्रयोदशी—

महासिद्धो महाप्राज्ञः शास्त्राभ्यासी जितेन्द्रियः ।
परकार्यरतो नित्यं त्रयोदश्यां यदा भवेत् ॥ १२४ ॥

त्रयोदशी तिथि में उत्पन्न व्यक्ति महान् साधक, अधिक बुद्धिमान्, शास्त्रों का अभ्यास करने वाला, जितेन्द्रिय, नित्य दूसरों का कार्य करने वाला होता है ॥१२४॥

चतुर्दशी—

धनाढ्यो धर्मशीलश्च शूरः सद्वाक्यपालकः ।
राजमान्यो यशस्वी च चतुर्दश्यां यदा भवेत् ॥ १२५ ॥

चतुर्दशी में उत्पन्न व्यक्ति धन से युक्त धार्मिक, शूर, अच्छे लोगों के वचनों का पालक (आदर्शवादी), राजा से सम्मानित तथा यशस्वी होता है ॥१२५॥

पूर्णिमा—

श्रीमांश्च मतिमांश्चापि महाभोजनलालसः ।
उद्यतः परदारेषु ह्यासक्तः पूर्णिमाभवः ॥ १२६ ॥

पूर्णिमा तिथि में उत्पन्न पुरुष धनवान्, बुद्धिमान्, अधिक भोजन की इच्छा रखने वाला, उद्योगी तथा पर स्त्री में आसक्त होता है ॥ १२६ ॥

अमावस्या—

स्थिरारम्भपरद्वेषी ढक्रो मूर्खः पराक्रमी ।
मूढमन्त्री च सज्ञानोऽप्यमावास्याभवो नरः ॥ १२७ ॥

जिसका जन्म अमावस्या में होता है वह धीरे-धीरे कार्य आरम्भ करने वाला, दूसरों से द्वेष करने वाला, कुटिल, मूर्ख, पराक्रमी, मूढ व्यक्ति का सलाहकार तथा स्वयं ज्ञानी होता है ॥१२७॥

नन्दादि तिथियों की संज्ञा—

नन्दा भद्रा जया रिक्ता पूर्णा च तिथयः क्रमात् ।
वारत्रयं समावर्त्य तिथयः प्रतिपन्मुखाः ॥ १२८ ॥

प्रतिपदा आदि तिथियों में पाँच-पाँच तिथियों की तीन बार आवृत्ति करने से क्रम से नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता तथा पूर्णासंज्ञक तिथियाँ होती हैं । यथा—

नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा	संज्ञा
१	२	३	४	५	तिथियाँ
६	७	८	९	१०	
११	१२	१३	१४	१५ या ३०	

नन्दा तिथि का फल—

नन्दातिथौ नरो जातो महामानी च कोविदः ।
देवताभक्तिनिष्ठश्च ज्ञानी च प्रियवत्सलः ॥ १२९ ॥

नन्दा (१, ६, ११) तिथियों में उत्पन्न मनुष्य विशिष्ट आदर वाला, विद्वान, देवताओं की भक्ति में निष्ठावान्, ज्ञानी तथा प्रिय लोगों पर अनुग्रह करने वाला होता है ॥ १२९ ॥

भद्रा तिथियों का फल—

भद्रातिथौ बन्धुमान्यो राजसेवी धनान्वितः ।
संसारभयभीतश्च परमार्थमतिर्नरः ॥ १३० ॥

भद्रा (२, ७, १२) तिथियों में उत्पन्न व्यक्ति बन्धुओं द्वारा सम्मानित, राजा का सेवक, धन से युक्त, संसार से भयभीत तथा दूसरों के हित की भावना रखने वाला होता है ॥ १३० ॥

जया तिथि फल—

जयातिथौ राजपूज्यः पुत्रपौत्रादिसंयुतः ।
शूरः शान्तश्च दीर्घायुर्मनोविज्ञश्च जायते ॥ १३१ ॥

जया (३, ८, १३) तिथियों में जन्म लेने वाला पुरुष राजा द्वारा पूज्य (सम्मानित), पुत्र-पौत्रों से युक्त, शूर, शान्त, दीर्घायु तथा मनोवैज्ञानिक होता है ॥ १३१ ॥

रिक्ता तिथि का फल—

रिक्तातिथौ वितर्कज्ञः प्रमादी गुरुनिन्दकः ।
शास्त्रज्ञो मदहन्ता च कामुकश्च नरो भवेत् ॥ १३२ ॥

रिक्ता (४, ९, १४) तिथियों में जन्म लेने वाला मनुष्य तर्क वितर्क (तर्क-शास्त्र) को जानने वाला, प्रमाद (असावधानी) करने वाला, गुरुनिन्दक, शास्त्र को जानने वाला, मद (गर्व) चूर्ण करने वाला तथा कामुक होता है ॥ १३२ ॥

पूर्णा तिथि फल—

पूर्णातिथौ धनैः पूर्णो वेदशास्त्रार्थतत्त्ववित् ।
सत्यवादी शुद्धचेता विज्ञो भवति मानवः ॥ १३३ ॥

पूर्णा (५, १०, १५) तिथियों में जो जन्म लेता है वह व्यक्ति धन से पूर्ण, वेद-शास्त्र के तत्त्व को जानने वाला, सत्य बोलने वाला, शुद्ध हृदय तथा विद्वान् होता है ॥ १३३ ॥

रविवार फलम्—

पित्ताधिकोऽतिचतुरस्तेजस्वी समरप्रियः ।
दाता दाने महोत्साही सूर्यवारे भवेन्नरः ॥ १३४ ॥

सूर्य (रवि) वार को उत्पन्न हुआ व्यक्ति अधिक पित्तवाला, अत्यन्त चतुर, तेजस्वी, युद्धप्रिय, दानी तथा दान में अत्यधिक उत्साही होता है ॥ १३४ ॥

सोमवार फल—

मतिमान् प्रियवाक् शान्तो नरेन्द्राश्रयजीविकः ।
समदुःखसुखः श्रीमान् सोमवारे भवेत्पुमान् ॥ १३५ ॥

सोमवार को जिसका जन्म होता है वह बुद्धिमान्, प्रिय बोलने वाला, शान्त, राजाओं के अश्रित रहकर जीविका प्राप्त करने वाला, सुख और दुःख में समान तथा कान्तियुक्त होता है ॥ १३५ ॥

भौमवार फल—

वक्रबुद्धिर्जराजीवी रणोत्साही महाबली ।
सेनानीस्तन्त्रपालो वा धरापुत्रदिनोद्भवः ॥ १३६ ॥

मङ्गलवार को जन्म लेने वाला व्यक्ति वक्र बुद्धि वाला (कूट नीतिज्ञ), वृद्धावस्था तक जीवित रहने वाला (दीर्घायु), संग्राम में उत्साह दिखाने वाला, महान बलवान्, सेना-नायक, अथवा शासकीय किसी तन्त्र (संगठन) का रक्षक होता है ॥ १३६ ॥

बुधवार फल—

लिपिलेखनजीवी स्यात्प्रियवाक्पण्डितः सुधीः ।
रूपसंपत्तिसंयुक्तो बुधवासरसम्भवः ॥ १३७ ॥

जिस व्यक्ति का जन्म बुधवार को होता है उसकी जीविका, लिपि (सुन्दर अक्षरों में प्रतिलिपि) और लेखन-कार्य (निबन्ध, पुस्तक) से होती है। तथा वह प्रियवादी, विद्वान्, सुबुद्ध, सुन्दर स्वरूप एवं सम्पत्ति से युक्त होता है ॥ १३७ ॥

गुरुवार फल—

धनविद्यागुणोपेतो विवेकी जनपूजितः ।
आचार्यः सचिवो वा स्याद् गुरुवासरसम्भवः ॥ १३८ ॥

गुरुवार को उत्पन्न व्यक्ति धन, विद्या, और गुणों से युक्त, विवेकशील, लोगों से पूजित (सम्मानित), आचार्य (गुरु, उपदेशक) तथा मन्त्री होता है ।। १३८ ।।

शुक्रवार फल—

चलचित्तः सुरद्वेषी धन-क्रीडारतः सदा ।
बुद्धिमान् सुभगो वाग्मी भृगुवारे भवेन्नरः ।। १३९ ।।

शुक्रवार को जन्म लेने वाला व्यक्ति चञ्चल प्रकृति वाला, देवताओं का द्वेषी, धन एवं क्रीडा में सदैव आसक्त, बुद्धिमान्, सौभाग्यशाली तथा वक्ता होता है ।।१३९।।

शनिवार फल—

स्थिरजः स्थिरगीः क्रूरो दुःखचित्तः पराक्रमी ।
अधोदृङ् न चलः केशी वृद्धनारीरतः सदा ।। १४० ।।

जिसका जन्म शनिवार को होता है वह आलसी पुरुष से उत्पन्न, स्थिर (दृढ) वचन बोलने वाला, क्रूर, दुःखित हृदय, नीचे देखने वाला, अडिग, केश (बाल) रखने वाला तथा वृद्धा स्त्री में आसक्त रहने वाला होता है ।। १४० ।।

दिवस जन्म फल—

सद्धर्मयुक्तो बहुपुत्रभोगी प्रियान्वितः कामनिपीडिताङ्गः ।
वस्त्रानुयुक्तो मतिमान् सुरूपो भवेन्मनुष्यश्च दिवा-प्रसूतः ।। १४१ ।।

दिन में उत्पन्न हुआ व्यक्ति उत्तम धर्म से युक्त, बहुत पुत्रों वाला, अधिक सुखोपभोग करने वाला, प्रिया (पत्नी) से युक्त, काम से पीडित अंगों वाला, वस्त्रों से सम्पन्न, बुद्धिमान तथा सुन्दर स्वरूप वाला मनुष्य होता है ।। १४१ ।।

रात्रि जन्म फल—

मन्दवाग्बहुकामार्तः क्षयरोगी मलीमसः ।
क्रूरात्मा छन्नपापश्च निशि जातो भवेन्नरः ।। १४२ ।।

रात्रि में जिसका जन्म होता है वह धीमी आवाज में बोलने वाला, अधिक काम से पीड़ित, क्षयरोग युक्त, मलिन हृदय, क्रूर स्वभाव, तथा छिपे रूप से पाप करने वाला होता है ।। १४२ ।।

नक्षत्र फल

अश्विनी—

सुरूपः सुभगो दक्षः स्थूलकायो महाधनी ।
अश्विनीसम्भवो लोके जायते जनवल्लभः ।। १४३ ।।

अश्विनी नक्षत्र में जन्म लेने वाला व्यक्ति सुन्दर, सौभाग्य शाली, कुशल, स्थूल शरीर वाला, बहुत धनी, तथा लोक में जनप्रिय होता है ।। १४३ ।।

भरणी—

अरोगी सत्यवादी च सत्प्राणश्च दृढव्रतः ।
भरण्यां जायते लोकः सुसुखी धनवानपि ।। १४४ ।।

भरणी में उत्पन्न व्यक्ति रोग रहित, सत्य बोलने वाला, सत्यनिष्ठ, दृढ़प्रतिज्ञ, संसार में सुखी तथा धनवान होता है ।। १४४ ।।

कृत्तिका—

कृपणः पापकर्मा च क्षुधालुर्नित्यपीडितः ।
अकर्म कुरुते नित्यं कृत्तिकासम्भवो नरः ।। १४५ ।।

कृत्तिका में उत्पन्न पुरुष कृपण (कंजूस), पापकर्म करने वाला, भूखा । निरन्तर पीड़ित, तथा नित्य कुकर्म करने वाला होता है ।। १४५ ।।

रोहिणी—

धनी कृतज्ञो मेधावी नृपमान्यः प्रियंवदः ।
सत्यवादी सुरूपश्च रोहिण्यां जायते नरः ।। १४६ ।।

जो रोहिणी में जन्म लेता है वह धनवान, कृतज्ञ (उपकार मानने वाला), प्रतिभा-सम्पन्न, राजा द्वारा सम्मानित, प्रियवादी, सत्यवादी, तथा सुन्दर स्वरूप वाला होता है ।। १४६ ।।

मृगशीर्ष—

चपलश्चतुरो धीरः कूटकर्मस्वकर्मकृत् ।
अहङ्कारी परद्वेषी मृगे भवति मानवः ।। १४७ ।।

मृगशिरा में उत्पन्न व्यक्ति चपल (चञ्चल), चतुर, धैर्यवान, छलकर्म, एवं अपना कार्य करने वाला, अहंकार युक्त तथा दूसरों से द्वेष रखने वाला होता है ।। १४७ ।।

आर्द्रा—

कृतघ्नः कोपयुक्तश्च नरः पापरतः शठः ।
आर्द्रानक्षत्रसम्भूतो धनधान्यविवर्जितः ।। १४८ ।।

आर्द्रा नक्षत्र में उत्पन्न व्यक्ति कृतघ्न (उपकार के बदले अपकार करने वाला), क्रोधी, पाप में लीन, दुष्ट, तथा धन-सम्पत्ति से हीन होता है ।। १४८ ।।

पुनर्वसु—

शान्तः सुखी च सम्भोगी सुभगो जनवल्लभः ।
पुत्रमित्रादिभिर्युक्तो जायते च पुनर्वसौ ।। १४९ ।।

पुनर्वसु में जन्म लेने वाला शान्त, सुखी, सुरति प्रिय,[1] सुन्दर, जनप्रिय, पुत्र और मित्रों से युक्त होता है ॥ १४९ ॥

पुष्य—

देवधर्मधनैर्युक्तः पुत्रयुक्तो विचक्षणः ।
पुष्ये च जायते लोकः शान्तात्मा सुभगः सुखी ॥ १५० ॥

पुष्य में उत्पन्न होने वाला मनुष्य देवता (भक्ति), धर्म धन, और पुत्र से युक्त, विद्वान, शान्त चित्त, सुन्दर तथा सुखी होता हैं ॥ १५० ॥

आश्लेषा—

सर्वभक्षी कृतान्तश्च कृतघ्नो वञ्चकः खलः ।
आश्लेषायां नरो जातः कृतकर्मा हि जायते ॥ १५१ ॥

आश्लेषा में जिसका जन्म होता है वह सर्वभक्षी (सब कुछ खाने वाला), यमराज तुल्य, कृतघ्न, ठग, दुष्ट, तथा किये हुये कार्य को दुहराने वाला होता है ॥

मघा—

बहुभृत्यो धनी भोगी पितृभक्तो महोद्यमी ।
चमूनाथो राजसेवी मघायां जायते नरः ॥ १५२ ॥

मघा में जन्म लेने वाला पुरुष बहुत नौकरों वाला, धनी, भोगी, पिता का भक्त, महान उद्योगी, सेनापति, तथा राजकीय सेवक होता है ॥ १५२ ॥

पूर्वाफाल्गुनी—

विद्यागोधनसंयुक्तो गम्भीरः प्रमदाप्रियः ।
पूर्वाफाल्गुनिकाजातः सुखी पण्डितपूजितः ॥ १५३ ॥

जिसका जन्म पूर्वाफाल्गुनी में होता है वह विद्या, गाय और धन से युक्त, गम्भीर, स्त्री प्रेमी, सुखी तथा विद्वानों से सम्मानित होता है ॥ १५३ ॥

उत्तरा फाल्गुनी—

दान्तः शूरो मृदुर्वक्ता धनुर्वेदार्थपण्डितः ।
उत्तराफाल्गुनीजातो महायोद्धा जनप्रियः ॥ १५४ ॥

जो उत्तरा फाल्गुनी मे जन्म लेता है वह दमन करने वाला, शूर, मृदुभाषी, धनुर्विद्या में कुशल, महान् योद्धा तथा जनप्रिय होता है ॥ १५४ ॥

हस्त—

असत्यवचनो धृष्टः सुरापी बन्धुवर्जितः ।
हस्तो जातो नरश्चौरो जायते पारदारिकः ॥ १५५ ॥

१. 'सम्यक प्रकार से भोग करने वाला' यह भी अर्थ है ।

हस्त में उत्पन्न व्यक्ति असत्य बोलने वाला, धृष्ट (ढीठ, निर्लज्ज), मद्यपान करने वाला, बन्धुओं से रहित, चोर तथा परस्त्री को रखने वाला होता है ॥१५५॥

चित्रा—

पुत्रदारयुतस्तुष्टो धनधान्यसमन्वितः ।
देवब्राह्मणभक्तश्च चित्रायां जायते नरः ॥ १५६ ॥

चित्रा में उत्पन्न पुरुष पुत्र एवं स्त्री से युक्त, सन्तुष्ट, धन-धान्य से सम्पन्न, देवता तथा ब्राह्मण का भक्त होता है ॥ १५६ ॥

स्वाती—

विदग्धो धार्मिकश्चैव कृपणः प्रियवल्लभः ।
सुशीलो देवभक्तश्च स्वातौ जातो भवेन्नरः ॥ १५७ ॥

स्वाती में उत्पन्न होने से मनुष्य विद्वान्, धार्मिक, कृपण, स्त्री का प्रेमी, सुशील, तथा देवताओं का भक्त होता है ॥ १५७ ॥

विशाखा—

अतिलुब्धोऽतिमानी च निष्ठुरः कलहप्रियः ।
विशाखायां नरो जातो वेश्याजनरतो भवेत् ॥ १५८ ॥

यदि विशाखा में जन्म हो तो अत्यन्त लोभी, अभिमानी, निर्दय, कलह प्रिय (झगड़ालू) तथा वेश्याओं में आसक्त रहता है ॥ १५८ ॥

अनुराधा—

पुरुषार्थप्रवासी च बन्धुकार्ये सदोद्यमी ।
अनुराधाभवो लोकः सदा धृष्टश्च जायते ॥ १५९ ॥

अनुराधा में उत्पन्न मनुष्य पुरुषार्थी, प्रवासी (घर से दूर देश में रहने वाला), बन्धुओं के कार्य में सदा प्रयत्न शील, तथा सदैव धृष्ट होता हैं ॥ १५९ ॥

ज्येष्ठा—

बहुमित्रप्रधानश्च कविर्दान्तो विचक्षणः ।
ज्येष्ठाजातो धर्मरतो जायते शूद्रपूजितः ॥ १६० ॥

ज्येष्ठा में जन्म लेने वाला बहुत मित्रों वाला, श्रेष्ठ, कवि, उदार, विद्वान, धर्म में लीन तथा शूद्रों से पूजित होता है ॥ १६० ॥

मूल—

सुखेन युक्तो धनवाहनाढ्यो हिंस्रो बलाढ्यः स्थिरकर्मकर्ता ।
प्रतापितारातिजनो मनुष्यो मूले कृती स्याज्जननं प्रपन्नः ॥१६१॥

मूल नक्षत्र में जो जन्म लेता है वह सुख, धन एवं वाहन से युक्त, हिंसक, बलवान, स्थिर चित्त से कार्य करने, तथा शत्रुओं का दमन करने वाला होता है ॥ १६१ ॥

पूर्वाषाढ़ा—

दृष्टमात्रोपकारी च भाग्यवांश्च जनप्रियः ।
पूर्वाषाढाभवो नूनं सकलार्थविचक्षणः ॥ १६२ ॥

यदि पूर्वाषाढ़ा में जन्म हो तो निश्चय ही वह देखने मात्र से परोपकार करने वाला, भाग्यवान्, जनप्रिय, तथा समस्त अर्थों को जानने वाला विद्वान होता है ॥ १६२ ॥

उत्तराषाढ़ा-

बहुमित्रो महाकायो जायते विनतः सुखी ।
उत्तराषाढ़सम्भूतः शूरश्च विजयी भवेत् ॥ १६३ ॥

जिसका जन्म उत्तराषाढ़ा में होता है वह अधिक मित्रों एवं विशाल शरीर वाला, विनम्र, सुखी, शूर, तथा विजयी होता है ॥ १६३ ॥

अभिजित्--

अतिसुललितकान्तिः सम्मतः सज्जनानां
ननु भवति विनीतश्चारुकीर्तिः सुरूपः ।
द्विजवरसुरभक्तिर्व्यक्तवाङ्मानवः स्या-
दभिजिति यदि सूतिर्भूपतिः स स्ववंशे ॥ १६४ ॥

अभिजित् में उत्पन्न हुआ मनुष्य अत्यन्त मनोहर कान्ति वाला, सज्जनों से आदर प्राप्त, विनम्र, सुन्दर यश एवं स्वरूप वाला, देवता और ब्राह्मणों का भक्त, स्पष्ट वक्ता तथा अपने कुल में राजा की तरह होता है ॥ १६४ ॥

श्रवण—

कृतज्ञः सुभगो दाता गुणैः सर्वैश्च संयुतः ।
श्रीमान् सन्तानबहुलः श्रवणे जायते नरः ॥ १६५ ॥

जिसका जन्म श्रवण मे होता है वह कृतज्ञ, सुन्दर, दानी, सभी गुणों से युक्त, धनवान् तथा अधिक सन्तान वाला होता है ॥ १६५ ॥

धनिष्ठा—

गीतप्रियो बन्धुमान्यो हेमरत्नैरलंकृतः ।
जातो नरो धनिष्ठायां शतैकस्य पतिर्भवेत् ॥ १६६ ॥

धनिष्ठा में जन्म लेने वाला पुरुष गीत का प्रेमी, भाइयों द्वारा सम्मानित, स्वर्ण एवं रत्नों से सुसज्जित, तथा एक सौ व्यक्तियों का नायक होता है ॥ १६६ ॥

शतभिषा—

कृपणो धनपूर्णः स्यात्परदारोपसेवकः ।
जातः शतभिषायां च विदेशे कामुको भवेत् ॥ १६७ ॥

शतभिषा में उत्पन्न पुरुष कृपण, धनवान्, परस्त्री का सेवन करने वाला, तथा विदेश में कामुक प्रवृत्ति वाला होता है ॥ १६७ ॥

पूर्वाभाद्रपदा—

वक्ता सुखी प्रजायुक्तो बहुनिद्रो निरर्थकः ।
पूर्वाभाद्रपदायां च जातो भवति मानवः ॥ १६८ ॥

पूर्वा भाद्रपदा में उत्पन्न मनुष्य वक्ता, सुखी, सन्तान युक्त, अधिक सोने वाला तथा निरर्थक (बेकार) होता है ॥ १६८ ॥

उत्तरा भाद्रपदा—

गौरः ससत्त्वो धर्मज्ञः शत्रुघाती परामरः ।
उत्तराभाद्रपदजो नरः साहसिको भवेत् ॥ १६९ ॥

उत्तरा भाद्रपदा में जिसका जन्म होता है वह गौर वर्ण वाला, सतोगुणी, धर्म का ज्ञाता, शत्रु का नाशक, देवता तुल्य तथा साहसी होता है ॥ १६९ ॥

रेवती—

सम्पूर्णाङ्गः शुचिर्दक्षः साधु शूरो विचक्षणः ।
रेवतीसम्भवो लोके धनधान्यैरलंकृतः ॥ १७० ॥

रेवती में उत्पन्न हुआ व्यक्ति, पूर्ण अङ्गों वाला, पवित्र, चतुर, साधु, शूर, विद्वान तथा धन-धान्य से सुसज्जित होता है ॥ १७० ॥

योगज फल

विष्कम्भ—

विष्कम्भ[1] जातो मनुजो रूपवान् भाग्यवान् भवेत् ।
नानालङ्कारसम्पूर्णो महाबुद्धिविशारदः ॥ १७१ ॥

विष्कम्भ योग में उत्पन्न हुआ पुरुष रूपवान (सुन्दर) भाग्यवान्, विविध प्रकार के आभूषणों से पूर्ण, अतीव बुद्धिमान् एवं विद्वान होता है ॥ १७१ ॥

१. 'विष्कुम्भ' इति पाठान्तरम्

प्रीति—

प्रीतियोगे समुत्पन्नो योषितां वल्लभो भवेत् ।
तत्त्वज्ञश्च महोत्साही स्वार्थे नित्यं कृतोद्यमः ॥ १७२ ॥

प्रीति योग में उत्पन्न होने वाला स्त्रियों का प्रेमी, तत्त्व को जानने वाला, महान उत्साही तथा स्वार्थ-पूर्ति में नित्य प्रयत्नशील रहता है ॥ १७२ ॥

आयुष्मान्—

आयुष्मन्नामयोगे च जातो मानी धनी कविः ।
दीर्घायुः सत्त्वसम्पन्नो युद्धे चाप्यपराजितः ॥ १७३ ॥

आयुष्मान् योग में जिसका जन्म होता है वह अभिमानी, धनी, कवि, दीर्घायु, शक्ति सम्पन्न, तथा युद्ध में अजेय होता है ॥ १७३ ॥

सौभाग्य—

सौभाग्ये च समुत्पन्नो राजमन्त्री स जायते ।
निपुणः सर्वकार्येषु वनितानां च वल्लभः ॥ १७४ ॥

यदि सौभाग्य योग में जन्म हो तो वह राजा का मन्त्री, सभी प्रकार के कार्यों में कुशल, तथा स्त्रियों का प्रिय होता है ॥ १७४ ॥

शोभन—

शोभने शोभनो बालो बहुपुत्रकलत्रवान् ।
आतुरः सर्वकार्येषु युद्धभूमौ सदोत्सुकः ॥ १७५ ॥

शोभन योग में उत्पन्न बालक सुन्दर, बहुत पुत्र एवं स्त्री वाला, सभी कार्यों में जल्दबाजी करने वाला, तथा युद्ध भूमि में सदा उत्सुक रहने वाला होता है ॥ १७५ ॥

अतिगण्ड—

अतिगण्डे च यो जातो मातृहन्ता भवेच्च सः ।
गण्डान्तेषु च जातस्तु कुलहन्ता प्रकीर्तितः ॥ १७६ ॥

अतिगण्ड में जिसका जन्म होता है वह अपनी माता का वध करने वाला, होता है । यदि गण्डान्त[1] में उत्पन्न हो तो समस्त कुल का नाश करने वाला होता है ॥ १७६ ॥

१. गण्डान्त तीन प्रकार का होता है । तिथि गण्डान्त, नक्षत्र गण्डान्त तथा लग्न गण्डान्त । वस्तुतः विशेष तिथि, नक्षत्र और लग्नों के सन्धिकाल को गण्डान्त कहा जाता है । ये अशुभ होने से शुभ कार्यों में वर्जित हैं । इन गण्डान्तों

सुकर्मा—

सुकर्म-नामयोगे तु सुकर्मा जायते नरः।
सर्वैः प्रीतः सुशीलश्च रोगी भोगी गुणाधिकः ॥ १७७ ॥

सुकर्मा नामक योग में जन्म हो तो वह अच्छाकार्य करने वाला, सभी जनों का प्रिय, सुशील, रोगी, भोगी तथा अधिक गुणों वाला होता है ॥ १७७ ॥

धृति—

धृतिमान् धृतियोगी च कीर्तिपुष्टिधनान्वितः।
भाग्यवान् सुखसम्पन्नो विद्यावान् गुणवान् भवेत् ॥ १७८ ॥

यदि धृति योग में जन्म हो तो वह धैर्यवान्, यशस्वी, स्वस्थ एवं धन से युक्त, भाग्यशाली, सुख सम्पन्न, विद्वान तथा गुणी होता है ॥ १७८ ॥

शूल—

शूले शूलव्यथायुक्तो धार्मिकः शास्त्रपारगः।
विद्यार्थकुशलो यज्वा जायते मनुजः सदा ॥ १७९ ॥

में जन्म लेने वाला शिशु भी अशुभ फलकारक तथा दुःखी होता है। गण्डान्तों का विवेचन इस प्रकार किया गया है—

ज्येष्ठापौष्णभसार्पभान्त्यघटिकायुग्मं च मूलाश्विनी,
पित्र्यादौ घटिकाद्वयं निगदितं तद्भस्य गण्डान्तकम्।
कर्काल्यण्डज भान्ततोऽर्धघटिका सिंहाश्विमेषादिगा,
पूर्णान्ताद् घटिकात्मकं त्वशुभदं नन्दातिथेश्चादिमम् ॥

(मुहूर्त्तचि० म० ६,४३)

ज्येष्ठा, रेवती, आश्लेषा नक्षत्रों की अन्तिम दो घटी तथा मूल, अश्विनी, मघा नक्षत्रों की प्रारम्भिक दो घटी नक्षत्र गण्डान्त तथा कर्क, वृश्चिक, मीन राशियों की अन्तिम आधी घटी एवं सिंह, धनु और मेष की आदि की आधी घटी लग्न गण्डान्त तथा पूर्णा तिथियों (५,१०,१५) की अन्तिम एक घटी और नन्दा तिथि (१,६,११) की आदि की एक-एक घटी तिथिगण्डान्त होती है।

इस प्रकार ज्येष्ठा के अन्त में २ घटी तथा मूल के आरम्भ की २ घटी दोनों मिलकर ४ घटी तक नक्षत्र गण्डान्त होता है। कर्क राशि की अन्तिम ½ घटी (३० पल) तथा सिंह राशि की प्रारम्भ की ½ घटी अर्थात् दोनो की सन्धिगत १ घटी राशि गण्डान्त तथा पूर्णिमा की अन्तिम एक घटी तथा प्रतिपदा की प्रारम्भ की एक, कुल २ घटी तक तिथि गण्डान्त होता है। इसी प्रकार अन्य नक्षत्रादि गण्डान्तों को भी समझना चाहिये।

जो मनुष्य शूल योग में पैदा होता है वह शूल (पीड़ा), व्यथा (दर्द) से युक्त, धार्मिक, शास्त्रों का मर्मज्ञ, विद्या एवं अर्थसंग्रह में कुशल, तथा यज्ञ करने वाला होता है ॥ १७९ ॥

गण्ड—

गण्डे गण्डव्यथायुक्तो बहुक्लेशो महाशिराः ।
ह्रस्वकायो महाशूरो बहुभोगी दृढव्रतः ॥ १८० ॥

गण्ड योग में गण्ड (फोड़ा) की व्यथा से युक्त, अत्यन्त दुःखी, बड़े शिर[1] एवं छोटा शरीर वाला, महान् पराक्रमी, अधिक सुख भोग करने वाला तथा अपने संकल्प पर दृढ़ रहने वाला होता है ॥ १८० ॥

वृद्धि—

वृद्धियोगे सुरूपश्च बहुपुत्रकलत्रवान् ।
धनवानपि भोक्ता च सत्त्ववानपि जायते ॥ १८१ ॥

जिसका जन्म वृद्धि योग में होता है वह सुन्दर, अधिक सन्तान एवं स्त्रियों वाला, धनवान्, भोगी, तथा शक्तिशाली होता है ॥ १८१ ॥

ध्रुव—

ध्रुवयोगे च दीर्घायुः सर्वेषां प्रियदर्शनः ।
स्थिरकर्माऽतिशक्तश्च ध्रुवबुद्धिश्च जायते ॥ १८२ ॥

ध्रुव योग में जिसका जन्म होता है वह दीर्घायु, सभी लोगों का प्रिय, स्थिर चित्त से कार्य करने वाला, अत्यधिक शक्ति शाली और स्थिर बुद्धि (दृढ़निश्चय) वाला होता है ॥ १८२ ॥

व्याघात—

व्याघातयोगजातश्च सर्वज्ञः सर्वपूजितः ।
सर्वकर्मकरो लोके विख्यातः सर्वकर्मसु ॥ १८३ ॥

व्याघात योग में उत्पन्न व्यक्ति सब कुछ जानने वाला, सभी वर्गों से पूजित, सभी प्रकार के कार्यों को करने वाला तथा सभी प्रकार के कर्म के लिए संसार में विख्यात होता है ॥ १८३ ॥

हर्षण—

हर्षणे जायते लोके महाभाग्यो नृपप्रियः ।
धृष्टः सदा धनैर्युक्तो विद्याशास्त्रविशारदः ॥ १८४ ॥

---

१. महाशिरा का अर्थ अधिक नसों वाला भी होता है ।

जो व्यक्ति हर्षण योग में जन्म लेता है वह अत्यधिक भाग्यशाली, राजाका प्रियपात्र, धृष्ट (ढीठ या निर्लज्ज) सदैव धन से युक्त विद्या तथा शास्त्र का विशेषज्ञ होता है ॥ १८४ ॥

वज्र—

वज्रयोगे वज्रमुष्टिः सर्वविद्यास्त्रपारगः ।
धनधान्यसमायुक्तस्तत्त्वज्ञो बहुविक्रमः ॥ १८५ ॥

वज्र योग में जन्म हो तो वज्र के समान मुष्टि का (बाक्सर), सभी विद्याओं एवं अस्त्रों का विशेषज्ञ, धन-सम्पत्ति से युक्त, तत्त्व को जानने वाला एवं बहुत पराक्रमी होता है ॥ १८५ ॥

सिद्धि—

सिद्धियोगे समुत्पन्नः सर्वसिद्धियुतो भवेत् ।
दाता भोक्ता सुखी कान्तः शोकी रोगी च मानवः ॥ १८६ ॥

जो सिद्धि में जन्म लेता है वह सभी सिद्धियों से युक्त दानी, भोगी, सुखी, सुन्दर तथा शोक एवं रोग से युक्त रहता है ॥ १८६ ॥

व्यतिपात—

व्यतीपाते नरो जातो महाकष्टेन जीवति ।
जीवेच्चेद्भाग्ययोगेन स भवेदुत्तमो नरः ॥ १८७ ॥

जिसका जन्म व्यतीपात योग में होता है वह महान कष्ट के साथ जीवित रहता है । (जीवित रहना कठिन होता है ।) यदि भाग्ययोग से जीवित रह गया तो उत्तम पुरुष होता है ॥ १८७ ॥

वरीयान्—

वरीयान्नामयोगे च बलिष्ठो जायते नरः ।
शिल्पशास्त्रकलाभिज्ञो गीतनृत्यादिकोविदः ॥ १८८ ॥

वरीयान् योग में जन्म लेने वाला मनुष्य बलवान्, शिल्पशास्त्र (मूर्ति-कला), एवं कला (चित्रकारी) का ज्ञाता, गीत, नृत्य आदि का विशेषज्ञ होता है ॥ १८८ ॥

परिघ—

परिघे च नरो जातः स्वकुलोन्नतिकारकः ।
शास्त्रज्ञः सकविर्वाग्मी दाता भोक्ता प्रियंवदः ॥ १८९ ॥

जो परिघ मे जन्म लेता है वह अपने कुल की उन्नति करने वाला, शास्त्र का ज्ञाता, कविके साथ-साथ वक्ता, दानी, सुखभोग करने वाला एवं प्रिय भाषी होता है ॥ १८९ ॥

शिव—

शिवयोगे नरो जातः सर्वकल्याणभाजनः ।
महादेवसमो लोके सदा बुद्धियुतो भवेत् ॥ १९० ॥

शिव योग में उत्पन्न व्यक्ति संसार में महादेव के समान सभी प्रकार से कल्याण करने में समर्थ तथा सदैव बुद्धि से युक्त होता है ॥ १९० ॥

सिद्ध—

सिद्धियोगे सिद्धिदाता मन्त्रसिद्धिप्रवर्तकः ।
दिव्यनारीसमेतश्च सर्वसंपद्युतो भवेत् ॥ १९१ ॥

सिद्ध योग में उत्पन्न व्यक्ति सिद्धियों को देने वाला, मन्त्र एवं सिद्धि का प्रचारक, सुन्दर स्त्री एवं सभी सम्पदाओं से युक्त पुरुष होता है ॥ १९१ ॥

साध्य—

साध्ये मानसिकी सिद्धिर्यशोऽशेषसुखागमः ।
दीर्घसूत्रः प्रसिद्धश्च जायते सर्वसंमतः ॥ १९२ ॥

साध्य योग में उत्पन्न व्यक्ति को मानसिक सिद्धि, यश एवं असीम सुख की प्राप्ति होती है तथा वह आलसी, प्रसिद्ध एवं सबका प्रिय होता है ॥ १९२ ॥

शुभ—

शुभे शुभशतैर्युक्तो धनवानपि जायते ।
विज्ञानज्ञानसम्पन्नो दाता ब्राह्मणपूजकः ॥ १९३ ॥

जो शुभ योग में जन्म लेता है वह सैकड़ों शुभ (कार्यों) से युक्त, धनवान्, ज्ञान-विज्ञान से सम्पन्न, दानी एवं ब्राह्मणों का आदर करने वाला होता है ॥१९३॥

शुक्ल—

शुक्ले सर्वकलायुक्तः सर्वार्थज्ञानवान् भवेत् ।
कविः प्रतापी शूरश्च धनी सर्वजनप्रियः ॥ १९४ ॥

शुक्ल योग में उत्पन्न व्यक्ति सभी कलाओं से युक्त, सभी प्रकार के अर्थों (अर्थशास्त्रों) को जानने वाला, कवि, प्रतापी, शूर, धनी एवं सभी जनों का प्रिय होता है ॥ १९४ ॥

ब्रह्म—

ब्रह्मयोगे महाविद्वान् वेदशास्त्रपरायणः ।
ब्रह्मज्ञानरतो नित्यं सर्वकार्येषु कोविदः ॥ १९५ ॥

जो ब्रह्मयोग में जन्म लेता है वह महान् विद्वान् वेद-शास्त्र का मनन करने वाला, नित्य ब्रह्मज्ञान में लीन एवं सभी कार्यों में निपुण होता है ॥ १९५ ॥

ऐन्द्र—

ऐन्द्रे भूपकुले जातो राजा भवति निश्चयः।
अल्पायुस्तु सुखी भोगी गुणवानपि जायते॥ १९६॥

राजकुल में यदि ऐन्द्र योग में किसी का जन्म हो तो वह अवश्य राजा होता है। अल्पायु, सुखी, भोगी तथा गुणवान् भी होता है॥ १९६॥

वैधृति—

वैधृतौ जायते यस्तु निरुत्साही बुभुक्षितः।
कुर्वाणोऽपि जनैः प्रीतिं प्रयात्यप्रियतां नरः॥ १९७॥

वैधृति योग में जो उत्पन्न होता है वह उत्साह हीन, बुभूक्षित (भूखा), लोगों का प्रिय कार्य करता हुआ भी लोक में अप्रिय (निन्दित) होता है॥ १९७॥

करण साधन—

कृष्णपक्षे तिथिर्द्विघ्ना मुनिभिर्भागमाहरेत्।
शेषांकेन बवाद्यं च तिथ्यादौ करणं विदुः॥ १९८॥

कृष्णपक्ष में करण ज्ञान अपेक्षित हो तो इष्ट तिथि को दो से गुणा कर सात से भाग देने पर जो शेष बचे उसी (संख्या) के अनुसार तिथि के आदि में बवादि कारण होते हैं॥ १९८॥

तिथिर्द्विघ्ना द्विकोना च शुक्लपक्षे सदा बुधैः।
शेषांके सप्तभिर्भागस्तिथ्यादौ करणं मतम्॥ १९९॥

शुक्ल पक्ष में यदि करण अपेक्षित हो तो इष्ट तिथि को दो से गुणाकर (गुणनफल से) दो घटाकर शेष में ७ से भाग देने पर शेष संख्यक बवादि करण तिथि के पूर्वार्ध में होते हैं॥ १९९॥

उदाहरण—(१) सं. २०३७ शक १९०२ फाल्गुन कृष्ण पञ्चमी तिथि घ० १०।२४ सोमवार को करण ज्ञान अपेक्षित है। अतः तिथि ५ को दूना कर ७ का भाग दिया—५ × २ = १० ÷ ७ = $\frac{१०}{७}$ = लब्धि १, शेष ३ शेष तुल्य तीसरा कौलव करण तिथि के पूर्वार्ध में तथा तैतिल करण तिथि के उत्तरार्ध में हुआ।

(२) सं. २०३७ फाल्गुन शुक्ल १० तिथि घ० ३३।७ रविवार को करण ज्ञान करना है अतः द्विगुणित तिथि में २ घटाकर ७ का भाग देने से—

१० × २ = २० − २ = १८ ÷ ७ = $\frac{१८}{७}$

= लब्धि २

शेष ४

शेष तुल्य चौथा तैतिल करण पूर्वार्ध में तथा तिथि के उत्तरार्ध में गर करण हुआ।

विशेष—प्रसंगात् यह ज्ञातव्य है कि करण दो प्रकार के होते हैं १–चर, २–स्थिर।

बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज, विष्टि ये सात चर करण तथा १ शकुनि, २ चतुष्पद, ३ नाग, ४ किंस्तुघ्न ये चार स्थिर करण होते हैं।

कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के उत्तरार्ध में शकुनि आदि चार करण आरम्भ होते हैं तथा शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा के पूर्वार्ध में समाप्त हो जाते हैं। अन्य तिथियों में प्रतिपदा के उत्तरार्ध से चर करण होते हैं। चक्र से स्पष्ट है।

कृष्णपक्ष			शुक्लपक्ष		
तिथि	पूर्वार्ध	उत्तरार्ध	तिथि	पूर्वार्ध	उत्तरार्ध
१,८	बालव	कौलव	१	किंस्तुघ्न	बव
२,९	तैतिल	गर	२,९	बालव	कौलव
३,१०	वणिज	विष्टि	३,१०	तैतिल	गर
४,११	बव	बालव	४,११	वणिज	विष्टि
५,१२	कौलव	तैतिल	५,१२	बव	बालव
६,१३	गर	वणिज	६,१३	कौलव	तैतिल
७	विष्टि	बव	७,१४	गर	वणिज
१४	भद्रा	शकुनि	८,१५	विष्टि	बव
३०	चतुष्पद	नाग	×	×	×

करण जात फल—

बव—

बवाख्ये करणे जातो मानी धर्मरतः सदा।
शुभमङ्गलकर्मा च स्थिरकर्मा च जायते॥ २००॥

बव नामक करण में जन्म लेने वाला स्वाभिमानी, सदैव धर्म मे अनुरक्त, शुभ एवं मङ्गल कार्य कर्त्ता, तथा स्थायी कार्य करने वाला होता है॥ २००॥

बालव—

बालवाख्ये नरो जातस्तीर्थदेवादिसेवकः।
विद्यार्थसौख्यसम्पन्नो राजमान्यश्च जायते॥ २०१॥

बालव करण में उत्पन्न व्यक्ति तीर्थस्थान, देवता आदि की सेवा करने वाला, विद्या, धन और सुख से सम्पन्न तथा राजा से सम्मानित होता है॥ २०१॥

कौलव—

कोलवाख्ये तु जातस्य प्रीतिः सर्वजनैः सह।
सङ्गतिर्मित्रवर्गैश्च मानवांश्च प्रजायते॥ २०२॥

यदि कौलव नामक करण में जन्म हो तो जातक सभी लोगों के साथ प्रेम रखता है, तथा मित्रों के साथ रहने वाला एवं स्वाभिमानी होता है ॥ २०२॥

तैतिल—

तैतिले करणे जातः सौभाग्यधनसंयुतः ।
स्नेही सर्वजनैः सार्द्धं विचित्राणि गृहाणि च ॥ २०३ ॥

तैतिल करण में उत्पन्न व्यक्ति सौभाग्य, और धन से युक्त सभी लोगों के साथ प्रेम रखने वाला, कई प्रकार के (सुसज्जित) गृहों का अधिपति होता है ॥२०३॥

गर—

गराख्ये कृषिकर्मा च गृहकार्यपरायणः ।
यद्वस्तु वाञ्छितं तच्च लभते च महोद्यमैः ॥ २०४ ॥

गर नामक करण में जिसका जन्म हो वह कृषि (खेती) कार्य करने वाला, घरेलू कार्यों में दक्ष, तथा अपनी इच्छित वस्तु को महान् उद्योग से प्राप्त करने वाला होता है २०४ ॥

वणिज—

वाणिज्ये करणे जातो वाणिज्येनैव जीवति ।
वाञ्छितं लभते लोके . देशान्तरगमागमैः ॥ २०५ ॥

वणिज करण में जिसका जन्म होता वह व्यापार से ही जिविका चलाता है तथा देश-विदेश की यात्राओं द्वारा अपनी अभिलाषा को पूर्ण करता है ॥ २०५ ॥

विष्टि—

अशुभारम्भशीलश्च परदाररतः सदा ।
कुशलो विषकार्येषु विष्ट्याख्यकरणोद्भवः ॥ २०६ ॥

विष्टि (भद्रा) नामक करण में उत्पन्न मनुष्य अशुभ कार्यों को करने वाला, सदा परस्त्री में आसक्त, तथा विष सम्बन्धी कार्यों में कुशल (विष वैद्य) होता है ॥ २०६ ॥

शकुनि—

शकुनौ करणे जातः पौष्टिकादिक्रियाकृतिः ।
औषधादिषु दक्षश्च भिषग्वृत्तिश्च जायते ॥ २०७ ॥

शकुनि करण में जिसका जन्म होता है वह पौष्टिक आदि कार्य (योगासन-व्यायामादि) करने वाला, औषधि निर्माण में दक्ष एवं चिकित्सक होता है ॥२०७॥

चतुष्पद—

करणे च चतुष्पादे देवद्विजरतः सदा।
गोकर्मा गोप्रभुर्लोके चतुष्पदचिकित्सकः ॥ २०८ ॥

चतुष्पद करण में जन्म हो तो वह देवता और ब्राह्मणों में सदैव अनुरक्त, गौओं का पालन करने वाला, बहुत सी गायों का अधिपति तथा पशुचिकित्सक होता है ॥ २०८ ॥

नाग—

नागे च करणे जातो धीवरप्रीतिकारकः।
कुरुते दारुणं कर्म दुर्भगो लोललोचनः ॥ २०९ ॥

नाग नामक करण में जन्म हो तो मनुष्य धीवर (मछुआ) जाति से सम्बन्ध रखने वाला, क्रूरकर्म करने वाला, कुरूप तथा चञ्चल नेत्रों वाला होता है ॥ २०९ ॥

किंस्तुघ्न—

किंस्तुघ्नकरणे जातः शुभकर्मरतो नरः।
तुष्टिं पुष्टिं च माङ्गल्यं सिद्धिं च लभते सदा ॥ २१० ॥

जिस व्यक्ति का जन्म किंस्तुघ्न करण मे होता है वह शुभ कार्य में लीन रहता है तथा सन्तोष, पुष्टि (स्वास्थ्य) मंगल (शुभ) और सिद्धि को सदैव प्राप्त करता है ॥ २१० ॥

गणसाधन—

अश्विनीमृगरेवत्यो हस्तः पुष्यः पुनर्वसुः।
अनुराधा श्रुतिः स्वाती कथ्यते देवतागणः ॥ २११ ॥

अश्विनी, मृगशिरा, रेवती, हस्त, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा, श्रवणा तथा स्वाती देवता गण संज्ञक कहे जाते हैं ॥ २११ ॥

तिस्रः पूर्वाश्चोत्तराश्च तिस्रोऽप्यार्द्रा च रोहिणी।
भरणी च मनुष्याख्यो गणश्च कथितो बुधैः ॥ २१२ ॥

तीनों पूर्वा (पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वा भाद्रपद), तीनों उत्तरा (उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तरा भाद्रपदा) आर्द्रा, रोहिणी तथा भरणी ये मनुष्य गण कहे जाते हैं ॥ २१२ ॥

कृत्तिका च मघाऽऽश्लेषा विशाखा शततारकाः।
चित्रा ज्येष्ठा धनिष्ठा च मूलं रक्षोगणः स्मृतः ॥ २१३ ॥

कृत्तिका, मघा, आश्लेषा, विशाखा, शतभिषा, चित्रा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, तथा मूल ये राक्षस गण हैं ॥ २१३ ॥

देवगण का फल—

सुन्दरो दानशीलश्च मतिमान् सरलः सदा।
अल्पभोक्ता महाप्राज्ञो नरो देवगणे भवेत्॥ २१४॥

जो देवगण में उत्पन्न होता है वह सुन्दर, दानी, बुद्धिमान्, सरल, अल्पाहारी तथा महान् बुद्धिमान् होता है॥ २१४॥

मनुष्य गण का फल—

मानी धनी विशालाक्षो लक्ष्यवेधी धनुर्धरः।
गौरः पौरजनग्राही जायते मानवे गणे॥ २१५॥

मनुष्य गण में उत्पन्न व्यक्ति स्वाभिमानी, धनवान्, विशाल नेत्रों वाला, निशानेबाज, धनुष धारण करने वाला, गौर, नागरिकों पर प्रभाव रखने वाला होता है॥ २१५॥

राक्षस गण का फल—

उन्मादी भीषणाकारः सर्वदा कलिवल्लभः।
पुरुषो दुःसहो ब्रूते प्रमेही राक्षसे गणे॥ २१६॥

जिसका जन्म राक्षस गण में होता है वह उन्मत्त, भयानक आकृतिवाला, सदैव कलहप्रेमी, असहनीय (कटु) वचन बोलने वाला तथा प्रमेह (मूत्ररोग) से ग्रस्त होता है॥ २१६॥

योनि ज्ञान—

अश्विनी वारुणाश्चाश्वो रेवती भरणी गजः।
पुष्यश्च कृत्तिका छागो नागश्च रोहिणी मृगः॥ २१७॥

अश्विनी, शतभिषा, अश्व, रेवती, भरणी, गज, पुष्य, कृत्तिका, छाग, रोहिणी, मृगशिरा, सर्प योनि संज्ञ हैं॥ २१७॥

आर्द्रा मूलमपि श्वा च मूषकः फल्गुनी मघा।
मार्जारोऽदितिराश्लेषा गोजातिश्चोत्तराद्वयम्॥ २१८॥

आर्द्रा, मूल श्वान। मघा, पूर्वाफाल्गुनि मूषक। पुनर्वसु, आश्लेषा मार्जार। उत्तराफाल्गुनि उत्तराभाद्रपद दो नक्षत्र गो योनि हैं॥ २१८॥

महिषो स्वातिहस्तौ च मृगो ज्येष्ठाऽनुराधिका:।
व्याघ्रश्चित्रा विशाखा च श्रुत्याषाढे च मर्कटौ॥ २१९॥

स्वाति, हस्त महिष, ज्येष्ठा, अनुराधा मृग, चित्रा, विशाखा व्याघ्र, पूर्वाषाढ, श्रवण, वानर योनि है॥ २१९॥

वसुभाद्रपदाः सिंहो नकुलश्चाभिजित्स्मृतः ।
योनयः कथिता भानां वैरमैत्रीं विचारयेत् ॥ २२० ॥

धनिष्ठा, पूर्वाभाद्रपदा सिंह । अभिजित् नकुल । इस प्रकार नक्षत्रों द्वारा योनियाँ कही गई हैं । इनसे शत्रुता तथा मित्रता का विचार करना चाहिये ॥२२०॥

योनिफल

अश्व—

स्वच्छन्दः सद्गुणः शूरस्तेजस्वी घर्घरेश्वरः ।
स्वामिभक्तस्तुरङ्गस्य योन्यां जातो भवेन्नरः ॥ २२१ ॥

अश्व योनि में उत्पन्न व्यक्ति स्वतन्त्र, अच्छे गुणों से युक्त, शूर, तेजस्वी (प्रभावशाली), घर्घर स्वर वाला तथा स्वामिभक्त होता है ॥ २२१ ॥

गज—

राजमान्यो बली भोगी भूपस्थानविभूषणः ।
आत्मोत्साही नरो जातो गजयोनौ न संशयः ॥ २२२ ॥

गज योनि में यदि जन्म हो तो वह राजाओं द्वारा आदर प्राप्त, बलवान्, भोगी (सुखी), राजदरबार का भूषण, अपने को उत्साहित करने वाला होता है ॥ २२२ ॥

गौ—

स्त्रीणां प्रियः सदोत्साही बहुवाक्यविशारदः ।
स्वल्पायुश्च नरो जातः पशुयोनौ न संशयः ॥ २२३ ॥

गौ योनि में उत्पन्न व्यक्ति निःसन्देह स्त्रियों का प्रिय सदैव उत्साही, वाक्पटु तथा अल्पायु होता है ॥ २२३ ॥

[पशु शब्द छाग के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है ।]

सर्प—

दीर्घरोषः सदा क्रूरः उपकारं न गृह्यते ।
परवेश्मापहारी च सर्पयोनौ न संशयः ॥ २२४ ॥

सर्प योनि मे जन्म लेने वाला निःसन्देह महान् क्रोधी, सदैव क्रूर (निर्दय); उपकार न मानने वाला तथा दूसरों के घर का अपहरण करने वाला होता है ॥

श्वान—

सोद्यमः समहोत्साही शूरः स्वज्ञातिविग्रही ।
मातृपित्रोः सदा भक्तः श्वानयोनिसमुद्भवः ॥ २२५ ॥

जो श्वान योनि में उत्पन्न होता है वह उद्योगी, उत्साहयुक्त, शक्तिशाली, अपनी जाति से द्वेष करने वाला तथा अपने माता-पिता का सदा भक्त होता है ॥२२५॥

मार्जार—

स्वस्वकार्ये शूरदक्षो मिष्टान्नाहारभोजनः ।
निर्दयो दुष्टसद्भावी नरो मार्जारयोनिजः ॥ २२६ ॥

मार्जार योनि में उत्पन्न पुरुष अपने कार्य साधन में शूर (समर्थ), चतुर, मधुर पदार्थ का भोजन करने वाला, निर्दयी एवं दुष्टों का साथी होता है ॥ २२६ ॥

मेष (छाग)--

महद्विक्रमयोद्धापि—ईश्वरो विभवेश्वरः ।
परोपकारी नित्यं च मेषयोनौ भवेन्नरः ॥ २२७ ॥

जिस पुरुष का जन्म मेष योनि में होता है वह महान् पराक्रमी, योद्धा, ईश्वर के समान समर्थ, धनपति तथा प्रतिदिन दूसरों का उपकार करने वाला होता है ॥

मूषक—

बुद्धिमान् वित्तसम्पूर्णः स्वकार्यकरणोद्यतः ।
अप्रमत्तोऽप्यविश्वासी नरो मूषकयोनिजः ॥ २२८ ॥

मूषक योनि में उत्पन्न व्यक्ति बुद्धिमान्, धन से परिपूर्ण, अपने कार्य में सदैव सन्नद्ध, प्रमाद से रहित तथा अविश्वासी होता है ॥ २२८ ॥

सिंह—

स्वधर्मे तु सदाचारसत्क्रियासद्गुणान्वितः ।
कुटुम्बस्य समुद्धर्ता सिंहयोनिभवो नरः ॥ २२९ ॥

सिंह योनि में उत्पन्न व्यक्ति अपने धर्मानुसार अच्छा आचरण करने वाला, अच्छे कार्यों एवं सद्गुणों से युक्त तथा अपने कुटुम्ब का उद्धार करने वाला होता है ॥ २२९ ॥

महिष—

संग्रामे विजयी योद्धा सकामस्तु बहुप्रजः ।
वाताधिको मन्दमतिर्नरो महिषयोनिजः ॥ २३० ॥

महिष योनि में उत्पन्न व्यक्ति संग्राम में विजय पाने वाला, योद्धा, काम वासना से युक्त, अधिक सन्तान वाला, वातव्याधि से युक्त तथा मन्दबुद्धि (मूढ) होता है ॥ २३० ॥

व्याघ्र—

स्वच्छन्दाऽर्थरतो ग्राही दीक्षावान् स विभुः सदा ।
आत्मस्तुतिपरो नित्यं व्याघ्रयोनिभवो नरः ॥ २३१ ॥

जिसका जन्म व्याघ्र योनि में होता है वह स्वतन्त्र प्रकृति वाला, धन सञ्चय में आसक्त, सद्विचारों को ग्रहण करने वाला, दीक्षाप्राप्त, सदैव धन से सम्पन्न, तथा निरन्तर अपनी प्रशंसा करने वाला होता है ।। २३१ ।।

मृग—

स्वच्छन्दः शान्तसद्वृत्तिः सत्यवान् स्वजनप्रियः ।
धर्मिष्ठो रणशूरश्च यो नरो मृगयोनिजः ।। २३२ ।।

मृग योनि में उत्पन्न पुरुष स्वतन्त्र विचारों वाला, शान्त, सदाचारी, सत्यवादी, अपने सम्बन्धियों का प्रिय, धार्मिक तथा युद्ध में पराक्रमी होता है ।।२३२ ।।

वानर—

चपलो मिष्टभोगी चार्थलुब्धश्च कलिप्रियः ।
सकामः सत्प्रजः शूरो नरो वानरयोनिजः ।। २३३ ।।

वानर योनि में उत्पन्न व्यक्ति, चञ्चल, मीठा भोजन करने वाला, धन का लोभी, झगड़ालू, कामवासना से युक्त, अच्छी सन्तान वाला तथा पराक्रमी होता है ।। २३३ ।।

नकुल—

परोपकरणे दक्षो वित्तेश्वरविचक्षणः ।
पितृमातृप्रियो नित्यं नरो नकुलयोनिजः ।। २३४ ।।

जिसका जन्म नकुल योनि में होता है वह दूसरों का हित करने में चतुर, धन का स्वामी, विद्वान् तथा माता-पिता का सदैव प्रिय होता है ।। २३४ ।।

वार से आयुर्ज्ञान

रविवार—

विपदः प्रथमे मासे द्वात्रिंशे च त्रयोदशे ।
षष्ठेऽपि च ततः सूर्ये जातो जीवति षष्टिकम् ।। २३५ ।।

रविवार को जन्म लेने वालों को प्रथम, छठे, तेरहवें, और बत्तीसवें मास में कष्ट होता है तथा वे ६० वर्षों तक जीवित रहते हैं ।। २३५ ।।

सोमवार—

एकादशेऽष्टमे मासे चन्द्रपीडा च षोडशे ।
सप्तविंशतिवर्षे च चतुर्युक्ताशिती मृतिः ।। २३६ ।।

सोमवार को जिसका जन्म होता है उसे आठवें, ग्यारहवें, मास में तथा सोलहवें, एवं सत्ताइसवें वर्ष में चन्द्रकृत अरिष्ट से कष्ट होता है। पश्चात् चौरासी वर्ष की आयुमें मृत्यु होती है ।। २३६ ।।

भौमवार—

द्वात्रिंशे च द्वितीये च वर्षे पीडा च मङ्गले।
चतुः सप्ततिवर्षाणि सदा रोगी स जीवति ॥ २३७ ॥

मङ्गलवार को यदि जन्म हो तो दूसरे और बत्तीसवें वर्ष में कष्ट पाकर सदैव रोगी रहता हुआ ७४ वर्षों तक जीवित रहता है ॥ २३७ ॥

बुधवार—

बुधवारेऽष्टमे मासे पीडा वर्षे तथाष्टमे।
पूर्णे चतुःषष्टिवर्षे ततो मृत्युर्भविष्यति ॥ २३८ ॥

जो बुधवार को जन्म लेगा वह आठवें मास और आठवें वर्ष में पीड़ित होगा तथा ६४ वर्ष पूर्ण होने पर उसकी मृत्यु हो जायेगी ॥ २३८ ॥

गुरुवार—

गुरौ च सप्तमे मासे षोडशे च त्रयोदशे।
पीडा ततश्चतुर्युक्ताशीतिवर्षाणि जीवति ॥ २३९ ॥

जिसका जन्म गुरुवार को होता है वह सातवें, सोलहवें, और तेरहवें मास में कष्ट पाता है तथा ८४ वर्ष तक जीवित रहता है ॥ २३९ ॥

शुक्रवार—

शुक्रवारे च जातस्य देहो रोगविवर्जितः।
षष्टिवर्षेऽथ संपूर्णे म्रियते मानवो ध्रुवम् ॥ २४० ॥

शुक्रवार को उत्पन्न व्यक्ति का शरीर रोग रहित होता है तथा ६० वर्ष पूर्ण होने पर निश्चय ही उसकी मृत्यु हो जाती है ॥ २४० ॥

शनिवार—

शनौ च प्रथमे मासे पीड्यते च त्रयोदशे।
दृढदेहस्तदा जातः शतवर्षाणि जीवति ॥ २४१ ॥

जिसका जन्म शनिवार को होता है वह पहले तथा तेरहवें मास में पीड़ित होता है अनन्तर पूर्ण स्वस्थ होकर १०० वर्षों तक जीवित रहता है ॥ २४१ ॥

जन्म लग्न का फल

मेष—

मेषलग्ने समुत्पन्नश्चण्डो मानी धनी शुभः।
क्रोधी स्वजनहन्ता च विक्रमी परवत्सलः ॥ २४२ ॥

मेष लग्न में उत्पन्न व्यक्ति उग्र, स्वाभिमानी, धनी, शुभकार्य करने वाला, क्रोधी, स्वजनों का हनन करने वाला, पराक्रमी तथा दूसरों पर दया करने वाला होता है ॥ २४२ ॥

वृष—

वृषलग्नभवो लोकगुरुभक्तः प्रियंवदः ।
गुणी कृती धनी लोभी शूरः सर्वजनप्रियः ॥ २४३ ॥

वृष लग्न में जिसका जन्म होता है वह लोक (देश) और गुरुजनों में भक्ति रखने वाला, प्रियभाषी, गुणवान्, यशस्वी, लोभी, शक्तिशाली और सर्वप्रिय होता है ॥ २४३ ॥

मिथुन—

मिथुनोदयसञ्जातो मानी स्वजनवल्लभः ।
त्यागी भोगी धनी कामी दीर्घसूत्रोऽरिमर्दकः ॥ २४४ ॥

मिथुन लग्न के उदयकाल में जन्म लेने वाला स्वाभिमानी, स्वजनों का प्रेमी, त्यागी, सुख-भोग करने वाला, धनवान्, कामी, आलसी एवं शत्रुओं का नाश करने वाला होता हैं ॥ २४४ ॥

कर्क—

कर्कलग्ने समुत्पन्नो भोगी धर्मजनप्रियः ।
मिष्टान्नपानसंयुक्तः सुभगः सुजनप्रियः ॥ २४५ ॥

कर्क लग्न में उत्पन्न व्यक्ति सुख भोग करने वाला, धर्म और सभीजनों का प्रिय, मिष्टान्न एवं मधुर पेय का सेवन करने वाला, सुन्दर तथा सज्जनों का प्रिय होता है ॥ २४५ ॥

सिंह—

सिंहलग्नोदये जातो भोगी शत्रुविमर्दकः ।
स्वल्पोदरोऽल्पपुत्रश्च सोत्साहो रणविक्रमी ॥ २४६ ॥

सिंह लग्न में उत्पन्न व्यक्ति भोगी, शत्रुओं का दमन करने वाला, छोटे पेट और अल्प सन्तान वाला, उत्साह युक्त तथा संग्राम में पराक्रमी होता है ॥ २४६ ॥

कन्या—

कन्यालग्ने भवेद्बालो नानाशास्त्रविशारदः ।
सौभाग्यगुणसम्पन्नः सुन्दरः सुरतप्रियः ॥ २४७ ॥

जिस बालक का जन्म कन्या लग्न में होता है वह विविध शास्त्रों का मर्मज्ञ, सौभाग्य एवं गुण से सम्पन्न, सुन्दर तथा रतिक्रीडा का प्रेमी होता है ॥ २४७ ॥

तुला—

तुलालग्नोदये जातः सुधीः सत्कर्मजीविकः ।
विद्वान् सर्वकलाभिज्ञो धनाढ्यो जनपूजितः ॥ २४८ ॥

तुला लग्न में जिसका जन्म होता है वह अच्छी बुद्धिवाला, अच्छे कार्यों से जीविका प्राप्त करने वाला, विद्वान्, सभी प्रकार की कलाओं का ज्ञाता, धन से युक्त तथा लोक में सम्मानित होता है ॥ २४८ ॥

वृश्चिक—

वृश्चिकोदयसञ्जातः शौर्यवान् धनवान् सुधीः ।
कुलमध्यप्रधानश्च प्राज्ञः सर्वस्य पोषकः ॥ २४९ ॥

वृश्चिक लग्न के उदय काल में जिसका जन्म होता है वह शक्तिशाली, धनवान्, विद्वान्, अपने परिवार में सर्वश्रेष्ठ, बुद्धिमान् और सबका पालन करने वाला होता है ॥ २४९ ॥

धनु—

धनुर्लग्नोदये जातो नीतिमान् धर्मवान् सुधीः ।
कुलमध्ये प्रधानश्च प्राज्ञः सर्वस्य पोषकः ॥ २५० ॥

जो धनु लग्न के उदय काल में जन्म लेता है वह नीति को जानने वाला, धार्मिक, बुद्धिमान्, अपने परिवार में प्रधान, बुद्धिमान्, तथा सबका पालन करने वाला होता है ॥ २५० ॥

मकर—

मकरोदयसञ्जातो नीचकर्मा बहुप्रजः ।
लुब्धोऽलसो विनष्टश्च स्वकार्येषु कृतोद्यमः ॥ २५१ ॥

मकर लग्न में उत्पन्न व्यक्ति नीच कर्म करने वाला, अधिक सन्तान वाला, लोभी, आलसी, सभी प्रकार से नष्ट, तथा अपने कार्यों में प्रयास करने वाला होता है ॥ २५१ ॥

कुम्भ—

कुम्भलग्ने नरो जातोऽचलचित्तोऽतिसौहृदः ।
परदाररतो नित्यं मृदुकायो महासुखी ॥ २५२ ॥

कुम्भ लग्न में उत्पन्न व्यक्ति स्थिर चित्त, अधिक मित्रों वाला, परस्त्री में सदा आसक्त, कोमल शरीर वाला तथा अत्यन्त सुखी होता है ॥ २५२ ॥

मीन—

मीनलग्ने भवेद् बालो रत्नकाञ्चनपूरितः।
अल्पकामः कृशाङ्गश्च दीर्घकालविचिन्तकः॥ २५३॥

मीन लग्न में उत्पन्न बालक रत्न और स्वर्ण से पूर्ण, अल्प कामवासना युक्त, दुर्बल शरीर वाला, तथा दीर्घ काल तक चिन्तन करने वाला होता है॥ २५३॥

नवांशफल—

पिशुनश्चपलो दुष्टः पापकर्मा निराकृतिः।
परेषां व्यसने सक्तः प्रथमांशे प्रजायते॥ २५४॥

प्रथम नवांश मे उत्पन्न व्यक्ति चुगली करने वाला, चञ्चल, दुष्ट, पाप कर्म करने वाला, (सुन्दर) आकृतिहीन, दूसरों के व्यसन (कष्ट देने) में आसक्त होता है॥ २५४॥

उत्पन्नविभवो भोक्ता संग्रामे विगतस्पृहः।
गान्धर्वप्रमदासक्तो द्वितीयांशे प्रजायते॥ २५५॥

जिसका जन्म द्वितीय नवमांश में होता है वह ऐश्वर्य को उत्पन्न कर उसका भोग करने वाला, युद्ध की इच्छा से रहित, नाचने-गाने वाली स्त्रियों में आसक्त होता है॥ २५५॥

धर्मिष्ठः सन्ततव्याधिः सर्वसारज्ञ एव च।
सर्वज्ञो देवताभक्तस्तृतीयांशे प्रजायते॥ २५६॥

यदि तृतीय नवमांश में जन्म हो तो धार्मिक, निरन्तर रोग से पीड़ित, सभी विषयों के सार को जानने वाला, सर्वज्ञ तथा देवता का भक्त होता है॥ २५६॥

चतुर्थांशेऽभिजातस्तु दीक्षितो गुरुभक्तिमान्।
यत्किञ्चिद्धरणौ वस्तु तत्सर्वं लभते हि सः॥ २५७॥

यदि चतुर्थ नवमांश में जन्म हो तो वह दीक्षाप्राप्त, गुरु के प्रति श्रद्धालु, पृथ्वी पर जो कुछ भी वस्तु है वह सब प्राप्त करने वाला होता है॥ २५७॥

सर्वलक्षण सम्पन्नो राजा भवति विश्रुतः।
दीर्घायुर्बहुपुत्रश्च जायते पञ्चमांशके॥ २५८॥

यदि पाँचवें नवमांश में जन्म हो तो वह सभी प्रकार के लक्षणों से युक्त, सुप्रसिद्ध राजा, दीर्घायु सम्पन्न एवं बहुत पुत्रों वाला होता है॥ २५८॥

स्त्रीनिर्जितः शुभैर्हीनो बहुमानी नपुंसकः।
अर्थध्वंसी प्रमाथी च षष्ठांशे जायते नरः॥ २५९॥

जो मनुष्य छठें नवमांश में उत्पन्न होता है वह स्त्रियों के वशीभूत, शुभकार्यों से हीन, अभिमानी, नपुंसक, धन नष्ट करने वाला तथा दूसरों को सन्तप्त करने वाला होता है ॥ २५९ ॥

विक्रान्तो मतिमाञ्छूरः संग्रामेष्वपराजितः ।
महोत्साही च सन्तोषी जायते सप्तमांशके ॥ २६० ॥

सप्तम नवमांश में जन्म लेने वाला पराक्रमी, बुद्धिमान्, शूर, संग्राम में अजेय, महान् उत्साही एवं सन्तोषी होता है ॥ २६० ॥

कृतघ्नो मत्सरी क्रूरः क्लेशभागी बहुप्रजः ।
फलकालपरित्यागो जायते चाष्टमांशके ॥ २६१ ॥

अष्टम नवमांश में उत्पन्न व्यक्ति कृतघ्न, ईर्ष्यालु, क्रूर, दुःखी, बहुत सन्तान वाला तथा फलदायक समय का परित्याग करने वाला होता है ॥ २६१ ॥

क्रियासु कुशलो दक्षः सुप्रतापी जितेन्द्रियः ।
भृत्यैश्च वेष्टितो नित्यं जायते नवमेंऽशके ॥ २६२ ॥

यदि नवम नवमांश में जन्म हो तो वह सभी प्रकार के कार्यों में निपुण, योग्य, पराक्रमी, इन्द्रियों को जीतने वाला तथा सदैव सेवकों मे घिरा रहने वाला होता है ॥ २६२ ॥

लग्नचन्द्र आदि का प्रयोजन

लग्नं देहो वर्गषट्कोडुकानि प्राणश्चन्द्रो धातवोऽन्ये ग्रहेन्द्राः ।
प्राणे नष्टे देहधात्वङ्गनाशो यस्मात्तस्माच्चन्द्रवीर्यप्रधानः ॥ २६३ ॥

लग्न, शरीर, षड्वर्ग एवं नक्षत्र देह (शरीर के अङ्ग), चन्द्रमा प्राण एवं अन्यग्रह शरीरस्थ धातुओं के प्रतीक होते हैं। प्राण के नष्ट होने पर शरीर, धातु एवं अङ्गों का नाश हो जाता है। अतः चन्द्रबल ही प्रधान है ॥ २६३ ॥

सूर्य[1]आत्मा मनश्चन्द्रस्तदात्मा जीवयोगवान् ।
लग्नांशाद् द्वादशांशाद्वा ग्रहाणां फलमादिशेत् ॥ २६४ ॥

सूर्य आत्मा एवं चन्द्रमा मन है। इसी (मन) के योग से आत्मा जीव से युक्त होता है। लग्न के अंश (नवमांश) या द्वादशांश से ग्रहों के फल को कहना चाहिए ॥ २६४ ॥

इन्दुः सर्वत्र बीजाभो लग्नं च कुसुमप्रभम् ।
फलेन सदृशोंऽशश्च भावः स्वादुरसः स्मृतः ॥ २६५ ॥

१. लग्नं 'आत्मा' पाठान्तरम् ।

चन्द्रमा सर्वत्र बीज के समान, लग्न फूल के सदृश, अंश (नवांशादि) फल एवं (द्वादश) भाव स्वादुरस के समान होते हैं ॥ २६५ ॥

चन्द्र राशि फल

मेष—

लोलनेत्रः सदा रोगी धर्मार्थकृतनिश्चयः ।
पृथुजङ्घः कृतघ्नश्च निष्पापो राजपूजितः ॥ २६६ ॥
कामिनीहृदयानन्दो दाता भीतो जलादपि ।
चण्डकर्मा मृदुश्चान्ते मेषराशौ भवेन्नरः ॥ २६७ ॥

मेष राशि में उत्पन्न व्यक्ति चञ्चल नेत्रों वाला, सदैव रोगी, धर्म और अर्थ के लिए कृतसंकल्प, मोटी जांघो वाला, कृतघ्न, पापरहित, राजा से सम्मानित, स्त्री के हृदय को आनन्दित करने वाला, दानी, जल से भी भयभीत, कठोर कार्य करने वाला परन्तु अन्त में विनम्र होता है ॥ २६६-२६७ ॥

वृष—

भोगी दाता शुचिर्दक्षो महासत्त्वो महाबलः ।
धनी विलासी तेजस्वी सुमित्रश्च वृषे भवेत् ॥ २६८ ॥

यदि वृष राशि में जन्म हो तो सुख का भोग करने वाला, दानी, पवित्रात्मा, कुशल, महान् आत्मा, महान् शक्तिशाली, धनी, विलासी, तेजस्वी एवं अच्छे मित्रों वाला होता है ॥ २६८ ॥

मिथुन—

मिष्टवाक्यो लोलदृष्टिर्दयालुर्मैथुनप्रियः ।
गान्धर्ववित्कण्ठरोगी कीर्तिभागी धनी गुणी ॥ २६९ ॥
गौरो दीर्घः पटुर्वक्ता मेधावी च दृढव्रतः ।
समर्थो न्यायवादी च जायते मिथुने नरः ॥ २७० ॥

मिथुन राशि में उत्पन्न व्यक्ति मृदुभाषी, चञ्चल दृष्टि वाला, दयालु, स्त्री प्रसङ्ग का इच्छुक, गान्धर्व विद्या (नृत्य, गीत आदि) का ज्ञाता, गले से रोगी, यशस्वी, धनी, गुणवान्, गौरवर्ण एवं लम्बे शरीर वाला, कार्यकुशल, वक्ता, बुद्धिमान्, दृढसंकल्प, सभी प्रकार से समर्थ और न्याय प्रिय होता है ॥ २६९, २७० ॥

कर्क—

कार्यकारी धनी शूरो धर्मिष्ठो गुरुवत्सलः ।
शिरोरोगी महाबुद्धिः कृशांगः कृत्यवित्तमः ॥ २७१ ॥

प्रवासशीलः कोपान्धोऽबलो दुःखी सुमित्रकः।
अनासक्तो गृहे वक्रः कर्कराशौ भवेन्नरः ॥ २७२ ॥

यदि कर्क राशि में जन्म हो तो कार्य करने वाला, धनवान्, शूर, धार्मिक, गुरु का प्रिय, शिर से रोगी, अतीव बुद्धिमान्, दुर्बल शरीर वाला, सभी कार्यों का ज्ञाता, प्रवासी, भयंकर क्रोधी, निर्बल, दुःखी, अच्छे मित्रों वाला, गृह में अरुचि रखने वाला तथा कुटिल होता है ॥ २७१, २७२ ॥

सिंह—

क्षमायुक्तः क्रियाशक्तो मद्यमांसरतः सदा।
देशभ्रमणशीलश्च शीतभीतः सुमित्रकः ॥ २७३ ॥
विनयी शीघ्रकोपी च जननीपितृवल्लभः।
व्यसनी प्रकटो लोके सिंहराशौ भवेन्नर ॥ २७४ ॥

यदि सिंह राशि में जन्म हो तो वह पुरुष क्षमाशील, कार्य में समर्थ, मद्यमांस में सदैव आसक्त, देश में भ्रमण करने वाला, शीत से भयभीत, अच्छे मित्रों वाला, विनयशील, शीघ्र क्रुद्ध होने वाला, माता-पिता का प्रिय, व्यसनी (नशा आदि बुरे कार्यों में अभ्यस्त) तथा संसार में प्रख्यात होता है ॥ २७३, २७४ ॥

कन्या—

विलासी सुजनाह्लादी सुभगो धर्मपूरितः।
दाता दक्षः कविर्वृद्धो वेदमार्गपरायणः ॥ २७५ ॥
सर्वलोकप्रियो नाट्यगान्धर्वव्यसने रतः।
प्रवासशीलः स्त्रीदुःखी कन्याजातो भवेन्नरः ॥ २७६ ॥

कन्या राशि में उत्पन्न व्यक्ति विलासी, सज्जनों को आनन्दित करने वाला, सुन्दर, धर्म से परिपूर्ण, दानी, निपुण, कवि, वृद्ध, वैदिक मार्ग का अनुगामी, सभी लोगों का प्रिय, नाटक, नृत्य और गीत के धुन में आसक्त प्रवासी एवं स्त्री से दुःखी होता है ॥ २७५, २७६ ॥

तुला—

अस्थानरोषगो दुःखी मृदुभाषी कृपान्वितः।
चलाक्षश्चललक्ष्मीको गृहमध्येऽतिविक्रमः ॥ २७७ ॥
वाणिज्यदक्षो देवानां पूजको मित्रवत्सलः।
प्रवासी सुहृदामिष्टस्तुलाजातो भवेन्नरः ॥ २७८ ॥

तुला लग्न में उत्पन्न व्यक्ति अकारण क्रोध करने वाला, दुःखी, मधुर भाषी, दयालु, चञ्चल नेत्रों एवं अस्थिर धन वाला, घर में ही पराक्रम दिखाने वाला,

व्यापार में चतुर, देवताओं का पूजन करने वाला, मित्रों के प्रति दयालु, परदेश-वासी तथा मित्रों का प्रियपात्र होता है ॥ २७७, २७८ ॥

वृश्चिक—

बालप्रवासी क्रूरात्मा शूरः पिंगललोचनः ।
पारदररतो मानी निष्ठुरः स्वजने भवेत् ॥ २७९ ॥
साहसप्राप्तलक्ष्मीको जनन्यामपि दुष्टधीः ।
धूर्तश्चौरकलारम्भी वृश्चिके जायते नरः ॥ २८० ॥

वृश्चिक लग्न में उत्पन्न व्यक्ति बाल्यावस्था से ही परदेश में रहने वाला, क्रूर स्वभाव वाला, शूर, पीले नेत्रों वाला, परस्त्री में आसक्त, अभिमानी, अपने भाई-बन्धुओं के प्रति निर्दय, अपने साहस से धन प्राप्त करने वाला, अपनी माता के प्रति भी दुष्ट बुद्धि वाला, धूर्तता और चोरी की कला का अभ्यास करने वाला होता है ॥ २७९, २८० ॥

धनु—

शूरः सत्यधिया युक्तः सात्त्विको जननन्दनः ।
शिल्पविज्ञानसम्पन्नो धनाढ्यो दिव्यभार्यकः ॥ २८१ ॥
मानी चरित्रसम्पन्नो ललिताक्षरभाषकः ।
तेजस्वी स्थूलदेहश्च धनुर्जातः कुलान्तकः ॥ २८२ ॥

यदि धनु राशिगत जन्म हो तो शूर, सत्य बुद्धि से युक्त, सात्त्विक, मनुष्यों के हृदय को आनन्दित करने वाला, शिल्प (मूर्तिकला), विज्ञान से सम्पन्न, धन से युक्त, सुन्दर स्त्री वाला, अभिमानी, चरित्रवान्, सुन्दर शब्दों को बोलने वाला, तेजस्वी, मोटी शरीर वाला तथा कुल का नाशक होता है ॥ २८१, २८२ ॥

मकर—

कुले नष्टो वशः स्त्रीणां पण्डितः परिवादकः ।
गीतज्ञो ललिताग्राह्यो पुत्राढ्यो मातृवत्सलः ॥ २८३ ॥
धनी त्यागी सुभृत्यश्च दयालुर्बहुबान्धवः ।
परिचिन्तितसौख्यश्च मकरे जायते नरः ॥ २८४ ॥

मकर राशि में जन्म लेने वाला व्यक्ति अपने कुल में नष्ट (सबसे हीन अवस्था में), स्त्रियों के वशीभूत, विद्वान्, पर निन्दक, संगीतज्ञ, सुन्दर स्त्रियों का प्रियपात्र, पुत्रों से युक्त, माता का प्रिय, धनी, त्यागी, अच्छे नौकरों वाला, दयालु, बहुत भाइयों (परिवार) वाला तथा सुख के लिए अधिक चिन्तन करने वाला होता है ॥ २८३, २८४ ॥

कुम्भ—

दातालसः कृतज्ञश्च गजवाजिधनेश्वरः।
शुभदृष्टिः सदा सौम्यो धनविद्याकृतोद्यमः ।। २८५ ।।
पुण्याढ्यः स्नेहकीर्तिश्च धन भोगी स्वशक्तितः।
शालूरकुक्षिर्निर्भीकः कुम्भे जातो भवेन्नरः ।। २८६ ।।

यदि कुम्भ राशि में जन्म हो तो मनुष्य दानी, आलसी, कृतज्ञ, हाथी, घोड़ा और धन का स्वामी, शुभ दृष्टि एवं सदैव कोमल स्वभाव वाला, धन और विद्या हेतु प्रयत्नशील, पुत्र से युक्त, स्नेहयुक्त, यशस्वी, अपनी शक्ति से धन का उपभोग करने वाला, मेढक की तरह उदर वाला तथा निर्भीक होता है ।। २८५, २८६ ।।

मीन—

गम्भीरचेष्टितः शूरः पटुवाक्यो नरोत्तमः।
कोपनः कृपणो ज्ञानी गुणश्रेष्ठः कुलप्रियः ।। २८७ ।।
नित्यसेवी शीघ्रगामी गान्धर्वकुशलः शुभः।
मीनराशौ समुत्पन्नो जायते बन्धुवत्सलः ।। २८८ ।।

जिसका जन्म मीन राशि में होता है वह गम्भीर चेष्टा करने वाला, शक्तिशाली, बोलने में चतुर, मनुष्यों में श्रेष्ठ, क्रोधी, कृपण, ज्ञानसम्पन्न, श्रेष्ठ गुणों से युक्त, कुल में प्रिय, नित्य सेवा भाव रखने वाला, शीघ्रगामी, नृत्य गीतादि में कुशल, शुभदर्शन वाला तथा भाई-बन्धुओं का प्रेमी होता है ।। २८७, २८८ ।।

चन्द्रकुण्डली स्थित ग्रहों के फल

द्वादश भाव गत सूर्य फल—

चन्द्रात्प्रथमगो भानुर्जन्मकाले यदा भवेत्।
विदेशगामी भोगी च कलहे कृतवासनः ।। २८९ ।।

चन्द्रमा से प्रथम भाव (जन्म राशि) में यदि सूर्य हो तो विदेश की यात्रा करने वाला, भोगी तथा झगड़ालू प्रकृति का होता है ।। २८९ ।।

जन्मकाले यस्य भानुर्द्वितीयो यदि चन्द्रतः।
बहुभृत्ययशाश्चैव राज्यमान्यो भवेन्नरः ।। २९० ।।

जन्म समय में सूर्य यदि चन्द्रमा से द्वितीय भाव गत हो तो बहुत नौकरों तथा यश से युक्त तथा राज से सम्मानित होता है ।। २९० ।।

चन्द्राद्भानुस्तृतीयश्चैव जन्मकाले यदा भवेत्।
स्वर्णार्थी बहुशुचिश्चैव राजतुल्यो भवेन्नरः ।। २९१ ।।

चन्द्रमा से तृतीय भाव में सूर्य यदि जन्मकाल में हो तो स्वर्ण का अभिलाषी, अधिक सोचने वाला तथा राजा के समान होता है ।। २९१ ।।

चन्द्राच्चतुर्थगो भानुर्जन्मकाले यदा भवेत् ।
गणकाः कथयन्त्येव मातृहन्ता न भक्तिमान् ।। २९२ ।।

चन्द्रमा से चौथे भाव में यदि जन्मकालिक सूर्य हो तो ज्योतिषी कहते हैं कि वह माता में श्रद्धा न रखने वाला अपितु माता का हनन करने वाला होता है ।।

चन्द्रात्पञ्चमगो भानुर्जन्मकाले यदा भवेत् ।
सुताभिश्चासुखी चैव बहुपुत्रो भविष्यति ।। २९३ ।।

यदि जन्म समय में सूर्य चन्द्रमा से पाँचवें भाव मे हो तो वह कन्याओं से दुःखी तथा बहुत पुत्रों वाला होता है ।। २९३ ।।

चन्द्रात्षष्ठगतो भानुर्जन्मकाले यदा भवेत् ।
शत्रूणां विजयी शूरः क्षात्रकर्मरतः सदा ।। २९४ ।।

जन्म समय में यदि चन्द्रमा से छठें भाव में सूर्य हो तो शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने वाला, पराक्रमी तथा क्षत्रियों के अनुकूल कर्म (प्रशासन-युद्ध) करने वाला होता है ।। २९४ ।।

जन्मकाले यदा भानुश्चन्द्रात्सप्तमगो भवेत् ।
सुस्त्री सुशीलचारी च राजमान्यो महातपाः ।। २९५ ।।

चन्द्रमा से सप्तम भाव में यदि जन्मकालिक सूर्य हो तो उसकी पत्नी सुन्दरी एवं सुशीला (सच्चरित्रा) होती है तथा स्वयं राजमान्य एवं तपस्वी होता है ।।

चन्द्रादष्टमगो भानुर्जन्मकाले यदा भवेत् ।
सर्वदा क्लेशकारी च ह्यतिरोगात्प्रपीडितः ।। २९६ ।।

जन्मकाल में चन्द्रमा से अष्टम भाव में यदि सूर्य हो तो वह सदैव दुःखी तथा भयङ्कर रोगों से पीड़ित होता है ।। २९६ ।।

चन्द्रान्नवमगो भानुर्जन्मकाले यदा भवेत् ।
धर्मात्मा सत्यवादी च बन्धुक्लेशी सदा भवेत् ।। २९७ ।।

चन्द्रमा से नवमें भाव में यदि जन्मकालिक सूर्य हो तो धर्मात्मा, सत्यवादी तथा बन्धुओं से क्लेश प्राप्त करने वाला होता है ।। २९७ ।।

चन्द्राद्दशमगो भानुर्जन्मकाले यदा भवेत् ।
तस्य द्वारेषु तिष्ठन्ति धनवन्तो न संशयः ।। २९८ ।।

चन्द्रमा से दशवें भाव में यदि जन्मकालिक सूर्य हो तो उसके दरवाजे पर धनवान् श्रेष्ठी लोग बैठते हैं इसमें सन्देह नहीं ।। २९८ ।।

चन्द्रादेकादशे भानुर्जन्मकाले यदा भवेत् ।
राजगर्व्यतिवेत्ता च प्रसिद्धः कुलनायकः ॥ २९९ ॥

चन्द्रमा से एकादश भाव में यदि सूर्य हो तो राजगौरव को प्राप्त करने वाला, अधिक (विषयों का) ज्ञाता प्रसिद्ध एवं अपने कुल का नायक होता है ॥ २९९ ॥

चन्द्राद् द्वादशगो भानुर्जन्मकाले यदा भवेत् ।
तेजोहीनो नयनयो रोषावेशात्प्रमुच्यते ॥ ३०० ॥

यदि जन्म समय में सूर्य चन्द्रमा से बारहवें भाव में हो तो जातक नेत्र ज्योति-हीन होता है तथा वह क्रोध एवं आवेश से मुक्त होता है ॥ ३०० ॥

द्वादश भावगत भौम फल

चन्द्रात्प्रथमगो भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
रक्ताक्षी रुधिरस्रावी रक्तवर्णो भवेन्नरः ॥ ३०१ ॥

यदि जन्म समय मे चन्द्रमा से प्रथम भाव (राशि स्थान) में मंगल हो तो लाल नेत्रों वाला एवं लाल वर्ण का पुरुष होता है तथा उसके शरीर से रक्त स्राव होता है ॥ ३०१ ॥

चन्द्राद् द्वितीयगो भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
धराधीशो भवेत्पुत्रः कृषिकर्ता न संशयः ॥ ३०२ ॥

चन्द्रमा से द्वितीय भाव में यदि जन्मकालिक मंगल हो तो उस जातक का पुत्र पृथ्वी का स्वामी तथा कृषि कार्य करने वाला होता है इसमें संशय नहीं। अर्थात् जमीन्दार होता है ॥ ३०२ ॥

चन्द्रात्तृतीयगो भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
चतुर्भ्रातृसमायुक्तः सुशीलः सर्वदा सुखी ॥ ३०३ ॥

यदि जन्म समय में चन्द्रमा से तृतीय भाव में मंगल हो तो वह चार भाइयों से युक्त, सुशील तथा सदैव सुखी होता है ॥ ३०३ ॥

चन्द्राच्चतुर्थगो भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
सुखभङ्गो दरिद्रः स्यात्पुंसः स्त्री म्रियते ध्रुवम् ॥ ३०४ ॥

जन्म समय में यदि मंगल चन्द्रमा से चौथे भाव में हो तो उसके सुख का नाश, दारिद्रय प्राप्ति तथा पत्नी की मृत्यु होती है ॥ ३०४ ॥

चन्द्रात्पञ्चमगो भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
पुत्रहीनो नरः स्त्रीणां लग्ने पतति निश्चितम् ॥ ३०५ ॥

चन्द्रमा से पाँचवें भाव में मंगल जन्म समय में पड़ा हो तो पुरुष पुत्र हीन होता है। यदि स्त्री संज्ञक लग्न में जन्म हो तो अवश्य ही निःसन्तान होता है ॥ ३०५ ॥

चन्द्राच्च षष्ठगो भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
अधर्मे शत्रुता चैव सदा रोगेण पीडितः ॥ ३०६ ॥

यदि चन्द्रमा से छठें भाव में जन्म कालिक मंगल हो तो अधर्म में शत्रुता होती है तथा सदैव रोग से पीड़ित होता है ॥ ३०६ ॥

चन्द्रात्सप्तमगो भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
स्त्री कुशीला भवेत्तस्य सदा चाप्रियवादिनी ॥ ३०७ ॥

चन्द्रमा से सप्तम भाव में मंगल यदि जन्म समय में हो तो उसकी स्त्री दुश्चरित्रा, एवं अप्रिय वचन बोलने वाली होती है ॥ ३०७ ॥

चन्द्रादष्टमगो भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
जीवहन्ता महापापी शीलसत्यविवर्जितः ॥ ३०८ ॥

चन्द्रमा से आठवें भाव में यदि जन्म कालिक मंगल हो तो वह जीव हिंसा करने वाला, महापापी, शील और सत्य से रहित होता है ॥ ३०८ ॥

चन्द्रान्नवमगो भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
लक्ष्मीवांश्च भवेत्पुत्रो वृद्धकाले न संशयः ॥ ३०९ ॥

यदि जन्म समय में चन्द्रमा से नवें भाव में मंगल हो तो वह व्यक्ति धनवान होता है तथा वृद्धावस्था में उसे पुत्र प्राप्त होता है । ३०९ ॥

चन्द्राद्दशमगो भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
तस्य द्वारेषु तिष्ठन्ति गजा अश्वा न संशयः ॥ ३१० ॥

चन्द्रमा से दशवें भाव म यदि जन्म कालिक मंगल हो तो उसके दरवाजे पर निःसन्देह हाथी और घोड़े बैठते हैं ॥ ३१० ॥

चन्द्रादेकादशे भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
राजद्वारे प्रसिद्धः स्याद्यशोरूपसमन्वितः ॥ ३११ ॥

यदि जन्म काल में मंगल चन्द्रमा से ग्यारहवें भाव में हो तो वह राजदरबार में प्रसिद्ध एवं सुन्दर स्वरूप से युक्त होता है ॥ ३११ ॥

चन्द्राद् द्वादशगो भौमो जन्मकाले यदा भवेत् ।
मातुश्चासुखकारी च सदा कष्टप्रदायकः ॥ ३१२ ॥

यदि जन्म समय में चन्द्रमा से बारहवें भाव में मंगल हो तो व्यक्ति माता को सुख न देने वाला एवं सदैव कष्टदायक होता है ॥ ३१२ ॥

द्वादशभावगत बुधफल

चन्द्रात्प्रथमगः सौम्यः सुखरूपं विना नरः ।
दुष्टभाषी मतिभ्रंशी स्थानभ्रष्टो दिने दिने ॥ ३१३ ॥

चन्द्रमा से प्रथम भाव (राशि) में यदि बुध हो तो मनुष्य सुख और सौन्दर्य से रहित, कटुभाषी, भ्रष्ट बुद्धि वाला तथा बार-बार स्थान-च्युत होने वाला होता है ॥ ३१३ ॥

चन्द्राद्द्वितीयगः सौम्यो धनधान्यसमाकुलः ।
गृहबन्धुधनप्राप्तिः शीतरोगैर्विनश्यति ॥ ३१४ ॥

चन्द्रमा से द्वितीय भाव में यदि बुध हो तो वह धन सम्पत्ति से परिपूर्ण, गृह, परिवार एवं धन को प्राप्त करने वाला होता है । तथा शीतजन्य रोग से उसकी मृत्यु होती है ॥ ३१४ ॥

चन्द्रात्सहजगः सौम्यः कुरुते चार्थसंपदः ।
राज्यलाभो भवेत्तस्य महतां सङ्गमो ध्रुवम् ॥ ३१५ ॥

चन्द्रमा से सहज (तृतीय) भाव मे बुध हो तो धन और सम्पत्ति को देने वाला, राज्य-लाभ एवं महान् पुरुषों का सङ्गम कराने वाला होता है ॥ ३१५ ॥

चन्द्राच्चतुर्थगः सौम्यः सर्वदा सुखकारकः ।
मातृपक्षान्महालाभः सुखं जीवति मानवः ॥ ३१६ ॥

चन्द्रमा से चतुर्थ भाव में गया हुआ बुध सदैव सुख दायक, माता के पक्ष से महान लाभ दिलाने वाला होता है तथा मनुष्य का जीवन सुखमय बनाता है ॥ ३१६ ॥

चन्द्रात् पञ्चमगः सौम्यो बुद्धिमांश्च विचक्षणः ।
रूपवांश्च महाकामी कुवाक्यं धारयेन्नरः ॥ ३१७ ॥

यदि चन्द्रमा से पाँचवे भाव में बुध हो तो वह मनुष्य सज्जन, बुद्धिमान्, विद्वान्, सुन्दर, अत्यन्त कामी, तथा अपशब्द बोलने वाला होता है ॥ ३१७ ॥

चन्द्रात् षष्ठगतः सौम्यः कृपणः कातरो भवेत् ।
विवादे च महाभीरू रोमशो दीर्घलोचनः ॥ ३१८ ॥

चन्द्रमा से छठें भाव में बुध हो तो व्यक्ति सौम्य, कंजूस, कातर (डरपोक), विवाद से भयभीत, रोयें तथा दीर्घ नेत्रों वाला होता है ॥ ३१८ ॥

चन्द्रात्सप्तमगः सौम्यः स्त्रीणां च वशगो नरः ।
कृपणश्च धनाढ्यश्च बह्वायुश्च भविष्यति ॥ ३१९ ॥

चन्द्रमा से सप्तम भाव में बुध गया हो तो वह पुरुष स्त्री के वशीभूत, कंजूस, धन से युक्त तथा दीर्घायु सम्पन्न होता है ॥ ३१९ ॥

चन्द्रादष्टमगे सौम्ये देहे शीतो भविष्यति ।
राजमध्ये प्रसिद्धश्च शत्रूणां च भयङ्करः ॥ ३२० ॥

यदि चन्द्रमा से आठवें भाव में बुध हो तो शरीर में शीत का प्रभाव होगा । राजाओं के बीच प्रसिद्ध, तथा शत्रुओं के लिए भयङ्कर होता है ॥ ३२० ॥

चन्द्रान्नवमगः सौम्यः स्वधर्मस्य विरोधकः ।
अन्यधर्मरतः पुंसो विरोधी दारुणो भवेत् ॥ ३२१ ॥

चन्द्रमा से नवम भाव में गया हुआ बुध मनुष्य को अपने धर्म का विरोधी, अन्यधर्म में आसक्त, पुरुषों का विरोधी तथा भयानक कार्य करने वाला बनाता है ॥ ३२१ ॥

चन्द्राद्दशमगः सौम्यो राजयोगी नरः सदा ।
कर्मराशौ यदा चन्द्रः कुटुम्बे नायको भवेत् ॥ ३२२ ॥

चन्द्रमा से दशम भाव में बुध हो तो वह मनुष्य सदैव राज्ययोग प्राप्त करता है । दशवें भाव में यदि चन्द्रमा हो तो वह कुटुम्ब का नायक होता है ॥ ३२२ ॥

चन्द्रादेकादशे सौम्यो लाभकारी पदे पदे ।
वर्षे एकादशे पुंसः पाणिग्राही भविष्यति ॥ ३२३ ॥

यदि चन्द्रमा से ग्यारहवें भाव में बुध हो तो कदम-कदम पर लाभ देने वाला तथा ग्यारहवें वर्ष में विवाह कराने वाला होता है ॥ ३२३ ॥

चन्द्राद्द्वादशगः सौम्यः सर्वदा कृपणो भवेत् ।
तत्सुतस्य जयो नास्ति लभेत्तत्र पराजयम् ॥ ३२४ ॥

चन्द्रमा से बारहवें भाव में बुध हो तो मनुष्य कृपण होता है । उसके पुत्र की कहीं भी विजय नहीं होती है सर्वत्र पराजय ही होती है ॥ ३२४ ॥

द्वादश भावगत गुरु का फल

चन्द्रात्प्रथमगो जीवो जीवयोग्यो भवेन्नरः ।
व्याधिना रहितः शूरो निर्धनो न कदाचन ॥ ३२५ ॥

चन्द्रमा से प्रथम भाव में गुरु हो तो वह व्यक्ति जीने योग्य होता है । व्याधि से रहित शक्तिशाली होता है तथा कभी निर्धन नहीं होता ॥ ३२५ ॥

चन्द्राद्द्वितीयगो जीवो राजमान्यः सदासुखी ।
सत्पुत्रश्च प्रतापी च धर्मिष्ठः पापवर्जितः ॥ ३२६ ॥

यदि चन्द्रमा से दूसरे भाव में गुरु हो तो राजा से सम्मानित, १०० वर्ष की आयु वाला, अत्यन्त क्रोधी, पराक्रमी, धार्मिक तथा पाप से रहित होता है ॥३२६॥

चन्द्रात्तृतीयगे जीवे नारीणां वल्लभो भवेत् ।
धनवृद्धिः पितुर्गेहे वर्षे सप्तदशे तथा ॥ ३२७ ॥

चन्द्रमा से तृतीय भाव में यदि गुरु हो तो वह स्त्रियों का प्रिय होता है । सत्रह वर्ष की आयु में पिता के घर में धन की वृद्धि होती है ॥ ३२७ ॥

चन्द्राच्चतुर्थगो जीवः सुखैश्चैव विवर्जितः ।
मातृपक्षे महाकष्टी परेषां गृहकर्मकृत् ॥ ३२८ ॥

चन्द्रमा से चौथे भाव में स्थित बृहस्पति सुख से रहित, माता के पक्ष से दुःखी तथा दूसरों के गृह का निर्माण करने वाला बनाता है ॥ ३२८ ॥

चन्द्रात्पञ्चमगो जीवो दिव्यदृष्टिर्भवेन्नरः ।
तेजस्वी पुत्रदा नारी ह्यत्युग्रश्च महाधनी ॥ ३२९ ॥

चन्द्रमा से पाँचवें भाव मे बृहस्पति हो तो मनुष्य तीव्र दृष्टि वाला, तेजस्वी, अत्यन्त उग्र और महान् धनवान होता है तथा उसकी पत्नी पुत्र उत्पन्न करने वाली होती है ॥ ३२९ ॥

चन्द्राच्च षष्ठगो जीवो [1]दासीगृहविवर्जितः ।
आयुर्बाह्यं[2] भवेत्पुंसां भिक्षाभोक्ताऽव्यवस्थितः ॥ ३३० ॥

चन्द्रमा से छठें भाव में गुरु हो तो सेविका (स्त्री) एवं गृह से रहित, आयु को व्यर्थ बिताने वाला, भिक्षा से भोजन करने वाला एवं अव्यवस्थित होता है ॥

[इस श्लोक में मतान्तर है । वस्तुतः इसका आशय यह है कि चन्द्रमा से षष्ठ भाव में बृहस्पति हो तो व्यक्ति गृह का त्याग कर भिक्षावृत्ति से जीवन यापन करता है ।]

चन्द्रात्सप्तमगो जीवो बहुजीवी व्ययं विना ।
स्थूलदेही क्लीबपाण्डुर्गृहमध्ये च नायकः ॥ ३३१ ॥

चन्द्रमा से सप्तम भाव में बृहस्पति हो तो दीर्घ जीवी, खर्च न करने वाला (कृपण), स्थूल शरीर वाला, नपुंसक, पीले वर्ण वाला तथा गृह (परिवार) में श्रेष्ठ (अग्रणी) पुरुष होता है ॥ ३३१ ॥

चन्द्रादष्टमगो जीवो देहरोगी सदा नरः ।
सुतातोऽपि महाक्लेशी सुखं स्वप्ने न दृश्यते ॥ ३३२ ॥

१. उदासी, ह्युदासी इति पाठान्तरम् ।
२. आयुर्बहु पाठान्तरम् ।

चन्द्रमा से अष्टम भाव में यदि गुरु हो तो मनुष्य सदैव शरीर से रोगी होता है। सुयोग्य पिता के रहते हुये भी महान् दुःखी तथा स्वप्न में भी सुख न देखने वाला होता है ॥ ३३२ ॥

चन्द्रान्नवमगो जीवो धर्मिष्ठो धनपूरितः।
सुमार्गे सुगतश्चैव देवगुर्वोश्च सेवकः ॥ ३३३ ॥

चन्द्रमा से नवम भाव में गुरु हो तो जातक धार्मिक, धन से परिपूर्ण, अच्छे मार्ग में सदाचार पूर्वक रहने वाला, देवता और गुरु का सेवक होता है ॥ ३३३ ॥

चन्द्राद्दशमगो जीवो जन्मकाले यदा भवेत्।
पुत्रदारपरित्यागी तपस्वी च भवेन्नरः ॥ ३३४ ॥

जन्म समय में यदि चन्द्रमा से दशवें भाव में बृहस्पति हो तो पुत्र-स्त्री का त्याग करने वाला तथा तपस्वी पुरुष होता है ॥ ३३४ ॥

चन्द्रादेकादशे जीवो जन्मकाले यदा भवेत्।
अश्वारूढो भवेत्पुत्रो राजतुल्यो भवेन्नरः ॥ ३३५ ॥

जन्म समय में चन्द्रमा से एकादश भाव में यदि गुरु हो तो उस व्यक्ति का पुत्र घुड़सवारी करने वाला राजा के समान होता है ॥ ३३५ ॥

चन्द्राद्द्वादशगो जीवो जन्मकाले यदा भवेत्।
स्यात्कुटुम्बविरोधी च सुखं शत्रोर्दृशा गृहे ॥ ३३६ ॥

यदि जन्म समय में चन्द्रमा से बारहवें भाव मे गुरु हो तो कुटुम्बियों से विरोध होता है तथा शत्रुभाव में दृष्टि होने से सुख प्राप्त करता है ॥ ३३६ ॥

द्वादशभावगत शुक्र का फल

चन्द्रात्तु प्रथमे शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत्।
जले मृत्युर्भवेत्तस्य सन्निपातो हि हिंसया ॥ ३३७ ॥

यदि जन्म समय में चन्द्रमा से प्रथम भाव में शुक्र हो तो उसकी मृत्यु जल में होती है अथवा हिंसा द्वारा निश्चय ही उसका पतन होता है ॥ ३३७ ॥

चन्द्राद्द्वितीयगः शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत्।
महाधनी महाज्ञानी राजतुल्यो न संशयः ॥ ३३८ ॥

चन्द्रमा से द्वितीय भाव में शुक्र यदि जन्म समय में हो तो वह महान् धनवान्, बहुत बड़ा विद्वान् तथा निःसन्देह वह राजा के तुल्य होता है ॥ ३३८ ॥

चन्द्रात्सहजगः शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत्।
धर्मिष्ठो बुद्धिमांश्चैव म्लेच्छतो लाभकारकः ॥ ३३९ ॥

चन्द्रमा से तृतीय भाव में यदि जन्म समय में शुक्र हो तो वह व्यक्ति धार्मिक, बुद्धिमान् तथा म्लेच्छों (चाण्डालों) से लाभ लेने वाला होता है ॥ ३३९ ॥

चन्द्राच्चतुर्थगः शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत् ।
कफाधिको महाक्षीणो वार्द्धक्ये धनवर्जितः ॥ ३४० ॥

जन्म समय में चन्द्रमा से चतुर्थ भाव में यदि शुक्र हो तो कफ की अधिकता एवं अधिक दुर्बलता होती है तथा वृद्धावस्था में धन का अभाव होता है ॥ ३४० ॥

चन्द्रात्पञ्चमगः शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत् ।
बहुकन्या भविष्यन्ति धनाढ्योऽप्यशसान्वितः ॥ ३४१ ॥

यदि जन्म समय में चन्द्रमा से पाँचवें भाव में शुक्र हो तो बहुत सी कन्यायें होती हैं तथा धन से युक्त एवं अपयश का भागी होता है ॥ ३४१ ॥

चन्द्राच्च षष्ठगः शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत् ।
दुर्व्ययाद्भयकारी च संग्रामे च पराजितः ॥ ३४२ ॥

जन्म समय में यदि चन्द्रमा से छठें भाव में शुक्र हो तो अपव्यय के कारण भयभीत होने वाला तथा संग्राम में पराजित होने वाला पुरुष होता है ॥ ३४२ ॥

चन्द्रात्सप्तमगः शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत् ।
पुरुषार्थहीनोऽकुशलः शङ्कितश्च पदे पदे ॥ ३४३ ॥

जन्म समय में यदि चन्द्रमा से सातवें भाव में शुक्र हो तो वह व्यक्ति पुरुषार्थ से रहित, अयोग्य तथा पग-पग पर शंका करने वाला होता है ॥ ३४३ ॥

चन्द्रादष्टमगः शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत् ।
प्रसिद्धो हि महायोद्धा दाता भोक्ता महाधनी ॥ ३४४ ॥

यदि जन्मकाल में चन्द्रमा से आठवें भाव में शुक्र हो तो वह व्यक्ति प्रसिद्ध, महान् योद्धा, दानी, भोग करने वाला और महान् धनवान् होता है ॥ ३४४ ॥

चन्द्रान्नवमगः शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत् ।
बहवः सहजा मित्रभगिनीबहुलो भवेत् ॥ ३४५ ॥

चन्द्रमा से नवम भाव में यदि जन्मकालिक शुक्र हो तो बहुत अधिक भाई, बहन एवं मित्रों वाला होता है ॥ ३४५ ॥

चन्द्राच्च दशमे शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत् ।
मातृपित्रोः सुखप्राप्तिर्जीवितं तु बृहद्भवेत् ॥ ३४६ ॥

यदि जन्म समय में चन्द्रमा से दशवें भाव में शुक्र हो तो माता-पिता से सुख प्राप्त करने वाला तथा दीर्घायु होता है ॥ ३४६ ॥

चन्द्रादेकादशे शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत्।
बह्वायुश्च भवेत्पुंसो रिपुरोगविवर्जितः ॥ ३४७ ॥

जन्म समय में यदि चन्द्रमा से ग्यारहवें भाव में शुक्र हो तो मनुष्य लम्बी आयु वाला, शत्रु तथा रोगों से रहित होता है ॥ ३४७ ॥

चन्द्राद् द्वादशगः शुक्रो जन्मकाले यदा भवेत्।
परदाररतो नित्यं लम्पटो ज्ञानहीनकः ॥ ३४८ ॥

जन्म समय में यदि चन्द्रमा से बारहवें भाव में शुक्र हो तो जातक निरन्तर अन्य स्त्री में आसक्त, लम्पट तथा मूर्ख होता है ॥ ३४८ ॥

द्वादश भावगत शनि का फल

चन्द्रात् प्रथमगो नूनं शनिर्जन्मनि सम्भवेत्।
प्राणनाशोऽर्थनाशश्च बन्धुनाशस्तथापरे ॥ ३४९ ॥

जन्म समय में यदि चन्द्रमा से प्रथम भाव में शनि हो तो प्राण, धन, बन्धु एवं अन्य सदस्यों का नाश होता है ॥ ३४९ ॥

चन्द्राद्द्वितीयगो मन्दो जन्मकाले यदा भवेत्।
मातुश्च कष्टकारी स्यादजाक्षीराच्चजीवति ॥ ३५० ॥

जन्म समय में यदि चन्द्रमा से द्वितीय भाव में शनि हो तो माता को कष्ट देने वाला होता है तथा उसका पोषण बकरी के दूध से होता है ॥ ३५० ॥

चन्द्रात्सहजगः सौरिर्जन्मकाले यदा भवेत्।
बहुकन्याः समुत्पद्य म्रियन्ते तस्य केवलम् ॥ ३५१ ॥

चन्द्रमा से तीसरे भाव में यदि जन्मकालिक शनि हो तो उस व्यक्ति की बहुत सी कन्यायें पैदा होकर मर जाती हैं ॥ ३५१ ॥

चन्द्राच्चतुर्थगो नूनं शनिर्जन्मनि संभवेत्।
महापौरुषकारी च शत्रुहन्ता न संशयः ॥ ३५२ ॥

चन्द्रमा से चौथे भाव में यदि शनि जन्म समय में हो तो वह महान पुरुषार्थी एवं शत्रु का नाश करने वाला होता है इसमें सन्देह नहीं ॥ ३५२ ॥

चन्द्रात्पञ्चमगः सौरिर्जन्मकाले यदा भवेत्।
स्त्री स्याच्छ्यामलवर्णा च ह्यथवा प्रियवादिनी ॥ ३५३ ॥

जन्म समय में यदि चन्द्रमा से पाँचवें भाव में शनि हो तो उस व्यक्ति की पत्नी श्याम वर्ण की अथवा प्रिय बोलने वाली होती है ॥ ३५३ ॥

रविजः षष्ठगश्चन्द्राज्जन्मकाले यदा भवेत्।
महाक्लेशी तथा कष्टी आयुर्हीनो भवेन्नरः ॥ ३५४ ॥

यदि जन्म समय में चन्द्रमा से छठें भाव में शनि हो तो मनुष्य महान् क्लेश पाने वाला, कष्ट सहन करने वाला तथा आयु से हीन होता है ॥ ३५४ ॥

चन्द्राच्च सप्तमे स्थाने यदा च रविनन्दनः।
महाधर्मी च दाता च बहुस्त्रीणां करग्रही ॥ ३५५ ॥

चन्द्रमा से सातवें भाव में यदि शनि हो तो वह महान् धार्मिक, दानी तथा बहुत सी स्त्रियों का पाणिग्रहण करने वाला होता है ॥ ३५५ ॥

रविजो ह्यष्टमे स्थाने चन्द्रतो जन्मसम्भवः।
पितुश्च कष्टकारी च बहुदाने शुभं भवेत् ॥ ३५६ ॥

जन्म समय में चन्द्रमा से आठवें भाव में यदि शनि हो तो जातक पिता को कष्ट देने वाला होता है तथा बहुत दान करने से उसका कल्याण होता है ॥३५६॥

चन्द्रान्नवमगः सौरिर्जन्मकाले यदा भवेत्।
तदा मुग्धदशाप्राप्तिर्धनहानिर्भविष्यति ॥ ३५७ ॥

चन्द्रमा से नवें भाव म शनि यदि जन्म समय में हो तो उसकी दशा आने पर मूर्छा एवं धन हानि होगी ॥ ३५६ ॥

चन्द्राद्दशमगः सौरिर्जन्मकाले यदा भवेत्।
नृपतुल्यो भवेद्द्ही कृपणो धनपूरितः ॥ ३५८ ॥

चन्द्रमा से दशम भाव में यदि जन्मकालिक शनि हो तो वह मनुष्य राजा के समान, धन धान्य से परिपूर्ण तथा कंजूस होता है ॥ ३५८ ॥

चन्द्रादेकादशे सौरिर्जन्मकाले यदा भवेत्।
देहक्लेशी महाकष्टी ह्यधर्मी च न संशयः ॥ ३५९ ॥

यदि जन्म समय में चन्द्रमा से ग्यारहवें भाव में शनि हो तो वह व्यक्ति निःसन्देह शरीर से पीड़ित, कष्ट पाने वाला तथा अधर्मी होता है ॥ ३५९ ॥

द्वादशे भवने सौरिश्चन्द्राच्च पतितो यदि।
निर्धनो भिक्षुकश्चैव धर्मेणैव विवर्जितः ॥ ३६० ॥

चन्द्रमा से बारहवें भाव में यदि जन्मकालिक शनि पड़ा हो तो व्यक्ति निर्धन, भिक्षा माँगने वाला तथा धर्म से रहित होता है ॥ ३६० ॥

द्वादश भावगत राहु का फल

धर्मकर्मतनुस्थाने चन्द्राद्यदि पतेत्तमः।
जन्मकाले भूपतिश्च वृद्धकाले महाधनी ॥ ३६१ ॥

चन्द्रमा से प्रथम, नवम तथा दशम स्थान में यदि राहु हो तो जातक जन्म समय में राजा तथा वृद्धावस्था में धनवान् होता है। [अर्थात् धीरे-धीरे ह्रास होता है] ॥ ३६१ ॥

षष्ठे च द्वादशे राहुश्चन्द्राच्च पतितो यदि।[1]
स राजा राजमन्त्री च धनधान्यसमाकुलः ॥ ३६२ ॥

चन्द्रमा से छठें और बारहवें भाव में यदि राहु पड़ा हो तो वह व्यक्ति राजा, राजा का मन्त्री अथवा धन-धान्य से परिपूर्ण होता है ॥ ३६२ ॥

चतुर्थे सप्तमे राहुश्चन्द्राच्च यदि जायते।
माता पिता महाकष्टी सदा ह्यसुखदायकः ॥ ३६३ ॥

यदि चन्द्रमा से चौथे या सातवें भाव में राहु हो तो माता-पिता महान कष्ट झेलने वाले होते हैं तथा स्वयं भी सदा दुःख देने वाला व्यक्ति होता है ॥ ३६३ ॥

धन एकादशे स्थाने चन्द्राद्राहुः प्रजायते।
धनमानवसंयुक्तः सुखं स्वप्ने न दृश्यते ॥ ३६४ ॥

चन्द्रमा से दूसरे तथा ग्यारहवें भाव में यदि राहु हो तो व्यक्ति धन एवं परिजन से युक्त तथा स्वप्न में भी सुख को न देखने वाला होता है ॥ ३६४ ॥

पञ्चमे च यदा राहुश्चन्द्राज्जलजसम्भवम्।
निधनं चापि सिद्धं च आपदश्च पदे पदे ॥ ३६५ ॥

चन्द्रमा से पाँचवें भाव में यदि राहु हो तो जल से (अथवा जल से सम्बन्धित रोगों द्वारा) मृत्यु होती है तथा पग-पग पर आपत्तियाँ आती हैं ॥ ३६५ ॥

राशियों के चरणानुसार फल एवं आयु-विचार

अश्विनी-भरणी-कृत्तिकापादे मेषराशिः। भौमक्षेत्रे जन्मतो नवपादफलम्- प्रथमे राज्यवान् १, द्वितीये धनवान् २, तृतीये विद्यावान् ३, चतुर्थे देवगुरुभक्तः ४, पञ्चमे चोरः ५, षष्ठे कालभाषाहीनः ६, सप्तमे योगीन्द्रः ७, अष्टमे निर्धनः ८, नवमे शुभलक्षणः ९। १ मासे कष्टम्, १, १३ वर्षयोः अल्पमृत्युः, १८ वर्षे जलघातः, ६४ वर्षे घातः, ५० वर्षे अङ्गरोगः, (तत्रैव चौरलोहपीडा, उपघातश्च), यदा शुभग्रहनिरीक्षितस्तदा जीवति वर्षादि ७५।२।०।१५।१५

---

१. "तृतीयैकादशे षष्ठे राहुश्चन्द्राद् भवेद्यदि" इतिपाठान्तरम्।
इससे तीसरे भावस्थ राहु का फल मिल जाता है। परन्तु किसी ग्रन्थ में यह पाठ अन्यत्र नहीं मिलता।

यावत्। ततः कार्तिकमासे (पक्षे ?) चतुर्थ्यां कुजवारे भरणी नक्षत्रे देहं त्यजति ॥ १ ॥ इति मेषराशिफलम्।

अश्विनी और भरणी के चार-चार पाद तथा कृत्तिका का एक (प्रथम) पाद मेष राशि होती है। यह भौम का क्षेत्र (राशि) है इसमें उत्पन्न व्यक्ति का फल नव चरणों के अनुसार इस प्रकार है—प्रथम चरण में राज्य युक्त, द्वितीय चरण में धनी, तीसरे में विद्यावान्, चौथे में देवता और गुरू का भक्त, पाँचवें में चोर, छठें में काल (सामयिक) भाषा से हीन, सातवें में योगीन्द्र, आठवें में निर्धन, नवम में शुभ लक्षणों से युक्त होता है। मेष राशि में उत्पन्न व्यक्ति को प्रथम मास में कष्ट, १, १३ वर्षों में अल्पमारकेश (मृत्युतुल्य कष्ट), १८वें वर्ष में जलभय, ६४वें वर्ष में घात, ५०वें में अंगरोग, अथवा चोर, लोहा आदि से उपघात होता है। यदि शुभग्रह देखते हों तो ७५ वर्ष २ मास ० दिन १५ घटी १५ पल तक जीवित रहता है। अनन्तर कार्तिक मास की चतुर्थी भौमवार को भरणी नक्षत्र में देह का परित्याग कर देता है ॥ १ ॥ यह मेष राशि गत फल है।

कृत्तिकायास्त्रयः पादा रोहिणीमृगशिरोद्धं वृषराशिः। शुक्रक्षेत्रे जन्मतो नवपादफलम्-प्रथमे यशोवान् १, सुतवान् २, रणवान् ३, शुभलक्षणः ४, विद्यावान् ५, सौभाग्यवान् ६, कुलमण्डनः ७, धनधान्यसमर्थः ८, परदारचौरः ९। वर्षेषु ३।६।८।३३।४६।५२।६३ एतेषु अग्निलोहसाण्डसर्प्पकष्टदेवदोषघाता एते अल्पमृत्यवो यदा व्यतिक्रामन्ति तदा वर्षादि ८५।६।७ जीवति माघमासे शुक्लपक्षे ९ तिथौ शुक्रदिने रोहिणीनक्षत्रे अर्धरात्रे देहं त्यजति ॥ २ ॥ इति वृषराशिफलम्।

कृत्तिका के ३ चरण, रोहिणी के चार तथा मृगशिरा के दो पाद मिलकर वृष राशि होती है, यह शुक्र का क्षेत्र है इसमें उत्पन्न व्यक्ति का नव चरणों के अनुसार फल इस प्रकार है—प्रथम चरण में जन्म हो तो यशस्वी, द्वितीय में पुत्रवान, तीसरे में योद्धा, चौथे में शुभ लक्षण सम्पन्न, पाँचवें में विद्वान्, छठे में सौभाग्यशाली, सातवें में कुलभूषण, आठवें में धन-धान्य से पूर्ण तथा नवम में जन्म हो तो परस्त्री का अपहरण करने वाला होता है।

जन्म से ३, ६, ८, ३३, ४६, ५२, ६३ वर्षों में अल्पायु (अरिष्ट) योग होते हैं इनमें अग्नि, लोह, साँड़, सर्प, कष्ट, देव दोष तथा घात से कष्ट होता है। यदि ये बीत जायें तो ८५ वर्ष. ६ मास ७ दिन तक जीवित रहकर माघ मास शुक्ल पक्ष ९ तिथि, शुक्रवार रोहिणी नक्षत्र में, अर्द्ध रात्रि में देह का त्याग करता है ॥ २ ॥ यह वृषराशि का फल है।

मृगशिरोऽर्द्धं, आर्द्रापुनर्वसुपादत्रयं मिथुनराशिः। बुधक्षेत्रे जन्मतो नवपादफलम्—प्रथमे भाग्यवान् १, निर्धनः २, कुत्सितभाषी ३, धनेश्वरः ४, भाग्य-

वान् ५, धनधान्यभोगी ६, चौरः ७, माहात्म्यसिद्धिः, देवगुरुमाननीकः ९। कष्टमासः ६, वर्षे ६ अङ्गरोगः, १० वर्षे चक्षुपीडा, ११। १८ वर्षे घातः। २४। ५६।६३ वर्षेषु अल्पमृत्युः, यदा शुभग्रहनिरीक्षितो भवति तदा जीवति वर्षाणि ८५। पौषमासे कृष्णपक्षे अष्टमीतिथौ बुधवारे आर्द्रानक्षत्रे प्रथम प्रहरे देहं त्यजति ॥ ३ ॥ इति मिथुनराशिफलम्।

मृगशिरा का २ पाद, आर्द्रा का ४ तथा पुनर्वसु का ३ पाद मिलकर मिथुन राशि होती है। यह बुध का क्षेत्र है। इसमें जन्म लेने वालों का चरणानुसार फल एवं आयु कह रहा हूँ—

प्रथम चरण में जन्म हो तो भाग्यवान्, दूसरे में निर्धन, तीसरे में अपशब्द बोलने वाला, चौथे में धनवान्, पाँचवें में भाग्यवान्, छठें में धनसम्पत्ति का भोग करने वाला, सातवें में चोर, आठवें में मानवृद्धि तथा नवम में देवता और गुरु में भक्ति रखने वाला होता है। इस राशिवाले को छठें मास में कष्ट, छठें वर्ष में शरीर में रोग, १०वें वर्ष में नेत्र पीड़ा, ११, १८वें वर्ष में घात होता है। २४, ५६, ६३वें वर्ष में अरिष्ट होता है। यदि राशि पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो वह ८५ वर्षों तक जीवित रहता है। अनन्तर पौष मास के कृष्ण पक्ष में, अष्टमी तिथि बुधवार आर्द्रा नक्षत्र एवं प्रथम प्रहर में शरीर का त्याग करता है ॥ ३ ॥ यह मिथुन राशि का फल है।

पुनर्वसुपादमेकं पुष्य आश्लेषान्तं कर्कराशिः। चन्द्रक्षेत्रे जन्मतो नवपाद-फलम्-प्रथमे धनवान् १, महीपतिः २, स्वाङ्गमुनीश्वरः ३, विद्यावान् ४, धर्मवान् ५, चौरः ६, निर्धनः ७, देशपतिः ८, कुलमण्डनः ९। अल्पमृत्युर्दिनम् ११, कष्टमासः ९, वर्षम् १, रोगवर्षम् ७, जलघातवर्षम् ९, अङ्गरोगवर्षम् १३, जलघातवर्षम् १६, अङ्गरोगवर्षम् २०, लोहघातवर्षम् ·७।३५, अल्पमृत्युदोष वर्षम् ४५, देवदोषवर्षम् ५५।६१ अल्पमृत्युः, आमकष्टम्, असाध्यरोगः, अग्नीसर्पजलघातसाण्डव्याघ्रघातः यदा शुभग्रहनिरीक्षितस्तदा वर्षाणि ७० मासाः ५ दिनानि ३ जीवति। फाल्गुनमासे शुक्लपक्षे चन्द्रवारे ४ प्रहरे गोधूलिकवेलायां देहं त्यजति ॥ ४ ॥ इति कर्कराशिफलम्।

पुनर्वसु का १ चरण, पुष्य और आश्लेषा के चार-चार चरण मिलकर कर्क राशि होती है। चन्द्रमा के क्षेत्र (कर्क राशि) में जन्म लेने वालों का चरणानुसार फल इस प्रकार है—

प्रथम चरण में धनी, दूसरे में राजा, तीसरे में मुनिवेश का आडम्बर करने वाला, चौथे में विद्वान्, पाँचवें में धार्मिक, छठें में चोर, सातवें में निर्धन, आठवें

में देशपति (राजनेता), नवम चरण में जन्म हो तो कुलभूषण होता है। इसमें उत्पन्न व्यक्ति को ११वें दिन अल्प मृत्यु, (मृत्यु तुल्य कष्ट), ६वें मास एवं १ वर्ष में कष्ट, ७वें वर्ष में रोग, नवम वर्ष में जल से घात, १३वें वर्ष में अङ्गों में रोग, १६वें वर्ष में जल से भय, २०वें वर्ष में अंगों में रोग, २७ एवं ३५वें वर्ष में लोहे से घात, ४५वें वर्ष में अरिष्ट, ५५ और ६१वें वर्ष में देवदोष, अल्प मृत्यु, राम कष्ट, असाध्य रोग, अग्नि, सर्प, जल, साँड़, तथा व्याघ्र से भय होता है यदि राशि पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो ७० वर्ष ५ मास ३ दिन तक जीवित रहता है। फाल्गुन मास के शुक्लपक्ष में सोमवार को चतुर्थ प्रहर में गोधूलि वेला में शरीर त्याग करता है ॥ ४ ॥ यह कर्क राशि का फल है।

मघा च पूर्वाफाल्गुनी उत्तराफाल्गुनीपादे सिंहराशिः। सूर्यक्षेत्रे जन्मतो नवपादफलम्—प्रथमे राज्यमान्यः १, धनेश्वरः २, तीर्थवासी ३, पुत्रवान् ४, स्वपक्षहीनः ५, मातृपितृतारकः ६, राजमान्यः ७, धनधान्यसमर्थः ८, निर्धनः ९। चौर्यमासः ८ तथा वर्षम् १, कष्टवर्षे १०। १५, अङ्गरोगवर्षे २५। ४५, देवदोषसन्निपात-वर्षम् ५१। ६१ घातः, अल्पमृत्युर्यदा व्यतिक्रामति तदा जीवति वर्षाणि ६५ श्रावणमासे शुक्लपक्षे १० तिथौ पूर्वाफल्गुनीनक्षत्रे रविवारे प्रथमप्रहरे देहं त्यजति ॥ ५ ॥ इति सिंहराशिफलम्।

मघा, पूर्वा फाल्गुनि, उत्तरा फाल्गुनि का एक चरण मिलकर सिंह राशि होती है। सूर्य के क्षेत्र (सिंह) में जन्म लेने वालों के नव चरणों का फल इस प्रकार है—

प्रथम चरण में जन्म हो तो राजा द्वारा सम्मानित, दूसरे मे धनपति, तीसरे में तीर्थ में निवास करने वाला, चौथे में पुत्रवान्, पाँचवें में अपने समर्थकों से रहित, छठे में माता-पिता का उद्धार करने वाला, सातवें में राजा द्वारा माननीय, आठवें में धनधान्य से सम्पन्न तथा नवम पाद में जन्म हो तो निर्धन होता है। आठवें मास में तथा १ वर्ष में चोर भय, १०, १५ वर्षों में कष्ट, २५, ४५ वर्षों में अङ्गों में रोग, ५१, ६१ वर्षों में देवदोष एवं सन्निपात से घात होता है। यदि अल्प मृत्यु योग बीत जाय तो ६५ वर्ष तक जीवित रहता है। अनन्तर श्रावण शुक्ल दशमी पूर्वाफाल्गुनि नक्षत्र, रविवार प्रथम प्रहर में देह त्याग करता है ॥ ५ ॥ यह सिंह राशि का फल है।

उत्तरायास्त्रयः पादा हस्तः चित्रार्द्धं कन्याराशिः। बुधक्षेत्रे जन्मतो नवपादफलम्—प्रथमे निर्धनः १, पुत्रहीनः २, शत्रुमरणम् ३, धनयानम् ४, भोगी ५, पुत्रवान् ६, राज्यमान्यः ७, सर्वसमर्थः ८, पराक्रमी ९ (मातृ-पितृगुरुभक्तः। मासः ३ वर्षम् ३ अङ्गरोग १। १३। वर्षे चक्षुपीडा जलघातवर्षम् २६ अङ्गरोगदेवपीडावर्षम् ३३ लोहघातवर्षम् ४३ अङ्गरोगः,

अल्पमृत्युः यदा शुभग्रहनिरीक्षितो भवति तदा जीवति वर्षाणि ८४ यावत् भाद्रपदमासे शुक्लपक्षे ९ तिथौ बुधवारे हस्तनक्षत्रे गोधूलिकवेलायां देहं त्यजति ॥६॥ इति कन्याराशिफलम् ।

उत्तरा के तीन पाद, हस्त के चार पाद तथा चित्रा के २ पाद मिलकर कन्या राशि होती है। बुध क्षेत्र (कन्या) राशि में जन्म लेने वालों का चरणानुसार फल—

प्रथम चरण में जन्म हो तो निर्धन, दूसरे में पुत्रहीन, तीसरे में शत्रुमरण, चौथे में धन एवं वाहन की प्राप्ति, पाचवें में भोगी, छठे में पुत्रवान, सातवें में राजा से मान्य, आठवे में सभी प्रकार से समर्थ, तथा नवम चरण में पराक्रमी होता है।[1] तीसरे मास एवं तीसरे वर्ष में अङ्गरोग, १,१३ वर्षों में नेत्रपीडा, तथा जलभय, २६ वें वर्ष में अङ्गरोग देव पीडा, ३३ वें वर्ष में लोहघात, ४३ वें वर्ष में अङ्ग रोग, अल्पमृत्यु (अरिष्ट) होता है। यदि राशि शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो ८४ वर्ष तक जीवित रहता है। भाद्रपद मास के शुक्ल पक्ष में नवमी बुधवार हस्त नक्षत्रमें गोधूलि वेला में शरीर त्याग करता है ॥ ६ ॥ यह कन्या राशिका फल है।

चित्रार्द्धं स्वाती विशाखापादत्रयं तुलाराशिः। शुक्रक्षेत्रे जन्मतो नवपाद-फलम्–प्रथमे धनभोगी १, धनेश्वरः २, निर्धनः ३, भाषाहीनः ४, जातकर्मा[2] ५, परदारचौरः ६, मातृपितृनारकः ७, राजमान्यः ८, भाग्यवान् ९। मासः ४ कष्टमासः, १६ अङ्गरोग वर्षम्, ४ कष्टवर्षम्, १६ जलघातवर्षम् २१। ३३ अङ्गरोगः, ४१ अङ्गवृद्धिवर्षम्, ५१ देवदोषवर्षम्, ६१ अल्पमृत्युः। यदा शुभ-ग्रहनिरीक्षितो भवति तदा जीवति वर्षाणि ८५ वैशाखमासे शुक्लपक्षे १३ तिथौ शुक्रवारे शतभिषानक्षत्रे मध्याह्नवेलायां देहं त्यजति ॥७॥ इति तुलाराशिफलम् ।

चित्रा का आधा (२ पाद), स्वाती के चार पाद, विशाखा के तीन पाद मिलकर तुला राशि होती है। शुक्र क्षेत्र (तुला राशि) में जन्म लेने वालों का नव चरणों के अनुसार फल—

प्रथम चरण में जन्म हो तो धनका भोग करने वाला, दूसरे में धनपति, तीसरे में निर्धन, चौथे में भाषाहीन, पाँचवे में जातकर्म (प्रसूति तन्त्र) का ज्ञाता, छठें में परस्त्री का अपहरण करने वाला, सातवें में माता, पिता को तारने वाला, आठवें में राजा से सम्मानित, नवम में भाग्यवान होता है।

चौथे मास में कष्ट, १६ वें मास में अङ्गरोग, चौथे वर्ष में कष्ट, १६ वें वर्ष में जल से भय, २१ एवं ३३ वें वर्षों में अङ्गरोग, ४१ में अङ्ग वृद्धि (अङ्गों

१. माता-पिता और गुरु का भक्त होता है।

२. ज्ञातकर्मा इति पाठान्तरम् ।

विस्तार स्थूलता आदि), ५१ वें में देव दोष, ६१ वें अल्प मृत्यु (अरिष्ट) होता है।

यदि राशि शुभग्रहों के दृष्ट हो तो ८५ वर्षों तक जीवित रहता है। वैशाख शुक्ल त्रयोदशी शुक्रवार शतभिष नक्षत्र में मध्याह्न काल में शरीर-त्याग करता है ॥ ७ ॥ यह तुला राशि का फल है।

विशाखापादमेकं अनुराधाज्येष्ठान्तं वृश्चिकराशिः। भौमक्षेत्रे जन्मतो नवपादफलम्—प्रथमे धनेश्वरः १, यशोवान् २, आगमवान् ३, महान्तिकः ४, भाषाहीनः ५, कुलमण्डनः ६, धनधान्य समर्थः ७, विद्यावान् ८, राजमान्यः ९ (यशोवान् ?)। मासे २ कष्टम् वर्षे ३ कष्टम् वर्षे ७ अङ्गरोगः, ८ जलघातवर्षम्, १३ वृक्षघातवर्षम् ३२। ३५ अङ्गरोगलोहघातवर्षम्, ४५ अङ्गरोगवर्षम् ७५, अल्पमृत्युः यदा शुभग्रहनिरीक्षितस्तदा जीवति वर्षाणि—७५ मासः २ दिनानि ७, ज्येष्ठमासे कृष्णपक्षे तिथौ ११, मंगलवारे अनुराधानक्षत्रे प्रथमप्रहरे देहं त्यजति ॥८॥ इति वृश्चिकराशिफलम्।

विशाखा का एक पाद, अनुराधा तथा ज्येष्ठा के चार-चार चरण मिलकर वृश्चिक राशि होती है। भौम के क्षेत्र (वृश्चिक) में जन्म होने से नव चरणों के फल इस प्रकार—

प्रथम चरण में जन्म हो तो धनाधीश, दूसरे में यशस्वी, तीसरे में आगम (वेदादि) का ज्ञाता, चौथे में महान् पुरुषों का सहयोगी, पाँचवें में भाषा से हीन, षष्ठ में कुलभूषण, सातवें में धनधान्य से सम्पन्न, आठवें में विद्या से युक्त, नवम में राजा द्वारा मान्य (यशस्वी) होता है।

दूसरे मास एवं तीसरे वर्ष में कष्ट, सातवें में अङ्गों में रोग। आठवें में जल-घात, १३वें में वृक्ष घात, ३२वें तथा ३५वें वर्षों में अङ्गरोग एवं लोह घात, ४५वें में अङ्गों में रोग, ७५वें में अल्प मृत्यु (अरिष्ट) होता है। यदि राशि शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो ७५ वर्ष २ मास ७ दिन जीवित रहकर ज्येष्ठ कृष्ण, ११ मंगलवार; अनुराधा नक्षत्र, प्रथम प्रहर में शरीर का त्याग करता है ॥ ७ ॥ यह वृश्चिक राशि का फल है।

मूलं च पूर्वाषाढा उत्तराषाढपादे धनू राशिः। गुरुक्षेत्रे जन्मतो नवपाद-फलम्—प्रथमे ज्ञानवान् १, निर्धनः २ नीचकर्मकारकः ३, राजमान्यः ४, क्रोधी ५, पुत्रवान् ६, कामलम्पटः ७, धनेश्वरः ८, रुधिरविकारी ९। मासः ५ वर्षम् ३ कष्टवर्षम् ९ अङ्गरोगवर्षम् ११ चक्षुःपीडावर्षम् १६, जलघातवर्षं २४, १६, अङ्गरोगवर्षाणि ४७।५७।६७। सर्पजलघातः, अल्पमृत्युः। यदा

शुभग्रहनिरीक्षितस्तदा जीवति वर्षाणि ८५। आषाढमासे शुक्लपक्षे १ तिथौ गुरुवारे हस्तनक्षत्रे गोधूलिवेलायां देहं त्यजति ॥९॥ इति धनुराशिफलम्।

मूल पूर्वाषाढ़ा के चार-चार चरण तथा उत्तराषाढ़ा का एक पाद मिल कर धनु राशि होती है। गुरु के क्षेत्र (धनु) में जन्म लेनेवालों का नवचरणों के अनुसार फल—

प्रथम चरण में जन्म हो तो जातक ज्ञानी, दूसरे में निर्धन, तीसरे में नीच कर्म करने वाला, चौथे में राजा द्वारा सम्मानित, पाँचवें में क्रोधी, छठे चरणमें पुत्रवान्, सातवे में कामी एवं लम्पट (व्यभिचारी), आठवें में धनाधीश, नवम चरण में रक्तदोष से युक्त होता है।

जन्म से ५वाँ मास एवं तीसरा वर्ष कष्टकर, ९वें वर्ष में अङ्गरोग, ११वें वर्षमें नेत्र पीड़ा, १६वें वर्षमें जलघात, २४, ३६ वें वर्ष में अङ्गरोग, ४७, ५७, ६७ वर्षों में सर्पभय, जलघात एवं अल्पमृत्यु (अरिष्ट) होता है। (४७में सर्पभय, ५७ में जलघात, ६७ में अल्पमृत्यु वस्तुतः इस प्रकार संमत अर्थ होगा)। यदि शुभग्रहों से दृष्ट राशि हो तो ८५ वर्ष तक जीवित रहता है। आषाढ़ मास के शुक्ल पक्ष की १ तिथि गुरुवार को हस्त नक्षत्र में गोधूलि वेला में शरीर का त्याग करता है ॥९॥ यह धनुराशि का फल है।

उत्तरायास्त्रयः पादा श्रवणधनिष्ठार्द्धं मकरराशिः। शनिक्षेत्रे जन्मतो नव-पादफलम्–प्रथमे अङ्गहीनः १, गुरुभक्तः २, परदाररतः ३, अङ्गरोगवान् ४, देवांशभोगी ५, पुत्रवान् ६, उत्तमः ७, महीपतिः ८, उभयपक्षतारकः ९ (धनेश्वरः ?)। मासः ३ कष्टमासः. १ देवदोषपीडावर्षम्, ३ अङ्गरोगवर्षम्, ५७ देवदोषवर्षम्, १० अङ्गरोगः, अग्निपीडावर्षम् ३२, लोहघातवर्षम् ३३, कष्टवर्षम् ४३ तथा ५१ अल्पमृत्यु। यदा शुभग्रहनिरीक्षितो भवति तदा जीवति वर्षाणि ६१ (देवदोषानन्तरं) अल्पमृत्युर्यदा व्यतिक्रामति तदा जीवति वर्षाणि ७१ कार्तिके मासे शुक्लपक्षे ५ तिथौ शनिवारे श्रवणनक्षत्रे देहं त्यजति ॥ १० ॥ इति मकरराशिफलम्।

उत्तरा के तीन पाद, श्रवण के चारपाद तथा धनिष्ठा के दो पाद मिलकर मकर राशि होती है। शनि क्षेत्र (मकर राशि) में जन्म हो तो नवचरणों का (अलग अलग) फल इस प्रकार है—

प्रथम चरण में जन्म हो तो अङ्गहीन, दूसरे में गुरुभक्त, तीसरे में परस्त्री में आसक्त, चौथे में अङ्गों में रोग, पाँचवे में देवताओं के निमित्त संकल्पित वस्तु का भोग करने वाला, छठे में पुत्रवान्, सातवें में उत्तम, आठवें में भूमि का स्वामी

(जमीन्दार), नवम में उभय पक्ष (मातृकुल एवं पितृकुल) को तारने वाला, होता है।

जन्म से ३रा मास कष्टकर, १ वर्ष में देवदोष जन्य पीड़ा, तीसरे वर्ष में अङ्गों में रोग, ५७वें वर्ष में देवदोष, दशवें में अङ्गरोग, ३२वें वर्ष में अग्निपीड़ा, ३३वें में लोहे से अपघात, ४३वें में कष्ट, तथा ५१वें में अल्प मृत्यु होती है। यदि शुभग्रहों से दृष्ट राशि हो तो ६१ वर्षों तक जीवित रहता है। (देव दोष के अनन्तर) यदि अल्पमृत्यु टल जाती है तो जातक ७१ वर्षों तक जीवित रहता है। अनन्तर कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष ५ तिथि शनिवार, श्रवण नक्षत्र में देह त्याग करता है ॥ १० ॥ यह मकर राशि का फल है।

धनिष्ठार्द्धं शततारकाः पूर्वाभाद्रपदात्रयं कुम्भराशिः। शनिक्षेत्रे जन्मतो नवपादफलम्-प्रथमे मध्यमः १, श्रीमान् २, कालभाषाहीनः ३, पुत्रवान् ४, राजमान्यः ५, पापकर्महीनः (?) ६, योगीन्द्रः ७, अङ्गहीनः ८, शुभलक्षणः ९, कष्टदिनम् ७, अल्पमृत्यु वर्षम् १८। ३२। यदा शुभग्रहनिरीक्षितो भवति तदा जीवति वर्षाणि ६१ माघमासे शुक्लपक्षे २ तिथौ शनिवारे उत्तराभाद्रपदानक्षत्रे मृत्युर्भवति ॥ ११ ॥ इति कुम्भराशिफलम्।

धनिष्ठा का आधा (दो चरण) शतभिषा का चार चरण, पूर्वाभाद्रपदा का तीन पाद मिलकर कुम्भराशि होती है। शनि के क्षेत्र (कुम्भ राशि) के नवचरणों का फल इस प्रकार है—

प्रथम चरण में जन्म हो तो मध्यम (न अधिक उत्तम कार्य व बुद्धि न अधिक मन्द), दूसरे में धनवान, तीसरे में सामयिक भाषा से हीन, चौथे में पुत्रवान, पाचवें में राजाओं द्वारा मान्य, छठें में पापकर्म से रहित, सातवें में योगियों में श्रेष्ठ, आठवें में अङ्गहीन, नवम में शुभलक्षणों से युक्त होता है।

जन्म समय से ७वें दिन कष्ट, १८वें एवं ३२वें वर्ष में अल्प मृत्यु (अरिष्ट) होता है। यदि शुभ ग्रहों की राशि पर दृष्टि हो तो ६१ वर्ष तक जीवित रहता है। तथा माघशुक्ल द्वितीया शनिवार उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र में मृत्यु होती है ॥ ११ ॥ यह कुम्भराशि का फल है।

पूर्वाभाद्रपदापादमेकं उत्तराभाद्रपदरेवत्यन्तं मीनराशिः। जीवक्षेत्रे जन्मतो नवपादफलम् —प्रथमे धनवान् १, कालहीनः २, लम्पटः ३, धनवान् ४, चौरः ५, कपटी ६, निर्धनः ७, भाग्यवान् ८, नवमे अपक्लेशः ९। कष्टवर्षे १८, ३३ यदा शुभग्रहनिरीक्षितस्तदा जीवति वर्षाणि ६१ माघमासे शुक्लपक्षे १२ तिथौ उत्तराभाद्रपदानक्षत्रे गुरुवारे प्रातःकाले देहं त्यजति ॥ १२ ॥ इति मीन-राशिफलम्।

पूर्वा भाद्रपदा का एक पाद, उत्तराभाद्रपदा का चारचरण एवं रेवती का चारचरण मिलकर मीन राशि होती है। गुरु क्षेत्र (मीन राशि) के नवचरणों का फल इस प्रकार है—

प्रथम चरण में जन्म हो तो धनी, दूसरे में कालहीन (समय को न पहचानने वाला), तीसरे में लम्पट, चौथे में धनी, पाँचवे में चोर, छठे में कपटी, सातवें में निर्धन, आठवें में भाग्यशाली तथा नवम चरण में जन्म हो तो अपार क्लेश होता है।

१८ वें तथा ३३ वें वर्ष में कष्ट होता है। यदि शुभग्रहों से दृष्ट राशि हो तो ६१ वर्षों तक जीवित रहता है। (अनन्तर) माघ शुक्ल १२ तिथि उत्तराभाद्र-नक्षत्र में गुरुवार को प्रातःकाल शरीर का त्याग करता है॥ १२ ॥ यह मीन राशि का फल है।

लग्न से आयुर्ज्ञान

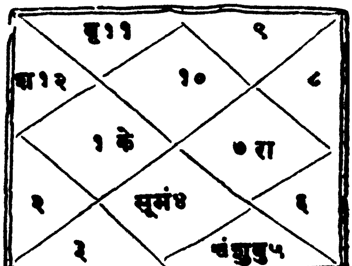
दिक्-काल-नख-बाणेभदृङ्नखाः समयो दिशः।
मनवो रामवेदाश्च मेषाद्यष्टोत्तरं शतम्॥ ३६६॥

दिक् = १०, काल = ६, नख = २०, बाण = ५, इभ = ८, दृङ् = २, नखा = २०, समयः = ६, दिशः = १०, मनवः = १४, रामः = ३, वेदाः = ४। ये मेषादि राशियों के १०८ वर्ष प्रमाण के ध्रुवाङ्क हैं। अर्थात् मेषलग्न का १०, वृष का ६, मिथुन का २०, कर्क का ५, सिंह का ८, कन्या का २, तुला का २०, वृश्चिक का ६, धनु का १०, मकर का १४, कुम्भ का ३ तथा मीन लग्न का ४ वर्ष ध्रुवाङ्क है॥ ३६६॥

जन्मपत्र्यां यत्र स्थाने ग्रहो भवति तत्र तेषां लग्नानां ध्रुवाङ्कान् संमेल्य तदेवायुर्ज्ञेयम्।

जन्मपत्री में जिन-जिन स्थानों में ग्रह हों उन-उन भावों में स्थित लग्नों के ध्रुवाङ्कों का योग लग्नायु होता है।

उदाहरण—निम्नाङ्कित जन्माङ्क से लग्नायु साधन करना है—



सूर्य सप्तम भाव में कर्क लग्न में अतः कर्क का लग्न ध्रुवाङ्क ५ प्राप्त हुआ। चन्द्रमा अष्टम भाव में सिंह लग्न में है अतः सिंह का ध्रुवाङ्क ८ ग्रहण किया इसी प्रकार मंगल स्थित राशि कर्क का ५, बुध स्थित सिंह का ८, गुरु स्थित कुम्भ का ३, शुक्र स्थित सिंह का ८, शनि स्थित मीन का ४, राहु स्थित तुला का २० केतु स्थित मेष का १० ध्रुवाङ्क हुआ इन सबका योग—

सू चं. मं. बु. गु. शु. श. रा. के.
५ + ८ + ५ + ८ + ३ + ८ + ४ + २० + १० = ७१
अर्थात् ७१ वर्ष लग्नायु हुई।

मानसागरी का (जन्मपत्र पद्धति नामक) प्रथम अध्याय समाप्त॥ १॥

अथ द्वितीयोऽध्यायः ।

ग्रहस्फुटीकरण का प्रयोजन—

स्पष्टैर्ग्रहैर्विना किञ्चिन्निगदन्ति कुबुद्धयः ।
अन्तर्दशादशादीनां फलं यान्त्युपहास्यताम् ॥ १ ॥

स्पष्ट ग्रहों के बिना दशा-अन्तर्दशा आदि का जो कुबुद्धि लोग फलादेश करतेहैं उनका उपहास होता है ॥ १ ॥

गत कलि का साधन—

वेदाब्धिशून्यरामाङ्कैर्युते विक्रमवत्सरे ।
भवेदयनवल्ली सा तस्या गतकलिस्तथा ॥ २ ॥

विक्रमसंवत् में ३०४४ संख्या जोड़ने से अयन वल्ली होती है । यही गत कलियुग का मान भी होता है ॥ २ ॥

उदाहरण—सं० २०३७ के आरम्भ में गत कलि का मान=२०३७+३०४४=५०८१ वर्ष हुआ यही अयन वल्ली भी हुई ।

पलभा तथा चरखण्ड साधन—

मेषादिगे सायनभागसूर्ये दिनार्द्धजा भा पलभा भवेत्सा ।
त्रिष्ठा हता स्युर्दशभिर्भुजङ्गैर्दिग्भिश्चराद्धानिगुणोद्धृतान्त्या ॥ ३ ॥

सायन सूर्य जब मेष राशि के आदि विन्दु पर जाता है उस (विषुव दिन) दिन मध्याह्न काल में द्वादश अंगुल शंकु की छाया उस स्थान की अंगुलादि पलभा होती है । पलभा को तीन स्थानों पर रखकर क्रम से १०,८,१० से गुणा कर तीसरे गुणनफल को ३ से भाग देने पर अभीष्ट स्थान के चरखण्ड होते हैं ॥ ३ ॥

उदाहरण—(पलभा शंकु यन्त्र से सिद्ध की जाती है अतः यहाँ ज्ञात पलभा से चरखण्ड का उदाहरण प्रस्तुत है ।)

काशी की पलभा ५।४५

५।४५	५।४५	५।४५
×१०	×८	×१०
५०।४५०	४०।३६०	५०।४५०
५७।३०	४६।००	५७।३०

तृतीय गुणनफल ५७।३० को ३ से भाग देने पर लब्धि १६।१० तृतीय चरखण्ड हुआ अर्थात् काशी का चरखण्ड=५७।४६।१६

भुज कोटि का साधन—

त्र्यूनं [1]भुजः स्यात्त्र्यधिकेन हीनं
भार्द्धं च भार्द्धादधिकं विभार्द्धम्।
नवाधिकेनोनितकर्मभं च
भवेच्च कोटिस्त्रिगृहं भुजोनम्॥४॥

ग्रहादिकों का राश्यादि मान यदि ३ राशि से अल्प हो तो वे ही भुज होते है। यदि ३ राशि से अधिक हो तो ६ राशि से घटाने पर शेष भुज, ६ राशि से अधिक हो तो उसमें से ६ राशि घटाने पर तथा ६ राशि से अधिक स्पष्टग्रह हो तो १२ राशि से घटाने पर शेष भुज होता है। भुज को ३ राशि में घटाने से कोटि होती है॥४॥

उदाहरण—स्पष्ट सायन सूर्य १।५।७।३० है। यह तीन राशि से न्यून है अतः यही भुज हुआ। ३ राशि से घटाने पर ३-(१।५।७।३०)=१।६।२२। ३०=कोटि

यदि सायन सूर्य=५।२।४।५०। (६ राशि से अल्प हैं अतः) ६।०।०।०—५।२।४।५०=०।२७।५५।१०=भुज तथा ३।०।०।०—०।२७।५५।१०=२।२।४। ५०=कोटि।

सायन सूर्यः=८।५।४०।३० (६ राशि से अधिक है अतः) ८।५।४०। ३०-६।०।०।०=२।५।४०।३०=भुज तथा ३।०।०।०-२।५।४०।३०=०।२४।१६। ३०=कोटि।

सायन सूर्य १०।१०।३०।४० (६ राशि से अधिक है अतः) १२।०।०।०-१०। १०।३०।४०=१।१६।२६।२०=भुज तथा ३।०।०।०—१।१६।२६।२०=१।१०। ३०।४०=कोटि

अयनांश साधन—

अथ शराब्धियुगै रहितः शको व्यपहृतः खरसैरयनांशकाः।
मधुसितादिकमासगतं प्रति शरपलैः सहितं कुरु सर्वदा॥५॥

शकाब्द में ४४५ घटाकर शेष में ६० का भाग देने से लब्धि अंशादि अयनांश होता है। चैत्र शुक्लादि जितने मास बीत चुके हो उतनी मास संख्या को ५ से गुणाकर गुणनफल तुल्य विपल उक्त लब्धि में जोड़ने से इष्टसमय में अयनांश होता है॥५॥

उदाहरण—सं. २०३७ शक १९०२ कार्तिक कृष्ण अमावस्या शुक्रवार को अयनांश अभीष्ट है। अतः नियमानुसार इष्ट शकाब्द १९०२ से ४४५ घटाकर ६० का भाग दिया।

१—भुज कोटि का साधन प्रायः सायन ग्रह के साथ ही होता है।

१९०२ − ४४५ = १४५७

१४५७ ÷ ६० = २४।१७ वर्षारम्भ कालिक अंशादि अयनांश हुआ ।

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से कार्तिक कृष्णा अमावस्या तक ७ मास हुये अतः ७ × ५ = ३५ विकला जोड़ने से

२४।१७ + ०।०।३५ = २४।१७।३५ इष्टकालिक अंशादि अयनांश हुआ ।

चरपल दिनमान और मिश्रमान साधन—

स्पष्टार्कायनभागयुक्तभुजवद्भुक्तर्क्षतस्तच्चरं
धृत्वा भोग्यचरघ्नबाहुलवतः खाग्न्यु-३० द्धृतैस्तैर्युतः ।
मेषात्स्वं शरवारिधी ४५ ऋणमथो कुर्यात्तुलादौ स्फुटं
तन्मिश्रं द्विगुणं द्युमानमुदितं रात्रेस्तु षष्ट्यन्तरम् ।। ६ ।।

स्पष्ट सूर्य में अयनांश जोड़कर, (सायन सूर्य के) भुज बनाने पर राशिस्थान में जितनी संख्या हो उतने चरखण्डों के योग तुल्य भुक्तचर को पृथक् रखकर, अंशादि भुज को अग्रिम चरखण्ड से गुणाकर ३० से भाग देकर प्राप्त लब्धि को भुक्तचर में जोड़ने से स्पष्ट चरपल होता है ।

मेषादि छः राशियों में सायन सूर्य हो तो स्पष्ट चरपल को ४५ में जोड़ने तथा तुलादि छः राशियों में सायन सूर्य हो तो स्पष्ट चरपल को घटाने से मिश्रमान होता है ।

मिश्रमान को द्विगुणित कर ६० घटाने से दिनमान तथा दिनमान को ६० में घटाने से रात्रिमान होता है ।। ६ ।।

उदाहरण—स्पष्ट सूर्य ११।९।२८।२७

अयनांशाः २३।२७।२४ चरखण्ड ५७।४६।१९ (स्पष्ट सूर्य में अयनांश जोड़ने से सायन सूर्य)

११।९।२८।२७	स्पष्ट सूर्य
२३।२७।२४	अयनांश
०।२।५५।५१	सायन सूर्य

तीन राशि से अल्प है अतः यही भुज हुआ । राशि स्थान में शून्य है अतः भुक्त चरपल ० अग्रिम चरखण्ड ५७ से अंशादि भुज २।५५।५१ को गुणा किया—

२।५५।५१
५७
११४।३८५।३५७
२७५ २५५
११४।३१३५।२९०७
११७। ३। २७ गुणनफल

३०) १६७।३।२७ (५।३४।६
१५०
१७×६०
१०२०
३ भुक्त चरपल ०
१०२३
९० लब्धि ५।३४।६
१२३
१२० इष्ट चरपल ५।३४।६
३×६०
१८०
२७
२०७
१८०
२७

सायन सूर्य मेषादि राशियों में है अतः ४५ में जोड़ने से—

४५।०० + ०।०५ = ४५।५ मिश्रमान हुआ

द्विगुणित मिश्रमान् ४५।५ × २ = ९०।१०
= −६०।००
३०।१० दिनमान

६०।००
३०।१० दिनमान
२९।५० रात्रिमान

(२) इसी प्रकार यदि सायन सूर्य ८।१५।२०।३२ हो तो चरपल क्या होगा-

८।१५।२०।३२
६
२।१५।२०।३२ भुज

राशि स्थान में दो है अतः दो चरखण्डों का योग

५७ + ४६ = १०३ भुक्त चर हुआ

तृतीय चरखण्ड १९ से अंशादि भुज को गुणा किया

१५।२०।३२
×१९
२९१।३०।८ गुणनफल को ३० से भाग दिया

३०) २९१।३०।८ (९।४३।०
२७०

२१ × ६० + ३०
१२९०　　मुक्त चरपल १०३
१२०

९०
९०　　लब्धि　९।४३।०

× ८ इष्ट चरपल ११२।४३।०
घट्यादि १।५२।४३

सायन सूर्य तुलादि राशियों में है अतः ४५ में चरपल घटाने से—

४५।००
१।५३

४३। ७　　मिश्रमान हुआ।

द्विगुणित मिश्रमान　४३।७ × २ =　८६।१४
−६०।००

६०।००　　दिनमान　२६।१४
२६।१४

३३।४६　　रात्रिमान

प्रकारान्तर से दिनमान साधन—

अयनादिकवासररामहता　गगनानलबाणशशाङ्कयुताः।
परिभाजितशून्यरसैर्घटिका मकरादिदिनं कर्कादिनिशा॥ ७॥

अयन (उत्तरायण-दक्षिणायन) के आरम्भ दिन (सायन कर्क तथा सायन मकर संक्रान्ति) से इष्ट दिन तक जितने दिन हों उनको ३ से गुणा कर गुणनफल में १५३० जोड़कर ६० का भाग देने से लब्धि घटिकादि मकरादि राशियों में सूर्य हो दिनमान तथा कर्कादि राशियों में हो तो रात्रिमान होता है। ७

उदाहरण—(१) सं० २०३७ आषाढ शुक्ल पूर्णिमा रविवार २७ जुलाई १९८० को दिनमान अपेक्षित है।

आषाढमास से पूर्व सायन कर्क संक्रान्ति शुद्ध ज्येष्ठ शुक्ल अष्टमी शनिवार २१ जून १९८१ को मध्याह्न ११।२० बजे आरम्भ हुई। अतः संक्रान्ति दिन से अभीष्ट दिन तक दिन संख्या ३७ हुई। इसे नियमानुसार ३ से गुणाकर १५३० जोड़कर ६० से भाग दिया—

३७ × ३ = १११ + १५३० = १६४१

६०) १६४१ (२७
 १२०
 ४४१
 ४२०
 २१

लब्धि घट्यादि २७।२१ रात्रिमान हुआ (क्योंकि सायन सूर्य कर्क राशि में है)

अतः ६०।००
 २७।२१
 ३२।३९ दिनमान हुआ।

(२) सं० २०३७ माघ शुक्ल पूर्णिमा बुधवार दिनाङ्क १८ फरवरी १९८१ को दिनमान अपेक्षित है। इससे पूर्व सायन मकर संक्रान्ति मार्गशीर्ष शुक्ल पूर्णिमा रविवार १२ दिसम्बर १९८० को रात्रि में थी। अतः संक्रान्ति से इष्ट समय तक दिनों की संख्या ६८ हुई। अतः

६८ × ३ = २०४ + १५३० = १७३४

६०) १७३४ (२८
 १२०
 ५३४
 ४८०
 ५४

लब्धि घट्यादि २८।५४ मकर में सायन सूर्य होने से यही दिन मान हुआ।

६० में घटाने से (६०।००—२८।५४) = ३१।६ घटयादि रात्रिमान हुआ।

[नोट—दिनमान साधन की यह प्रक्रिया स्थूल है।]

इष्ट कालिक ग्रह साधन—

गतैष्यदिवसाद्येन गतिर्निघ्नी खषड्हृता।
लब्धमंशादिकं शोध्यं योज्यं स्पष्टो भवेद् ग्रहः ॥ ८ ॥

गत दिवसादि (ऋण चालन) अथवा ऐष्य दिनादि (धन चालन) को ग्रह गति से गुणाकर ६० से भाग देने पर प्राप्त अंशादि लब्धि को पंक्तिस्थ ग्रह में ऋण चालन होने पर घटाने तथा धन चालन होने पर जोड़ने से इष्टकालिक स्पष्ट ग्रह होता है ॥८॥

विशेष—यह ग्रहानयन की प्राचीन परिपाटी है। जब पक्ष में केवल दो दिनों के ग्रह स्पष्ट रखे जाते थे उस समय यह प्रक्रिया उपयुक्त थी। ऋण चालन और धन चालन का ज्ञान निम्न प्रकार से किया जाता था—

पंक्तिः स्वेष्टाद् भवेदग्रे पंक्त्याभिष्टं विशोधयेत्।
तच्चालनमृणं ज्ञेयं व्यत्यये व्यस्ययं विदुः ॥

अर्थात् पञ्चाङ्गस्थ ग्रहपंक्ति यदि इष्ट दिन से आगे हो तो पंक्तिस्थ दिन एवं इष्ट घटी (मिश्रमान आदि जिस समय का ग्रह स्पष्ट किया हो) से अपना अभीष्ट दिन

एवं घटीपल घटाने से ऋण चालन तथा पंक्ति पीछे होने तो इष्ट घटी (दिवसादि) में पंक्ति के दिवसादि घटाने से ऋण चालन होता है।

परन्तु आजकल पञ्चाङ्गों मे दैनिक स्पष्ट ग्रह दिये जाते हैं। प्रायः स्पष्ट ग्रह सूर्योदय कालिक या मिश्रमान कालिक दिये जाते हैं। कुछ पञ्चाङ्गों में प्रातः५।३० बजे के ग्रह दिये रहते हैं। इन स्थितियों में ग्रन्थोक्त नियम का अक्षरशः पालन करना केवल क्रिया गौरव होगा। अतः विभिन्न परिस्थितियों में अपने विवेक से पञ्चाङ्गस्थ ग्रह का इष्ट समय पर्यन्त अन्तर ज्ञातकर ग्रह गति से गुणा करें तथा ६० का भाग दें। लब्धि कलादि को पञ्चाङ्गस्थ ग्रह में जोड़ने घटाने से स्फुट ग्रह होता है। यदि सूर्योदय कालिक ग्रह हों तो ग्रह गति और इष्ट घटी का परस्पर गुणा कर ६० का भाग देकर लब्ध कलादि फल पंक्तिस्थ ग्रह में जोड़ने से इष्ट कालिक ग्रह होता है। वक्री ग्रह तथा राहुकेतु के स्पष्टीकरण में अन्य ग्रहों से विपरीत कार्य (ऋण हो तो धन, धन हो तो ऋण) करना चाहिये।

उदाहरण—सं० २०३७ फाल्गुन कृष्ण ८ शुक्रवार को मिश्रमान ४५।१ सूर्य १०।१५।२६।४३ गति ६१।२० इसी प्रकार मिश्रमान कालिक अन्य ग्रह भी उक्त तिथि को स्पष्ट करके रखे हुये हैं यही पंक्ति है।

(१) सं० २०३७ फाल्गुन कृष्ण ६ बुधवार को इष्टघटी ३२।४० पर सूर्य स्पष्ट करना है। अतः चालन (बीच का अन्तर) निकालेंगे—

बुधवार की संख्या ४ तथा शुक्रवार की संख्या ६ है। पंक्ति आगे होने से दिवस तथा इष्टघटी में अभीष्ट दिवस तथा इष्टघटी घटाने से ऋण चालन होगा। यथा—

पंक्तिस्थ वारादि	६।४५।१
इष्ट वारादि	—४।३२।४०
ऋण चालन	२।१२।२१

इसे ग्रहगति से गुणा कर ६० का भाग देकर अंशादि लब्धि पंक्तिस्थ ग्रह में घटाने से इष्ट कालिक ग्रह होगा।

ऋण चालन	२।१२।२१
सूर्य गति	× ६१।२०
	४०। २४०।४२०
	१२२।७३२।१२८१
	१२२। ७७२।१५२१।४२० साठ से भाग देने पर
	२। १५। १७। २८। ००
पंक्तिस्थ सूर्य	१०।१५।२६।४३
	— २।१५।१७
इष्ट कालिक स्पष्ट सूर्य	१०।१३।१४।२६

(२) यदि ९ शनिवार इष्ट घटी १५।५० पर ग्रह स्पष्ट करना हो तो धन चालन आयेगा। यथा—

शनिवार=७

अतः इष्ट वारादि ७।१५।५० से पंक्तिस्थ वारादि ६।४५।१ को पीछे (अल्प) होने से घटाया—

७।१५।५०
६।४५।०१

०। ३०।४९ धन चालन

०। ३०।३९
६१।२० सूर्य गति

०।६००।९८०
०।१८३०।२९८९

०।१८३०।३५८९।९८०
०।३१। ३०। ५। २०

धन चालन होने से पंक्तिस्थ सूर्य में जोड़ने से इष्टकालिक सूर्य होगा। अतः—

१०।१५।२९।४३
\+ ०।३१।३०

१०।१६। १।१३ इष्ट कालिक स्पष्ट सूर्य

(३) सं० २०३७ चैत्र कृष्ण ७ रविवार को औदयिक दैनिक
स्पष्ट सूर्य ११।७।४२।४७ गति ५९।३५

इसी दिन २८।३० इष्टघटी पर स्पष्ट सूर्य साधन करना हो तो—

गति ५९।३५
इष्ट घटी ×२८।३०

१७७०।१०५०
१६५२।९८०।

१६५२।२७५०।१०५०

६० से भाग देने पर २८।१८ । ७ । ३०

यहाँ केवल घटी पल का ही गुणा होने से लब्धि भी कला विकला ही होगी अतः उदयकालिक ग्रह की कला विकला में अन्तिम दो लब्धि जोड़ने से स्पष्ट ग्रह होगा। यथा—

औदयिक सूर्य ११।७।४२।४७
\+ २८।१८

इष्टकालिक स्पष्ट सूर्य ११।८।११। ५

स्पष्टचन्द्र साधन—

खषड्घ्नं भयातं भभोगोद्धृतं तत् खतर्कघ्नधिष्ण्येषु युक्तं द्विनिघ्नम् ।
नवाप्तं शशी भागपूर्वस्तु भुक्तिः खखाभ्राष्टवेदा भभोगेन भक्ताः ॥ ६ ॥

पलात्मक भयात को ६० से गुणाकर पलात्मक भभोग से भाग देकर लब्धि को ६० से गुणित गत नक्षत्र की संख्या में जोड़कर २ से गुणाकर ९ से भाग देने पर लब्धि अंशादि स्पष्ट चन्द्र होता है। (अंश में ३० का भाग देने से राश्यादि होता है।) तथा ४८००० को भभोग से भाग देने पर चन्द्रमा की गति होती है। (भाग देते समय ४८००० को ६० से गुणाकर पलात्मक बना लेना चाहिये) ६॥

विशेष—चन्द्रमा का साधन नक्षत्रों पर आधारित है। नक्षत्र के गत मान को भयात तथा नक्षत्र के आरम्भ काल से समाप्ति पर्यन्त सम्पूर्ण भोग काल को भभोग कहते हैं। इसका साधन इस प्रकार होता है—

(१) गत नक्षत्र को ६० घटी में घटाकर शेष में इष्ट घटी जोड़ने से भयात तथा शेष में वर्तमान नक्षत्र के घटी पल जोड़ने से भभोग होता है।

(२) यदि एकही दिन में उदय काल में भिन्न नक्षत्र तथा जन्म समय में भिन्न नक्षत्र हो तो उदय कालिक नक्षत्र के घटी पलको इष्ट घटी में घटाने से भयात तथा ६० घटी में उदयकालिक नक्षत्र को घटाकर शेष में अग्रिम दिन के नक्षत्र मान को जोड़ने से भभोग होता है। यथा—

(१) चैत्र शुक्ल ७ शनिवार को मूल नक्षत्र ३२।१३
गत नक्षत्र ज्येष्ठा २७।४८ इष्टघटी २५।३०

	६०।००			
	—२७।४८	गत नक्षत्र		
शेष	३२।१२		३२।१२	शेष
	२५।३०	इष्ट घटी	३२।१३	वर्तमान नक्षत्र
	५७।४२	भयात	६४।२५	भभोग

(२) यदि इष्ट घटी ४५।५०

४५।५०	
—३२।१३	मूल उदयकालिक नक्षत्र
१३।३७	भयात
६०।००	
३२।१३	
२७।४७	
३५।२८	अग्रिम नक्षत्र पूर्वाषाढ़ा
६३।१५	भभोग

उदाहरण—मूल नक्षत्र में भयात ५७।४२ भभोग ६४।२५ इष्टघटी २५।३० चन्द्र साधन करना है—

६४ × ६० = ३८४० + २५ = ३८६५ पलात्मक भभोग

५७ × ६० = ३४२० + ४२ = ३४६२ पलात्मक भयात्

```
        ३४६२
        × ६०
३८६५)२०७७२०(५३/४४ लब्धि
        १९३२५
        १४४७०
        ११५९५        गत नक्षत्र ज्येष्ठा की अश्विन्यादि
         २८७५
         × ६०         संख्या १८
        १७२५००    १८ × ६० = १०८०
        १५४६०              ५३।४४ लब्धि
         १७९००          ११३३।४४
         १५४६०              × २
          २४४०          २२६७।२८
```

```
९ ) २२६७।२८ ( २५१।५६।२६
    १८
     ४६
     ४५
      १७        अंशादि चन्द्र २५१।५६।२६
       ९
      ८ × ६०     ३० ) २५१ ( ८ राशि
      ४८०            २४०
       २८             ११
      ५०८
      ४५            राश्यादि स्पष्ट चन्द्र ८।११।५६।२६
       ५८
       ५४
        ४ × ६०
        २४०
        १८
         ६०
         ५४
          ६
```

४८००० × ६० = २८८००००

```
३८६५ ) २८८०००० ( ७४५।५
        २७०५५
        ------
         १७४५०
         १५४६०
          १९९००
          १९३२५
           ३७५ X ६०
          २२५००
          १९३२५          स्पष्ट चन्द्रगति
          ------
           ३१७५            ७४५।५
```

श्रीपति कृत वस्तुनिर्देशात्मक मंगलाचरण—

"नत्वा तां गुरुदेवतां त्रिसमयज्ञानोद्गतेः कारणं
तत्पादाम्बुरुहप्रकाशविकसद्बोधो बुधः श्रीपतिः ।
शिष्यप्रार्थनया विचार्य सकलान् होरागमार्थान् मुहु-
र्वक्ष्ये जातककर्मपद्धतिमहं होराविदां प्रीतये ॥१०॥"

तीनों कालों (भूत-वर्तमान-भविष्य) का ज्ञान कराने वाले उन गुरुदेवता को प्रणाम कर के उन्हीं के चरण कमलों के प्रकाश से ज्ञान सम्पन्न मैं श्रीपति अपने शिष्यों के आग्रह से समस्त होराशास्त्र को विचार कर पुनः होराशास्त्र के विद्वानों की प्रसन्नता के लिए जातक कर्म पद्धति को कह रहा हूँ ॥ १० ॥

फलादेश हेतु आवश्यक निर्देश—

ज्ञेयोऽत्र प्रथमं हि जन्मसमयस्तुर्यादियन्त्रैः स्फुटं
तत्कालप्रभवा विलग्नसहिताः कार्यास्ततश्च ग्रहाः
सिद्धान्तोक्तपरिस्फुटोपकरणैः स्वैर्वासकृत्कर्मणा
भावाः खेटदृशो बलानि च ततस्तेषां विचिन्त्यानि षट् ॥ ११ ॥

सर्व प्रथम तुरीय आदि (आजकल घड़ी) यन्त्रों से स्पष्ट (शुद्ध) समय का ज्ञान, जन्म कालिक लग्न एवं स्पष्ट ग्रहों का साधन सिद्धान्तोक्त स्फुट करण-विधि से अथवा असकृत कर्म (बार-बार) द्वारा अन्य विधि से करना चाहिये। अनन्तर द्वादश भाव, दृष्टि एव बल इन छः विषयों का अच्छी तरह विचार करना चाहिये ॥ ११ ॥

वदन्ति भावैक्यदलं हि सन्धिस्तत्र स्थितः स्यादबलो ग्रहेन्द्रः ।
ऊने तु सन्धेर्गतभावजातमागामिजं चाप्यधिके करोति ॥ १२ ॥

दो भावों के योगार्ध को सन्धि कहते हैं। वहाँ (संधि में) स्थित ग्रह निर्बल होते हैं। सन्धि से अल्प (अंशादि) ग्रह हो तो गत भाव में तथा सन्धि से अधिक होने पर अग्रिम भाव में ग्रह को समझना चाहिये।। [जिस भाव में ग्रह होगा उसी से सम्बन्धित फल देगा]

भावांशतुल्यं खलु वर्तमानो भावो हि सम्पूर्णफलं विधत्ते।
भावोनके चाप्यधिके च खेटे त्रिराशिकेनात्र फलं प्रकल्प्यम् ।। १३ ।।

यदि भाव के तुल्य ग्रह हो (ग्रह और भाव में अंशादि से साम्य हो) तो वह भावपूर्ण फलदायक होता है। भाव से न्यूनाधिक अंशादि ग्रह हो तो त्रैराशिक से उसके न्यूनाधिक फल का ज्ञान करना चहिये ।। १३ ।।

भावप्रवृत्तौ हि फलप्रवृत्तिः पूर्णं फलं भावसमांशकेषु।
ह्रासक्रमाद्भावविरामकाले फलस्य नाशः कथितो मुनीन्द्रैः ।। १४ ।।

भाव के आरम्भ से फल का आरम्भ होता है। भाव और ग्रह के अंशादि साम्य होने पर पूर्ण फल होता है। अनन्तर क्रम से फल का ह्रास होता है तथा भाव सन्धि तक फल का नाश हो जाता है ।। १४ ।।

जन्मप्रयाणे व्रतबन्धचौलनृपाभिषेकादिकरग्रहेषु ।
एवं हि भावाः परिकल्पनीयास्तैरेव योगोत्थफलानि यस्मात् ।। १५ ।।

जन्म समय, यात्रा, व्रतबन्ध, चौल (मुण्डन), राज्याभिषेक, विवाह, आदि कार्यों में इसी प्रकार द्वादश भावों का साधन कर उनके द्वारा उत्पन्न योगों का फल कहना चाहिये ।। १५ ।।

लङ्कोदय द्वारा स्वदेशोदय साधन—

लङ्कोदया नागतुरङ्गदस्रा गोऽङ्काश्विनो रामरदा विनाड्यः।
क्रमोत्क्रमस्थैश्चरखण्डकैः स्वैः क्रमोत्क्रमस्थाश्च विहीनयुक्ताः ।। १६ ।।

लङ्का क्षितिज में मेषादि तीन राशियों के क्रम से २७८, २९९, ३२३ पलात्मक उदयमान होते हैं। इनको क्रम से तथा उत्क्रम से रख कर स्वदेशीय चरखण्डों को क्रम से घटाने तथा व्युत्क्रम से जोड़ने से स्वदेशीय उदयमान होते हैं ।। १६ ।।

विशेष—लङ्का क्षितिज में केवल मेष वृष मिथुन का उदयमान पठित है उसी को उत्क्रम से रखने पर कर्कादि तीन राशियों का उदय मान होता है। इस प्रकार मेष से कन्या तक छः राशियों का क्रम से उदय मान हो जाता है। पुनः उत्क्रम से यही तुलादि छः राशियों के भी उदयमान हो जाते हैं। स्पष्टता हेतु उदाहरण देखें—

उदाहरण—काशी का उदयमान अभीष्ट है। अतः काशी का चरखण्ड ५७। ४६।१९ को क्रम से एवं व्युत्क्रम से लङ्कोदय में घटाया तथा जोड़ा।

लङ्कोदय			चरखण्ड		काशी का उदयमान		
मे. २७८	मी.	—	५७	=	मेष	२२१	मीन
वृ. २९९	कु.	—	४६	=	वृष	२५३	कुम्भ
मि. ३२३	म.	—	१९	=	मिथुन	३०४	मकर
क. ३२३	ध.	+	१९	=	कर्क	३४२	धन
सि. २९९	वृ.	+	४६	=	सिंह	३४५	वृश्चिक
क. २७८	तु.	+	५७	=	कन्या	३३५	तुला

लग्न साधन—

तत्कालार्कः सायनः स्वोदयघ्ना भोग्यांशाः खत्र्युद्धृता भोग्यकालः।
एवं यातांशैर्भवेद्यातकालो भोग्यः शोध्योऽभीष्टनाडीपलेभ्यः ॥१७॥
तदनु जहीहि गृहोदयांश्च शेषं गगनगुणघ्नमशुद्धहृल्लवाद्यम्।
सहितमजादिगृहैरशुद्धपूर्वैर्भवति विलग्नमदोऽयनांशहीनम् ॥ १८ ॥

इष्ट कालिक सूर्य में अयनांश जोड़कर सायन सूर्य के अंशादि को ३० अंश में घटाने से शेष भोग्यांश होता है। उसे (भोग्यांश को) अपने (जिस राशिपर सायन सूर्य हो उस राशि के) स्वदेशीय उदय मान से गुणा कर ३० से भाग देने पर लब्धि भोग्यकाल होता है। इसी प्रकार सायन सूर्य के भुक्तांश को स्वोदय से गुणा कर ३० से भाग देने पर लब्धि भुक्तकाल होता है। इष्ट घटी को पलात्मक बनाकर उसमें भोग्यकाल को घटाकर शेष में अग्रिम (सायन सूर्य जिस राशि पर हो उससे आगे की) राशियों के स्वदेशीय उदयमान क्रम से जितने घट सकें, घटाना चाहिये। शेष को ३० से गुणाकर अशुद्ध राशि (जो राशि न घट सकी हो) के उदयमान से भाग देने पर जो अंशादि लब्धि प्राप्त हो उसमें शुद्ध राशि (अन्तिम राशि जो घट चुकी हो) की संख्या जोड़ कर अयनांश घटाने से स्पष्ट राश्यादि लग्न होता है ॥ १७-१८ ॥

विशेष--लग्न साधन की दो रीति है। १ भुक्तरीति २. भोग्यरीति। स्पष्ट सायन सूर्य के अंशादि (भुक्त) द्वारा लग्न साधन की प्रक्रिया को भुक्त, तथा अंशादि को ३० में घटाकर सायन सूर्य के भोग्य अंशों द्वारा लग्न साधन की रीति को भोग्य रीति कहते हैं।

भुक्त रीति से लग्न साधन में रात्रि शेष का इष्ट ग्रहण करते हैं। अतः जब मध्य रात्रि के बाद लग्न साधन अभीष्ट हो तो तभी भुक्तरीति द्वारा लग्न साधन करना चाहिये। इष्ट घटी को ६० घटी में घटाने से रात्रि शेष की इष्टघटी हो जाती है। इसी रात्रि शेष इष्ट घटी को पलात्मक बनाकर उनमें से उक्त रीति से

साधित भुक्तकाल को घटाकर शेष में पिछली राशियों के उदयमान क्रम से घटाना चाहिये। जब कोई राशि न घटे तब उस शेष को ३० से गुणा कर जो राशि न घट सकी हो (अशुद्ध राशि) उसके उदयमान से भाग देकर प्राप्त अंशादि लब्धि को अशुद्ध राशि की संख्या में घटाने से शेष सायन लग्न तथा उससे अयनांश घटा देने पर स्पष्ट राश्यादि लग्न होगा।

उदाहरण—(१) स्पष्ट सूर्य ११।७।२९।२१ अयनांश २३।२६।३८ इष्टघटी २५।३० इन उपकरणों के आधार पर वाराणसी अक्षांश २५।२० पलभा ५।४५ के उदयमान द्वारा भोग्यरीति से लग्न साधन—

स्प० सू० ११।७।२९।२१
अयनांश २३।२६।३८
———————
सायन सूर्य ०।०।५५।५९

३०।० ।०
०।५५।५९ भुक्तांश
———————
२९।४।१ भोग्यांश

सायन सूर्य मेष राशि में है अतः (काशी में) मेष राशि के उदयमान २२१ से गुणा कर ३० से भाग दिया—

२९।४।१
×२२१
———————
६४०९।८८४।२२१
६४२३।४७।४१
लब्धि २१४।७।३५ भोग्यकाल

इष्ट पल = २५×६०=१५००
+३०
———————
१५३०

१५३०।० ।०
−२१४।७ ।३५ भोग्यकाल
———————
१३१५।५२।२५

३०) ६४२३।४७।४१ (२१४
६०
———
४२
३०
———
१२३
१२०
———
३×६०+४७
२२७ (७
२१०
———
१७
×६०
———
१०२०
४१
———
१०६१ (३५
९०
———
१६
१५०
———
११

१३१५।५२।२५
वृष २५३
१०६२ कन्या का उदयमान ३३५ नहीं घट सका अतः कन्या
मिथुन ३०४ अशुद्ध तथा सिंह शुद्ध राशि हुई।
७५८
कर्क ३४२
४१६
सिंह ३४५
७१।५२।२५ शेष
×३०
२१५६।१२।३०

गुणनफल २१५६।१२।३० को अशुद्ध राशि कन्या के उदयमान ३३५ से भाग दिया।

३३५)२१५६।१२।३०(६।२६।११
२०१०
१४६×६०
८७६० लब्धि ६।२६।११ अंशादि सायन लग्न है। इसे
१२ शुद्ध राशि संख्या ५ में जोड़कर अयनांश घटाने से—
८७७२(५। ६।२६।११
६७० −२३।२६।३८
२०७२ ४।१२।५६।२३ निरयन
२०१० स्पष्ट लग्न सिद्ध हुआ
६२×६०
३७२०
३०
३७५०(
३३५
४००
३३५
६५

(२) भुक्तरीति से लग्न साधन—

स्प. सूर्य १०।५।२५।३० अयनांश २३।२६।३४ इष्टघटी ५२।३० काशी अक्षांश २५।२० पलभा ५।४५।

इष्टघटी ५२।३० में ६०।०० घटी में घटाकर शेष (६०।००—५२।३०)= ७।३० को रात्रि शेष का इष्ट काल मान कर भुक्त रीति से लग्न साधन होगा।

स्पष्ट सूर्य १०। ५।२५।३०
अयनांशा: ।२३।२६।३४

१०।२८।५२।०४ सायन सूर्य
२८।५२।०४ भुक्तांशा:

इसे कुम्भ राशि के उदयमान २५३ से गुणाकर ३० से भाग दिया--

२८।५२।४
×२५३

७३०३।३२।५२

३०) ७३०३।३२।५२ (२४३।२७।५
६०
१३०
१२०
१०३
९०
१३×६०
७८०
३२
८१२
६०
२१२
२१०
२×६०
१२०+५२
१७२
१५०
२२

लब्धि २४३।२७।५ भुक्त काल को रात्रि शेष के पलात्मक इष्ट ४५० में घटाया

४५०।०।०
२४३।२७।५
२०६।३२।५५ शेष पिछली राशि मकर के उदयमान ३०४ से अल्प है अतः यही अशुद्ध राशि हुई।

शेष २०६।३२।५५
× ३०
६१९६।२७।३०

गुणनफल को अशुद्ध राशि मकर के उदयमान ३०४ से भाग दिया—लब्धि २०।२२।५८ को अशुद्ध राशि १० में घटाकर शेष ६।६।३७।२ में अयनांश २३।२६। ३४ घटाने से शेष ८।१६।१०।२८ अभीष्ट निरयन लग्न हुआ।

भोग्याल्पकालात्खत्रिघ्नात्स्वोदयाप्तलवादियुक्।
रविरेव भवेल्लग्नं सषड्भार्कान्निशातनुः ॥ १६ ॥

यदि भोग्यकाल से इष्टपल अल्प हो तो इष्टपल को तीस से गुणाकर सायन सूर्य के राश्युदयासु से भाग देने पर जो लब्धि होगी उसे पुनः स्पष्ट सूर्य में जोड़ने से सूर्य ही लग्न होगा।

यदि रात्रि में लग्न साधन अभीष्ट हो तो स्पष्ट सूर्य की राशि में ६ जोड़कर उसे सूर्य तथा इष्टघटी में दिनमान घटाकर शेष को रात्रि गत इष्ट मानकर लग्न साधन करना चाहिये ॥ १६ ॥

उदाहरण—(१)—स्पष्ट सूर्य ३।१०।२२।३० इष्टघटी १।३५ अयनांशाः २३।२६।३०

	३।१०।२२।३०	३०।० ।०	
	+२३।२६।३०	३।४६।००	
सायन सूर्य	४।०३।४६।००	२६।११।००	भोग्यांश

सिंह के उदयमान ३४५ से भोग्यांश को गुणाकर ३० से भाग देने पर प्राप्त लब्धि (३०१।६।३० भोग्यकाल) इष्टपल ६५ से अधिक है। अतः उक्त नियमानुसार इष्ट-पल ६५ को ३० से गुणा कर स्वोदयमान ३४५ से भाग देकर लब्धि ८।१५।३६ को स्पष्ट सूर्य ३।१०।२२।३० में जोड़ने से स्पष्ट लग्न ३।१८।३८।०६ हुआ।

(२) स्पष्ट सूर्य ५।२७।८।२० अयनांश २३।२६।३८ दिनमान २८।४४ इष्ट घटी ४०।१०

रात्रि में लग्न साधन अभीष्ट हो तो क्रियालाघव हेतु सूर्य को ६ राशि आगे बढ़ाकर रात्रिगत इष्ट घटी से भोग्यरीति द्वारा लग्न साधन करना चाहिये।

स्पष्ट सूर्य	५।२७।८।२०	इष्टघटी	४०।१०
	६	दिनमान	२८।४४
	११।२७। ८ ।२०	रात्रिगत इष्टघटी	११।२६
अयनांश	२३।२६।३८		
सायन सूर्य	००।२०।३४।५८		

३०।० । ०।
२०।३४।५८

९।२५।२ भोग्यांश को स्वोदय (मेष के उदयमान) २२१ से गुणाकर

३० से भाग देने पर ६९।२२।२३ भोग्यकाल हुआ। पलात्मक रात्रिगत इष्टघटी ६८६ में भोग्यकाल तथा अग्रिम उदयमान को घटाया—

६८६
−६९।२२।२३
६१६।३७।३७
वृष २५३
३६३
मिथुन ३०४
५९।३७।३७
×३०
१७८८।३८।३०

गुणन फल को अशुद्ध राशि कर्क के उदयमान ३४२ से भाग दिया। लब्धि ५।१३।५० को शुद्ध राशि मिथुन में जोड़ने तथा अयनांश घटाने से—

३ । ० । ० । ०
५ । १३।४९
३ । ५ । १३।४९ सायन लग्न।
−२३ । २६।३८ अयनांश

स्पष्ट लग्न २ । ११ ।४७।११

नतकाल साधन—

पूर्वं नतं स्याद्दिनरात्रिखण्डं दिवानिशोरिष्टघटीविहीनम्।
दिवानिशोरिष्टघटीषु शुद्धं द्युरात्रिखण्डं त्वपरं नतं स्यात्॥ २०॥

दिनार्ध में दिनगत इष्टघटी तथा रात्र्यर्ध में रात्रिगत इष्ट घटी घटाने से पूर्व नत एवमेव दिनेष्ट घटी में दिनार्ध तथा रात्रिगत इष्टघटी में रात्र्यर्ध घटाने से परनत होता है॥ २०॥

उदाहरण – (१) इष्टघटी १०।५० दिन मान २८।३०

दिनार्ध १४।१५
−१०।५० इष्टघटी
३।२५ पूर्व नत

(२) इष्टघटी ३५।४० दिनमान २८।३० रात्रिमान् ३१।३० रात्र्यर्ध १५।४५

३५।४०−२८।३०=७।१० रात्रिगत इष्टघटी

१५।४५
७।१०
८।३५ पूर्वनत

(३) इष्टघटी १८।३० दिनमान २८।३०
दिनार्ध १४।१५
इष्ट घटी १८।३०
दिनार्ध −१४।१५
४।१५ पर नत

(४) इष्ट घटी ५०।५० रात्रिमान ३१।३०
दिनमान २८।३०
५०।५०−२८।३०=२२।२० रात्रिगत इष्टघटी
रात्रिगत इष्टघटी २२।२०
रात्र्यर्ध −१५।४५
६।३५ पर नत

दशम लग्न साधन —

तनो लङ्कोदयैर्भुक्तं भोग्यं शोध्यं पलीकृतात् ।
पूर्वपश्चान्नतादन्यत् प्राग्वत्तद्दशमं भवेत् ॥ २१ ॥

लग्न साधन की तरह लङ्कोदय द्वारा मुक्तकाल या भोग्यकाल का साधन कर (इष्टकाल के स्थान पर) पूर्वनत या परनत के पलात्मक मान में घटा कर पूर्वोक्त नियमानुसार साधित लग्न दशम लग्न होता है ।

यदि पूर्व नत हो तो भुक्तरीति से तथा पर नत हो तो भोग्य रीति से लग्न साधन करना चाहिये ॥ २१ ॥

उदाहरण —स्पष्ट सूर्य ११।७।२६।२१ इष्टघटी २५।३०
दिनमान ३०।७ अयनांश २३।२६।३८
परनत १०।२७

११।७।२६।२१
२३।२६।३८
०।०।५५।५६ सायनसूर्य

३०।०।०।०
०।५५।५६
२९।४।१ भोग्यांश

मेष के लङ्कोदय मान २७८ से भोग्यांश को गुणा किया । गुणन फल ८०८०। ३६।३८ को ३० से भाग दिया । लब्धि २६९।२१।१३ भोग्यकाल को परनत १०।२७ के पलात्मक मान ६२७ में घटा कर अग्रिम राशियों के उदयमान घटाया—

६२७।०।०
२६९।२१।१३
३५७।३८।४७
वृष २९९
५८।३८।४७
×३०
१७५९।२३।३०

शेष को ३० से गुणा कर अशुद्ध राशि मिथुन के उदयमान ३२३ से भाग दिया । शेष क्रिया लग्न साधन की तरह ।

शुद्ध राशि २।०।०।०	३२३)१७५६।२३।३०(५।२६।४६
+ ५।२६।४६	१६१५
२।५।२६।४६	१४४×६०
अयनांश २३।२६।३८	८६४०+२३
१।१२।०।११	३८६६
स्पष्ट दशम लग्न ।	६०६
	२२०३
	१९३८
	२६५×६०=१५९००
	३०
	१५९३०
	१२९२
	३०१०
	२९०७
	१०३

दशम लग्नानयन में विशेष—

मध्याह्ने चार्धरात्रे वा स्वेष्टकालो यदा भवेत् ।
तदा तात्कालिकः सूर्यो भवेल्लग्नं चतुर्थकम् ॥ २२ ॥

यदि ठीक मध्याह्नकालिक इष्ट घटी में दशम लग्न साधन करना हो तो उस समय स्पष्ट सूर्य ही दशमलग्न होता है । इसी प्रकार यदि ठीक मध्य रात्रिकालिक इष्ट हो तो स्पष्ट सूर्य ही चतुर्थ लग्न होगा ॥ २२ ॥

ससन्धि द्वादश भाव साधन—

लग्नं चतुर्थात्संशोध्य शेषं षड्भिर्विभाजितम् ।
राश्यादि योजयेल्लग्ने सन्धिः स्याल्लग्नवित्तयोः ॥ २३ ॥
सन्धिः षडंशसंयुक्तो धनभावो भवेत्स्फुटः ।
धनभावः षडंशाढ्यः सन्धिर्धनतृतीययोः ॥ २४ ॥
षडंशसंयुतः सन्धिस्तृतीयो भाव उच्यते ।
षडंशाढ्यस्तृतीयः स्यात्सन्धिर्भ्रातृचतुर्थयोः ॥ २५ ॥
तृतीयसन्धिरेकाढ्यस्तुर्यः सन्धिर्भवेदिह ।
द्व्याढ्यस्तृतीयभावोऽपि पुत्रभावो भवेत्स्फुटः ॥ २६ ॥
त्र्याढ्यो द्वितीयसन्धिः स्यात्सन्धिः पञ्चमभावजः ।
धनभावो वेदयुतो रिपुभावः प्रजायते ॥ २७ ॥
लग्नसन्धिः पञ्चयुतः सन्धिः स्याद्रिपुभावजः ।

लग्नाद्याः सन्धिसहिता भावाः षड्राशिसंयुताः ।
सप्तमाद्या भवन्तीह भावाः सर्वे ससन्धयः ।। २८ ।।

चतुर्थ लग्न से प्रथम लग्न को घटाकर शेष को ६ से भाग देकर लब्धि राश्यादि को प्रथम लग्न में जोड़ने से प्रथम भाव तथा द्वितीय भाव की सन्धि होती है। सन्धि में षष्ठांश जोड़ने से द्वितीय भाव स्पष्ट होता है। धन में षष्ठांश जोड़ने से द्वितीय-तृतीय की सन्धि, पुनः षष्ठांश युक्त सन्धि तृतीय भाव होता है। तृतीय भाव में षडंश जोड़ने से तृतीय-चतुर्थ की सन्धि होती है। तृतीय सन्धि में एक जोड़ने से चतुर्थ की सन्धि, तृतीय भाव में दो जोड़ने से पञ्चम भाव, द्वितीय सन्धि में ३ जोड़ने से पञ्चम की सन्धि, द्वितीय भाव में ४ जोड़ने से षष्ठ भाव, लग्न सन्धि में पांच जोड़ने से षष्ठ भाव की सन्धि होती है।

लग्नादि सन्धि सहित भावों में ६-६ राशि जोड़ने से सन्धि सहित सप्तम से द्वादश पर्यन्त भाव स्पष्ट हो जाते हैं ।। २३-२८ ।।

विशेष—लग्न में ६ राशि जोड़ने से सप्तम भाव तथा दशम लग्न में ६ राशि जोड़ने से चतुर्थ भाव होता है।

उदाहरण—स्पष्ट (प्रथम) लग्न ४।१२।५६।२३

स्पष्ट दशम लग्न १।१२।०।११
६
चतुर्थलग्न ७।१२।०।११

७।१२। ०।११
४।१२।५६।२३
२।२६। ०।४८

६) २।२६। ०।४८(०।१४।५०।८ षष्ठांश
०
२ × ३० = ६०
२६
८६
६
२६
२४
५ × ६० = ३००
३०
० × ६०
= ००
४८
४८
४८
×

प्रथम लग्न	४।१२।५९।२३
	०।१४।५०। ८
सन्धि	४।२७।४९।३१
	०।१४।५०। ८
द्वितीय भाव	५।१२।३९।३९
	०।१४।५०। ८
सन्धि	५।२७।२९।४७
	०।१४।५०। ८
तृतीय भाव	६।१२।१९।५५
	०।१४।५०। ८
सन्धि	६।२७।१०।०३
	०।१४।५०। ८

	चतुर्थ भाव	७।१२।००।११
(तृ० सं० + १)	सं०	७।२७।१०।०३
(तृ० भा० + २)	पञ्चम भाव	८।१२।१९।५५
(द्वि० सं० + ३)	सन्धि	८।२७.२९।४७
(द्वि० भा० + ४)	षष्ठ भाव	९।१२।३९।३९
(प्र० सं० + ५)	सन्धि	९।२७।४९।३१
(प्र० भा० + ६) =	सप्तम भाव	१०।१२।५९।२३
(सं० + ६) =	सन्धि	१०।२७।४९।३१
(द्वि०भा० + ६) =	अष्टम भाव	११।१२।३९।३९
(सं० + ६) =	सन्धि	११।२७।२९।४७
(तृ० भा० + ६) =	नवम भाव	०।१२।१९।५५
(सन्धि + ६) =	सन्धि	०।२७।१०।०३
(चतु०भा० + ६) =	दशम भाव	१ ।१२। ० ।११
(सं० + ६) =	सन्धि	१।२७।१०।०३
(पं०भा० + ६) =	एकादशभाव	२।१२।१९।५५
(सं + ६) =	सन्धि	२।२७।२९।४७
(षष्ठ + ६) =	द्वादश भाव	३।१२।३९।३९
(सं० + ६) =	सन्धि	३।२७।४९।३१

विंशोपक साधन—

सन्धिखेटान्तरं कार्यं यच्छेषं नखताडितम् ।
भावसन्ध्यन्तरेणाप्तं तत्र विंशोपकं फलम् ॥ २९ ॥

सन्धि और ग्रह का अन्तर कर शेष को बीस से गुणाकर भाव और सन्धि के अन्तर से भाग देने पर विशोपक बल होता है ॥ २९ ॥

उदाहरण—जन्म-लग्न से चतुर्थ भाव में सूर्य ७।८।२०।४० राश्यादि है। चतुर्थ भाव की सन्धि ७।२७।१०।३ है। अतः दोनों के अन्तर १८।४९।२३ अंशादि को २० से गुणा किया। गुणनफल ३७६।२७।४० को विकला में परिणत कर भाव और सन्धि के अन्तर १५।१६।५२ के विकलात्मक मान ५४५९२ से भाग देने पर लब्धि २४।४८ सूर्य का विशोपक बल हुआ।

द्वादशभाव विचार

तन्वादयो भावबलं वदन्ति तत्स्वामिसम्पूर्णबलैः समेतः।
युक्तेऽथ दृष्टे शुभदृग्युते च क्रमेण तद्भावविवृद्धिकारी ॥ ३० ॥

तनु (प्रथम भाव) आदि द्वादश भावों के स्वामी अपने-अपने सम्पूर्ण बलों से युक्त होकर अपने अपने भाव में हों या भाव को देख रहे हों तथा भाव शुभग्रहों से युत अथवा दृष्ट हो तो उत्तरोत्तर भाव वृद्धिकारी होता है। इस प्रकार भावों का बल कहा जाता है ॥ ३० ॥

रूपं तथा वर्णविनिर्णयश्च चिह्नानि जातिर्वयसः प्रमाणम्।
सुखानि दुःखान्यपि साहसं च लग्ने विलोक्यं खलु सर्वमेतत् ॥ ३१ ॥

स्वरूप, शरीर का वर्ण निर्णय, चिह्न (लहसन, मस्सा आदि का) ज्ञान, जाति, आयुप्रमाण, सुख-दुःख, साहस इन सबका विचार लग्न (प्रथम भाव) से करना चाहिये ॥ ३१ ॥

स्वर्णादिधातुक्रयविक्रयश्च रत्नानि कोषोऽपि च संग्रहश्च।
एतत्समस्तं परिचिन्तनीयं धनाभिधाने भवने सुधीभिः ॥ ३२ ॥

स्वर्ण आदि धातुओं का क्रय-विक्रय, रत्न, कोष (खजाना) तथा विभिन्न वस्तुओं का संग्रह इन समस्त विषयों का विचार विद्वानों को धन नामक द्वितीय भाव से करना चाहिये ॥ ३२ ॥

सहोदराणामथ किङ्कराणां पराक्रमाणामुपजीविनां च।
विचारणा जातकशास्त्रविद्भिस्तृतीयभावे विनयेन कार्या ॥ ३३ ॥

सहोदर भाई, नौकर, पराक्रम तथा आश्रितजनों का विचार जातक शास्त्र के ज्ञाता को नियमानुसार करना चाहिये ॥ ३३ ॥

सुहृद्गृहग्रामचतुष्पदो वा क्षेत्राद्यमालोकनकं चतुर्थे।
दृष्टे शुभानां शुभयोगतो वा भवेत्प्रवृद्धिर्नियमेन तेषाम् ॥ ३४ ॥

मित्र, गृह, ग्राम, पशु, खेत आदि आस-पास[1] का विचार चतुर्थ भाव से करना चाहिये। भाव यदि शुभग्रहों से दृष्ट अथवा युत हो तो नियमानुसार भाव की वृद्धि होती है ॥ ३४ ॥

बुद्धिप्रबन्धात्मजमन्त्रविद्याविनेयगर्भस्थितिनीतिसंस्थाः ।
सुताभिधाने भवने नराणां होरागमज्ञैः परिचिन्तनीयम् ॥ ३५ ॥

बुद्धि, प्रबन्ध (लेखन), पुत्र, मन्त्र (गुप्त विद्या), विद्या (अध्ययन), शिष्य, गर्भ स्थिति तथा नीति सम्बन्धी मनुष्यों के विचार होराशास्त्र के पण्डित को सुतनामक (पञ्चम) भाव से करना चाहिये ॥ ३५ ॥

वैरिव्रातं क्रूरकर्मामयानां चिन्ता शङ्का मातुलानां विचारः ।
होरापारावारपारं प्रयातैरेतत्सर्वं शत्रुभावे विचिन्त्यम् ॥ ३६ ॥

शत्रु समूह, क्रूर कर्म, रोग, चिन्ता, शङ्का (भय), मामा (ननिहाल) इन सब का विचार, होरा रूपी समुद्र के पारगामी व्यक्ति को, शत्रु (षष्ठ) भाव से करना चाहिये ॥ ३६ ॥

रणाङ्गणं चापि वणिक्क्रिया च जायाविचारो गमनप्रमाणम् ।
शास्त्रप्रवीणेन विचारणीयं कलत्रभावे किल सर्वमेतत् ॥ ३७ ॥

युद्धक्षेत्र, व्यापार, स्त्री, यात्रा का समय इन समस्त विषयों का विचार शास्त्र में कुशल व्यक्ति को कलत्र (सप्तम) भाव से करना चाहिये ॥ ३७ ॥

नद्युत्तारात्पन्थवैषम्यं दुर्गं शस्त्रं चायुः सङ्कटञ्चेति सर्वम् ।
रन्ध्रस्थाने सर्वथा कल्पनीयं प्राचीनानामाज्ञया जातकज्ञैः ॥ ३८ ॥

नदी के उतार से मार्ग की विषमता (नदी नालों से युक्त कठिन मार्ग, समुद्री यात्रा), किला, शस्त्र, आयुसंकट आदि विषयों का विचार, दैवज्ञ को प्राचीन विद्वानों की आज्ञा से, अष्टम भाव से करना चाहिये ॥ ३८ ॥

धर्मक्रियायां हि मनःप्रवृत्तिर्भाग्योपपत्तिं विमलं च शीलम् ।
तीर्थप्रयाणं प्रणयः पुराणैः पुण्यालये सर्वमिदं प्रदिष्टम् ॥ ३९ ॥

धार्मिक क्रियाओं में मानसिक झुकाव, भाग्य की उपलब्धि, स्वच्छ स्वभाव, तीर्थयात्रा, पुराणों में अनुराग इन सबका विचार नवम भाव के अन्तर्गत कहा गया है ॥ ३९ ॥

व्यापारमुद्रानृपमानराज्यं प्रयोजनं चापि पितुस्तथैव ।
महत्फलाप्तिः खलु सर्वमेतद्राज्याभिधाने भवने विचार्यम् ॥ ४० ॥

1. अमा शब्द सामीप्य का द्योतक है।

व्यापार, मुद्रा (धन या अधिकार चिह्न), राजसम्मान, राज्य (अधिकार), आवश्यकता, पिता तथा महान् उपलब्धि इन सबका विचार राज्यनामक (दशम) भाव से करना चाहिये ॥ ४० ॥

गजाश्वहेमाम्बरच्छत्रजातमान्दोलिकामङ्गलमङ्गलानि ।
लाभः किलैषामखिलं विचार्यमेतत्तु लाभस्य गृहे गृहज्ञैः ॥ ४१ ॥

हाथी, घोड़ा, स्वर्ण, वस्त्र, छत्र, पालकी, शुभकार्य, सौभाग्य, लाभ इन समस्त विषयों का विचार, भाव जानने वालों को, एकादश भाव से करना चाहिये ॥३१॥

हानिर्दानं व्ययश्चापि दण्डो निर्बन्ध एव च ।
सर्वमेतद् व्ययस्थाने चिन्तनीयं प्रयत्नतः ॥ ४२ ॥

हानि, दान, व्यय, दण्ड, विवाद (मुकदमा आदि) इन सबका विचार प्रयास पूर्वक द्वादश भाव से करना चाहिये ॥ ४२ ॥

ग्रहों के फल--

मूर्त्यादयः पदार्था ज्ञायन्ते येन जन्तूनाम् ।
तदिदमधुना प्रवक्ष्ये भावाध्यायं विशेषेण ॥ ४३ ॥

प्राणियों के मूर्ति (शरीर, धन, मित्र) आदि पदार्थों का ज्ञान जिस विधि से होता है उस भावाध्याय को अब मैं विशेष रूप से कह रहा हूं ॥ ४३ ॥

द्वादश भावगत रवि फल

सवितरि तनुसंस्थे शैशवे व्याधियुक्तो
नयनगदसुदुःखी नीचसेवानुरक्तः ।
न भवति गृहमेधी दैवयुक्तो मनुष्यो
भ्रमति विकलमूर्तिः पुत्रपौत्रैर्विहीनः ॥ ४४ ॥

लग्न में सूर्य स्थित हो तो मनुष्य बाल्यावस्था में रोगी, होता है । नेत्र रोगों से पीड़ित, नीच व्यक्ति की सेवा में लीन गृहस्थाश्रम गुणों से रहित, भाग्य युक्त, पुत्र पौत्र से रहित तथा व्यग्रता के साथ भ्रमण करने वाला होता है ॥ ५४ ॥

धनगतदिननाथे पुत्रदारैर्विहीनः
कृशतनुरतिदीनो रक्तनेत्रः कुकेशः ।
भवति च धनयुक्तो लोहताम्रेण सत्यं
न भवति गृहमेधी मानवो दुःखभागी ॥ ४५ ॥

धन भाव में सूर्य हो तो व्यक्ति पुत्र और स्त्री से रहित, दुर्बल शरीर वाला, अत्यन्त दीन, लाल आँखों वाला, कुत्सित बालों वाला, लोहे और तांबे से धन पैदा करने वाला, व्यावहारिक ज्ञान से रहित तथा दुःखी होता है ॥ ४५ ॥

सहजभवनसंस्थे भास्करे भ्रातृनाशः
प्रियजनहितकारी पुत्रदाराभियुक्तः ।
भवति च धनयुक्तो धैर्ययुक्तः सहिष्णु-
विपुलधनविहारी नागरीप्रीतिकारी ॥ ४६ ॥

जन्म लग्न से तृतीय भाव में यदि सूर्य हो तो भाइयोंका नाश होता है। ऐसा व्यक्ति अपने प्रियजनों का हित करने वाला पुत्र, स्त्री एवं धन से युक्त, धैर्यवान्, सहिष्णु, अपार सम्पत्ति का उपभोग करने वाला तथा सभ्य एवं कुलीन स्त्रियों में प्रीति रखने वाला होता है ॥ ४६ ॥

विविधजनविहारी बन्धुसंस्थे दिनेशे
भवति च मृदुवक्ता गीतवाद्यानुरक्तः ।
समरशिरसि युद्धे नास्ति भङ्गः कदाचित्
प्रचुरधनकलत्रः पार्थिवानां प्रियश्च ॥ ४७ ॥

जिसके जन्म लग्न से चतुर्थ भाव में सूर्य हो तो वह व्यक्ति विविध व्यक्तियों के बीच विचरण करने वाला, मृदुभाषी, गीत-वाद्य में अनुराग रखने वाला, कभी भी युद्ध में पराजित न होने वाला, प्रभूत धन और स्त्रियों से युक्त, राजाओं का प्रिय पात्र होता है ॥ ४७ ॥

तनयगतदिनेशे शैशवे दुःखभागी
न भवति धनभागी यौवने व्याधियुक्तः ।
जनयति सुतमेकं चान्यगेहश्च शूर-
श्चपलमतिविलासी क्रूरकर्मा कुचेताः ॥ ४८ ॥

यदि पञ्चम भाव में सूर्य हो तो वह व्यक्ति बाल्यावस्था में दुःखी, युवावस्था में धन से रहित तथा रोगी होता है। एक ही पुत्र को जन्म देता है, दूसरों के घर में निवास करनेवाला, वीर, चञ्चल, बुद्धिवाला, विलासी, क्रूरकर्मा तथा दुष्ट हृदय वाला होता है ॥ ४८ ॥

अरिगृहगतभानौ योगशीलो मतिस्थो
निजजनहितकारी ज्ञातिवर्गप्रमोदी ।
कृशतनु गृहमेधी चारुमूर्तिविलासी
भवति च रिपुजेता कर्मपूज्यो दृढाङ्गः ॥ ४९ ॥

शत्रु स्थान (षष्ठ भाव) में यदि सूर्य हों तो मनुष्य योगी, स्थिर बुद्धि वाला आत्मीय जनों का हितैषी, अपनी जाति एवं कुल को आनन्दित करने वाला, दुर्बल शरीर वाला, अतिथि सत्कार में दक्ष, सुन्दर स्वरूप वाला, विलासी, शत्रु को जीतने वाला, अपने कार्यों द्वारा सम्मानित तथा दृढ शरीर वाला होता है ॥४९॥

युवतिभवनसंस्थे भास्करे स्त्रीविलासी
न भवति सुखभागी चञ्चलः पापशीलः।
उदरसमशरीरो नातिदीर्घो न ह्रस्वः
कपिलनयनरूपः पिङ्गकेशः कुमूर्त्तिः॥ ५० ॥

यदि जन्म लग्न से सप्तम भवन में सूर्य हो तो वह व्यक्ति स्त्री में आसक्त, सुख से रहित, चञ्चल, पाप कर्म में रत, उदर के समान शरीर वाला, (मध्यम कद) न अधिक बड़ा न छोटा, पीली आँखों एवं स्वरूप वाला, भूरे बालों, तथा विकराल स्वरूप वाला होता है॥ ५० ॥

निधनगतदिनेशे चञ्चलस्त्यागशीलः
किल बुधगणसेवी सर्वदा रोगयुक्तः।
विकलबहुलभाषी भाग्यहीनो विशीलो
रतिविहितकुचैली नीचसेवी प्रवासी॥ ५१ ॥

जन्म लग्न से अष्टम भाव में यदि सूर्य गया हो तो जातक चञ्चल, त्यागी, विद्वत् समाज का सेवक, सदैव रोगी, अधिक झूठ बोलने वाला, भाग्यहीन, शील से हीन, रति में उपयोगी मलिन वस्त्र वाला, नीचों की सेवा करने वाला तथा प्रवासी (परदेश में निवास करने वाला) होता है॥ ५१ ॥

ग्रहगतदिननाथे सत्यवादी सुकेशः
कुलजनहितकारी देवविप्रानुरक्तः।
प्रथमवयसि रोगी यौवने स्थैर्ययुक्तो
बहुतरधनयुक्तो दीर्घजीवी सुमूर्त्तिः॥ ५२ ॥

जिसके जन्म लग्न से नवम भाव में सूर्य गया हो तो वह सत्य बोलने वाला, सुन्दर बालों वाला, कुटुम्बीजनों का हितचिन्तक, देवता और ब्राह्मणों से अनुराग रखने वाला, बाल्यावस्था में रोगी, युवावस्था में स्थिर (अर्थात् स्वस्थ) बहुत अधिक धनवान्, दीर्घ काल तक जीवित रहने वाला तथा सुन्दर होता है॥ ५२ ॥

दशमभवनसंस्थे तीव्रभानौ मनुष्यो
गुणगणसुखभागी दानशीलोऽभिमानी।
मृदुलचपलशुचियुक्तो नृत्यगीतानुरागी
नरपतिरतिपूज्यः शेषकाले च रोगी॥ ५३ ॥

तीक्ष्ण रश्मि वाले (सूर्य) जिसके दशम भाव में हों वह मनुष्य विविध गुणों एवं सुखों से युक्त, दानी, अभिमानी, कोमल, चञ्चल एवं पवित्र, नाच-गाना में अनुराग रखने वाला, अत्यधिक सम्मानित राजा (राजनेता) तथा अन्तिम समय में रोगी होता है॥ ५३ ॥

बहुतरधनभागी चायसंस्थे दिनेशे नरपतिगृहसेवी भोगहीनो गुणज्ञः ।
कृशतनुधनयुक्तःकामिनीचित्तहारी भवति चपलमूर्तिर्जातिवर्गप्रमोदी ॥ ५४ ॥

एकादश भाव में सूर्य स्थित हो तो अत्यधिक धनवान्, राजघराने का सेवक (अथवा राजकीय सेवारत) भोग से रहित, गुणवान्, दुर्बल शरीर वाला, धन से युक्त, सुन्दर स्त्रियों का प्रिय, चञ्चल स्वभाव वाला तथा अपनी जाति एवं समाज को आनन्दित करने वाला होता है ॥ ५४ ॥

जडमतिरतिकामी चान्ययोषिद्विलासी
विहगगणविघाती दुष्टचेताः कुमूर्तिः ।
नरपति धनयुक्तो द्वादशस्थे दिनेशे
कथकजनविरोधी जंघरोगी कृशाङ्गः ॥ ५५ ॥

यदि द्वादश भाव में सूर्य हो तो व्यक्ति जड़ बुद्धि वाला, अत्यधिक कामी, परस्त्री में आसक्त, पक्षियों का वध करने वाला, दुष्ट हृदय वाला, कुरूप, राजकीय सम्पत्ति से युक्त, कथकजन (कथाकार या झगड़ालू) का विरोधी, जंघा से रोगी तथा कृश (दुर्बल) शरीर वाला होता है ॥ ५५ ॥

द्वादश भावगत चन्द्रफल

तनुगतकुमुदेशे वित्तपूर्णः सुखी स्याद्
बहुतरधनभोगी वीर्ययुक्तः सुदेहः ।
भवति च यदि नीचे[1] चन्द्रमाः पापगो वा
जडमतिरतिदीनः स्यात्तदा वित्तहीनः ॥ ५६ ॥

चन्द्रमा यदि लग्न में हो तो जातक धन से पूर्ण, सुखी, अत्यधिक धन का उपभोग करने वाला, बलवान एवं सुन्दर शरीर वाला होता है। यदि चन्द्रमा नीच राशि में हो अथवा पापग्रह की राशि में हो तो व्यक्ति जड़ बुद्धि वाला, अत्यन्त दीन तथा धन से रहित होता है ॥ ५६ ॥

धनगतहरिणाङ्के त्यागशीलो मतिज्ञो
निधिरिव धनपूर्णो चञ्चलात्मा सुदृष्टः ।
जनयति बहुसौख्यं कीर्तिशाली सहिष्णु-
र्मुखकमलविलासो[2] चन्द्रतुल्यस्वरूपः ॥ ५७ ॥

जिसके जन्म लग्न से दूसरे भाव में चन्द्रमा हो वह त्यागी, बुद्धिमान्, निधि[3] की तरह धन से परिपूर्ण, चञ्चल चित्त वाला, दर्शनीय, अधिक सुख उत्पन्न करने

1. नीचश्चन्द्रमा, 2. युवतिजन विलासी पाठान्तरम् ।
3. निधि नव होती हैं—पद्मोऽस्त्रियां महापद्मः शंखो मकरकच्छपौ ।
मुकुन्दकुन्दनीलाश्च खर्वश्च निधयो नव ॥ शब्दार्णवः

वाला, यशस्वी, सहनशील, कमल के समान (सुन्दर) मुख का आनन्द लेने वाला तथा चन्द्रमा के सदृश स्वरूपवान् होता है ॥ ५७ ॥

शशिनि सहजसंस्थे पापगेहे च नित्यं
न भवति बहुभाषी भ्रातृहर्तारिमूर्तिः ।
भवति च सुखभोगी सौम्यगे रात्रिनाथे
सकलधननिधानं शास्त्रकाव्यप्रमोदी ॥ ५८ ॥

जन्मकालिक चन्द्रमा यदि तृतीय भाव में पाप ग्रह की राशि में हो तो जातक प्रतिदिन कम बोलने वाला, भाई का हरण करने वाला, शत्रुस्वरूप होता है। यदि शुभग्रह की राशि में हो तो सुख का भोग करने वाला, सभी प्रकार की सम्पत्तियों से परिपूर्ण, शास्त्र तथा काव्य से आनन्दित होता है (अर्थात् काव्य शास्त्र का प्रेमी होता है।) ॥ ५८ ॥

बहुतरवसुपूर्णो रात्रिनाथे चतुर्थे
प्रियजनहितकारो योषितां प्रीतिकारी ।
सततमिह स रोगी मांसमत्स्यादिभोगी
गजतुरगसमेतः क्रीडते हर्म्यपृष्ठे ॥ ५९ ॥

चन्द्रमा यदि चतुर्थभाव में हो तो विविध सम्पत्तियों से सम्पन्न, प्रियजनों का हित करने वाला, स्त्रियों का प्रेमी, निरन्तर रोगयुक्त, मांस तथा मछली भक्षण करने वाला, हाथी घोड़े से युक्त तथा हर्म्यपृष्ठ (महल) के ऊपर क्रीडा करने वाला होता है ॥ ५९ ॥

तनयगतशशाङ्के वित्तपूर्णः सुखी स्याद्-
बहुतरसुतयुक्तो वश्यनारीसमेतः ।
यदि भवति शशाङ्कः क्षीणपापारिगेहे
युवतिसुखसमूहैः पुत्रपौत्रैर्विहीनः ॥ ६० ॥

पञ्चम भाव में चन्द्रमा स्थित हो तो जातक धन से पूर्ण, सुखी, अधिक सन्तान वाला, मनोनुकूल स्त्री से युक्त होता है। यदि चन्द्रमा क्षीण हो, पापग्रह अथवा शत्रुग्रह की राशि में हो तो स्त्रीजन्य सुखों से, पुत्र एवं पौत्रों से रहित होता है ॥ ६० ॥

रिपुगृहगशशाङ्के क्षीणतानाशकारी
न भवति बहुभोगी व्याधिदुःखस्य दाता ।
यदि गृहमथ तुङ्गं पूर्णदेहः शशाङ्को
बहुतरसुखदाता स्यात्तदा मानवानाम् ॥ ६१ ॥

चतुर्थभाव में स्थित चन्द्रमा यदि क्षीण हों तो वह नाश करने वाला होता है (अर्थात् अनिष्टकर होता है ।), सुखभोग से रहितकर व्याधि एवं दुख प्रदान करता है। यदि अपने गृह (कर्क राशि) अथवा उच्च (वृष राशि) में हो तथा पूर्ण हो तो मनुष्यों को बहुत सुख देने वाला होता है ॥ ६१ ॥

विमलवपुषि चन्द्रे सप्तमस्थे मनुष्यो
रुचिरयुवतिनाथः काञ्चनाढ्यः सुदेही ।
शशिनि कृशशरीरे पापगे पापदृष्टे
न भवति सुखभागी रोगिपत्नीपतिः स्यात् ॥ ६२ ॥

पूर्ण चन्द्रमा यदि सप्तम भाव में हो तो मनुष्य सुन्दर स्त्री का स्वामी, स्वर्ण से युक्त तथा सुन्दर शरीर वाला होता है। यदि क्षीण चन्द्रमा सप्तम भाव में पापग्रह की राशि में हो अथवा पापग्रह से दृष्ट हो तो वह सुखी नहीं होता है तथा उसकी पत्नी रोगिणी होती है ॥ ६२ ॥

निधनभवनसंस्थे शीतरश्मौ नाराणां
निधनमचिरकाले पापगेहे ददाति ।
निजभृगुगुरुगेही सौम्यगेहो च पूर्णो
जनयति बहुदुःखं श्वासकासादिरोगैः ॥ ६३ ॥

अष्टम भाव में पापग्रह की राशि में यदि चन्द्रमा हो तो शीघ्र ही (अल्प आयु में) मृत्युकारक होता है। यदि अपनी राशि (कर्क), शुक्र, गुरु तथा बुध की (२, ७, ९, १२, ३, ६) राशियों में गया हुआ चन्द्रमा पूर्ण बलवान् हो तो श्वांस-कास (दमा, खाँसी) आदि रोगों से बहुत कष्ट उत्पन्न कराता है ॥ ६३ ॥

नवमभवनसंस्थे शीतरश्मौ प्रपूर्णे
बहुतरसुखभुक्त्या कामिनीप्रीतिकारी ।
न भवति धनभागी क्षीणगे नीचगे वा
विमलपथविरोधी निर्गुणो मूढचेताः ॥ ६४ ॥

नवम भाव में स्थित चन्द्रमा यदि पूर्ण हो तो व्यक्ति विविध सुखों के उपभोग से स्त्रियों द्वारा अनुराग प्राप्त करता है (अर्थात् उसके ऐश्वर्य से स्त्रियां आकृष्ट होती हैं)। यदि उसी भाव में चन्द्रमा क्षीण हो अथवा नीच राशिगत हो तो जातक निर्धन, सुमार्ग का विरोधी, गुणहीन तथा मूर्ख होता है ॥ ६४ ॥

बहुतरधनभागी कर्मसंस्थे हिमांशौ
विविधधननिधानं पुत्रदारादिपूर्णः ।
रिपुकुटिलगृहस्थे कासरोगः कृशाङ्गः
पितृयुवतिधनाढ्यः कर्महीनो मनुष्यः ॥ ६५ ॥

दशम भाव में यदि चन्द्रमा हो तो बहुत अधिक धन का अधिकारी विविध प्रकार की (चल एवं स्थिर) सम्पत्ति का खजाना तथा स्त्री-पुत्र आदि से परिपूर्ण होता है। यदि चन्द्रमा शत्रुग्रह की राशि में हो अथवा वक्र ग्रह की राशि में हो तो कास (श्वास, खांसी आदि) रोगों से पीड़ित, दुर्बल शरीर वाला, पिता एवं स्त्री के धनों से युक्त तथा कर्महीन होता है ॥ ६५ ॥

बहुतरधनभोगी चायसंस्थे शशाङ्के
प्रचुरसुखसमेतो दारभृत्यादियुक्तः।
शशिनि कृशशरीरे नीचपापारिगेहे
न भवति सुखभागी व्याधितो मूढचेताः ॥ ६६ ॥

यदि ग्यारहवें भाव मे चन्द्रमा स्थित हो तो जातक अत्यधिक सुखों से सम्पन्न, स्त्री एवं सेवकों से युक्त होता है।

यदि चन्द्रमा क्षीण होकर नीच (वृश्चिक) राशि में हो, पापग्रह अथवा शत्रुग्रह की राशि में गया हो तो वह व्यक्ति सुख से रहित, रोगी तथा मूर्ख होता है ॥६६॥

व्ययनिलयनिवेशे रात्रिनाथे कृशाङ्गः
सततहिमसरोगी क्रोधनो निर्धनश्च।
निजबुधगुरुगेहे दान्तिकस्त्यागशीलः
कृशतनुसुखभोगी नीचसङ्गी सदैव ॥ ६७ ॥

द्वादश भवन में यदि चन्द्रमा का निवास हो तो मनुष्य पतले अङ्गों वाला, निरन्तर शीत रोग से पीड़ित, क्रोधी तथा निर्धन होता है। यदि उसी भाव में चन्द्रमा अपनी राशि (४), बुध की राशि (३,६) तथा गुरु की राशि (६,१२) में स्थित हो तो दुर्बल शरीर वाला, सुखी तथा सदैव नीचों का साथी होता है ॥६७॥

द्वादश भावगत भौम फल—

उदरदशनरोगी शैशवे लग्नभौमे
पिशुनमतिकृशाङ्गः पापवित्कृष्णरूपः।
भवति चपलचित्तो नीचसेवी कुचैलः
सकलसुखविहीनः सर्वदा पापशीलः ॥ ६८ ॥

लग्न (प्रथम भाव) में भौम हो तो बाल्यावस्था में उदर तथा दाँतों से रोगी होता है। चुगली करने वाला, दुर्बल, पाप कर्मों का ज्ञाता, काले रंग का चञ्चल, नीचों का सेवक, मलिन वस्त्र धारण करने वाला, समस्त सुखों से हीन तथा सदैव पाप कर्म करने वाला होता है ॥ ६८ ॥

धनगतपृथिवीजे धातुवादी प्रवासी
ऋणधनकृतचित्तो द्यूतकर्ता सहिष्णुः।
कृषिकरणसमर्थो विक्रमे मर्म्मचित्तः
कृशतनुसुखभागी मानवः सर्वदैव ॥ ६९ ॥

धन भाव में यदि मंगल हो तो मनुष्य धातुओं का ज्ञाता, परदेश वासी, ऋण द्वारा धन संग्रह में लीन (अथवा आय-व्यय, हानि-लाभ में दत्त चित्त, सट्टा करने वाला), जुआरी, सहनशील, कृषि कर्म में समर्थ, पराक्रम सम्बन्धी कार्यों में आनन्दित रहने वाला, दुर्बल, तथा सदा सुखी होता है ॥ ६९ ॥

सहजभवनसंस्थे भूमिजे भ्रातृहर्त्ता
कृशतनुसुखभागी तुङ्गभौमो विलासी।
धनसुखनरहीनो नीचपापारिगेहे
वसति सकलपूर्णो मन्दिरे कुत्सिते च ॥ ७० ॥

तृतीय भवन में यदि मंगल हो तो भाई का हरण करने वाला, दुबला-पतला तथा सुखी व्यक्ति होता है। भौम अपनी उच्च (मकर) राशि में हो तो विलासी होता है। यदि नीच राशि (कर्क) पाप तथा शत्रुग्रह की राशियों में गया हो तो वह धन-जन एवं सुखों से हीन होता है। सभी प्रकार से पूर्ण होने पर भी निन्दित गृह (अड्डा) में रहता है ॥ ७० ॥

जडमतिरतिदीनो बन्धुसंस्थे च भौमे
न भवति कुल आर्ये बन्धुहीनेन दुःखी।
भ्रमति सकलदेशे नीचसेवानुरक्तः
परवशपरदारे लुब्धचित्तः सदैव ॥ ७१ ॥

चतुर्थ भाव में यदि भौम हो तो जातक श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न नहीं होता, बन्धुओं के अभाव से दुःखी होता है। सदैव पराश्रित, परस्त्री में आसक्त तथा नीचों की सेवा में लीन रहता हुआ समस्त देशों में भ्रमण करता है ॥ ७१ ॥

तनयभवनसंस्थे भूमिपुत्रे मनुष्यो
भवति तनयहीनः पापशीलोऽतिदुःखी।
यदि निजगृहतुङ्गे वर्तते भूमिपुत्रः
कृशमलिनशरीरं पुत्रमेकं ददाति ॥ ७२ ॥

पञ्चम भाव में मंगल यदि स्थित हो तो वह मनुष्य सन्तानहीन, पापी तथा अत्यन्त दुःखी होता है। यदि मंगल अपनी राशि या उच्चराशि में स्थित हो तो दुर्बल तथा मलिन शरीर वाला एक पुत्र देता है ॥ ७२ ॥

रिपुगृहगतभौमे सङ्गरे मृत्युभागी
सुतधनपरिपूर्णस्तुङ्गगे सौख्यभागी ।
रिपुगणपरिदृष्टे नीचगे क्षोणिपुत्रे
भवति विकलमूर्त्तिः कुत्सितः क्रूरकर्मा ॥ ७३ ॥

षष्ठ भाव में यदि मंगल गया हो तो संग्राम में मृत्यु होती है। यदि मंगल छठें भाव में अपनी उच्च राशि में हो तो पुत्र और धन से परिपूर्ण तथा सुखी होता है। नीच राशि में स्थित मंगल यदि शत्रु ग्रहों से दृष्ट हो तो विक्षिप्त (अथवा अङ्गहीन), निन्दित एवं क्रूर कार्य (हत्या आदि) करनेवाला होता है ॥ ७३ ॥

मुनिगृहगतभौमे नीचसंस्थेऽरिगेहे
युवतिमरणदुःखं जायते मानवानाम् ।
मकरनिजगृहस्थे नान्यपत्नीश्च धत्ते
चपलमतिविशालां दुष्टचित्तां विरूपाम् ॥ ७४ ॥

सप्तम भाव गत भौम यदि नीच राशि में या शत्रु राशि में हो तो मनुष्यों को स्त्री की मृत्यु से कष्ट होता है। यदि मंगल उसी स्थान में (अपनी उच्च) मकर राशि में अथवा अपने घर (मेष, वृश्चिक) में हो तो पुरुष चञ्चल, विशाल शरीर एवं दुष्ट हृदयवाली, कुरूपा स्त्री का सेवन करता है ॥ ७४ ॥

प्रलयभवनसंस्थे मङ्गले क्षीणनीचे
व्रजति निधनभावं नीरमध्ये मनुष्यः ।
धनुकिरणिचरोऽर्कः सर्वदा चैव भोगी
करपदगसुनीलो मृत्युलोकं प्रयाति ॥ ७५ ॥

यदि अष्टम भवन में मंगल निर्बल होकर अपनी नीच राशि (कर्क) में स्थित हो तो मनुष्य जल में डूब कर मरता है। यदि धनु और मीन राशि में सूर्य हो तो सदैव भोग करने वाला हाथ एवं पैर दोनों से चलने वाला नीले रंग का होता है तथा (शीघ्र ही) मृत्युलोक चला जाता (अर्थात् मर जाता) है।[1] ॥७५॥

नवमभवनसंस्थे क्षोणिपुत्रेऽतिरोगी
नयनकरशरीरः पिङ्गलः सर्वदैव ।
बहुजनपरिपूर्णो भाग्यहीनः कुचैलो
विकलजनसुवेशो शीलविद्यानुरक्तः ॥ ७६ ॥

१. इस श्लोक का पाठान्तर "धनु निकटचरेऽजे सर्वदा चैव भोगी।" है।
इसका अभिप्राय है—धनु राशि के आसन्न जो राशि अर्थात् वृश्चिक एवं मकर तथा मेष राशि में भौम हो तो भोगी होता है। अर्थ संगत है। मेष, वृश्चिक भौम का गृह है तथा मकर उच्च स्थान है अतः संगति ठीक है।

नवम भाव में यदि मङ्गल हो तो जातक अत्यन्त रोगी, होता है। उसके हाथ, नेत्र एवं शरीर सदैव पीला होता है। बहुत जनों से परिपूर्ण, भाग्यहीन, मलिन वस्त्र धारण करनेवाला, विक्षिप्त, शीलवान् तथा विद्या में अनुराग रखने वाला होता है ॥ ७६ ॥

दशमगतमहीजे दान्तिकः कोषहीनो
निजकुलजयकारी कामनीचित्तहारी।
[1]जठरसमशरीरो भूमिजीवोपकोपी-
द्विजगुरुजनभक्तो नातिदीर्घो[2] न ह्रस्वः ॥ ७७ ॥

दशम भाव में मंगल हो तो इन्द्रियों का दमन करने वाला कोषहीन (निर्धन), अपने कुल का मान बढ़ाने वाला, स्त्रियों का चित्त हरने वाला (मोहक), उदर के समान सम शरीर वाला, भूमि (खेती-बारी, भूमि सम्बन्धी व्यापार) से जीविका पाने वाला, क्रोधी, ब्राह्मण एवं गुरुजनोंका भक्त, न अधिक लम्बा न छोटा अर्थात् मध्यम कद का होता है ॥ ७७ ॥

सुरजनहितकारी चायसंस्थे च भौमे
नृप इव गृहमेधी पीडितः कोपपूर्णः।
भवति च यदि तुङ्गे लोकसौभाग्ययुक्तो
धनकिरणनियुक्तः पुण्यकामार्थलोभी ॥ ७८ ॥

जिसके ग्यारहें भाव में मंगल हो वह सुरजनों (देवतुल्य सत्पुरुषों) का हितैषी, राजा के समान गृह की व्यवस्था वाला, पीड़ा युक्त तथा क्रोधी होता है। यदि मंगल उसी भाव में अपनी उच्च राशि (मकर) में हो तो लोक-सौभाग्य (सामाजिक प्रतिष्ठा) से युक्त, धनी, तेजस्वी, धर्म, अर्थ और काम का लोभी होता है ॥ ७८ ॥

परधनहरणेच्छुः सर्वदा चञ्चलाक्ष-
श्चपलमतिविहारी हास्ययुक्तः प्रचण्डः।
भवति च सुखभागी द्वादशस्थे च भौमे
परयुवतिविलासी साक्षिकः कर्मपूरः ॥ ७९ ॥

द्वादश भाव में मंगल हो तो वह व्यक्ति दूसरों का धन छीनने का इच्छुक सदैव चञ्चल नेत्रों एवं चञ्चल बुद्धि वाला, विनोदी (अधिक हँसने वाला), उग्र, सुखी, परस्त्री का उपभोग करने वाला, प्रमाण प्रस्तुत करने वाला तथा कार्य को पूर्ण करने वाला होता है ॥ ७९ ॥

१. जरठ पाठान्तरम्। २. नीचो मूल पाठः।

द्वादश भावगत बुध फल

तनुगतशशिपुत्रे कान्तिमांश्चातिहृष्टो
विमलमतिविशालः पण्डितस्त्यागशीलः।
मितमृदुशुचिभोगी सत्यवादी विलासो
बहुतरसुखभागी सर्वकालप्रवासी ॥ ८० ॥

लग्न में बुध हो तो जातक तेजस्वी, हृष्ट पुष्ट, निर्मल एवं विशाल बुद्धि वाला, विद्वान्, त्यागी, मीठा एवं पवित्र स्वल्प आहार ग्रहण करने वाला, सत्य वक्ता, विलासी अत्यधिक सुख भोग करने वाला तथा सदैव परदेश में निवास करने वाला होता है ॥ ८० ॥

भवति च पितृभक्तः सुस्थितः पापभीरु-
र्मृदुतनुखररोमा दीर्घकेशोऽतिगौरः।
धनगतिशशिसूनौ सत्यवादी विहारी
बहुतरवसुभागी सर्वकालप्रवासी ॥ ८१ ॥

धन भाव में बुध गया हो तो व्यक्ति पिता का भक्त, सुव्यवस्थित, पाप से भयभीत, कोमल शरीर, कठोर रोम एवं लम्बे बालों वाला, अत्यन्त गौर, सत्य वक्ता, विहार करने वाला, अत्यधिक धन का स्वामी तथा सदैव परदेश में रहने वाला होता है ॥ ८१ ॥

साहसी निजजनैः परियुक्तश्चित्तशुद्धिरहितो हतसौख्यः।
मानवः कुशलतेप्सितकर्त्ता शीतभानुतनयेऽनुजसंस्थे ॥ ८२ ॥

भ्रातृ भाव (तीसरे घर) में यदि बुध हो तो साहसी, आत्मीय लोगों से युक्त, मलिन हृदय वाला, सुख से हीन, तथा अपने अभीष्ट कार्य की सिद्धि में निपुण व्यक्ति होता है ॥ ८२ ॥

बहुतरधनपूर्णो भ्रातृहर्त्ता[1] च पापे
बहुतरबहुपत्नीपूर्णगेहः [2]स्वतुङ्गे।
तरलमतिरलज्जः क्षीणजंघः कृशाङ्गः
शिशुवयसि च रोगी बन्धुसंस्थे कुमारे ॥ ८३ ॥

चतुर्थ भाव मे पापग्रह की राशि में या पाप युक्त बुध स्थित हो तो मनुष्य धन-धान्य से परिपूर्ण, भाई का (अंश) हरण करने वाला होता है। यदि उसी स्थान में बुध अपनी उच्च (कन्या) राशि में हो तो वह बहुत सी स्त्रियों से पूर्ण गृह का स्वामी, दयालु, निर्लज्ज, रुग्ण जांघों एवं दुर्बल शरीर वाला तथा बाल्य-काल में रोगी होता है ॥ ८३ ॥

१. हन्ता पाठान्तरम्। २. पूर्णगेहे स्वतुङ्गे। पूर्वपाठः।

तनयमन्दिरगे शशिनन्दने सुतकलत्रयुतः सुखभाजनम् ।
विकचपङ्कजचारुमुखः सुखी सुरगुरुद्विजभक्तियुतः शुचिः ॥ ८४ ॥

पञ्चम भाव में बुध हो तो वह व्यक्ति पुत्र एवं स्त्री से युक्त सुख भोग करने वाला, विकसित कमल के समान सुन्दर मुख वाला, सुखी, देवता, गुरु एवं ब्राह्मण में भक्ति रखने वाला तथा पवित्रात्मा होता है ॥ ८४ ॥

अरिनिकेतनवर्त्तिशशाङ्कजो रिपुकुलाद्भयदो यदि वक्रगः ।
यदि च पुण्यगृहे शुभवीक्षितो रिपुकुलं विनिहन्ति शुभप्रदः ॥ ८५ ॥

षष्ठ भाव में स्थित बुध यदि वक्री हो तो शत्रु पक्ष से भय उत्पन्न कराने वाला होता है। यदि बुध शुभ ग्रहों की राशि में स्थित हो तो शत्रुकुल को नाश करने वाला तथा शुभकारक होता है ॥ ८५ ॥

तुरगभावगते हरिणाङ्कजे भवति चञ्चलमध्यनिरीक्षितः ।
विपुलवंशभवप्रमदापतिः स च भवेच्छुभगे शशिवंशजे ॥ ८६ ॥

सप्तम भाव में बुध हो तो चञ्चल एवं मन्द दृष्टि होती है। यदि शुभग्रह की राशि में बुध हो तो वह व्यक्ति विशिष्ट कुलीन परिवार में उत्पन्न कन्या का पति होता है ॥ ८६ ॥

निधनवेश्मनि सत्ययुतो बुधे[1] निधनदोऽतिथिमण्डन एव च ।
यदि च पापयुते रिपुगेहगे मदनकाम्यजवेन पतत्यधः ॥ ८७ ॥

अष्टम भाव में बुध हो तो मनुष्य सत्यवादी, कृपण तथा अतिथियों का स्वागत करने वाला होता है। यदि बुध पापग्रह से युक्त हो अथवा शत्रुराशि में स्थित हो तो कामवासना के प्रबल वेग से मनुष्य का अधःपतन होता है ॥ ८७ ॥

नवमसौम्यगृहे शशिनन्दने धनकलत्रसुतेन समन्वितः ।
भवति पापयुते विपथस्थितः श्रुतिविमन्दकरः शशिजोद्यमी ॥ ८८ ॥

नवम भाव में शुभग्रहों की राशि में यदि बुध हो तो जातक धन, स्त्री और पुत्र से युक्त होता है। यदि पापग्रहों की राशि में स्थित हो तो कुमार्ग पर चलने वाला वेदनिन्दक तथा उद्यमी पुरुष होता है ॥ ८८ ॥

गुरुजनेन हिते निरतो जनो बहुधनो दशमे शशिनन्दने ।
निजभुजार्जितवित्ततुरङ्गमो बहुधनैर्नियतो मितभाषणः ॥ ८९ ॥

दशम भाव में यदि बुध हो तो गुरुजनों (वरिष्ठ लोगों) द्वारा मनुष्य हितकार्य में लगाया जाता है तथा वह धनवान, अपने बाहुबल से धन एवं घोड़ा अर्जित करने वाला, धनाढ्य तथा सीमित भाषण करने वाला होता है ॥ ८९ ॥

---

१. शुभो मूलपाठः ।

श्रुतिमतिर्निजवंशहितः कृशो बहुधनप्रमदाजनवल्लभः ।
रुचिरनीलवपुर्गुणलोचनो भवति चायगते शशिजे नरः ॥ ९० ॥

ग्यारहवें भाव में बुध हो तो जातक वेद का अनुयायी, अपने कुल का हित-चिन्तक, दुर्बल, अधिक धन एवं स्त्रियों का स्वामी, सुन्दर नील वर्ण की शरीर वाला तथा गुणग्राही नेत्रों वाला होता है ॥ ९० ॥

भवति च व्ययगे शशिनन्दने विकलमूर्तिधरो धनवर्जितः ।
परकलत्रधने धनचित्तवान् व्यसनदूररतः कृतकः सदा ॥ ९१ ॥

यदि बारहवें भाव में बुध हो तो मनुष्य विक्षिप्त स्वरूपवाला (अथवा विकलाङ्ग), निर्धन, परायी स्त्री एवं धन में आसक्त, स्वयं धनवान्, व्यसन् (नशा) से रहित तथा सदैव कृतज्ञ होता है ॥ ९१ ॥

द्वादश भावगत गुरु फल

विविधवस्त्रविपूर्णकलेवरः कनकरत्नधनः प्रियदर्शनः ।
नृपतिवंशजनस्य च वल्लभो भवति देवगुरौ तनुगे नरः ॥ ९२ ॥

देवगुरु (बृहस्पति) के लग्न में स्थित होने से मनुष्य विविध वस्त्रों से परिपूर्ण शरीर वाला, सोना तथा रत्नों से धनवान्, देखने में सुन्दर, राजाओं के वंशजों (राजपरिवार) का अत्यन्त प्रिय होता है ॥ ९२ ॥

सुरगुरौ धनमन्दिरसंश्रिते प्रमुदिते रुचिरप्रमदापतिः ।
भवति मानधनो बहुमौक्तिकैर्गतवसुर्भविता प्रसवाह्निके ॥ ९३ ॥

बृहस्पति धन (द्वितीय) भाव में मुदितावस्था[1] में हो तो जातक सुन्दर स्त्री का पति होता है। बहुत अधिक मोतियों द्वारा मानी एवं धनी होता है। परन्तु जन्म के दिन (समय) वह निर्धन रहता है। (अर्थात् जन्म के समय निर्धन पश्चात् धनवान् होता है) ॥ ९३ ॥

सहजमन्दिरगे च बृहस्पतौ भवति बन्धुगतार्थसमन्वितः ।
कृपणतामपि गच्छति कुत्सिते धनयुतोऽपि सदा धनहानिमान् ॥ ९४ ॥

तृतीय भाव में बृहस्पति हो तो जातक का धन भाइयों के हाथ में होता है। वह बुरे कार्यों में कृपणता दिखलाता है। धन से युक्त होते हुये भी सदैव धन-हानि ही देखता है ॥ ९४ ॥

सम्माननानाधनवाहनाद्यैः सञ्जातहर्षः पुरुषः सदैव ।
नृपानुकम्पासमुपात्तसम्पद्दम्भोलिभृन्मन्त्रिणि भूतलस्थे ॥ ९५ ॥

---

१. अपनी उच्च राशि में दीप्त, स्व राशि में स्वस्थ, मित्र की राशि में मुदित, शुभ वर्ग में शान्त, उदित ग्रह की राशि में शक्त, अस्तग्रह की राशि में सुप्त, नीच राशि में दीन तथा शत्रु राशि में पीड़ित अवस्था होती है।

जिसके जन्मलग्न से चौथे भाव में बृहस्पति हो वह विविध सम्पत्तियों एवं वाहनों द्वारा सम्मान प्राप्त करता है, निरन्तर प्रसन्न रहता है तथा राजाओं की कृपा से सम्पत्ति अर्जित करता है ॥ ९५ ॥

सुहृदयश्च सुहृज्जनवन्दितः सुरगुरौ सुतगेहगते नरः ।
विपुलशास्त्रमतिः सुखभाजनं भवति सर्वजनप्रियदर्शनः ॥ ९६ ॥

सुत (पञ्चम) भाव में बृहस्पति गया हो तो वह मनुष्य सहृदय एवं मित्रगणों से आदर प्राप्त, अनेक शास्त्रों का ज्ञाता, सुखी तथा सभी लोगों का प्रिय एवं अपने दर्शन से आनन्दित करने वाला होता है ॥ ९६ ॥

करिहयैश्च कृशाङ्गतनुर्भवेज्जयति शत्रुकुलं रिपुगे गुरौ ।
रिपुगृहे यदि वक्रगते गुरौ रिपुकुलाद्भयमातनुते विभुः ॥ ९७ ॥

शत्रुभाव (षष्ठ) में गुरु हो तो जातक दुबले-पतले शरीरवाला, हाथी एवं घोड़ों द्वारा शत्रुकुल को जीतने वाला होता है। षष्ठ भाव में गुरु यदि वक्री हो तो वह शत्रु-कुल से भय प्राप्त करता है ॥ ९७ ॥

युवतिमन्दिरगे सुरयाजके नयति भूपतितुल्यसुखं जनः ।
अमृतराशिसमानवचः सुधीर्भवति चारुवपुः प्रियदर्शनः ॥ ९८ ॥

सप्तम भाव में बृहस्पति हो तो मनुष्य राजा के समान सुख प्राप्त करता है। अमृतराशि के समान मधुर बोलने वाला, विद्वान, सुन्दर शरीर वाला तथा देखने में प्रिय होता है ॥ ९८ ॥

विमलतीर्थकरश्च बृहस्पतौ निधनगे न मनःस्थिरता यदा ।
धनकलत्रविहीनकृशः सदा भवति योगपथे निरतः परम् ॥ ९९ ॥

अष्टम भाव में बृहस्पति हो तो पवित्र तीर्थों की यात्रा करने वाला, चञ्चल चित्त, धन एवं स्त्री से रहित, दुर्बल, तथा निरन्तर योगाभ्यास में लीन रहता है ॥ ९९ ॥

सुरगुरौ नवमे मनुजोत्तमो भवति भूपतितुल्यधनी शुचिः ।
कृपणबुद्धिरतः कृपणः सुखी बहुधनप्रमदाजनवल्लभः ॥ १०० ॥

नवम भाव में बृहस्पति हो तो वह व्यक्ति मनुष्यों में श्रेष्ठ, राजा के समान धनवान्, पवित्रात्मा, कृपण प्रवृत्ति वाला, स्वयं कंजूस, सुखी, बहुत धन एवं स्त्रियों का प्रिय होता है ॥ १०० ॥

दशमभवनिरते च [illegible] तुरगरत्नविभूषितमन्दिरः ।
भवति [illegible] परकराक्रमणर्जितधार्मिकः ॥ १०१ ॥

दशम भाव में गुरु स्थित हो तो जातक का गृह घोड़ों और रत्नों से विभूषित होता है तथा वह नीति, गुण एवं विद्वानों से युक्त, सुन्दरी परस्त्रियों से रहित तथा धार्मिक होता है ।। १०१ ।।

व्रजति भूमिपते समतां धनैर्निजकुलस्य विकारकरः सदा ।
सकलधर्मरतोऽर्थसमन्वितो भवति चायगते सुरयाजके ।। १०२ ।।

जिसके जन्मलग्न से ग्यारहवें भाव में बृहस्पति हों वह धन में राजा की समता करने वाला, अपने कुल के लिए हानिकर, सभी धर्मों में आस्था रखने वाला तथा धन से युक्त होता है ।। १०२ ।।

शिशुदशाभवने हृदि रोगवानुचितदानपराङ्मुख एव च ।
कुलधनेन सदा कुलदाम्भिको भवति पापगृहे च बृहस्पतौ ।। १०३ ।।

द्वादश भाव में बृहस्पति यदि बाल्यावस्था में हो तो जातक हृदय रोग से पीड़ित एवं उचित दान से विमुख होता है । यदि पाप ग्रहों की राशि मे गुरु हो तो पैतृक सम्पत्ति के बल पर अपने कुल में दम्भ करने वाला होता है ।। १०३ ।।

द्वादश भावगत शुक्र फल

[1]अथ जनुस्तनुगे भृगुनन्दने भवति कार्य्यरतः परपण्डितः ।
विमलशल्ययुते[2] सदने रतो भवति कौतुकहा विधिचेष्टितः ।। १०४ ।।

जन्म समय में शुक्र यदि लग्न में हो तो जातक अपने कार्य में लीन, अत्यधिक विद्वान्, सुन्दर शल्य (कटीली झाड़ी, एक प्रकार की मछली) से सुसज्जित गृह में आसक्त, कलाबाजियों में अनिच्छा रखने वाला, भाग्यानुसार कार्य करने वाला होता है ।। १०४ ।।

परधनेन धनी धनगे भृगौ भवति योषिति वित्तपरो नरः ।
रजतसीसधनो गुणशैशवः कृशतनुः सुवचा बहुबालकः[3] ।। १०५ ।।

द्वितीय भाव में यदि शुक्र हो तो मनुष्य दूसरों के धन से धनी होता है । स्त्रियों को धन देने वाला, चाँदी और शीशा (अथवा सीसा) के व्यापार से धनी बचपन के गुणों से युक्त, दुर्बल; मधुरभाषी तथा अधिक सन्तान वाला होता है ।। १०५ ।।

सहजमन्दिरवर्तिनि भार्गवे प्रचुरमोहयुतो भगिनीयुतः[4] ।
भवति लोचनरोगसमन्वितो धनयुतः प्रियवाक्यसदम्बरः ।। १०६ ।।

तृतीय भाव में शुक्र हो तो अत्यधिक मोह-माया वाला एवं बहनों से युक्त,

१. उरसिगे तनुगे । २. विमलशल्यगृही । पूर्वपाठः ।
३. पालकः पूर्वपाठः । ४. भगिनीसुतः ।

नेत्ररोग से पीड़ित, धनवान्, प्रियवादी तथा सुन्दर वस्त्रों को धारण करने वाला होता है ॥ १०६ ॥

भवति बन्धुगते भृगुजे नरो बहुकलत्रसुतेन समावृतः ।
सुरमते सुखमध्यवरे गृहे वसनपानविलाससमावृतः ॥ १०७ ॥

शुक्र चतुर्थ भाव में हो तो मनुष्य बहुत स्त्री एवं पुत्रों से घिरा होता है तथा वस्त्र, पान (पेय पदार्थों) एवं विलास से युक्त होकर सुन्दर गृह में आनन्दपूर्वक रहने वाला होता है ॥ १०७ ॥

तनयमन्दिरगे भृगुनन्दने बहुसुतो दुहितुर्वरपूजितः ।
बहुधनी गुणवान् वरनायको भवति चापि विलासवतीप्रियः ॥१०८॥

पञ्चम भाव में शुक्र स्थित हो तो जातक बहुत सन्तान वाला होते हुये भी कन्या के पति (दामाद) से आदर प्राप्त करता है । तथा बहुत धनवान्, गुणवान् श्रेष्ठ, अगुआ (नेता) एवं सुन्दरी स्त्रियों का प्रेमी होता है ॥ १०८ ॥

भवति वै सुकुलोद्भवपण्डितो रिपुगृहे भृगुजेऽस्तगते नरः ।
जयति वैरिबल निजतुङ्गगे भृगुसुते सुखदे किल षष्ठगे ॥ १०९ ॥

यदि षष्ठ भाव म अस्तंगत शुक्र हो तो मनुष्य अच्छे कुल में उत्पन्न विद्वान होता है । यदि अपनी उच्च राशि में शुक्र हो तो शत्रु की सेना को जीतकर आनन्द पूर्वक रहता है ॥ १०९ ॥

युवतिमन्दिरगे भृगुजे नरो बहुसुतेन धनेन समन्वितः ।
विमलवंशभवप्रमदापतिर्भवति चारुवपुर्मुदितः सुखी ॥ ११० ॥

सप्तम भाव में शुक्र हो तो मनुष्य बहुत से पुत्रों एवं धन से युक्त, स्वच्छ (पवित्र) कुल मे उत्पन्न कन्या का पति, सुन्दर शरीर वाला, प्रसन्न एवं सुखी होता है ॥ ११० ॥

निधनसद्मगते भृगुजे जनो विमलधर्मरतो नृपसेवकः ।
भवति मांसप्रियः पृथुलोचनो निधनमेति चतुर्थवयस्यपि ॥ १११ ॥

अष्टम भाव में शुक्र हो तो जातक पवित्र धर्म में लीन, राजा का सेवक (राजकीय कर्मचारी), मांसभक्षी, मोटी आँखों वाला तथा वृद्धावस्था में मृत्यु प्राप्त करने वाला होता है ॥ १११ ॥

विमलतीर्थपरोऽमतनुः सुखी सुरवरद्विजवर्णरतः शुचिः ।
निजभुजार्जितभाग्यमहोत्सवो भवति धर्मगते भृगुजे नरः ॥ ११२ ॥

जिस मनुष्य के नवम भाव में शुक्र हो वह पवित्र तीर्थों की यात्रा में तत्पर, सुन्दर शरीर वाला, सुखी, देवता तथा श्रेष्ठ ब्राह्मण जाति में आस्था रखने वाला, पवित्रात्मा, अपने बाहुबल से अर्जित धन का उपभोग करने वाला होता है ॥११२॥

दशममन्दिरगे भृगुवंशजे बधिरबन्धुयुतः स च भोगवान् ।
वनगतोऽपि च राज्यफलं लभेत् समरसुन्दरवेषसमन्वितः ॥ ११३ ॥

दशम भाव में शुक्र गया हो तो जातक का भाई बहरा होता है तथा स्वयं सुख भोग करने वाला, जंगल में रहता हुआ भी राज्य सुख को प्राप्त करता है (जंगल विभाग का अधिकारी होता है) तथा युद्ध योग्य सुन्दर शरीर से युक्त होता है ॥ ११३ ॥

लभनभावगते भृगुनन्दने वरगुणावहितोऽप्यनलव्रतः ।
मदनतुल्यवपुः सुखभाजनं भवति हास्यरतिः प्रियदर्शनः ॥ ११४ ॥

एकादश भाव में शुक्र हो तो अच्छे गुण से युक्त, अग्निव्रती (अग्नि होत्र— प्रति दिन वैदिक विधि से हवन करने वाला), कामदेव के समान सुन्दर शरीर वाला, सभी प्रकार से सुखी, हासपरिहास का प्रेमी तथा देखने में प्रिय व्यक्ति होता है ॥ ११४ ॥

अनुषि चेद् व्ययवर्तिनि भार्गवे भवति रोगयुतः प्रथमं नरः ।
तदनु दम्भपरायणचेतनः कृशबलो मलिनः सहितः तदा ॥११५॥

लग्न से बारहवें भाव में यदि जन्मकालिक शुक्र हो तो पहले मनुष्य रोगी होता है पश्चात् घमण्डी, दुर्बल, तदन्तर मलिन वेष-भूषा वाला एवं मलिन व्यक्तियों का साथी होता है ॥ ११५ ॥

द्वादश भावगत शनि फल

सततमल्पगतिर्मदपीडितस्तपनजे तनुगे खलु चाधमः ।
भवति हीनकचः कृशविग्रहः बहुसुहृद्रिपुसद्मनि मानवः ॥ ११६ ॥

शनि लग्न (प्रथम भाव) में हो तो मनुष्य निरन्तर मन्दगतिवाला (आलसी), घमण्ड (मिथ्याभिमान) से स्वयं व्यथित, अधम, स्वल्प बालों वाला, तथा कृश-काय होता है । यदि लग्न में शत्रुग्रह की राशि में शनि हो तो मनुष्य बहुत मित्रों वाला होता है ॥ ११६ ॥

धननिकेतनवर्तिनि भानुजे भवति वाक्यसहः स धनान्वितः ।
चपललोचनसञ्चलने रतो भवति चौरपरो नियतं सदा ॥११७॥

धन भाव में यदि शनि हो तो जातक सहनशील, धन से युक्त, चञ्चल नेत्रों वाला, धनसंग्रह में तत्पर, तथा सदैव चोरी करने वाला होता है ॥ ११७ ॥

सहजमन्दिरगे तपनात्मजे भवति सर्वसहोदरनाशकः ।
तदनुकूलनृपेण समो नरः ससुतपुत्रकलत्रसमन्वितः ॥ ११८ ॥

तृतीय भाव में शनि हो तो वह सभी सहोदर भाइयों का नाश करने वाला, इसी प्रकार (भ्रातृहीन) राजा के समान, पुत्र-स्त्री एवं पौत्र से युक्त मनुष्य होता है ॥ ११८ ॥

बन्धुस्थितो भानुसुतो नराणां करोति बन्धोर्निधनं च रोगी ।
स्त्रीपुत्रभृत्येन विनाकृतश्च ग्रामान्तरे चासुखदः स वक्री ॥ ११९॥

चतुर्थ भाव में स्थित शनि भाइयों का नाश करता है तथा स्वयं मनुष्य को रोगी तथा स्त्री, पुत्र और नौकरों से अपमानित कराता है। यदि शनि वक्री हो तो दूसरे ग्राम में जाने पर भी दुःख प्रदान करता है ॥ ११९ ॥

शनैश्चरे पञ्चमशत्रुगेहे पुत्रार्थहीनो भवतीह दुःखम् ।
तुङ्गे निजे मित्रगृहे च पञ्चो पुत्रैकभागी भवतीति कश्चित् ॥१२०॥

पञ्चम भाव में यदि शत्रुग्रह की राशि में शनि हो तो जातक पुत्र और धन से हीन, दुःखी होता है। यदि अपनी राशि (१०, ११) उच्चराशि (७) तथा मित्र ग्रह की राशि में शनि हो तो एक पुत्र होता है ऐसा कुछ आचार्यों का मत है ॥ १२० ॥

नीचे रिपोर्नीचकुलक्षयं च षष्ठे शनिर्गच्छति मानवानाम् ।
अन्यत्र शत्रून् विनिहन्ति तुङ्गी पूर्णार्थकामाज्र्जनतां ददाति ॥१२१॥

जिस मनुष्य के जन्म लग्न से छठें भाव में शनि अपनी नीचराशि में या शत्रुराशि में पड़ा हो तो कुल का नाश करता है। अन्य राशियों में हो तो शत्रुओं का नाश कराता है। यदि अपनी उच्चराशि में हो तो कामनाओं की पूर्ति कर पूर्ण रूप से धन, और जीविका प्रदान करता है ॥ १२१ ॥

विश्रामभूतां विनिहन्ति जायां सूर्यात्मजः सप्तमगश्च रोगान् ।
धत्ते पुनर्दम्भधराङ्गहीनं मित्रस्य वंशे रिपुता सुहृद्भिः ॥१२२॥

सप्तम भाव में शनि हों तो अतिशय गुणवती भार्या (पत्नी) का नाश (मृत्यु), जातक स्वयं रोगी, अहंकार, भूमि एवं अङ्गों से हीन होता है तथा अपने मित्रवर्ग में मित्रों से शत्रुता होती है ॥ १२२ ॥

शनैश्चरे चाष्टमगे मनुष्यो देशान्तरे तिष्ठति दुःखभागी ।
चौर्यापराधेन च नीचहस्ते पञ्चत्वमाप्नोत्यथ नेत्ररोगी ॥ १२३ ॥

शनि यदि अष्टम भाव में गया हो तो मनुष्य नेत्रों से रोगी, दूसरे देश में निवास करने वाला तथा दुःखी होता है। चोरी के अपराध में नीच व्यक्ति के हाथों उसकी मृत्यु होती है ॥ १२३ ॥

धर्मस्वपङ्गो बहुदम्भकारी धर्मार्थहीनः पितृवञ्चकश्च ।
मदानुरक्तो निधनी च रोगी पापिष्ठभार्यापरहीनवीर्यः ॥ १२४ ॥

नवम भाव में शनि हो तो जातक बहुत घमण्ड करने वाला धर्म और अर्थ से रहित, पिता को धोखा देने वाला, मदानुरागी (नशीली वस्तुओं का सेवन करने वाला) निर्धन, रोगी तथा स्त्री के पाप आचरण से वह निर्बल होता है ॥ १२४ ॥

शनैश्चरे कर्मगृहे स्थितेऽपि महाधनो नृत्यजनानुरक्तः ।
प्राप्तप्रवासे नृपसद्मवासो न शत्रुवर्गाद्भयमेति मानी ॥ १२५ ॥

शनि यदि दशम भाव में हो तो जातक महान् धनवान् नर्तक-नर्तकियों में अनुरक्त, विदेश या अन्य स्थान में जाने पर राजभवन में निवास करने वाला होता है। वह स्वाभिमान पूर्वक रहता हुआ शत्रुवर्ग से भयभीत नहीं होता ॥१२५॥

सूर्यात्मजे चायगते मनुष्यो धनी विमृश्यो बहुभोग्यभागी ।
शीतानुरागी मुदितः सुशीलः स बालभावे भवतीति रोगी ॥ १२६ ॥

शनि यदि ग्यारहवें भाव में हो तो मनुष्य धनवान्, विचारशील, भौतिक सुख साधनों का उपभोग करने वाला, ठण्डी वस्तुओं का सेवन करने वाला, प्रसन्न, सुशील तथा बाल्यावस्था में रोगी होता है ॥ १२६ ॥

व्यये शनौ पञ्चगणाधिनाथो गदान्वितो हीनवपुः सुदुःखी ।
जंघाव्रणी क्रूरमतिः कृशाङ्गो वधे रतः पक्षिगणस्य नित्यम् ॥ १२७ ॥

द्वादश भाव में शनि हो तो जातक पञ्चगणों (किसी संस्था या पञ्चायत के सदस्यों) का प्रधान, रोगयुक्त, छोटे कद का, प्रायः दुःखी रहने वाला, जंघा व्रण (फोड़ा या चोट) युक्त, क्रूर स्वभाव वाला, दुर्बल तथा सदैव पक्षियों का वध करने वाला होता है ॥ १२७ ॥

द्वादश भाव गत राहु फल

रोगी सदा देवरिपौ तनुस्थे कुलस्य धारी बहुजल्पशीलः ।
रक्तेक्षणः पापरतः कुकर्मरतः सदा साहसकर्मदक्षः ॥ १२८ ॥

जिसके जन्म समय में लग्न में ही राहु पड़ा हो वह कुल की मर्यादा एवं भार वहन करने वाला, सदैव रोगी, अधिक वाचाल (व्यर्थ बोलने वाला), लाल आँखों वाला, पाप में लीन, कुकर्म में रत तथा साहसिक कार्यों में निपुण होता है ॥ १२८ ॥

राहौ धनस्थे कृतचौरवृत्तिः सदावलिप्तो बहुदुःखभागी ।
मत्स्येन मांसेन सदा व्रती च सदा वसेन्नीचगृहे मनुष्यः ॥ १२९ ॥

धन स्थान में राहु हो तो जातक चोर, सदैव मोहमाया में लिप्त, बहुत दुःखी,

मछली के व्यापार से धनवान् तथा सदैव नीच मनुष्य के घर में निवास करने वाला होता है ॥ १२६ ॥

भ्रातुर्विनाशं प्रददाति राहुस्तृतीयगेहे मनुजस्य देहे।
सौख्यं धनं पुत्रकलत्रामत्रं ददाति तुङ्गा गजवाजिभृत्यान् ॥ १३० ॥

यदि जन्म लग्न से तृतीय भाव में राहु हो तो भाई का नाश होता है परन्तु उस मनुष्य को शारीरिक सुख, धन, पुत्र-स्त्री एवं मित्र का लाभ होता है। राहु यदि अपनी उच्च[1] राशि मे हो तो घोड़ा-हाथी तथा नौकर प्रदान करता है ॥ १३० ॥

राहौ चतुर्थे धनबन्धुहीनो ग्रामैकदेशे वसति प्रकुष्टः।
नीचानुरक्तः पिशुनश्च पापी पुत्रैकभागी कृशयोषिदस्य ॥ १३१ ॥

राहु यदि चतुर्थ भाव में हो तो धन एवं भाइयों से हीन होता है। ग्राम के एक भाग (संकुचित क्षेत्र) में रहता है। नीच व्यक्तियों का साथी, चुगली करने वाला, पापी, तथा एक पुत्र एवं दुबली-पतली स्त्री से युक्त होता है ॥ १३१ ॥

राहुः सुतस्थः शशिनानुगो हि पुत्रस्य हर्ता कुपितः सदैव।
गेहान्तरे सोऽपि सुतैकमात्रं दत्ते प्रमाणं मलिनं कुचैलम् ॥ १३२ ॥

राहु पञ्चम भाव में चन्द्रमा से युक्त हो तो सन्तान नाशक, तथा सदैव क्रुद्ध रहने वाला होता है। यदि दोनों गेहान्तर में (पञ्चम भाव में राहु तथा किसी अन्य भाव में चन्द्रमा) स्थित हो तो एक मात्र मलिन एवं गन्दा पुत्र प्रदान करता है ॥ १३२ ॥

षष्ठे स्थितः शत्रुविनाशकारी ददाति पुत्रं च धनानि भोगान्।
स्वर्भानुरुच्चैरखिलाननर्थान् हन्त्यन्ययोषिद्गमनं करोति ॥ १३३ ॥

छठें भाव में राहु शत्रुओं का नाशक, पुत्र, धन तथा त्रिविध भोगों को देने वाला होता है। यदि अपनी उच्च राशि में हो तो सभी प्रकार के अनिष्टों को दूर कर परस्त्री से सम्बन्ध कराने वाला होता है ॥ १३३ ॥

जायास्थराहुर्धनहानिमेवं ददाति नारीं विविधांश्च भोगान्।
पापानुरक्तां कुटिलां कुशीलां ददाति शेषैर्बहुभिर्युतश्च ॥ १३४ ॥

सप्तम भाव में राहु हो तो जातक की धनहानि होती है परन्तु वह विविध भोगों एवं अन्य वस्तुओं के सुखों से युक्त होता है तथा उसकी पत्नी पाप कर्म में लीन, कुटिल तथा अशिष्ट होती है ॥ १३४ ॥

---

१. राहु की उच्च-नीच राशियों का निर्णय इस प्रकार किया गया है—
यद् बुधस्य ग्रहस्योच्चं राहोस्तद् गृहमुच्यते।
यद् बुधस्य गृहं राहोस्तदुच्चं ब्रुवते बुधाः ॥ भुवन दीपकः १८ ॥

राहुः सदा चाष्टममन्दिरस्थो रोगान्वितं पापरतं प्रगल्भम् ।
चौरं कृशं कापुरुषं धनाढ्यं मायामतीतं पुरुषं करोति ॥ १३५ ॥

अष्टम भावस्थ राहु सदैव मनुष्य को रोगयुक्त, पाप कर्म में लीन, साहसी, चोर, दुर्बल, कायर, धनाढ्य एवं छल-प्रपञ्च से रहित कराता है ॥ १३५ ॥

धर्मस्थिते चन्द्ररिपौ मनुष्यश्चाण्डालकर्मा पिशुनः कुचैलः ।
ज्ञातिप्रमोदे निरतश्च दीनः शत्रोः कुलाद्भीतिमुपैति नित्यम् ॥ १३६ ॥

नवम भाव में राहु हो तो मनुष्य चाण्डालों का कार्य करने वाला, चुगुल खोर, गन्दे वस्त्रों वाला, अपने जाति बन्धुओं की प्रसन्नता में संलग्न, एवं दीन होता है। तथा उसे निरन्तर शत्रुओं से भय प्राप्त होता रहता है ॥ १३६ ॥

कामातुरः कर्मगते च राहौ परार्थलोभो मुखरश्च दीनः ।
म्लानो विरक्तः सुखवर्जितश्च विहारशीलश्चपलोऽतिदुष्टः ॥ १३७ ॥

दशम भाव में राहु हो तो जातक कामी दूसरों के धन का लोभी, सर्वत्र अगुआ (मुखिया) बनने वाला, दीन, खिन्न, विरागी, सुख से हीन, घूमने फिरने की प्रवृत्ति वाला, अत्यन्त चञ्चल तथा दुष्ट होता है ॥ १३७ ॥

आयस्थिते सोमरिपौ मनुष्यो दान्तो भवेन्नीलवपुः सुमूर्तिः ।
वाचाल्पयुक्तः परदेशवासी शास्त्रार्थवेत्ता चपलोऽत्रपश्च ॥ १३८ ॥

एकादश भाव में राहु हो तो मनुष्य इन्द्रियों का दमन करने वाला, नीले (काले) रंग का शरीर वाला, सुन्दर, अल्पभाषी, दूसरे देश में निवास करने वाला, शास्त्रों का ज्ञाता, चञ्चल तथा लज्जा से हीन होता है ॥ १३८ ॥

व्ययस्थिते सोमरिपौ नराणां धर्मार्थहीनो बहुदुःखतप्तः ।
कान्ताविमुक्तश्च विदेशवासी सुखैश्च हीनः कुनखी कुवेषः ॥ १३९ ॥

बारहवें भाव में राहु हो तो मनुष्य धर्म-अर्थ दोनों से रहित, विविध दुखों से सन्तप्त, स्त्री से रहित, विदेश में रहने वाला, सुख से हीन, खराब नाखून तथा कुत्सित (निन्दित) वेष-भूषा वाला होता है ॥ १३९ ॥

द्वादश भावगत केतु फल–

तनुस्थः शिखी बान्धवक्लेशकर्ता तथा दुर्जनेभ्यो भयं व्याकुलत्वम् ।
कलत्रादिचिन्ता सदोद्वेगिता च शरीरे व्यथा नैकधा मारुती स्यात् ॥१४०॥

जन्म लग्न में यदि केतु हो तो जातक अपने भाइयों को कष्ट देने वाला, स्वयं दुर्जनों से भयभीत तथा व्याकुल, स्त्री सम्बन्धी चिन्ताओं से युक्त, सदैव उद्विग्न रहता है तथा बार-बार वायु जनित रोगों से उसका शरीर दुःखी होता है ॥१४०॥

धने केतुरव्यग्रता किन्नरेशाद्धने धान्यनाशो मुखे रोगकृच्च ।
कुटुम्बाद्विरोधो वचः सत्कृतं वा भवेत्स्वे गृहे सौम्यगेहेऽतिसौख्यम् ॥ १४१ ॥

धन भाव में यदि केतु हो तो किसी दुष्ट राजा द्वारा धन-धान्य का नाश, मुख में रोग, तथा कुटुम्बियों से विरोध होता है। अपने गृह (राशि) में यदि केतु हो तो वाणी से सत्कृत एवं शुभग्रहों के गृह में हो तो अधिक सुख प्राप्त होता है ॥ १४१ ॥

शिखी विक्रमे शत्रुनाशं विवादं धनं भोगमैश्वर्यतेजोऽधिकं च ।
सुहृद्वर्गनाशं सदा बाहुपीडाभयोद्वेगचिन्ताकुलत्वं विधत्ते ॥ १४२ ॥

केतु यदि तीसरे भाव में हो तो शत्रुओं का नाश, विवाद (झगड़ा), धन प्राप्ति, भोग (सुख), ऐश्वर्य, तथा तेज की अधिकता होती है साथ ही मित्र वर्ग का नाश, भुजाओं में सदैव पीड़ा, भय, उद्वेग, चिन्ता एवं आकुलता की भी वृद्धि होती है ॥ १४२ ॥

चतुर्थे न मातुः सुखं न कदाचित् सुहृद्वर्गतः पैतृकं नाशमेति ।
शिखी बन्धुवर्गात्सुखं स्वोच्चगेहे चिरं नो वसेत्स्वे गृहे व्यग्रता चेत् ॥ १४३ ॥

चतुर्थ भाव में केतु हो तो न माता से न मित्र वर्ग से ही सुख प्राप्त होता है, पैतृक सम्पत्ति का नाश होता है। यदि केतु अपनी उच्च राशि में हो तो अपने बन्धु वर्ग से सुख प्राप्त होता है तथा पराये गृह में रहने से मन में व्यग्रता बनी रहती है ॥ १४३ ॥

यदा पञ्चमे राहुपुच्छं प्रयाति तदा सोदरे घातवातादिकष्टम् ।
स्वबुद्धिव्यथा सततं स्वल्पपुत्रः सदासो भवेद्वीर्ययुक्तो नरोऽपि ॥ १४४ ॥

यदि पञ्चम भाव में केतु हो तो भाइयों को चोट एवं वायु विकार से कष्ट, सदैव अपनी बुद्धि द्वारा व्यथा (अर्थात् अपनी कल्पनाओं के कारण कष्ट) अल्प पुत्र एवं नौकरों से युक्त तथा बलवान् पुरुष होता है ॥ १४४ ॥

तमःपुच्छभागः[1] शिखी षष्ठभावे भवेन्मातुलान्मानभङ्गो रिपूणाम् ।
विनाशश्चतुष्पात्सुखं तुच्छचित्तं शरीरे सदानामयं व्याधिनाशः ॥ १४५ ॥

राहुपुच्छ (केतु) यदि षष्ठ भाव में हो तो अपने मामा लोगों द्वारा अपमान, शत्रुओं का नाश, चौपायों (पशुओं) से सुखी, क्षुद्र हृदय वाला, शरीर से आरोग्य तथा व्याधियों से हीन होता है ॥ १४५ ॥

शिखी सप्तमे भूयसी मार्गचिन्ता निवृत्तः स्वनाशोऽथवा वारिभीतः ।[2]
भवेत्कीटगः सर्वदा लाभकारी कलत्रादिपीडा व्ययो व्यग्रता चेत् ॥ १४६ ॥

१. 'सप्तमस्थः' पाठान्तरम् । २. वारिभीतोः ।

केतु यदि सप्तम भाव में हो तो मार्ग सम्बन्धी तीव्र चिन्ता, अपनी हानि, जल से भय होता है। यदि केतु कर्क राशि में हो तो सदैव लाभदायक, स्त्री-पुत्र आदि को पीड़ा, व्यय तथा व्याकुलता होती हैं ॥ १४६ ॥

गुदं पीडयतेऽर्शादिरोगैरवश्यं भयं वाहनादेः स्वद्रव्यस्य रोधः।
भवेदष्टमे राहुपुच्छेऽर्थलाभः सदा कीटकन्याजगोयुग्मकेतुः ॥ १४७ ॥

अष्टम भाव में राहु पुच्छ (केतु) हो तो अर्श (बवासीर) आदि अतड़ी से सम्बन्धित रोगों से गुह्य स्थान में पीड़ा, वाहनादि (गाड़ी, घोड़े आदि) से अवश्य भय (दुर्घटना) होती है तथा अपने धन का अवरोध होता है। यदि केतु कर्क,[1] कन्या, मेष, वृष, मिथुन राशियों में हो तो सदैव धन लाभ होता है ॥ १४७ ॥

शिखी धर्मभावे यदा क्लेशनाशः सुतार्थी भवेन्म्लेच्छतो भाग्यवृद्धिः।
सहोत्थव्यथां बाहुरोगं विधत्ते तपोदानतो हास्यवृद्धिं तदानीम् ॥ १४८ ॥

यदि केतु नवम भाव में हो तो कष्टों का नाश, पुत्र की अभिलाषा, तथा म्लेच्छों के सहयोग से भाग्य में वृद्धि होती है। सगे भाई-बहनों को पीड़ा, हाथों में रोग तथा जप-तप-दान आदि (पुण्य) कार्य करने पर जातक का उपहास होता है ॥ १४८ ॥

पितुर्नो सुखं कर्मगो यस्य केतुस्तदा दुर्भगं कष्टभाजं करोति।
तदा वाहने पीडितं जातु जन्म वृषाजालिकन्यासु चेच्छत्रुनाशम् ॥ १४९ ॥

जिसके जन्म समय में केतु दशम भाव में गया हो तो वह पिता के सुख से वञ्चित, अभागा, कष्ट पाने वाला तथा वाहन की अभिलाषा से पीड़ित रहता है। यदि केतु वृष, मेष, वृश्चिक एवं कन्या राशि में हो तो शत्रुओं का नाश होता है ॥ १४९ ॥

सुभाग्यः सुविद्याधिको दर्शनीयः सुगात्रः सुवस्त्रः सुतेजाश्च[2] तस्य।
दरैः पीडयते सन्ततिर्दुर्भगा[3] च शिखी लाभगः सर्वलाभं करोति ॥ १५० ॥

लाभ (ग्यारहवें) भाव में केतु सभी प्रकार का लाभ देने वाला होता है तथा जातक सौभाग्यशाली, विद्या सम्पन्न (विद्वान्), दर्शनीय, सुन्दर शरीर एवं वस्त्र से युक्त, तेजस्वी एवं भय से पीड़ित होता है तथा उसकी सन्तान भाग्यहीन होती है ॥ १५० ॥

---

१. 'कीट शब्द का अर्थ वस्तुतः कर्क राशि के लिए किया जाता है। "कीटः कर्कट राशिः सरीसृपो वृश्चिको ज्ञेयः।" (बृहज्जातक।) परन्तु बहुत स्थानों में कीट का अर्थ कर्क और वृश्चिक दोनों ही लिया गया है। अतः कर्क के स्थान में वृश्चिक अर्थ भी किया जा सकता है।

२. सुतेजोऽपि तस्येति पूर्वपाठः। ३. सन्ततं शत्रुवर्गः पाठान्तरम्।

शिखी रिष्फगो वस्तिगुह्याङ्घ्रिकोपी रुजा पीडनं मातुलान्नैव शर्म।
सदा राजतुल्यं नरं सद्व्ययं तद् रिपूणां विनाशं रणेऽसौ करोति ॥ १५१ ॥

द्वादश भाव में केतु हो तो जातक के वस्ति (पेडू), गुह्य, (मल-मूत्र मार्ग) तथा पैरों में कष्ट, रोगों से पीड़ा, तथा मामा लोगों से सुख का अभाव होता है। परन्तु वह संग्राम में अपने शत्रुओं का नाश करता है तथा सन्मार्ग में व्यय करने वाला राजा के समान पुरुष होता है ॥ १५१ ॥

दो ग्रहों का युति फल—

स्त्रीवशः क्रूरकर्म्मा च दुर्विनीतः क्रियादृढः।
विक्रमी लघुचेताश्च चंद्रसूर्यसमागमे ॥ १५२ ॥

यदि सूर्य और चन्द्रमा का समागम (दोनों एक ही राशि में) हो तो स्त्री के वशीभूत, क्रूर कर्म करने वाला, अशिष्ट, दृढ़ता पूर्वक कार्य करने वाला, पराक्रमी तथा क्षुद्र हृदय वाला व्यक्ति होता है ॥ १५२ ॥

सूर्यमङ्गलसंयोगे तेजस्वी पापमानसः।
मिथ्यावादी च मूर्खश्च वधनिष्ठो बली नरः ॥ १५३ ॥

सूर्य मंगल यदि एक राशि में हों तो तेजस्वी, पापात्मा, झूठ बोलने वाला, मूर्ख, वध (पशु-पक्षी आदि की हत्या) करने वाला बलवान पुरुष होता है ॥१५३॥

विद्वानार्यो राजमान्यः सेवाशीलः प्रियवदः।
यशस्वी च स्थिरद्रव्यो बुधसूर्यसमागमे ॥ १५४ ॥

यदि बुध और सूर्य का समागम हो तो जातक, विद्वान, श्रेष्ठ, राजा द्वारा सम्मानित, सेवा में तत्पर, प्रियवादी, यशस्वी तथा धनसंग्रह करने वाला होता है ॥ १५४ ॥

नृपमान्यो धर्मनिष्ठो मित्रवानर्थवानपि।
उपाध्यायोऽतिविख्यातो योगे जीवार्कयोर्भवेत् ॥ १५५ ॥

बृहस्पति और सूर्य का एक राशि में योग हो तो राजा से सम्मानित, धर्म का आचरण करने वाला, मित्रों से युक्त, धनवान, अध्यापन कार्य करने वाला तथा अत्यन्त प्रसिद्ध व्यक्ति होता है ॥ १५५ ॥

शस्त्रप्रहारो बन्धश्च रङ्गज्ञो नेत्रदुर्बलः।
स्त्रीसङ्गलब्धद्रव्यश्च सक्तः शुक्रार्कसङ्गमे ॥ १५६ ॥

सूर्य और शुक्र एक राशिगत हो तो जातक शस्त्र प्रहार (शस्त्र सञ्चालन), बन्धन तथा रंगमञ्च की कलाओं का ज्ञाता, दुर्बल नेत्रों वाला, स्त्री के सम्पर्क से धन प्राप्त करने वाला तथा विषयासक्त होता है ॥ १५६ ॥

विद्वानपि क्रियानिष्ठो धातुज्ञो वृद्धचेष्टितः ।
प्रणष्टसुतदारश्च : शनिसूर्यसमागमे ॥ १५७ ॥

यदि सूर्य और शनि एक ही राशि में हों तो विद्वान, क्रियानिष्ठ (धर्माचरण का श्रद्धा पूर्वक निर्वाह करने वाला) धातुओं का विशेषज्ञ (पारखी), वृद्धों का आचरण करने वाला होता है तथा उसके पुत्र एवं स्त्री की शीघ्र मृत्यु हो जाती है ॥ १५७ ॥

चन्द्रमङ्गलसंयोगे रक्तपीडातुरो भवेत् ।
मृच्चर्मधातुशिल्पी च धनी शूरो रणे भवेत् ॥ १५८ ॥

चन्द्रमा और मंगल एक राशि में हों तो वह व्यक्ति रक्त-दोष से पीड़ित होता है। मिट्टी, चमड़ा एवं धातु का कलाकार, धनवान तथा संग्राम में बहादुर होता है ॥ १५८ ॥

स्त्रीसंसक्तः सुरूपश्च काव्ये च निपुणो नरः ।
धनी गुणी हास्यवक्त्रो बुधेन्द्वोर्धार्मिकोऽन्वये ॥ १५९ ॥

चन्द्र और बुध का संयोग एक राशि मे हो तो वह व्यक्ति स्त्री में आसक्त, सुन्दर, काव्यकला में निपुण, धनवान, गुणवान्, हँस मुख तथा अपने कुल में धार्मिक होता है ॥ १५९ ॥

देवद्विजार्चाभक्तश्च बन्धुमान्यकरो धनी ।
दृढप्रीतिः सुशीलश्च जीवचन्द्रसमागमे ॥ १६० ॥

गुरु और चन्द्रमा एक राशि गत हों तो देवता एवं ब्राह्मणों की पूजा में श्रद्धा रखने वाला, भाई बन्धुओं का आदर करने वाला, धनवान्, दृढ़ (स्थायी) प्रेम करने वाला, तथा सुशील व्यक्ति होता है ॥ १६० ॥

कुशलो विक्रयादौ च वृषलः कलहप्रियः ।
माल्यवस्त्रादिसंयुक्तः शशिभार्गवसङ्गमे ॥ १६१ ॥

चन्द्रमा और शुक्र एक राशि में हो तो वह व्यक्ति क्रय-विक्रय में निपुण, शूद्र (आचार हीन), झगड़ालू, तथा माला, वस्त्र आदि से संयुक्त रहता है ॥ १६१ ॥

गजाश्वपालो दुःशीलो वृद्धस्त्रीरमणो नरः ।
वेश्याधनोऽल्पपुत्रश्च शनिचन्द्रसमागमे ॥ १६२ ॥

जिसकी कुण्डली में शनि-चन्द्रमा एक राशि में हों वह हाथी-घोड़ा पालने वाला, दुष्ट, वृद्धा स्त्री के साथ रमण करने वाला, वेश्या से धनप्राप्त करने वाला तथा स्वल्प पुत्रों वाला होता है ॥ १६२ ॥

भूपुत्रबुधसंयोगे निर्धनो विधवापतिः ।
स्त्री दुर्भगा क्रयप्रीतः स्वर्णलोहप्रकीर्णकैः ॥ १६३ ॥

मंगल और बुध एक राशि में स्थित हो तो निर्धन, विधवा एवं कुरूपा स्त्री से विवाह करने वाला तथा सोना-लोहा एवं विभिन्न वस्तुओं के क्रय (खरीददारी) में रुचि रखने वाला व्यक्ति होता है ॥ १६३ ॥

मेधावी शिल्पशास्त्रज्ञः श्रुतज्ञो वाग्विशारदः ।
अश्वप्रियः प्रधानश्च जीवमङ्गलसङ्गमे ॥ १६४ ॥

गुरु और मंगल एक राशि में हों तो प्रतिभा सम्पन्न, शिल्प (मूर्ति-कला) शास्त्र का ज्ञाता, बहुश्रुत (सुनकर ज्ञान प्राप्त करने वाला), भाषण में निपुण, अश्वप्रिय (घुड़सवारी करने वाला) एवं प्रधान (श्रेष्ठ) पुरुष होता है ॥ १६४ ॥

गुणप्रधानो गणको द्यूतानृतरतः शठः ।
परदाररतो मान्यः शुक्रमङ्गलसङ्गमे ॥ १६५ ॥

शुक्र और मंगल एक साथ एक राशि में हों तो गुणों द्वारा प्रधान, गणक (ज्योतिषी अथवा गणना सम्बन्धी कार्य करने वाला), जूआ तथा झूठ में आसक्त, दुष्ट, परस्त्री में आसक्त तथा समाज में आदर पाने वाला व्यक्ति होता है ॥१६५॥

वाग्मीन्द्रजालदक्षश्च विधर्मी कलहप्रियः ।
विषमद्यप्रपश्चाढ्यो मन्दमङ्गलसङ्गमे ॥ १६६ ॥

मङ्गल और शनि एक ही राशि में स्थित हों तो वह व्यक्ति वाचाल, इन्द्रजाल (सम्मोहन, जादूगरी), में निपुण, धर्महीन, झगड़ालू, विष, एवं मदिरा का निर्माण अथवा प्रयोग करने वाला होता है ॥ १६६ ॥

बुधस्य गुरुणा योगे नृत्यवाद्यविचक्षणः ।
धैर्ययुक्तः पण्डितश्च सुखी भवति मानवः ॥ १६७ ॥

बुध और गुरु एक राशि में हों तो मनुष्य नृत्य-गीत एवं वाद्य में दक्ष, धैर्यवान्, विद्वान्, तथा सुखी होता है ॥ १६७ ॥

बुधभार्गवयोर्योगे नयज्ञो बहुशिल्पवित् ।
धनी सुवाक्यो वेदज्ञो गीतज्ञो हास्यलालसः ॥ १६८ ॥

बुध और शुक्र का एक राशि में योग हो तो व्यक्ति कानून (राजनीति) का ज्ञाता, विविध शिल्पों (कला) को जानने वाला, धनी, सुन्दर वचन बोलने वाला, वेद का ज्ञाता, संगीतज्ञ तथा हास्य का प्रेमी होता है ॥ १६८ ॥

क्षीणो गमनशीलश्च निरपायो अगत्कलिः ।
दुष्टवाक्यः कार्यदक्षो भानुसूनुबुधान्वये ॥ १६९ ॥

शनि और बुध का सम्बन्ध होने पर मनुष्य (शरीर से) दुर्बल, प्रायः यात्रा करने वाला, उत्साह रहित (उद्देश्य हीन), सबसे झगड़ने वाला, शुभवचन बोलने वाला, तथा कार्य में चतुर होता है ॥ १६९ ॥

गुरुभार्गवसंयोगे दिव्यदारो महाधनी ।
धर्मास्तिकप्रमाणज्ञो विद्याजीवी च जायते ॥ १७० ॥

यदि गुरु और शुक्र एक राशि में स्थित हों तो व्यक्ति सुन्दरी एवं सदाचारी पत्नी से युक्त, महान् धनी, धर्म एवं ईश्वर प्रधान शास्त्र (दर्शन) का ज्ञाता तथा विद्या द्वारा जीविका प्राप्त करने वाला होता है ॥ १७० ॥

वृत्तिसिद्धश्च शूरश्च यशस्वी नगराधिपः ।
श्रेणीसेनाभिमुख्यश्च गुरुमन्दान्वये नरः ॥ १७१ ॥

जिसकी कुण्डली में गुरु और शनि एक ही राशि में स्थित हों तो वह मनुष्य जीविका प्राप्त करने में कुशल, वीर, यशस्वी, नगर का अधिपति (जिलाधीश, आदि), किसी वर्ग (पार्टी) का नेता, सेना का मुख्य अधिकारी होता है ॥१७१॥

शुक्रेण च शनेर्योगे मत्तः पशुपतिर्नरः ।
दारुदारणदक्षश्च क्षाराम्लादिकशिल्पवित् ॥ १७२ ॥

शुक्र और शनि की युति यदि एक ही राशि में हो तो मनुष्य मतवाला (उच्छृङ्खल), पशुओं का मालिक, लकड़ी चीरने में निपुण, खारा एवं खट्टे पदार्थों (अचार-सिरका आदि) का ज्ञाता तथा शिल्प (काष्ठ एवं प्रस्तरकला) में निपुण होता है ॥ १७२ ॥

तीन ग्रहों का युतिफल

यन्त्राश्वकूटकुशलोऽसृग्वेदनापीडितोऽतिशूरश्च ।
आदित्यचन्द्रभौमैरेकस्थैर्जायते सुतविहीनः ॥ १७३ ॥

सूर्य, चन्द्र और मङ्गल यदि एक ही भाव में हों तो जातक मशीन, घोड़ा एवं कूट (छल-धोखाधड़ी) सम्बन्धी कार्यों में निपुण, रक्तविकार से पीड़ित, अति साहसी, एवं पुत्र से रहित होता है ॥ १७३ ॥

विद्याधनरूपयुतः काव्यकथाकविसभाप्रियः सधनः ।
नृपसेवकः प्रियवागेकस्थे सूर्यचन्द्रबुधे ॥ १७४ ॥

सूर्य चन्द्र और बुध यदि एक ही भाव में पड़े हों तो वह व्यक्ति विद्या, धन और स्वरूप से युक्त, कवि, कहानीकार, कविसम्मेलन का प्रेमी, धनवान्, राजसेवक, तथा प्रिय बोलने वाला होता है ॥ १७४ ॥

धर्मपरो नृपसचिवो दृढमेधा मानकृच्च बन्धूनाम् ।
देवद्विजार्चनरतो रविशशिजीवैः सहैकस्थैः ॥ १७५ ॥

सूर्य, चन्द्र और गुरु यदि एक ही भाव में बैठे हों तो जातक धर्म परायण, राजा का मन्त्री (राजनेता), स्थिरबुद्धिवाला, भाई-बन्धुओं का आदर करने वाला तथा देवता और ब्राह्मणों की पूजा (सम्मान) करने वाला होता है ॥१७५॥

सुवपुर्दूरकृतारिर्नरपतिसुभगः सदा प्रवरतेजाः ।
रविशशिशुक्रैः सहितैर्भवति नरो दन्तविकृतश्च ॥ १७६ ॥

सूर्य, चन्द्र और शुक्र यदि एक राशिगत हों तो पुरुष सुन्दर शरीर वाला, शत्रु का दमन करने वाला, अत्यन्त सम्पन्न राजा, सदैव तेजस्वी, तथा दाँतों के रोग से युक्त होता है ॥ १७६ ॥

धर्मपरो विगतधनो गजाश्वपरिपालकः सुकर्मरतः ।
रविरवितनयशशाङ्कैरेकस्थैर्विगतशीलश्च ॥ १७७ ॥

सूर्य, चन्द्र और शनि यदि एक ही भाव में स्थित हों तो जातक धर्मपरायण, निर्धन, हाथी-घोड़ों का पालक (गजाश्व-शाला का अधिकारी), अच्छे कार्यों में लीन, तथा शील (विनम्रता) से रहित होता है ॥ १७७ ॥

भानुभौमबुधैर्योगे ख्यातः साहसिको नरः ।
निष्ठुरो गतलज्जश्च धनस्त्रीपुत्रमण्डितः ॥ १७८ ॥

सूर्य, मङ्गल और बुध का योग एक ही राशि में हो तो मनुष्य विख्यात, साहसी, निष्ठुर, लज्जाहीन, धन, स्त्री एवं पुत्र से युक्त होता है ॥ १७८ ॥

जीवसूर्यकुजैर्योगे प्रचण्डः सत्यभाषणः ।
राजमन्त्री नरश्चापि सुवाक्यो निपुणो भवेत् ॥ १७९

सूर्य, मङ्गल और बृहस्पति का एक राशि में योग होने पर मनुष्य उग्र स्वभाव वाला, सत्यवादी, राज-मन्त्री, सुन्दर वचन बोलने वाला तथा निपुण होता है ॥ १७९ ॥

शुक्रभौमार्कसंयोगे सुभगो नयनातुरः ।
कुशीलो वत्सलो दक्षो विषयासक्तमानसः ॥ १८० ॥

सूर्य, मङ्गल तथा शुक्र का योग हो तो जातक सुन्दर, नेत्रों से रोगी, शील से रहित, स्नेहशील, चतुर, तथा हृदय से विषयों में अनुराग रखने वाला होता है ॥ १८० ॥

शनिसूर्यकुजैर्योगे मूर्खो गोधनवर्जितः ।
रोगार्तः स्वजनैर्हीनो विकलः कलहाकुलः ॥ १८१ ॥

सूर्य-मङ्गल एवं शनि का योग हो तो वह व्यक्ति, मूर्ख, गौ (रूपी) धन से रहित, रोग से पीड़ित, आत्मीय जनों से हीन, व्यग्र तथा लड़ाई-झगड़े के लिए उतावला रहता है ॥ १८१ ॥

बुधजीवार्कसंयोगे नेत्ररोगी महाधनी ।
शास्त्रशिल्पकलाभिज्ञो लिपिकर्त्ता भवेन्नरः ॥ १८२ ॥

सूर्य बुध और गुरु का योग हो तो वह व्यक्ति नेत्र-रोगी, बहुत धनवान, शास्त्र, शिल्प (पत्थर एवं काष्ठ कला), कला (चित्रकारी, नृत्य, गीत आदि) का ज्ञाता तथा लेखन कार्य करने वाला होता है ॥ १८२ ॥

शुक्रसूर्यबुधैर्योगे गुरुवर्गैर्निराकृतः ।
आभिशप्तो दिशो याति स्त्रीहेतोस्तप्तमानसः ॥ १८३ ॥

सूर्य बुध और शुक्र का योग एक राशि में होने पर जातक गुरु वर्ग (माता-पिता-गुरुजन) से अपमानित एवं अभिशप्त (शाप प्राप्त कर) होकर इधर-उधर भ्रमण करता है तथा स्त्री के लिए सन्तप्त होता है ॥ १८३ ॥

शनिसूर्यबुधैर्योगे दुराचारः पराजितः ।
बन्धुभिश्च परित्यक्तो विद्वेषी जायते नरः ॥ १८४ ॥

सूर्य, बुध और शनि का योग हो तो मनुष्य दुराचारी, पराजय प्राप्त करने वाला, भाइयों द्वारा परित्यक्त, तथा विरोध करने वाला होता है ॥ १८४ ॥

मन्दजीवार्कसंयोगे पुत्रमित्रकलत्रवान् ।
निर्भय नृपतिद्वेष्टा स्वेष्टबन्धुर्भवेन्नरः ॥ १८५ ॥

सूर्य गुरु और शनि के संयोग से मनुष्य पुत्र-मित्र-स्त्री से संयुक्त, निडर, राजा से द्वेष करने वाला, तथा अपने भाइयों का हितैषी होता है ॥ १८५ ॥

चन्द्रचान्द्रिकुजैर्योगे निजाचारश्च पापकृत् ।
आजीवितहतो लोके बन्धुहीनश्च जायते ॥ १८६ ॥

चन्द्रमा, मङ्गल और बुध का योग हो तो मनुष्य नीच आचरण वाला, पापकर्म में रत, जीवन पर्यन्त संसार में अपमानित तथा भाइयों से रहित होता है ॥१८६॥

चन्द्रजीवकुजैर्योगे स्त्रीलोलो वर्णसंयुतः ।
कान्तश्च सङ्गतः स्त्रीणां चन्द्रतुल्यमुखो भवेत् ॥ १८७ ॥

चन्द्रमा, बृहस्पति और मङ्गल यदि एक ही राशि में हों तो वह व्यक्ति स्त्रियों के प्रति चञ्चल, वर्णों से युत, सुन्दर, स्त्रियों का अनुगामी, तथा चन्द्रमा के समान मुखवाला होता है ॥ १८७ ॥

चन्द्रशुक्रकुजैर्योगे दुःशीलायाः पतिः सुतः।
सदा भ्रमणशीलश्च शीतभीतोऽपि जायते ॥ १८८ ॥

चन्द्रमा, शुक्र और मङ्गल का योग एक राशि में हो तो वह व्यक्ति दुष्टा स्त्री का पति एवं दुष्टा स्त्री का पुत्र होता है। (अर्थात् ऐसे व्यक्ति की माता एवं स्त्री दोनों ही दुष्टा होती हैं।) सदैव भ्रमण करने वाला तथा शीत से डरने वाला व्यक्ति होता है ॥ १८८ ॥

शनिचन्द्रकुजैर्योगे बाल्ये स्यान्मृतमातृकः।
क्षुद्रावलोकविद्विष्टो विषमो जायते नरः ॥ १८९ ॥

चन्द्र, मङ्गल और शनि का योग हो तो जातक की बाल्यावस्था में ही माता की मृत्यु हो जाती है, क्षुद्र लोग (उससे) देखने मात्र से ईर्ष्या-द्वेष करते हैं तथा उसका जीवन कठिन होता है ॥ १८९ ॥

जीवचन्द्रबुधैर्योगे तेजस्वी धनवानपि।
पुत्रमित्रादिसंयुक्तो वाग्मी ख्यातश्च कीर्तिमान् ॥ १९० ॥

चन्द्रमा, बुध और गुरु का योग एक राशि में हो तो व्यक्ति तेजस्वी, धनवान, पुत्र-मित्र आदि (सुजनों) से युक्त कुशल वक्ता तथा विख्यात होता है ॥ १९० ॥

बुधेन्दुभार्गवैर्योगे विद्ययालङ्कृतो नरः।
सेर्ष्यो धनातिलोभी च नीचाचारश्च जायते ॥ १९१ ॥

बुध, चन्द्रमा और शुक्र का योग हो तो मनुष्य विद्या से सुशोभित, ईर्ष्यालु, धन के सम्बन्ध में अत्यन्त लोभी तथा नीच आचरण करने वाला होता है ॥१९१॥

बुधेन्दुमन्दसंयोगे प्राज्ञो भूपतिपूजितः।
अत्युच्चो विपुलाङ्गश्च वाग्मी भवति मानवः ॥ १९२ ॥

बुध, चन्द्र तथा शनि का योग हो तो पुरुष बुद्धिमान्, राजा से सम्मानित, ऊँचा एवं विशाल शरीर वाला तथा वाचाल होता है ॥ १९२ ॥

शुक्रजीवेन्दुसंयोगे साध्वीपुत्रश्च पण्डितः।
साधुः सर्वकलाभिज्ञः सुभगो जायते नरः ॥ १९३ ॥

शुक्र-गुरु और चन्द्रमा का योग एक राशि में हो तो जातक साध्वी स्त्री से उत्पन्न, पण्डित (विद्वान्), सज्जन, सभी कलाओं का ज्ञाता एवं सुन्दर होता है ॥ १९३ ॥

जीवेन्दुमन्दसंयोगे नीरोगः स्त्रीगतो नरः।
शास्त्रार्थवित् सर्वज्ञो ग्रामपत्तनपालकः ॥ १९४ ॥

गुरु, चन्द्रमा और शनि का योग यदि एक राशि में हो तो मनुष्य निरोग, स्त्री में आसक्त, शास्त्र का मर्मज्ञ, सबकुछ जानने वाला, ग्राम एवं नगर का पालन (रक्षा) करने वाला होता है ॥ १९४ ॥

शनिशुक्रेन्दुसंयोगे लिपिकर्ता च वेदवित् ।
पुरोहितकुलोत्पन्नो भवेत्पुस्तकवाचकः ॥ १९५ ॥

शनि-शुक्र और चन्द्रमा की युति हो तो जातक लिखने का कार्य करने वाला, वेद का ज्ञाता, पुरोहित कुल में उत्पन्न, पुस्तकों का वाचन (पुराणों की कथा) करने वाला होता है ॥ १९५ ॥

जीवभौमबुधैर्योगे सुकविर्युवतीप्रियः ।
परोपकारकृत्तीक्ष्णो गान्धर्वकुशलो भवेत् ॥ १९६ ॥

गुरु-मङ्गल एवं बुध का योग यदि एक राशि मे हो तो वह सुन्दर कवि, सुन्दर स्त्रियों का प्रेमी, परोपकारी, उग्र स्वभाव वाला, तथा गन्धर्व विद्या (नृत्य, गीत, अभिनय आदि) में निपुण होता है ॥ १९६ ॥

भृगुभौमबुधैर्योगे विकलाङ्गश्च चञ्चलः ।
अकुलीनः सदोत्साही तृप्तश्च मुखरो नरः ॥ १९७ ॥

शुक्र-मङ्गल और बुध का योग एक ही राशि में हो तो मनुष्य विकलाङ्ग (किसी अंग में विकार युक्त), चञ्चल, असम्मानित कुल में उत्पन्न, निरन्तर उत्साह युक्त, सन्तुष्ट, तथा सभी कार्यों में आगे रहने वाला होता है ॥ १९७ ॥

बुधमन्दकुजैर्योगे प्रवासी नेत्ररोगवान् ।
प्रेष्यो वदनरोगी च हास्यलुब्धो भवेन्नरः ॥ १९८ ॥

बुध-शनि और मङ्गल का योग एक ही भाव में हो तो मनुष्य परदेश में रहने वाला, नेत्रों से रोगी, दूत कार्य करनेवाला, मुख से रोगी, तथा हास्य का प्रेमी होता है ॥ १९८ ॥

जीवकाव्यकुजैर्योगे दिव्यनारीयुतः सुखी ।
सर्वानन्दकरो लोके जायते नृपतिप्रियः ॥ १९९ ॥

गुरु-शुक्र और मङ्गल का योग हो तो मनुष्य अत्यन्त सुन्दरी स्त्री से युक्त, सुखी, सदैव आनन्द करने वाला, तथा राजा का प्रिय पात्र होता है ॥ १९९ ॥

जीवमन्दकुजैर्योगे कुष्ठाङ्गो राजपूजितः ।
नीचाचारो निर्धनश्च भवेन्मित्रैर्विगर्हितः ॥ २०० ॥

बृहस्पति, शनि, और मङ्गल का योग यदि एक ही राशि में हो तो उस व्यक्ति के अङ्गों में कुष्ठ रोग होता है। वह राजा से सम्मानित, नीच आचरण करने वाला, निर्धन तथा मित्रों द्वारा अपमानित होता है ॥ २०० ॥

भृगुमन्दकुजैर्योगे दुःशीलायाः पतिः शुभः।
प्रवासशीलो दुःखी च जातको जायते सदा ॥ २०१ ॥

शुक्र, शनि और मङ्गल का योग यदि एक राशि में हो तो जातक दुष्ट स्वभाववाली स्त्री का पति होता है। स्वयं शुभ, परदेशवासी, तथा सदैव दुःखी होता है ॥ २०१ ॥

बुधेज्यभृगुसंयोगे सुतनुर्नृपपूजितः।
जितारिर्दीर्घकीर्तिश्च सत्यवादो भवेन्नरः ॥ २०२ ॥

बुध, गुरु और शुक्र का संयोग हो तो वह मनुष्य सुन्दर शरीर वाला, राजा से पूजित, शत्रुओं को जीतने वाला, अधिक यशस्वी तथा सत्यवादी होता है ॥२०२॥

बुधार्किजीवसंयोगे सुदारो बहुभाग्यवान्।
धनैश्वर्ययुतः प्राज्ञः सुखधैर्ययुतो भवेत् ॥ २०३ ॥

बुध, शनि और गुरु का योग हो तो व्यक्ति सुन्दर-स्त्री वाला, बहुत भाग्यशाली, धन-सम्पत्ति से युक्त, बुद्धिमान् सुख एवं धैर्य से युक्त होता है ॥ २०३ ॥

मन्दशुक्रबुधैर्योगे मुखरः पारदारिकः।
असत्कृतिः कलाभिज्ञः स्वदेशनिरतो भवेत् ॥ २०४ ॥

शनि, शुक्र और बुध का योग हो तो वह सभी कार्यों में अग्रणी, दूसरों की स्त्री में आसक्त, बुरी संगति वाला, कलाओं का ज्ञाता, तथा अपने देश में अनुराग रखने वाला होता है ॥ २०४ ॥

मन्देज्यशुक्रसंयोगे राजा भवति कीर्त्तिमान्।
नीचवंशेऽपि सम्भूतः शीलयुक्तो नृपो भवेत् ॥ २०५ ॥

शनि, बृहस्पति और शुक्र की युति यदि एक ही राशि में हो तो वह यशस्वी राजा होता है। यदि नीच कुल में भी उत्पन्न हो तो वह बहुत शालीन राजा होता है ॥ २०५ ॥

शुक्रजीवार्कसंयोगे राजमन्त्री च निर्धनः।
दुष्टचक्षुश्च शूरश्च प्राज्ञश्च परकर्मकृत् ॥ २०६ ॥

शुक्र, बृहस्पति और सूर्य का योग यदि एक राशि में हो तो वह व्यक्ति राजा का मन्त्री (मन्त्रिमण्डल का सदस्य), निर्धन, नेत्रों से रोगी, शूर, बुद्धिमान तथा दूसरों का कार्य करने वाला होता है ॥ २०६ ॥

शनिशुक्रार्कसंयोगे कलामानविवर्जितः।
कुष्ठी शत्रुभयोद्विग्नो दुराचारी नरो भवेत् ॥ २०७ ॥

शनि, शुक्र और सूर्य का योग एक राशि में हो तो मनुष्य कला और सम्मान से रहित, कुष्ठ रोगी, शत्रुओं के भय से उद्विग्न (परेशान) तथा कुत्राचारी होता है ॥ २०७ ॥

प्रायः पापैर्युते चन्द्रे मातुर्नाशो रवौ पितुः ।
शुभग्रहैः शुभं वाच्यं मिश्रितैर्मिश्रितं फलम् ॥ २०८ ॥

यदि चन्द्रमा पापग्रहों (कम से कम तीन पापग्रहों) से युक्त हो तो माता की तथा सूर्य (तीन से अधिक) पापग्रहों से युक्त हो तो प्रायः पिता की मृत्यु होती है । यदि सूर्य-चन्द्र (तीन) शुभग्रहों से युक्त हो तो शुभफल तथा मिश्रित (पाप और शुभ) ग्रहों से युक्त हो तो मिश्रित (शुभ-अशुभ दोनों) फल होता है ॥ २०८ ॥

शुभास्त्रयो ग्रहा युक्ताः कुर्वन्ति सुखिनं नरम् ।
पापास्त्रयो दुःखितं च दुर्विनीतं विगर्हितम् ॥ २०९ ॥

यदि तीन शुभग्रहों का योग एक राशि में हो तो मनुष्य सुखी होता है । यदि तीन पापग्रहों का योग हो तो मनुष्य दुःखी, अशिष्ट एवं निन्दित होता है ॥ २०९ ॥

चार ग्रहों का युतिफल

चन्द्रचान्द्रिकुजार्काणां योगे लिपिकरो नरः ।
तस्करो मुखरो वाग्मी मायावी कुशलो भवेत् ॥ २१० ॥

चन्द्र, बुध, मंगल तथा सूर्य का योग यदि एक राशि में हो तो मनुष्य लेखक (स्टेनो), चोर, अग्रणी (मुखिया), कामी, मायावी, तथा चतुर होता है ॥२१०॥

भौमभास्करचन्द्रेज्यसंयोगे निपुणो धनी ।
तेजस्वी गतशोकश्च नीतिज्ञश्च भवेन्नरः ॥ २११ ॥

मंगल, सूर्य, चन्द्र तथा बृहस्पति का संयोग यदि किसी राशि में हो तो मनुष्य, निपुण (चतुर), धनवान, तेजस्वी, चिन्ता शोक से रहित तथा नीति जानने वाला होता है । २११ ॥

सूर्येन्दुभौमशुक्राणां योगे विद्यार्थसंग्रही ।
सुखी पुत्री कलत्री च वाग्वृत्तिर्मनुजो भवेत् ॥ २१२ ॥

सूर्य, चन्द्र, मंगल तथा शुक्र का योग यदि एक ही भाव में हो तो मनुष्य विद्या एवं धन का संग्रह करने वाला, सुखी, पुत्रवान्, स्त्री युक्त तथा वाणी (वकालत, प्रवचन आदि) से जीविका चलाने वाला होता है ॥ २१२ ॥

अर्कार्किशशिभौमानां योगे मूर्खश्च निर्धनः ।
ह्रस्वो विषमदेहश्च भिक्षावृत्तिर्भवेन्नरः ॥ २१३ ॥

सूर्य, चन्द्र, मंगल तथा शनि का योग एक राशि में हो तो मनुष्य मूर्ख, निर्धन, छोटे कद का, विषम शरीर (कुबड़ा) वाला तथा भिक्षुक होता है ॥ २१३ ॥

सोमसौम्यार्कजीवानां योगे शिल्पकरो धनी ।
सौवर्णिकाप्लुताक्षश्च रोगहीनश्च जायते ॥ २१४ ॥

चन्द्र-बुध-सूर्य तथा गुरु का योग एक राशि में हो तो वह मूर्तिकार, धनी, स्वर्णकार एवं बड़ी-बड़ी आँखों वाला, रोग रहित होता है ॥ २१४ ॥

चन्द्रार्कबुधशुक्राणां संयोगे सुभगो नरः ।
ह्रस्वश्च राजमान्यश्च वाग्मी च विकलो भवेत् ॥ २१५ ॥

चन्द्र-सूर्य-बुध और शुक्र की युति यदि एक राशि में हो तो वह मनुष्य सुन्दर, छोटे कद का, राजसम्मानित, चतुर वक्ता तथा व्यग्र (उलझन युक्त) होता है ॥२०५॥

अर्कार्किचान्द्रिचन्द्राणां योगे भिक्षाशनो नरः ।
नियुक्तः पितृमातृभ्यां विकलाक्षश्च निर्धनः ॥ २१६ ॥

सूर्य, शनि, बुध तथा चन्द्रमा यदि एक ही भाव में हों तो मनुष्य माता-पिता द्वारा भिक्षा वृत्ति में नियुक्त होता है तथा भिक्षा से जीवन यापन करने वाला, विकलाक्ष (अन्धा, काना अथवा नेत्र-दोष-युक्त) तथा दरिद्र होता है ॥२१६॥

सूर्यचन्द्रेज्यशुक्राणां सम्बन्धे राजपूजितः ।
जलारण्यमृगस्वामी नरः स्यान्निपुणः सुखी ॥ २१७ ॥

सूर्य, चन्द्र, बृहस्पति शुक्र यदि एक ही राशि में स्थित हो तो वह व्यक्ति राजा से सम्मानित, जल (नौ सेना) जंगल (वन विभाग) तथा मृग (पशुओं या चिड़ियाघर) का अधिपति, कुशल कार्यकर्त्ता तथा सुखी होता है ॥ २१७ ॥

सूर्यचन्द्रार्किजीवानां मान्यश्च वनिताप्रियः ।
बहुवित्तसुतः क्षीणः समीक्षश्च प्रजायते ॥ २१८ ॥

सूर्य, चन्द्र, शनि तथा बृहस्पति यदि एक ही भाव में हों तो वह व्यक्ति स्त्री का प्रेमी, अधिक धन एवं पुत्रों वाला, दुर्बल तथा समान दृष्टि वाला होता है ॥ २१८ ॥

सितार्कचरवीन्दूनां योगे चात्यन्तदुर्बलः ।
वनितासद्भाषी धीवरप्रेसरो नरः ॥ २१९ ॥

शुक्र, शनि, सूर्य तथा चन्द्रमा का योग यदि एक ही राशि में हो तो मनुष्य

अत्यन्त दुर्बल शरीर वाला, स्त्री की तरह आचरण करने वाला, डरपोक तथा प्रायः सभी कार्यों में आगे रहने वाला होता है ॥ २१९ ॥

बुधार्ककुजजीवानां योगे सूत्रकरो नरः।
परदाररतः शूरो दुःखी चक्रधरो भवेत् ॥ २२० ॥

बुध, सूर्य, मंगल तथा गुरु का योग एक ही राशि में हो तो वह व्यक्ति सूत का कार्य करने वाला, परस्त्री में आसक्त, शूर (बलवान) तथा चक्र (अस्त्र विशेष अथवा चरखा) धारण करने वाला होता है ॥ २२० ॥

रविशुक्रकुजेन्दूनामन्वये पारदारिकः।
निर्लज्जो दुर्जनश्चौरो विषमाङ्गो नरो भवेत् ॥ २२१ ॥

सूर्य, शुक्र, मंगल, और चन्द्रमा की एक राशि में युति होने से मनुष्य परस्त्री में आसक्त, निर्लज्ज, दुष्ट, चोर, तथा विषम (कोई अंग छोटा कोई बड़ा) अंगों वाला होता है ॥ २२१ ॥

अर्कार्किबुधभौमानां योगे योद्धा कविर्जनः।
मन्त्री च भूपतिस्तीक्ष्णो नीचाचारोऽपि जायते ॥ २२२ ॥

सूर्य, शनि, बुध और मंगल की युति यदि एक ही राशि में हो तो जातक योद्धा, कवि, मन्त्री, राजा, तेज बुद्धि वाला, तथा नीच आचरण करने वाला होता है ॥ २२२ ॥

भौमार्कबुधशुक्राणां योगे पूज्यो धनी मतः।
सुभगो नृपमान्यश्च नरो भवति नीतिमान् ॥ २२३ ॥

भौम, सूर्य, बुध और शुक्र के योग से मनुष्य लोक में पूज्य, धनवान्, सुन्दर, राजा द्वारा सम्मानित तथा नीतिज्ञ होता है ॥ २२३ ॥

भान्वार्किभौमजीवानामैक्ये च गणनायकः।
सोन्मादो नृपमान्यश्च सिद्धार्थो जायते नरः ॥ २२४ ॥

सूर्य, शनि, मंगल तथा गुरु के एक राशि में योग होने पर मनुष्य समूह (संघ) का नेता, उन्मत्त, राजा द्वारा सम्मानित, अपनी इच्छाओं को पूर्ण करने वाला होता है ॥ २२४ ॥

मन्दमार्तण्डशुक्रारैः संयुक्तैर्जायते नरः।
लोकद्विष्टः समाख्यातो नीचाचारो जडाकृतिः ॥ २२५ ॥

शनि, सूर्य, शुक्र तथा मंगल का योग यदि एक राशि में हो तो मनुष्य सभी लोगों का द्वेषी कहा जाता है, नीच आचरण करने वाला तथा जड स्वरूप वाला होता है ॥ २२६ ॥

जीवशुक्रबुधार्काणां योगे बहुमतिर्नरः ।
धनी सुखी च सिद्धार्थः सुपुष्टश्च प्रजायते ॥ २२६ ॥

गुरु, शुक्र, बुध तथा सूर्य का योग यदि एक राशि में हो तो मनुष्य अधिक बुद्धिमान् (विविध विषयों का ज्ञाता), धनवान, सुखी, अपनी कामनाओं की पूर्ति करने वाला तथा अच्छी तरह से पुष्ट होता है ॥ २२६ ॥

अर्कार्किबुधदेवेज्यैरेकराशिस्थितैर्नरः ।
भ्रातृमान् कलही मानी क्लीबाचारी निरुद्यमः ॥ २२७ ॥

सूर्य, शनि, गुरु और बुध यदि एक ही भाव में स्थित हों तो मनुष्य भाइयों से युक्त झगड़ालू, घमण्डी, नपुंसकों की तरह आचरण करने वाला तथा उद्योगहीन (कोई कार्य न करने वाला) होता है ॥ २२७ ॥

शुक्रसौरिबुधार्काणां योगे मित्रयुतः शुचिः ।
मुखरः सुभगः प्राज्ञो जायते च सुखी नरः ॥ २२८ ॥

शुक्र, शनि, बुध तथा सूर्य का योग यदि एक ही राशि में हो तो मनुष्य मित्रों से युक्त, पवित्रात्मा मुखिया (नेतृत्व करने वाला), सुन्दर, बुद्धिमान् एवं सुखी होता है ॥ २२८ ॥

सूर्यसौरिसितेज्यानां सम्बन्धे लोभवान् सुखी ।
कविः कारुकनाथश्च राजप्रीतो भवेन्नरः ॥ २२९ ॥

सूर्य, शनि, शुक्र तथा गुरु का सम्बन्ध (योग) एक ही भाव में होने से मनुष्य लोभी, सुखी, कविता करने वाला, शिल्पकारों में श्रेष्ठ तथा राजा का प्रियपात्र होता है ॥ २२९ ॥

चन्द्रचान्द्रिकुजेज्यानां योगे शास्त्रविचक्षणः ।
नरेन्द्रश्च महामान्यो महाबुद्धिर्नरो भवेत् ॥ २३० ॥

चन्द्र, बुध, मंगल और बृहस्पति का योग एक ही भाव में होने से मनुष्य शास्त्रों में निष्णात, मनुष्यों में श्रेष्ठ, महान लोगों द्वारा सम्मानित तथा अत्यन्त बुद्धिमान होता है ॥ २३० ॥

भौमेन्दुबुधशुक्राणामन्वये बन्धकीपतिः ।
निद्रालुः कलही नीचो बन्धुद्वेषी जनो भवेत् ॥ २३१ ॥

मंगल, चन्द्रमा, बुध एवं शुक्र का संयोग यदि एक ही राशि में हो तो वह बन्ध्या स्त्री का पति, अधिक सोने वाला, झगड़ालू, नीच तथा भाई बन्धुओं से द्वेष करने वाला होता है ॥ २३१ ॥

भौमेन्दुबुधसौराणां योगे शूरकुलोद्भवः ।
पुत्रमित्रकलत्री च द्विमातृपितृको जनः ॥ २३२ ॥

भौम, चन्द्र, बुध तथा शनि का योग एक ही राशि में हों तो जातक शूर (बलवान एवं साहसी) व्यक्तियों के कुल में उत्पन्न, पुत्र, मित्र एवं स्त्री से युक्त होता है तथा उसके दो माता-पिता होते हैं ॥ २३२ ॥

चन्द्रारगुरुशुक्राणां योगे साहसिको भवेत् ।
विकलाङ्गो धनी पुत्री मानी प्राज्ञोऽपि जायते ॥ २३३ ॥

चन्द्रमा, मंगल, गुरु और शुक्र यदि एक ही राशि में हों तो जातक साहसी, विकलाङ्ग (किसी अङ्ग में विकार युक्त) धनवान्, पुत्र से युक्त, स्वाभिमानी, तथा बुद्धिमान होता है ॥ २३३ ॥

भौमेन्दुमन्दजीवानामन्वये बधिरो धनी ।
सोन्मादः स्थिरवाक्यश्च शूरो विज्ञो भवेन्नरः ॥ २३४ ॥

मंगल, चन्द्रमा, शनि, और गुरु के सम्बन्ध होने से जातक बहरा, धनवान, उन्माद (पागलपन) से युक्त, अपने वचन पर स्थिर रहने वाला, शूर तथा ज्ञानी होता है ॥ २३४ ॥

चन्द्रारशुक्रमन्दानां मलिनः कुलटापतिः ।
सोद्वेगः सर्पतुल्याक्षः प्रगल्भो जातको भवेत् ॥ २३५ ॥

चन्द्र, मंगल, शुक्र एवं शनि की युति एक ही राशि में हो तो जातक मलिन स्वभाव वाला, चरित्रहीन स्त्री का पति, चिन्ता एवं व्याकुलता से युक्त, सर्प के समान आँखों वाला तथा उद्दण्ड स्वभाव का होता है ॥ २३५ ॥

जीवशुक्रबुधेन्दूनामन्वये सुभगो धनी ।
विमातृपितृकः प्राज्ञो गतारिर्जायते नरः ॥ २३६ ॥

गुरु, शुक्र, बुध तथा चन्द्रमा का योग यदि एक ही राशि में हो तो वह व्यक्ति, सुन्दर, धनवान्, माता-पिता से रहित, बुद्धिमांन तथा शत्रुओं से रहित होता है ॥ २३६ ॥

मन्देज्यचन्द्रचान्द्रीणां योगे बन्धुप्रियः कविः ।
तेजस्वी राजमन्त्री च यशोधर्मयुतो नरः ॥ २३७ ॥

शनि, गुरु, चन्द्र और बुध का योग एक ही राशि में हो तो मनुष्य भाई बन्धुओं का प्रेमी, कवि, तेजस्वी (प्रभावशाली), राजा का मन्त्री, यशस्वी एवं धार्मिक होता है ॥ २३७ ॥

चन्द्रविच्छुक्रसौरीणां संयोगे नृपपूजितः ।
नेत्ररोगी पुराधीशो बहुस्त्रीयुतो धनी ॥ २३८ ॥

चन्द्रमा, बुध, शुक्र एवं शनि यदि एक ही राशि में हों तो वह व्यक्ति राजा से पूजित (सम्मानित), नेत्रों से रोगी, नगर का अधिपति (अधिकारी) तथा बहुत सी स्त्रियों से युक्त एवं धनी होता है ॥ २३८ ॥

चन्द्रेज्यसितसौरीणामन्वये पारदारिकः ।
प्राज्ञो निर्द्रव्यबन्धुश्च स्थूलभार्यो नरोत्तमः ॥ २३९ ॥

चन्द्रमा, गुरु, शुक्र एवं शनि के एक राशि में स्थित होने से व्यक्ति परस्त्री में आसक्त, बुद्धिमान, धन एवं बन्धुओं से रहित, स्थूल शरीर वाली पत्नी से युक्त तथा मनुष्यों में श्रेष्ठ होता है ॥ २३९ ॥

बुधारभृगुजीवानां योगे स्त्रीकलहप्रियः ।
धनी सुशीलो नीरोगो लोकपूज्यो नरो भवेत् ॥ २४० ॥

बुध, मंगल, शुक्र एवं गुरु यदि एक ही राशि में हों तो वह स्त्री एवं कलह (झगड़ा) का प्रेमी, धनवान्, सुशील, रोग से रहित (स्वस्थ), लोक में सम्मानित पुरुष होता है ॥ २४० ॥

भौमेज्यसौम्यसौरीणां योगे शूरश्च निर्धनः ।
सत्यशौचव्रतो विद्वान् दीनो वाग्मी नरो भवेत् ॥ २४१ ॥

भौम, गुरु, बुध एवं शनि का योग यदि एक ही राशि में हो तो मनुष्य शूरवीर, निर्धन, सत्यवादी, पवित्रात्मा, विद्वान्, दीन तथा वाक्पटु होता है ॥२४१॥

मल्लोऽन्यपुष्टियोद्धा च बुधारयमभार्गवैः ।
ख्यातो लोके दृढाङ्गश्च सारमेयरुचिर्भवेत् ॥ ४२२ ॥

बुध, मंगल, शनि, एवं शुक्र का योग यदि एक राशि में हो तो वह व्यक्ति, पहलवान, दूसरे लोगों द्वारा हृष्ट पुष्ट किया हुआ (अर्थात् किसी के आश्रित रहकर पहलवानी करने वाला), योद्धा, लोक प्रसिद्ध, पुष्ट अंगों वाला तथा कुत्ते की तरह स्वामिभक्त होता है ॥ २४२ ॥

भौमेज्यशनिशुक्राणां योगे स्याद्वासनातुरः ।
परदाररतो मानी कितवो जायते नरः ॥ २४३ ॥

भौम, गुरु, शनि एवं शुक्र का योग यदि एक ही राशि में हो तो मनुष्य वासना (काम, नशा आदि) से व्याकुल, परस्त्री में आसक्त, अभिमानी तथा धूर्त होता है ॥ २४३ ॥

मेधावी शास्त्रनिरतः कामी दासो विवेकवान् च।
बुधजीवसुक्रसौरैः सह स्थितस्तीव्रसंयोगे ॥ २४४ ॥

बुध, गुरु, शुक्र एवं शनिका तीव्र संयोग (निकटतम अंशों में) एक राशि में हो तो जातक प्रतिभाशाली, शास्त्राभ्यास में लीन, कामी, सत्य का दास (अर्थात् अधिक सत्यवादी) होता है ॥ २४४ ॥

पाँच ग्रहों का युतिफल

बहुप्रपञ्ची दुःखी च जायाविरहतापितः।
सूर्यादिजीवपर्यन्तैर्नरः स्यात्पञ्चभिर्ग्रहैः ॥ २४५ ॥

सूर्य से गुरु पर्यन्त (सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु) पाँच ग्रहों का योग यदि एक राशि में हो तो मनुष्य बहुत प्रपञ्च करने वाला, दुखी तथा स्त्री वियोग से सन्तप्त होता है ॥ २४५ ॥

गतसत्यो बन्धुहीनः परकर्मरतो नरः।
क्लीबस्य च सखा सूर्यभौमेन्दुबुधभार्गवैः ॥ २४६ ॥

सूर्य, भौम, चन्द्र बुध तथा शुक्र यदि एक ही साथ पड़े हों तो मनुष्य सत्य से रहित (अर्थात् झूठा), भाई से रहित, दूसरों के कार्य में रत तथा नपुंसक लोगों का साथी होता है ॥ २४६ ॥

स्यादल्पायुश्च विकलो दुःखी सुतविवर्जितः।
अर्कार्किबुधचन्द्रारयोगे बन्धनभागपि ॥ २४७ ॥

सूर्य, शनि, बुध, चन्द्र और मंगल की युति एक ही राशि में हो तो वह अल्पायु (अल्प समय तक जीवित रहने वाला), व्यग्र, दुःखी, पुत्रहीन, तथा बन्धन का भागी होता है (अर्थात् जेलयात्रा करनी पड़ती है) ॥ २४७ ॥

जात्यन्धो बहुदुःखी च पितृमातृविवर्जितः।
नागप्रीतो नरो भौमभानुचन्द्रेज्यभार्गवैः ॥ २४८ ॥

मंगल, सूर्य, चन्द्र, गुरु तथा शुक्र एक ही राशि में हो तो जाति का अन्धा अर्थात् जाति को न मानने वाला, बहुत दुखी, माता-पिता से रहित तथा हाथी का प्रेमी होता है ॥ २४८ ॥

परद्रव्यहरो योद्धा परतापकरः खलः।
समर्थो जायते मन्दचन्द्रजीवार्कभूसुतैः ॥ २४९ ॥

शनि, चन्द्र, गुरु, सूर्य एवं मंगल ये पाँचो ग्रह यदि एक राशि में गये हों तो जातक दूसरों के द्रव्य का हरण करने वाला, योद्धा, दूसरों को पीड़ित करने वाला दुष्ट तथा समर्थ (कार्य में सक्षम अथवा प्रभावशाली होता है ॥ २४९ ॥

मानाचारधनैर्हीनः परदाररतो नरः ।
एकस्थैर्जायते भानुभौमेन्दुशनिभार्गवैः ॥ २५० ॥

सूर्य, भौम, चन्द्र, शनि एवं शुक्र यदि एक ही राशि में हो तो मनुष्य सम्मान, आचार-विचार एवं धन से रहित; तथा दूसरों की स्त्री में आसक्त होता है ॥२५०॥

राजमन्त्री भूरिवित्तो यन्त्रज्ञो दण्डनायकः ।
ख्यातो जने यशस्वी च जीवार्केन्दुज्ञभार्गवैः ॥ २५१ ॥

गुरु, सूर्य, चन्द्र, बुध और शुक्र एक ही राशि में स्थित हों तो जातक, राजा का मन्त्री, बहुत अधिक धनवान, यन्त्रों के ज्ञान में निपुण, दण्ड देने के अधिकार से युक्त तथा यशस्वी होता है ॥ २५१ ॥

परान्नभोजी सोन्मादः प्रियतप्तश्च वञ्चकः ।
उग्रो भीरुर्नरः सूर्यशनिचन्द्रेज्यचन्द्रजैः ॥ २५२ ॥

सूर्य, शनि, चन्द्र, गुरु, बुध यदि एक साथ हो तो मनुष्य, दूसरे का अन्न खाने वाला, उन्मत्त, अपने प्रियजनों को सन्तप्त (दुःखी) करने वाला, धूर्त (ठग), क्रोधी तथा डरपोक होता है ॥ २५२ ॥

धनपुत्रसुखैर्हीनो मृत्यूत्साही च लोमशः ।
दीर्घो भवति चन्द्रार्कबुधशुक्रशनैश्चरैः ॥ २५३ ॥

चन्द्र, सूर्य, बुध, शुक्र तथा शनि एक ही राशि में हों तो वह धन, पुत्र एवं सुख से रहित, आत्महत्या की चेष्टा करने वाला, रोम (बाल) युक्त शरीर वाला तथा शरीर से लम्बा होता है ॥ २५३ ॥

इन्द्रजालरतो वाग्मी चलचित्तोऽङ्गनाप्रियः ।
प्राज्ञश्च दक्षो निर्भीतः शुक्रेज्यार्केन्दुसूर्यजैः ॥ २५४ ॥

शुक्र, गुरु, सूर्य, चन्द्र और शनि यदि एक ही भाव में स्थित हों तो वह व्यक्ति जादूगर (खेल दिखाने वाला), चतुर वक्ता, चञ्चल मन वाला, स्त्रियों का प्रेमी, बुद्धिमान, निपुण, तथा भय से रहित होता है ॥ २५४ ॥

स्फीतो बहुहयः कामी नरः शोकी चमूपतिः ।
बुधार्ककुजशुक्रेज्यैः सुभगो भूपतेः प्रियः ॥ २५५ ॥

यदि एक ही राशि में बुध, सूर्य, मंगल, शुक्र तथा गुरु स्थित हों तो जातक, मोटा-ताजा अधिक घोड़ों को रखने वाला, कामवासना युक्त, चिन्ता युक्त, सेनापति, (सेना में अधिकारी), आकृति से सुन्दर, तथा राजा का प्रिय पात्र होता है ॥ २५५ ॥

भिक्षाभोगी च रोगी च नित्योद्विग्नो मलीमसः ।
जीर्णो नरो भानुभौमशनिजीवबुधैर्भवेत् ।। २५६ ।।

यदि जन्म समय में सूर्य, मंगल, शनि, गुरु और बुध एक ही साथ हों तो वह मनुष्य भिक्षावृत्ति से निर्वाह करने वाला, रोग-युक्त, प्रतिदिन व्याकुल रहने वाला, मलिन वेषभूषा-युक्त तथा जर्जर शरीर वाला होता है ।। २५६ ।।

व्याधिभिः शत्रुभिर्ग्रस्तः स्थानभ्रष्टो बुभुक्षितः ।
नरः स्याद्विकलः शुक्रमन्दार्कबुधभूसुतैः ।। २५७ ।।

शुक्र, शनि, सूर्य, बुध एवं मंगल यदि एक साथ हों तो जातक व्याधि (रोग) तथा शत्रु से पीड़ित, स्थान से च्युत (अर्थात् घर छोड़ कर अन्यत्र निवास करे अथवा अपने पद (नौकरी) से हटा दिया जाय भूख से पीड़ित, तथा व्याकुल होता है ।। २५७ ।।

विज्ञो विचारदेहश्च धातुयन्त्ररसायनैः ।
नरः प्रसिद्धो भूपुत्ररविजीवसितासितैः ।। २५८ ।।

यदि मंगल, सूर्य, गुरु, शुक्र तथा शनि एक ही राशि में हों तो वह व्यक्ति विद्वान्, विवेकशील, धातु (लोहा, तांबा, सोना, चाँदी, रांगा, सीसा, जस्ता, पारा) यन्त्र (मशीनरी), तथा रसायन (औषधि तथा अन्य तेजाब, स्प्रिट आदि) के कार्यों में प्रसिद्ध होता है ।। २५८ ।।

मित्रप्रीतिः शास्त्रवेत्ता धार्मिको गुरुसम्मतः ।
दयालुः शुक्रसूर्यार्किबुधजीवैर्जनो भवत् ।। २५९ ।।

यदि जन्म समय में शुक्र सूर्य, शनि, बुध और गुरु पांचो एकत्र हों तो मनुष्य मित्रों से प्रेम रखने वाला, शास्त्रों का ज्ञाता, धार्मिक, गुरुजनों (माता-पिता, शिक्षागुरु आदि वरिष्ठजनों) का आज्ञाकारी तथा दयालु होता है ।। २५९ ।।

साधुः कल्याणहीनश्च धनविद्यासुखान्वितः ।
बहुपुत्रो नरो जीवभौमेन्दुबुधभार्गवैः ।। २६० ।।

गुरु, मंगल, चन्द्रमा, बुध और शुक्र यदि जन्म काल में एक ही राशि में स्थित हों तो वह व्यक्ति सज्जन कल्याण (मंगल कार्यों अथवा किसी की सहायता से) रहित, धन, विद्या, और सुख से युक्त, बहुत पुत्रों वाला, होता है ।। २६० ।।

परान्नयाचको विप्रो मलिनस्तिमिरामयी ।
नरो भवति भौमेन्दुजीवशुक्रशनैश्चरैः ।। २६१ ।।

यदि मंगल, चन्द्र, गुरु, शुक्र एवं शनि एक ही भाव म बैठं हों तो मनुष्य दूसरों

से अन्न माँगने वाला (भिक्षुक अथवा उधार करने वाला) ब्राह्मण वृत्ति वाला, मलिन आचरण एवं वेषभूषा-युक्त तथा रतौंधी (रात में न दीखना) रोग से ग्रस्त होता है ॥ २६१ ॥

दुर्भगो मलिनो मूर्खः प्रेष्यः क्लीबश्च निर्धनः।
नरो भवति चन्द्रज्ञशुक्रसौरिमहीसुतैः ॥ १६२ ॥

चन्द्र, बुध, शुक्र, शनि और मंगल ये पाँचों ग्रह यदि एक ही राशि में स्थित हों तो जातक भद्दी आकृति वाला, मलिन स्वभाव युक्त, मूर्ख, भृत्य (सन्देश वाहक, चपरासी) नपुंसक तथा निर्धन होता है ॥ २६२ ॥

बहुमित्रारिपक्षश्च दुःशीलः परपीडकः।
मानी नरः सोमजीवशुक्रमन्दधरासुतैः ॥ २६३ ॥

जन्म समय में यदि चन्द्र, गुरु, शुक्र, शनि एवं मंगल एक ही राशि में हों तो जातक बहुत मित्रों एवं शत्रुओं से युक्त, दुष्ट, दूसरों को पीड़ित करने वाला अभिमानी, होता है ॥ २६३ ॥

राजमन्त्री राजतुल्यो लोकपूज्यो गुणाधिकः।
चन्द्रचन्द्रजमन्देज्यभृगुपुत्रैर्नरो भवेत् ॥ २६४ ॥

जन्म समय में यदि चन्द्र, बुध, शनि, गुरु, और शुक्र एक ही राशि में हो तो मनुष्य राजा का मन्त्री, राजा के समान प्रभावशाली एवं धनवान्, समाज में पूज्य (सम्मानित) तथा अधिक गुणवान् होता है ॥ २६४ ॥

अलसस्तामसो नित्यं सोन्मादो राजवल्लभः।
निद्रातुरो नरो भौमबुधजीवार्किभार्गवैः ॥ २६५ ॥

यदि जन्मकाल में भौम, बुध, गुरु, शनि और शुक्र एक ही राशि में हों तो जातक आलसी, क्रोधी, सदैव उन्मत्त रहने वाला, राजा का प्रियपात्र तथा निद्रालु (निरन्तर ऊँघनेवाला) होता है ॥ २६५ ॥

छः ग्रहों का युतिफल

विद्याधर्मधनैर्युक्तो बहुभोगी च भाग्यवान्।
सूर्याद्यैः शुक्रपर्यन्तैः ख्यातो भवति षड्ग्रहैः ॥ २६६ ॥

सूर्य से शुक्र पर्यन्त (सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र) छः ग्रहों का योग यदि एक ही भाव में हो तो वह विद्या, धर्म, और धन से युक्त, सभी सुखों का उपभोग करने वाला, भाग्यशाली पुरुष होता है ॥ २६६ ॥

परकार्यकरो दाता शुद्धात्मा चञ्चलाकृतिः।
षड्भिर्ग्रहैर्विना शुक्रं रमते विजयी वनः ॥ २६७ ॥

जन्म समय में यदि शुक्र के बिना छः ग्रहों (सू. च. मं. बु. गु. श.) का योग हो तो वह दूसरों का कार्य करने वाला (परोपकारी), दानी, शुद्ध हृदयवाला, स्वभाव से चञ्चल तथा विजय प्राप्त कर आनन्द लेने वाला होता है ॥ २६७ ॥

संशयी सुभगो मानी ख्यातो युद्धेऽरिमर्दकः ।
विना जीवं ग्रहैः षड्भिर्विवादे रमते जनः ॥ २६८ ॥

यदि बृहस्पति के बिना छः ग्रहों (सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, शुक्र, शनि) का योग एक ही राशि में हो तो वह संशयात्मा (हर समय सन्देह करने वाला अविश्वासी), सुन्दर, स्वाभिमानी, विख्यात, युद्ध में शत्रुओं का दमन करने वाला, तथा विवाद (लड़ाई-झगड़ा) में आनन्द लेने वाला होता है ॥ २६८ ॥

भार्याप्रियो रणोत्साही विभ्रमक्रोधलोभवान् ।
अर्कार्किचन्द्रभौमेज्यभार्गवैः सुभगो नरः ॥ २६९ ॥

सूर्य, शनि, चन्द्र, मंगल, गुरु, एवं शुक्र का योग यदि एक ही भावमें हो तो मनुष्य पत्नी से प्रेम करने वाला, संग्राम में उत्साही, संशयशील, क्रोधी, लोभी तथा सुन्दर होता है ॥ २५९ ॥

कलत्रहीनो निर्द्रव्यो राजमन्त्री क्षमायुतः ।
रवीन्दुबुधजीवार्किभृगुभिः सुभगो नरः ॥ २७० ॥

जिसके जन्म समय में सूर्य, चन्द्र, बुध, गुरु, शनि एवं शुक्र एक ही भाव में हों तो वह स्त्री से रहित, धनहीन, राजा का मन्त्री, क्षमाशील, तथा सुन्दर पुरुष होता है ॥ २७० ॥

धनदारसुतैर्हीनस्तीर्थगामी वनाश्रितः ।
सूर्यारसौम्यजीवार्किभृगुपुत्रैर्भवेन्नरः ॥ २७१ ॥

सूर्य, मंगल, बुध, गुरु, शनि, शुक्र इन छः ग्रहों का योग एक राशि में हों तो वह धन, स्त्री और पुत्र से रहित, तीर्थ यात्रा करने वाला वनवासी पुरुष होता है ॥ २७१ ॥

धनी मन्त्री शुचिस्तन्द्री बहुभार्यो नृपप्रियः ।
विना सूर्यग्रहैः षड्भिः प्रतापी जायते नरः ॥ २७२ ॥

सूर्य के बिना अन्य छः ग्रहों (चन्द्र, मंगल, बुध, शुक्र, शनि) का योग एक ही भाव में हो तो वह व्यक्ति धनवान्, मन्त्री, पवित्रात्मा, आलसी (अर्ध निद्रा की स्थिति में), बहुत पत्नियों (कई विवाह करने) वाला, राजा का प्रियपात्र, तथा प्रतापी होता है ॥ २७२ ॥

प्रायो दरिद्रो मूर्खस्च षड्भिर्वा पञ्चभिर्ग्रहैः।
अन्योन्यदर्शनात्तेषां फलमेतत्प्रकीर्तितम् ॥ २७३ ॥

पाँच ग्रहों के या छः ग्रहों के योग में उत्पन्न जातक प्रायः दरिद्र या मूर्ख होता है। अब तक जो फल कहे गये हैं वे इनकी पारस्परिक दृष्टियों पर आश्रित हैं ॥ २७३ ॥

विशेष—पांच-छः ग्रहों का योग किसी जन्म कुण्डली में देख कर उक्त फल कह देना अनुचित होगा। क्यों कि ग्रहों की युति सभी भावों में एक ही समान फलदायक हो यह सिद्धान्ततः असंगत होगा। युति में पाप ग्रहों तथा शुभग्रहों के बलाबल के अनुसार किन-किन भावों के साथ युति एवं दृष्टि सम्बन्ध हो रहा है, इसका विचार करते हुये फलादेश करना चाहिये।

सात ग्रहों का युतिफल

दिवाकरनिभस्तेजा भूपमान्यः शिवप्रियः।
सूर्याद्यैः शनिपर्यन्तैर्योगे दानी धनान्वितः ॥ २७४ ॥

सूर्य से शनि तक सात ग्रहों (सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि) का योग एक ही राशि में हो तो जातक सूर्य के समान तेजस्वी, राजा द्वारा सम्मानित, शिवभक्त (भगवान शिव की आराधना करने वाला), दानी तथा धनवान् होता है ॥ २७४ ॥

केन्द्रायु साधन

केन्द्रांशसंख्यां त्रिगुणां विधाय राह्वारशन्यङ्ककृतो विहीनम्।
आयुःप्रमाणं कथितं मुनीन्द्रैश्चिरन्तनैर्ज्योतिषिकैः स्मृतञ्च ॥ २७५ ॥

केन्द्रस्थान्स्थितानङ्कांस्त्रिगुणीकृत्य यावान् पिण्डस्तावद्वर्षसंख्यायुः, यदि केन्द्रमध्ये राहुशनिमङ्गला भवन्ति (तदा) तत्केन्द्राङ्कान् संमील्य शेषं त्रिगुणं कार्यम्।

इति जन्मपत्रीपद्धतौ भावचक्रानयनभावाध्यायद्वित्रिचतुः
पञ्चग्रहषड्ग्रहसप्तग्रहफलाध्यायो द्वितीयः ॥ २ ॥

सभी केन्द्र स्थानों (१, ४, ७, १० भावों) में स्थित राशि संख्याओं को जोड़कर तीन से गुणा कर लें। यदि केन्द्र स्थानों में राहु, शनि और मंगल हो या इनमें से कोई भी ग्रह हो तो उनकी राशि संख्याओं का योग उक्त त्रिगुणित संख्या से घटाने पर शेष केन्द्रायु का वर्षमान होता है। ऐसा प्राचीन दैवज्ञ ऋषियों का मत है।

गद्यार्थ—केन्द्र स्थानों में स्थित राश्यङ्कों के योग को तीन से गुणा करने से जितनी गुणनफल संख्या हो उतने वर्ष तुल्य आयु होती है। यदि केन्द्र स्थानों में शनि, राहु और मंगल स्थित हो तो इन ग्रहों की राशि संख्याओं के योग को (राश्यंको के योग से) घटाकर शेष का तीन गुना आयु होती है।

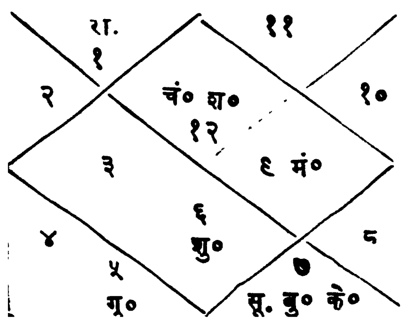
विशेष—श्लोक सं. २६५ के अनुसार केन्द्रांको के त्रिगुणित योग से राहु शनि एवं मंगल की राशियों का योग घटाने से आयु होती हैं। परन्तु गद्य द्वारा इससे भिन्न भाव स्पष्ट होता है। गद्य का आशय यह है कि केन्द्रांको के योग से राहु शनि और मंगल की संख्याओं का योग घटाकर तीन गुना करने से आयु होती है। इस प्रकार दोनों विधि से आयु साधन में बहुत अन्तर आयेगा। 'जातकतत्त्व' की टीका में भी गद्य का ही भावार्थ लिया गया है।

केन्द्रायु का मान स्थूल है। इसे स्पष्टायु नहीं मानना चहिये।

कहीं-कहीं पर राहु और मंगल की ही संख्या घटाने का उल्लेख है।

उदाहरण—यदि किसी व्यक्ति की जन्मकालिक ग्रहस्थिति निम्नलिखित चक्र के अनुसार हो तो उसकी केन्द्रायु का प्रमाण इस प्रकार होगा—

जन्माङ्ग—



श्लोकानुसार केन्द्र स्थित राश्यंकों का योग=१२+३+६+९=३०

३०×३=९० वर्ष

शनि अधिष्ठित राशि १२+भौम अधिष्ठित राशि ९ दोनों का योग १२+९=२१। (राहु केन्द्र से बाहर है अतः यहाँ राहु की गणना नहीं की गई।)

९०−२१=६९ वर्ष केन्द्रायु हुई।

गद्य में कहे गये नियमानुसार केन्द्राङ्कों के योग ३० से शनि मंगल अधिष्ठित राशि योग २१ घटाने से शेष ९ का तीन गुना (९×३) २७ वर्ष केन्द्रायु हुई।

दोनो स्थितियों में अपेक्षाकृत प्रथम सिद्धान्त व्यवहार योग्य है।

विमला हिन्दी व्याख्या सहित मानसागरी का

द्वितीय अध्यायसमाप्त ॥ २ ॥

तृतीयोऽध्यायः

मंगलाचरण

प्रणिपत्य परं ज्योतिः सर्वं च जगतीतलम् ।
तमःप्रशमनं वक्ष्ये जन्मशास्त्रप्रदीपकम् ।। १ ।।

परम ज्योतिस्वरूप परब्रह्म को तथा समस्त विश्व को प्रणाम कर अन्धकार (अज्ञान) को नष्ट करने वाले जन्मशास्त्रप्रदीप (जातकपद्धति जिसके द्वारा मानव जीवन की भूत-वर्तमान एवं भविष्य सम्बन्धी समस्त घटनाओं का ज्ञान किया जाता है) को कह रहा हूँ ।। १ ।।

द्वादश भावगत लग्नेश का फल

लग्नाधिपतिर्लग्ने नीरोगं दीर्घजीविनं कुरुते ।
अतिबलमवनीशं वा भूलाभसमन्वितं जातम् ।। २ ।।

जन्मलग्न का स्वामी यदि लग्न में हो तो जातक स्वस्थ, दीर्घजीवी, अत्यन्त बलवान्, राजा, तथा भूमिलाभ से सम्पन्न होता है ।। २ ।।

लग्नपतिर्धनभवने धनवन्तं विपुलजीविनं स्थूलम् ।
अतिबलमवनीशं वा भूलाभं वा सुधर्मरतं कुरुते ।। ३ ।।

लग्नेश यदि धन स्थान (द्वितीय भाव) में स्थित हो तो वह जातक को धनवान्, दीर्घजीवी, स्थूल (मोटा शरीरवाला) अत्यन्त शक्तिशाली, राजा बनाता है तथा भूमिलाभ एवं धर्म में लीन करता है ।। ३ ।।

सहजगतो लग्नपतिः सद्बन्धुप्रवरमित्रपरिकलितम् ।
धर्मरतं दातारं शूरं सबलं करोति नरम् ।। ४ ।।

लग्न का स्वामी यदि तृतीय भाव में स्थित हो तो अच्छे भाइयों एवं श्रेष्ठ मित्रों से युक्त, धर्माचरण में लीन, दानी, शूर एवं बलवान् होता है ।। ४ ।।

लग्नेशे तुर्यगते नृपप्रियं प्रचुरजीवितं कुरुते ।
सँल्लब्धपितरं पित्रो भक्तमबहुभोजनं जातम् ।। ५ ।।

लग्नेश यदि चतुर्थ भाव में गया हो तो जातक राजा का प्रियपात्र, दीर्घजीवी, पिता को प्राप्त करने वाला (अर्थात् दत्तक), माता-पिता का भक्त तथा स्वल्पाहारी होता है ।। ५ ।।

पञ्चमगे लग्नपतौ सुसुतं सत्यागमीश्वरं विदितम् ।
बहुजीविनं सुगीतं सुकर्मनिरतं जनं कुरुते ॥ ६ ॥

यदि लग्न का अधिपति पञ्चम भाव में गया हो तो जातक अच्छे पुत्रों (सुयोग्य पुत्रों) से युक्त, त्यागी, राजा (अथवा प्रधान), सुविख्यात्, दीर्घजीवी, यशस्वी (जिसके गुणों का गान किया जाता हो), तथा सत्कर्म में लीन रहने वाला होता है ॥ ६ ॥

रिपुभवने लग्नेशो नीरोगं लब्धभूमिं च ।
सबलं कृपणं धनिनं सुकर्मपक्षान्वितं कुरुते ॥ ७ ॥

लग्नेश शत्रुभाव (षष्ठ भाव) में गया हो तो वह जातक को निरोग (स्वस्थ), भूमिलाभ, बलवान्, कंजूस, धनी, तथा अच्छे कार्यों को करने वाला एवं सत्कर्मियों का साथी बनाता है ॥ ७ ॥

प्रथमपतौ सप्तमगे तेजस्वी शोकवान् भवेत्पुरुषः ।
तद्भार्यापि सुशीला तेजःकलिता सुरूपा च ॥ ८ ॥

प्रथम भाव (लग्न) का स्वामी यदि सातवें भाव में स्थित हो तो व्यक्ति तेजस्वी एवं शोक सन्तप्त होता है तथा उसकी पत्नी सुशीला, तेजस्विनी एवं सुन्दर स्वरूप वाली होती है ॥ ८ ॥

लग्नपतावष्टमगे कृपणो धनसञ्चयी तु दीर्घायुः ।
क्रूरे खगे तु खेचरे काणः सौम्ये पुरुषो भवेत्सौम्यः ॥ ९ ॥

लग्नेश यदि अष्टम भाव में हो तो जातक कंजूस, धन का संग्रह करने वाला, दीर्घायु होता है यदि लग्नेश पापग्रह हो तो जातक काना, शुभग्रह हो तो सौम्य (भोला-भाला) होता है ॥ ९ ॥

मूर्तिपतिर्यदि नवमे तदा भवति प्रचुरबान्धवः सुकृतिः ।
समभिन्नस्तु सुशीलः सुमती ख्यातः सुतेजस्वी ॥ १० ॥

लग्नेश यदि नवम भाव में हो तो वह अधिक भाई बन्धुओं से युक्त, अच्छा कार्य करने वाला, अपने समान वर्ग में मित्रता करने वाला, सद्बुद्धि वाला विख्यात एवं तेजस्वी होता है ॥ १० ॥

प्रथमेशो दशमस्थो नृपलाभी पण्डितः सुशीलश्च ।
गुरुमातृपूजनमतिर्नृपप्रसिद्धः पुमान् भवति ॥ ११ ॥

प्रथम (लग्न) भाव का स्वामी दशमभाव में हो तो वह व्यक्ति राजा से लाभान्वित, विद्वान्, सुशील, गुरु, माता-पिता के प्रति श्रद्धालु, तथा राजाओं में प्रसिद्ध (सम्मानित) होता है ॥ ११ ॥

एकादशस्थतनुपः सुखोषितं सुतसमन्वितं विदितम् ।
तेजःकलितं कुरुते पुरुषं बलिनं सुवाहनैर्युक्तम् ॥ १२ ॥

लग्नेश यदि ग्यारहवें भाव में हो तो जातक का जीवन सुखी, पुत्रों से युक्त, ख्यातिप्राप्त, तेज युक्त, बलवान् तथा अच्छे वाहनों से युक्त होता है ॥ १२ ॥

द्वादशगे मूर्तिपतौ कटुकवत् कर्मपरोऽशुभो नीचः ।
मानी सहगोत्रीभिर्विदेशगो दत्तभक्तनरः ॥ १३ ॥

यदि बारहवें भाव में लग्नेश हो तो वह व्यक्ति कटु कर्म (कुत्सित कर्म) करने वाला, अशुभचिन्तक, नीच, अपने भाई-बन्धुओं के प्रति अभिमान प्रकट करने वाला, विदेश में प्रवास करने वाला, तथा परान्न भोजी होता है ॥ १३ ॥

धनेश का द्वादश भावों में फल

द्रव्यपतिर्लग्नगतः कृपणं व्यवसायिन सुकर्माणम् ।
धनिन श्रीपतिर्विदितं करोति नरमतुलभोगयुतम् ॥ १४ ॥

धन भाव का स्वामी यदि लग्न (प्रथम) भाव में गया हो तो मनुष्य कंजूस, व्यापारी, सत्कर्म करने वाला, धनी, धनपतियों में विख्यात तथा अतुल भोग (समस्त भौतिक सुख सम्पदा) से युक्त होता है ॥ १४ ॥

व्यवसायी च सुलाभी ह्युत्पन्नभुगलीककारको नीचः ।
नालीकर्कृद्विदितोऽपि च पूर्णोद्वेगी धनपतौ धनगे ॥ १५ ॥

धनेश यदि धन भाव में ही हो तो जातक व्यापारी, अच्छा लाभ करने वाला, उत्पन्न वस्तु (अपने प्रयास से अर्जित वस्तु) का उपभोग करने वाला, झूठा व्यवहार करने वाला, नीच, सत्यवादी के रूप में विख्यात होने पर भी उद्विग्न रहने वाला होता है ॥ १५ ॥

धनपे सहजगते चेद्बन्धुविभेदादिवर्जितः क्रूरे ।
सौम्ये राजविरोधी भूतनये तस्करः पुरुषः ॥ १६ ॥

पाप ग्रह धनेश होकर यदि तृतीय भाव में हो तो बन्धु बान्धवों से किसी प्रकार का भेद नहीं होता यदि शुभग्रह हो तो राजा का विरोधी तथा यदि मंगल धनेश होकर तृतीय भाव में हो तो वह व्यक्ति चोर होता है ॥ १६ ॥

तुर्यगते द्रविणपतौ पितृलाभपरः सत्यदयायुक्तः ।
दीर्घायुः क्रूरखगे पुनरथ वा मरणं विनिर्दश्यम् ॥ १७ ॥

चतुर्थ भाव में यदि धनेश हो तो पिता से लाभ, सत्य एव दया युक्त, दीर्घ जीवी, होता है परन्तु धनेश यदि पाप ग्रह हो तो जातक की शीघ्र मृत्यु होती है ॥ १७ ॥

तनयकमलविलासी कष्टतरे कर्मणि प्रसिद्धं च।
कृपणं दुःखनिधानं तनयगतो धनपतिः कुरुते ॥ १८ ॥

धनेश यदि पञ्चम भाव में गया हो तो वह कमल के समान (प्रसन्न चित्त) पुत्रों के साथ सुखी, कष्ट कर कार्यों को करने में प्रसिद्ध, कंजूस तथा दुःखों से घिरा हुआ, व्यक्ति होता है। (अर्थात् ऐसे व्यक्ति को केवल पुत्र सुख ही प्राप्त होता है) ॥ १८ ॥

षष्ठगतो द्रविणपतिर्धनसंग्रहतत्परं रिपुघ्नं च।
भूलाभिनं सुखचरैः पापैर्धनवर्जितं पुरुषम् ॥ १९ ॥

शुभ ग्रह धनेश यदि छठे भाव में गया हो तो पुरुष धन संग्रह करने में तत्पर, शत्रुओं का दमन करने वाला तथा भूमि लाभ करने वाला होता है। यदि पापग्रह हो तो धन से रहित होता है ॥ १९ ॥

धनपेऽपि च सप्तमगे श्रेष्ठगचिन्ता विलासभोगवती।
धनसंग्रहणी भार्या क्रूरे खेचरे भवेत् वन्ध्या ॥ २० ॥

धनेश (शुभग्रह) यदि सप्तम भाव में हो तो उच्चस्तर की चिन्तायें होती हैं तथा उसकी पत्नी विलासिनी, सुखी, तथा धन संग्रह करने वाली होती है। यदि धनेश क्रूर ग्रह हो तो वन्ध्या होती है ॥ २० ॥

धनपेऽष्टमभवनस्थेऽष्टकपाली चात्मघातकः पुरुषः।
उत्पन्नभुग्विलासी परधनहिंसी भवति दैवपरः ॥ २१ ॥

धनेश अष्टम भाव में हो तो वह अष्टकपाली, आत्महत्या करने वाला स्वोपार्जित वस्तु का उपभोग करने वाला, विलासी, दूसरों की धन-हानि करने वाला, भाग्यवादी पुरुष होता है ॥ २१ ॥

धनपे धर्मगृहस्थे सौम्ये दानप्रसिद्धवाग्भवति।
क्रूरे दरिद्रभिक्षुर्विडम्बवृतिस्तथा मनुजः ॥ २२ ॥

धनेश नवम भाव में शुभग्रह होकर गया हो तो दान के द्वारा प्रसिद्ध, तथा वचन का पक्का होता है। यदि क्रूरग्रह हो तो दरिद्र, भिखारी, तथा सर्वत्र लज्जित (अपमानित) होता है ॥ २२ ॥

दशमगृहस्थे धनपे नरेन्द्रमान्यो भवेन्नृपाल्लक्ष्मीः।
सौम्यगृहगे च मातुर्मनुजः पितृपालको भवति ॥ २३ ॥

धनेश यदि दशम भाव में गया हो तो मनुष्य राजा द्वारा सम्मानित तथा, राजा से लक्ष्मी (धन) प्राप्त करने वाला होता है। यदि धनेश दशम भाव में शुभग्रह की राशि में हो तो माता-पिता का पालन-पोषण करने वाला होता है ॥ २३ ॥

एकादशमः खेचरव्यवहारे श्रीपतिः ख्यातः ।
लोकौघप्रतिपालनरतं च नरं भवेज्जातम् ॥ २४ ॥

एकादश भाव में गया हुआ धनेश जातक को ग्रह व्यवहार (अथवा आकाश में सञ्चरण करने वाले हवाई जहाज आदि) में कुशल, धनवान्, विख्यात्, लोकसमूह का पालन करने वाला मनुष्य होता है ॥ २४ ॥

द्रविणपतौ व्ययलीने कृपणं धनवर्जितं क्रूरे ।
सौम्ये लाभालाभख्यातं पुरुषं वदेज्जातम् ॥ २५ ॥

क्रूर द्वितीयेश यदि द्वादश भाव में हो तो मनुष्य, कृपण एवं निर्धन होता है । यदि शुभग्रह हो तो लाभ-हानि के कार्य में विख्यात होता है ॥ २५ ॥

द्वादश भावगत तृतीयेश फलम्

सहजपतिर्लग्नगतो वाग्वादी लम्पटः स्वजनभेदी ।
सेवापरः कुमित्रः कूटकरः प्रोच्यते पुरुषः ॥ २६ ॥

तृतीय भाव का स्वामी यदि लग्न में हो तो वह वाद-विवाद करने वाला, लम्पट (आवारा), आपस में फूट डालने वाला, सेवा कार्य में कुशल, दुष्ट मित्रों से युक्त, छल-प्रपञ्च करने वाला पुरुष होता है ॥ २६ ॥

धनगृहगे सहजेशे भिक्षुर्विधनोऽल्पजीवनो मनुजः ।
बन्धुविरोधी क्रूरे सौम्यः पुनरीश्वरः खचरे ॥ २७ ॥

क्रूर ग्रह तृतीयेश होकर यदि धन भाव में हो तो मनुष्य भिक्षुक धन से रहित, अल्पायु, भाइयों से विरोध करने वाला होता है, यदि शुभग्रह हो तो धनवान् होता है ॥ २७ ॥

सहजगते सहजपतिः समसत्त्वं सुसुहृदं शुभस्वजनम् ।
देवगुरुपूजनरतं नृपलाभपरं नरं कुरुते ॥ २८ ॥

तृतीय भाव का स्वामी यदि तृतीय भाव में ही गया हो तो मनुष्य अपने समान बलशाली एवं अच्छे मित्रों से युक्त, हितैषी आत्मीय (भाई-बन्धु) जनों से सम्पन्न, देवता-गुरु के पूजन में लीन तथा राजा का लाभ कराने वाला होता है ॥ २८ ॥

भ्रातृपतौ मातृगते पितृबन्धुसहोदरेषु सुखभोगी ।
मात्रा सह वैरकरः पितृवित्तस्य भक्षकः पुरुषः ॥ २९ ॥

तृतीय भावेश यदि चतुर्थ भाव में गया हो तो वह पुरुष पिता-बन्धु (चचेरे भाई), सहोदर (सगे भाई बहनों) के बीच सुख भोग करता है । परन्तु माता के साथ वैर करने वाला एवं पिता के धन का उपभोग करने वाला होता है ॥ २९ ॥

दुश्चिक्यपतौ सुतगे सुतबान्धवसुतसहोदरैः पाल्यः ।
दीर्घायुर्भवति नरः परोपकारैकनिरतमतिश्च ॥ ३० ॥

तृतीयेश यदि पञ्चम भाव में गया हो तो उस व्यक्ति का पालन उसके पुत्र, भतीजे एवं भाई करते हैं तथा वह दीर्घायु एवं परोपकारी विचारों वाला होता है ॥ ३० ॥

षष्ठगते सहजपतौ बन्धुविरोधी नयनरोगी च ।
भूलाभो भवति भृशं कदाचिदपि रोगसङ्कुलितः ॥ ३१ ॥

तृतीयेश यदि षष्ठ भाव में गया हो तो व्यक्ति भाइयों का विरोधी, नेत्र रोगी, अधिक मात्रा में भूमि प्राप्त करने वाला तथा कभी-कभी रोगों से ग्रस्त भी होता है ॥ ३१ ॥

सप्तमगे सहजेशे नरस्य भार्या भवेत्सुशीला च ।
सौभाग्यवती युवति क्रूरे देवरगृहं याति ॥ ३२ ॥

सप्तम भाव में यदि तृतीयेश हो तो उस पुरुष की स्त्री सुशील और सौभाग्यवती होती है । यदि तृतीयेश पापग्रह हो तो उसकी स्त्री देवर (पति के छोटे भाई) के घर (पास) जाती है (अर्थात् देवर से प्रेम करती है) ॥ ३२ ॥

भ्रातृपतिरष्टमगः सहजं मृतसोदरं नरं कुरुते ।
क्रूरे बाहुव्याधिमपि जीवति यद्यष्ट वर्षाणि ॥ ३३ ॥

भ्रातृ स्थान (तृतीय भाव) का स्वामी यदि अष्टम भाव मे गया हो तो उसके सहोदर भाई-की मृत्यु होती है । यदि तृतीयेश पापग्रह हो तो बाहु रोग से पीड़ित होता है । यदि रोग से जीवित रहा तो आठ वर्ष की आयु होती है ॥ ३३ ॥

धर्मगते सहजपतौ क्रूरे बन्धूज्झितस्तथा सौम्ये ।
सद्बान्धवश्च सुकृती सोदरभक्तो भवेन्मनुजः ॥ ३४ ॥

तृतीय भाव का स्वामी यदि क्रूर ग्रह हो और नवम भाव में स्थित हो तो मनुष्य भाइयों द्वारा परित्यक्त होता है । यदि शुभग्रह (तृतीयेश) हो तो अच्छे भाई बन्धुओं से युक्त सत्कार्य करने वाला तथा अपने सगे भाइयों का भक्त होता है ॥३४॥

दुश्चिक्येशे दशमगते नृपपूज्यो मातृबन्धुपितृभक्तः ।
उत्तमबोधो बन्धुषु विनिश्चितो जायते जातः ॥ ३५ ॥

तृतीयेश यदि दशम भाव में गया हो तो जातक राजा द्वारा सम्मानित, माता-भाई एवं पिता का भक्त, उत्तम ज्ञानी, भाइयों के प्रति दृढ़ व्यवहार (प्रेम) रखने वाला होता है ॥ ३५ ॥

लाभस्थः सहजेशः सुबान्धवं राजशालिनं कुरुते।
कुरुते बन्धुषु सेवाविधायिनं भोगनिरतं च ॥ ३६ ॥

सहजेश यदि लाभस्थान (ग्यारहवें भाव) में हो तो जातक अच्छे भाइयों से युक्त, राजा का आश्रय पाने वाला, भाइयों के प्रति सेवा भाव रखने वाला तथा भोग ऐश्वर्य सुख) में लीन रहता है ॥ ३६ ॥

व्ययगे दुश्चिक्येशे मित्रविरोधी च बन्धुसन्तापी।
दूरे वासितबन्धुर्विदेशगामी नरो भवेज्जातः ॥ ३७ ॥

व्यय (द्वादश) भाव में यदि तृतीय स्थान का स्वामी गया हो तो मनुष्य मित्रों का विरोधी, वन्धुओं को कष्ट देने वाला, बन्धुओं को दूर बसाने वाला तथा स्वयं विदेश भ्रमण करने वाला होता है ॥ ३७ ॥

द्वादश भावगत चतुर्थेश का फल

तुर्यपतिर्लग्नगतः पितृपुत्रयोः स्नेहं मिथः कुरुते।
उत्तमे पितृपक्षे वैरी कलितं पितृनाम्ना प्रसिद्धं च ॥ ३८ ॥

चतुर्थ भाव का स्वामी यदि लग्न में गया हो तो पिता-पुत्र का परस्पर स्नेह बढ़ता है। उच्च कुल से पिता पक्ष(चाचा, भतीजा आदि) से वैरभाव रखने वाला तथा पिता के नाम से प्रसिद्धि प्राप्त करने वाला होता है ॥ ३८ ॥

पातालपे धनस्थे क्रूरखगे पितृविरोधकृच्छुभे जातः।
पितृपालकः प्रसिद्धः पिता भुनक्त्याह तल्लक्ष्मीम् ॥ ३९ ॥

चतुर्थेश क्रूर ग्रह हो और धन भाव (द्वितीय) में बैठा हो तो जातक पिता का विरोधी होता है यदि शुभ ग्रह हो तो पिता का पालन करने वाला, विख्यात पुरुष होता है तथा उसकी लक्ष्मी (सम्पत्ति) का उपभोग उसका पिता भी करता है ॥ ३९ ॥

तुर्येशे सहजस्थे पितृमातृवेदनाकरं कुरुते।
पित्रा सह कलहकरं पितृबान्धवघातकं नियतम् ॥ ४० ॥

चतुर्थेश यदि तृतीय भाव में हो तो वह पिता एवं माता के लिए कष्ट कर होता है। पिता के साथ कलह करने वाला तथा सदैव पिता एवं भाइयों के लिए घातक होता है ॥ ४० ॥

तुर्यगते तुर्यपतौ पितरि क्षितिपालप्रचुरमानः।
विदितः पितृलाभकरो भवति सुधर्मा सुखी धनपः ॥ ४१ ॥

यदि चतुर्थेश चतुर्थ भाव में ही स्थित हो तो राजा द्वारा पिता का सम्मान कराता है तथा जातक स्वयं प्रसिद्ध, पिता को लाभान्वित करने वाला, भली भाँति धर्माचरण करने वाला, सुखी एवं धनपति होता है ॥ ४१ ॥

सुतगे तुर्यगृहेशे पितृसंलाभवांश्च दीर्घायुः ।
भवति कृतिप्रसिद्धः ससुतः सुतपालकश्चैव ॥ ४२ ॥

चतुर्थेश यदि पञ्चम भाव में गया हो तो जातक अपने पिता से लाभ प्राप्त करने वाला, दीर्घायु, अपने कार्यों द्वारा, प्रसिद्ध, पुत्रवान् तथा पुत्रों का पालन करने वाला होता है ॥ ४२ ॥

हिबुकपतौ रिपुसंस्थे मात्रर्थविनाशकः शिशुर्जातः ।
पितृदोषरतः क्रूरे सौम्ये धनसञ्चयो तनयः ॥ ४३ ॥

चतुर्थ भाव का स्वामी यदि षष्ठ भाव में गया हो तथा क्रूरग्रह हो तो ऐसे योग में उत्पन्न बालक अपनी माता के धन को नष्ट करने वाला, पिता के दोषों का अन्वेषण करने वाला होता है । यदि शुभग्रह हो तो जातक धन का संग्रह करने वाला होता है ॥ ४३ ॥

अम्बुपतौ सप्तमगे क्रूरे श्वशुरं स्नुषा न पालयति ।
सौम्ये पालयति पुनः कुलवतीं कुजकवो कुरुतः ॥ ४४ ॥

चतुर्थ भाव का स्वामी क्रूर ग्रह सप्तम भाव में गया हो तो उस व्यक्ति की पत्नी अपने श्वसुर का पालन (सेवा) नहीं करती है यदि शुभ ग्रह हो तो श्वसुर की सेवा करती है । चतुर्थेश यदि मंगल या शुक्र हो तो पत्नी कुलीन (श्रेष्ठ) महिला होती है ॥ ४४ ॥

छिद्रगतस्तुर्यपतिः क्रूरं रोगान्वितं दरिद्रं वा ।
दुष्कर्मकरं मृत्युप्रियमथवा मानवं कुरुते ॥ ४५ ॥

पापग्रह चतुर्थेश होकर अष्टम भाव में गया हो तो जातक रोगी, दरिद्र, कुकर्म करनेवाला, तथा (जीवन से ऊब कर) मृत्यु की अभिलाषा करने वाला होता है ॥ ४५ ॥

सुकृते तुर्यपतौ पितर्यसञ्ज्ञी समस्तविद्यावान् ।
पितृधर्मसंग्रहपरः पितृनिरपेक्षो भवेन्मनुजः ॥ ४६ ॥

चतुर्थ भाव का स्वामी यदि नवम भाव में हो तो जातक अपने पिता का विरोधी, समस्त विद्याओं का ज्ञाता, पिता के धर्माचरण का अनुगमन करने वाला परन्तु पिता से किसी प्रकार की अपेक्षा न रखने वाला होता है । [अर्थात् पिता के गुणों का आदर करते हुये भी पिता से पृथक् रहता है ।] ॥ ४६ ॥

पातालपेऽम्बरगते पापे सुतमातरं त्यजेज्जनकः ।
सृजते त्वन्यां दयितां सौम्ये पुनरन्यसेवकः पुरुषः ॥ ४७ ॥

पापग्रह चतुर्थेश होकर दशम भाव में गया हो तो जातक का पिता अपनी पत्नी (जातक की माता) का परित्याग कर अन्य स्त्री के साथ सम्बन्ध करता है। यदि चतुर्थेश शुभग्रह हो तो अन्य स्त्री का भी सेवन करता है। (अपनी पत्नी का परित्याग नहीं करता।) ॥ ४७ ॥

एकादशे तुर्यपतौ धर्मी पितृपालकः सुकर्मा च ।
पितृभक्तो भवति पुनः प्रचुरायुर्व्याधिविरहितश्च ॥ ४८ ॥

चतुर्थेश एकादश भाव में गया हो तो धार्मिक आचरण करने वाला, पिता की आज्ञा का पालक, अच्छा कर्म करने वाला, पिता का भक्त, दीर्घायु तथा रोग से रहित होता है ॥ ४८ ॥

द्वादशगे तुर्यपतौ मृतपितृको वा विदेशगो वाच्यः ।
पुत्रस्य पापखेटे चान्यपितुर्जन्म निर्देश्यम् ॥ ४९ ॥

चतुर्थ भाव का स्वामी (शुभग्रह हो तथा) बारहवें भाव में गया तो जातक के पिता की शीघ्र मृत्यु होती है अथवा वह विदेश में निवास करता है। यदि चतुर्थेश पापग्रह हो तो अन्य पिता (परव्यक्ति) से उत्पन्न होता है ॥ ४९ ॥

पञ्चमेश का द्वादश भावगत फल

लग्नगत पञ्चमपे प्रसिद्धस्तोकतनयपरिकलितम् ।
शास्त्रविदं वेदविदं सुकर्मनिरतं तथा कुरुते ॥ ५० ॥

पञ्चम भाव का स्वामी यदि लग्न (प्रथम भाव) में गया हो तो जातक प्रसिद्ध, अल्प सन्तान से सुशोभित, शास्त्र को जानने वाला, वेदज्ञ, तथा सत्कर्म में लीन रहने वाला होता है ॥ ५० ॥

पञ्चमपतिर्धनस्थः क्रूरे खेटे धनोज्झितं कुरुते ।
गीतादिकलाकलितं कष्टभुजं स्थानकप्रचुरम् ॥ ५१ ॥

पञ्चम भाव का स्वामी यदि क्रूरग्रह हो तथा द्वितीय भाव में स्थित हो तो जातक धन से रहित, संगीत आदि कलाओं का ज्ञाता, प्रचुर स्थान (अधिक भूमि अथवा मकान) से युक्त तथा कष्ट से भोजन (निर्वाह) करने वाला होता है ॥५१॥

तनयपतिः सहजगतः शुभमधुरवाक्यं बन्धुजनेषु विदितम् ।
कुरुते सुतास्तदीयाः परिपालयन्ति तद्बन्धून् ॥ ५२ ॥

पञ्चम भाव का स्वामी तृतीय भाव में गया हो तो जातक मधुरभाषी, अपने बन्धुवर्ग में सर्वाधिक यशस्वी होता है। उसके पुत्र उसके भाई बन्धुओं का पालन करने वाले होते हैं ॥ ५२ ॥

सुतपः पातालगतः पितृकर्मरतं प्रपालितं पित्रा।
जननीभक्तं कुरुते क्रूरैस्तु विरोधिनं पितृभिः ॥ ५३ ॥

पञ्चमेश यदि चतुर्थ भाव में गया हो तो जातक पिता के कार्य को करने वाला, पिता द्वारा पालित तथा माता का भक्त होता है। यदि पञ्चमेश क्रूरग्रह हो तो वह पिता के साथ विरोधी भाव रखता है ॥ ५३ ॥

तनयगतस्तनयपतिर्मतिमन्तं मानितं जनं कुरुते।
सुतकलितं प्रकटजनविख्यातं मानवं कुरुते ॥ ५४ ॥

पञ्चमेश यदि पञ्चम भाव में गया हो तो जातक अत्यन्त बुद्धिमान, सम्मानित, योग्य पुत्रों से युक्त तथा सम्मानित लोगों के बीच प्रख्यात होता है ॥ ५४ ॥

पञ्चमपतिश्च षष्ठे शत्रुयुतं मानहीनं च।
रोगयुतं धनरहितं क्रूरः खचरः करोति नरम् ॥ ५५ ॥

यदि पञ्चम का स्वामी क्रूरग्रह हो तथा षष्ठ भाव में स्थित हो तो वह पुरुष सदैव शत्रुओं से युक्त, सम्मान से रहित (निन्दित), रोगी, तथा निर्धन होता है ॥ ५५ ॥

तनयपतौ सप्तमगे स्वसुताः सुभगाश्च देवगुरुभक्ताः।
प्रियवादिनी सुशीला नरस्य ननु जायते दयिता ॥ ५६ ॥

पञ्चमेश यदि सप्तम भाव में गया हो तो उस व्यक्ति के सभी पुत्र सुन्दर, देवता एवं गुरु के भक्त होते हैं तथा उसकी पत्नी, सुशीला एवं प्रियवादिनी (मधुर भाषिणी) होती है ॥ ५६ ॥

सुतपे निधनगृहस्थे कटुवाक्यो भार्ययाऽयुतो भवति।
सव्यङ्ग्यचण्डशब्दाः सहजास्तनया भवन्ति यथा ॥ ५७ ॥

पञ्चमेश यदि अष्टम भाव में गया हो तो जातक पत्नी से रहित हो जाता है (अर्थात् शीघ्र पत्नी की मृत्यु हो जाती है)। तथा उसके भाई एवं पुत्र व्यङ्ग्य और वचन बोलने वाले होते हैं ॥ ५७ ॥

सुकृतगतस्तनयपतिः सुबोधविद्यं कविं सुगीतिज्ञम्।
नृपपूजितं सुरूपं नाटकरसिकं नरं कुरुते ॥ ५८ ॥

सन्तान (पंचम) भाव का स्वामी नवम भाव में गया हो तो मनुष्य व्युत्पन्न

(सरलता से सभी विद्याओं को समझने वाला), कवि, संगीत का ज्ञाता, राजा द्वारा सम्मानित, सुन्दर तथा नाटक में रुचि रखने वाला होता है ॥ ५८ ॥

सुतपतिरम्बरलीनो नृपकर्माणं नृपात् कलितभावम् ।
सत्कर्मरतं प्रवरं जननीसुखकृत्सुतं कुरुते ॥ ५९ ॥

पञ्चमेश यदि दशम भाव में हो तो राजकीय कार्य करने वाला, राजा से सम्मान प्राप्त (उच्चपदाधिकारी), सत्कार्य में लीन, श्रेष्ठ, माता को सुख पहुँचाने वाला (सुत) व्यक्ति होता है ॥ ५९ ॥

लाभगते सुतनाथे शूरः सुतवान् सुहृत्कृतासङ्गः ।
गीतादिकलाकलितो नृपभोगी जायते जातः ॥ ६० ॥

लाभ (एकादश) भाव में यदि पञ्चमेश गया हो तो जातक शूर (बहादुर), पुत्रवान्, मित्रों का साथ देने वाला, गीत आदि (संगीत) कलाओं का ज्ञाता, राजसुख भोग करने वाला होता है ॥ ६० ॥

पञ्चमपे द्वादशगे क्रूरे सुतरहितः शुभे सुसुतः ।
सुतसन्तापपरः स्याद्विदेशगामी भवेन्मनुजः ॥ ६१ ॥

पञ्चम भाव का स्वामी द्वादश भाव में गया हो तथा क्रूर ग्रह हो तो मनुष्य सन्तान हीन होता है। यदि शुभ ग्रह हो तो पुत्रवान्, सन्तान से सन्तप्त (दुःखी) तथा विदेश भ्रमण करने वाला होता है ॥ ६१ ॥

द्वादशभावगत षष्ठेश का फल

षष्ठेशो लग्नगतो नीरुक्सबलः कुटुम्बकष्टकरः ।
बहुपक्षो रिपुहन्ता भवति नरः स्वैरवचनधनः ॥ ६२ ॥

षष्ठ भाव का स्वामी यदि लग्न में गया हो तो जातक निरोग, बलवान्, परिवार को कष्ट देने वाला, गुट बन्दी करने वाला, शत्रुओं का दमन करने वाला, स्वतन्त्र तथा अपने वचन का धनी (बातों पर दृढ़ रहने वाला) होता है ॥ ६२ ॥

शत्रुपतौ द्रविणस्थे दुष्टश्चतुरो हि संग्रहपरेष्टः ।
स्थानप्रवरो विदितो व्याधिततनुः सुहृद्धनहा ॥ ६३ ॥

शत्रु (षष्ठ) भाव का स्वामी यदि धन (द्वितीय) भाव में गया हो तो वह दुष्ट, चतुर, (धन) संग्रह करने में तत्पर, श्रेष्ठ स्थान का स्वामी, विख्यात, रोगी शरीर वाला तथा मित्र के धन को नष्ट करने वाला होता है ॥ ६३ ॥

षष्ठपतिः सहजस्थः कुरुते तं लोककष्टकरम् ।
निजजनमारणचतुरं कष्टं संग्रामतस्तस्य ॥ ६४ ॥

षष्ठेश जिसके तृतीय भाव में हो वह समाज के लिए कष्ट कर होता है। अपने ही व्यक्तियों को मारने वाला संग्राम से कष्ट पाने वाला होता है ॥ ६४ ॥

षष्ठाधिपतिस्तुर्ये पितृतनयौ वैरिणौ मिथः कुरुते ।
सरुक् पिता सोऽथ सुतौ लक्ष्मीं लभते नरः सुचिरम् ॥ ६५ ॥

षष्ठेश यदि चतुर्थ भाव में हो तो पिता और पुत्र मे पारस्परिक शत्रुता होती है। पिता रोगी होता है स्वयं वह तथा उसके लड़के अधिक समय तक लक्ष्मी (ऐश्वर्य) लाभ करते हैं ॥ ६५ ॥

रिपुभवनपतौ सुतगे पितृतनयौ वैरिणौ मृतिः सुततः ।
क्रूरे शुभे च विघनः पदवीदुष्टश्च तत्कपटी ॥ ६६ ॥

शत्रु भाव का स्वामी क्रूरग्रह यदि पञ्चम भाव मे गया हो तो पिता और पुत्र में शत्रुता होती है तथा पुत्र द्वारा पिता की मृत्यु भी होती है। यदि शुभग्रह हो तो धन से रहित, दुष्ट के रूप में विख्यात (दुष्टपदवी प्राप्त), तथा कपटी होता है ॥ ६६ ॥

रिपुभवनेशरिपुस्थे नीरुग्वैरी सुखी कृपणः ।
न हि जन्मतोऽपि सीदति कुस्थानवासो नरो भवति ॥ ६७ ॥

षष्ठेश यदि षष्ठ भाव में हो तो मनुष्य निरोग, शत्रुओं से युक्त, सुखी, कृपण (कंजूस), जीवन में कभी दुख न प्राप्त करने वाला तथा कुत्सित (बुरे) स्थान में रहने वाला होता है ॥ ६७ ॥

अहितपतौ सप्तमगे क्रूरे भार्या विरोधिनी चण्डी ।
तापकरी त्वथ सौम्ये वन्ध्या वा गर्भनाशपरा ॥ ६८ ॥

षष्ठेश यदि सप्तम भाव में गया हो तथा क्रूर ग्रह हो तो उसकी पत्नी विरोधी प्रकृति वाली, स्वभाव से अत्यन्त उग्र, कष्ट देने वाली होती है यदि शुभ ग्रह हों तो वन्ध्या (सन्तानहीन) या मृतवत्सा (जिसके गर्भ नष्ट हो जाते हों या बच्चा जन्म लेकर मर जाता हो) होती है ॥ ६८ ॥

शनेर्ग्रहणिकारुजो विषधराद्धरानन्दनाद्
बुधाच्च विषदोषतः सर्पादि मृत्युरगणाङ्कुतः ।
रवेर्मृगपतेर्वधात्प्रकटमष्टमे[१]षष्ठपाद्-
गुरोरपि च दुष्टधीर्नयनदोषवाञ्छुक्रतः ॥ ६९ ॥

शनि षष्ठेश होकर अष्टम भाव मे गया हो तो सग्रहणी रोग से, मंगल हो तो विषधर (सर्प, बिच्छू आदि) से, बुध हो तो विष प्रयोग से, चन्द्रमा हो तो शीघ्र

१. अष्टमात् इति पूर्व पाठः

ही (आकस्मिक, हृदयगति रुकने से), सूर्य हो तो सिंह (शेर, चीता आदि) से, गुरु हो तो दुष्ट बुद्धि वाले (गुण्डा, डाकू आदि) व्यक्ति से जातक की मृत्यु होती है। यदि षष्ठेश शुक्र अष्टम में हो तो नेत्रों से रोगी होता है ॥ ६९ ॥

शत्रुपतिर्यदि नवमः क्रूरः खचरस्तदा भवेत् खञ्जः।
बन्धुविरोधी शास्त्रं न मन्यते याचकः पुरुषः ॥ ७० ॥

षष्ठेश यदि नवम भाव में गया हो तथा क्रूर ग्रह हो तो वह व्यक्ति लँगड़ा, भाइयों का विरोधी, शास्त्र न मानने वाला, तथा भिक्षा वृत्ति वाला होता है ॥७०॥

अरिपे दशमगृहस्थे क्रूरे मातू रिपुस्तदा दुष्टः।
धर्मसुतपालनमतिर्मातुर्दोषी भवेद्वैरी ॥ ७१ ॥

षष्ठेश यदि दशम भाव में हो तथा क्रूर ग्रह हो तो जातक अपनी माता का शत्रु, दुष्ट, अपने धर्म और पुत्र के पालन में अनुरक्त माता के दोष के कारण सदैव उसका शत्रु बना रहता है ॥ ७१ ॥

वैरिपतौ लाभगते क्रूरे मरणं विपक्षतो भवति।
वैरी तस्करहानिश्चतुष्पदाल्लाभवान्मनुजः ॥ ७२ ॥

शत्रु स्थान का स्वामी लाभस्थान में स्थित हो तथा क्रूर ग्रह हो तो शत्रु पक्ष द्वारा मृत्यु होती है। उसके शत्रु अधिक होते है, चोरों से हानि तथा पशुओं से लाभ होता है ॥ ७२ ॥

षष्ठपतौ द्वादशगे चतुष्पदान् द्रव्यहानिकरः।
गमनागमनाल्लक्ष्मीहा दैवपरः केवलं भवति ॥ ७३ ॥

षष्ठेश यदि बारहवें भाव में गया हो तो जातक पशुओं के द्वारा धन-हानि करने वाला, यात्रा में अपव्यय करने वाला, तथा भाग्यवादी होता है ॥ ७३ ॥

द्वादश भावगत सप्तमेश का फल

दयितेशो लग्नगतः स्तोकस्नेहिनमन्यभार्यायाम्।
भोगभुजं रूपयुतं जनयति दयितादलितचित्तम् ॥ ७४ ॥

सप्तमेश यदि लग्न में गया हो तो जातक परस्त्री से अल्प स्नेह करने वाला, ऐश्वर्य का भोग करने वाला, सुन्दर, तथा अपनी स्त्री में अत्यधिक आसक्त होता है ॥ ७४ ॥

जायापतौ धनस्थे दुष्टा दयिता सुतेप्सिता भवति।
वित्तं च कलत्रकृतं सततं वसतो विसञ्चश्च ॥ ७५ ॥

सप्तमेश यदि द्वितीय भाव में हो तो उस व्यक्ति की स्त्री स्वभाव से दुष्ट एवं पुत्रों की अभिलाषा रखने वाली होती है। उसे स्त्री से धन लाभ होता है तथा साथ

में रहते हुये भी एक दूसरे से दूर रहते हैं। (भावार्थ यह है कि पत्नी को नौकरी के कारण अलग भी रहना पड़ता है।) ॥ ७५ ॥

सप्तमपे सहजगते ह्यात्मबलो बन्धुवत्सली दुःखी।
देवररता सुरूपा गृहिणी क्रूरे सुहृद्गृहगा ॥ ७६ ॥

सप्तमेश यदि तृतीय भाव में हो तो वह व्यक्ति आत्म-बल युक्त, बन्धुओं से स्नेह करने वाला तथा दुःखी होता है। यदि सप्तमेश पाप ग्रह हो तो उसकी पत्नी अपने देवर (पति के छोटे भाई) में आसक्त, सुन्दरस्वरूपवाली, तथा मित्रों के गृह में अधिक जाने वाली होती है ॥ ७६ ॥

जायेशे तुर्यस्थे लोलः पितृवैरसाधकस्नेही।
अस्य पिता दुर्वाक्यस्तद्भार्यां पालयेज्जनकः ॥ ७७ ॥

सप्तमेश यदि चतुर्थ भाव में हो तो वह व्यक्ति चञ्चल एवं पिता के शत्रुओं से स्नेह रखने वाला होता है। उसका पिता भी कटु वचन बोलने वाला होता है तथा उसकी पत्नी का पालन उसके पिता के घर (मायके) में होता है ॥ ७७ ॥

सप्तमपतौ सुतस्थे सौभाग्ययुतः सुतान्वितः पुरुषः।
प्रियसाहसो दुष्टमतिस्तत्तनयः पालयेद्दयिताम् ॥ ७८ ॥

सप्तमेश यदि पञ्चम भाव में हो वह पुरुष सौभाग्यशाली, पुत्रों से युक्त, साहस प्रिय (अधिक साहसी) एवं दुष्ट विचारों वाला होता है। तथा उसकी पत्नी का पालन उसके पुत्र करते हैं ॥ ७८ ॥

रिपुगृहगः कान्तेशः प्रियया सह वैरिणं सरुग्भार्यम्।
दयितासङ्गक्षयिणं क्रूरः कुरुते च मृत्युपदम् ॥ ७९ ॥

शत्रु स्थान में गया हुआ सप्तमेश स्त्री के साथ शत्रुता कराने वाला, तथा स्त्री रोगिणी करने वाला होता है। यदि सप्तमेश क्रूर ग्रह हो तो जातक स्त्री संसर्ग से क्षीण (अथवा क्षय रोग ग्रस्त) होकर मर जाता है ॥ ७९ ॥

सप्तमपः सप्तमगः परमायुः प्रीतिवत्सलः पुरुषः।
निर्मलशीलसमेतस्तेजस्वी जायते जातः ॥ ८० ॥

सप्तमेश यदि सप्तम भाव में हो तो जातक दीर्घायु युक्त, प्रेमी (मधुर सम्बन्ध रखने वाला,), सदाचारी, सुशील तथा तेजस्वी होता है ॥ ८० ॥

सप्तमपतिर्निधनगतो गणिकासु रतः करग्रहरहितः।
नित्यं चिन्तायुक्तो मनुजः किल जायते दुःखी ॥ ८१ ॥

सप्तमेश यदि अष्टम भाव में हो तो जातक वेश्याओं में अनुरक्त, अविवाहित सदैव चिन्ता युक्त तथा दुखी होता है ॥ ८१ ॥

सुकृतगते सप्तमपे तेजोवाञ्छीलवान् प्रियाऽप्येवम् ।
क्रूरे षण्ढविरूपा लग्नेशो वीक्षिते नये प्रबलः ॥ ८२ ॥

नवम भाव में यदि सप्तमेश गया हो तो व्यक्ति तेजस्वी, शील सम्पन्न तथा इसी प्रकार की (सुशीला) स्त्री से युक्त होता है। यदि सप्तमेश क्रूर ग्रह हो तो वह कुरूप एवं नपुंसक होता है। यदि लग्नेश से सप्तमेश दृष्ट हो तो वह व्यक्ति राजनीति में कुशल होता है ॥ ८२ ॥

सप्तमपे दशमस्थे नृपदोषी लम्पटः कपटचित्तः ।
क्रूरे दुःखार्त्तः स्याच्छत्रोर्वशगो भवेत्पुरुषः ॥ ८३ ॥

सप्तमेश यदि दशम भाव में गया हो तो वह पुरुष राजा की दृष्टि में दोषी, लम्पट (लफंगा), कपटी हृदय वाला होता है। यदि सप्तमेश क्रूर ग्रह हो तो दुःख से पीड़ित, तथा शत्रुओं के वशीभूत होता है ॥ ८३ ॥

लाभस्थे जायेशे भक्ता रूपान्विता सुशीला च ।
दयिता परिणीता स्यान्नरस्य ननु जायते सततम् ॥ ८४ ॥

सप्तमेश यदि लाभ (एकादश) भाव में गया हो तो उस व्यक्ति की विवाहिता पत्नी रूपवती, सुशीला, तथा भक्त (पतिव्रता से अभिप्राय है) होती है ॥ ८४ ॥

सप्तमपे द्वादशगे गृहबन्धुरतो न वा भवेद्भार्या ।
सा लोला दुष्टयुता दूराच्चलति च तस्य पुरुषस्य ॥ ८५ ॥

सप्तमेश यदि द्वादश भाव में स्थित हो तो वह व्यक्ति अपने गृह एवं बन्धु (परिवार) के कार्यों में तल्लीन रहता है। परन्तु उसकी कम आयु वाली नयी पत्नी (अधिक अवस्था हो जाने पर नवीन छोटी आयु वाली कन्या से विवाह होता है।) चञ्चला, दुष्टा तथा पति से दूर-दूर रहने वाली होती है ॥ ८५ ॥

द्वादश भावगत अष्टमेश फल

अष्टमपे लग्नगते बहुविघ्नो दीर्घरोगभृत्स्तेनः ।
नेष्टानुवादनिरतो लक्ष्मीं लभते नृपतिवचसा ॥ ८६ ॥

अष्टम भाव का स्वामी यदि लग्न में गया हो तो जातक बहुत विघ्नों से युक्त, दीर्घकाल से रोगी, चोर, अप्रिय कार्यों में संलग्न, तथा राजा के आदेश से धन प्राप्त करने वाला होता है ॥ ८६ ॥

निधनपतौ धनलोनेऽल्पजीवी वैरिमान्नरश्चौरः ।
क्रूरे सौम्येऽतिशुभं किमु क्षितिपालता मरणम् ॥ ८७ ॥

यदि क्रूर ग्रह अष्टमेश होकर द्वितीय भाव में स्थित हो तो वह व्यक्ति, अल्पायु, शत्रु से युक्त तथा चोर होता है। यदि शुभग्रह हो तो अत्यन्त शुभकारक होता है परन्तु राजा के द्वारा मृत्यु (मृत्यु दण्ड से) होती है ॥ ८७ ॥

अष्टमपती तृतीये बन्धुविरोधी सुहृद्विरोधी च ।
व्यङ्गो दुर्वाग्लोलः सोदररहितो भवत्यथ वा ॥ ८८ ॥

अष्टमभाव का स्वामी तृतीय भाव में हो तो अपने बन्धुओं एवं मित्रों से विरोध करने वाला, अपङ्ग, कटुभाषी, चञ्चल तथा सहोदर भाई से रहित होता है ॥ ८८ ॥

निधनेशे तुर्यगते पितृगते पितृतो नयेल्लक्ष्मीम् ।
पितृपुत्रयोश्च युद्धं जनको रोगान्वितो भवति ॥ ८९ ॥

अष्टमेश यदि चतुर्थ भाव मे हो तो पिता के मरने के वाद पैतृक धन का लाभ होता है। (पाठान्तर 'पितृ रिपुश्च' के अनुसार जातक पिता का विरोधी होता है।) पिता और पुत्र का युद्ध होता है तथा उसका पिता रोग युक्त होता है ॥८९॥

छिद्रपती तनयस्थे क्रूरे सुतविरहितः शुभे तु शुभः ।
जातोऽपि नैव जीवति जीवेदथ कितवकर्मरतः ॥ ९० ॥

अष्टमेश यदि पञ्चम भाव मे स्थित हो तथा क्रूरग्रह हो तो जातक सन्तान हीन होता है। यदि शुभ ग्रह हो तो शुभकारक होता है। यदि किसी प्रकार सन्तान हो तो नष्ट हो जाय ॥ ९० ॥

छिद्रेशे रिपुसङ्गते दिनकरे भूभृद्विरोधी गुरौ
त्वङ्गे सीदति दृष्टिरोगकलितः शुक्रे स रोगो विधौ ।
भौमे कोपयुतो बुधे हि भयभृत्तुण्डार्तिभूतः शनौ
कष्टं वै विदधाति तत्र शशिभृत्सौम्येक्षितेनैव किम् ॥ ९१ ॥

अष्टम भाव का स्वामी सूर्य हो और वह षष्ठ भाव मे गया हो तो जातक राजा का विरोधी, या गुरु हो तो अङ्गों में पीड़ा, शुक्र हो तो नेत्रों में कष्ट, चन्द्रमा हो तो रोगी, मंगल हो तो क्रोधी, बुध हो तो भयभीत (आतङ्कित), शनि हो तो मुख में रोग होता है। यदि षष्ठ में (अष्टमेश) चन्द्रमा हो और उसे बुध देख रहा हो तो विविध प्रकार से कष्टदायक होता है ॥ ९१ ॥

मृत्युपती सप्तमगे दुरुदररुक् शीलवल्लभो दुष्टः ।
क्रूरे भार्याद्वेषी कलत्रदोषान्मृतिं लभते ॥ ९२ ॥

अष्टमेश यदि सप्तम भाव में हो तो पेट में बुरा रोग (कैंसर आदि) होता है, सुशीला स्त्री का पति तथा दुष्ट होता है। यदि क्रूरग्रह अष्टमेश हो तो वह स्त्री से द्वेष करने वाला तथा स्त्री के दोष से मृत्यु प्राप्त करने वाला होता है ॥९२॥

निधनपती निधनगते व्यवसायी व्याधिवर्जितो नीरुक् ।
कितवकलाकलितवपुः कितवकुले जायते विदितः ॥ ९३ ॥

यदि अष्टमेश अष्टम भाव में स्थित हो तो जातक व्यापारी, व्याधियों से रहित, नीरोग, धूर्तता में निपुण धूर्तों (ठग) के कुल में उत्पन्न तथा विख्यात होता है ॥ ९३ ॥

धर्मस्थे मृतिनाथे निःसङ्गी जीवविघातकः पापी ।
निर्बन्धुर्निःस्नेही पूज्यो विमुखे मुखे व्यङ्गः ॥ ९४ ॥

अष्टम भाव का स्वामी यदि धर्म (नवम) भाव में स्थित हो तो वह व्यक्ति मित्रों से रहित, जीवों की हत्या करने वाला (शिकारी), पापी, बन्धुओं से रहित स्नेहहीन (निर्दय), विपक्षियों में सम्मानित, तथा मुख में रोगयुक्त होता है ॥९४॥

कर्मगते निधनेशे नृपकर्मा नीचकर्मनिरतश्च ।
अलसः क्रूरे खचरे तनयो माता न वा जीवति ॥ ९५ ॥

यदि अष्टम भाव का स्वामी कर्म (दशम) स्थान में गया हो तो वह व्यक्ति राजा का कार्य करने वाला एवं नीच कर्म में आसक्त, होता है । यदि अष्टमेश क्रूर ग्रह हो तो आलसी होता है तथा उसके माता या पुत्र का (असामयिक) निधन होता है ॥ ९५ ॥

लाभस्थे मृत्युपतौ बाल्ये दुःखी सुखी भवति पश्चात् ।
दीर्घायुः सौम्यखगे पापेऽल्पायुर्नरो भवति ॥ ९६ ॥

यदि अष्टमेश लाभ (एकादश) भाव में हो तो जातक बाल्यावस्था में दुःखी तथा बाद में सुखी होता है । यदि अष्टमेश शुभ ग्रह हो तो वह दीर्घायु, पापग्रह हो तो अल्पायु होता है ॥ ९६ ॥

व्ययसंस्थितेऽष्टमेशे क्रूरवाक्तस्करः शठो निर्घृणः ।
आत्मगतिर्व्यङ्गवपुर्मृतस्तु काकादिभिर्भक्ष्यः ॥ ९७ ॥

व्यय (द्वादश) भाव में यदि अष्टमेश हो तो वह व्यक्ति क्रूर (कठोर) वचन बोलने वाला, चोर, दुष्ट, निर्दय, स्वेच्छाचारी तथा विकृत अंगों वाला होता है । मरने के बाद कौवा आदि (पक्षियों) का भक्ष्य होता है (अर्थात् निर्जन स्थान में मरने से उसका संस्कार नहीं हो पाता ।) ॥ ९७ ॥

द्वादश भावगत नवमेश का फल

लग्नगते नवमेशे देवगुरूणां सुसेवकः शूरः ।
कृपणः क्षितिपतिकर्मा स्वल्पग्रासी भवति मतिमान् ॥ ९८ ॥

नवमेश यदि लग्न में गया हो तो जातक देवता और गुरु की अच्छी तरह सेवा करने वाला, शूर, कंजूस, राजकीय कार्य करने वाला, अल्पाहारी (कम भोजन करने वाला) तथा बुद्धिमान होता है ॥ ९८ ॥

नवमेशे धनयाते वृषतो विदितः सुशीलवात्सल्यः ।
सुकृती वदनव्यङ्गश्चतुष्पदोत्पन्नपीडितो मनुजः ॥ ९९ ॥

नवमेश यदि धन (द्वितीय) भाव में गया हो तो मनुष्य बैलों के सम्बन्ध से विख्यात, मृदुभाषी, अच्छे कार्यों में संलग्न, मुख पर विकार युक्त, चौपायों (पशुओं) से पीड़ित रहने वाला होता है ॥ ९९ ॥

सहजगते सुकृतपतौ रूपस्त्रीबन्धुवत्सलः पुरुषः ।
बन्धुस्त्रीरक्षणकृद् यदि जीवति बन्धुभिः सदा सहितः ॥ १०० ॥

नवम (भाग्य) भाव का स्वामी यदि तृतीय भाव में गया हो तो वह व्यक्ति सौन्दर्य, स्त्री तथा बन्धुओं का प्रेमी बन्धु और स्त्री की रक्षा करने वाला होता है। यदि वह जीवित रहता है तो सदैव उसे भाइयों का साथ मिलता है ॥ १०० ॥

सुकृतेशे हिबुकस्थे पितृभक्तः पितृयात्रादिकेऽपि हितः ।
विदितः सुकृती पुरुषः पितृकर्मरतमतिर्भवति ॥ १०१ ॥

भाग्येश यदि चतुर्थ भाव में हो तो वह व्यक्ति पिता का भक्त, पिता के लिए तीर्थ यात्रा आदि की व्यवस्था करने वाला, विख्यात, अच्छे कार्यों में संलग्न तथा पिता के कार्य में रुचि रखने वाला होता है ॥ १०१ ॥

सुकृतगृहपे सुतस्थे सुकृती देवगुरुपूजने निरतः ।
वपुषा सुन्दरमूर्तिः सुकृतसमेताः सुता बहवः ॥ १०२ ॥

नवम भाव का स्वामी पञ्चम भाव में गया हो तो जातक सत्कर्म करने वाला, देवता और गुरु के पूजन में रत (आस्तिक) शरीर से सुन्दर स्वरूप वाला तथा बहुत से सदाचारी पुत्रों से युक्त होता है ॥ १०२ ॥

शत्रुप्रणतिपरायणधर्मनिमग्नं कलाविकलकायम् ।
दर्शननिन्दानिरतं सुकृतपतिः षष्ठगः कुरुते ॥ १०३ ॥

यदि नवमेश षष्ठ भाव में हो तो वह व्यक्ति शत्रुओं की स्तुति (चापलूसी) करने वाला, धर्म कार्य में संलग्न, कला की दृष्टि से विकृत शरीर वाला, तथा दर्शनशास्त्र की निन्दा करने वाला होता है ॥ १०३ ॥

नवमपतौ सप्तमगे सत्यवती सुवदना सुरूपा च ।
शीलश्रीयुतदयिता सुकृतयुता जायते नियतम् ॥ १०४ ॥

नवम भाव का स्वामी सप्तम भाव में गया हो तो सत्यवादिनी, सुमुखी, सुन्दर स्वरूपवाली, शील और कान्ति से युक्त तथा सदैव सत्कर्म में रत रहने वाली पत्नी होती है ॥ १०४ ॥

दुष्टो जन्तुविघाती गृहबन्धुविवर्जितः सुकृतरहितः।
निधनगते नवमेशे क्रूरे षण्ढः स विज्ञेयः॥ १०५॥

नवमेश यदि अष्टम भाव में गया हो तो जातक जन्तुओं का वध करने वाला, गृह और बन्धु (भाई-कुटुम्बी) से रहित तथा सत्कर्म से हीन होता है। यदि नवमेश पापग्रह हो तो जातक नपुंसक होता है॥ १०५॥

सुकृतगतः सुकृतपतिः स्वबन्धुभिः प्रीतिमतुलितसमत्वम्।
दातारं देवगुरौ स्वजनकलत्रादिसंसक्तम्॥ १०६॥

नवमेश यदि नवम भाव में गया हो तो अपने भाइयों से अत्यन्त स्नेह तथा समान भाव रखने वाला, दानी, देवता, गुरु तथा आत्मीय (मित्र-बन्धु) जनों, स्त्री-पुत्र आदि में आसक्त रहता है॥ १०६॥

नृपकर्माणं शूरं मातापित्रोश्च पूजकं पुरुषम्।
धर्मख्यातं कुरुते सुकृतपतिर्गगनगृहभीलः॥ १०७॥

नवम भाव का स्वामी यदि दशम भाव में स्थित हो तो व्यक्ति राजकीय कर्मचारी, शूर, माता-पिता का आदर करने वाला तथा धार्मिक आचरण से प्रसिद्ध होता है॥ १०७॥

दीर्घायुर्धर्मपरो धनेश्वरः स्नेहलो नृपतिलाभी।
सुकृतख्यातः सुसुतः सुकृतविभौ लाभभवनस्थे॥ १०८॥

नवम भाव का स्वामी लाभ (एकादश) भाव में हो तो जातक दीर्घजीवी, धर्म परायण, धनपति, लोगों का प्रियपात्र, राजा से लाभान्वित होने वाला, अपने सत्कर्मों से विख्यात तथा अच्छे (योग्य) पुत्रों वाला होता है॥ १०८॥

द्वादशगे सुकृतेशे मानी देशान्तरे सुरूपश्च।
विद्यावाञ्छुभखेटे क्रूरे च भवेद्अतिधूर्तः॥ १०९॥

बारहवें भाव में यदि नवमेश गया हो तो वह मनुष्य, अभिमानी, दूसरों के स्थान में रहने वाला होता है। यदि नवमेश शुभग्रह हो तो विद्या से युक्त यदि क्रूर ग्रह हो तो अत्यन्त धूर्त होता है॥ १०९॥

द्वादश भावगत दशमेशफल

दशमपतौ लग्नगते मातरि वैरी पितुर्भक्तः।
मृत्युं गते च ताते खलु परपुरुषरता भवति माता॥ ११०॥

दशम भाव का स्वामी लग्न (प्रथम भाव) में गया हो तो जातक माता का शत्रु तथा पिता का भक्त होता है। पिता की मृत्यु के बाद माता पराये पुरुष के साथ सम्बन्ध कर लेती है॥ ११०॥

वित्तस्थे गगनपतौ मात्रा पाल्यः सुतो भवति लोभी ।
मातरि दुष्टो नितरां स्वल्पग्रासी श्रुतसुकर्मा च ॥ १११ ॥

दशमेश धन भाव में गया हो तो जातक का पालन-पोषण केवल माता ही करती है (अर्थात् पिता का सहयोग नहीं मिलता) । तथा वह बालक लोभी, माता के प्रति दुष्ट, निरन्तर अल्प आहार (भोजन) ग्रहण करने वाला, श्रोता (कथा, वार्ता आदि सुनने वाला) एवं सुन्दर कर्म करने वाला होता है ॥१११॥

मातृस्वजनविरोधी सेवानिरतो न कर्मणि समर्थः ।
मातुलपरिपालितः स्याद्दशमपतौ सहजभवनस्थे ॥ ११२ ॥

दशम भाव 'का स्वामी' यदि तृतीय भाव में गया हो तो वह व्यक्ति माता एवं आत्मीय जनों का विरोधी, सेवा कार्य में संलग्न, कार्य करने में असमर्थ तथा मामा के द्वारा पालित होता है ॥ ११२ ॥

व्योमपतौ तुर्यगते सुखे तु विरतः सदाचारः ।
भक्तश्च मातृपित्रोर्नृपमानी जायते पुरुषः ॥ ११३ ॥

दशमेश यदि चतुर्थभाव में गया हो तो पुरुष सुख से रहित, सदाचारी, माता-पिता का भक्त तथा राजा द्वारा सम्मानित होता है ॥ ११३ ॥

शुभकर्मको विडम्बी नृपलाभी गीतवाद्यनिरतः स्यात् ।
गगनपतौ तनयगते पालयति च तं सुतं माता ॥ ११४ ॥

दशम भाव का स्वामी यदि पञ्चम भाव में गया हो तो व्यक्ति शुभकार्य करने वाला, डींग हाँकनेवाला, राजा से लाभ प्राप्त करने वाला, संगीत-वाद्य में रुचि रखने वाला, होता है तथा उसका पालन-पोषण केवल माता ही करती है ॥११४॥

अम्बरपे रिपुसंस्थे शत्रुभयात्कातरः कलहशीलः ।
कृपणः कृपया हीनो नरो न रोगी भवति लोके ॥ ११५ ॥

शत्रु (षष्ठ) भाव मे यदि दशमेश गया हो तो वह शत्रुओं के भय से कातर, झगड़ालू, कंजूस, निर्दय तथा निरोग बनाता है ॥ ११५ ॥

सुतवती शुभरूपसमन्विता निजपतिप्रतिपालनलालसा ।
भवति तस्य शुभं कुरुते सदा प्रियतमाम्बरपे दयितां गते ॥ ११६ ॥

दशमभाव का स्वामी यदि सप्तम भाव में गया हो तो उस व्यक्ति की स्त्री पुत्रों वाली, सौन्दर्य युक्त, पति सेवा में सदैव तत्पर, तथा पति का सदैव शुभ करने वाली पतिप्रिया होती है ॥ ११६ ॥

पुष्करपतिरष्टमगः क्रूरं शूरं मृषान्वितं दुष्टम् ।
मातरि संतापकरं जनयति तनुजीवितं कितवम् ॥ ११७ ॥

दशमेश यदि अष्टम भाव में गया हो तो जातक क्रूर स्वभाव वाला, शूर, झूठ बोलने वाला, दुष्ट, माता को कष्ट देने वाला, अल्प आयु वाला तथा प्रपञ्ची होता है ॥ ११७ ॥

शुभशील: सद्बन्धु: सन्मित्रो दशमपे नवमलीने।
तन्मातापि सुशीला सुकृतवती सत्यवचनरता ॥ ११८ ॥

दशमेश यदि नवम भाव में स्थित हो तो जातक सुशील, अच्छे मित्रों एवं भाइयों वाला होता है। उसकी माता भी सुशीला, अच्छे कर्मों को करने वाली तथा सत्यवादिनी होती है ॥ ११८ ॥

गगनपतिर्गगनस्थः कुरुते जननीसुखप्रदं पुरुषम्।
जननीकुलविपुल-सुखं प्रकथनघटनापटीयांसम् ॥ ११९ ॥

दशमेश यदि दशम में ही स्थित हो तो वह व्यक्ति अपनी माता को सुख देने वाला, मातृकुल (मामा आदि) से पर्याप्त सुखी तथा वार्तालाप में अत्यन्त चतुर (प्रत्युत्पन्न मति) होता है ॥ ११९ ॥

मानार्जितार्थसहितो माता च रक्षिणी भवेत्सुखिनी।
दीर्घायुर्मातृसुखी पुरुषो लाभस्थितेऽम्बरपे ॥ १२० ॥

दशमेश के लाभ भाव (एकादश) में स्थित होने से मनुष्य सम्मान के साथ धन संग्रह करने वाला, दीर्घजीवी एवं माता से सुखी होता है। माता उसकी रक्षा करने वाली तथा सुखी होती है ॥ १२० ॥

मात्रोज्झितो निजबल: शुभकर्मा नृपतिकर्मरतचेताः।
व्योमपतौ व्ययसंस्थे देशान्तरगतश्च पापखगे ॥ १२१ ॥

व्यय (बारहवें) भाव में दशमेश स्थित हो तो जातक माता से परित्यक्त, स्वावलम्बी, (अपने बल से अपना भरण पोषण करने वाला), शुभ कार्य करने वाला तथा राजकीय कार्यों में निष्ठापूर्वक संलग्न रहता है। यदि दशमेश पापग्रह हो तो विदेश में निवास होता है ॥ १२१ ॥

द्वादशभावगत लाभेश फल

अल्पायुर्बलकलितः शूरो दाता जनप्रियः सुभगः।
लाभपतौ लग्नगते तृष्णादोषान्मृतिं लभते ॥ १२२ ॥

लाभेश (एकादश भाव के स्वामी) के लग्न में स्थित रहने से जातक अल्प-आयु वाला, बल से परिपूर्ण, दानी, लोकप्रिय, सुन्दर होता है तथा उसकी मृत्यु लोभ से होती है ॥ १२२ ॥

वित्तगते लाभपतावुत्पन्नभुगल्पभोजनोऽल्पायुः ।
अष्टकपाली रोगी क्रूरे सौम्ये च धनकलितः ॥ १२३ ॥

लाभ भाव का स्वामी यदि धन स्थान में गया हो तो वह व्यक्ति उत्पन्न (स्वयं कृषि द्वारा उत्पन्न) कर खाने वाला, अल्प भोजन करने वाला, अल्पायु, होता है। यदि क्रूर ग्रह हो तो वह रोगी एवं अष्टकपाली भिक्षुक होता है। यदि शुभ ग्रह हो तो धन से पूर्ण होता है ॥ १२३ ॥

बन्धुस्त्रीपालनकः सुबान्धवो बन्धुवत्सलः सुभगः ।
लाभेशे सहजगते बन्धूनां रिपुकुलच्छेत्ता ॥ १२४ ॥

एकदश भाव का स्वामी यदि तृतीय भाव में गया हो तो जातक भाई-बन्धुओं के भी परिवार का पालन-पोषण करने वाला, अच्छे (सदाचारी) भाइयों वाला, बन्धुओं का प्रेमी सुन्दर स्वरूप वाला तथा बन्धुओं के शत्रुओं के कुल का नाश करने वाला होता है ॥ १२४ ॥

तुर्यस्थे लाभेशे दीर्घायुः पितरि भक्तिभाग्भवति ।
समयैककर्मनिरतः स्वधर्मनिरतश्च लाभवान् मनुजः ॥ १२५ ॥

चतुर्थ भाव में यदि लाभेश गया हो तो मनुष्य दीर्घजीवी पिता में श्रद्धा भक्ति रखने वाला, एक समय में एक ही कार्य करने वाला, अपने धर्म में लीन, तथा लाभ (सफलता) प्राप्त करने वाला होता है ॥ १२५ ॥

लाभपतिः पुत्रगतः पितृपुत्रस्नेहलं मिथः कुरुते ।
तुल्यगुणं च परस्परमल्पायुर्जायते पुरुषः ॥ १२६ ॥

लाभेश यदि पञ्चम भाव में गया हो तो पिता और पुत्र में परस्पर स्नेह होता है तथा दोनों समान गुणी होते हैं। इस योग में जातक अल्पायु होता है ॥ १२६ ॥

षष्ठगते लाभपतौ सुदीर्घरोगी सुवैरिकलितश्च ।
तस्करहस्तान्मृत्युः क्रूरे देशान्तरगतस्य ॥ १२७ ॥

षष्ठ भाव में यदि लाभेश गया हो तो जातक दीर्घकाल तक रोगी एवं शत्रुओं से युक्त होता है। यदि लाभेश क्रूर ग्रह हो तो विदेश में चोरों के हाथ उसकी मृत्यु होती है ॥ १२७ ॥

सप्तमगे लाभेशे तेजस्वी शीलसम्पदः पदवान् ।
दीर्घायुर्भवति नरस्तथैकदयितापतिर्नित्यम् ॥ १२८ ॥

लाभेश यदि सप्तम भाव में गया हो तो पुरुष तेजस्वी, शील रूपी सम्पत्ति से युक्त (अर्थात् अत्यन्त सहृदय), उच्च पदाधिकारी, दीर्घजीवी तथा सदैव एक पत्निव्रती होता है ॥ १२८ ॥

एकादशपेऽष्टमगेऽल्पायुर्भवति स जातको रोगी।
जीवन्मृत्युश्च दुःखी भवति नरः सौम्यगगनचरे॥ १२९॥

एकादश भाव का स्वामी यदि अष्टम भाव में गया हो तो वह पुरुष अल्पायु, रोगी तथा जीवन-मृत्यु से संघर्ष करता रहता है। यदि लाभेश शुभग्रह हो तो दुःखी रहता है॥ १२९॥

एकादशेशे सुकृतालयस्थे बहुश्रुतः शास्त्रविचारदक्षः।
धर्मं प्रसिद्धो गुरुदेवभक्तः क्रूरे च बन्धुव्रतवर्जितश्च॥ १३०॥

एकादश भाव का स्वामी यदि नवम भाव में गया हो तो मनुष्य बहुश्रुत (विविध विद्वानों के विचारों को सुनने एवं मनन करने वाला), शास्त्र चर्चा में निपुण, प्रसिद्ध धार्मिक, गुरु एवं देवता का भक्त होता है। यदि क्रूर ग्रह एकादशेश हो तो बन्धुओं के प्रति स्नेह भाव से रहित होता है॥ १३०॥

मातरि भक्तः सुकृति पितरि द्वेषी सुदीर्घतरजीवी।
धनवाञ्जननीपालननिरतो लाभाधिपे खगते॥ १३१॥

लाभेश यदि दशम भाव में गया हो तो जातक माता का भक्त, धार्मिक, पिता से द्वेष रखने वाला, दीर्घजीवी, धनवान् तथा माता के पालन में अनुरक्त रहता है॥ १३१॥

लाभाधिपो लाभगतः करोति दीर्घायुषं पुष्कलपुत्रपौत्रम्।
सुकर्मकं रूपवरं सुशीलं जनप्रधानं विपुलं मनोज्ञम्॥ १३२॥

लाभेश यदि लाभ स्थान में ही गया हो तो दीर्घायु प्रदान करता है। जातक अनेक पुत्र-पौत्रों से युक्त, सत्कर्मी, सुन्दर स्वरूप वाला, सुशील, लोगों में श्रेष्ठ, विशाल शरीर वाला तथा मन को आनन्दित करने वाला (प्रसन्नचित्त) होता है॥ १३२॥

द्वादशगे लाभेशे सूत्पन्नभुक् स्थिरो भवति रोगी।
उत्पातरतो मानी दाता च सुखी सदा पुरुषः॥ १३३॥

द्वादश (बारहवें) भाव में यदि लाभेश गया हो तो स्वयं द्वारा उत्पादित वस्तुओं को खाने वाला, स्थिर चित्त वाला, रोगी, उत्पात में संलग्न, स्वाभिमानी, दानी तथा सदैव सुखी रहने वाला पुरुष होता है॥ १३३॥

द्वादश भावगत द्वादशेश फल

व्ययपे लग्न गते विदेशगः सुवचनः सुरूपश्च।
अपसक्रवाददोषी भवति कुमारोऽथ वा षण्ढः॥ १३४॥

व्यय (बारहवें) भाव का स्वामी यदि लग्न में गया हो तो जातक विदेश में रहने वाला, मृदुभाषी, सुन्दर स्वरूप वाला, कुसङ्गति के कारण कलङ्कित, अविवाहित अथवा नपुंसक होता है ॥ १३४ ॥

द्वादशपे वित्तगते कृपणः कटुवाग्विनष्टलाभलयः ।
सौम्ये तु निधनं गच्छति नृपतस्करवह्नितोऽभिभयम् ॥ १३५ ॥

बारहवें भाव का स्वामी यदि धन स्थान में गया हो तो वह व्यक्ति कृपण, कटु भाषी, नष्ट धन का भी लाभ प्राप्त करने वाला, होता है । यदि व्ययेश शुभग्रह हो तो राजा, चोर एवं अग्नि से हानि तथा मृत्यु होती है ॥ १३५ ॥

सहजगते द्वादशपे क्रूरे गतबान्धवः शुभे च धनी ।
तनुसोदरः सुकृपणे बन्धुषु दूरे सदा वसति ॥ १३६ ॥

द्वादश भाव का स्वामी यदि तृतीय भाव में गया हो तो व्यक्ति क्रूर एवं भाइयों से रहित होता है । यदि शुभग्रह हो तो अल्प सहोदर (भाइयों वाला), अत्यन्त कृपण, तथा सदैव भाइयों से दूर रहता है ॥ १३६ ॥

तुर्यगते व्ययनाथे कृपणो रोगी सुकर्मा च ।
मृतिमाप्नोति सुतेभ्यः सततं मनुजो महादुःखी ॥ १३७ ॥

व्ययेश यदि चतुर्थ भाव में गया हो तो व्यक्ति कंजूस, रोगी, सुकर्म (अच्छे कार्य) करने वाला, निरन्तर महान् दुःख भोगने वाला होता है । तथा अपने पुत्रों द्वारा उसकी मृत्यु होती है ॥ १३७ ॥

द्वादशपतौ सुतस्थे क्रूरे सुतविवर्जितः शुभे ससुतः ।
जनककमलाविलासी समर्थताविरहितः पुरुषः ॥ १३८ ॥

द्वादश (व्यय) भाव का स्वामी यदि पञ्चम भाव में गया हो तथा क्रूर ग्रह हो तो सन्तान से रहित शुभग्रह हो तो सन्तान युक्त करता है । पैतृक धन का उपभोग करने वाला सामर्थ्य से रहित पुरुष होता है ॥ १३८ ॥

षष्ठगते व्ययनाथे क्रूरे कृपणोऽक्षिदूषणः पुरुषः ।
लभते मृतिं नितान्तं भृगुतनये नेत्रहीनः स्यात् ॥ १३९ ॥

छठें भाव में यदि व्ययेश गया हो तो तथा क्रूर ग्रह हो तो मनुष्य कृपण, नेत्र दोष से युक्त तथा निश्चय ही अकाल मृत्यु पाने वाला होता है । यदि शुक्र द्वादशेश हो तो उसकी आँख अंधी होती है ॥ १३९ ॥

द्वादशपे सप्तमगे दुष्टो दुश्चरितभृत्पटुवचनः ।
क्रूरे स्वस्त्रीतः स्यात् सौम्ये क्षयमेति गणिकातः ॥ १४० ॥

द्वादशेश यदि सप्तम भाव में हो तो वह व्यक्ति दुष्ट, चरित्रहीन तथा बात-

पीन में विपुण होता है । क्रूर ग्रह द्वादशेश हो तो अपनी स्त्री द्वारा यदि शुभग्रह हो तो वेश्या द्वारा निधन होता है ॥ १४० ॥

निधनगते व्ययनाथेऽष्टकपाली कार्यसाधनै रहितः ।
द्रोहमतिः सौम्यखगे धनसंग्रहपरो नरो भवति ॥ १४१ ॥

व्ययेश क्रूर ग्रह अष्टम भाव में हो तो मनुष्य अष्टकपाली (अवघड़, या कपाल में भिक्षा मांगने वाला), कार्य एवं साधनों से हीन (बेकार) तथा द्रोह (ईर्ष्यालु) बुद्धिवाला होता है । यदि शुभ ग्रह हो तो धन सञ्चय में संलग्न रहता है ॥ १४१ ॥

सुकृतगते व्ययनाथे तीर्थालोकाटनं वृत्तिः ।
क्रूरे खगे च पापा निरर्थकं याति तद्द्रव्यम् ॥ १४२ ॥

नवम भाव में व्ययेश हो तो स्थानों में भ्रमण करके जीवन यापन करता (तीर्थ पुरोहित या ट्रैवेल एजेन्ट होता) है । यदि व्ययेश क्रूर ग्रह हो तो पापी तथा व्यर्थ धन व्यय करने वाला होता है ॥ १४२ ॥

व्ययपे गगनगृहस्थे पररमणीपराङ्मुखः पवित्राङ्गः ।
सुतधनसग्रहनिरतो दुर्वचनपरा भवति तन्माता ॥ १४३ ॥

व्यय भाव का स्वामी यदि दशम भाव में गया हो तो मनुष्य परस्त्री से विमुख, पवित्र अंगों वाला, पुत्र और धन के प्रति अधिक आसक्त होता है । उसकी माता कटुभाषिणी होती है ॥ १४३ ॥

द्वादशपे लाभस्थे द्रविणपतिर्दीर्घजीवितो भवति ।
स्थानप्रवरो दाता विख्यातः सत्यवचनपरः ॥ १४४ ॥

द्वादश भाव का स्वामी यदि लाभ (एकादश) भाव में हो तो धनपति (धनवान्) दीर्घजीवी, अपने क्षेत्र का श्रेष्ठ दानी, विख्यात, सत्यवादी तथा वचन का पालन करने वाला व्यक्ति होता है ॥ १४४ ॥

विभूतिमान् ग्रामनिवासचित्तः कार्पण्यबुद्धिः पशुसंग्रही च ।
चेज्जीवति ग्रामयुतः सदा स्याद्व्ययाधिनाथे व्ययगेहलीने ॥ १४५ ॥

व्ययेश यदि व्यय (१२वें) भाव में ही हो तो जातक ऐश्वर्य सम्पन्न, ग्रामीण जीवन मे रुचि रखने वाला, कृपण, पशुओं का संग्रह करने वाला होता है । यदि दीर्घकाल तक जीवित रहा तो वह गावों का स्वामी (जमीन्दार) हो जाता है ॥ १४५ ॥

नीचस्थ ग्रह का फल

निष्ठुरवचनवदनः समाङ्गस्थूलजङ्घकरपादः ।
स्त्रीजितवह्निर्जितपित्तो भानुर्नीचस्थितः कुरुते ॥ १४६ ॥

यदि सूर्य अपनी नीच राशि (तुला) में स्थित हो तो जातक कठोर दाँतों एवं मुख वाला, समान शरीर, मोटे जंघा, हाथ और पैरों वाला होता है। विवाह के बाद वह स्त्री के वशीभूत हो जाता है ॥ १४६ ॥

नृत्यकवादकजल्पकधूर्तजनैश्चापि सङ्गतिः सहसा ।
कुमतिः संशयनिरतो नीचस्थो हिमकरः कुरुते ॥ १४७ ॥

जन्म समय में यदि चन्द्रमा अपनी नीच राशि (वृश्चिक) में स्थित हो तो जातक नाचने, बजाने, व्यर्थ बातें करने वालों तथा धूर्त जनों की संगति करने वाला दुर्बुद्धि युक्त तथा सन्देह में रहने वाला होता है ॥ १४७ ॥

लक्ष्मी ह्यत्युग्रबला स्थिरविभवो बुद्धिमान् गुणश्च ।
रात्रिश्चरोऽतिचौरो दुष्टात्मा भूसुतः कुरुते ॥ १४८ ॥

मंगल अपनी नीच राशि (कर्क) में स्थित हो तो व्यक्ति अत्यन्त बलवान् स्थिरसम्पत्ति वाला, बुद्धिमान, गुणवान, रात्रि में विचरण करने वाला, अत्यन्त चोर तथा दुष्टात्मा होता है ॥ १४८ ॥

शुभबुद्धिर्वर्ग्युवतिः शुभशीला भर्तृवचन अनुमुदिता ।
सन्ततिपुत्रविहीनो नीचस्थश्चन्द्रजः कुरुते ॥ १४९ ॥

जन्म काल में यदि बुध अपनी नीच राशि (मीन) में स्थित हो तो उस व्यक्ति की स्त्री सद्बुद्धि वाली, सुन्दरी, एवं सुशीला पति की आज्ञा का अनुगमन करने वाली तथा कन्या एवं पुत्रों से हीन होती है ॥ १४९ ॥

दिव्यस्त्रीवरकाञ्चनपुष्पफलप्रकरपूजितः पुरुषः ।
भर्ता देशान्तरगतो नीचस्थः सुरगुरुः कुरुते ॥ १५० ॥

बृहस्पति अपनी नीच राशि (मकर) में स्थित हो तो सुन्दरी एवं श्रेष्ठ स्त्री, स्वर्ण, पुष्प, फल आदि उत्तम वस्तुओं से सम्पन्न होता है। यदि स्त्री हो तो उसका पति देशान्तर (विदेश) में निवास करता है ॥ १५० ॥

अतिकौतुकी विनोदी सभासु सुवाक्सदा प्राज्ञः ।
राज्यकलामणिमण्डितो नीचस्थो भार्गवः कुरुते ॥ १५१ ॥

शुक्र अपनी नीच राशि (कन्या) में हो तो जातक कौतुकी (क्रीड़ा में निपुण), हास्य-विनोदप्रिय, सभा में मृदुभाषी, बुद्धिमान, राजनीति में मूर्धन्य होता है ॥ १५१ ॥

शत्रूणां क्षयकारको दृढवपुर्दाक्षाल्लिकान्तश्चल
देशग्रामपुरादिपत्तनबली साम्राज्यराज्याधिपः ।
आचारादिचारदक्षसुमतिः स्त्रीसौख्ययुक्तः सदा
ज्ञातिभ्रातृजनान्वितोऽपि च भवेन्नीचस्थितार्किर्यदा ॥ १५२ ॥

शनि अपनी नीच राशि (मेष) में गया हो तो जातक शत्रुओं का क्षय करने वाला, दृढ़ शरीर वाला, प्रज्वलित अग्नि के समान तेजवाला, चञ्चल, देश, ग्राम, पुर नगर आदि में बलवान, साम्राज्य के अन्तर्गत राज्य का अधिपति, स्वेच्छाचारी विचारधारा में निपुण, सुन्दर सदैव स्त्री सुख से सम्पन्न, ज्ञाति (जाति) और भाई आदि जनों से युक्त होता है ॥ १५२ ॥

दुर्भगश्च खलो दुष्टः पापात्मा दुष्टबुद्धिकृद् बहुलः ।
स्वकुटुम्बपक्षहीनो नीचस्थो राहुरिति कुरुते ॥ १५३ ॥

अपनी नीच राशि (धनु) में राहु स्थित हो तो जातक, भद्दी आकृति वाला, उत्पाती, दुष्ट, पापी अधिकांश निन्दित कार्यों में बुद्धि लगाने वाला तथा अपने कुटुम्बियों के समर्थन से रहित होता है ॥ १५३ ॥

काणस्तथा कुशीलः स्त्रीविरही दुःखकातरो विरुचिः ।
अरिपक्षभक्षकुशलो नीचस्थः केतुरपि कुरुते ॥ १५४ ॥

अपनी नीच राशि (धनु) में हो तो व्यक्ति काना (एक नेत्र से हीन), शील से रहित (दुष्ट), स्त्री से वियुक्त, दुःख से खिन्न, उत्साह हीन, तथा शत्रुपक्ष के दमन में निपुण होता है ॥ १५४ ॥

उच्च[1] राशिगत ग्रहों का फल

धीरः प्रचण्डः कुशलो गौरः शूरः कलानिधिश्चतुरः ।
दण्डपतिर्धनयुक्तो ह्युच्चस्थो भास्करः कुरुते ॥ १५५ ॥

सूर्य अपनी उच्च राशि (मेष) में हो तो जातक धीर अत्यन्त उग्र, निपुण, गौर वर्ण वाला, शूर-वीर, कलाओं का ज्ञाता, बुद्धिमान, दण्ड देने का अधिकारी, तथा धनवान होता है ॥ १५५ ॥

विज्ञानधनसमेतः पात्रपवित्रश्च कामिनीविरही ।
बहुजनतावल्लभजन उच्चस्थो हिमकरः कुरुते ॥ १५६ ॥

चन्द्रमा अपनी उच्च राशि (वृष) में हो तो जातक वैज्ञानिक, धनवान, पवित्रता का पात्र (अर्थात् अत्यन्त शुद्ध हृदय वाला), स्त्री के वियोग से युक्त, विशाल जन समुदाय का प्रिय होता है ॥ १५६ ॥

---

१. ग्रहों का राशियों के साथ कई प्रकार का सम्बन्ध माना गया है। इनमें से स्थान (गृह), उच्च, नीच तथा मूल त्रिकोण विशेष महत्व पूर्ण हैं। फलित ज्योतिष में पग-पग पर इनका उपयोग है। स्थान या क्षेत्र का स्वामी वही ग्रह होता है जिसका वह क्षेत्र (गृह) होता है। यथा—सूर्य का क्षेत्र सिंह राशि तथा सिंह का स्वामी सूर्य इसी प्रकार सूर्य की उच्च राशि मेष १०° तक, तथा

उग्रदृढप्रहारं शस्त्रं क्रूरं वचनबहुविदितम् ।
नृपकुलवल्लभशूरं ह्युच्चस्थो भूसुतः कुरुते ॥ १५७ ॥

जन्म समय में अपनी उच्च राशि (मकर) में मंगल हो तो जातक स्वभाव से उग्र, शक्तिपूर्वक शस्त्रप्रहार करने वाला, वाणी से अत्यन्त प्रसिद्ध, राजा का प्रियपात्र, तथा शूर (बहादुर) होता है ॥ १५७ ॥

मूलत्रिकोणगत ग्रहों का फल

धनी सुखी कार्यविज्ञस्त्रिकोणस्थे दिवाकरे ।
चन्द्रे धनी च भोक्ता च भौमे शूरोऽदयः खलः ॥ १५८ ॥

सूर्य अपनी मूल त्रिकोण राशि (सिंह) मे हो तो जातक धनवान, सुखी, सभी प्रकार के कार्यों में दक्ष होता है । यदि चन्द्रमा मूल त्रिकोण में हो तो धनी एवं भोगी, भौम हो तो शूर-वीर, निर्दय तथा दुष्ट होता है ॥ १५८ ॥

बुधे त्रिकोणगे विज्ञो विनोदी विजयी नरः ।
गुरौ ग्रामपुरादीनां मठस्याधिपतिः सुधीः ॥ १५९ ॥

जन्म समय में बुध यदि मूल त्रिकोण में हो तो ज्ञाता, विनोदप्रिय, एवं विजय (सफलता) प्राप्त करने वाला, गुरु हो तो ग्राम, नगर, एवं मठ का अधिकारी तथा विद्वान होता है ॥ १५९ ॥

शुक्रे त्रिकोणगे सुज्ञः सुखयुक्तो महीपतिः ।
मन्दे नगे धनैः पूर्णो महाशूरः कुलेश्वरः ॥ १६० ॥

शुक्र अपनी मूल त्रिकोण राशि मे स्थित हो तो सुबुद्ध (विद्वान), सुख से युक्त तथा राजा (भूमि का स्वामी) होता है । यदि शनि मूल त्रिकोण मे हो तो

नीच राशि तुला के १०° तक होती है । सरलता के लिए सभी ग्रहों के क्षेत्र, उच्च, नीच तथा मूल त्रिकोण बतलाते है—

ग्रह	राशि/क्षेत्र	उच्च	नीच	मूलत्रिकोण
सूर्य	सिंह	मेष १०°	तुला १०°	सिंह
चन्द्र	कर्क	वृष ३°	वृश्चिक ३°	वृष
मंगल	मेष, वृश्चिक	मकर २८°	कर्क २८°	मेष
बुध	मिथुन, कन्या	कन्या १५°	मीन १५°	कन्या
गुरु	धनु, मीन	कर्क ५°	मकर ५°	धनु
शुक्र	वृष, तुला	मीन २७°	कन्या २७°	तुला
शनि	मकर, कुम्भ	तुला २०°	मेष २०°	कुम्भ
राहु	कन्या	मिथुन		
केतु	मीन	धनु		

जातक धन से परिपूर्ण, महान बलवान, तथा अपने कुल के भार को धारण करने वाला होता है ।। १६० ।।

स्वक्षेत्री ग्रहों का फल

स्वगृहस्थे रवौ लोके महोग्रश्च सदोद्यमी ।
चन्द्रे कर्मरतः साधुर्मनस्वी रूपवानपि ।। १६१ ।।

जन्म समय में सूर्य यदि अपने गृह (सिंह) राशि में हो तो जातक संसार में उग्र (तेजस्वी) तथा सदैव उद्योगी (कर्मठ), चन्द्रमा अपने क्षेत्र (कर्क) में हो तो कार्य में संलग्न, सज्जन, स्वाभिमानी, तथा सुन्दर स्वरूप वाला होता है ।।१६१।।

स्वगृहस्थे कुजे वापि चपलो धनवानपि ।
बुधे नानाकलाभिज्ञः पण्डितो धनवानपि ।। १६२ ।।

यदि मंगल अपने गृह (मेष, वृश्चिक) में स्थित हो तो जातक चञ्चल एवं धनवान, बुध अपने गृह (मिथुन, कन्या) में हो तो अनेक कलाओं का ज्ञाता, विद्वान् तथा धनवान होता है ।। १६२ ।।

धनी काव्यश्रुतिज्ञश्च स्वचेष्टः स्वगृहे गुरौ ।
स्फीतः कृषीवलः शुक्रे शनौ मान्यः सुलोचनः ।। १६३ ।।

बृहस्पति अपनी राशि (धनु, मीन) में हो तो जातक काव्य शास्त्र एवं वेद का ज्ञाता तथा स्वयं उद्योगी (अथवा जिज्ञासु) होता है । शुक्र अपने गृह में हो तो कृषि कार्य करने वाला, शनि अपनी राशि (मकर-कुम्भ) में हो तो सम्मानित एवं सुन्दर नेत्रों वाला होता है ।। १६३ ।।

मित्र ग्रहों के राशिगत ग्रहों का फल

सूर्ये मित्रगृहे ख्यातः शास्त्रज्ञः स्वस्थसौहृदः ।
चन्द्रे नरो भाग्ययुक्तश्चतुरो धनवानपि ।। १६४ ।।

सूर्य यदि अपने मित्र ग्रहों की राशि में गया हो तो मनुष्य प्रसिद्ध, शास्त्रों का ज्ञाता, स्वस्थ तथा मित्रों से युक्त होता है । चन्द्रमा अपने मित्रग्रहों की राशियों में हो तो मनुष्य भाग्यशाली, चतुर तथा धनवान् होता है ।। १६४ ।।

भौमे शस्त्रोपजीवी च बुधे रूपधनान्वितः ।
गुरौ मित्रगृहे पूज्यः सतां सत्कर्मसंयुतः ।। १६५ ।।

मंगल अपने मित्र ग्रह की राशि में हो तो शस्त्रों के द्वारा जीविका होती है । (शस्त्रों के निर्माण, व्यापार अथवा शस्त्रों के उपयोग से जीवनयापन करने वाला होता है ।) बुध मित्र क्षेत्र में हो तो रूप एवं धन से युक्त, गुरु अपने मित्र ग्रह के क्षेत्र में हो तो सदैव पूज्य, सत्कर्म में संलग्न व्यक्ति होता है ।। १६५ ।।

शुक्रे मित्रगृहे लोके धनी बन्धुजनप्रियः।
शनौ रुजाकुलो देहः कुकर्मनिरतो भवेत्॥ १६६॥

शुक्र अपने मित्र ग्रह की राशि में स्थित हो तो लोक में प्रसिद्ध धनी, भाई-बन्धुओं का प्रिय तथा शनि मित्र क्षेत्र में हो तो रोगों से पीड़ित शरीर वाला तथा कुकर्म में संलग्न व्यक्ति होता है॥ १६६॥

शत्रु राशिगत ग्रहों का फल

सूर्ये रिपुगृहे नीचो विषयैः पीडितो नरः।
चन्द्रे हृदयरोगी च भौमे जायाजडोऽधनः॥ १६७॥

सूर्य अपनी शत्रु राशि में स्थित हो तो मनुष्य नीच प्रकृति वाला, विषय वासनाओं से पीड़ित होता है। चन्द्रमा अपने शत्रु ग्रह के क्षेत्र में हो तो हृदय से रोगी, भौम हो तो स्त्री के कर्कश व्यवहार से जड़ तथा दरिद्र होता है॥ १६७॥

बुधे रिपुगृहे मूर्खो वाग्धनी दुःखपीडितः।
जीवे च जायते क्लीबो नष्टवृत्तिर्बुभुक्षितः॥ १६८॥

बुध अपने शत्रु ग्रह के क्षेत्र में हो तो मूर्ख, वाणी से धनवान्, एवं दुःख से पीड़ित होता है। गुरु शत्रु क्षेत्र में हो तो मनुष्य नपुंसक होता है तथा उसकी जीविका का साधन नष्ट हो जाता है और वह क्षुधा से पीड़ित रहता है॥ १६८॥

शुक्रे शत्रुग्रहे भृत्यः कुबुद्धिर्दुःखितो नरः।
शनौ व्याध्यर्थशोकेन सन्तप्तो मलिनो भवेत्॥ १६९॥

शुक्र अपनी शत्रु ग्रह की राशि में हो तो मनुष्य सेवक (चपरासी, नौकर), दुष्ट बुद्धि वाला तथा दुःखी होता है। शनि शत्रु क्षेत्र में हो तो व्याधि, एवं धन के शोक से सन्तप्त तथा मलिन आचरण वाला होता है॥ १६९॥

द्वादश भावगत लग्नों का फल

मेषोदये रक्ततनुर्मनुष्यः श्लेष्माधिकः क्रोधपरः कृतघ्नः।
समन्दबुद्धिः स्थिरतासमेतः पराजितः स्त्रीभृतकैः सदैव॥ १७०॥

यदि जन्मकाल में लग्न (तनुभाव) में मेष लग्न हो तो मनुष्य रक्त वर्ण एवं कफ प्रकृति वाला, क्रोधी, कृतघ्न, अत्यन्त मन्द बुद्धि वाला, स्थिर विचारों वाला, तथा निरन्तर स्त्री एवं नौकरों से पराजित (सन्तप्त) रहने वाला होता है॥१७०॥

वृषोदये जन्म यदा भवेच्च स्वचित्तरोगं स्वजनापमानम्।
इष्टैर्वियोगं कलहं च दुःखं शस्त्राभिघातं च धनक्षयं च॥ १७१॥

यदि वृष लग्न में किसी का जन्म हो तो वह मानसिक रूप से अस्वस्थ, आत्मीय जनों से अपमानित, इष्ट व्यक्तियों से वियुक्त, कलह (विवाद) एवं दुःख से युक्त, शस्त्रों से आहत (छुरा आदि से चोट लगती है), तथा धन का नाश होता है (अर्थात् दुष्ट लोग शस्त्र से घायल कर धन का अपहरण कर लेते हैं।) ॥ १७१ ॥

तृतीयलग्ने पुरुषोऽतिगौरः स्त्रीरक्तचित्तो नृपपीडितश्च ।
दूतः प्रसन्नः प्रियवाग्विनीतः समूर्द्धजो गीतविचक्षणश्च ॥ १७२ ॥

मिथुन लग्न में किसी का जन्म हो तो वह व्यक्ति अत्यन्त गौर वर्ण वाला, स्त्री में अधिक अनुराग रखने वाला, राजा (सरकार) द्वारा पीड़ित, दूत कार्य (संवाद प्रेषण, चपरासी, टेलीफोन आपरेटर आदि) करने वाला, प्रियभाषी, विनम्र बड़े-बड़े बालों का शौक रखने वाला तथा कुशल गायक होता है ॥ १७२ ॥

कर्कोदये गौरवपुर्मनुष्यः पित्ताधिकः कल्पतरुप्रगल्भः ।
जलावगाहानुरतोऽतिबुद्धिः शुचिः क्षमी धर्मरुचिः सुसेव्यः ॥ १७३ ॥

कर्क लग्न में जिसका जन्म हो वह व्यक्ति गौर वर्ण वाला, पित्त प्रकृति वाला, कल्प वृक्ष की तरह उदार प्रकृति वाला, अधिक वाचाल, जल क्रीड़ा में निपुण, अत्यन्त बुद्धिमान्, पवित्रात्मा, क्षमाशील, धर्म में रुचि रखने वाला, सरलता से प्रसन्न होने वाला होता है ॥ १७३ ॥

सिंहोदये पाण्डुतनुर्मनुष्यः पित्तानिलाभ्यां परिपीडिताङ्गः ।
प्रियामिषो रम्यरसः सुतीक्ष्णः शूरः प्रगल्भः परितोऽटनश्च ॥१७४॥

जिसका जन्म सिंह लग्न में हो वह पीले वर्ण वाला, पित्त और वायु से पीड़ित शरीर वाला मांस एवं सुन्दर रसों (मदिरा आदि) का प्रेमी, तीव्र बुद्धि वाला, बलवान् वाचाल तथा चारों तरफ 'घूमने-फिरने' वाला होता है ॥ १७४ ॥

कन्याख्यलग्ने कफपित्तयुक्तो भवेन्मनुष्यः शुभकान्तभावनः ।
श्लेष्मी प्रियः स्त्रीविजितो नु भीरुर्मायाविकः कामकदर्थिताङ्गः ॥१७५॥

कन्या लग्न में उत्पन्न होने वाला मनुष्य कफ एवं पित्त से युक्त अपने आचरण से लोकप्रिय, कफ प्रकृतिवाला, प्रेमी, स्त्री से पराजित, डरपोक, मायावी तथा कामवासना के कारण विकृत अङ्गों वाला होगा ॥ १७५ ॥

तुले विलग्ने च भवेन्मनुष्यः श्लेष्मान्वितः सत्यपरः सदैव ।
पराप्रियः पार्थिवमानयुक्तः सुरार्चने तत्परकल्प एव ॥ १७६ ॥

तुला लग्न में उत्पन्न मनुष्य कफ (खाँसी, न्यूमोनियाँ रोग) युक्त सदैव सत्यवादी, परस्त्री में आसक्त, राजसम्मान से युक्त, देवताओं की पूजा-आराधना में संलग्न रहने वाला होता है ॥ १७६ ॥

लग्नेऽष्टमे कोपधरो जरावान् भवेन्मनुष्यो नृपपूजिताङ्गः।
गुणान्वितः शास्त्रकथानुरक्तः प्रमर्दकः शत्रुगणस्य नित्यम् ॥ १७७ ॥

वृश्चिक लग्न में जिसका जन्म हो वह व्यक्ति क्रोधी, वृद्धावस्था के लक्षणों से युक्त, राजाओं से सम्मानित, गुणवान्, शास्त्रचर्चा में अनुरक्त सदैव शत्रु गणों का मर्दन करने वाला होता है ॥ १७७ ॥

चापोदये राजयुतो मनुष्यः कार्ये प्रवीणो द्विजदेवरक्तः।
तुरङ्गयुक्तः सुहृदा प्रयुक्तस्तुरङ्गजङ्घश्च भवेत्सदैव ॥ १७८ ॥

धनु लग्न में जिसका जन्म होता है वह व्यक्ति सदैव राजाओं के साथ रहने वाला, कार्य में कुशल, ब्राह्मण और देवताओं में आस्था रखने वाला, घोड़ा (वाहन) रखने का शौकीन, मित्रों से युक्त, (घुड़सवारी करने से) घोड़े की तरह जांघों वाला होता है ॥ १७८ ॥

मृगोदये तोषरतः सुतीव्रो भीरुः सदा पापरतः सुमूर्तिः।
श्लेष्मानिलाभ्यां परिपीडिताङ्गः सुदीर्घगात्रः परवञ्चकश्च ॥ १७९ ॥

मकर लग्न में उत्पन्न व्यक्ति सन्तोषी, स्वभाव से तीव्र (आलस्य रहित), डरपोक, सदैव पापकर्म में रत रहने वाला, सुन्दर मूर्ति वाला, कफ और वायु से पीड़ित शरीर वाला, लम्बी शरीर वाला तथा दूसरों को ठगने वाला होता है ॥ १७९ ॥

घटोदये सुस्थिरतासमेतो वाताधिकस्तोयनिषेवणोत्कः।
सुहृत्स्वगात्रः प्रमदास्वभीष्टः शिष्टानुरक्तो जनवल्लभश्च ॥ १८० ॥

जिसका जन्म कुम्भ लग्न मे हो वह स्थिरता पूर्वक (सोच विचार कर) कार्य करने वाला, वायु विकार से युक्त, जलका अधिक सेवन करने वाला, मित्रों के लिए अपना शरीर (सर्वस्व) अर्पित करने वाला स्त्रियों का प्रेमी, शिष्ट पुरुषों की संगति करने वाला तथा लोगों का प्रिय होता है ॥ १८० ॥

मीनोदयो तोयरतो मनुष्यो भवेद्विनीतः सुरतानुकूलः।
सुपण्डितः सूक्ष्मतनुः प्रचण्डः पित्ताधिकः कीर्त्तिसमन्वितश्च ॥ १८१ ॥

मीन लग्न के उदय काल में जिसका जन्म हो वह मनुष्य जल में अधिक आनन्द अनुभव करने वाला, विनम्र, स्त्रीप्रसङ्ग के लिए सदैव उद्यत, सुबुद्ध, दुर्बल शरीर वाला, प्रतापी, पित्त प्रकृति वाला तथा यशस्वी होता है ॥ १८१ ॥

धनभाव में स्थित राशियों का फल

मेषे धनस्थे कुरुते मनुष्यो धनं सुपुण्यैर्विविधैः प्रभूतैः।
सुनीतियुक्तं तनयं प्रसूते चतुष्पदाढ्यं बहुपण्डितज्ञम् ॥ १८२ ॥

धन भाव में यदि मेष राशि हो तो मनुष्य विविध पुण्य कार्यों से अधिक धन लाभ करता है। सुन्दर नीति (सदाचार) से युक्त पुत्र सन्तान को जन्म देने वाला, चौपायों से युक्त (पशुपालन में रुचि रखने वाला) तथा विद्वानों की संगति करने वाला होता है ॥ १८२ ॥

वृषे धनस्थे लभते मनुष्यः कृषिप्रसादेन धनं सदैव।
अनाभिघातं च चतुष्पदाढ्यं तथा हिरण्यं मणिमौक्तिकाढ्यम् ॥ १८३ ॥

वृष राशि यदि धन भाव में हो तो मनुष्य निरन्तर कृषि कर्म द्वारा धन लाभ करने वाला, अहिंसक पशुओं (गाय-बैल-भैंस आदि) का पालन करने वाला तथा सोना, मणि एवं मुक्ता (मोती) आदि बहुमूल्य रत्नों का संग्रह करने वाला होता है ॥ १८३ ॥

तृतीयलग्ने धनगे मनुष्यो धनं लभेत् स्त्रीजनतश्च नित्यम्।
रौप्यं तथा काञ्चनजं प्रभूतं हयाधिक साधुभिरेव सख्यम् ॥ १८४ ॥

धन भाव में यदि मिथुन लग्न हो तो मनुष्य स्त्रियों से धन लाभ करता है। चाँदी, सोना, घोड़ा (आधुनिक युग में वाहन मोटर-कार) आदि से युक्त तथा साधु (सज्जन) पुरुषों की संगति करने वाला होता है ॥ १८४ ॥

चतुर्थराशौ धनगे मनुष्यो धनं लभेद् वृक्षजमेव नित्यम्।
जलाद्भयं यद्वनमिष्टभोज्यं नयार्जितं प्रीतिकरं सुतानाम् ॥ १८५ ॥

धन स्थान में यदि कर्क राशि हो तो मनुष्य निरन्तर वृक्षों से धन लाभ करने वाला (लकड़ी का व्यापारी, जंगल का ठेकेदार अथवा जंगल विभाग में सेवारत) होता है। जल से भय, जंगली वस्तुओं (कन्दमूल) का रुचि के साथ सेवन करने वाला, नीति पूर्वक धनार्जन करने वाला तथा पुत्रों के साथ स्नेह करने वाला होता है ॥ १८५ ॥

सिंहे धनस्थे लभते मनुष्यो धनं तपोऽरण्यजनात्तु मानम्।
सर्वोपकारं प्रवणं प्रभूतं स्वविक्रमोपार्जितमेव नित्यम् ॥ १८६ ॥

धनभाव में सिंह राशि स्थित हो तो मनुष्य निरन्तर अपने पराक्रम से अर्जित किया हुआ अपार धन प्राप्त करता है। तपस्या (साधना) में रुचि रखने वाला, वनवासियों अथवा तपस्वी सन्त महात्माओं द्वारा सम्मान प्राप्त करने वाला, सभी प्रकार से उपकार करने वाला एवं विनम्र होता है ॥ १८६ ॥

कन्योदये वित्तगते मनुष्यो धनं लभेद् भूमिपतेः सकाशात्।
हिरण्यमुक्तामणिरौप्यजालं गजाश्वनानाविधवित्तजातम् ॥ १८७ ॥

कन्या लग्न यदि धन स्थान में हो तो मनुष्य भूमिपति (राजा, बड़े जमीन्दार) से धन, सोना, मोती-मणि एवं चाँदी का ढेर, हाथी, घोड़ा तथा विविध प्रकार की सम्पत्ति एवं वस्तुओं को प्राप्त करता है ॥ १८७ ॥

तुले धनस्थे बहुपुण्यजातं धनं मनुष्यो लभते प्रभूतम् ।
पाषाणजं मृण्मयमार्तिजातं सस्योद्भवं कर्मजमेव नित्यम् ॥ १८८ ॥

धन स्थान में तुला राशि हो तो मनुष्य ईमानदारी और परिश्रम (पवित्र कार्यों) से अत्यधिक धन प्राप्त करने वाला, पत्थर-मिट्टी, कठोर श्रम तथा कृषि (अन्न) से सम्बन्धित कार्यों को करने वाला होता है ॥ १८८ ॥

धने स्वालिर्यस्य भवेच्च राशिः स्वधर्मंशोलं प्रकरोति नित्यम् ।
विलासिनीकामपरं सदैव विचित्रवाक्यं द्विजदेवभक्तम् ॥ १८९ ॥

जिस व्यक्ति के जन्म समय में धन भाव में वृश्चिक राशि हो वह नित्य अपने कुलधर्म का पालन करने वाला, सुन्दरी स्त्रियों के प्रति सदैव आसक्त (वशीभूत), अद्भुत वचन बोलने वाला ब्राह्मण और देवताओं का भक्त होता है ॥ १८९ ॥

धनुर्धरे वित्तगते मनुष्यो धनं लभेत्स्थैर्यविधानजातम् ।
चतुष्पदाढ्यं विविधं यशस्वी रसोद्भवं धर्मविधानजातम् ॥ १९० ॥

धन भाव में यदि धनु राशि हो तो मनुष्य रस से उत्पन्न धन तथा स्थायी सम्पत्ति (सोने-चाँदी, भूमि आदि) से सम्बन्धित धन का लाभ करता है। विभिन्न प्रकार के पशुओं (गाय-भैंस, घोड़ा, कुत्ता आदि) को पालने वाला, यशस्वी, तथा धार्मिक क्रियाओं में रुचि रखने वाला होता है ॥ १९० ॥

मृगे धनस्थे लभते मनुष्यो धनं प्रपञ्चैर्विविधैरुपायैः ।
सेवासमुत्थं च सदा नृपाणां कृषिक्रियाभिश्च विदेशसङ्गात् ॥ १९१ ॥

धन भाव में मकर राशि हो तो मनुष्य विविध प्रपञ्चों एवं साधनों से, सदैव राजाओं की सेवा से, कृषि द्वारा, तथा विदेश के सम्पर्क से धन लाभ करता है ॥ १९१ ॥

घटे धनस्थे लभते मनुष्यो धनं प्रभूतं फलपुष्पजातम् ।
जनोद्भवं साधुजनस्य भोज्यं महाजनोत्थं च परोपकारी ॥ १९२ ॥

कुम्भ राशि यदि धन स्थान में हो तो मनुष्य फल-फूल के व्यापार से बहुत अधिक धन प्राप्त करता है। बड़े-बड़े (श्रेष्ठी) लोगों से तथा जन साधारण से धन संग्रह कर साधु सेवा करने वाला परोपकारी होता है ॥ १९२ ॥

मत्स्ये धनस्थे लभते मनुष्यो धनं प्रभूतैर्नियमोपवासैः ।
विद्याप्रभावान्निधिसङ्गमाच्च सदा पितृभ्यां समुपार्जितं च ॥ १९३ ॥

धन स्थान में मीन राशि हो तो मनुष्य अत्यधिक नियम (साधना) उपवास (व्रत) अर्थात् आराधना एवं विद्या द्वारा, निधि (सञ्चित द्रव्य या लाटरी) के संयोग से तथा माता-पिता द्वारा अर्जित धन का लाभ करता है ॥ १९३ ॥

तृतीय भावस्थ राशियों का फल

तृतीयसंस्थे प्रथमे च राशौ द्विजातिमित्रश्च भवेन्मनुष्यः ।
परोपकारैः श्रवणैः शुचिश्च प्रभूतविद्यो नृपपूजिताङ्घ्रिः ॥ १९४ ॥

तृतीय भाव में यदि मेष राशि हो तो मनुष्य ब्राह्मणों का मित्र, परोपकारी, कथा-पुराण आदि के श्रवण से पवित्रात्मा, विविध विद्याओं का ज्ञाता तथा राजा द्वारा सम्मानित होता है ॥ १९४ ॥

वृषस्तृतीये कुरुते मनुष्यं नरेन्द्रमित्रं प्रचुरप्रतापम् ॥ १९५ ।
सुवित्तदं भूरियशोनिधानं सूरिं कविं ब्राह्मणरक्तचित्तम् ॥ १९५ ॥

तृतीय भाव में वृष राशि होने से मनुष्य राजा का मित्र, प्रबल प्रतापी, मुक्त हस्त से दान करने वाला, सर्वत्र यशस्वी, विद्वान, कवि एवं ब्राह्मणों में श्रद्धा रखने वाला होता है ॥ १९५ ॥

तृतीयसंस्थे मिथुने च लग्ने करोति मर्त्यं वरयानयुक्तम् ।
स्त्रीवल्लभं सत्यमुदारचेष्टं कुलाधिकं पूज्यतमं नृपाणाम् ॥ १९६ ॥

तृतीय भाव में मिथुन लग्न हो तो मनुष्य उत्तम वाहन से युक्त, स्त्री-प्रेमी, सत्यवादी, उदार, कुल में श्रेष्ठ, तथा राजाओं द्वारा पूज्य होता है ॥ १९६ ॥

कुलीरराशौ सहजं प्रयाते मैत्रं लभेद्वैश्यगृहप्रदेशे ।
कृषीवलं धर्मकथानुरक्तं सदा सुशीलं मदसंमतश्च ॥ १९७ ॥

यदि कर्क राशि तृतीय भाव में हो तो जातक की मित्रता वैश्य वर्ग (व्यापारियों के परिवार) से होती है । तथा वह कृषि कर्म करने वाला धर्माचरण एवं कथा में श्रद्धा रखने वाला, सुशील तथा स्वाभिमानी होता है ॥ १९७ ॥

सिंहे तृतीये कुरुते मनुष्यं शूरं कुमित्रं वरवित्तलुब्धम् ।
वधात्मकं पापकथानुरक्तं प्रचण्डवाक्यं नहि गर्वितं च ॥ १९८ ॥

तृतीय भाव में सिंह राशि हो तो मनुष्य शूर-वीर, दुष्ट लोगों का मित्र अधिक धन का लोभी, हिंसा करने वाला, पापकथा में अनुरक्त कठोर वचन बोलने वाला तथा अभिमान से रहित होता है ॥ १९८ ॥

तृतीयभावस्थितलग्नकन्या शास्त्रानुरक्तं मनुजं सुशीलम् ।
नानासुहृत्संस्तुतकल्पकोपं प्रियद्विजं देवगुरुप्रभक्तम् ॥ १९९ ॥

तृतीय भाव में कन्या लग्न स्थित हो तो मनुष्य शास्त्रों के अध्ययन में लीन रहने वाला, सुशील, विविध मित्रों द्वारा उत्तेजित करने पर क्रोध करने वाला, ब्राह्मणों का प्रिय, देवता और गुरु का भक्त होता है ॥ १९९ ॥

तृतीयसंस्थे तु तुलाभिधाने मैत्री भवेत्पापपरैर्मनुष्यैः ।
लौल्यात्मको लौल्यकथानुरक्तः सार्धं मनुष्यैः स्वसुताल्पकश्च ॥२००॥

तृतीय भाव में तुला राशि हो तो पाप कर्म मे लीन मनुष्यों के साथ मित्रता होती है । चञ्चल स्वभाव वाला, चञ्चलता पूर्ण बातों को प्रेम से सुनने वाला, मनुष्यों (बहुत लोगों) के साथ रहने वाला तथा अल्प सन्तान से युक्त होता है ॥ २०० ॥

अलौ तृतीये मनुजस्य मैत्री भवेत् सदा पापजनैर्दरिद्रैः ।
कृतघ्नघातैः कलहानुरक्तैर्व्यपेतलक्षैर्जनताविरुद्धैः ॥ २०१ ॥

वृश्चिक राशि यदि तृतीय भाव में हो तो उस व्यक्ति की मित्रता सदैव पापी दरिद्र, कृतघ्न (उपकार के बदले उपकार करने वालों) घातक, झगड़ालू, लक्ष्य से हीन, तथा लोक-विरुद्ध आचरण करने वालों के साथ होती है ॥ २०१ ॥

चापे तृतीये च भवेन्मनुष्यो मंत्री सुशूरो नृपसेवकश्च ।
चित्तैः स्वरैर्धर्मपदैः प्रसन्नो नृपानुरक्तो रणकोविदश्च ॥ २०२ ॥

धनु राशि यदि तृतीय भाव में होवे तो मनुष्य मन्त्री, अत्यन्त साहसी, राजा का सेवक, मन, वाणी और धर्म-आचरण (सत्कर्म) से सदैव प्रसन्न रहने वाला, राजा में विश्वास रखने वाला रणनीति में कुशल होता है ॥ २०२ ॥

नक्रस्तृतीये च नरस्य यस्य करोति सौम्यं सहितं सुताद्यैः ।
नित्यं सुहृद्देवगुरुप्रसक्तं महाधनं पण्डितमप्रमेयम् ॥ २०३ ॥

मकर राशि जिस मनुष्य के जन्म लग्न के तीसरे भाव में हो वह अत्यन्त सौम्य (शान्त, सुशील), पुत्र-पौत्रों से युक्त, प्रतिदिन मित्र, देवता एवं गुरु का सत्कार करने वाला, धनवान् तथा अद्वितीय प्रतिभा युक्त विद्वान होता है ॥ २०३ ॥

कुम्भे तृतीये लभते मनुष्यो मैत्रीं व्रतज्ञैर्बहुकीर्तियुक्तैः ।
क्षमाधिकैः सत्यपरैः सुशीलैर्गीतप्रियैर्गोपवरैः खलैश्च ॥ २०४ ॥

तृतीय भाव में कुम्भ राशि हो तो मनुष्य, व्रत विधान को जानने वालों (धर्म शास्त्रियों), यशस्वी, क्षमाशील, सत्यवादी, सुशील, संगीत में रुचि रखने वाले, ग्वालों, तथा दुष्टजनों के साथ मैत्री करने वाला होता है ॥ २०४ ॥

तृतीयभावस्थितमीनराशौ नरं प्रसूतं बहुवित्तयुक्तम् ।
पुत्राञ्चितं पुण्यधनैरुपेतं प्रियातिथिं सर्वजनाभिरामम् ॥ २०५ ॥

तृतीय भाव में यदि मीन राशि हो तो मनुष्य जन्मजात धनवान् पुत्रवान, पुण्य रूपी धन से युक्त, अतिथि प्रेमी, तथा सभी लोगों का प्रियपात्र होता है ॥ २०५ ॥

चतुर्थ भावगत राशिफल

मेषे सुखस्थे लभते सुखं च चतुष्पदेभ्योऽथ विलासिनीभ्याम् ।
भोगैर्विचित्रैः प्रचुरान्नपानैः पराक्रमोपार्जितमर्दनैश्च ॥ २०६ ॥

मेष लग्न चतुर्थ भाव में हो तो वह व्यक्ति पशुओं, दो-दो स्त्रियों, विविध प्रकार की उपभोग वस्तुओं, अत्यधिक खाने पीने की वस्तुओं, अपने पौरुष से अर्जित धन तथा मर्दन (मालिश अथवा व्यायाम) से सुख प्राप्त करता है ॥ २०६ ॥

वृषे सुखस्थे लभते सुखानि नरोऽतिमान्यैर्विविधैश्च भोगैः ।
शौर्येण भूपालनिषेवणेन प्रियोपचारैर्नियमव्रतैश्च ॥ २०७ ॥

वृष राशि सुख (चतुर्थ) भाव में हो तो मनुष्य अत्यधिक सम्मानित जनों, अनेक उपभोग करने वाली वस्तुओं, पराक्रम, राजाओं की संगति, मनोनुकूल व्यापार, संयम-नियम एवं व्रतों द्वारा सुख प्राप्त करता है ॥ २०७ ॥

तृतीयराशौ सुखगे सुखानि लभेन्मनुष्यः प्रमदाकृतानि ।
जलावगाहैर्वनसेवया च प्रभूतपुष्पाम्बरसेवनेन ॥ २०८ ॥

मिथुन राशि चतुर्थ भाव मे हो तो मनुष्य, स्त्रियों द्वारा जल क्रीड़ा, वन-उपवन (प्राकृतिक सौन्दर्य के बीच) विहार करने से, अधिक (विविध) पुष्प और वस्त्रों के सेवन से आनन्द-सुख प्राप्त करता है ॥ २०८ ॥

कुलीरराशिः कुरुते सुखस्थो नरं सुरूपं सुभगं सुशीलम् ।
स्त्रीसम्मतं सर्वगुणैः समेतं विद्याविनीतं जनवल्लभं च ॥ २०९ ॥

चतुर्थ भाव में स्थित कर्क राशि मनुष्य को सुन्दर, सौभाग्यशाली, स्त्री के साथ अनुकूल, सर्वगुण सम्पन्न, विद्या द्वारा विनम्र (विनम्र विद्वान) तथा जन प्रिय बनाती है ॥ २०९ ॥

सिंहे सुखस्थे न सुखं मनुष्यः प्राप्नोति जातु प्रचुरप्रकोपात् ।
कन्याप्रसूतिं च दरिद्रसङ्गान्नरो भवेच्छीलविवर्जितश्च ॥ २१० ॥

सिंह राशि सुख भाव में हो तो मनुष्य अत्यन्त क्रोध के कारण सुख से रहित, कन्या सन्ततिवाला, दरिद्रों की संगति के कारण शील (सौजन्य) से रहित होता है ॥ २१० ॥

कुमित्रसङ्गो धनसंश्रयाच्च कन्यागृहे बन्धुगते मनुष्यः ।
पैशुन्यसङ्गाल्लभतेऽसुखानि चौर्येण युद्धेन विमोहनेन ॥ २११ ॥

कन्या राशि यदि चतुर्थ भाव में स्थित हो तो मनुष्य धन संग्रह के कारण दुष्ट लोगों का साथ करता है, पिशुन (चुगल खोर) लोगों, चोर तथा मोहन (इन्द्रजाल विशुद्ध छल) द्वारा कष्ट पाता है ॥ २११ ॥

तुला सुखस्था च नरस्य यस्य करोति सौम्यं शुभकर्मदक्षम् ।
विद्याविनीत सततं सुखाढ्यं प्रसन्नचित्तं विभवैः समेतम् ॥ २१२ ॥

जिस मनुष्य के चतुर्थ भाव में तुलाराशि हो वह सौम्य शुभकार्य में निपुण, विद्या से विनम्र, निरन्तर सुख सम्पन्न, प्रसन्न चित्त, तथा धन से युक्त होता है ॥ २१२ ॥

अलौ चतुर्थे विपदा समेतं नरं सुतीक्ष्णं परभीतचितम् ।
प्रभूतसेवं गतवीर्यदर्पं परैः सुदक्षैर्मतिभृद्विहीनम् ॥ २१३ ॥

वृश्चिक राशि चतुर्थ भाव में हो तो मनुष्य विपत्तियों से युक्त, उग्र स्वभाव वाला, दूसरों से भयभीत, बहुत लोगों का सेवक, दूसरों के प्रभाव से नष्ट शक्ति एवं गर्व वाला (मानमर्दित), अत्यन्त निपुण एवं बुद्धिमान व्यक्तियों के सम्पर्क से रहित होता है ॥ २१३ ॥

चापे सुखस्थे लभते मनुष्यः सुखं सदा सङ्गरसेवनेन ।
तत्कीर्तनेनैव हयैर्विचित्रैः सेवा सुखं स्वेन निबन्धनेन ॥ २१४ ॥

धन राशि यदि चतुर्थ भाव में हो तो मनुष्य संग्राम में भागलेने, युद्ध सम्बन्धी चर्चा से, विचित्र प्रकार की घुड़सवारी, सेवाकार्य तथा अपने द्वारा निर्मित योजनाओं से सुख प्राप्त करता है। (अर्थात् ऐसा व्यक्ति सेना में अधिकारी होता है।) ॥ २१४ ॥

मृगे सुखस्थे सुखभाङ्मनुष्यः सदा भवेत्तोयनिषेवणेन ।
उद्यानवापीतटसङ्गमेन मित्रोपचारैः सुरतप्रधानैः ॥ २१५ ॥

मकर राशि यदि चतुर्थ भाव में हो तो मनुष्य जल के सम्पर्क से (जल में उत्पन्न वस्तुओं, जहाज सेवा, आदि), उद्यान में, तालाब के किनारे, मित्रों के साथ व्यवहार तथा स्त्री के साथ बिहार करने से सदैव सुख का अनुभव करता है ॥२१५॥

घटे सुखस्थे प्रमदाभिधानात्प्राप्नोति सौख्यं विविधं मनुष्यः ।
मिष्टान्नपानैः फलशाकपत्रैर्विदग्धवाक्यैश्च समुत्सुकत्वैः ॥ २१६ ॥

चतुर्थ भाव में यदि कुम्भ राशि हो तो मनुष्य स्त्री के सहयोग से मिष्ठान्न, पेय पदार्थ, फल, शाक, पत्र (ताम्बूल) आदि पदार्थों से, वैदुष्यपूर्ण बातों तथा

उत्सुकता पैदा करने वाली बातों से विविध प्रकार के सुखों को प्राप्त करता है ॥ २१६ ॥

मीने सुखस्थे तु सुखं मनुष्यः प्राप्नोति सौख्यं जलसंश्रयेण ।
शनैश्चरो देवसमुद्भवैश्च स्थानैः सुवस्त्रैः सुधनैर्विचित्रैः ॥ २१७ ॥

मीन राशि सुख भाव में हो तो मनुष्य जल के आश्रय से, देवताओं के निमित्त सञ्चित भूमि एवं धन से प्राप्त वस्तुओं द्वारा, सुन्दर वस्त्रों, तथा विविध प्रकार के धन से सुख भोग करता है ॥ २१७ ॥

पञ्चम भावगत राशियों का फल

मेषे सुतस्थे लभते मनुष्यः प्रियेण पुत्रान्वितचेतसा च ।
सुगत्सुखानीह कृतानि यानि पापानुरक्ताकुलचित्तयुक्तः ॥ २१८ ॥

सुत भाव में मेष राशि हो तो मनुष्य अपने प्रिय जनों एवं पुत्र में अधिक स्नेह रखने से तथा अपने कार्यों से सुख प्राप्त करता है। परन्तु पापकर्म में आसक्त रहने से व्याकुल चित्तवाला होता है ॥ २१८ ॥

वृषे सुतस्थे नियतं मनुष्यः प्राप्नोति कन्यां सुभगां सुरूपाम् ।
अपत्यहीनां बहुकान्तियुक्तां सदानुरक्तां निजभर्तृधर्मे ॥ २१९ ॥

वृष राशि पञ्चम भाव में हो तो मनुष्य सौभाग्यशालिनी, सुन्दरी, कान्ति युक्त (तेजस्विनी), निरन्तरपति के धर्म मे अनुरक्त रहने वाली (पति परायणा) परन्तु सन्तान हीन कन्या प्राप्त करता है ॥ २१९ ॥

तृतीयराशौ सुतगे मनुष्यः प्राप्नोत्यपत्यानि मनःसुखानि ।
सुशीलयुक्तानि गुणाधिकानि प्रीत्या समेतानि बलाधिकानि ॥ २२० ॥

पञ्चम भाव में यदि मिथुन राशि हो तो मनुष्य मन को प्रसन्न करने वाले, सुशील, गुणवान्, प्रेम-व्यवहार से युक्त तथा बलवान् पुत्रों को जन्म देता है ॥२२०॥

कर्के सुतस्थे जनयेन्मनुष्यः पुत्रान् प्रसिद्धान् पितृतोषकांश्च ।
विस्तीर्णकीर्तिश्च महानुभावान् धनेन विद्याविनयेन युक्तान् ॥ २२१ ॥

कर्क राशि पञ्चम भाव में हो तो मनुष्य प्रसिद्ध, पिता को सन्तुष्ट करने वाले, विस्तृत यशवाले, महान् (महापुरुष), धनवान्, तथा विद्या और विनय से युक्त पुत्रों को जन्म देता है ॥ २२१ ॥

सिंहे सुतस्थे जनयेन्मनुष्यः क्रूरस्वभावान्धनेन कान्तान् ।
मांसप्रियान् स्त्रीजनकान् सुतीव्रान् विदेशभाजः क्षुधया समेतान् ॥२२२॥

पञ्चम भाव में यदि सिंह राशि हो तो मनुष्य क्रूरस्वभाव वाले, सुन्दर नेत्रों से दर्शनीय, मांस प्रेमी, कन्या सन्तान वाले, स्वभाव से उग्र, विदेश में रहने वाले तथा निरन्तर खाने की इच्छा रखने वाले पुत्रों को जन्म देता है ॥ २२२ ॥

कन्या यदा पञ्चमगा तदा स्युः कन्या नराणां तनयैर्विहीनाः ।
पतिप्रियाः पुण्यतराः प्रगल्भाः प्रशान्तपापाः प्रियभूषणाश्च ॥२२३॥

कन्या राशि यदि पञ्चम भाव में स्थित हो तो उस व्यक्ति को कन्या सन्तति ही होती है परन्तु कन्यायें पुत्रों से हीन पति को प्रिय, पुण्यकार्य करने वाली, धृष्ट (प्रौढ़), पाप हीन, तथा आभूषणों में रुचि रखने वाली होती हैं ॥ २२३ ॥

तुला यदा पञ्चमगा नराणां तदा सुशीलानि मनोहराणि ।
भवन्त्यपत्यानि सरूपकाणि क्रियासमेतानि शुभेक्षणानि ॥ २२४ ॥

जिसके पञ्चम भाव मे तुला राशि हो उस व्यक्ति की सन्तान सुशील, मनोहर, सुन्दर स्वरूपवाली, कार्य में संलग्न (क्रियाशील), तथा सुन्दर आँखों वाली होती है ॥ २२४ ॥

कीटे सुतस्थे जनयेन्नृयोनौ पुत्रान् मनुष्यः सुभगान् सुशीलान् ।
अज्ञातदोषान् प्रणयेन युक्तान् निजेऽत्र धर्मे सततं मनुष्यः ॥२२५॥

वृश्चिक राशि पञ्चम भाव मे हो तो मनुष्य पुरुष योनि में, सौभाग्यशाली, सुशील, दोषों से अनभिज्ञ, प्रेम से युक्त, अपने कुल धर्म में अनुरक्त पुत्र को जन्म देता है ॥ २२५ ॥

चापे सुतस्थे जनयेन्मनुष्यः सुतान् विचित्रान् हयलुब्धदक्षान् ।
धानुष्कचर्यान् हतशत्रुपक्षान् सेवाप्रियान् पार्थिवमानयुक्तान् ॥ २२६ ॥

जिसके पञ्चम भाव में धनराशि हो उस व्यक्ति के पुत्र विचित्र घोड़ों के प्रति आसक्त, घुड़सवारी में दक्ष, धनुर्विद्या में निपुण, शत्रुपक्ष को नष्ट करने वाले, सेवा कार्य में रुचि रखने वाले तथा राजा से सम्मानित होते हैं ॥ २२६ ॥

मृगे सुतस्थे जनयेन्मनुष्यः पुत्रान् सदा पापमतीन् कुरूपान् ।
क्लीबान् कुभावान् विगतप्रभावान् सुनिष्ठुरान् प्रेमविवर्जितांश्च ॥ २२७ ॥

मकर राशि यदि पञ्चम भाव मे हो तो मनुष्य सदैव पाप बुद्धिवाले, कुरूप, नपुंसक, दुष्ट भावना वाले, प्रभावहीन, निष्ठुर तथा प्रेम से रहित पुत्रों को जन्म देता है ॥ २२७ ॥

कुम्भे सुतस्थे स्थिरतासमेतान् गम्भीरचेष्टानतिसत्ययुक्तान् ।
पुत्रान् मनुष्यो जनयेत्प्रसिद्धान् कष्टंसहान् पुण्ययशः प्रभूतान् ॥२२८॥

जिसके पञ्चम भाव में कुम्भ राशि हो उसके यहाँ जन्म लेने वाले पुत्र स्थिर बुद्धिवाले, गम्भीर चेष्टाओं से युक्त, अधिक सत्यवादी, प्रसिद्ध, कष्ट सहने में समर्थ, तथा अत्यधिक पुण्यात्मा एवं यशस्वी होते हैं ॥ २२८ ॥

मीने सुतस्थे ललितान् सुरक्तान् पुत्रान् मनुष्यो लभते व्यवायात् ।
रोगैः समेतांश्च सदा कुरूपान् सहास्यकान् स्त्रीसहितान् सदैव ॥२२९॥

मीन राशि पञ्चम भाव में हो तो उस व्यक्ति को रक्तिम गौर वर्ण के सुन्दर पुत्र का लाभ होता है। यदि पापग्रह युक्त राशि हो तो पुत्र रोगी, कुरूप, हास्यास्पद, तथा सदा स्त्री से युक्त होता है ॥ २२९ ॥

षष्ठ भावगत राशिफल

मेषे रिपुस्थे प्रभवेद्धि वैरं सदा नराणां वृषभे रिपुस्थे ।
अपत्यमार्गागतकामिनीनां सङ्गो नितान्तं निजबन्धुवर्गे ॥ २३० ॥

रिपु (छठे) भाव में मेष राशि हो तो उस व्यक्ति से सभी लोगों से शत्रुता हो जाती है। यदि वृष राशि हो तो अपत्य कोटि की स्त्रियों (कन्याओं) के साथ संग करने के कारण बन्धु वर्ग (परिवार) से बहिष्कृत हो या वैर होता है ॥२३०॥

तृतीयराशौ रिपुगे नराणां वैरं भवेत्स्त्रीजनितं सदैव ।
तथा नराणां निहितं च पापैर्वणिग्जनैर्नीचजनानुरक्तः ॥ २३१ ॥

मिथुन राशि यदि षष्ठ भाव में हो तो सदैव स्त्रियों के कारण वैर होता है। इस प्रकार के योग में पापकर्म में लीन, बनिया (व्यापारी), तथा नीचजनों के अनुयायियों के साथ उस मनुष्य की शत्रुता होती है ॥ २३१ ॥

कर्के रिपुस्थे सहसा भयं च भवेन्मनुष्यस्य सुतातुरस्य ।
समं द्विजेन्द्रैश्च नराधिपैश्च महाजनेनैव परानुरोधात् ॥ २३२ ॥

कर्क राशि यदि षष्ठ भाव में हो तो पुत्र के अतिशय स्नेह से तथा दूसरों के अनुरोध (चुगली निन्दा) से, श्रेष्ठ ब्राह्मण, राजा एवं महापुरुषों के साथ अचानक वैर हो जाता है ॥ २३२ ॥

सिंहे रिपुस्थे प्रभवेच्च वैरं पुत्रीभवं बन्धुजनेन नित्यम् ।
धनं क्षणात्तस्य विनिर्जितं च यद्वा मनुष्यस्य पराङ्गनाभिः ॥ २३३ ॥

षष्ठ भाव में यदि सिंह राशि हो तो पुत्री के सम्बन्ध से सदैव भाई-बन्धुओं से शत्रुता होती है तथा उसका धन क्षणमात्र में (जुआ द्वारा) अथवा पराई स्त्री द्वारा जीत (हर) लिया जाता है ॥ २३३ ॥

कन्यास्थिते शत्रुगृहे स्ववैरैरसंयुतिर्निर्धनता नराणाम् ।
दुश्चारिणीभिश्च सुनिम्ननाभिवेश्याभिरेवाश्रयवर्जिताभिः ॥ २३४ ॥

कन्या राशि जिसके षष्ठ भाव में हो वह व्यक्ति शत्रुता से रहित होता है परन्तु दुराचारिणी, सुन्दर निम्न नाभिवाली (अर्थात् अति सुन्दरी) वेश्याओं एवं आश्रय रहित (अनाथ) स्त्रियों के सम्पर्क में आकर धन नष्ट कर निर्धन हो जाता है ॥ २३४ ॥

तुलाधरे शत्रुगृहे नरस्य निधिस्थितस्य प्रभवेच्च वैरम् ।
कार्यं सुधर्मस्य नरस्य साधोः स्वबन्धुवर्गाच्च निजालयाच्च ॥ २३५ ॥

तुला राशि शत्रु (षष्ठ) भाव में हो तो भूमिस्थित द्रव्य के कारण तथा धर्म-कार्य एवं साधुसेवा के कारण अपने भाई बन्धुओं तथा अपने घर से उस मनुष्य का वैर हो जाता है ॥ २३५ ॥

कौर्प्ये रिपुस्थे प्रभवेद्धि वैरं सार्धं द्विजिह्वैश्च सरीसृपैश्च ।
व्यालैर्मृगैर्चोरगणैर्नराणां सर्वैः सुधन्यैश्च विलासिभिश्च ॥ २३६ ॥

वृश्चिक राशि यदि षष्ठ भाव में हो तो चुगली करने वालों सरीसृप (बिच्छू आदि), सर्प, मृग, चोरों के दल, प्रतिष्ठित व्यक्तियों तथा विलासी लोगों के साथ शत्रुता होती है ॥ २३६ ॥

चापे रिपुस्थे नु भवेच्च वैरं शरैः समेतैश्च सरोगकैश्च ।
सदा मनुष्यैश्च हयैश्च नागैः पुण्यैस्तथान्यैः परवञ्चनाच्च ॥ २३७ ॥

धनु राशि यदि षष्ठ भाव में स्थित हो तो शर धारण करने वालों (तीरन्दाजों) रोगियों, घोड़ों, हाथियों, अन्य पुण्य कार्यों तथा दूसरों को ठगने वाले मनुष्यों के साथ द्वेष रहता है ॥ २३७ ॥

मृगे रिपुस्थे च भवेच्च वैरं सदा नराणां धनसम्भवं च ।
मित्रैः समं साधुजने सहाये प्रभूतकालं गृहसम्भवं च ॥ २३८ ॥

मकर राशि षष्ठ भाव में हो तो धन सम्बन्धी विवाद तथा दीर्घकालिक गृह कलह के कारण मित्रों से भी शत्रुता हो जाती है केवल सज्जन पुरुष ही सहायक होते हैं ॥ २३८ ॥

कुम्भे रिपुस्थे मनुजस्य वैरं नाराधिपेनैव जलाश्रयैश्च ।
वापीतडागादिभवं च नित्यं क्षेत्राधिपैरुच्चचलितैर्नृभिश्च ॥ २३९ ॥

शत्रुभाव में कुम्भराशि स्थित हो तो उस मनुष्य के साथ राजाओं की, जल के आश्रित रहने वाले (मल्लाह आदि,) वापी, तालाब (जल-मछली, आदि जल से

उत्पन्न वस्तुओं) के सम्बन्ध से, क्षेत्र के अधिकारियों, तथा प्रतिष्ठित पुरुषों की शत्रुता होती है ।। २३९ ।।

मीने रिपुस्थे च भवेन्नराणां वैरं च नित्यं सुतवस्त्रजातम् ।
स्त्रीहेतुकं स्वीयभवं पराणामपि प्रियाणामितरेतरं च ।। २४० ।।

मीन राशि यदि किसी के षष्ठ भाव में हो तो वह व्यक्ति पुत्र, वस्त्र, स्त्री, अपने विचारों, दूसरों के विचारों तथा एक दूसरे के हित (स्वार्थ) को लेकर सदा द्वेष भाव रखता है ।। २४० ।।

सप्तम भावगत राशिफल

मेषेऽस्तसंस्थे च भवेत्कलत्रं क्रूरं नराणां च खलस्वभावम् ।
पापानुरक्तं कठिनं नृशंसं वित्तप्रियं साध्यपरं सदैव ।। २४१ ।।

सप्तम भाव मे यदि मेष राशि हो तो उस व्यक्ति की पत्नी, क्रूर, दुष्ट स्वभाव वाली, पाप कर्म में लीन, कठोर, निर्दय, धन लोलुप तथा सदैव अनुशासन हीन होती है ।। २४१ ।।

वृषेऽस्तसंस्थे च भवेत्कलत्रं सुरूपकं वाक्प्रणतं प्रशान्तम् ।
प्रतिव्रताचारुगुणेन युक्तं कलाधिकं ब्राह्मणदेवभक्तम् ।। २४२ ।।

वृष राशि सप्तम भाव में हो तो उसकी स्त्री सुन्दर स्वरूपवाली, विनम्र, शान्त स्वभाव वाली, पतिव्रता, अच्छे गुणों से युक्त, कलाओं की ज्ञाता, तथा ब्राह्मण और देवताओं की भक्त होती है ।। २४२ ।।

तृतीयराशिः कुरुते कलत्रे कलत्रयुक्तं सुधनं सुवृत्तम् ।
रूपान्वितं सर्वगुणोपपन्नं विनीतवेषं गणवर्जितं च ।। २४३ ।।

मिथुनराशि यदि कलत्र (सप्तम) भाव में हो तो वह स्त्री से युक्त, धनवान, चरित्रवान्, रूपवान्, सर्वगुण सम्पन्न, विनम्र वेष वाला, तथा किसी प्रकार के संगठन से पृथक् रहता है ।। २४३ ।।

कर्केण युक्ते च मनोहराणि सौभाग्ययुक्तानि गुणान्वितानि ।
भवन्ति सौम्यानि कलत्रकाणि कलङ्कहीनानि सुसम्मतानि ।।२४४।।

सप्तम भाव कर्क राशि से युक्त हो तो मनुष्य, सुन्दरी सौभाग्यशालिनी, गुणवती, सौम्य, कलङ्क से हीन तथा आदेश का पालन करने वाली कई स्त्रियों से युक्त होता है ।। २४४ ।।

सिंहेऽस्तसंस्थे च भवेत्कलत्रं तीव्रस्वभावं च खलं च दुष्टम् ।
विहीनवेषं परसद्मयुक्तं वसुप्रियं स्वल्पकृतं कृशं च ।।२४५।।

सिंह राशि सप्तम भाव में हो तो स्त्री उग्र स्वभाव वाली, खल (कलह करने वाली), दुष्ट, वेषरहित (केश तथा वस्त्रों को अस्तव्यस्त रखने वाली), पराये घर में रहने वाली, धनलोलुप, अल्प कार्य करने वाली तथा दुर्बल होती है ॥२४५॥

कन्यास्तगा चेन्मनुजस्य दाराः सुरूपदेहास्तनयैर्विहीनाः ।
सौभाग्यभोगार्थनयेन युक्ताः प्रियंवदाः सत्यधनाः प्रगल्भाः ॥ २४६ ॥

कन्या राशि सप्तम भाव में हो तो उस व्यक्ति की स्त्री सुन्दर स्वरूप वाली, पुत्रों से हीन, सौभाग्य (पति सुख), भोग, धन तथा राजनैतिक गतिविधियों से युक्त, प्रियवादिनी, सत्य पर दृढ रहने वाली तथा धृष्ट होती है ॥ २४६ ॥

तुलेऽस्तसंस्थे गुणगर्विताढ्यो भवन्ति नार्यो विविधप्रकाराः ।
पुण्यप्रिया धर्मपराः सुदान्तप्रभूतपुत्राः पृथिवीविनीताः ॥ २४७ ॥

तुला राशि सप्तम भाव में हो तो अपने-अपने गुणों पर गर्व करने वाली, पूज्य कार्य करने वाली, धर्म परायणा, शिष्ट एवं अधिक पुत्रों वाली, पृथ्वीतुल्य क्षमाशील इस प्रकार विविध गुणों से सम्पन्न कई स्त्रियों से युक्त वह व्यक्ति होता है ॥ २४७ ॥

कीटेऽस्तसंस्थे विकलासमेता भवेच्च भार्या कृपणा नराणाम् ।
सुशिक्षिता च प्रणयेन हीना दौर्भाग्यदोषैर्विविधैः समेता ॥ २४८ ॥

वृश्चिक राशि यदि सप्तम भाव में हो तो ऐसे मनुष्यों की पत्नियाँ विशेष प्रकार की कलाओं से युक्त, कृपण (कंजूस), पूर्ण रूप से शिक्षा प्राप्त, प्रेम-व्यवहार से हीन तथा दुर्भाग्यसूचक दोषों से युक्त होती हैं ॥ २४८ ॥

चापेऽस्तसंस्थे च भवेत्कलत्रं नृणां सुदुष्टं विगतस्वभावम् ।
विस्रस्तलज्जं परदोषरक्षं युद्धप्रियं दम्भसमन्वितं च ॥ २४९ ॥

धनु राशि यदि सप्तम भाव में हो तो उस व्यक्ति की स्त्री अत्यन्त दुष्ट, अव्यवहारिक, निर्लज्ज, दूसरों के दोषों को छिपाने वाली, झगड़ालू तथा घमण्ड से युक्त होती है ॥ २४९ ॥

मकरो यस्य च द्यूने भार्या दम्भान्विताऽधमा ।
निर्लज्जा लोलुपा क्रूरा दुःस्वभावा च दुःखिता ॥ २५० ॥

जिस व्यक्ति के सप्तम भाव में मकर राशि हो उसकी पत्नी घमण्ड से युक्त, अधम, निर्लज्ज, लोभी, क्रूर, दुष्ट स्वभाव वाली, तथा दुःखी होती है ॥ २५० ॥

घटेऽस्तसंस्थे च भवेत्कलत्रं नृणां सुदुष्टं विगतस्वभावम् ।
देवाद्विजेभ्यः सततं प्रहृष्टं धर्मध्वजं सत्यदयासमेतम् ॥ २५१ ॥

सप्तम भाव में यदि कुम्भ राशि हो तो उस व्यक्ति की पत्नी अत्यन्त दुष्ट, व्यवहार से हीन, देवता और ब्राह्मणों द्वारा सदैव प्रसन्न रहने वाली, धर्म की रक्षा करने वाली, सत्य एवं दया से युक्त होती है ।। २५१ ।।

मीनेऽस्तसंस्थे च विकारयुक्तं भवेत्कलत्रं कुसुतं कुबुद्धिम् ।
स्वधर्मशीलं प्रणयेन हीनं सदा नराणां विकलप्रियं च ।। २५२ ।।

मीन राशि यदि सप्तम भाव में हो तो उस व्यक्ति की पत्नी विकारों (रोगों) से युक्त, दुष्ट पुत्रों एवं दुष्ट बुद्धि वाली, अपने धर्म का आचरण करने वाली, प्रेम व्यवहार से रहित, तथा विशिष्ट कलाओं में रुचि रखने वाली होती है ।। २५२ ।।

अष्टमभावगत राशिफल

मेषेऽष्टमस्थे जनने नराणां भवेद्विदेशे तु रुजा स्थितानाम् ।
कथामनुस्मृत्य विमूर्च्छितानां महाधनानामतिदुःखितानाम् ।। २५३ ।।

जिसके जन्म समय में अष्टम भाव गत मेषराशि हो वह विदेश में रहते हुये रोगग्रस्त तथा पुरानी घटनाओं को स्मरण कर मूर्छित होता है । महान् धनपति एवं अत्यन्त दुःखी व्यक्ति होता है ।। २५३ ।।

वृषेऽष्टमस्थे च भवेन्नराणां मृत्युर्गृहे श्लेष्मकृताद्विकारात् ।
महाशनाद्वाऽथ चतुष्पदाद्वा रात्रौ तथा दुष्टजनादिसङ्गात् ।। २५४ ।।

अष्टम भाव में वृष राशि स्थित हो तो उस व्यक्ति की कफ के विकार से अपने घर में मृत्यु होती है । अथवा अधिक भोजन कर लेने से, पशुओं तथा दुष्ट व्यक्ति के संसर्ग से रात्रि में मृत्यु होती है ।। २५४ ।।

तृतीयराशौ च भवेन्नराणां मृत्युस्थिते मृत्युरनिष्टसङ्गात् ।
लाभोद्भवो वा रससम्भवो वा गुदप्रकोपादथवा प्रमेहात् ।। २५५ ।।

मिथुन राशि यदि मृत्यु (अष्टम) भाव मे स्थित हो तो उस व्यक्ति की मृत्यु किसी प्रकार के अनिष्ट (शत्रुता, दुर्घटना आदि) से, लाभ (अधिक लाभ से उत्पन्न विवाद अथवा धनापहरण) से, रासायनिक प्रयोग से, गुद (बवासीर, भगन्दर आदि) रोगों से, अथवा प्रमेह (बहुमूत्र या डायबिटीज) से मृत्यु होती है ।। २५५ ।।

कर्केऽष्टमस्थे च जलोपसर्गात्कीटात्तथा चैव विभीषणाद्वा ।
भवेद्विनाशः परहस्ततो वा विदेशसंस्थस्य नरस्य चैव ।। २५६ ।।

कर्क राशि अष्टम भाव में हो तो उस व्यक्ति की जल में डूबने से, कीट (सर्प-बिच्छू आदि) के दंश से या भय से मृत्यु होती है । अथवा विदेश में किसी के हाथों से मृत्यु होती है ।। २५६ ।।

सिंहेऽष्टमस्थे च सरीसृपाच्च भवेद्विनाशो मनुजस्य सम्यक् ।
व्यालोद्भवो वापि वनाश्रितस्य चौरोद्भवो वाथ चतुष्पदाच्च ।। २५७ ।।

सिंह राशि अष्टमभाव में हो तो सरीसृप (जमीन में रेंगने वाले जीव) या सर्प से, चोरों से, अथवा पशुओं से जंगल में स्थित मनुष्य की मृत्यु होती है ।। २५७ ।।

कन्या यदा चाष्टमगा विलासात्सदा स्वचित्तान्मनुजस्य विद्यात् ।
स्त्रीणां हि हिंस्राद्विषमाशनात्स्यात् स्त्रीणां कृते वा स्वगृहाश्रितस्य ।। २५८ ।।

कन्या राशि अष्टम भाव में तो विलास (भोग-विलास मद्यपान आदि) से, अपने चित्त की अस्थिरता से, स्त्री की हत्या करने से, असन्तुलित (अथवा विषाक्त) भोजन करने से अथवा किसी स्त्री के कारण अपने घर में जातक की मृत्यु होती है ।। २५८ ।।

तुलाधरे चाष्टमगे च मृत्युर्भवेन्नराणां द्विपदोत्थ एव ।
निशागमे स्वस्थकृतोपवासाद्दिष्टस्य कोपादथवा प्रतापात् ।। २५९ ।।

तुला राशि यदि अष्टम भाव में हो तो मनुष्य की मृत्यु द्विपद (मनुष्य) द्वारा होती है । इसके अतिरिक्त उपवास द्वारा, क्रोध से अथवा शौर्य प्रदर्शन में अपने स्थान पर ही रात्रि में मृत्यु होती है ।। २५९ ।।

स्थानेऽष्टमे वृश्चिकराशिसंज्ञे नृणां विनाशो रुधिरोद्भवेन ।
रोगेण वा कीटसमुद्भवैश्च स्वस्थानसंस्थाय विषोद्भवो वा ।। २६० ।।

अष्टम भाव में वृश्चिक राशि हो तो मनुष्यों की मृत्यु रक्तदोष से उत्पन्न रोगों द्वारा, कीट (कृमि) दोष या कीड़ों के दंश से अथवा विषप्रयोग से अपने स्थान (घर) में होती है ।। २६० ।।

चापेऽष्टमस्थे प्रभवेन्नराणां मृत्युः स्वसंस्थे शरताडनेन ।
गुह्योद्भवेनापि गदोद्भवेन चतुष्पदोत्थेन जलोद्भवेन ।। २६१ ।।

अष्टम भाव में धनु राशि हो तो शर (बाण) के आघात से, गुप्त रोगों (मल-मूत्र मार्ग से सम्बन्धित रोगों) द्वारा, पशुओं के प्रहार से अथवा जल में डूबने से अपने घर पर ही मृत्यु होती है ।। २६१ ।।

मृगेऽष्टमस्थे च नरस्य यस्य विद्यान्वितो मानगुणैरुपेतः ।
कामी स शूरोऽथ विशालवक्षाः शास्त्रार्थवित्सर्वकलासु दक्षः ।। २६२ ।।

जिस व्यक्ति के अष्टम भाव में मकर राशि हो वह विद्वान्, स्वाभिमानी, गुणों से युक्त, कामी, शूर, विशाल वक्षवाला, शास्त्रों को भली-भांति जानने वाला विविध कलाओं में निपुण होता है ।। २६२ ।।

घटेऽष्टमस्थे विभवप्रणाशो वैश्वानरात्सप्रगतास्तु जन्तोः ।
नानाव्रणैर्वायुभवैर्विकारैः श्रमात्तथा गेहविहीनमृत्युः ॥ २६३ ॥

अष्टमभाव में कुम्भराशि हो तो उस व्यक्ति के गृह में आग लगने से समस्त सम्पत्ति नष्ट हो जाती है। नाना प्रकार के व्रण (फोड़े-फुन्सियाँ, घाव) तथा वायुजन्य विकारों से अथवा परिश्रम द्वारा घर से बाहर मृत्यु होती है ॥ २६३ ॥

मीनेऽष्टमस्थे प्रभवेच्च मृत्युर्नृणामतीसारकृतश्च कष्टात् ।
पित्तज्वराद्वा सलिलाशयाद्वा रक्तप्रकोपादथवा च शस्त्रात् ॥ २६४ ॥

मीन राशि अष्टम भाव में हो तो अतिसार जन्य कष्ट से, पित्त सम्बन्धी ज्वर से, जल में डूबने से, रक्तसम्बन्धी दोषों से अथवा शस्त्र के आघात से उस व्यक्ति की मृत्यु होती है ॥ २६४ ॥

नवमभावगत राशिफल

धर्मस्थिते चैव हि मेषराशौ चतुष्पदोत्थं प्रकरोति धर्मम् ।
तेषां प्रदानेन तु पोषणेन दयाविवेकेन सुपालनेन ॥ २६५ ॥

धर्म (नवम) भाव में यदि मेष राशि हो तो वह व्यक्ति पशुओं से सम्बन्धित (पशुपालन-गोशाला आदि) धर्म करता है। पशुओं का दान, पोषण तथा दया एवं विवेक पूर्वक उनका पालन करने वाला होता है ॥ २६५ ॥

वृषे च धर्मं प्रगते मनुष्यो धर्मं करोत्येव धनप्रभूतम् ।
विचित्रदानैर्बहुगोप्रदानैर्विभूषणाच्छादनभोजनेन ॥ २६६ ॥

वृष राशि यदि धर्म भाव में गई हो तो मनुष्य अधिक धनवान होता है तथा विचित्र (अनेक प्रकार के) दान, अधिक मात्रा में गोदान, आभूषण (स्वर्ण आदि), वस्त्र, और भोजन सामग्री के दान द्वारा धर्मकार्य करता है ॥ २६६ ॥

तृतीयराशौ प्रकरोति धर्मं धर्माकृतिं सौम्यकृतं सदैव ।
अभ्यागतोत्थं द्विजभोजनाद्यं दीनानुकम्पाश्रयमानसेभ्यः ॥ २६७ ॥

मिथुन राशि यदि धर्म (नवम) भाव मे हो तो वह व्यक्ति अतिथियों के सत्कार, ब्राह्मण भोजन, दीन-दुखियों की सहायता करने तथा सदैव शुभकार्यों के करने से स्वयं धर्मस्वरूप हो जाता है ॥ २६७ ॥

धर्माश्रिते चैव चतुर्थराशौ तीर्थाश्रयाद्वा वनसेवनेन ।
व्रतोपवासैर्विषमैर्विचित्रैर्धर्मं नरः संकुरुते सदैव ॥ २६८ ॥

कर्क राशि नवमभाव में हो तो वह मनुष्य तीर्थों में भ्रमण एवं निवास, वनवास, विचित्र एवं कठोर व्रत-उपवास द्वारा सदैव धर्म का आचरण करता है ॥ २६८ ॥

धर्माख्यभावस्थितसिंहराशौ धर्मं परेषां प्रकरोति मर्त्यः ।
स्वधर्महीनो विकृतक्रियाभिः सुतीर्थरूपे विनयेन हीनः ॥ २६९ ॥

धर्म (नवम) भाव में यदि सिंह राशि हो तो मनुष्य दूसरों के धर्म को स्वीकार कर अपने धर्म का परित्याग करता है। कुत्सित कर्म करता हुआ भी अपने को पवित्रात्मा मानने वाला तथा विनम्रता से रहित होता है ॥ २६९ ॥

धर्माश्रितः स्याद्यदि षष्ठराशिः स्त्रीधर्मसेवां कुरुते मनुष्यः ।
विहीनभक्तिर्बहुजन्मतश्च पाखण्डमाश्रित्य तथान्यपक्षम् ॥ २७० ॥

धर्म (नवम) भाव में कन्या राशि स्थित हो तो मनुष्य स्त्री धर्म की सेवा करने वाला, जन्म-जन्मान्तर से भक्तिहीन, पाखण्ड अथवा अन्य पन्थ का अनुगमन करने वाला होता है ॥ २७० ॥

तुलाधरे धर्मगते मनुष्यो धर्मं करोत्येव सदा प्रसिद्धम् ।
देवद्विजानां परितोषणं च जनानुरागेण तथाद्भुतानाम् ॥ २७१ ॥

नवम भाव में तुला राशि हो तो मनुष्य देवता और ब्राह्मणों को सन्तुष्ट रखने वाला, जनता के अनुराग से अद्भुत कार्य करने वाला तथा प्रसिद्ध धार्मिक कार्य कर्त्ता होता है ॥ २७१ ॥

धर्माश्रिते चाष्टमगे च राशौ पाखण्डधर्मं कुरुते मनुष्यः ।
पीडाकरं चैव तथा जनानां भक्त्या विहीनं परपोषणेन ॥ २७२ ॥

धर्म भाव में वृश्चिक राशि हो तो मनुष्य लोगों को कष्ट देने वाले, दूसरों के भरण-पोषण (परोपकार) एवं भक्ति से रहित केवल पाखण्ड धर्म को मानने वाला होता है ॥ २७२ ॥

चापे तथा धर्मगते मनुष्यः करोति धर्मं द्विजदेवतृप्तिम् ।
स्वेच्छान्वितं शास्त्रविनिर्मितं च प्रभूततोयं प्रथितं त्रिलोके ॥ २७३ ॥

धनुराशि यदि नवम भाव में गई हो तो मनुष्य ब्राह्मण और देवताओं को तृप्त करने वाला, अपनी इच्छानुसार तथा शास्त्र द्वारा बताई गई विधि से धर्म का आचरण करने वाला समुद्र की भाँति त्रैलोक्य में प्रसिद्ध होता है ॥ २७३ ॥

धर्माश्रिते वै मकरे मनुष्यः प्राप्नोत्यधर्मं कुरुते प्रतापम् ।
पश्चाद्विरक्तश्च विडम्बनाभिः कौलं समाश्रित्य सदैव पक्षम् ॥ २७४ ॥

नवम भाव में मकर राशि हो तो मनुष्य अधर्म का आचरण करते हुये अपने प्रताप का प्रदर्शन करता है। विभिन्न विडम्बनाओं के उपरान्त वह (जातक) विरक्त होकर अपने कुलधर्म का आचरण करता है ॥ २७४ ॥

कुम्भे हि धर्मं प्रगते मनुष्यो धर्मं विधत्ते सुरसङ्घजातम् ।
वृक्षाश्रयोत्थं च तथा शिवं च आरामवापीप्रियता सदैव ॥ २७५ ॥

कुम्भ राशि यदि धर्म भाव में गई हो तो मनुष्य देवताओं के समूह से उत्पन्न धर्म का आचरण करता है। (अर्थात् वैष्णव, शैव, शाक्त आदि सभी सम्प्रदायों में आस्था रखता है।) वृक्षों से सम्बन्धित (वृक्षारोपण) धर्म, कल्याणकारी कार्यों (चिकित्सा, क्षेत्र, आदि) में, बाग लगाने एवं तालाब निर्माण में भी रुचि रहती है ॥ २७५ ॥

धर्माश्रिते चैव हि मीनराशौ करोति धर्मं विविधं नृलोके ।
सत्सेवयारामतडागजातं तीर्थाटनेनार्थसुखैर्विचित्रैः ॥ २७६ ॥

धर्म भाव में यदि मीन राशि हो तो वह व्यक्ति, मनुष्य (मर्त्य) लोक में विविध प्रकार के धार्मिक कार्यों को करता है। अपने विविध धनों द्वारा सत्पुरुषों की सेवा, उद्यान एवं तालाब का निर्माण तथा तीर्थों का भ्रमण करता है ॥२७६॥

दशमभावगत द्वादशराशिफल

कर्माश्रिते मेषसुनामराशौ करोत्यधर्मं प्रवरं सुदुष्टम् ।
पैशुन्यरूपं विनयातिरिक्तं सुनिन्दितं साधुजनस्य लोके ॥ २७७ ॥

मेष नामक राशि कर्म (दशम) भाव में हो तो वह अत्यधिक अधर्म करने वाला, अति दुष्ट, चुगलखोर, विनम्रता से रहित, सज्जनों के बीच अत्यन्त निन्दनीय चरित्र वाला होता है ॥ २७७ ॥

वृषेऽम्बरस्थे प्रकरोति कर्म व्ययात्मकं साधुजनानुकम्पम् ।
द्विजेन्द्रदेवातिथिभिर्विभाजकं ज्ञानात्मकं प्रीतिकरं सतां च ॥ २७८ ॥

वृष राशि दशम भाव में हो तो वह व्यय करने वाला, साधुजनों पर दयाभाव रखने वाला, ब्राह्मण, देवता और अतिथि में उनके स्वरूप के अनुसार बुद्धि रखने वाला तथा सज्जनों में ज्ञानपूर्वक प्रीतिभाव रखने वाला होता है ॥ २७८ ॥

युग्मेऽम्बरस्थे प्रकरोति मर्त्यः कर्मप्रधानं गुरुभिः प्रदिष्टम् ।
कीर्त्यान्वितं प्रीतिकरं जनानां प्रभासमेतं कृषिजं सदैव ॥ २७९ ॥

मिथुन राशि दशम भाव में हो तो मनुष्य गुरुजनों से उपदिष्ट, कीर्ति को बढ़ाने वाला, लोगों के लिए प्रीतिकारक, कृषि से सम्बन्धित, तेजस्विता से युक्त प्रधान कार्य को करता है ॥ २७९ ॥

कर्केऽम्बरस्थे प्रकरोति मर्त्यः कर्म प्रपारामतडागसंज्ञम् ।
विचित्रवापीतटवृन्दजं च कृपापरं नित्यमकल्मषं च ॥ २८० ॥

कर्क राशि दशम भाव मे हो तो मनुष्य प्रपा (प्याऊ या पौसरा), बाग, तालाब तथा विचित्र वापी के तट पर समूह में उगने वाली (शोभा युक्त झाड़ियों) का निर्माण करने वाला, दयालु एवं पापरहित होता है ॥ २८० ॥

सिंहेऽम्बरस्थे कुरुते मनुष्यो रौद्रं सपापं विकृतं च कर्म ।
स पौरुषं प्राणसमं स्वकीयं वधात्मकं निन्दितमेव नित्यम् ॥ २८१ ॥

सिंह राशि अम्बर (दशम) भाव में स्थित हो तो मनुष्य भयंकर, पापी, विभत्स कर्म करने वाला, अपने पौरुष को प्राण तुल्य समझने वाला, हत्यारा तथा सदैव निन्दित होता है ॥ २८१ ॥

नभःस्थलस्थे त्वथ षष्ठराशौ करोति कर्माज्ञमितो मनुष्यः ।
स्त्रीराजमानी भजते विरुद्धं कामाल्पकं निर्धनमन्त्रिलोके ॥ २८२ ॥

दशम भाव में कन्या राशि स्थित हो तो मनुष्य अज्ञानी की तरह कार्य करता है। स्त्री और राजा के सम्मान के विरुद्ध कार्य करने वाला, स्वल्प कामवासना युक्त, तथा मन्त्रियों के बीच निर्धन होता है ॥ २८२ ॥

तुलाधरे व्योमगते मनुष्यो वाणिज्यकर्म प्रचुरं करोति ।
धर्मात्मकं चापि नयेन युक्तं सतामभीष्टं परमं पदं च ॥ २८३ ॥

तुला राशि दशम भाव मे हो तो मनुष्य बड़े पैमाने पर व्यापार करने वाला, धार्मिक, राजनीतिज्ञ, सज्जनों का अभीष्ट परम-पद (कार्य) सिद्ध करने वाला होता है ॥ २८३ ॥

कीटेऽम्बरस्थे प्रकरोति कर्म पुंसामदुष्टं जनसम्मतं च ।
व्ययङ्करं देवगुरुद्विजानां सुनिर्दयं नीतिविवर्जितं च ॥ २८४ ॥

वृश्चिक राशि दशम भाव में हो तो वह पुरुषों के लिए हितकर, जन सम्मत कार्यों को करने वाला, देवता, गुरु और ब्राह्मणों के निमित्त व्यय करने वाला, निर्दय, तथा नीति-ज्ञान से रहित होता है ॥ २८४ ॥

चापेऽम्बरस्थे च करोति कर्म सर्वात्मकं चापयुतं मनुष्यः ।
परोपकारात्मकभोजनाद्यं नृपात्मकं भूमियशःसमेतम् ॥ २८५ ॥

धनुराशि दशम भाव में हो तो मनुष्य सभी प्रकार से लाभप्रद कार्य करता है। तथा परोपकारी, भोजनादि में राजा की तरह आचरण करने वाला भूमि एवं यश से युक्त होता है ॥ २८५ ॥

मृगेऽम्बरस्थे प्रखरप्रतापं कर्मप्रधानं कुरुते मनुष्यम् ।
सुनिर्दयं बन्धुजनैः समेतं धर्मेण हीनं जनसम्मतं च ॥ २८६ ॥

मकर राशि दशम भाव में हो तो मनुष्य प्रबल प्रतापी कर्म में विश्वास रखने वाला, निर्दय, भाइयों एवं मित्रों से युक्त, धर्म से हीन, तथा दुष्टों से समर्थन प्राप्त होता है ॥ २८६ ॥

घटेऽम्बरस्थे च करोति कर्मप्रधानमर्त्यं परवञ्चनार्थम् ।
पाखण्डधर्मान्वितमिष्टलोभाद्विश्वासहीनं जनताविरुद्धम् ॥ २८७ ॥

कुम्भ राशि यदि दशम भाव में हो तो मनुष्य कर्म प्रधान (कर्म को प्रधान मानने वाला) होता है। दूसरों को ठगने के लिए पाखण्ड युक्त, अभीष्ट लोभ द्वारा विश्वास हीन तथा जनता के विरुद्ध आचरण करने वाला होता है ॥ २८७ ॥

मीनेऽम्बरस्थे प्रकरोति कर्म मर्त्यं कुले धर्मगुरुप्रदिष्टम् ।
कीर्त्यान्वितं सुस्थिरमादरेण नानाद्विजाराधनसंस्थितं च ॥ २८८ ॥

मीन राशि दशम भाव में हो तो मनुष्य अपने कुल मे धर्म गुरु द्वारा बताये गये कर्म को करने वाला स्थिर कीर्ति से युक्त, आदर पूर्वक अनेक ब्राह्मणों की सेवा करने वाला होता है ॥ २८८ ॥

लाभभावगत द्वादशराशिफल

लाभालये मेषसमाख्यराशौ चतुष्पदोत्थं प्रकरोति लाभम् ।
तथा नराणां नृपसेवया च देशान्तराराधितसुप्रभूतम् ॥ २८९ ॥

लाभ भाव में मेष राशि हो तो पशुओं से लाभ, राजाओं की सेवा से तथा देशान्तर (दूसरे देश) में सेवा कार्य करने से प्रचुर धनलाभ होता है ॥ २८९ ॥

आयस्थिते वै वृषभे प्रलाभो भवेन्मनुष्यस्य विशिष्टजातः ।
स्त्रीभ्यः सकाशादथ सज्जनेभ्यः कुशीलगोधर्मकृतेस्तथैव ॥ २९० ॥

एकादश भाव में वृष राशि हो तो उस मनुष्य को विशिष्ट व्यक्तियों से, स्त्रियों से, सज्जन पुरुषों से, किसी निन्दित कर्म से, गौ और धर्म की सेवा करने से धन का लाभ होता है ॥ २९० ॥

तृतीयराशिः कुरुतेऽतिलाभं लाभाश्रितः स्त्रीदयितं सदैव ।
वस्त्वर्थमुख्यासनपानजातं सदाऽत्र जातं विबुधप्रसिद्धम् ॥ २९१ ॥

मिथुन राशि लाभ भाव में हो तो अत्यधिक लाभ उठाने वाला, स्त्री के प्रति, दयालु, बहुमूल्य वस्तुओं, आसन (कुर्सी, विस्तर आदि) के संग्रह द्वारा सदैव विद्वत् समाज में यशस्वी होता है ॥ २९१ ॥

लाभो भवेल्लाभगते च राशौ सदा चतुर्थे वरजातकानाम् ।
सेवाकृषिभ्यां जनितः प्रभूतः शास्त्रेण वा साधुजनैश्च पश्चात् ॥ २९२ ॥

लाभ भाव में कर्क राशि हो उस समय उत्पन्न श्रेष्ठ व्यक्ति को सेवा और कृषि से उत्पन्न लाभ, पश्चात् शास्त्र के अध्ययन अध्यापन अथवा साधुजनों की सेवा से प्रचुर मात्रा में धन लाभ होता है ॥ २९२ ॥

लाभाश्रिते पञ्चमभे सुलाभो भवेन्मनुष्यस्य निगर्हणाच्च ।
नानाजनानां वधबन्धनैर्वा व्यायामदेशान्तरसंश्रयाच्च ॥ २९३ ॥

लाभ भाव में सिंह राशि हो तो मनुष्य निन्दित कर्म, अनेक व्यक्तियों की हत्या अथवा उन्हें बाँधकर रखने से, व्यायाम (खेलकूद,) कसरत एवं दूसरे स्थान (अथवा विदेश) के आश्रय से धनलाभ करता है (भावार्थ यह कि ऐसा व्यक्ति सेना अथवा पुलिससेवा द्वारा विभिन्न स्थानों में रहकर लाभान्वित होता है ।) ॥ २९३ ॥

कन्यात्मके लाभगते मनुष्यः प्राप्नोति लाभं विविधं सपर्याः ।
शास्त्रागमाभ्यां विनयेन साकं नित्यं विवेकेन तथाऽद्भुतेन ॥ २९४ ॥

कन्या राशि लाभ भाव में हो तो मनुष्य शास्त्रों एवं वेदों के अभ्यास से विनय द्वारा, अपने अद्भुत विवेक से तथा विविध प्रकार के सेवा कार्यों द्वारा धन प्राप्त करता है ॥ २९४ ॥

तुलाधरे लाभगते मनुष्यः प्राप्नोति लाभं वणिजे विचित्रे[1] ।
सुसाधुसेवाविनयेन नित्यं सुखं स्तुतं मुख्यतमं प्रभूतम् ॥ २९५ ॥

लाभ भाव में तुला राशि स्थित हो तो वह व्यक्ति विचित्र व्यापार से लाभ, सत्पुरुषों की सेवा द्वारा, विनम्रता से निरन्तर विशेष प्रकार का सुख एवं अत्यधिक प्रशंसा (सम्मान) प्राप्त करता है ॥ २९५ ॥

लाभाश्रिते चाष्टमसंज्ञराशौ प्राप्नोति लाभं मनुजोऽतिमुख्यम् ।
छलेन पापेन सुभाषणेन परस्य पैशुन्यकृतैर्विकारैः ॥ २९६ ॥

लाभ भाव में यदि वृश्चिक राशि हो तो वह व्यक्ति छल (धोखा-धड़ी), पाप, मृदु भाषण, एवं दूसरों की चुगली निन्दा से अपना परम अभीष्ट कार्य सिद्ध करता है ॥ २९६ ॥

लाभाश्रिते चैव धनुर्धरे च नृपैर्विलासान् भजते मनुष्यः ।
सत्सेवया वा निजपौरुषेण मुख्यं-चराराधनतश्चलाभम् ॥ २९७ ॥

लाभ भाव में धनु राशि हो तो मनुष्य राजाओं के साथ आनन्दोपभोग करने वाला, सत्पुरुषों की सेवा से, अपने पौरुष से, दूतों, गुप्तचरों (अथवा एजेण्टों) द्वारा धन का लाभ करने वाला होता है ॥ २९७ ॥

---

१. वाणिज्यतो लाभमलं करोति । पाठान्तरम् ।

लाभश्रिते वै मकरेऽर्थलाभो भवेन्नराणां जलयानयोगात् ।
विदेशवासान्नृपसेवनाद्वा व्ययात्मकं भूरितरं सदैव ॥ २९८ ॥

लाभ भाव में मकर राशि हो तो जातक समुद्री जहाज के सम्बन्ध से (नेवी द्वारा), विदेश में निवास करने, राजाओं की सेवा द्वारा धनलाभ करने वाला तथा खर्चीली प्रवृत्ति का होता है ॥ २९८ ॥

आयस्थिते कुम्भधरे च लाभो भवेन्मनुष्यस्य कुकर्मजातः ।
त्यागेन धर्मेण पराक्रमेण विद्याप्रभावात्सुसमागमश्च ॥ २९९ ॥

लाभ भाव में कुम्भ राशि हो तो मनुष्य कुकर्म द्वारा धनलाभ करता है । उसके त्याग, धर्म, पराक्रम और विद्या के प्रभाव से शिष्ट पुरुषों के साथ समागम होता है ॥ २९९ ॥

लाभाश्रिते चान्त्यगते च राशौ प्राप्नोति लाभं विविधं मनुष्यः ।
मित्रोद्भवं पार्थिवमानजातं विचित्रवाक्यैः प्रणयेन नित्यम् ॥ ३०० ॥

लाभ भाव में मीन राशि हो तो मनुष्य, अपने मित्रों से, राजाओं का सम्मान करने से, अपनी भाषणकला से, तथा प्रेमव्यवहार से विविध प्रकार का लाभ सदैव प्राप्त करता है ॥ ३०० ॥

व्ययभावगत द्वादशराशिफल

मेषे व्ययस्थे च भवेन्नराणां व्ययः सुखाच्छादनभोजनेन ।
चतुष्पदानेकविवर्द्धनेन लाभेन नानाविधपौरुषेण ॥ ३०१ ॥

मेष राशि यदि व्यय (बारहवें) भाव में हो तो अपनी इच्छानुकूल भोजन-वस्त्र में, अनेक पशुओं (गाय, भैंस, बैल आदि) की संख्या बढ़ाने में, लाभकारी योजनाओं में तथा विविध प्रकार से अपने शक्तिसंवर्द्धन में मनुष्य व्यय करता है ॥ ३०१ ॥

वृषे व्ययस्थे व्यय एव पुंसां भवेद्विचित्राम्बरयोषितां च ।
लाभेन राज्येन पराक्रमेण सधातुवादैर्विबुधैः सदैव ॥ ३०२ ॥

वृष राशि बारहवें भाव में हो तो विविध प्रकार के वस्त्रों में, स्त्रियों के साथ समागम में, लाभकारी योजनाओं में, राजकीय कार्यों में, शक्ति प्रदर्शन में (अर्थात् किसी प्रकार के विवाद से दण्ड के रूप में, मुकदमे में अथवा टैक्स के रूप में व्यय करना पड़ता है ।) तथा कुशल व्यक्तियों के साथ धातु सम्बन्धी व्यापार मे मनुष्य व्यय करता है ॥ ३०२ ॥

तृतीयराशौ व्ययगे नराणां व्ययो भवेत्स्त्रीव्यसनात्मकश्च ।
द्यूतोद्भवो वा सततं प्रभूतः कुशीलजः पापजनैर्गजैश्च ॥ ३०३ ॥

तृतीय (मिथुन) राशि यदि द्वादश भाव में हो तो स्त्रियों के व्यसन में, निरन्तर भूत-प्रेत सम्बन्धी पीड़ा में कुत्सित कार्य में, पापी लोगो के संसर्ग से तथा हाथी के रखरखाव में अत्यधिक व्यय होता है ।। ३०३ ।।

कर्के व्ययस्थे द्विजदेवतानां व्ययो भवेद्यज्ञसमुद्भवश्च ।
धर्मक्रियाभिर्विदधाति चैवं प्रशंसितः साधुजनेन लोके ।। ३०४ ।।

कर्क राशि व्यय भाव में हो तो ब्राह्मण और देवता के उद्देश्य से, यज्ञ एवं धार्मिक क्रियाओं के सम्पादन में धन व्यय होता है तथा ऐसा व्यक्ति लोक में सत्पुरुषों द्वारा प्रशंसित होता है ।। ३०४ ।।

सिंहे व्ययस्थे तु भवेन्न[1]राणामसंशयो भूरितमः सदैव ।
रूपैश्च जातैश्च कुकर्मणा च निन्द्यः सतां पार्थिवचौरतो वा ।। ३०५ ।।

सिंह राशि व्यय भाव में हो तो स्वरूप (रूप सज्जा), सन्तान, कुकर्म, राजकीय आदेश एवं चोरों द्वारा निश्चय ही उस व्यक्ति का अत्यधिक व्यय होता है तथा वह सभ्य समाज में निन्दित होता है ।। ३०५ ।।

कन्यात्मके चान्त्यगते व्ययी च भवेन्मनुष्यः स हि चाङ्गनोत्सुकः ।
विवाहमाङ्गल्यविचित्रमुख्यैः सूत्रप्रभाभिर्बहुसाधुसङ्गात् ।। ३०६ ।।

कन्या राशि यदि व्यय भाव में हो तो मनुष्य स्त्रियों के प्रति लोलुपता में, विवाह, सूत्रप्रभा (यज्ञोपवीत) आदि विविध माङ्गलिक कार्यों में, तथा साधु-सेवा में अधिक धन व्यय करता है ।। ३०६ ।।

तुले व्ययस्थे सुरविप्रबन्धुश्रुतिस्मृतिभ्यश्च कृतो व्ययश्च ।
भवेन्नराणां नियमैर्यमैश्च सुतार्थसेवाजनितः प्रसिद्धः ।। ३०७ ।।

तुला राशि बारहवें भाव में हो तो देवता-ब्राह्मण, भाई-बन्धु, वेद एवं स्मृतियों के लिए, अपने संयम-नियम के निर्वाह के लिए तथा पुत्र एवं धन की सुरक्षा हेतु व्यय करने में वह व्यक्ति प्रसिद्ध होता है ।। ३०७ ।।

अलौ व्ययस्थे च भवेद्व्ययस्तु पुंसां प्रदानेन विडम्बनाभिः ।
कुमित्रसेवाजनितः सुनिन्द्यः कुबुद्धितश्चौरकृताधिकारात् ।। ३०८ ।।

वृश्चिक राशि व्यय भाव में हो तो दैवी विपदाओं (विडम्बना) के निराकरण में, दुष्ट मित्रों का सहयोग करने में, दुर्बुद्धिवश चोरों द्वारा अधिकार कर लेने से मनुष्य का धन व्यय होता है तथा वह भली भाँति समाज में निन्दित होता है ।। ३०८ ।।

१. 'व्ययो नराणाम्' पाठान्तरम् ।

चापे व्ययस्थे परवञ्चनेषु व्ययो भवेत्पापजनप्रसङ्गात् ।
सेवाकृतो चात्यधिकारिपुंसः कृषिप्रसङ्गात्परवञ्चनाद्वा ।। ३०९ ।।

धनु राशि यदि व्यय भाव में हो तो दूसरों को ठगने से, पापी लोगों के प्रपञ्च से, अपने वर्ग के अधिकारी पुरुषों के सेवासत्कार करने में, खेती के सम्बन्ध में अथवा किसी को धोखा देने में व्यय होता है ।। ३०९ ।।

मृगे व्ययस्थे च भवेन्नरो हि व्ययैस्तु पापाशनकश्च जातः ।
स्ववर्गपूजानिरतस्तथाऽल्पकृषिर्विहीनश्च विगर्हितश्च ।। ३१० ।।

मकर राशि यदि बारहवें भाव में हो तो मनुष्य का पापान्न (पापी व्यक्तियों का भोजन) ग्रहण करने से, अपने वर्ग (जाति या सम्प्रदाय) के कार्यों में संलग्न रहने से धन व्यय होता है । तथा वह स्वल्प खेती करने वाला, साधनहीन एवं समाज में निन्दित होता है ।। ३१० ।।

घटे व्ययस्थे सुरसिद्धविप्रतपस्विभिर्वन्दिभवो व्ययश्च ।
मीने[1] कुपुत्राशनपानजातस्तथा विवादेन विनिर्गतेन ।। ३११ ।।

जिस व्यक्ति के द्वादश भाव में कुम्भ राशि हो वह देवता, साधक, (योगी), ब्राह्मण, तपस्वी एव बन्दीगण (चारणों) की सेवासुश्रूषा में धनव्यय करने वाला होता है। यदि द्वादशभाव में मीन[2] राशि हो तो दुष्ट सन्तान द्वारा, भोजन-पान (मद्यपानादि), विवाद एवं यात्रा में उसका धन व्यय होता है ।। ३११ ।।

ये स्थानचिन्तासु पुरा प्रदिष्टा योगा मया तान् परिगृह्य शास्त्रात् ।
योगा विचिन्त्याः सुधिया ततस्तु वाच्या नराणां हि शुभाशुभास्ते ।। ३१२ ।।

शास्त्रों से संग्रह कर स्थानों (द्वादश भावों) के विवेचन पुरःसर जिन योगों

---

१. 'पुंसां' मूलपाठः ।

२. आधार ग्रन्थ में द्वादश भाव में स्थित मीन राशि का फल नहीं दिया है। पं० सीताराम झा द्वारा अनूदित ग्रन्थ में कुम्भ के साथ मीन का फल इस प्रकार दिया गया है—घटे व्ययस्थे सुरसिद्धविप्रतपस्विनो वन्दनगो व्ययश्च ।
मीने च पुंसां जलयान जातस्तथाविवादेन विनिर्गतेन ।। ११ ।।
पं० श्री निवास शर्मा ने अपने संग्रह ग्रन्थ जातक तत्त्व में व्यय भाव में स्थित मीन राशि का फल इस प्रकार लिखा है---नाव, जहाज, आदि जलयान से, कुसंगति से, पुत्र के सम्बन्ध से सोने बिछाने के सामान में, सवारी के सम्बन्ध में, मुकदमा तथा यात्रा में व्यय होता है। इन्हीं फलादेशों के आधार पर मैंने पुंसा के स्थान पर मीने पाठ रखकर मीन राशि का भी समावेश कर लिया है।

को मैंने पहले इस ग्रन्थ में कहा है उनका अच्छी तरह चिन्तन करके मनुष्यों के शुभाशुभ का फलादेश विद्वान पुरुष को करना चाहिये ।। ३१२ ।।

द्वादशराशिगत ग्रहों के फल

भवति साहसकर्मकरो नरो रुधिरपित्तविकारकलेवरः ।
क्षितिपतिर्मतिमान् हितकृत्सदा सुमहसां[1] महसामधिपे क्रिये ।। ३१३ ।।

तेज के अधिपति सूर्य यदि मेष राशि में हों तो मनुष्य साहस पूर्ण कार्य करने वाला, रक्त-पित्त जन्य विकारों से युक्त शरीर वाला, राजा, बुद्धिमान तथा सदैव महान लोगों का हितकारक होता है ।। ३१३ ।।

परिमलैर्विमलैः कुसुमासनैः सुवसनैः पशुभिः सुखमद्भुतम् ।
गवि गतो हि रविर्जलभीरुतां विहितमाहितमादिशते नृणाम् ।। ३१४ ।।

सूर्य वृष राशि में हो तो सुगन्धित-स्वच्छ कुसुमास्तरण (पुष्प शैय्या), सुन्दर वस्त्रो एवं पशुओं द्वारा अद्भुत सुख प्राप्त करने वाला, जल से भयभीत तथा लोगों को शास्त्र विहित हितकारक आदेश देने वाला होता है ।। ३१४ ।।

गणितशास्त्रकलामलशीलतासुललितोऽद्भुतवाक्प्रथितो भवेत् ।
दिनपतौ मिथुने ननु मानवो विनयतानयतातिशयान्वितः ।। ३१५ ।।

दिनपति (सूर्य) यदि मिथुन राशि में हो तो मनुष्य गणित शास्त्र एवं कला में निपुण, निर्मल चरित्र, अपनी सुललित वाणी से प्रसिद्ध (लोकप्रिय), विनम्र एवं राजनीतिज्ञ होता है ।। ३१५ ।।

सुजनतारहितः कलिकालविज्जनकवाक्यविलोपकरो नरः ।
दिनकरे तु कुलीरगते भवेत्सघनताधनतासहितोऽधिकः ।। ३१६ ।।

सूर्य कर्क राशि में हो तो मनुष्य सज्जनता से रहित कलिकाल (युग प्रभाव) को अच्छी तरह जानने वाला, माता-पिता के आदेश की उपेक्षा करने वाला धन-वान् तथा दिनों-दिन अधिक सम्पन्न होता है ।। ३१६ ।।

स्थिरमतिश्च पराक्रमतोऽधिको विभुतयाद्भुतकीर्त्तिसमन्वितः ।
दिनकरे करिवैरिगते नरो नृपरतः परतोषकरो भवेत् ।। ३१७ ।।

(हाथियों के शत्रु) सिंह राशि में सूर्य हो तो मनुष्य स्थिर बुद्धिवाला, अधिक पराक्रमी, अपनी तेजस्विता से कीर्तियुक्त, राजा का दरबारी तथा (स्वामी को) सन्तुष्ट रखने वाला होता है ।। ३१७ ।।

---

१. सुसहसो पाठान्तरम् ।

दिनपतौ युवतौ समवस्थिते नरपतेश्च नरो द्रविणं लभेत्।
मृदुवचाः श्रुतगेयपरायणः समहिमहिमापहृताहितः ॥ ३१८ ॥

सूर्य कन्याराशि में हो तो राजा से धन प्राप्त करने वाला, मृदुभाषी, संगीत सुनने एवं गायन में दक्ष, महिमा युक्त तथा अपने प्रभुत्व से शत्रुओं को नष्ट करने वाला होता है ॥ ३१८ ॥

नरपतेरतिभीतिमहर्निशं जनविरोधविधानमघं दिशेत्।
कलिमनाः परकर्मरतिर्घटे दिनमणिर्न मणिर्द्रविणादिकम् ॥ ३१९ ॥

दिनमणि (सूर्य) तुलाराशि में हो तो निरन्तर राजकीय भय से त्रस्त, जन-विरोधी कार्यों से पापयुक्त, झगड़ालू प्रवृत्ति वाला, दूसरों के कार्यों में प्रीति रखने वाला रत्न एवं धन से हीन व्यक्ति होता है ॥ ३१९ ॥

कृपणतां कलहं च भृशं रुषं विषहुताशनशस्त्रभयं दिशेत्।
अलिगतः पितृमातृविरोधितां दिनकरो न करोति समुन्नतिम् ॥ ३२० ॥

वृश्चिक राशि में सूर्य हो तो जातक कृपण, झगड़ालू, अत्यन्त क्रोधी, विष-अग्नि-शस्त्र के भय से युक्त, माता-पिता का विरोधी तथा कभी भी उन्नति न करने वाला होता है ॥ ३२० ॥

स्वजनकोपमतीव महन्मतिं बहुधनं हि धनुर्धरगो रविः।
स्वजनपूजनमादिशते नृणां सुमतितो मतितोषविवर्द्धनम् ॥ ३२१ ॥

धनु राशि में सूर्य हो तो आत्मीय जनों पर अधिक क्रोध करने वाला, अत्यन्त बुद्धिमान्, बहुत धनवान्, अपनी सद्बुद्धि के अनुसार आत्मीय (कहीं सुजन पाठ है अतः सुज्जन) व्यक्तियों के सत्कार में तत्पर व्यक्ति होता है तथा उसकी बुद्धि सन्तुष्टि बढ़ाने वाली होती है ॥ ३२१ ॥

अटनतां निजपक्षविपक्षतः सधनतां कुरुते सततं नृणाम्।
मकरराशिगतो विगतोत्सवं दिनविभुर्न विभुत्वसुखं दिशेत् ॥ ३२२ ॥

मकर राशि में गया हुआ सूर्य मनुष्यों को भ्रमणशील, अपने पक्ष-विपक्ष दोनों से निरन्तर धन लाभ कराने वाला, उत्सव (मंगल कार्यों) से रहित तथा तेजहीन करने वाला होता है ॥ ३२२ ॥

कलशगामिनि पङ्कजिनीपतौ शठतरो हि नरो गतसौहृदः।
मलिनताकलितो रहितः सदा करुणयारुणयार्तसुखी भवेत् ॥ ३२३ ॥

कमलिनी पति (सूर्य) कुम्भ राशि में गये हो तो जातक अत्यन्त दुष्ट, मित्रता से भी दूर, सदैव मलिन आचरण युक्त, दयाभाव से युक्त, कभी-कभी दुःखी व्यक्ति होता है ॥ ३२३ ॥

बहुधनं क्रयविक्रयतः सुखं निजजनादपि गुह्यमहाभयम् ।
दिनपतौ झषगेऽतिमतिर्भवेद्विभुतयाऽद्भुतयायतकीर्त्तिभाक् ॥ ३२४ ॥

सूर्य मीन राशि में हो तो जातक अधिक बुद्धिमान्, अपने अद्भुत प्रभुत्व से से विस्तृत यशवाला, क्रय-विक्रय (व्यापार) से धन सम्पन्न, एवं सुखी होता है परन्तु आत्मीय जनों से गुप्त रूप से भय बना रहता है ॥ ३२४ ॥

चन्द्र फल—

स्थिरधनो रहितः सुजनैर्नरः सुतयुतः प्रमदाविजितो भवेत् ।
अजगतो द्विजराज इतोरितं विभुतयाद्भुतया स्वसुकीर्त्तिभाक् ॥ ३२५ ॥

मेष राशि में चन्द्रमा हो तो जातक स्थायी रूप से धनवान् सज्जन पुरुषों से रहित, सन्तानयुक्त, स्त्री के वशीभूत, तथा अपने अद्भुत प्रभाव से सत्कीर्तियुक्त होता है ऐसा (शास्त्रों में) कहा गया है ॥ ३२५ ॥

स्थिरगतिं सुमतिं कमनीयतां कुशलतां हि नृणामुपभोगिताम् ।
वृषगतो हिमगुर्भृशमादिशेत्सुकृतितः कृतितश्च सुखानि च ॥ ३२६ ॥

वृष राशि में गया हुआ चन्द्रमा जातक को सत्कार्य के लिए प्रेरित करता है तथा वह सत्कार्य से सुख, स्थिरता, सद्बुद्धि, सौन्दर्य, चातुर्य तथा उपभोग की वस्तुओं को प्राप्त करता है ॥ ३२६ ॥

प्रियकरः सुरकर्मयुतो नरः सुरतसौख्यभरो युवतीप्रियः ।
मिथुनराशिगतो हिमगुर्भवेत्सुजनताजनताकृतगौरवः ॥ ३२७ ॥

मिथुन राशि में चन्द्रमा हो तो वह व्यक्ति प्रिय कार्यों को करने वाला, देव कार्य (पूजा-जप-तप) में रत, सुरति सुख से सम्पन्न, स्त्रियों का प्रिय, तथा अपनी सज्जनता से लोक में गौरवान्वित होता है ॥ ३२७ ॥

श्रुतकलाबलनिर्मलवृत्तयः कुसुमगन्धजलाशयकेलयः ।
किल नरास्तु कुलीरगते विधौ वसुमती सुमतोप्सितलब्धयः ॥ ३२८ ॥

कर्क राशि में चन्द्रमा गया हुआ हो तो मनुष्य (कथा-वार्ता) सुनने वाला, कला-शक्ति एवं स्वच्छ आचरण से युक्त, पुष्प (इत्र आदि) सुगन्धित द्रव्य, जल-क्रीड़ा में रुचि रखने वाला, भूमि, सद्बुद्धि एवं अभीष्ट वस्तुओं को प्राप्त करने वाला होता है ॥ ३२८ ॥

अचलकाननयानमनोरथं गृहकलिं विकलोदरपीडनम् ।
द्विजपतिर्मृगराजगतो नृणां वितनुते तनुते यशहीनताम् ॥ ३२९ ॥

सिंह राशि में चन्द्रमा हो तो पर्वत-जङ्गल तथा वाहन में अधिक रुचि रखने

वाला, गृह में कलह से युक्त, व्यग्र, ऊपर से पीड़ित तथा यश से रहित होता है ॥ ३२९ ॥

युवतिगे शशिनि प्रमदाजनप्रबलकेलिविलासकुतूहलैः ।
विमलशीलसुताजननोत्सवैः सुविधिना विधिना सहितः पुमान् ॥ ३३० ॥

कन्या राशि में चन्द्रमा हो तो वह स्त्रियों के साथ अत्यधिक क्रीड़ा एवं विलास के लिए उत्सुक, निर्मल हृदयवाला, सुशील, कन्याओं का जन्मोत्सव विधि-विधान से मनाने वाला (अर्थात् कन्या सन्तान वाला) तथा भाग्यशाली पुरुष होता है ॥ ३३० ॥

वृषतुरङ्गपविक्रयवान् क्रये द्विजसुरार्चनदानमतिः पुमान् ।
शशिनि तौलिगते बहुदारभाग्विभवसम्भवसञ्चितविक्रमः ॥ ३३१ ॥

चन्द्रमा यदि तुला राशि मे हो तो वह व्यक्ति बैल, घोड़ा आदि का क्रय-विक्रय करने वाला, विप्र और देवताओं के पूजन एवं दान में रुचि रखने वाला, बहुत सी स्त्रियों से युक्त, सभी सम्भव सम्पत्ति एवं पराक्रम से युक्त होता है ॥ ३३१ ॥

शशधरे हि सरीसृपगे नरो नृपदुरोदरजातधनक्षयः ।
कलिरुचिर्विबलः खलमानसः कृशमनाः शमनापहतो भवेत् ॥ ३३२ ॥

चन्द्रमा वृश्चिक राशि में हो तो जुआ या सट्टा में, राजा के कोप से धन का नाश होता है । तथा वह व्यक्ति झगड़ालू, निर्बल, दुष्ट प्रकृति का, दुर्बल हृदय वाला होता है । तथा यमराज द्वारा प्रताड़ित होता है (अर्थात कष्ट से मृत्यु होती है)॥ ३३२ ॥

बहुकलाकुशलः किल गीतवान् विमलताकलितः सरलोक्तिभाक् ।
शशधरे हि धनुर्धरगे नरो धनकरो न करोति बहुव्ययम् ॥ ३३३ ॥

चन्द्रमा धनु राशि में गया हो तो मनुष्य बहुत सी कलाओं में निपुण, गायक स्पष्ट-सुन्दर (मधुर) एवं सरल वचन बोलने वाला तथा धनसंग्रह करने वाला होता है । परन्तु अधिक व्यय नहीं करता है ॥ ३३३ ॥

कलितशीतभयः किल गीतवित्तनुरुषा सहितो मदनातुरः ।
निजकुलोत्तमवित्तकरः परं हिमकरे मकरे पुरुषो भवेत् ॥ ३३४ ॥

चन्द्रमा मकर राशि में गया हुआ हो तो पुरुष शीत-भय से युक्त, गान विद्या का ज्ञाता, क्रोधी स्वभाव वाला, कामवासना से आतुर, अपने कुल में सर्वाधिक सम्पत्ति सञ्चित करने वाला होता है ॥ ३३४ ॥

अलसतामहितोऽन्यसुतप्रियः कुशलताकलितोऽतिविचक्षणः ।
कलशगामिनि शीतकरे नरः प्रशमितोऽशमितोऽरिपुप्रजात् ॥ ३३५ ॥

कुम्भ राशि में चन्द्रमा गया हो तो मनुष्य आलसी प्रकृति वाला, दूसरों के पुत्रों से स्नेह करने वाला, निपुण, अत्यन्त विद्वान्, शत्रु समूह से दब ये जाने पर भी न दबने वाला होता है ॥ ३३५ ॥

शशिनि मीनगते विजितेन्द्रियो बहुगुणः कुशलोऽनिललालसः ।
विमलधीः किल शस्त्रकलादराच्च चलताचलताकलिता नरः ॥ ३३६ ॥

चन्द्रमा मीन राशि में गया हो तो व्यक्ति जितेन्द्रिय, विविध गुणों से युक्त, कार्यों मे दक्ष, वायुसेवन की इच्छा रखने वाला (प्रातः सायं खुली हवा मे टहलने वाला घर में पंखा कूलर आदि रखने वाला), निर्मल बुद्धि युक्त, शास्त्र एवं कला के आदर से विचलित न होने वाला तथा स्थिर चित्तवाला होता है ॥ ३३६ ॥

भौमफल—

क्षितिपतेः क्षितिमानधनागमैः सुवचसा महसा बहुसाहसैः ।
अवनिजः कुरुते सततं शुभ स्त्वजगतो जगतोभिमतं नरम् ॥ ३३७ ॥

मेष राशि में गया हुआ मंगल सदैव शुभ करने वाला, राजा से भूमि-सम्मान एवं धन दिलानेवाला, मृदुभाषी, तेजस्वी, अधिक साहसी तथा लोक में प्रिय बनाता है ॥ ३३७ ॥

गृहधनाल्पसुखं च रिपूदयं परगृहस्थितिमादिशते नृणाम् ।
अवनिजोऽरिरुजो वृषभस्थितः क्षितिसुताऽतसुतोद्भवपीडनम् ॥३३८॥

मंगल वृष राशि में हो तो मनुष्यों का गृह एवं धन का अल्प सुख, शत्रुओं की वृद्धि, दूसरों के गृह में रहने के लिए बाध्य, शत्रु एवं रोग से पीड़ित, तथा अधिक सन्तान होने से भी दुःखी होता है ॥ ३३८ ॥

बहुकलाकलनाकुलजोत्कलि प्रचलनप्रियतां च निजस्थलात् ।
ननु नृणां कुरुते मिथुनस्थितः कुतनयस्तनयसुखात्सुखम् ॥ ३३९ ॥

मंगल मिथुन राशि में हो तो मनुष्य विविध कलाओं के ज्ञान हेतु आकुल रहने वाला, झगड़ालू, अपने स्थान से निरन्तर चलने की अभिलाषा रखने वाला (अर्थात् देशाटन प्रेमी) तथा श्रेष्ठ (बड़े) पुत्र से सुख प्राप्त करने वाला होता है ॥३३९॥

परगृहस्थिरतामतिदीनतां विमतितां शमितां च रिपूदयम् ।
हिमकरालयगे किल मङ्गले प्रबलयाऽबलया कलहं व्रजेत् ॥ ३४०॥

चन्द्रमा के क्षेत्र (कर्क राशि) में मंगल स्थित हो तो पराये गृह म निवास' अत्यधिक दीनता, दुर्बुद्धि, शान्त, शत्रु में वृद्धि, तथा किसी प्रतापी स्त्री के साथ कलह होता है ॥ ३४० ॥

अतितरां सुतदारसुखान्वितो हतरिपुर्विततोद्यमसाहसः ।
अवनिजे मृगराजगते पुमान् सुनयता नयताभियुतो भवेत् ।। ३४१ ।।

मंगल सिंह राशि में गया हो तो वह पुरुष पुत्र और स्त्री के अतिशय सुख से युक्त, शत्रुओं का शमन करने वाला, प्रसिद्ध उद्यमी एवं साहसी, सुन्दर नीति का पालन करने वाला तथा राजनीतिज्ञ होता है ।। ३४१ ।।

स्वजनपूजनताजनताधिको यजनयाजनकर्मरतो भवेत् ।
क्षितिसुते सति कन्यकयान्विते त्ववनितो वनितोत्सवतः सुखी ।। ३४२ ।।

मंगल यदि कन्या राशि में गया हो तो आत्मीय जनों का पूजन (आदर) करने वाला, अधिक सन्तति युक्त, हवन-यज्ञ करने वाला, भूमि-स्त्री एवं उत्सवों द्वारा सुखी होता है ।। ३४२ ।।

बहुधनव्ययिताङ्गविहीनतागतगुरुप्रियतापरितापितः ।
वणिजि भूमिसुते विकलः पुमानवनितो वनितोद्भवदुःखभाक् ।। ३४३ ।।

तुला राशि में मंगल हो तो अधिक व्यय करने वाला, अङ्गहीन, गुरुजन (माता-पिता) एवं प्रियजनों के दिवंगत हो जाने से सन्तप्त, विकल (व्यग्र), तथा भूमि एवं स्त्री के सम्बन्ध से दुःखी पुरुष होता है ।। ३४३ ।।

विषहुताशनशस्त्रभयान्वितः सुतसुतावनितादिमहासुखः ।
वसुमतीसुतभाजि सरीसृपे नृपरतः परतश्च जयं व्रजेत् ।। ३४४ ।।

वृश्चिक राशि में मंगल हो तो विष, अग्नि, एवं शस्त्र से भय, पुत्र, पुत्री, स्त्री आदि से बहुत सुख, राजा की सेवा में रत तथा अन्य लोगों पर विजय प्राप्त करता है ।। ३४४ ।।

रथतुरङ्गमगौरवसंयुतः परमरातिजनैः कृतदुःखितः ।
भवति वाऽवनिजे धनुषि स्थिते सुवनितावनिता भवति प्रिया ।। ३४५ ।।

धनु राशि में भौम हो तो रथ, घोड़ा (आजकल, कार, स्कूटर) एवं प्रतिष्ठा से युक्त, परम शत्रुओं द्वारा दुःखी, तथा सदाचारिणी स्त्री उसकी प्रिया होती है । (अर्थात् कुलीन एवं सदाचारी स्त्री से उस व्यक्ति का विवाह होता है ।।३४५।।

रणपराक्रमता वनितासुखं निजजनप्रतिकूलभयान्वितः ।
विभवतो मनुजस्य धरात्मजे मकरगे करगा च रमा भवेत् ।। ३४६ ।।

मंगल मकर राशि में हो तो युद्धक्षेत्र में पराक्रमी, स्त्रीसुख से युक्त एवं आत्मीय जनों के शत्रुओं से भयभीत रहता है । धन से इतना सम्पन्न होता है मानो लक्ष्मी उसके हाथों में हों ।। ३४६ ।।

विनयिताविरहितं सहितं रुजा निजजनप्रतिकूलमलं खलम् ।
प्रकुरुते मनुजं कलशाश्रयः क्षितिसुतोऽतिसुतोद्भवदुःखितम् ॥ ३४७ ॥

मंगल यदि कुम्भ राशि में हो तो जातक विनम्रता से रहित, रोगी, अपने शुभ चिन्तकों के विपरीत आचरण करने वाला, दुष्ट तथा अति सन्तान से दुःखी होता है ॥ ३४७ ॥

व्यसनतां खलतामदयालुतां विकलतां चलतां च निजालयात् ।
क्षितिसुतस्तिमिना सुसमन्वितो विमतिना मतिनाशनमादिशेत् ॥३४८॥

मंगल मीन राशि में हो तो जातक व्यसनी (बुरी आदतों वाला), दुष्ट, निर्दय, व्यग्र, अपने घर से बाहर जाने के लिए हमेशा उद्यत रहता है तथा बुद्धिहीन व्यक्ति के सम्पर्क से उसकी भी बुद्धि नष्ट हो जाती है ॥ ३४८ ॥

बुधफल—

खलमतिः किल चञ्चलमानसो बहुलभुक्कलहाकुलितो नरः ।
अकरुणोऽप्यृणवांश्च बुधे भवेदविगते विगतेप्सितसाधनः ॥ ३४९ ॥

बुध मेष राशि में हो तो मनुष्य दुष्ट बुद्धि वाला, चञ्चलमति, बहुभोजी, कलह के लिए आतुर, निर्दय, ऋण लेने वाला, तथा अभिलषित साधनों से रहित होता है ॥ ३४९ ॥

वितरणप्रयतं गुणिनं दिशेद्बहुकलाकुशलं रतिलालसम् ।
धनिनमिन्दुसुतो वृषभस्थितस्तनुजतोऽनुजतोऽतिसुखं नरम् ॥ ३५० ॥

बुध वृषराशि में स्थित हो तो वह वितरण प्रिय (दान में रुचि रखने वाला), गुणवान्, बहुत सी कलाओं में निपुण, स्त्री-सहवास हेतु लालायित एवं धनवान् होता है तथा पुत्र और छोटे भाई से सुख प्राप्त करता है ॥ ३५० ॥

प्रियवचो रचनासु विचक्षणो द्विजननीतनयः शुभवेषभाक् ।
मिथुनगे जनने शशिनन्दने सदनतोऽदनतोऽपि सुखी नरः ॥ ३५१ ॥

जन्म समय में यदि बुध मिथुन राशि में स्थित हो तो मनुष्य प्रियभाषी, रचना (काव्य-निबन्ध आदि लेखन कला) में अद्भुत विद्वान्, दो माताओं का (एकलौता) पुत्र, सुन्दर वेष-भूषा युक्त, गृह एवं खान-पान से भी सुखी होता है ॥ ३५१ ॥

कुचरितानि च गीतकथादरो नृपरुचिः परदेशगतिर्नृणाम् ।
किल कुलीरगते शशिभृत्सुते सुरततारतता नितरां भवेत् ॥ ३५२ ॥

बुध कर्क राशि में हो तो जातक कुत्सित चरित्र वाला, गीत एवं कथा-कहानी

में रुचि रखनेवाला, राजा का भक्त, परदेशगामी, तथा स्त्रीसहवास में सदैव आसक्त होता है ॥ ३५२ ॥

अनृततासहितं विमतिं परं सहजवैरकरं कुरुते नरम् ।
युवतिहर्षपरं शशिनः सुतो हरिगतोऽरिगतोन्नतिदुःखितम् ॥ ३५३ ॥

बुध यदि सिंह राशि में हो तो मनुष्य मिथ्या-भाषी, बुद्धिहीन, भाइयों से शत्रुता करने वाला, स्त्री को प्रसन्न रखने वाला, तथा शत्रु की उन्नति से दुःखी होता है ॥ ३५३ ॥

सुवचनानुरतश्चतुरो नरो लिखनकर्मपरो हि वरोन्नतः ।
शशिसुते युवतिं च गते सुखी सुनयनानयनाञ्चलचेष्टितैः ॥ ३५४ ॥

बुध कन्या राशि में गया हो तो वह व्यक्ति मधुरभाषी, चतुर, लेखनकला में निपुण, उन्नतिशील, तथा सुन्दरी स्त्रियों के नेत्रकटाक्षों का सुख प्राप्त करने वाला होता है ॥ ३५४ ॥

अमृतवाग्व्ययभाक्खलु शिल्पवित्कुचरिताभिरतिर्बहुजल्पकः ।
व्यसनयुग्मनुजः सहिते बुधे वितुलयच्चलयान्वसतोयुतः ॥ ३५५ ॥

बुध तुला राशि में हो तो अमृत तुल्य मधुर वाणी बोलने वाला, खर्चीला, शिल्प (कला) का ज्ञाता, चरित्रहीन स्त्री के साथ सहवास करने वाला, व्यर्थ बोलने वाला, व्यसन (बुरी आदतों से) युक्त, चञ्चल तथा आवास (गृह आदि) से सम्पन्न होता है ॥ ३५५ ॥

कृपणतातिरतिप्रणयश्रमो निहितकर्मसुखोपहतिर्भवेत् ।
धवलभानुसुतेऽलिगते क्षतिस्त्वलसतो लसतोऽपि च वस्तुनः ॥ ३५६ ॥

चन्द्रमा (धवल भानुसुत) वृश्चिक राशि में गया हो तो जातक कृपण, स्त्री संसर्ग में अधिक आसक्त, सञ्चितकर्म के सुख से रहित, वस्तुओं से सुसज्जित रहने पर भी आलस्यवश हानि उठाने वाला होता है ॥ ३५६ ॥

वितरणप्रणयो बहुवैभवः कुलपतिश्च कलाकुशलो भवेत् ।
शशिसुतेऽत्र धरासनसंस्थिते विहितया हितया रमयान्वितः ॥ ३५७ ॥

चन्द्रमा यदि धनुराशि में हो तो जातक दान में रुचि रखने वाला, अधिक सम्पत्तिशाली, कुल (परिवार) का श्रेष्ठ व्यक्ति, कलाओं में निपुण तथा सन्मार्ग से अर्जित हितकारक लक्ष्मी (धन) से युक्त होता है ॥ ३५७ ॥

रिपुभयेन युतः कुमतिर्नरः स्मरविहीनतरः परकर्मकृत् ।
मकरगे सति शीतकरात्मजे व्यसनतः स नतः पुरुषे भवेत् ॥ ३५८ ॥

बुध मकर राशि में गया हो तो व्यक्ति शत्रुओं के भय से युक्त दुर्बुद्धि, कामवासना से रहित, दूसरों का कार्य करने वाला, व्यसन के प्रभाव से नम्र रहने वाला होता है ॥ ३५८ ॥

गृहकलिं कलशे शशिनन्दने वितनुते तनुतामनुदीनताम् ।
धनपराक्रमधर्मविहीनतां विमतितामतितापितशत्रुभिः ॥ ३५९ ॥

बुध यदि कुम्भ राशि में हो तो गृहकलह, दरिद्रता में दिनों-दिन कमी, धन, पराक्रम एवं धर्म का अभाव, बुद्धिहीनता तथा शत्रुओं द्वारा सन्तप्त हृदय होता है ॥ ३५९ ॥

परधनादिकरक्षणतत्परो द्विजसुरानुचरो हि नरो भवेत् ।
शशिसुते पृथुरोमसमाश्रिते सुवदनावदनानुविलोकनः ॥ ३६० ॥

बुध यदि मीन राशि में गया हो तो मनुष्य दूसरों के धन की रक्षा में तत्पर, विप्र एवं देवताओं का अनुचर, तथा सुन्दर स्त्रियों के मुख को देखने वाला होता है। (अर्थात् सुन्दरी स्त्रियों के संसर्ग में रहता है) ॥ ३६० ॥

बृहस्पति फल—

बहुतरां कुरुते समुदारतां सुचरितानि च वैरिसमुन्नतिम् ।
विभवता च मरुत्पतिपूजितः क्रियगतोर्थंगतोऽनुमतिप्रदः ॥ ३६१ ॥

देवगुरु (बृहस्पति) मेष राशि में स्थित हों तो व्यक्ति अतिशय उदार, सदाचारी, एवं अर्थसंगत (उचित) कार्यों की स्वीकृत देने वाला होता है। उसके शत्रुओं की भी उन्नति (वृद्धि) होती रहती है ॥ ३६१ ॥

द्विजसुरार्चनभक्तिविभूतयो द्रविणवाहनगौरवलब्धयः ।
सुरगुरौ वृषभे बहुवैरणश्चरणगारणगाढपराक्रमाः ॥ ३६२ ॥

बृहस्पति वृष राशि में गया हो तो देवता-ब्राह्मण की भक्ति एवं आराधना से सम्पत्ति, धन, वाहन एवं यश प्राप्त होता है। तथा घोर संग्राम में पराक्रम दिखाने वाले (वीर) शत्रुसमूह उसके चरणों में झुकते हैं ॥ ३६२ ॥

कवितया सहितः प्रियवाक् शुचिर्विमलशीलरुचिर्निपुणः पुमान् ।
मिथुनगे सति देवपुरोहिते सहितताहिततासहितैर्भवेत् ॥३६३॥

बृहस्पति मिथुन राशि में तो पुरुष कवि, प्रियभाषी, पवित्रात्मा, निर्मल आचरण वाला, चतुर, एवं शुभचिन्तक मित्रों से युक्त होता है ॥ ३६३ ॥

बहुधनागमनो मदनोन्नतिर्विविधशास्त्रकलाकुशलो नरः ।
प्रियवचाश्च कुलीरगते गुरौ चतुरगैस्तुरगैः करिभिर्युतः ॥ ३६४ ॥

कर्क राशि में बृहस्पति हो तो मनुष्य को विविध प्रकार से धनलाभ होता है। कामवासना में वृद्धि, विविध शास्त्रों एवं कलाओं में निपुण, प्रियभाषी, चतुर व्यक्ति, घोड़े एवं हाथी से युक्त होता है ॥ ३६४ ॥

अचलदुर्गवनप्रभुतोर्जितो दृढतनुर्ननु दीनपरो भवेत् ।
अरिविभूतिहरो हि हरौ युतः सुवचसा वचसामधिपे गुरौ ॥ ३६५ ॥

सिंह राशि में गुरु हो तो पर्वत, जंगल, एवं किला को अपने पराक्रम से जीत कर अधिकार में रखने वाला, दृढ़ शरीर (हट्टा कट्टा), दानी, शत्रुओं की सम्पत्ति का हरण करने में समर्थ तथा मधुर भाषी होता है ॥ ३६५ ॥

कुसुमगन्धसदम्बरशालिता विमलता धनदानमतिर्भृशम् ।
सुरगुरौ सुतया सति संयुते रुचिरता चिरतापितशत्रुता ॥ ३६६ ॥

बृहस्पति कन्या राशि में स्थित हो तो जातक पुष्प, गन्ध (इत्र आदि), सुन्दर वस्त्र से सुसज्जित, स्वच्छ हृदय, धन-दान में अधिक उदार, आकृति से सुन्दर तथा शत्रुओं को अच्छी तरह सन्तप्त करने वाला होता है ॥ ३६६ ॥

सुतनयो जपहोममहोत्सवो द्विजसुरार्चनदानमतिर्भवेत् ।
वणिजजन्मपवित्रशिखण्डिजे चतुरतातुरतासहितारिणा ॥ ३६७ ॥

बृहस्पति तुलाराशि में हो तो सुन्दर-शिष्ट सन्तान युक्त, जप-हवन एवं बड़े-बड़े उत्सवों को करने वाला, ब्राह्मण और देवताओं के पूजन एवं दान में रुचि रखने वाला, चतुर, रुग्ण तथा शत्रुओं से युक्त होता है ॥ ३६७ ॥

धनविनाशनदोषसमुद्भवैः कृशतनुर्बहुदम्भपरो नरः ।
अलिगते सति देवपुरोहिते भवनतो वनतोऽपि च दुःखभाक् ॥ ३६८ ॥

अलि (वृश्चिक) राशि में गुरु हो तो धन नष्ट करने के दोष से उत्पन्न (चिन्ता द्वारा) दुर्बल शरीर वाला, घमण्डी, घर तथा जंगल में (घर-बाहर दोनों जगह) दुःख पाने वाला होता है ॥ ३६८ ॥

वितरणप्रणयो बहुवैभवं ननु धनान्यपि वाहनसञ्चयः ।
धनुषि देवगुरौ हि मतिर्भवेत्सुरुचिरा रुचिराभरणानि च ॥ ३६९ ॥

धनु राशि में गुरु हो तो मनुष्य सम्पत्ति (धन-स्वर्ण, भूमि, अन्न-वस्त्र) का अधिक मात्रा में इच्छा पूर्वक दान करने वाला, धनवान्, वाहन (मोटर-कार) का संग्रह करने वाला, सद्बुद्धि युक्त तथा सुन्दर आभूषणों को धारण करने वाला होता है ॥ ३६९ ॥

हतमतिः परकर्मकरो नरः स्मरविहीनतरो भयरोषभाक् ।
सुरगुरौ मकरे विदधाति ना जनमनो न मनोरथसाधनम् ॥ ३७० ॥

बृहस्पति मकर राशि में हो तो मनुष्य बुद्धिहीन, दूसरों के कार्यों में रत (नौकरी करने वाला), कामवासना से हीन, भयभीत, एवं क्रोधी होता है, तथा उसका मन कभी अपने मनोरथों की सिद्धि में नहीं लगता है ॥ ३७० ॥

गदयुतः कुमतिर्द्रविणोज्झितः कृपणतानिरतः कृतकिल्विषः[1]।
घटगते सति देवपुरोहिते कदशनो दशनोदरपीडितः ॥ ३७१ ॥

गुरु यदि कुम्भ राशि में हो तो वह व्यक्ति रोगी, दुष्ट बुद्धि वाला, धनहीन, कृपणता में लीन, पापकर्म करने वाला, कुत्सित पदार्थों को खाने वाला, दांत तथा उदर के रोग से पीड़ित होता है ॥ ३७१ ॥

नृपकृपाप्तधनो वदनोन्नतिः सदनसाधनदानपरो नरः।
सुरगुरौ तिमिना सहिते सतामनुमतोऽनुमतोत्सवदो भवेत् ॥ ३७२ ॥

मीन राशि में बृहस्पति हो तो मनुष्य राजा की कृपा से धन प्राप्त करने वाला, भाषण कला से उन्नति पाने वाला, भवननिर्माण के साधन (भूमि अथवा उपकरण) के दान में तत्पर, सत्पुरुषों का अनुगामी, तथा उनकी अनुमति से उत्सव करने वाला होता है ॥ ३७२ ॥

शुक्र फल—

भवनवाहनवृन्दपुराधिपः प्रचलनप्रियताविहितादरः।
यदि च सञ्जनने हि भवेत्कविः[2] कवियुतो वियुतो रिपुभिर्नरः ॥३७३॥

यदि जन्म समय में मेष में शुक्र हो तो मनुष्य गृह, वाहनों के समूह एवं नगर का अधिपति होता है। घूमने-फिरने का शौकीन एवं उसी से सम्मान पाने वाला, कवियों से युक्त तथा शत्रुओं से रहित होता है ॥ ३७३ ॥

बहुकलत्रसुतोत्सवगौरवं कुसुमगन्धरुचिः कृषिनिर्मितः।
वृषगते भृगुजे कमला भवेदविरला विरला रिपुमण्डली ॥ ३७४ ॥

वृषराशि में शुक्र हो तो बहुत सी स्त्रियों एवं पुत्रों के उत्सवों से गौरवान्वित, पुष्प गन्ध (इत्र आदि) का प्रेमी, कृषि कर्म द्वारा सब कुछ करने वाला, अपरिमित लक्ष्मी (धन) से युक्त तथा अल्प शत्रुओं वाला होता है ॥ ३७४ ॥

१. कृशतनुर्ननु देव विनिन्दकः ॥ पाठान्तरम्

२. मूलपाठ 'भवेत्कविः' यही प्रतीत होता है। बाद में किसी संशोधक ने मेष राशि का नाम न आने से अजगतः पाठ परिवर्तित कर दिया होगा। 'सञ्जनने' का अभिप्राय जन्मलग्न से है, तथा लग्न से आद्य स्थान अर्थात् मेष का अभिप्राय ग्रन्थकार को अभीष्ट है। यह द्रविड प्राणायाम मूलपाठ के रक्षार्थ मैंने ग्रहण किया है।

भृगुसुते जनने मिथुनस्थिते सकलशास्त्रकलामलकौशलम् ।
सरलता ललिता किल भारती सुमधुरा मधुरान्नरुचिर्भवेत् ।। ३७५ ।।

जन्म समय में यदि शुक्र मिथुन राशि में हो तो समस्त शास्त्रों एवं निर्दोष कलाकौशल में निष्णात, सरल, ललित एवं मधुर वाणी बोलने वाला, तथा मिष्ठान्न का प्रेमी होता है ।। ३७५ ।।

द्विजपतेः सदने भृगुनन्दने विमलकर्ममतिर्गुणसंयुतः ।
जनमलं सकलं कुरुते वशं सकलया कलयापि गिरा नरः ।। ३७६ ।।

चन्द्रमा की राशि (कर्क) में यदि शुक्र हो तो निर्मल बुद्धि से कार्य करने वाला, गुणवान्, तथा अपनी वाणी एवं कलाओं से समस्त जनता को वश में करने वाला होता है ।। ३७६ ।।

हरिगते सुरवैरिपुरोहिते युवतितो धनमानसुखानि च ।
निजजनव्यसनान्यपि मानवस्त्वहिततो हिततोषमनुव्रजेत् ।। ३७७ ।।

शुक्र यदि सिंह राशि में हो तो स्त्री द्वारा धन एवं सुख की प्राप्ति होती है । उसके आत्मीय जन व्यसनी होते हैं तथा शत्रुओं से उसे सन्तोष प्राप्त होता है ।। ३७७ ।।

भृगुसुते सति कन्यकयान्विते बहु धनं खलु तीर्थमनोरथः ।
कमलया पुरुषोऽपि विभूषितस्त्वमितया मितयापि गिरान्वितः ।।३७८।।

शुक्र यदि कन्या राशि मे हो तो पुरुष धनवान् तीर्थयात्रा का अभिलाषी, अपार लक्ष्मी से विभूषित, तथा मित (स्वल्प) भाषी होता है ।। ३७८ ।।

कुसुमवस्त्रविचित्रधनान्वितो बहुगमागमनो ननु मानवः ।
जननकालतुलाकलनं यदा सुकविना कविनायकतां व्रजेत् ।। ३७९ ।।

जन्म समय में शुक्र तुला राशि में स्थित हो तो मनुष्य पुष्प, वस्त्र, विचित्र धन से सम्पन्न, बहुत यात्रा करने वाला तथा कवियों मे श्रेष्ठ होता है ।। ३७९ ।।

कलहघातमतिं जननिन्द्यतां प्रजनतामयतां नियतां नृणाम् ।
व्यसनतां जननेऽलिसमाश्रितः कविरलं विरलं कुरुते धनम् ।। ३८० ।।

जन्म काल में शुक्र यदि वृश्चिक राशि में स्थित हो तो जातक कलह, घात (धोखा या हत्या) में रुचि रखने वाला, समाज में निन्दित, निरन्तर जननेन्द्रिय से रुग्ण, व्यसनी, तथा दिनों-दिनों धनक्षय करने वाला होता है ।। ३८० ।।

युवतिसूनुधनागमनोत्सवं सचिवतां नियतं शुभशीलताम् ।
अनुषिकार्मुकगः कविनन्दनः कविरतिं विरतिं कुरुते नृणाम् ।। ३८१ ।।

जन्मकाल में शुक्र धनु राशि में गया हो तो मनुष्य स्त्री, पुत्र और धन की प्राप्ति से आनन्द मनाने वाला, मन्त्री, शील स्वभाव युक्त, कवियों के प्रति अनुराग रखने वाला विरक्त प्रकृति का होता है ।। ३८१ ।।

अभिरतिस्तु जराङ्गनया नृणां व्ययभयात्कृशतामतिचिन्तया ।
भृगुसुते मृगराशिगते सदा कविजने विजनेऽपि मतिर्भवेत् ।।३८२।।

मृग (मकर) राशि में शुक्र हो तो मनुष्य वृद्धा स्त्रियों में विशेष अनुरक्त, व्यय के भय से दुर्बल, तथा चिन्तित रहता है । एकान्त (निर्जन) में रहता हुआ भी कवियों के प्रति आदर रखता है ।। ३८२ ।।

उशनसः कलशे जनुषि स्थितौ वसनभूषणभोगविहीनता ।
विमलकर्ममहालसता नरैरुपगतापगतापि रमा भवेत् ।। ३८३ ।।

जन्म समय में यदि शुक्र कुम्भ राशि में गया हो तो वह व्यक्ति वस्त्र, आभूषण, विविध प्रकार के भोगों (सुखों) से वंचित अच्छे कार्यों में आलस्य प्रकट करने वाला, तथा लक्ष्मी (धन) प्राप्त करके भी नष्ट करने वाला होता है ।। ३८३ ।।

भृगुसुते सति मीनसमन्विते नरपतेर्विभुता वितता भवेत् ।
रिपुसमाक्रमणद्रविणागमो वितरणे तरणे प्रणयो नृणाम् ।। ३८४ ।।

शुक्र यदि मीन राशि में गया हो तो व्यक्ति, राजा की सम्पत्ति से लाभान्वित, शत्रुओं पर आक्रमण करने से धन-लाभ करने वाला, वितरण (दान) में तथा तैराकी में निपुण होता है ।। ३८४ ।।

शनि फल –

धनविहीनतया तनुता तनौ जनविरोधितयेप्सितनाशनम् ।
क्रियगतेऽर्कसुते सुजनैर्नृणां विषमता समताशमनं भवेत् ।। ३८५ ।।

शनि मेषराशि म गया हो तो धनहीन हो जाने से शारीरिक दुर्बलता, जनता के विरोध से अभीष्ट कार्य की हानि, सज्जनों के साथ शत्रुता तथा मित्रों से सम्बन्ध-भङ्ग होता है ।। ३८५ ।।

युवतिसौख्यविनाशनता भृशं पिशुनसङ्गरुचि मतिविच्युतिम् ।
तनुभृतां जनने वृषभस्थितो रविसुतो विसुतोत्सवमादिशेत् ।। ३८६ ।।

मनुष्यों के जन्म काल में वृष राशि मे शनि गया हो तो स्त्रीसुख का नाश, चुगलखोरों के साथ विशेष रुचि, बुद्धिहीनता तथा पुत्रोत्सव का अभाव पैदा करता है ।। ३८६ ।।

प्रबलताविमलत्वविहीनता भवनबाह्यविलासकुतूहलात् ।
व्रजति नो मिथुनोपगते सुते दिनविभोर्न विभोर्लभते सुखम् ।। ३८७ ।।

मिथुन राशिगत शनि हो तो जातक शक्तिशाली, मलिन हृदय वाला, घर से बाहरी आनन्दोपभोग से विरत न होने वाला तथा धन के सुख से हीन होता है ।। ३८७ ।।

शशिनिकेतनगामिनि भानुजे तनुभृतां कृशतां भृशमम्बया ।
वरविलासकरा कमला भवेदविरलं विरलं रिपुमण्डलम् ॥ ३८८ ॥

चन्द्रमा के गृह (कर्क राशि) में शनि गया हो तो जातक और उसकी माता दोनो शरीर से दुर्बल, समस्त आनन्दोपभोग की सामग्री से सम्पन्न, अपार लक्ष्मी (धन), तथा अत्यल्प शत्रुओं से युक्त होते हैं ॥ ३८८ ॥

लिपिकलाकुशलश्च कलिप्रियो विमलशीलविहीनतरो नरः ।
रविसुते रविवेश्मनि संस्थिते हृतनयस्तनयः प्रमदार्तिभाक् ॥ ३८९ ॥

शनि सिंह राशि में स्थित हो तो जातक लेखनकला में निपुण, झगड़ालू, सौजन्य से रहित होता है। उसके पुत्र नीति से हीन तथा स्त्री रोगी होती है ॥ ३८९ ॥

विहितकर्मणि शर्म कदापि नो विनयतोपहतश्चलसौहृदः ।
रिपुसुते सति कन्यकयान्विते विबलताबलता सहितो भवेत् ॥ ३९० ॥

शनि कन्या राशि में हो तो व्यक्ति अपने (विहित) कार्यों में कभी भी आनन्द (सन्तोष) का अनुभव नहीं करता है। विनम्रता से रहित, क्षणिक मित्रता वाला, कभी बलवान तथा कभी निर्बल होता है ॥ ३९० ॥

निजकुलेऽवनिपालबलान्वितः स्मरबलाकुलितो बहुदानदः ।
जलजिनीशसुते तुलयान्विते नृपकृतोपकृतो हि नरो भवेत् ॥ ३९१ ॥

शनि यदि तुला राशि में हों तो मनुष्य अपने कुल में राजा के समान बलवान्, अतिशय कामी, अधिक दान करने वाला तथा राजा से उपकृत होता है ॥३९१॥

विषहुताशनशस्त्रभयान्वितो धनविनाशनवैरिगदार्दितः ।
विकलिताकलितोऽलिसमन्वितो रविसुतोविसुतोऽप्यसुखीनरः ॥३९२॥

वृश्चिक राशि में शनि हो तो विष, अग्नि एवं शस्त्र भय से युक्त, धनहानि, शत्रु और रोग से पीड़ित, व्याकुलता से युक्त, पुत्रहीन तथा दुःखी मनुष्य होता है ॥ ३९२ ॥

रविसुतेन युते सति कार्मुके सुतगणैः परिपूर्णमनोरथः ।
प्रथितकीर्तिसुवृत्तिपरो नरो विभवतो भवतोषयुतो भवेत् ॥३९३॥

शनि धनु राशि में हो तो पुत्रों द्वारा मनोरथ पूर्णकरने वाला (अर्थात् सुयोग्य पुत्रों से युक्त), विख्यात यशस्वी, उत्तम साधनों से युक्त जीविका वाला तथा सम्पत्ति द्वारा सांसारिक सुखों से सन्तुष्ट व्यक्ति होता है ॥ ३९३ ॥

नरपतेरतिगौरवतां व्रजेद्रविसुते मृगराशिगते नरः ।
अगरुणाकुसुमैर्भृंगजातया विमलया मलयाचलजैः सुखम् ॥ ३९४ ॥

मकरराशि में यदि शनि गया हो तो मनुष्य राजा से सम्मान प्राप्त करने वाला, अगरु, पुष्प, कस्तूरी से उत्पन्न सुगन्ध एवं निर्मल मलयागिरि में उत्पन्न चन्दन से सुख प्राप्त करने वाला (अर्थात् पूर्ण शृंगारिक सुख भोगने वाला) होता है ॥ ३९४ ॥

ननु जितो रिपुभिर्व्यसनावृतैर्विहितकर्मपराङ्मुखतान्वितः ।
रविसुते कलशेन समन्विते सुसहितः स हितप्रचयैर्नरः ॥ ३९५ ॥

शनि कुम्भ राशि म हो ता मनुष्य शत्रुओं से पराजित, व्यसनों से घिरा हुआ, अपने लिए निर्दिष्ट कार्यों से विमुख, अच्छे लोगों का साथी तथा हितैषियों से युक्त होता है ॥ ३९५ ॥

विनयता व्यवहारसुशीलता सकललोकगृहीतगुणो नरः ।
उपकृतो निपुणस्तिमिमश्रिते रविभवे विभवेन समन्वितः ॥ ३९६ ॥

मीन राशि मे शनि हो तो व्यक्ति विनम्र, सुशील, व्यवहारिक, लोगों से गुण ग्रहण करने वाला, उपकृत (उपकार मानने वाला), निपुण तथा धन से युक्त होता है ॥ ३९६ ॥

ग्रहमैत्री प्रयोजन—

विना हि मैत्रीं खलु खेचराणां न ज्ञायते ह्युत्तमध्यहीनता ।
महादशान्तर्विदशादिकानां तस्मात्प्रवक्ष्ये खलु मैत्रिचक्रम् ॥ ३९७ ॥

ग्रहों को मित्रता (मित्र-सम-शत्रु) के ज्ञान विना महादशा या अन्तर दशा के शुभाशुभ फलों के उत्तम-मध्यम-हीन कोटि का ज्ञान नहीं हो सकता अतः ग्रहमैत्री चक्र को कह रहा हूँ ॥ ३९७ ॥

नैसर्गिक एवं तात्कालिक ग्रहमैत्री—

शत्रू मन्दसितौ समश्च शशिजो मित्राणि शेषा रवे-
स्तीक्ष्णांशुर्हिमरश्मिजश्च सुहृदौ शेषाः समाः शीतगोः ।
जीवेन्दूष्णकराः कुजस्य सुहृदो ज्ञोऽरिः सितार्की समौ ।
मित्रे सूर्यसितौ बुधस्य हिमगुः शत्रुः समाश्चापरे ॥ ३९८ ॥

सूर्य के शनि और शुक्र शत्रु, बुध सम तथा शेष (चन्द्र, मंगल, गुरु) मित्र, चन्द्रमा के मित्र सूर्य और बुध अन्य सभी ग्रह (मं. गु. शु. श.) सम, मंगल के मित्र बृहस्पति, चन्द्र, सूर्य, शत्रु बुध तथा सम, शुक्र और शनि बुध के सूर्य और शुक्र मित्र, चन्द्रमा शत्रु, तथा अन्य (मंगल, गुरु, शनि) सम होते हैं ॥ ३९८ ॥

सूरेः सौम्यसितावरी रविसुतो मध्योऽपरे त्वन्यथा
सौम्यार्की सुहृदौ समौ कुजगुरू शुक्रस्य शेषावरी

शुक्रज्ञौ सुहृदौ समः सुरगुरुः सौरस्य चान्येऽरयः—
तत्काले च दशायबन्धुसहजस्वान्त्येषु मित्रं स्थितः[१] ॥ ३९९ ॥

बृहस्पति के बुध और शुक्र शत्रु, शनि सम तथा अन्य ग्रह (सू. चं. मं.) मित्र, शुक्र के बुध और शनि मित्र, मंगल, गुरु सम, शेष ग्रह (सू. चं.) शत्रु, शनि के शुक्र, बुध मित्र, बृहस्पति सम तथा अन्य (सू., चं., मं.) शत्रु होते हैं। (यह नैसर्गिक मैत्री होती है।) तात्कालिक मैत्री का निर्णय इस प्रकार होता है—

अपने स्थान से दूसरे, तीसरे, चौथे, दशवें, ग्यारहवें तथा बारहवें भाव में जो ग्रह हों वे तात्कालिक मित्र तथा इनसे भिन्न (लग्न, पंचम, षष्ठ, सप्तम, अष्टम, नवम, भावों में स्थित ग्रह तात्कालिक शत्रु होते हैं ॥ ३९९ ॥

नैसर्गिक मैत्रीचक्र

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.
मित्र	चं. मं. बृ.	सू. बु.	सू. चं. बृ.	सू. शु.	सू. चं. मं.	बु श.	बु. शु.
सम	बु.	मं. बृ. शु. श.	शु. श.	म. बृ. श.	श.	मं. बु.	बृ.
शत्रु	शु. श.	×	बु.	चं.	बु. शु.	सू. चं.	सू. चं. मं.

तात्कालिक मित्र (स्वस्थान से) २, ३, ४, १०, ११, १२ भावों में स्थित ग्रह।
तात्कालिक शत्रु (स्वस्थान से) १, ५, ६, ७, ८, ९ भावों में स्थित ग्रह।

मित्रमुदासीनोऽरिर्व्याख्याता ये निसर्गभावेन।
तेऽधिसुहृन्मित्रसमास्तत्कालमुपस्थिताश्चिन्त्याः ॥ ४०० ॥

मित्र, उदासीन (सम), शत्रु, का जो विवेचन नैसर्गिक भाव से किया गया है उससे तथा तात्कालिक मित्र शत्रु सम्बन्ध ज्ञात कर अधिमित्र, मित्र, सम आदि का निर्णय करना चाहिये ॥ ४०० ॥

मूलत्रिकोणषत्रिंशकोणनिधनैकराशिसमगाः।
एकैकस्य यथा सम्भवन्ति तात्कालिका रिपवः ॥ ४०१ ॥

---

१. बृहज्जातकम् २.१६,१७ **विशेष**—नैसर्गिक मैत्री में ग्रहों की मित्र सम शत्रु तीन कोटियाँ होती है। तथा इनमें परस्पर स्थिर सम्बन्ध होते हैं। परन्तु तात्कालिक मैत्री में केवल दो कोटियाँ मित्र और शत्रु की होती है। जो अस्थिर होती हैं। दोनों के सम्बन्ध से पञ्चधा मैत्री का निर्णय होता है।

मूल त्रिकोण, षष्ठ, पञ्चम, नवम, अष्टम, प्रथम, सप्तम स्थानों में स्थित प्रत्येक ग्रह तत्कालिक शत्रु होता है।[1] ४०१ ॥

पञ्चधा मैत्री चक्र—

तत्कालमित्रं तु निसर्गमित्रं द्वयं भवेतस्त्वधिमित्रसंज्ञम् ।
तथैव शत्रारधिशत्रुसंज्ञमेकत्र शत्रुः समतामुपैति ॥ ४०२ ॥

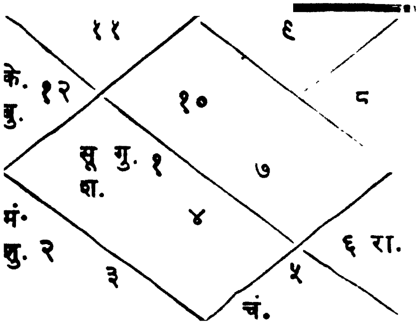
तात्कालिक मित्र और नैसर्गिक मित्र दोनों मिलकर अधिमित्र, इसी प्रकार नैसर्गिक शत्रु और तात्कालिक शत्रु दोनों मिलकर अधिशत्रु होते हैं। एक ही ग्रह एक मत से मित्र दूसरे मत से शत्रु हो तो दोनों मिलकर सम तथा नैसर्गिक मत से सम तथा तात्कालिक मित्र हो तो मित्र, एवं सम शत्रु हों तो शत्रु होते हैं ॥४०२॥

"यथा स्वाभाविको-मैत्रीचक्रं यत्र प्रतिष्ठति ।
तादृगेव हि तत्कालमैत्रीचक्रं निवेशयेत् ॥ ४०३ ॥

जिस प्रकार नैसर्गिक मैत्रीचक्र का निर्माण होता है उसी प्रकार तात्कालिक मैत्री चक्र का भी निर्माण कर जन्म पत्र में सन्निवेश कर लेना चाहिये ॥ ४०३ ॥

उदाहरण—पञ्चधा मैत्री चक्र निर्माण हेतु जन्माङ्ग चक्र तथा नैसर्गिक मैत्री चक्र की आवश्यता पड़ती है। इस चक्र में अधिमित्र, मित्र, सम, शत्रु, अधिशत्रु ये ५ विभाग होते हैं। इसीलिए इसे "पञ्चधा मैत्री" कहते हैं।

जन्माङ्ग चक्र—



प्रस्तुत चक्र में सूर्य का चन्द्रमा नैसर्गिक मित्र है परन्तु तात्कालिक शत्रु है अतः मित्र+शत्रु=सम सूर्य का मंगल नैसर्गिक मित्र तथा तात्कालिक मित्र है। अतः मित्र+मित्र=अधिमित्र। इसी प्रकार सभी ग्रहों का विचार करना चाहिये।

१. तात्कालिक मित्र शत्रु के निर्णय में विविध मतान्तर हैं। अतः केवल उक्तमत ही प्रमाण नहीं हैं। इस श्लोक के अनुसार जो सामान्य भाव प्रकट होता है वस्तुतः वह संगत नहीं है। इसका आशय इस प्रकार होना चाहिये—अपनी मूल त्रिकोण राशि से प्रथम, पञ्चम, षष्ठ, सप्तम, अष्टम, नवम भावों में स्थित ग्रह शत्रु होता है। जैसा कि भट्टोत्पल ने बृहज्जातक के १८वें श्लोक की टीका में किसी आचार्य का मत उद्धृत किया है।

"मूल त्रिकोणाद्धनधर्मबन्धुपुत्रव्ययस्थानगता ग्रहेन्द्राः ।
तत्कालमेते सुहृदो भवन्ति स्वोच्चे च यो यस्य विकृष्टवीर्यः ।"

पञ्चधा मैत्रीचक्र

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
अधिमित्र	मं.	×	सू. च. गु.	सू. शु.	मं.	बु श.	बु.शु.
मित्र	बु.	मं.शु	श.	मं.गु. श.	×	गु.	×
सम	चं.गु. शु.	सू.बु.	बु.	×	सू.चं, बु.शु.	सू चं	मं.
शत्रु	×	बृ.श.	शु.	×	श.	मं.	गु.
अधिशत्रु	श.	×	×	चं.	×	×	सू.चं.

षड्वर्ग से विचारणीय विषय—

लग्ने देहाचारो होरग्यामर्थसम्पदो विपदः।
द्रेष्काणे कर्मफलं सप्तांशे बन्धुसंख्या च ॥ ४०४ ॥
जातकफलं नवांशे द्वादशभागे विचिन्तयेत्पत्नीम्।
त्रिशांशे निधनं वै यवनाचार्यैः सदा ह्युक्तम् ॥ ४०५ ॥

गृह (लग्न) से शरीर की स्थिति, होरा से धन सम्पत्ति और विपत्ति, सप्तमांश से कर्म फल, सप्तमांश से भाइयों की संख्या, नवमांश से जातक का फल, द्वादशांश से पत्नी, त्रिशांश से मृत्यु का सदैव विचार करना चाहिये। ऐसा यवनाचार्य ने कहा है ॥४०४,४०५॥

षड्वर्ग प्रशंसा—

यस्मिन्मित्रगृहे स्वकीयभवने तुङ्गे त्रिकोणेऽपि वा
तत्सर्वं विदधाति जन्मसमये षड्वर्गशुद्धो ग्रहः।
एकस्तत्र हि सर्वभूतिनिकरो हस्तेषु कोषान्वितो
द्वाभ्यां किन्नरमत्र सिद्धसदृशं कुर्वन्ति मर्त्यं भुवि ॥ ४०६ ॥

जिसके जन्म समय में कोई एक ग्रह भी अपने मित्र ग्रह की राशि में, अपनी राशि में, अपनी उच्चराशि अथवा त्रिकोण (मूल त्रिकोण) में षड्वर्ग शुद्ध हो (अर्थात् उक्त राशियों में ही षड्वर्गों में हो) तो वह व्यक्ति सभी प्रकार की सम्पत्तियों से युक्त तथा कोष (धन) से परिपूर्ण होता है। यदि दो ग्रह षड्वर्ग शुद्ध हो तो उस मनुष्य को क्या कहना है ? वह तो सिद्ध पुरुषों की तरह इस संसार में इच्छानुकूल सुख प्राप्त करने वाला होता है ॥ ४०६ ॥

होरा साधन—

ओजे रवीन्द्वोः सम इन्दुरव्योर्होरे गृहार्धप्रमिते विचिन्त्ये ॥ ४०७ ॥

राश्यर्ध (१५ अंश) की एक होरा होती है प्रत्येक राशि में दो-दो होरा होती है। विषम राशियों में प्रथम १५° तक सूर्य की तथा पश्चात् १५° तक चन्द्रमा की होरा होती है। इसी प्रकार सम राशियों में प्रथम १५° अंश तक चन्द्रमा की तथा बाद (उत्तरार्ध) के १५° अंशों तक सूर्य की होरा होती है ॥४०७॥

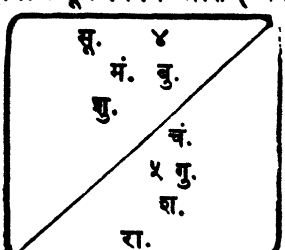
स्पष्टार्थ चक्र—

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या
०°–१५°	सूर्य ५	चन्द्र ४	सूर्य ५	चन्द्र ४	सूर्य ५	चन्द्र ४
१५°–३०°	चन्द्र ४	सूर्य ५	चन्द्र ४	सूर्य ५	चन्द्र ४	सूर्य ५
राशि	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
०°–१५°	सूर्य ५	चन्द्र ४	सूर्य ५	चन्द्र ४	सूर्य ५	चन्द्र ४
१५°–३०°	चन्द्र ४	सूर्य ५	चन्द्र ४	सूर्य ५	चन्द्र ४	सूर्य ५

उदाहरण—लग्नं ३।७।२।४०

सूर्य ०।१६।५०।४०	चन्द्र ३।२३।६।३३
भौम ५।०।४१।५२	बुध १।३।४०।१५
गुरु ६।१४।४५।१०	शुक्र ११।१३।८।३८
शनि ५।२६।६।६	राहु २।२३।१०।२८

लग्न कर्क (सम) राशि में १५ अंश से अल्प है अतः चन्द्रमा की होरा लग्न में होगी। सूर्य विषम राशि (मेष) में १६ अंश है। १५ अंश से अधिक होने से सूर्य भी चन्द्रमा की होरा में रहेगा। इसी प्रकार सभी ग्रहों का स्थापन होगा। होराचक्र में केवल दो ही कोष्ठ होते हैं एक में चन्द्र होरा दूसरे में सूर्य होरा होती है। इन्हीं दोनों में सभी ग्रहों का स्थापन होरा क्रम से होताहै।



होरा चक्र

द्रेष्काण साधन—

राशित्रिभागा द्रेष्काणास्ते च षट्त्रिंशदीरिताः।
परिवृत्तित्रयं तेषां मेषादेः क्रमशो भवेत् ॥ ४०८ ॥
स्वपञ्चनवपानां च विषमेषु समेषु च।
नारदागस्तिदुर्वासो-द्रेष्काणेशाश्चरादयः[1] ॥ ४०९ ॥

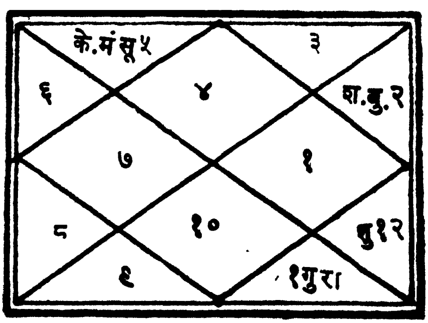
एक राशि (३०°) के तृतीयांश को द्रेष्काण कहते हैं। अतः १०° का एक-एक द्रेष्काण होता है। इस प्रकार एक राशि में ३ तथा १२ राशियों में ३६ द्रेष्काण होते हैं। इनकी गणना करनी हो तो सम-विषम दोनों राशियों में प्रथम द्रेष्काण अपनी राशि के स्वामी का, दूसरा अपनी राशि से पाँचवीं राशि के स्वामी का तथा तीसरा हो तो अपनी राशि से नवमराशि के स्वामी का द्रेष्काण होता है। चरादि राशियों के स्वामी क्रमशः नारद, अगस्ति एवं दुर्वासा हैं। अर्थात् चरराशियों के नारद, स्थिर राशियों के अगस्ति, तथा द्विस्वभाव राशियों के दुर्वासा स्वामी होते हैं ॥ ४०८, ४०९ ॥

द्रेष्काण बोधक चक्र

स्वामी	अंश	मे.	वृ.	मि.	क	सि.		तु	वृ	ध	म	कु.	मी.
नारद	०°–१०°	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
अगस्ति	१०°–२०°	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
दुर्वासा	२०°–३०°	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८

स्पष्ट लग्न कर्क राशि में ७ अंश पर है अतः प्रथम १० अंशों के अन्दर है अतः लग्न में अपनी राशि कर्क का ही द्रेष्काण होगा। सूर्य मेष राशि में १६° पर द्वितीय खण्ड (द्रेष्काण) में अतः अपनी राशि से पाँचवीं राशि सिंह के द्रेष्काण में हैं। चन्द्रमा कर्क के २३ अंश अर्थात् तृतीय खण्ड में अतः अपनी राशि नवम राशि मीन के द्रेष्काण में होगा। इसी प्रकार सभी ग्रहों का विचार करेंगे।

द्रेष्काण चक्र



1. बृहत्पाराशरा होरा ६.७–८

सप्तमांश साधन—

सप्तांशपास्त्वोजगृहे गणनीया निजेशतः ।
युग्मराशौ तु विज्ञेयाः सप्तमर्क्षादिनायकात् ॥ ४१० ॥
क्षारक्षीरौ च दध्याज्यौ तथेक्षुरससम्भवः ।
मद्य शुद्धजलावोजे समे शुद्ध जलादिकाः ॥ ४११ ॥

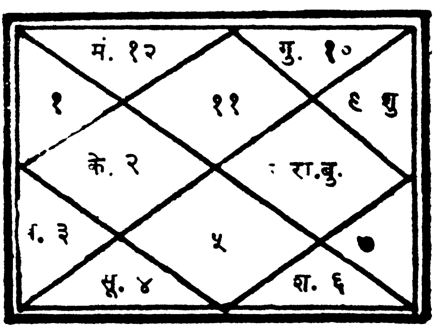
विषम राशियों में सप्तांशेश की गणना अपनी राशि से, सम राशियों में अपनी राशि से सप्तम राशि से गणना करनी चाहिये । तत्तद राशियों के स्वामी ही सप्तमांश के स्वामी होते हैं । विषम राशियां मे सात भागों के नाम क्रम से क्षार, क्षीर, दधि, आज्य, इक्षुरस, मद्य, शुद्धजल, सम राशियों में नाम क्रम से शुद्धजल, मद्य इक्षुरस, आज्य, दधि, क्षीर, क्षार (इन सप्त सागरों के नाम पर) कहे गये हैं ॥ ४१०–४११ ॥

सप्तमांश एक राशि के सातवें भाग को कहते हैं अतः $\frac{३०}{७}$=४°।१७' एक खण्ड का मान होता है । इसी प्रमाण से सात भाग करके जिस भाग में ग्रह या लग्न के अंश आवें उतनी संख्या तुल्य अग्रिम राशि में ग्रह या लग्न रहेगा । यदि सम राशि में ग्रह हो तो अपनी राशि से सातवें राशि से गणना होगी । सरलता हेतु चक्र प्रदर्शित है ।

सप्तमांश बोधक चक्र

अंश	मे.	वृ	मि.	क.	मि	क.	तु.	वृ.	धनु	म.	कु	मी.	नाम विषम	नाम सम
४-१७	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६	क्षार	शुद्ध जल
८-३४	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७	क्षीर	मद्य
१२-५१	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८	दधि	इक्षुरस
१७-८	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	घृत	घृत
२१-२५	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	इक्षुरस	दधि
२५-४२	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	मद्य	क्षीर
३०-००	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	शुद्ध जल	क्षार

सप्तमांश चक्र



उदाहरण—लग्न कर्क सम राशि में ७° है अतः द्वितीय खण्ड के अन्तर्गत है । समराशि होने से कर्क से सप्तम मकर राशि से गणना करेंगे । मकर से दूसरी राशि कुम्भ अतः सप्तमांश लग्न 'कुम्भ' है इसी प्रकार ग्रहों की भी गणना होगी ।

नवांशसाधन—

मेषाद्या धनुसिंहश्च मकराद्या वृषकन्ययोः।
तुलाद्या घटमिथुनश्च वृश्चिकमीनकुलीराद्याः ॥ ४१२ ॥

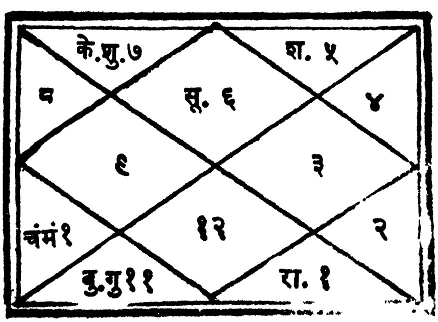
मेष से मेष सिंह धनु की, मकर से मकर, वृष, कन्या की, तुला से तुला, मिथुन; कुम्भ की, तथा कर्क से कर्क, वृश्चिक और मीन की नवांश गणना होती है।

एक राशि के ९ भाग करने पर ३°.२०' का एक भाग होता है। इस प्रकार नव भागों में विभक्तहोने से नवांश कहा जाता है। जिस भाग में ग्रह या लग्न हो उस भाव तक उक्त क्रम से गणना कर चक्र में रखने से नवमांश चक्र बनता है ॥ ४१२ ॥

नवांशबोधक चक्र—

अंश	मेष, सिंह, धनु	वृष, कन्या, मकर	मिथुन, तुला, कुम्भ	कर्क, वृश्चिक, मीन
३°.-२०'	१	१०	७	४
६°.४०'	२	११	८	५
१०°.००	३	१२	९	६
१३°.२०'	४	१	१०	७
१६°.४०'	५	२	११	८
२०°.००	६	३	१२	९
२३°.२०'	७	४	१	१०
२६°.४०'	८	५	२	११
३०°.००'	९	६	३	१२

नवमांश चक्र



उदाहरण—लग्न कर्क राशि में ७°।२' कला है जो तीसरे भाग में आता है। अतः कर्क राशि से तीसरी राशि कन्या नवांश लग्न होगी।

द्वादशांश साधन

द्वादशांशस्य गणना तत्तत्क्षेत्राद्विनिर्दिशेत् ।
तेषामधीशाः क्रमशो गणेशाश्वियमाहयः ॥ ४१३ ॥

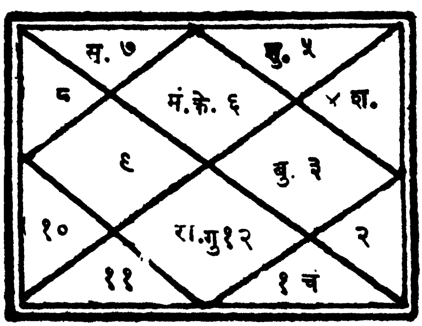
राशि के बारहवें भाग को द्वादशांश कहते हैं । ३०÷१२=२°·३०' का एक-एक भाग होता है । द्वादशांश की गणना अपनी-अपनी राशि से ही होती है । प्रथम भाग में लग्न या ग्रह तो उसी राशि में, उससे अग्रिम भागों में ग्रहों के अंश हों तो उतनी संख्या अपनी राशि से आगे बढ़ाकर ग्रह को रखना चाहिये । द्वादशांशों के स्वामी क्रम से गणेश, अश्विनी कुमार, यम और सर्प होते हैं ॥४१३॥

द्वादशांश बोधक चक्र

अंश	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	धनु	म.	कु.	मी.	स्वामी
२°·३०'	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	गणेश
५° ००'	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	अश्विनी कुमार
७·३०	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	यम
१०·०९	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	सर्प
१२·३०	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	गणेश
१५·००	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	अश्विनी कुमार
१७·३०	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	यम
२०·००	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	सर्प
२२·३०	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	गणेश
२५·००	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	अश्विनी कुमार
२७ ३०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	यम
३० ००	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	सर्प

द्वादशांश चक्र

उदाहरण—



त्रिशांश साधन—

कुजशनिजीवज्ञसिताः पञ्चेन्द्रियवसुमुनीन्द्रियांशानाम् ।
विषमेषु समर्क्षेषूत्क्रमेण त्रिशांशकाः कल्प्याः ॥ ४१४ ॥

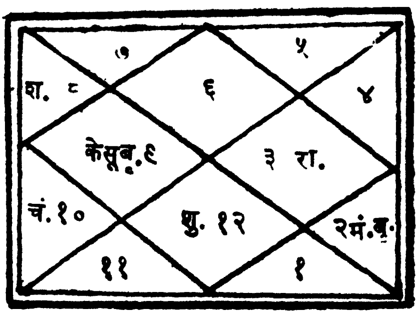
विषम राशियों के त्रिशांश ज्ञान हेतु ५, ५, ८, ७, ५, अंशों के पाँच भाग किये गये हैं तथा इन भागों के स्वामी क्रम से मंगल, शनि, गुरु, बुध, और शुक्र होते हैं। समराशियों में इससे विपरीत अर्थात् ५, ७, ८, ५, ५ भागों के स्वामी क्रम से शुक्र, बुध, गुरु, शनि और मंगल होते हैं ॥ ४१४ ॥

त्रिशांश के जिस भाग में लग्न या ग्रह के अंश आवें उस भाग के स्वामी ग्रह की राशि का त्रिशांश होता है। इन सभी ग्रहों की दो-दो राशियाँ होती हैं। अतः ग्रह विषम राशि में हो तो स्वामी ग्रह की विषम राशि, सम राशि में हो तो उक्त ग्रह की सम राशि में ग्रह या लग्न को रखना चाहिये।

त्रिशांश बोधक चक्र

विषम राशि					समराशि					
५	५	८	७	५	५	७	८	५	५	खण्ड
५	१०	१८	२५	३०	५	१२	२०	२५	३०	अंश
मं.	श.	बृ.	बु.	शु.	शु.	बु.	बृ.	श.	मं.	स्वामी ग्रह
१	११	९	३	७	२	६	१२	१०	८	राशि
अग्नि	वायु	इन्द्र	कुबेर	जलद	जलद	कुबेर	इन्द्र	वायु	अग्नि	स्वामी

त्रिशांश चक्र



उदाहरण—लग्न सम राशि के सात अंश पर अतः त्रिशांश का द्वितीय खण्ड है जिसका स्वामी बुध है। इसलिए बुध की समराशि 'कन्या' त्रिशांश लग्न हुई इसी प्रकार ग्रहों के अंशों से भी विचार करना चाहिये।

टिप्पणी—षड्वर्ग साधन में प्रायः बृहत्पाराशर होराशास्त्र के ही श्लोक यहाँ लिये गये हैं। एक दो स्थलों में पराशर को न लेकर वराह के पद्यों को लिया गया है। परिणामतः कहीं-कहीं पर वर्गों के स्वामियों का उल्लेख किया गया है कहीं-कहीं पर नहीं किया है। पराशर ने सभी-वर्गों के स्वामियों के नाम बताये हैं परन्तु वराह मिहिरादि अन्य आचार्यों ने स्वामियों का उल्लेख नहीं किया है।

होरा का फल—

होरागतोऽर्कस्य करोति चन्द्रो नरं सकामं वनितासकष्टम् ।
दोषात्मकं बन्धुजनैर्विमुक्तं सव्याधिदेहं रिपुवर्गगम्यम् ॥ ४१५ ॥

सूर्य की होरा में चन्द्रमा हो तो पुरुष कामी, स्त्री से कष्ट पाने वाला, दोष युक्त, बन्धुजनों से परित्यक्त, रोगयुक्त, तथा शत्रुओं के बीच रहने वाला होता है ॥ ४१५ ॥

सूर्यश्च होरां प्रगतो हिमांशोर्नरः प्रतापी विविधं च सौख्यम् ।
स्वबाहुसम्पादितवित्तपुष्टं जायास्वभावस्य मतिं करोति ॥ ४१६ ॥

चन्द्रमा की होरा में सूर्य चला जाय तो व्यक्ति प्रतापी, विविध सुखों से युक्त, अपने बाहुबल से अधिक सम्पत्ति का संग्रह करने वाला, स्त्रियों के स्वभाव के अनुकूल आचरण करने वाला होता है ॥ ४१६ ॥

धर्मिष्ठः सत्यवक्ता च गुरुदेवप्रपूजकः ।
उपार्जितार्थसम्भोगी होरायां सूर्यलक्षणम् ॥ ४१७ ॥

सूर्य की होरा में उत्पन्न व्यक्ति धार्मिक, सत्यवादी, गुरु और देवता का पूजन (सम्मान) करने वाला, अपने प्रयास से अर्जित धन का उपभोग करने वाला होता है ॥ ४१७ ॥

गान्धर्वसिद्धिं राज्यं च लक्ष्मीभुक् सदा सुखी ।
पुत्रपौत्रं च कल्याणं शतवर्षाणि जीवति ॥ ४१८ ॥

गन्धर्व विद्या की सिद्धि, राज्य लाभ, लक्ष्मी (धन) सुख का उपभोग करने वाला, सदैव सुखी, पुत्र-पौत्र एवं कल्याण (शुभ एव मंगल कार्यों से) युक्त, तथा सौ वर्षों तक जीवित रहने वाला होता है। (जिसके शुभग्रह सूर्य की होरा में स्थित हों) ॥ ४१८ ॥

क्रूराः सूर्यस्य होरायां धनधान्यविभूतिदाः ।
आचारसत्यशीलाढ्यो रोगाङ्गो नृपवल्लभः ॥ ४१९ ॥

सूर्य की होरा में यदि क्रूर ग्रह हों तो व्यक्ति धन-धान्य से सम्पन्न, आचार एवं सत्यपरायण, रोगी, तथा राजा का प्रियपात्र होता है ॥ ४१९ ॥

शुभाश्चेच्चन्द्रहोरायां कामिनीप्रेमवाञ्नरः ।
शीघ्रं मैथुनगामीति चिरं सेवेत कामिनीम् ॥ ४२० ॥

चन्द्रमा की होरा में यदि शुभ ग्रह हो तो मनुष्य स्त्री में अनुराग रखने वाला, शीघ्र (थोड़े अन्तराल में अर्थात् बार-बार) मैथुन (स्त्री सहवास) करने वाला तथा अधिक समय तक स्त्रियों के संसर्ग में रहनेवाला होता है ॥ ४२० ॥

यदि सूर्यस्य होरायां कठिनश्चायश्च सम्भोगः ।
पापैः सर्वैर्बलवान् जितेन्द्रियो मानवो भवति ॥ ४२१ ॥

सभी बलवान पापग्रह यदि सूर्य की होरा में हों तो अत्यन्त कठिनाई से सम्भोग करने वाला तथा जितेन्द्रिय मनुष्य होता है ॥ ४२१ ॥

कर्कटे चन्द्रहोरायां मर्त्यः सुन्दरमुत्तमम् ।
कामिनीनां प्रियं चैव जनयेत्पुत्रमीदृशम् ॥ ४२२ ॥

चन्द्रमा की होरा कर्क राशि में जन्म हो तो मनुष्य सुन्दर, श्रेष्ठ तथा स्त्रियों के लिए प्रिय पुत्र को जन्म देता है ॥ ४२२ ॥

बुधः करोति विख्यातं साध्वीपत्नीपतिं शुभम् ।
जीवः करोति विधनं तेजस्विनमनिन्दितम् ॥ ४२३ ॥

(चन्द्र होरा में स्थित) बुध हो तो जातक को विख्यात, साध्वी स्त्री का पति एवं कल्याण कारक बनाता है । यदि बृहस्पति हो तो निर्धन तेजस्वी और निष्कलङ्क करता है ॥ ४२३ ॥

भोग्यपत्नीपतिं शुक्रः क्षीणश्चन्द्रोऽपि शुक्रवत् ।
जनयेत् कर्कटे भौमे मृतस्त्रीकं नराधमम् ॥ ४२४ ॥

कर्क राशि (चन्द्रमा की होरा) में शुक्र हो तो भोग्य (अर्थात् सद्गुण सम्पन्न होने से ग्राह्य) स्त्री का पति होता है । यदि क्षीण चन्द्रमा अपनी होरा में हो तो शुक्र सदृश फल (अर्थात् सुयोग्य स्त्री) प्राप्त करता है । यदि कर्क की होरा में मंगल हो तो स्त्री की मृत्यु होती है तथा वह व्यक्ति अत्यन्त पतित होता है ।४२४।

रविर्दुःखितमत्यन्तं पीडितं गुह्यपीडितम् ।
शनिर्दासीपतिं कुर्यात्कर्कटस्थो न संशयः ॥ ४२५ ॥

कर्क की होरा में सूर्य हो तो अत्यन्त दुखी, पीडित, गुप्त रोग से ग्रस्त तथा यदि शनि हो तो दासी स्त्री का पति होता है इसमें सन्देह नहीं ॥ ४२५ ॥

स्वहोरायां रविः कुर्याद्विद्वांसं दृष्टपौरुषम् ।
जितेन्द्रियं च शूरं तमुद्यमे धृतमानसम् ॥ ४२६ ॥

अपनी होरा (सिंह राशि) में यदि सूर्य हो तो जातक विद्वान, दृढ़ पौरुष वाला, जितेन्द्रिय, शूर, उद्योग में अपना मन लगाने वाला होता है ॥ ४२६ ॥

सूर्यहोरागतो भौमो धीरं जातं सतां प्रियम् ।
शूरं ख्यातं धनाढ्यं च सन्मित्रं प्राप्तसम्पदम् ॥ ४२७ ॥

सूर्य की होरा में गया हुआ मंगल जातक को धैर्यवान् सज्जनों का प्रिय,

शूर, विख्यात, धनाढ्य, अच्छे मित्रों से युक्त करता है तथा सम्पत्ति दिलाता है ॥ ४२७ ॥

कण्ठीरवस्य होरायां चन्द्रे नीचमनारतम् ।
बुधे दारिद्र्यपिशुनं जीवे रोगमृतंतकम् ।
शुक्रेऽगम्यामर्ति कुर्याद्वृषली च यमाश्रितः[1] ॥ ४२८ ॥

सिंह (सूर्य) की होरा में चन्द्रमा हो तो जातक नीच कर्म में लीन, बुध हो तो दरिद्र और चुगुलखोर, गुरु हो तो गम्भीर रोग से मृत्यु, शुक्र हो तो अगम्यागमन (रोगिणी, वृद्धा, वेश्या आदि कुत्सित स्त्रियों के साथ समागम) करने वाला, तथा शनि हो तो वृषली[2] (शूद्रा अथवा चिरकाल तक अविवाहित कन्याका) पति होता है ॥ ४२८ ॥

द्रेष्काण का फल

यादृग्द्रेष्काणगाः सौम्या उच्चस्था च स्ववर्गगाः ।
नित्यं भुञ्जयते लक्ष्मीर्वरदाः सत्यवादिनी ॥ ४२९ ॥

जिस किसी द्रेष्काण में सौम्य (शुभ) ग्रह अपनी उच्च राशि अथवा अपने वर्ग (गृह, मूल त्रिकोण षड्वर्ग) में स्थित हो तो जातक नित्य सत्यवादिनी एवं वरदान देने वाली लक्ष्मी का उपभोग करता है ॥ ४२९ ॥

द्रेष्काणयातः प्रकरोति सौम्यः केन्द्रत्रिकोणोपगतो बलिष्ठः ।
द्रव्याधिकं मानगुणैः समेतं विद्यान्वितं सर्वकलासु दक्षम् ॥ ४३० ॥

अपने द्रेष्काण में गया हुआ शुभग्रह यदि केन्द्र अथवा त्रिकोण में भी स्थित हो तथा बलवान हो तो जातक, अधिक द्रव्य, सम्मान, गुण, एवं विद्या से युक्त तथा सभी कलाओं में निपुण होता है ॥ ४३० ॥

द्रेष्काणपे सौम्यगते निरीक्षिते शुक्रेक्षिते स्याद्विविधं च सौख्यम् ।
आरोग्यतां मानयशोऽभिवृद्धि स्वदेशकर्मप्रकटं विरुद्धम् ॥ ४३१ ॥

यदि द्रेष्काण का स्वामी शुभग्रह की राशि में स्थित हो या दृष्ट हो अथवा शुक्र से दृष्ट हो तो विविध प्रकार के सुखों से युक्त, निरोग होता है। अपने देश के कार्यों द्वारा सम्मान एवं यश में वृद्धि होती है। परन्तु स्वभाव से विरोधी होता है ॥ ४३१ ॥

---

१. भार्ययाश्रितम् पाठान्तरम्

२. पितुर्गेहे च या नारी रजः पश्यत्यसंस्कृता ।
भ्रूणहत्या पितुस्तस्या सा कन्या वृषली स्मृता ॥

द्रेष्काणनाथे शशिसंयुतेक्षिते भौमेक्षिते वा भृगुनन्दनेन।
वयःप्रमाणेन फलेद्धि कर्म धर्मं धनं स्याद्विविधप्रकारम् ॥ ४३२ ॥

द्रेष्काण का स्वामी चन्द्रमा से युत दृष्ट हो अथवा मंगल या शुक्र से दृष्ट हो तो अपनी आयु के अनुरूप कर्म एवं धर्माचरण से विविध प्रकार के धन को प्राप्त करता है ॥ ४३२ ॥

द्रेष्काणः केन्द्रगः कुर्यादुच्चस्थो नृपति गृहे।
स्वक्षेत्रस्य स्वभूतार्थं मैत्रे सन्मानमागमम् ॥ ४३३ ॥

द्रेष्काण का स्वामी अपनी उच्च राशि में स्थित होकर केन्द्र में गया हो तो जातक राजा के समान, अपनी राशि में हो तो धनवान्, मित्र ग्रह की राशि में हो तो सम्मानित होता है तथा मित्रों का समागम होता रहता है ॥ ४३३ ॥

तथा पणफरस्थाने स्वमित्रोच्चगृहाश्रयः।
सन्मित्रं पार्थिवं तद्वद्धनिनं कुरुते नरम् ॥ ४३४ ॥

उसी प्रकार (अर्थात् द्रेष्काण का स्वामी) यदि पणफर (द्वितीय, पञ्चम, अष्टम, एकादश) स्थानों में अपने मित्र ग्रह को उच्च राशि में हो तो जातक अच्छे मित्रों से युक्त, राजा अथवा राजा के समान धनवान होता है ॥ ४३४ ॥

आपोक्लिमे च व्युत्पन्नो मित्रस्वगृहगस्त्वसौ।
अपत्यं हि सदाचारं कृषितः प्राप्तवित्तकम् ॥ ४३५ ॥

द्रेष्काण का स्वामी यदि आपोक्लिम (तृतीय, षष्ठ, नवम, द्वादश) भवनों में अपनी राशि अथवा मित्रग्रह की राशि में गये हों तो वह व्यक्ति व्युत्पन्न (अत्यन्त बुद्धिमान्), सदाचारी पुत्रों से युक्त तथा कृषि द्वारा धन प्राप्त करने वाला होता है ॥ ४३५ ॥

शत्रुनीचाश्रिता ये च तेषां तत्तुल्यके तनौ।
व्रणे वातादिकं चापि वदेत्तदनुपूर्वकम् ॥ ४३६ ॥

जो द्रेष्काणेश अपनी शत्रुराशि अथवा नीच राशि में स्थित होकर आपोक्लिम में गये हों तो उस राशि से सम्बन्धित अंगो में व्रण (चोट, या फोड़ा), वातविकार (वायुजनित पीड़ा), आदि इसी प्रकार के कष्ट होते है ॥ ४३६ ॥

सप्तमांश का फल—

सप्तांशपे चन्द्रयुते च दृष्टे सौम्येक्षिते चेत्स सहोदरः स्यात्।
अत्युग्रताकान्तियशोऽर्थवृद्धिर्मित्राधिको मैत्रयुतः प्रगल्भः ॥ ४३७ ॥

सप्तमांश का स्वामी चन्द्रमा से युत-दृष्ट हो अथवा शुभग्रहों से दृष्ट हो तो

जातक सहोदर (सगे) भाइयों से युक्त, उग्र स्वभाव वाला, कान्ति युक्त, यश में वृद्धि, मित्रों की अधिकता होती है तथा मित्रों से युक्त होकर उद्धत स्वभाव का होता है ॥ ४३७ ॥

सप्तांशके च ये खेटा नीचस्था रविवर्जिताः ।
तेषां बलवतो ज्ञेया बन्धूनां चिन्तया स्थितिः ॥ ४३८ ॥

सूर्य को छोड़ कर शेष ग्रहों में जितने ग्रह सप्तमांश में नीच राशि गत हों उनमें जो सर्वाधिक बलवान हो उसी से भाइयों से सम्बन्धित चिन्ता का ज्ञान करना चाहिये ॥ ४३८ ॥

वर्गेऽन्तिमांशे ये खेटा उच्चस्था वा स्ववर्गगाः ।
आश्वादिवाहने दक्षः शूरो बन्धुविवर्जितः ॥ ४३९ ॥

वर्ग (सप्तमांश) के अन्तिम अंशों में यदि अपनी उच्च राशि या अपने वर्ग में स्थित हों तो वह व्यक्ति घोड़ों की सवारी में निपुण, शूर, तथा भाइयों से रहित होता है ॥ ४३९ ॥

नृपपूज्यो भवेन्नित्यं सर्वकार्यार्थसम्पदा ।
सप्तवर्गग्रहाश्चैवमुच्चस्थाः शुभवर्गगाः ॥ ४४० ॥

सप्तमांश में ग्रह अपनी उच्चराशि अथवा शुभ वर्गों की राशियों में स्थित हों तो जातक राजा द्वारा निरन्तर पूजित (सम्मानित), सभी प्रकार के कार्यों में सफल एवं धन सम्पत्ति से सम्पन्न होता है ॥ ४४० ॥

सप्तांशे मातृभवने रविर्जीवश्च भूमिजः ।
पश्चाज्जातं पितुः पुत्रं शुक्रज्ञशशिनः सुताः ॥ ४४१ ॥

सप्तमांश में यदि चतुर्थ भाव में सूर्य, गुरु और मंगल स्थित हों तो पिता की मृत्यु के पश्चात् पुत्र का जन्म होता है, यदि शुक्र, बुध और चन्द्रमा बैठे हों तो कन्या की उत्पत्ति होती है ॥ ४४१ ॥

उच्चस्थक्षेत्रगाः खेटाः सप्तांशे निखिला स्थिताः ।
महाधनी च भवति नीचस्थे च दरिद्रकः ॥ ४४२ ॥

(जिसके जन्म समय में) सभी ग्रह सप्तमांश में अपनी-अपनी उच्च राशियों में स्थित हो तो वह महान धनवान, तथा सभी ग्रह नीच राशियों में स्थित हो तो दरिद्र होता है ॥ ४४२ ॥

नवमांश का फल

गुरोर्नवांशे विचरंश्छशाङ्को नरं प्रसूते बहुवित्तयुक्तम् ।
पुत्रान्वितं पुण्यधनैरुपेतं प्रियातिथिं सर्वजनाभिरामम् ॥ ४४३ ॥

बृहस्पति के नवमांश में चन्द्रमा हो तो मनुष्य जन्मजात धनवान्, पुत्रों से युक्त, पुण्यवान, धन (स्वोपार्जित धन) से सम्पन्न अतिथियों का प्रेमी तथा सभी लोगों का प्रिय होता है ।। ४४३ ।।

सन्मित्रदाराधनमित्रसौख्यं श्रेष्ठप्रतीष्ठाप्तिविराजमानम् ।
नरं प्रकुर्यात्सुरराजमन्त्री नवांशके स्वे सुखसम्पदा स्यात् ।। ४४४ ।।

बृहस्पति अपने ही नवांश मे हो तो मनुष्य अच्छे मित्रों, स्त्री, धन तथा मित्रों के सुख से युक्त, उत्तम प्रतिष्ठा एवं सुख सम्पदा से सम्पन्न होता है ।।४४४।।

नीचस्त्रीकं च नीचस्थे भावेशे निजतुङ्गगे ।
कुर्यान्नृपं नवांशे तु स्वनवांशे तदाधिपम् ।। ४४५ ।।

भावेश नवमांश मं यदि नीच राशि में स्थित हो तो उसकी स्त्री नीच प्रकृति वाली होती है। यदि भावेश उच्च राशि के नवमांश में हो तो राजा तथा अपने ही नवमांश में हो तो राजाओं का भी अधिपति हो जाता है ।। ४४५ ।।

सेनानीर्मित्रनवांशे भोगगुणसंयुतश्च ।
शत्रुनवांशे दुःखितमत्यन्तमलीमसम् ।। ४४६ ।।

मित्र के नवमांश में यदि कोई ग्रह हो तो जातक सेनापति धनवान तथा गुणवान् होता है। यदि शत्रुग्रह की राशि में हो तो दुखी तथा अत्यन्त पापी होता है ।। ४४६ ।।

नीचांशेऽपि दासत्वं दशां प्राप्य फलं भवेत् ।
सर्वमेवं खगैश्चिन्त्यं फलं वाच्यं विचक्षणैः ।। ४४७ ।।

ग्रह यदि नीच राशि के नवमांश में हो तो दासत्व, अर्थात् छोटे स्तर की नौकरी होती है। इस प्रकार ग्रहों की दशा प्राप्त होने पर उनसे सम्बन्धित फल भी प्राप्त होता है। ग्रहों की स्थिति द्वारा फलादेश विद्वानों को करना चाहिये ।। ४४७ ।।

नवमांश चक्र मे पञ्चमभावस्थ ग्रह का फल—

एकत्रिपञ्च पुत्राः स्युर्धीस्थे तुर्ये कुजे गुरौ ।
द्विचतुःषट्सप्तसंख्यपुत्रदा ज्ञसितौ शनिः ।। ४४८ ।।

यदि नवमांश चक्र के पञ्चम भाव में मंगल तथा चतुर्थ में गुरु हो तो एक, तीन, अथवा पाँच पुत्र होते हैं। यदि बुध, शुक्र और शनि हो तो दो, चार, छः, अथवा सात पुत्र होंगे ।। ४४८ ।।

तृतीयसिंहं सुतजीवकेतू षष्ठः शनिः सूर्यकलत्रसंस्थः ।
धर्मे च राहुर्दशमे च भौमः सन्तानहानिश्च भवेन्नराणाम् ।। ४४९ ।।

नवांश कुण्डली में तृतीय भाव में सिंह राशि (अर्थात् मिथुन का नवांश लग्न में) हो, पञ्चम भाव में बृहस्पति और केतु हों, छठें भाव में शनि, सप्तम में सूर्य, केन्द्र में राहु तथा दशम भाव में भौम बैठा हो तो सन्तान हानि होती है ॥ ४४९ ॥

ग्रहः क्रूरो व्ययाधीशो धर्मारिसहजे व्यये ।
मृत्यौ वक्रः सुतस्थाने जातको म्रियते ध्रुवम् ॥ ४५० ॥

नवांश लग्न से बारहवें स्थान का अधिपति क्रूर ग्रह हो और वह ९, ६, ३, १२, ८ वें भाव में स्थित हो तथा मंगल पाँचवें भाव में हो तो निश्चित रूप से उत्पन्न सन्तान नष्ट हो जाती है ॥ ४५० ॥

यावत्संख्या ग्रहाणां सुतभवनगता पूर्णदृष्टिर्यदा वा
तावत्संख्या प्रसूतिर्भवति बलयुताः पुंग्रहाः पुत्रकथ्यम् ।
कन्या चन्द्रश्च शुक्रो हितसुतरविजो गर्भहानिं करोति
केचिच्चन्द्राद्विचार्यं मुनिगणकथितं तद्विचिन्त्यं नवांशे[1] ॥ ४५१ ॥

जितने बलवान पुरुष ग्रह नवांश लग्न से पञ्चम भाव में गये हों अथवा पञ्चम भाव को पूर्ण दृष्टि से देखते हों उतने ही पुत्र सन्तान कहना चाहिये । यदि पञ्चम भाव में चन्द्रमा, शुक्र और बुध हों अथवा पूर्ण दृष्टि से पञ्चम भाव को देखते हों तो कन्या सन्तति होती है । यदि शनि पञ्चम में बैठा हो या देखता हो तो गर्भ नष्ट हो जाता है । कुछ मुनियों का मत है कि सन्तान का विचार चन्द्रमा के नवांश से करना चाहिये ॥ ४५१ ॥

द्वादशांश का फलः

ग्रहाश्चेद् द्वादशे भागे मित्रोच्चसमवस्थिताः ।
बहुस्त्रीस्वधिकारी स्यान्नाना-ऋद्धिसमन्वितः ॥ ४५२ ॥

द्वादशांश में यदि ग्रह अपने मित्र, ग्रह की राशि में या उच्च राशि में स्थित हो तो बहुत सी स्त्रियों का अधिपति तथा विविध प्रकार की सम्पत्तियों से युक्त होता है ॥ ४५२ ॥

अशीतिचतुराशीतिषडशीत्यगससकम् ।
अष्टौ पञ्च षष्टिषट्पञ्चाशच्चैव सप्ततिः ॥ ४५३ ॥
नवत्यंगाधिकाषष्टिषट्पञ्चाशच्छतं तथा ।
उक्तमायुः प्रमाणेन द्विरसांशैकभेदतः ॥ ४५४ ॥

प्रथम, द्वितीय, तृतीय आदि बारह द्वादशांशों में उत्पन्न होने वाले व्यक्तियों के आयु-प्रमाण क्रम से ८०, ८४, ८६, ७७, ८५, ६०, ५६, ७०, ९०, ६६, ५६,

१. इस पद्य में अशुद्धि है अतः आचार्य को जो अभीष्ट था उसी भाव को अनुवाद में प्रस्तुत किया गया है ।

१००, वर्ष कहे गये हैं। (द्वादशांश भेद से उक्त फल को जानने के लिए जन्म लग्न के द्वादशांश को ही व्यवहार में लाना चाहिये) ॥ ४५३-५४ ॥

जलेनाष्टादशे वर्षे सर्पेण नवमे पुनः।
परेण दशमे चैव द्वात्रिंशे राजयक्ष्मणा ॥ ४५५ ॥

(उक्त पूर्णायु के मध्य में अरिष्ट काल कारण सहित बता रहे हैं) जो क्रम से द्वादशांशो के अनुसार हैं प्रथम द्वादशांश मे उत्पन्न व्यक्ति को १८ वें वर्ष में जल से भय, द्वितीय द्वादशांश में सर्प से नवम वर्ष मे, तृतीय में दशवें वर्ष में शत्रु से, तथा चतुर्थ द्वादशांश में ३२ वें वर्ष मे राजयक्ष्मा से कष्ट होता है ॥ ४५५ ॥

विंशे रक्तप्रकोपेण द्वाविंशे वह्निना तथा।
अष्टाविंशत्तमे वर्षे जलोदरभयं तथा ॥ ४५६ ॥

पाँचवें द्वादशांश में जन्म हो तो २० वें वर्ष में रक्त दोष से, षष्ठ द्वादशांश में अग्नि से २२ वें वर्ष में, सातवें में २८ वें वर्ष में जलोदर रोग से कष्ट होता है ॥ ४५६ ॥

व्याघ्रात्त्रिंशत्तमे वर्षे शरघातेन दन्तके।
जलेन वातपीडाभिर्मरणं त्रिंशदब्दके ॥ ४५७ ॥

आठवें द्वादशांश में जन्म हो तो ३० वें वर्ष में व्याघ्र से भय, नवम द्वादशांश में ३२ वें वर्ष में शर (बाण) से चोट, तथा दशवें में ३० वें वर्ष में जल तथा वायु पीड़ा से मृत्यु होती है ॥ ४५७ ॥

स्त्रीकन्यामरणं विद्यात्त्रिंशद्वर्षेऽप्सु मज्जनात्।
चक्रेण मरणं प्राहुरूनत्रिंशे ततो नरः।
पूर्वोक्तमायुः प्राप्नोति सत्यमेतन्मयोदितम् ॥ ४५८ ॥

एकादश द्वादशांश में जन्म हो तो ३०वें वर्ष में जल में डूबने से स्त्री और कन्या की मृत्यु, बारहवें द्वादशांश में जन्म हो तो २९ वें वर्ष में गाड़ी के चक्र (पहिया) में दबने से मृत्यु का भय होता है। इन कष्टों से बचकर ही मनुष्य पूर्वोक्त पूर्णायु का भोग करता है। इस प्रकार जो कुछ मैंने कहा वह सत्य है ॥ ४५८ ॥

अरिष्ट बोधक चक्र—

द्वादशांश	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
पूर्णायु	८०	८४	८६	७७	८५	६८	५६	७०	६०	६६	५६	१००
अरिष्टकाल	१८	९	१०	३२	२०	२२	२८	३०	३२	३०	३०	२९
हेतु	जल	सर्प	शत्रु	राजयक्ष्मा	रक्तदोष	अग्नि	जलोदर	व्याघ्र	शर (बाण)	जल वायु पीड़ा	जल से स्त्री पुत्र कन्या को भय	चक्र (गाड़ी) का चक्का

त्रिशांश फल

त्रिशांशके च ये खेटा मित्रोच्चसमवस्थिताः ।
सर्वकार्यकृतोत्साही धर्मिष्ठः कृतपूजितः ॥ ४५९ ॥

त्रिशांश में जो ग्रह अपने मित्र ग्रह की राशि में उच्चग्रह की राशि में स्थित हों वे जातक को सभी कार्यों में उत्साही, धार्मिक तथा सम्मानित बनाते हैं ।४५९।

सत्त्वं रजस्तमो वा त्रिशांशे यस्य भास्करस्तादृक् ।
बलिनः सदृशी मूर्तिर्बुद्ध्वा वा जातिकुलदेशान् ॥ ४६० ॥

त्रिशांश में सत्त्व; रज, और तम गुणों वालों जैसे दीप्त एवं बलवान ग्रह पड़े हों उसी के अनुसार तथा जाति, कुल और देश के अनुसार जातक का स्वरूप एवं आचरण का ज्ञान करना चाहिये ॥ ४६० ॥

गुरुरविशशिनः सत्त्वं रजस्सितज्ञौ तमोऽर्कसुत भौमौ ।
एते ह्यात्मसमानाः प्रकृतीस्तेभ्यः प्रयच्छन्ति ॥ ४६१ ॥

गुरु, सूर्य और चन्द्र सत्त्व गुण युक्त, शुक्र और बुध रजोगुण युक्त, शनि और मंगल तमोगुण युक्त होते हैं । ये सभी ग्रह अपनी-अपनी प्रकृति के अनुसार ही जातक को फल देते हैं ॥ ४६१ ॥

यः सात्त्विकस्तस्य दया स्थिरत्वं सत्यार्जवं ब्राह्मणदेवभक्तिः ।
रजोऽधिकः काव्यकरः कुलस्त्रीसमग्रचित्तः पुरुषोऽतिशूरः ॥ ४६२ ॥

जो सात्त्विक ग्रह होता है उसमें दया स्थिरता, सत्यवादिता, सरलता, ब्राह्मण और देवों में भक्ति होती है । रजोगुणी ग्रह प्रधान पुरुषों में काव्य कला, कुलस्त्री (पत्नी) में आसक्ति, तथा अत्यन्त वीरता होती है ॥ ४६२ ॥

तमोऽधिके वञ्चयते परेषां मूर्खोऽलसः क्रोधपरोऽतिनिद्रः ।
मिश्रैर्गुणैः सत्त्वरजस्तमोभिर्मिश्रोच्यते सोपि बहुप्रभेदा ॥ ४६३ ॥

इति श्रीमानसागरीपद्धतौ तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

तमोगुण प्रधान पुरुष दूसरों को धोखा देन वाले, मूर्ख, आलसी, क्रोधी तथा अधिक सोने वाले होते हैं । मिश्रित गुण हो (सत्त्व-रज-तम तीनों आंशिक रूप में एकत्र हो) तो सत्त्व-रज-तम की मात्रा के अनुसार बहुत से भेद होंगे । तथा उनका तीनों गुणों के मिश्रित फल के अनुसार ही आचरण होगा ॥ ४६३ ॥

मानसागरी पद्धति के तृतीय अध्याय का मनोरमा
नामक हिन्दी अनुवाद समाप्त ॥ ३ ॥

चतुर्थोऽध्यायः

ये महापुरुषसंज्ञकाः शुभाः पञ्च पूर्वमुनिभिः प्रकीर्तिताः ।
वच्मि तान् सरलकोमलोक्तिभिः राजयोगविधिदर्शनेच्छया ॥ १ ॥

महापुरुष संज्ञक जिन पाँच शुभ योगों का वर्णन प्राचीन मुनियों ने किया है उन योगों को राजयोग विधि प्रदर्शन की इच्छा से सरल एवं कोमल (ललित) उक्तियों द्वारा कह रहा हूं ॥ १ ॥

पञ्चमहापुरुषलक्षण—

स्वगेहतुङ्गाश्रयकेन्द्रसंस्थैरुच्चोपगैर्वावनिसूनुमुख्यैः ।
क्रमेण योगा रुचकाख्यभद्रहंसाख्यमालव्यशशाभिधानाः ॥ २ ॥

भौमादि पाँच ग्रह अपनी-अपनी राशि में या अपनी उच्चराशि में स्थित होकर केन्द्र स्थानों (१, ४, ७, १०) में गये हों तो प्रत्येक ग्रह द्वारा क्रम से रुचक, भद्र, हंस, मालव्य और शश नामक पाँच महा पुरुषयोग होते हैं । (अर्थात् केन्द्र में स्थित मंगल मेष, वृश्चिक या मकर राशि में हो तो रुचक, बुध, मिथुन, कन्या में हो तो भद्र, गुरु, कर्क, धनु और मीन में हो तो हंस, शुक्र, वृष, तुला और मीन में हो तो मालव्य, शनि, तुला, मकर और कुम्भ में हो तो शश नामक योग होता है ॥ २ ॥

रुचक योग का फल—

दीर्घायुः स्वच्छकान्तिर्बहुरुधिरबलः साहसप्राप्तसिद्धि-
श्चारुभ्रूनीलकेशः समकरचरणो मन्त्रविच्चारुकीर्त्तिः ।
रक्तः श्यामोऽतिशूरो रिपुबलमथनः कम्बुकण्ठो महौजाः
क्रूरो भक्तो नराणां द्विजगुरुविनतः क्षामजानूरुजङ्घः ॥ ३ ॥

रुचक नामक योग में उत्पन्न व्यक्ति दीर्घायु, निर्मलकान्ति, अधिक रक्त एवं बल से युक्त, साहस के द्वारा सिद्धि प्राप्त करने वाला, सुन्दर भौं, नीले रंग के बाल, सुन्दर सुगठित हाथ-पैरों वाला, मन्त्र का ज्ञाता, सुन्दर यश से सम्पन्न, रक्त-श्याम वर्ण वाला, अत्यधिक बलवान्, शत्रुओं की सेना को रौंदने वाला, शंख की तरह कण्ठ, महान आत्मा, स्वभाव से क्रूर, भक्त, ब्राह्मण और गुरु के प्रति विनम्र तथा कृश, दुर्बल उरु, घुटना और जांघो वाला होता है ॥ ३ ॥

खट्वाङ्गपाशवृषकार्मुकचक्रवीणाविन्नाङ्कहस्तचरणः सरलाङ्गुलिः स्यात् ।
मन्त्राभिचारकुशलस्तुलयेत्सहस्रं मध्यं च तस्य गदितं मुखदैर्घ्यतुल्यम् ॥ ४ ॥

(रुचक योग में उत्पन्न व्यक्ति के) हाथ और पैर में खट्वाङ्ग (मुग्दाकृति सदृश अस्त्र), पाश, बैल, धनुष, चक्र, अथवा वीणा के स्पष्ट चिह्न होते हैं। अँगुलियाँ सीधी, मन्त्रविद्या एवं अभिचार (मारण-उच्चाटन आदि) क्रियाओं का ज्ञाता, हजारों व्यक्तियों की तुलना स्वयं अकेले करने वाला, मुख की लम्बाई तुल्य मध्य भाग (कटि प्रदेश) वाला होता है ॥ ४ ॥

सह्यस्य विन्ध्यस्य तथोज्जयिन्याः प्रभुः खरत्सप्ततिरायुरस्य ।
शस्त्राग्निचिह्नो रुचकाभिधाने देवालयान्ते निधनं प्रयाति ॥ ५ ॥

रुचक नामक योग में उत्पन्न व्यक्ति, सह्य पर्वत, विन्ध्यपर्वत तथा उज्जैन के (आसन्न) प्रदेश का राजा (अथवा स्वामी), शस्त्र एवं अग्नि के चिह्नों से युक्त होता है तथा ७० वर्ष की आयु में देवालय (तीर्थ स्थान) में मृत्यु होती है ॥ ५ ॥

भद्रयोग का फल—

शार्दूलप्रतिमाननो द्विपगतिः पीनोरुवक्षःस्थलो ।
रम्या पीनसुवृत्तबाहुयुगलस्तत्तुल्यगात्रोच्छ्रयः ।
कामी कोमलसूक्ष्मरोमनिचयैः संरुद्धगण्डस्थलः ।
प्राज्ञः पङ्कजगर्भपाणिचरणः सत्त्वाधिको योगवित् ॥ ६ ॥

भद्र योग में उत्पन्न व्यक्ति का मुख व्याघ्र की तरह, गति हाथी की तरह, विशाल वक्षस्थल, सुन्दर, दृढ गोलाकार दोनों बाहु, दोनों भुजाओं के तुल्य ऊँचाई, कामी, कोमल पतले रोम समूह से ढके कपोलों वाला, बुद्धिमान्, कमल नाल की तरह हाथ-पैरों वाला, सत्त्वगुण प्रधान तथा योगशास्त्र का ज्ञाता होता है ॥ ६ ॥

शङ्खासिकुञ्जरगदाकुसुमेषुकेतुचक्राब्जलांगलविचिह्नितपाणिपादः ।
यात्रागजेन्द्रमदवारिकृतार्द्रभूमिः सत्कुङ्कुमप्रतिमगन्धतनुः सुघोषः ॥ ७ ॥

भद्र योग में उत्पन्न व्यक्ति के हाथो एवं पैरों में शंख, तलवार, हाथी, गदा, पुष्प, बाण, पताका चक्र, कमल तथा हल का चिह्न होता है। उसके शरीर से उत्तम कुंकुम के समान सुगन्ध निकलती है तथा उसकी वाणी बहुत मधुर होती है। उसके यात्रा काल में गजेन्द्रों के मदश्राव से भूमि आर्द्र (गीली) हो जाती है (अर्थात् उसके साथ हाथियों का समूह चलता है) ॥ ७ ॥

संभ्रू युगोऽतिमतिमान् खलु शास्त्रवेत्ता
मानोपभोगसहितोऽपि निगूढगुह्यः ।
सत्कुक्षिधर्मनिरतः सुललाटपट्टो
धीरो भवेदसितकुञ्चितकेशपाशः ॥ ८ ॥

दोनों भौंह (भ्रुव) सुन्दर, अत्यन्त बुद्धिमान्, शास्त्रज्ञ, सम्मान और उपभोग की सुविधाओं से सम्पन्न होते हुये अपने रहस्यों को गुप्त रखने वाला, सुन्दर

पार्श्व भाग से युक्त, धर्म में संलग्न, सुन्दर ललाट वाला, धैर्यवान् तथा काले-घुंघराले बालों से युक्त भद्र पुरुष होता है ॥ ८ ॥

स्वतन्त्रः सर्वकार्येषु स्वजनं प्रति न क्षमी ।
भुज्यते विभवस्तस्य नित्यमर्थिजनैः परैः ॥ ९ ॥

भद्र पुरुष सभी कार्यों में स्वतन्त्र, आत्मीय जनों को क्षमा न करने वाला होता है परन्तु अन्य धन के इच्छुक लोग उसकी सम्पत्ति का उपभोग करते हैं ॥ ९ ॥

भारं तुलायां तुलयेत्प्रयत्नैः श्रीकान्यकुब्जाधिपतिर्भवेत्सः ।
भद्रोद्भवः पुत्रकलत्रसौख्यो जीवेन्नृपालः शरदामशीतिम् ॥ १० ॥

भद्रयोग मे उत्पन्न व्यक्ति कान्यकुब्ज (कन्नौज) का अधिपति होता है तथा प्रयत्नपूर्वक भार (सोने की विशेष मात्रा) को तराजू में तोलता है । पुत्र एवं स्त्री के सुखों से सम्पन्न उस राजा की आयु ८० वर्ष होती है ॥ १० ॥

हंसयोग का फल—

रक्तास्योन्नतनासिकासुचरणो हंसप्रसन्नेन्द्रियो
गौरः पीनकपालरक्तकरजो हंसस्वनः श्लैष्मिकः ।
शङ्खाब्जाङ्कुशमत्स्यदामयुगकैः खट्वाङ्गमालाघटै-
श्चञ्चत्पादकरस्थलो मधुनिभे नेत्रे सुवृत्तं शिरः ॥ ११ ॥

हंस योग में उत्पन्न व्यक्ति का लालिमा युक्त मुख, ऊँची नासिका, सुन्दर चरण, हंस के समान प्रफुल्लित इन्द्रियाँ, गौर वर्ण, विस्तीर्ण ललाट, लाल रंग की अँगुलियाँ, हंस के समान वाणी, कफ प्रधान प्रकृति, शंख, कमल, अंकुश, मछली युगलवीणा, खट्वाङ्ग, माला एवं घड़ा के चिह्नों से सुशोभित हाथ-पैर, मधु के समान लाल नेत्र तथा गोल सिर होता है ॥ ११ ॥

जलाशयप्रीतिरतीव कामी न याति तृप्तिं वनितासु नूनम् ।
औच्च्यं रसाष्टाङ्गुलसम्मितं तत्तनोस्तथायुर्मितिरत्र षष्टिः ॥ १२ ॥

जलाशय में अधिक आनन्द अनुभव करने वाला, अत्यधिक कामी, स्त्रियों से कभी तृप्त न होने वाला, ८६ अंगुल ऊँची शरीर वाला हंस पुरुष होता है । इसकी आयु ६० वर्ष होती है ॥ १२ ॥

वाह्लीकदेशादरशूरसेनगान्धर्वगङ्गायमुनान्तरालान् ।
भुक्त्वा वनान्ते निधनं प्रयाति हंसोऽयमुक्तो मुनिभिःप्रमाणैः ॥ १३ ॥

बाह्लीक, शूरसेन, गन्धर्व प्रदेशों का, गंगा-यमुना के मध्यवर्ती भागों का उपभोग कर लेने (इन प्रदेशों में निवास करने अथवा इन स्थानों का अधिपति होने) के पश्चात् हंस पुरुष का घोर वन में निधन होता है ऐसा मुनियों का प्रमाणवचन है ॥ १३ ॥

मालव्य योग का फल—

अस्थूलौष्ठोऽप्यविषमवपुर्नैव रक्ताङ्गसन्धि-
र्मध्ये क्षामः शशिधररुचिर्हस्तिनासः सुगण्डः ।
सद्दीप्ताक्षः समितिविदितो जानुदेशाप्तपाणि-
र्मालव्योऽयं विलसति नृपः सप्ततिर्वत्सराणाम् ॥ १४ ॥

मालव्य योग में उत्पन्न व्यक्ति का ओष्ठ पतला, सुडौल शरीर, अङ्गों की सन्धियाँ लालिमा रहित, मध्य भाग (कटि) पतला, चन्द्रमा के समान कान्ति, हस्ती के समान दीर्घनासिका, सुन्दर कपोल, सुन्दर तीक्ष्ण आँखें, संगठन या संस्थाओं के माध्यम से सुविख्यात तथा जानुपर्यन्त लम्बी भुजायें होती हैं। इस प्रकार मालव्य राजा ७० वर्ष तक आनोन्दोपभोग करते हैं (अर्थात् इनकी आयु ७० वर्ष की होती है) ॥ १४ ॥

वक्त्रं त्रयोदशमितांगुलमस्य दीर्घं
तिर्यग्दशांगुलमितं श्रवणान्तरालम् ।
मालव्यसज्ज्ञनृपतिः ससुतो भुनक्ति
लाटांश्च मालवसासिन्धुसुपारियात्रान् ॥ १५ ॥

मालव्य पुरुष के मुख की लम्बाई १३ अंगुल, कानों के मध्यका तिर्यक् अन्तर १० अंगुल होता है। मालव्य संज्ञक राजा अपने पुत्र के साथ लाट, मालवा, सिन्धु, एवं पारियात्र देशों का उपभोग (प्रशासन) करता है ॥ १५ ॥

शशक योग का फल—

लघुर्द्विजास्योऽद्रिगतः सकोपः शठोऽतिशूरो विजनप्रचारः ।
वनाद्रिदुर्गेषु नदीषु सक्तः प्रियातिथिर्नातिलघुः प्रसिद्धः ॥ १६ ॥

शशक योग में उत्पन्न व्यक्ति के मुख एवं दाँत छोटे होते हैं। पर्वत में निवास करने वाला, क्रोधी, शठ, अत्यन्त बलवान्, निर्जन स्थानों में भ्रमण करने वाला, वन, पर्वत, नदी और किला में अधिक रुचि रखने वाला, अतिथियों का प्रेमी, मध्यम कद का विख्यात पुरुष होता है ॥ १६ ॥

नानासेनानिचयनिरतो दन्तुरश्चापि किञ्चि-
द्धातोर्वादे भवति कुशलश्चञ्चलो लोलनेत्रः ।
स्त्रीसंसक्तः परधनहरो मातृभक्तः सुजङ्घो
मध्ये क्षामः सुललितमती रन्ध्रवेदी परेषाम् ॥ १७ ॥

(शशक योग में उत्पन्न पुरुष) अनेक प्रकार की सेनाओं के संग्रह में तत्पर, कुछ-कुछ बड़े दाँतों वाला, धातुओं (लोहा, ताँबा, कासा आदि) के व्यवहार में

निपुण, चञ्चल प्रकृति एवं नेत्रों वाला, स्त्री में आसक्त, पराये धन का अपहरण करने वाला, माता का भक्त, सुन्दर सुडौल जङ्घा और कृश कटि से युक्त, सुबुद्ध तथा दूसरों के रहस्य (या दोष) को जानने वाला होता है ॥ १७ ॥

पर्यङ्कशङ्खशरशस्त्रमृदङ्गमाला-
वीणोपमाःखलु करे चरणे च रेखाः ।
वर्षाणि सप्ततिमितानि करोति राज्यं
प्राप्तं शशाख्यनृपतिः कथितो मुनीन्द्रैः ॥ १८ ॥

शश नामक योग में उत्पन्न राजा के हाथ और पैर में पर्यङ्क (पलंग), शङ्ख, बाण, शस्त्र, मृदङ्ग, माला, वीणा का रेखा चिह्न होता है। तथा वह ७० वर्ष तक राज्य करता है अर्थात् ७० वर्ष की आयु होती है ऐसा श्रेष्ठ मुनियों ने कहा है ॥ १८ ॥

पञ्च महापुरुष भङ्गयोग—

केन्द्रोच्चगा यद्यपि भूसुताद्या मार्तण्डशीतांशुयुता भवन्ति ।
कुर्वन्ति नोर्वीपतिमात्मपाके यच्छन्ति ते केवलसत्फलानि ॥ १९ ॥

यदि अपनी-अपनी उच्च राशियों में स्थित होकर भौमादि पाँचों ग्रह केन्द्र स्थानों में हों तथा सूर्य या चन्द्रमा से युक्त हों तो (पञ्च महा पुरुष योग भङ्ग हो जाता है।) वे राजा नहीं बनाते अपितु अपनी दशा में केवल अच्छे फल प्रदान करते हैं ॥ १९ ॥

अनफा आदि योगों के लक्षण—

रविवर्ज्जं द्वादशगैरनफा चन्द्राद्द्वितीयगैः सुनफा ।
उभयस्थितैर्दुरुधरा केमद्रुमसंज्ञको योऽन्यः ॥ २० ॥

चन्द्रमा से द्वादश भाव में सूर्य को छोड़कर कोई भी ग्रह हो तो अनफा, द्वितीय भाव में सूर्यरहित कोई ग्रह हो तो सुनफा तथा चन्द्रमा से दोनों तरफ अर्थात् द्वितीय और द्वादश दोनों भावों में सूर्यरहित ग्रह हों तो दुरुधरा योग होता है। इससे भिन्न स्थिति में अर्थात् चन्द्रमा से द्वितीय और द्वादश में यदि कोई भी ग्रह न हों तो केमद्रुम नामक योग होता है ॥ २० ॥

सुनफा योग का फल—

भौमादीनां फलं यत् स्याज्ज्ञात्वा त्वविकलं बुधः ।
प्राज्ञाय प्रवदेत्सम्यक् सुनफादिकृतं फलम् ॥ २१ ॥

भौमादि पाँच ग्रहों का जो फल पहले बताया गया है उनको भली-भाँति जानकर सुनफादि योगों का फल विद्वान् पुरुष को करना चाहिये।

पाँच ग्रहों से पञ्च महापुरुष योग बनते हैं परन्तु उच्च और केन्द्रस्थ होने पर उसी अनुपात में उससे कुछ न्यून उक्त पाँच ग्रहों का फल सुनफादि योगों में होता है ॥ २१ ॥

विक्रमवित्तप्रायो निष्ठुरवचनश्च भूपतिश्चन्द्रे ।
हिंस्रो नित्यविरोधी सुनफायां भौमसंयोगे ॥ २२ ॥

यदि चन्द्रमा से द्वितीय स्थान में मंगल स्थित होकर सुनफा योग बना रहा हो तो जातक, पराक्रमी, निष्ठुर वचन बोलने वाला, राजा, हिंसक (जीवों का वध करने वाला) तथा नित्य लोगों से विरोध करने वाला होता है ॥ २२ ॥

श्रुतिशास्त्रगेयकुशलो धर्मरतः काव्यकृन्मनस्वी च ।
सर्वहितो रुचिरतनुः सुनफायां सोमजे भवति ॥ २३ ॥

यदि बुध सुनफा योग कारक हो तो वेद, शास्त्र और गान विद्या में निपुण, धार्मिक, काव्यकर्त्ता, स्वाभिमानी, सबकी भलाई करने वाला, लाल (कोमल) शरीर वाला होता है ॥ २३ ॥

नानाविद्याचार्यं ख्यातं नृपतिं वृषप्रियं चापि ।
सकुटुम्बधनसमृद्धं सुनफायां सुरगुरुः कुरुते ॥ २४ ॥

बृहस्पति से उत्पन्न सुनफा योग में उत्पन्न व्यक्ति विविध विषयों का प्रामाणिक विद्वान्, विख्यात, राजा, न्यायप्रिय तथा कुटुम्बियों के साथ धन सम्पन्न होता है ॥ २४ ॥

स्त्रीक्षेत्रगृहपतिश्चतुष्पदाढ्यः सुविक्रमो भवति ।
नृपसत्कृतः सुवेषो दक्षःशुक्रेण सुनफायाम् ॥ २५ ॥

यदि शुक्र सुनफा योग कारक हो तो स्त्री, क्षेत्र (खेत) एवं गृह का स्वामी, पशुओं का पालन करने वाला, पराक्रमी, राजा से सम्मानित, सुन्दर वेष-भूषा धारण करने वाला तथा चतुर व्यक्ति होता है ॥ २५ ॥

निपुणमतिर्ग्रामपुरैर्नित्यं सम्पूजितो धनसमृद्धः ।
सुनफायां रवितनये क्रियासु गुप्तो भवेन्मलिनः ॥ २६ ॥

शनि से सुनफा योग हो तो कुशल बुद्धिमान्, नगर एवं ग्राम में निरन्तर पूज्य (सम्मानित), धन से सम्पन्न, गुप्त रूप से कार्य करने वाला तथा मलिन स्वभाव से युक्त होता है ॥ २५ ॥

अनफा योग का फल—

चौरस्वामी दृप्तः स्ववशी मानी रणोत्कटः सेर्ष्यः ।
क्रोधात्सम्पत्साध्यः सुतनुर्नम्रः कुजेऽनफायां च ॥ २७ ॥

भौम कृत अनफा योग में चोरों का सरदार, तेजस्वी, आत्मसंयमी, स्वाभिमानी, युद्ध का अभिलाषी, ईर्ष्यालु, क्रोध से सम्पत्ति सिद्ध (अर्जित) करने वाला, शरीर से सुन्दर तथा विनम्र व्यक्ति होता है ॥ २७ ॥

गन्धर्वो लेख्यपटुः कविः प्रवक्ता नृपाप्तसत्कारः ।
रुचिरः सुभगोऽपि बुधे प्रसिद्धकर्माऽनफायां हि ॥ २८ ॥

बुध अनफा योगकारक हो तो गन्धर्व (गीत-वाद्य-नृत्य आदि कलाओं का ज्ञाता), चित्रकला में निपुण, कवि, विशिष्ट वक्ता, राजा से सम्मान पाने वाला, सुन्दर तथा सौभाग्यशाली पुरुष होता है ॥ २८ ॥

गम्भीरः सम्मेधाचानुयुतो[1] बुद्धिमान् नृपाप्तयशाः ।
अनफायां त्रिदशगुरौ सञ्जातः सत्कविर्भवति ॥ २९ ॥

बृहस्पति अनफा योगकारक हो तो जातक गम्भीर, सद्बुद्धि से युक्त, बुद्धिमान् (चतुर), राजा से सम्मान प्राप्त तथा उच्चकोटि का कवि होता है ॥ २९ ॥

युवतीनामतिसुभगः प्रणयी क्षितिपस्य गोपतिः कान्तः ।
कनकसमृद्धश्च पुमाननफायां भार्गवे भवति ॥ ३० ॥

शुक्र से अनफा योग हो तो स्त्रियों का प्रिय राजा का प्रियपात्र, गौओं का पालन करने वाला, आकृति से सुन्दर एवं स्वर्ण सञ्चय से धनवान् पुरुष होता है ॥ ३० ॥

विस्तीर्णभुजः सुभगो गृहीतवाक्यश्चतुष्पदसमृद्धः ।
दुर्वनितागणभोक्ता गुणसहितः पुत्रवान् रविजे ॥ ३१ ॥

शनि अनफा योगकारक हो तो जातक लम्बी भुजाओं वाला, सुन्दर, अपने वचन पर दृढ रहने वाला, पशुओं से सम्पन्न (अधिक संख्या में पशु पालन करने वाला), कुत्सित स्त्रियों के साथ सहवास करने वाला तथा गुणवान् होता है ॥३१॥

दुरुधरा योग का फल—

अनृतके बहुवित्तो निपुणोऽतिशठो गुणाधिको लुब्धः ।
वृद्धस्त्रीषु प्रसक्तः कुलाग्रणीः शशिनि भौमबुधमध्ये ॥ ३२ ॥

चन्द्रमा मंगल और बुध के मध्य में (चन्द्रमा से द्वितीय और द्वादश में मंगल और बुध) हों तो मिथ्यावादी, अधिक धनवान्, चतुर, अत्यन्त दुष्ट, अधिक गुणवान्, लोभी, वृद्धा स्त्रियों में आसक्त तथा अपने कुल में श्रेष्ठ होता है ॥ ३२ ॥

१. समनुयुतो पाठान्तरम् ।

ख्यातः कर्मसु कितवो बहुधनवैरस्त्वमर्षणो धृष्टः ।
आरक्षकः कुजगुर्वोर्मध्यगते शशिनि संग्राही ॥ ३३ ॥

यदि मंगल और गुरु दुरुधरा योगकारक हों अर्थात् मंगल और गुरु के मध्यम में चन्द्रमा हों तो अपने कार्यों से प्रसिद्ध, धूर्त्त, अधिक धनवान्, शत्रुता, क्रोध-रहित, धृष्ट-ढीठ), तथा सुरक्षा करने वाला होता है ॥ ३३ ॥

उत्तमरामः सुभगो विषादशीलोऽस्त्रविद्भवेच्छूरः ।
व्यायामी रणशीलः सितारयोर्मध्यगे चन्द्रे ॥ ३४ ॥

शुक्र और मंगल के मध्य में यदि चन्द्रमा हो अर्थात् इन तीनों ग्रहों से दुरुधरा योग बन रहा हो तो जातक युद्ध प्रिय, व्यायाम करने वाला, शूर, अस्त्र सञ्चालन में दक्ष, दुःखी एवं सुन्दर होता है । उसकी स्त्री उत्तम (सभ्य, सुन्दरी एवं पतिव्रता) होती है ॥ ३४ ॥

उत्तमसुरतो बहुधनसञ्चयकारी व्यसनसक्तश्च ।
क्रोधी पिशुनो रिपुमान् यमारयोः स्याद्दुरुधरायाम् ॥ ३५ ॥

शनि और मंगल से दुरुधरा योग हो तो जातक रति कला में कुशल, अत्यधिक धनसंग्रह करने वाला, व्यसन में आसक्त, क्रोधी, चुगलखोर तथा शत्रुओं से युक्त होता है ॥ ३५ ॥

धर्मरतः शास्त्रज्ञो वाचि पटुः सर्ववर्द्धनसमृद्धः ।
त्यागयुतो विख्यातो गुरुबुधमध्यस्थिते चन्द्रे ॥ ३६ ॥

गुरु और बुध के बीच में चन्द्रमा हो तो धर्म में संलग्न, शास्त्रों का ज्ञाता, बात-चीत में निपुण, सभी प्रकार की सम्पत्तियों की वृद्धि से सम्पन्न, त्यागी तथा विख्यात व्यक्ति होता है ॥ ३६ ॥

प्रियवाक्सुभगः कान्तः प्रवृत्तगो यदि सुकृतवान्नृपतिः ।
सौख्यं शूरो मन्त्री बुधसितयार्मध्यगे च हिमकिरणे ॥ ३७ ॥

बुध और शुक्र के मध्य में चन्द्रमा हो तो जातक प्रियवादी, सुन्दर, मनोहर, सुख सम्पन्न, शूर तथा मन्त्री होता है । यदि उसकी सत्कर्म में प्रवृत्ति हो जाती है तो वह यशस्वी राजा होता है ॥ ३७ ॥

देशे देशे गच्छति वित्तवशे नास्ति विद्यया सहितः ।
चन्द्रेऽन्येषां पूज्यः स्वजनविरोधी ज्ञमन्दयोर्मध्ये ॥ ३८ ॥

बुध और शनि के मध्य में यदि चन्द्रमा हो तो वह व्यक्ति देश-विदेश में अर्थ-लाभ हेतु भ्रमण करता है तथा विद्या से हीन होता है । ऐसे लोग दूसरों से पूज्य तथा आत्मीयजनों के विरोधी होते हैं ॥ ३८ ॥

धृतिमेधः स्थैर्ययुतो नीतिज्ञः कनकरत्नपरिपूर्णः ।
ख्यातो नृपकृत्यकरो गुरुसितयोर्दुरुधरायोगे ॥ ३९ ॥

गुरु और शुक्र से दुरुधरा योग बन रहा हो तो जातक धैर्यवान्, मेधावी, स्थिर चित्तवाला, नीति का ज्ञाता, सोना और जवाहरात से परिपूर्ण, विख्यात, राजा का कार्य (राजकीय सेवा) करने वाला होता है ॥ ३९ ॥

सुखनयविज्ञानयुतः प्रियवाग्विद्वान् धुरन्धरो मर्त्यः ।
ससुतो धनी सुरूपश्चन्द्रे गुरुभार्गवान्तरगे ॥ ४० ॥

शुक्र और बृहस्पति के मध्य में चन्द्रमा हो अर्थात् उक्त ग्रहों से (दुरुधरा योग) हो तो सुख, राजनीति और विज्ञान से युक्त, प्रियवादी, विद्वान्, धुरन्धर (निर्भीक एवं बलवान्), पुत्रवान्, धनी तथा सुन्दर होता है ॥ ४० ॥

वृद्धवनितं कुलाढ्यं निपुणं स्त्रीवल्लभं धनसमृद्धम् ।
नृपसत्कृतं बहुज्ञं कुरुते चन्द्रः सितार्कजयोः ॥ ४१ ॥

शुक्र और शनि के मध्य में चन्द्रमा हो तो उस मनुष्य की स्त्री वृद्धा (अधिक आयु वाली) एवं कुलीन होती है तथा वह निपुण, स्त्री का प्रेमी, धनवान्, राजा से सम्मानित, बहुत विषयों (अथवा कलाओं) का ज्ञाता होता है ॥ ४१ ॥

केमद्रुम योग का फल—

केमद्रुमे भवति पुत्रकलत्रहीनो देशान्तरे व्रजति दुःखसमाभितप्तः ।
ज्ञातिप्रमोदनिरतोमुखरः कुचैलो नीचः सदा भवति भीतियुतश्चिरायुः ॥४२॥

केमद्रुम योग (चन्द्रमा से द्वितीय और द्वादश भाव ग्रह हीन हो) में उत्पन्न व्यक्ति पुत्र और स्त्री से हीन अपने देश को छोड़कर दूसरे देश में जाने वाला, वर्षों तक दुःख से सन्तप्त रहने वाला, जाति-बन्धुओं के आमोद-प्रमोद में संलग्न, मुखर (अधिक बोलने वाला), मलिन वस्त्रों को धारण करने वाला, नीच, सर्वेव भयभीत रहने वाला तथा दीर्घायु होता है ॥ ४२ ॥

दुरुधरा एवं केमद्रुम का फल—

उत्पन्नभोगसुखभुग्धनवाहनाढ्य-
स्त्यागान्वितो दुरुधराप्रभवः सुभृत्यः ।
केमद्रुमे मलिनदुःखितनीचनिःस्वाः
प्रेष्याश्च तत्र नृपतेरपि वंशजाताः[1] ॥ ४३ ॥

दुरुधरा योग में उत्पन्न व्यक्ति भौतिक साधनों से उत्पन्न समस्त सुखों का

1. बृहज्जातकम् । १३'६ 'तत्र' स्थाने 'खलाः' इति पाठः ।

उपभोग करने वाला, धन एवं वाहन से युक्त, त्यागी प्रवृत्ति वाला तथा अच्छे सेवकों से युक्त होता है।

केमद्रुम योग में उत्पन्न व्यक्ति मलिन (गन्दे) आचरण वाला, दुःखी, नीच, निर्धन तथा सेवाकार्य करने वाला होता है चाहे वह राजा के कुल में ही क्यों न उत्पन्न हो ॥ ४३ ॥

केमद्रुम भङ्गयोग—

हित्वार्कं सुनफानफा दुरुधरा स्वान्त्योभयस्थैर्ग्रहैः
शीतांशोः कथितोऽन्यथा तु बहुभिःकेमद्रुमोऽन्यैस्त्वसौ।
केन्द्रे शीतकरेऽथ वा ग्रहयुते केमद्रुमो नेष्यते
केचित्केन्द्रनवांशकेष्विति वदन्त्युक्तिप्रसिद्धा न ते[1] ॥ ४४ ॥

सूर्य को छोड़कर अन्य ग्रहों में से कोई भी ग्रह चन्द्रमा से द्वितीय भाव, द्वादश भाव तथा चन्द्रमा से दोनों तरफ (द्वितीय और द्वादश दोनों भावों) में हो तो क्रम से सुनफा, अनफा, दुरुधरा योग होते हैं। इससे विपरीत अर्थात् चन्द्रमा से द्वितीय और द्वादश दोनों भाव ग्रह से रहित हो तो केमद्रुम नामक योग होता है। बहुत से आचार्यों का मत है कि चन्द्रमा केन्द्र में हो अथवा किसी ग्रह से युत हो तो केमद्रुम योग भङ्ग हो जाता है। कुछ आचार्यों का मत है कि चन्द्रमा केन्द्र नवांश में अर्थात् केन्द्रस्थ राशियों के नवमांश मे हो तो केमद्रुम योग भङ्ग होता है। परन्तु यह कथन प्रसिद्ध नहीं है ॥ ४४ ॥

कुमुदगहनबन्धुर्वीक्षमाणः समस्तै—
गंगनगृहनिवासैर्दीर्घजीवी स जातः।
फलमशुभसमुत्थं यच्च केमद्रुमोक्तं
स भवति नरनाथः सार्वभौमो जितारिः ॥ ४५ ॥

केमद्रुम योग होते हुये भी चन्द्रमा को यदि समस्त ग्रह देख रहे हों तो वह व्यक्ति दीर्घजीवी होता है। केमद्रुम योग से उत्पन्न होने वाले समस्त अशुभ फल उसे प्राप्त नहीं होते। वह सार्वभौम राजा तथा शत्रुओं को जीतने वाला होता है ॥ ४५ ॥

पूर्णः शशी यदि भवेच्छुभसंस्थितो वा
सौम्यामरेज्यभृगुनन्दनसंयुतश्च।
पुत्रार्थसौख्यजनकः कथितो मुनीन्द्रैः
केमद्रुमे भवति मङ्गलसुप्रसिद्धिः ॥ ४६ ॥

1. बृहज्जातकम्।

पूर्ण चन्द्रमा यदि शुभग्रह की राशि में स्थित हो अथवा बुध, गुरु और शुक्र से युक्त हो तो केमद्रुम योग होने पर भी मनुष्य पुत्र-धन और सुख को उत्पन्न करने वाला एवं कल्याणकारी प्रसिद्धि (यश) को प्राप्त करने वाला होता है ऐसा मुनियों का कथन है ॥ ४६ ॥

वोशि-वेशि योग—

सूर्याद्व्ययगे वोशिर्द्वितीयगैश्चन्द्रवर्जितैर्वेशिः ।
उभयस्थितैर्ग्रहगणैरुभयचरीनामतः प्रोक्तः ॥ ४७ ॥

सूर्य से बारहवें भाव में चन्द्रमा को छोड़कर अन्य कोई भी ग्रह स्थित हो तो वोशि तथा सूर्य से द्वितीय भाव में चन्द्रातिरिक्त कोई ग्रह हो तो वेशि योग होता है। सूर्य से दोनों तरफ द्वितीय और द्वादश भावों में ग्रह हों तो उभयचारी नामक योग होता है ॥ ४७ ॥

वोशि योग का फल—

मन्ददृशं स्थिरवचनं परिभूरिश्रमं नतार्द्धतनुम् ।
कथयति गणिताधिपतिर्वेशिसमुत्थं त्वधोदृष्टिम् ॥ ४८ ॥

वोशि योग में उत्पन्न व्यक्ति की दृष्टि मन्द, वाणी स्थिर, होती है। शरीर आधा झुका हुआ तथा नीचे की तरफ दृष्टि रखने वाला होता है ऐसा गणितज्ञों का कहना है ॥ ४८ ॥

बहुसंचयी विनतदृक् वोशौ पुरुषो भवेद्गुरोर्जातः ।
भीरुः कामविलीनो लघुचेष्टो भृगुसुते पराधीनः ॥ ४९ ॥

गुरु से वोशि योग बन रहा हो अर्थात् सूर्य से बारहवें भाव में गुरु हो तो पुरुष अधिक सञ्चय करने वाला दिन के समान स्वच्छ हृदय वाला होता है। यदि बारहवें भाव में शुक्र हो तो डरपोक, कामासक्त, स्वल्प अभिलाषा करने वाला तथा पराधीन होता है ॥ ४९ ॥

परतर्कितो दरिद्रो मृदुर्विनीतो बुधो विगतलज्जः ।
मातृघ्नः क्षितिपुत्रो परोपकारो नरो वोशौ ॥ ५० ॥

यदि वोशि योग बुध द्वारा बन रहा हो तो जातक दूसरों की दृष्टि में चर्चा का विषय, दरिद्र, कोमल प्रकृति वाला विनम्र तथा लज्जा से रहित होता है। यदि मंगल से बनता हो तो माता की हत्या करने वाला तथा परोपकारी पुरुष होता है ॥ ५० ॥

परदाररतस्तन्द्री वृद्धाकारो घृणी भवेन्मनुजः ।
जातः सदासजन्मा वोशौ योगे शनैश्चरेण युते ॥ ५१ ॥

यदि शनि द्वारा वोशि योग बना हो तो जातक परस्त्रीगामी, आलसी, वृद्ध की तरह आकृति वाला, घृणित, सदैव जन्म की सफलता प्राप्त करने वाला (सन्तुष्ट) होता है ॥ ५१ ॥

वेशि योग का फल—

उच्चैष्टवचाः स्मृतिमान् भोगयुतो निरीक्षते तिर्यक् ।
पूर्वशरीरे पृथुलस्तुच्छगतिः सात्त्विको वेशौ ॥ ५२ ॥

वेशि योग में उत्पन्न होने वाले उच्चस्तर की अनुकूल एवं उचित बात बोलने वाले, याद रखने वाले (स्मरणशक्ति युक्त), सुख भोग करने वाले, तिरछी दृष्टि वाले (अगल-बगल देखने वाले) होते हैं। उनके शरीर का अग्रभाग मोटा होता है तथा अत्यल्प गति से चलने वाले होते हैं ॥ ५२ ॥

धृतिसत्यबुद्धियुक्तो भवति गुरुर्वेशिगो रणे शूरः ।
ख्यातो गुणवानार्यः शूरो वै भार्गवे पुरुषः ॥ ५३ ॥

गुरु यदि वेशियोग कारक (सूर्य से द्वितीय भाव में गुरु) हो तो धैर्यवान्, बुद्धिमान्, सत्यवादी तथा संग्राम में पराक्रमी होता है। यदि सूर्य से द्वितीय भाव में शुक्र हो तो विख्यात, गुणवान्, श्रेष्ठ तथा पराक्रमी पुरुष होता है ॥ ५३ ॥

प्रियभाषी रुचिरतनुर्वेशौ स्याद्वा बुधे पराजकृन्मनुजः ।
संग्रामे विख्यातो भूमिसुते सूतगुणवानपि ख्यातः ॥ ५४ ॥

बुध वेशियोग कारक हो तो मनुष्य प्रिय बोलने वाला, सुन्दर शरीर वाला, दूसरों को मूर्ख बनाने वाला होता है।

यदि भौम वेशियोग कारक हो तो संग्राम में प्रसिद्ध तथा सूतकर्म (रथ संचालन, ड्राइविंग) में निपुण होता है ॥ ५४ ॥

वणिक्कलास्वभावः स्यात् परद्रव्यापहारकः ।
गुरुद्वेषी शनिः सूर्यो सोमे वेशिः शनैश्चरे ॥ ५५ ॥

सूर्य से द्वितीय स्थान में शनि हो तो जातक व्यापार की कला में कुशल दूसरों के धन का अपहरण करने वाला तथा गुरु का द्वेषी होता है ॥ ५५ ॥

उभयचरी योग का फल—

सर्वसहः सुसमदृक्समकायः सुस्थितो निपुणसत्त्वः ।
नात्युच्चः परिपूर्णग्रीवो भवेदुभयचर्यायाम् ॥ ५६ ॥

उभयचरी योग में (सूर्य से द्वितीय और द्वादश में चन्द्ररहित कोई भी ग्रह हों तो उसमें) उत्पन्न व्यक्ति सब कुछ सहन करने वाला, समान दृष्टि एवं समान

शरीर वाला, स्थिरमति, निपुण एवं शक्ति-सम्पन्न, अधिक उन्नत नहीं (अर्थात् मध्यम कद) तथा मोटी गर्दन वाला होता है ॥ ५६ ॥

सुभगो बहुभृत्यजनो बन्धूनामाश्रयो नृपतितुल्यः ।
नित्योत्साही हृष्टो भुनक्ति भोगानुभयचर्यायाम् ॥ ५७ ॥

उभयचरी योग में उत्पन्न व्यक्ति सुन्दर स्वरूप वाला, बहुत सेवकों से युक्त, बन्धुओं का आश्रयदाता, राजा के समान वैभव युक्त, निरन्तर उत्साहयुक्त, शरीर से स्वस्थ तथा भोगों का उपभोग करने वाला होता है ॥ ५७ ॥

सिंहासन योग—

षष्ठाष्टमे द्वादशे च द्वितीये च यदा ग्रहाः ।
सिंहासनाख्ययोगोऽयं राजसिंहासनं विशेत् ॥ ५८ ॥

(जन्म लग्न से) छठें, आठवें, बारहवें तथा दूसरे भावों में ग्रह हों तो सिंहासन नामक योग होता है । इस योग में उत्पन्न व्यक्ति राजसिंहासन पर बैठता है (अर्थात् अधिकार प्राप्त करता है) ॥ ५८ ॥

ध्वजयोग—

अष्टमस्था यदा क्रूराः सौम्या लग्ने स्थिता ग्रहाः ।
ध्वजयोगोऽत्र जातस्तु स पुमान्नायको भवेत् ॥ ५९ ॥

अष्टम भाव में सभी क्रूर ग्रह तथा लग्न में सभी शुभग्रह स्थित हों तो ध्वज योग होता है । इस योग में उत्पन्न व्यक्ति नायक होता है ॥ ५९ ॥

हंसयोग—

त्रिकोणे सप्तमे लग्ने भवन्ति च यदा ग्रहाः ।
हंसयोगं विजानीयात्स्ववंशस्यैव पालकः ॥ ६० ॥

त्रिकोण (पञ्चम, नवम), सप्तम और लग्न स्थानों में यदि ग्रह स्थित हों तो हंसयोग होता है । इस योग में जन्म लेने वाला अपने वंश (कुल) का पालन करने वाला होता है ॥ ६० ॥

कारिका योग—

एकादशे यदा सर्वे ग्रहाः स्युर्दशमेऽपि च ।
लग्नस्य सम्मुखे वापि कारिकापरिकीर्तिता ॥ ६१ ॥

ग्यारहवें, दशवें तथा लग्न के सम्मुख (सप्तम भाव) में सभी ग्रह हों तो कारिका योग होता है ॥ ६१ ॥

उत्पन्नः कारिकायोगे नीचोऽपि नृपतिर्भवेत् ।
राजवंशसमुत्पन्नो राजा तत्र न संशयः ॥ ६२ ॥

कारिका योग में उत्पन्न नीच व्यक्ति भी राजा होता है यदि राज कुल में ही उत्पन्न हो तो निःसन्देह राजा होता है ॥ ६२ ॥

एकावली योग—

लग्नतश्चान्यतो वापि क्रमेण पतिता ग्रहाः ।
एकावली समाख्याता महाराजो भवेन्नरः ॥ ६३ ॥

जन्म लग्न से अथवा किसी अन्य भाव से क्रमानुसार सभी ग्रह पड़े हों तो एकावली योग होता है । इस योग में उत्पन्न व्यक्ति महाराजा होता है । (इसका अभिप्राय यह है कि किसी भी स्थान से क्रम से एक-एक ग्रह अगले भावों में स्थित हों तो एकावली योग होता है) ॥ ६३ ॥

चतुःसागर योग—

चतुर्षु केन्द्रसंज्ञेषु सौम्यपापग्रहाः स्थिताः ।
चतुःसागरयोगोऽयं राज्यदो धनदो भवेत् ॥ ६४ ॥

चारों केन्द्रस्थानों में सभी शुभ और पापग्रह स्थित हों तो चतुःसागर योग होता है । यह योग राज्य और धन देने वाला होता है ॥ ६४ ॥

कर्कटे मकरे मेषे तुलायां च ग्रहे स्थिते ।
चतुःसागरयोगः स्यात्सर्वारिष्टनिषूदनः ॥ ६५ ॥

कर्क, मकर, मेष और तुला इन चार राशियों में ही समस्त ग्रह पड़े हों तो वह चतुःसागर योग होता है जो समस्त अरिष्टों का नाशक है ॥ ६५ ॥

चतुःसिन्धौ नरो जातो बहुरत्नसमन्वितः ।
गजवाजिधनैः पूर्णो धरणीशो भवेन्नरः ॥ ६६ ॥

चतुःसागर योग मे उत्पन्न व्यक्ति बहुत रत्नों से सम्पन्न, हाथी घोड़े और धन से परिपूर्ण एवं भूमि का स्वामी (राजा) होता है ॥ ६६ ॥

अमरयोग—

चतुर्ष्वपि हि केन्द्रेषु क्रूराः सौम्या यदा ग्रहाः ।
क्रूरैः पृथ्वीपतिं विद्यात्सौम्यैर्लक्ष्मीपतिर्भवेत् ॥ ६७ ॥

चारों केन्द्रों में सभी पापग्रह या सभी शुभ ग्रह हों तो अमरयोग होता है । क्रूर ग्रहों से भूमि का स्वामी (अधिक भूमि वाला राजा) तथा शुभग्रहों से धनवान् (पूंजीपति) होता है ॥ ६७ ॥

अजमृगपतिलग्ने भानुकेन्द्रे त्रिकोणे
व्ययनिधनसुसंस्थे चन्द्रकर्के वृषे वा ।
यदि तदुभयदृष्टया वीक्षितौ जीवशुक्रौ
तदमरवरयोगे सर्वरिष्टप्रणाशः ॥ ६८ ॥

मेष, सिंह राशियों में अथवा जन्म लग्न में स्थित सूर्य केन्द्र अथवा त्रिकोण में हो तथा चन्द्रमा कर्क या वृष राशि में स्थित होकर आठवें या बारहवें भाव में हो तथा गुरु और शुक्र से दृष्ट हो तो समस्त अरिष्टों का नाश करने वाला अमर नामक योग होता है ॥ ६८ ॥

चापयोग—

शुक्रे घटे कुजे मेषे स्वस्थो देवपुरोहितः।
तदा राजा भवेन्नूनं चापः सौभ्यति दिङ्मुखः (?) ॥ ६९ ॥

शुक्र कुम्भराशि में, मङ्गल मेष राशि में तथा गुरु अपनी राशियों (धनु और मीन) स्थित हों तो निश्चित रूप से जातक सभी दिशाओं में गमन करने वाला राजा होता है ॥ ६९ ॥

दण्ड योग—

कर्कटे मिथुने मीने कन्यायां चापगे ग्रहे।
दण्डयोगः समाख्यातो राज्ञामास्पदकारकः ॥ ७० ॥

कर्क, मिथुन, मीन, कन्या और धनु राशियों में यदि समस्त ग्रह स्थित हों तो राज्य पद प्रदान करने वाला दण्ड नामक योग होता है ॥ ७० ॥

दण्डे च जातः पृथुपुण्यभागी एकातपत्री भवति क्षितीशः।
तेजोमयः सिंहपराक्रमश्च संसेव्यमानो गुरुपात्रवृन्दैः ॥ ७१ ॥

दण्ड योग में उत्पन्न व्यक्ति अत्यधिक पुण्यशाली, एक छत्र (सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र), तेजस्वी, सिंह के समान पराक्रमी, बड़े-बड़े अधिकारियों श्रेष्ठियों आदि के समूह से सेवित राजा होता है ॥ ७१ ॥

हंस योग—

मेषे घटे चापतुलामृगाली सर्वग्रहे हंस इति प्रसिद्धः।
सर्वैश्च पूर्णो नृपतेश्च पूज्यो हंसोद्भवो राजसमो मनुष्यः ॥ ७२ ॥

मेष, कुम्भ, धनु, तुला, मकर और वृश्चिक राशियों में सभी ग्रह स्थित हों तो हंस नामक प्रसिद्ध योग होता है। हंस योग में उत्पन्न मनुष्य सभी वस्तुओं से परिपूर्ण राजाओं से सम्मानित तथा राजा होता है ॥ ७२ ॥

वापी योग—

लग्नव्ययधनोनेषु ग्रहाः स्थानेषु चेत्स्थिताः।
वापीयोगो भवेदेवमुदितः पूर्वसूरिभिः ॥ ७३ ॥

लग्न, व्यय (बारहवें) और द्वितीय भावों को छोड़कर शेष सभी भावों में ग्रह स्थित हों तो वापी योग होता है ऐसा पूर्वाचार्यों ने कहा है ॥ ७३ ॥

दीर्घायुः स्यादात्मवंशप्रधानः सौख्योपेतोऽत्यन्तधीरो नरो हि ।
चञ्चद्वाक्यस्तन्मनाः पुण्यवापी वापीयोगे यः प्रसूतः प्रतापी ॥ ७४ ॥

जो व्यक्ति वापी योग में उत्पन्न होता है वह दीर्घायु, अपने कुल में श्रेष्ठ, सुखों से युक्त, अत्यन्त धैर्यशाली, बोलने में चपल व्यवहार कुशल (मिलनसार), पुण्यशाली, तथा प्रतापी होता है ॥ ७४ ॥

यूप, शर, शक्ति, दण्ड योग—

लग्नाच्चतुर्थात्स्मरतः खमध्याच्चतुर्गृहस्थैर्गगनेचरेन्द्रैः ।
क्रमेण यूपश्च शरश्च शक्तिर्दण्डः प्रदिष्टः खलु जातकज्ञैः ॥ ७५ ॥

लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम स्थानों से अग्रिम चार भावों के बीच यदि सभी ग्रह हों तो दैवज्ञों ने क्रम से यूप, शर, शक्ति और दण्ड योग बतलाया है। अर्थात् यदि लग्न से चतुर्थ भाव पर्यन्त सभी ग्रह हों तो यूप योग, चतुर्थ से सप्तम भाव के बीच यदि सभी ग्रह हों तो शर योग, सप्तम से दशम भाव पर्यन्त सभी ग्रह हों तो शक्ति योग तथा दशम से लग्न पर्यन्त सभी ग्रह हों तो दण्ड योग होता है ॥७५॥

यूपयोग का फल—

धीरोदारो यज्ञकर्मानुसारो नानाविद्यातद्विचारो नरोच्चः ।
यस्योत्पत्तौ वर्तते यूपयोगो योगो लक्ष्म्या जायते तस्य नित्यम् ॥ ७६ ॥

जिसके जन्म समय में यूप योग हो वह धीर (धैर्य युक्त), उदार, यज्ञयागादि मे निपुण, अनेक प्रकार की विद्याओं का ज्ञाता, सदाचारी, मनुष्यों में श्रेष्ठ होता है तथा प्रतिदिन उसके घर लक्ष्मी आती रहती है ॥ ७६ ॥

शर योग का फल—

हिंस्रोऽत्यन्तं तुल्यदुःखैः प्रतप्तः
प्राप्तानन्दः काननान्ते शरज्ञः ।
मर्त्यो योगे यः शरे जातजन्मा
स्त्री रम्भाख्या तस्य न क्वापि सौख्यम् ॥ ७७ ॥

जिस मनुष्य का जन्म शर योग में होता है वह घोर हिंसक प्रवृत्ति वाला समान दुःख से सन्तप्त (जिसकी हिंसा करे उसी के समान स्वयं दुःखी), जंगल में आनन्द प्राप्त करने वाला तथा शर सञ्चालन में निपुण होता है। उसकी स्त्री रम्भा के समान सुन्दरी होती है फिर भी उसे सुख कहीं नहीं प्राप्त होता ॥ ७७ ॥

शक्ति योग का फल—

नीचैरुच्चैः प्रीतिकृत्सालसश्च सौख्यैरर्थैर्वर्जितो दुर्बलश्च ।
वादे युद्धे तस्य बुद्धिर्विशाला शालासौख्यस्याल्पता शक्तियोगे ॥ ७८ ॥

शक्ति योग में उत्पन्न व्यक्ति नीच तथा उच्च दोनों वर्गों के व्यक्तियों से प्रीति रखने वाला, आलसी, सुख और धन से रहित, दुर्बल, विवाद एवं युद्ध में विशेष बुद्धिमान् (मुकदमें का विशेषज्ञ) होता है तथा गृह का अत्यल्प सुख प्राप्त करता है।७८।

दण्ड योग का फल—

दीनो हिनोन्मत्तसञ्जातसौख्यो हृष्योद्वेगी गोत्रजैर्जातवेदः।
कान्तापुत्रैरर्थमित्रैर्विहीनो हीनो बुद्ध्या दण्डयोगे तु जन्मी ॥ ७९ ॥

दण्ड योग में उत्पन्न व्यक्ति दीन (दरिद्र), हीन (निम्न कोटि का), विक्षिप्तावस्था में सुख प्राप्त करने वाला (अर्थात् पागल का ढोंग रचने वाला), ईर्ष्यालु, उद्विग्न, अपने कुटुम्बियों से सन्तप्त, स्त्री, पुत्र और मित्रों से रहित तथा बुद्धिहीन होता है ॥ ७९ ॥

नौ-कूट-छत्र-चाप-अर्धचन्द्र योग—

लग्नाच्चतुर्थात्स्मरतः खमध्यात्सप्तर्क्षगैर्नौरथ कूटसंज्ञः।
छत्रं धनुश्चान्यगृहप्रवृत्तैर्नौपूर्वको योग इहार्द्धचन्द्रः ॥ ८० ॥

लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम से आरम्भ होकर सात भावों में एक-एक ग्रह स्थित हो तो क्रम से नौ, कूट, छत्र और चाप योग होते हैं। यथा लग्न से सप्तम भाव पर्यन्त प्रत्येक भाव में एक-एक ग्रह हों तो नौका योग, इसी प्रकार चतुर्थ से दशम पर्यन्त सात भावों में ग्रह हों तो कूट योग, सप्तम से लग्न पर्यन्त सात भावों में ग्रह हों तो छत्र योग तथा दशम से चतुर्थ पर्यन्त ग्रह हों तो चाप (धनु) योग होता है। इन (केन्द्र स्थानों १, ४, ७, १०) से भिन्न स्थानों (२, ३, ५, ६, ८, ९, ११, १२) से आरम्भ होकर सात भाव पर्यन्त एक-एक ग्रह प्रत्येक भाव में हों तो अर्द्धचन्द्र योग होता है ॥ ८० ॥

नौका-योग का फल—

ख्यातो लुब्धो भोगसौख्यैर्विहीनःस्यान्नौयोगे लब्धजन्मा मनुष्यः।
क्लेशी शश्वच्चञ्चलःस्वान्तवृत्तिस्तोयोद्भूतेनार्थधान्येन तस्य ॥ ८१ ॥

नौका योग में जन्म लेने वाला मनुष्य विख्यात, लोभी, भोग और सुख से रहित, दुःखी, निरन्तर चञ्चल तथा जल से उत्पन्न धन तथा धान्य प्राप्त करने से स्वतन्त्र वृत्ति (विचारों) वाला होता है ॥ ८१ ॥

कूटयोग का फल—

दुर्गारण्यावासशीलश्च मल्लो भिल्लप्रीतिर्निर्धनो निन्द्यकर्मा।
धर्माधर्मज्ञानहीनश्च दुष्टः कूटप्राप्तोत्पत्तिरेवं मनुष्यः ॥ ८२ ॥

कूट योग में जन्म लेने वाला मनुष्य दुर्ग (किला) एवं जङ्गल में निवास करने वाला, मल्ल (कुश्ती लड़ने वाला पहलवान), भिल्ल (जंगली जाति के) लोगों

से प्रेम करने वाला, निर्धन, निन्दित कर्म करने वाला, धर्म-अधर्म के विवेक से रहित तथा दुष्ट होता है ॥ ८२ ॥

छत्र योग का फल—

प्राज्ञो राज्ञां कार्यकर्ता दयालुः पूर्वे पश्चात्सर्वसौख्यैरुपेतः।
यस्योत्पत्तौ छत्रयोगोपलब्धिर्लब्धिः स्याच्चेच्छत्रसच्चामरादेः ॥ ८३ ॥

जिसका जन्म छत्र योग में होता है वह बुद्धिमान् राजा का कार्य करने वाला, दयालु, जीवन के आदि और अन्त में सभी प्रकार के सुखों से सम्पन्न तथा छत्र-चामर आदि राजकीय उपकरणों से युक्त होता है ॥ ८३ ॥

चाप योग का फल—

आद्ये भागे चान्तिमे जीवितस्य सौख्योपेतः काननाद्रिप्रचारः।
योगे जातः कार्मुके सोऽति दुष्टो गर्वोन्मत्तोत्पत्तिकृत्कार्मुकास्त्रः ॥ ८४ ॥

चाप योग में उत्पन्न व्यक्ति जीवन के पूर्वार्द्ध में तथा अन्तिम भाग में सुखों से सम्पन्न, जंगल और पर्वतों में भ्रमण करने वाला, अत्यन्त दुष्ट, घमण्ड से उन्मत्त तथा धनुष-बाण का कार्य करने वाला होता है ॥ ८४ ॥

अर्धचन्द्र योग का फल—

भूमिपालप्राप्तचञ्चत्प्रतिष्ठः श्रेष्ठः सेनाभूषणार्थाम्बराद्यैः।
चेदुत्पत्तौ यस्य योगोऽर्द्धचन्द्रः स स्यादुत्सवार्थं जनानाम् ॥ ८५ ॥

अर्धचन्द्र योग में जिसकी उत्पत्ति हो वह राजाओं से गौरवशाली प्रतिष्ठा प्राप्त करने वाला, श्रेष्ठ, आभूषण, वस्त्र आदि से युक्त तथा लोगों को आनन्दित करने वाला तथा उत्सवादि में निपुण होता है ॥ ८५ ॥

चक्र समुद्र योग—

तनोर्धनादेकगृहान्तरेण स्युः स्थानषट्के गगनेचरेन्द्राः।
चक्राभिधानस्य समुद्रनामा योगावितीहाकृतिजाश्च विंशत् ॥ ८६ ॥

लग्न और धन से एक-एक भाव छोड़कर ६ भाव पर्यन्त ग्रह स्थित हों तो क्रम से चक्र और समुद्र नामक योग होता है। अर्थात् लग्न से आरम्भ कर १, ३, ५, ७, ९, ११ भावों में समस्त ग्रह हों तो चक्र योग तथा २, ४, ६, ८, १०, १२ भावों में ग्रह स्थित हों तो समुद्र योग होता है ॥ ८६ ॥

चक्र योग का फल—

श्रीमद्भूपोऽत्यन्तजातप्रतापो भूतो भूपोपायनैरर्चितः स्यात्।
योगे जातः पूरुषो यस्तु चक्रे पृथ्व्याः शालिनी तस्य कीर्त्तिः ॥ ८७ ॥

जिस पुरुष का जन्म चक्र योग में होता है वह श्री (कान्ति) मान्, स्वरूपवान्, अत्यन्त प्रतापी, राजा तथा राजाओं द्वारा सम्मानित तथा भूमण्डल में विस्तृत कीर्ति वाला होता है ॥ ८७ ॥

समुद्र योग का फल—

दाता धीरश्चारुशीलो दयालुः पृथ्वीपालप्राप्तसाम्यः प्रकामम् ।
योगे जातो यः समुद्रे स धन्यो धन्यो वंशस्तेन नूनं नरेण ॥ ८८ ॥

जो समुद्र योग में उत्पन्न होता है वह दानी, धैर्यवान्, सुन्दर, शील स्वभावयुक्त, राजा के समान समस्त अभिलाषाओं को पूर्ण करने वाला तथा यशस्वी होता है। उसके द्वारा उसका कुल धन्य हो जाता है (अर्थात् कुल की गरिमा बढ़ जाती है) ॥ ८८ ॥

गोल आदि योग—

ये योगाः कथिताः पुरा बहुतरास्तेषामभावे भवेद्-
गोलश्चैकगतैर्युगो द्विगृहगैः शूलस्त्रिगेहोपगैः ।
केदारश्च चतुर्षु सर्वखचरैः पाशस्तु पञ्चस्थितैः
षट्संस्थैरेकदाम-सप्तगृहगैर्वीणेति सख्या इमे ॥ ८९ ॥

जिन योगों को पहले कहा चुका है उनके आभाव में ये योग होते हैं—यदि एक ही भाव में सभी ग्रह हों तो गोल, दो स्थानों में हों तो युग, तीन भावों में हो तो शूल, चार भावों में केदार, पाँच भावों में सभी ग्रह हो तो पाश, छः स्थानों में हो तो दाम तथा सात स्थानों में सभी ग्रह हों तो वीणा योग होता है। इन योगों की सात संख्या होती है ॥ ८९ ॥

गोल योग का फल—

विद्यासत्यौदार्यसामर्थ्यहीना नानायासा नित्यजातप्रयासा ।
येषां योगः सम्भवेद्गोलनामा मानासत्यप्रीतयोऽनीतयस्ते ॥ ९० ॥

गोल नामक योग में उत्पन्न व्यक्ति विद्या, सत्य, उदारता, सामर्थ्य (पौरुष) से हीन, अनेक प्रयासों में प्रतिदिन निरत, अभिमान, असत्य एवं अनीति में संलग्न होता है ॥ ९० ॥

युग योग का फल—

पाखण्डेनाखण्डितप्रीतिभाजोऽलज्जास्ते स्युर्धर्मकर्मप्रयुक्ताः ।
पुत्रैरर्थैः सर्वथा ते वियुक्ता युक्तायुक्तज्ञानशून्या युगाख्ये ॥ ९१ ॥

युग योग में जन्म लेने वाला पाखण्डी, अल्पकालिक प्रेम करने वाला (किसी से मित्रता न निभाने वाला), धर्म-कर्म में लज्जा का अनुभव करने वाला, पुत्र और धर्म से सदैव हीन तथा उचित-अनुचित के विवेक से रहित होता है ॥ ९१ ॥

शूल योग का फल—

युद्धे वादे तत्पराः क्रूरचेष्टाः क्रूराः स्वान्ते निष्ठुरा निर्धनाश्च ।
योगो येषां सूतिकाले हि शूलः शूलप्रायास्ते जनानां भवन्ति ॥ ९२ ॥

जिसके जन्म समय में शूल योग हो वह युद्ध, वाद-विवाद में तत्पर, क्रूर कार्यों की चेष्टा करने वाला, हृदय से निष्ठुर, निर्धन तथा सदैव कष्ट का अनुभव करने वाला होता है ॥ ९२ ॥

केदार योग का फल—

चापोपेताश्चार्षवन्तो विनीताः कृत्यौत्सुक्याश्चोपकारादराश्च ।
योगे केदारे नरास्ते नु धीरा चाराश्चापीतरेषां विशेषात् ॥ ९३ ॥

केदार योग में उत्पन्न व्यक्ति, निरन्तर धनुषधारण करने वाला, आर्ष (वेद) परम्परा का अनुगामी, विनम्र, कृषि की उत्सुकता और उपकार से आदर पाने वाला, धैर्य का आचरण करने वाला अन्य लोगों की अपेक्षा विशिष्ट पुरुष होता है ॥ ९३ ॥

पाश योग का फल—

दीनाकारास्तत्पराश्चापकारे बन्धेनार्त्ता भूतिजल्पाः सदम्भाः ।
नानानर्थाः पाशयोगप्रजाता जातारण्यप्रीतयः स्युर्मनुष्याः ॥ ९४ ॥

पाश योग में उत्पन्न व्यक्ति आकृति से दीन, दूसरों के अनिष्ट में तत्पर, बन्धन से दुःखी, अधिक बकवास करने वाला, घमण्डी, अनेक अनर्थों (दुष्कर्मों) को करने वाला तथा वन में विहार करने वाला होता है ॥ ९४ ॥

दाम योग का फल—

जातानन्दो नन्दनाद्यैः सुधीरो विद्वान् भूपः कोपसञ्जाततोषः ।
चञ्चच्छीलोदार्यबुद्धिःप्रशस्तःशस्तः सूतौ कामिनी यस्य योगः ॥ ९५ ॥

जिसके जन्म समय दाम (या दामिनी) योग हो वह पुत्रादि से सुखी एवं आनन्दित, अत्यन्त धैर्यवान्, विद्वान्, राजा, क्रोध करने से सन्तुष्ट रहने वाला, प्रशस्त शीलता से युक्त, उदार बुद्धि वाला, श्रेष्ठ कोटि का होता है ॥ ९५ ॥

वीणा योग का फल—

अर्थोपेताः शास्त्रपारङ्गताश्च सङ्गीतज्ञाः पोषकाः स्युर्बहूनाम् ।
नानासौख्यैरन्विताःस्तु प्रवीणा वीणायोगे प्राणिनां जन्म येषाम् ॥ ९६ ॥

वीणा योग में जिस प्राणी का जन्म हो वह धन से सम्पन्न, शास्त्रों का पण्डित, सङ्गीत का ज्ञाता, बहुत लोगों का पालन करने वाला, अनेक प्रकार के सुखों से युक्त तथा चतुर होता है ॥ ९६ ॥

प्रोक्तैरेतैर्नाभसाख्यैश्च योगैः स्यात्सर्वेषां प्राणिनां जन्म कामम् ।
तस्मादेतेऽप्यन्तयत्नादपूर्वाः पूर्वाचार्यैर्जातके सम्प्रदिष्टाः ॥ ९७ ॥

इन नाभस नामक योगों का वर्णन समस्त प्राणियों के जन्म की सार्थकता जानने के लिए पूर्वाचार्यों ने जातक शास्त्र में किया है। अतः दैवज्ञों को प्रयास पूर्वक इनका अद्भुत योगों का विचार करना चाहिये ॥ ९७ ॥

चन्द्रयोग का फल—

उत्पातके कृशतनुर्निशि वाऽथ दृश्ये
दृश्ये दिवा सिरिशगर्भयशोदकश्च (?) ।
एवं स्थितः समफलः पृथिवीपतित्वं
जातो नयाय कुरुते परिपूर्णमूर्तिः ॥ ९८ ॥

चन्द्रमा यदि उत्पात[1] काल में क्षीण होकर रात्रि में दृश्य हो अथवा दिन में दृश्य हो तो ऐसे समय में उत्पन्न व्यक्ति यशस्वी होता है। यदि उसी योग में पूर्ण बली चन्द्र हो तो जातक न्यायप्रिय राजा होता है ॥ ९८ ॥

वामवामे ग्रहाः सर्वे सूर्यादीनां मुनिप्रमाः ।
दरिद्रयोगं जानीयात्तत्र कार्या विचारणा ॥ ९९ ॥

सूर्यादि सभी ग्रह यदि जन्म चक्र में वाम क्रम से स्थित हों तो दरिद्र योग समझना चाहिये यह मुनियों का वचन है इसमें सन्देह नहीं ॥ ९९ ॥

कारक योग—

मूलत्रिकोणस्वगृहोच्चसंस्था नभश्चराः केन्द्रगता मिथः स्युः ।
ते कारकाख्याः कथिता मुनीन्द्रैर्विज्ञाय चाज्ञाभवने विशेषात् ॥ १०० ॥

अपने मूलत्रिकोण, गृह तथा उच्च राशियों में स्थित ग्रह केन्द्र में हों तो परस्पर वे कारक ग्रह कहलाते हैं। विशेष रूप से दशम भाव में स्थित ग्रह योग-कारक होते हैं ऐसा श्रेष्ठ मुनियों का वचन है ॥ १०० ॥

प्रालेयरश्मिर्यदि मूर्तिवर्ती स्वमन्दिरस्थो निजतुङ्गजातः ।
कुजार्कजार्कामरराजपूज्याः केन्द्रस्थिताः कारकसंज्ञिताश्च ॥ १०१ ॥

चन्द्रमा यदि अपनी राशि (कर्क) में स्थित होकर लग्न में हो तथा मंगल, शनि, सूर्य, बृहस्पति अपनी-अपनी उच्च राशियों में स्थित होकर केन्द्र में हों तो कारक संज्ञक योग होता है अर्थात् ये सभी ग्रह कारक होते हैं ॥ १०१ ॥

---

१. चन्द्रमा की स्थिति से भी उत्पात का ज्ञान होता है तथा इसके अतिरिक्त अन्य आकाशीय उत्पात होते हैं जिनका विस्तृत विवेचन अद्भुतसागर और बृहत्संहिता में देखें ।

शुभग्रहे लग्नगतेऽम्बराम्बुस्थितौ ग्रहः कारकसंज्ञकः स्यात् ।
तुङ्गत्रिकोणस्वगृहांशयातास्तेऽपीह माने तपनो विशेषात् ॥ १०२ ॥

समस्त शुभग्रह लग्न में हों तथा चतुर्थ एवं दशम भाव में कोई भी ग्रह स्थित हो तो वह कारक संज्ञक ग्रह होता है। तथा अपने उच्च, त्रिकोण, गृह, नवांश में स्थित ग्रह भी कारक संज्ञक होते हैं। यह योग विशेष रूप से दशमस्थ सूर्य के लिए कहा गया है ॥ १०२ ॥

कारक योग का फल—

नीचान्वये यद्यपि जातजन्मा मन्त्री भवेत्कारकखेचराद्यैः ।
राजान्वये तस्य यदि प्रसूतिर्भूमीपतित्वं स कथं न याति ॥ १०३ ॥

नीच कुल में उत्पन्न व्यक्ति भी कारक ग्रहों के द्वारा मन्त्री हो जाता है। यदि राजा के कुल में उत्पन्न हो तो वह क्यों न राजा होगा? अर्थात् अवश्य राजपद प्राप्त करेगा ॥ १०३ ॥

वेशिस्थितो यस्य शुभो नभोगो जन्माख्यलग्ने च लवे स्वकीये ।
केन्द्राणि सर्वाणि च सद्ग्रहाणि तस्यालये श्रीः कुरुते विलासम् ॥ १०४ ॥

वेशि (सूर्य से द्वितीय) स्थान में यदि शुभग्रह हो, जन्म लग्न अपने ही नवमांश हो तथा सभी केन्द्र स्थान शुभग्रहों से युक्त हों तो उस व्यक्ति के घर में लक्ष्मी विलास करती है ॥ १०४ ॥

केन्द्रस्थिता गुरुविलग्नपचन्द्रभेशा
मध्ये च यस्य नितरां वितरन्ति भाग्यम् ।
शीर्षोदयाभ्युदयभेषु गता भवेयु-
रारम्भमध्यमविरामफलप्रदास्ते ॥ १०५ ॥

यदि जन्म समय में बृहस्पति, लग्नेश और चन्द्र राशीश तीनों ग्रह केन्द्र में स्थित हों विशेष रूप से यदि दशम में हों तो सदैव भाग्य की वृद्धि करने वाले होते हैं। यदि जन्म शीर्षोदय (३, ५, ६, ७, ८, ११ राशियों) लग्न में हो तथा उसी में उक्त ग्रह पड़े हों तो जीवन के आरम्भ, मध्य और अन्त्य में फलदायक होते हैं। अर्थात् बृहस्पति यदि शीर्षोदय राशि में हो तो जीवन के आरम्भ में, लग्नेश हो तो मध्य में तथा राशीश हो तो जीवन के अन्त में सुख प्राप्त होता है ॥ १०५ ॥

शकट योग—

संस्था विलग्नेऽप्यथ सप्तमे च पतङ्गमुख्यास्तु ग्रहा नितान्तम् ।
वदन्ति योगं शकटाह्वयं तं जातो नरः स्याच्छकटोपजीवी ॥ १०६ ॥

जन्म समय में सूर्यादि समस्त ग्रह लग्न और सप्तम में स्थित हों तो शकट योग होता है। इस योग में उत्पन्न व्यक्ति गाड़ी के द्वारा अपनी जीविका चलाता है।१०६।

नन्दा योग—

युग्मे युग्मे भवेत्त्रीणि ह्येकैकं च त्रिषु स्थितम्।
नन्दायोगश्च विज्ञेयश्चिरायुश्च सुखप्रदः ॥ १०७ ॥

तीन स्थानों में दो दो ग्रह तथा तीन स्थानों में एक-एक ग्रह स्थित हों तो उसे नन्दा योग जानना चाहिये। इस योग में उत्पन्न व्यक्ति दीर्घायु एवं सुख-सम्पन्न होता है॥ १०७ ॥

दाता योग—

लग्ने च जीवो युगगो भृगुश्च द्यूने च सौम्यो दशमे महीजः।
केन्द्रे त्वमी चारुफलप्रदाः स्युः सर्वार्थदातार इति प्रसिद्धाः ॥ १०८ ॥

लग्न स्थान में बृहस्पति चतुर्थ भाव में शुक्र, सप्तम में बुध, दशम में मंगल इस प्रकार चारों केन्द्र स्थानों में ये ग्रह सुन्दर फलदायक होते हैं तथा सभी प्रकार की सम्पत्तियों का दान कराने वाला 'दाता' नामक प्रसिद्ध योग होता है॥ १०८ ॥

राजहंस योग—

घटे मेषे नरे चापे तुलायां सिंहगे ग्रहे।
राजहंसो भवेद्योगी राज्यास्पदसुखप्रदः ॥ १०९ ॥

कुम्भ, मेष, मिथुन, धन, तुला और सिंह राशियों में सभी ग्रह हों तो राजहंस नामक योग होता है। यह योग राजपद एवं सुख देने वाला होता है॥ १०९ ॥

चिल्ली पुच्छ योग—

सिंहासने च हंसे च दण्डे योगे मरुद्ध्वजे।
चतुःसागरयोगे च चिल्लिपुच्छो महाफलः ॥ ११० ॥

सिंहासन, हंस, दण्ड, मरुध्वज, एवं चतुःसागर योगों में यदि चिल्लिपुच्छ योग हो तो महान फलदायक होता है॥ ११० ॥

तुलामकरमेषाद्यलग्ने वै ह्यथवा क्वचित्।
सिंहासने च डमरौ चिल्लिपुच्छः स लभ्यते ॥ १११ ॥

तुला, मकर, मेष लग्न में अथवा अन्यत्र सिंहासन और डमरु योग हो तो चिल्लिपुच्छ योग होता है। यह शुभकारक योग है॥ १११ ॥

मृगे कर्के च पुच्छः स्याद्राजहंसः सुखप्रदः।
कुम्भे च मन्मथे चैव चिल्लिपुच्छोऽभिधीयते ॥ ११२ ॥

मकर, कर्क, कुम्भ और मिथुन लग्न में यदि राजहंस योग हो तो सुखदायक चिह्निपुच्छ योग होता है ॥ ११२ ॥

मृगे कर्के ध्वजो पुच्छः कन्याली वृषभे झषे ।
चिह्निपुच्छो भवेद्योगश्चतुःसागरगोचरे ॥ ११३ ॥

मकर और कर्क लग्न में ध्वज योग हो तथा कन्या, वृश्चिक, वृष और मीन लग्नो में चतुःसागर योग हो तो चिह्निपुच्छ होता है ॥ ११३ ॥

योगोदितफलं पुच्छः करोति द्विगुणं फलम् ।
तेन योगाधियोगोऽयं लग्नेऽपि कस्यचिन्मते ॥ ११४ ॥

योगों के साथ चिह्निपुच्छ योग होने से उस योग में कहे गये फल का द्विगुणित फल होता है। इसलिए इसे योगाधियोग कहा जाता है। कुछ लोगों के मत से यह योग लग्न में भी होता है ॥ ११४ ॥

घटशून्ये नृपसचिवो गोमहिषीहयगजैर्युक्तः ।
नीतिज्ञो बहुपुत्रो लग्नेऽपि च सम्मताः केचित् ॥ ११५ ॥

कुम्भ लग्न को छोड़कर अन्य किसी लग्न में यह (चिह्निपुच्छ) योग हो तो वह व्यक्ति राजा का मन्त्री, गाय-भैंस, घोड़ा, हाथी से सम्पन्न, नीतिज्ञ, तथा बहुत पुत्रों वाला होता है। ऐसा कुछ लोगों का मत है ॥ ११५ ॥

लालाटिक योग—

चन्द्रोऽष्टमे चन्द्रगेहेऽर्कार्किशुक्रखगाः स्थिताः ।
केमद्रुमे च सम्पूर्णे योगो लालाटिको मतः ॥ ११६ ॥

चन्द्रमा लग्न से अष्टम भाव में हो, कर्क राशि में सूर्य, शनि और शुक्र स्थित हों तथा पूर्ण रूप से केमद्रुम योग हो तो लालाटिक योग होता है ॥ ११६ ॥

लालाटिक योग का फल—

आजन्मतो भवति कारकगैः प्रसिद्धः
शिल्पादिकर्मकुशलो मुशलाकृतिश्च ।
सूर्यात्मजोऽपि लभते विविधामलक्ष्मीं
जन्मान्तरेऽपि न जहाति ललाटियोगः ॥ ११७ ॥

लालाटिक योग में उत्पन्न व्यक्ति कारक ग्रहों के द्वारा जन्म से ही प्रसिद्ध, शिल्प (पत्थर, काष्ठ एवं मूर्ति कला) कार्य में दक्ष, मुशल के समान आकृति वाला (पतला लम्बा तथा मध्यभाग अतीव कृश) होता है। अधिक

सन्तान होते हुये भी विविध प्रकार की दरिद्रता जन्मान्तर में भी उसका साथ नहीं छोड़ती ॥ ११७ ॥

महापातक योग—

राहुणा सहितश्चन्द्रः सपापगुरुवीक्षितः।
महापातकयोगोऽयं यदि शक्रसमो भवेत् ॥ ११८ ॥

राहु से युक्त चन्द्रमा यदि पापयुक्त गुरु से दृष्ट हो तो महापातक नामक योग होता है। इन्द्र के समान व्यक्ति भी इस योग में पापकर्म करने वाला होता है ॥ ११८ ॥

वृषभ से घात योग—

भौमेन[1] वीक्षते लग्नं लग्नं पश्यति भास्करः।
गुरुशुक्रौ न वीक्षेते बलीवर्देन हन्यते ॥ ११९ ॥

मंगल और सूर्य लग्न को देखते हों तथा गुरु और शुक्र लग्न को न देखते हों तो बैल या साँड़ के प्रहार से मृत्यु होती है ॥ ११९ ॥

हठहन्ता (आत्महत्या) योग—

आयस्थानगते चन्द्रे चन्द्रस्थानगते रवौ।
हठेन नाशो विज्ञेयः पञ्चरात्रौ विशेषतः ॥ १२० ॥

एकदश भाव में चन्द्रमा तथा चन्द्रस्थान (कर्क राशि) में सूर्य हो तो पाँच रात्रि (अर्थात् पाँच दिन) के अन्दर हठ वश मृत्यु होती है अर्थात् स्वयं आत्म-हत्या करता है ॥ १२० ॥

वृक्ष से मृत्युयोग—

मदनाख्यो यदा योगो लग्ने च राहुदर्शिते।
वृक्षस्थं मरणं तस्य यदि शक्रसमो भवेत् ॥ १२१ ॥

यदि केवल राहु लग्न को देखता हो तो मदन नामक योग होता है। इस योग में इन्द्र के समान योग वाले व्यक्ति की भी मृत्यु वृक्ष से होती है। (वृक्ष से गिर कर अथवा वृक्ष से लटक कर आत्महत्या करता है।) ॥ १२१ ॥

नासाच्छेद योग—

षष्ठस्थानगते शुक्रे तनुस्थानगते कुजे।
नासाच्छेदकरं योगं वदामि मुनिसत्तम ॥ १२२ ॥

---

१. 'भौमेन' के स्थान पर 'भौमोन' पाठान्तर है। जो संगत नहीं प्रतीत होता। यदि भौमोन पाठान्तर ग्रहण करते हैं तो यह अर्थ होता है—मंगल लग्न को न देखता हो परन्तु सूर्य देखता हो।

हे मुनि सत्तम मैं नासिका छेदन करने वाला योग कहता हूँ। लग्न से छठे भाव में शुक्र और लग्न स्थान में मंगल हो तो उक्त योग होता है ॥ १२२ ॥

कर्णछेद योग—

मन्देन दृश्यते चन्द्रो लग्ने च रविभार्गवौ।
शुभग्रहा न पश्यन्ति कर्णच्छेदो न संशयः ॥ १२३ ॥

चन्द्रमा को शनि देखता हो, लग्न में सूर्य और शुक्र हों तथा उनपर शुभग्रहों की दृष्टि न हो तो निःसन्देह कर्णछेद होता है ॥ १२३ ॥

पादखञ्ज (लंगड़ा) योग—

कविना सहितो मन्दो गुरुणा सहितः रविः[1]।
शुभग्रहा न पश्यन्ति पादखञ्जो भवेन्नरः ॥ १२४ ॥

शुक्र के साथ शनि एवं गुरु के साथ सूर्य पड़े हों तथा शुभग्रहोंसे दृष्ट न हों तो मनुष्य पैर से खञ्ज अर्थात् लँगड़ा होता है ॥ १२४ ॥

सर्पदंश योग—

लग्नाच्च सप्तमस्थाने शन्यर्कौ राहुसंयुतौ।
सर्पेण पीडा तस्योक्ता शय्यायां स्वपतोऽपि च ॥ १२५ ॥

लग्न से सप्तम भाव में शनि, सूर्य और राहु स्थित हों तो बिस्तर पर सोते हुये भी सर्प से पीड़ित होता है। अर्थात् सोते हुये सर्पदंश होता है ॥ १२५ ॥

व्याघ्र से घातयोग—

गुरुस्थानगते सौम्ये शनिस्थानगते कुजे।
पञ्चविंशतिवर्षेण च वने व्याघ्रेण हन्यते ॥ १२६ ॥

जिसके जन्म समय में गुरु के स्थान (धनु और मीन) में बुध तथा शनि के स्थान (मकर, कुम्भ) में मंगल स्थित हो उसकी पच्चीस वर्ष की आयु में वन में व्याघ्र द्वारा मृत्यु होती है ॥ १२६ ॥

असिघात योग—

शुक्रस्थानगते चन्द्रे चन्द्रस्थानगते शनौ।
अष्टाविंशति वर्षे च ह्यसिघातेन मृत्युदः ॥ १२७ ॥

चन्द्रमा यदि शुक्र के क्षेत्र (वृष, तुला) में हो तथा चन्द्रस्थान (कर्क) में शनि हो तो अट्ठाइसवें वर्ष में असि (तलवार) के आघात से मृत्यु होती है ॥१२७॥

१. कविः इति पाठान्तरम्।

शरघात योग—

धर्मस्थानगते भौमे शन्यर्कौ राहुसंयुतौ।
शुभग्रहा न पश्यन्ति शरक्षेपेण हन्यते॥ १२८॥

नवम भाव में मंगल हो, शनि और सूर्य राहु से युक्त हों तथा उनपर शुभग्रहों की दृष्टि न हो तो बाण के आघात से मृत्यु होती है॥ १२८॥

ब्रह्महत्या योग—

रविणा सहितो भौमः शनिर्वा जीवसंयुतः।
अष्टाविंशतिवर्षे च ब्रह्मघाती न संशयः॥ १२९॥

सूर्य के साथ मङ्गल अथवा बृहस्पति के साथ शनि जिसके जन्म समय में हो वह २८ वर्ष की आयु में ब्राह्मण की हत्या करता है, इसमें सन्देह नहीं॥ १२९॥

सन्तानहानि योग—

रविस्थानगते चन्द्रे गुरुः स्वस्थानगो यदा।
सागरे च स्थिते लग्ने पञ्चापत्यविनाशकृत्॥ १३०॥

सूर्य के स्थान (सिंह) में चन्द्रमा, गुरु अपने स्थान (धनु और मीन) में स्थित हों तथा लग्न सागर योग से युक्त हो तो पाँच सन्तान नष्ट होती है॥ १३०॥

दोला योग—

मीने मेषे तथा चापे स्थिताः स्थानत्रये ग्रहाः।
दोलासंज्ञकयोगः स्याद्राज्यदोऽयमुदाहृतः॥ १३१॥

मीन, मेष और धनु इन्हीं तीन स्थानों (राशियों) में समस्त ग्रह हों तो दोला नामक योग होता है। यह योग राज्य सुख प्रदान करने वाला कहा गया है॥ १३१॥

केन्द्रस्थ गुरु का फल—

सम्मानदानगुणपात्रपरीक्षितो वा कलानिधिः कौशलगीतनृत्यः।
मन्त्रीश्वरो राजसभाविवेकी केन्द्रस्थिते पापविवर्जिते गुरौ॥१३२॥

पाप ग्रहों से रहित बृहस्पति यदि केन्द्र स्थान में हों तो वह व्यक्ति सम्मानित, गुणवान, सुपरीक्षित, कलाओं का मर्मज्ञ, खेल-कूद, गीत और नृत्य का ज्ञाता, श्रेष्ठ मन्त्री तथा राजसभा का पूर्ण ज्ञान रखने वाला होता है॥ १३२॥

पदविच्छेद योग—

लग्नस्थानगतो भौमो राहुशन्यर्कवीक्षितः।
योगः पदकविच्छेदो यदि शक्रसमो भवेत्॥ १३३॥

लग्न स्थान में स्थित मंगल को राहु, शनि और सूर्य देखते हो तो पदक विच्छेद योग होता है। इस योग में इन्द्रतुल्य व्यक्ति भी पद से च्युत हो जाता है॥ १३३॥

इच्छित मृत्यु योग—

केन्द्रस्थानगते भौमे सैंहिकेये च सप्तमे।
यदि तस्य विजानीयादिच्छामृत्युस्तदा भवेत्॥ १३४॥

केन्द्र स्थान में मंगल, सप्तम भाव में राहु हो तो अपनी इच्छा से मरने का योग समझना चाहिये। अर्थात् योजनाबद्ध आत्महत्या का योग होता है॥ १३४॥

वर्षान्त में मृत्यु योग—

लग्नात्सप्तमशीतांशुः पापष्टशुभलग्नगः।
लग्नस्थितो यदा भानुः समान्ते म्रियते शिशुः॥ १३५॥

लग्न से सप्तम भाव में चन्द्रमा हो, पापग्रह अष्टम में, शुभग्रह लग्न में तथा सूर्य भी लग्न में हो तो वर्ष के अन्त में बालक की मृत्यु होती है। अर्थात् एक वर्ष की ही आयु होती है॥ १३५॥

राजयोग—

लग्ने लग्नपतिर्बलान्वितवपुः केन्द्रे त्रिकोणे शिवं
पृच्छाजन्मविवाहयानतिलके कुर्यान्नृपं तं ध्रुवम्।
सच्छीलं विभवान्वितं गजयुतं मुक्तातपत्रान्वितं
जातं निम्नकुलेऽपि भूतिपुरुषं शंसन्ति गर्गादयः॥१३६॥

प्रश्न लग्न, विवाह, यात्रा एवं वरवरण अथवा राज्याभिषेक लग्न का स्वामी बलवान होकर लग्न, केन्द्र अथवा त्रिकोण में स्थित हो तो निश्चय ही राज्य पद देने वाला शुभ योग होता है। इस योग में उत्पन्न व्यक्ति सुशील, सम्पन्न, हाथी, मुक्ता (रत्न), छत्र से युक्त होता है। यदि नीच कुल में उत्पन्न हो तो भी सम्पत्तिशाली पुरुष होता है। गर्गादि मुनियों ने इस योग की प्रशंसा की है।१३६।

एकः शुक्रो जननसमये लाभसंस्थे च केन्द्रे
जातो वै जन्मराशौ यदि सहजगते प्राप्यते वा त्रिकोणे।
विद्याविज्ञानयुक्तो भवति नरपतिर्विश्वविख्यातकीर्ति-
र्दानी मानी च शूरो हयगणसहितः सद्गजैः सेव्यमानः॥१३७॥

अकेला शुक्र ही जन्म समय में यदि लाभ भाव, केन्द्र, जन्म राशि (चन्द्रमा के साथ), तृतीय भाव, अथवा त्रिकोण में स्थित हो तो जातक विद्या, विज्ञान से युक्त, राजा, विश्वविख्यात, यशस्वी, दानी, स्वाभिमानी, शूर, घोड़ों के समूह एवं हाथियों के सुख से सम्पन्न होता है॥ १३७॥

दशमभवननाथे केन्द्रकोणे धनस्थे-
स्वनिपतिबलयाने शस्तसिंहासनेषु ।
स भवति नरनाथो विश्वविख्यातकीर्त्ति-
र्मदगलितकपोलैः सद्गजैः सेव्यमानः ॥ १३८ ॥

दशम भाव का स्वामी केन्द्र स्थानों में, त्रिकोण में अथवा द्वितीय भाव में हो तो जातक पृथ्वीपति (राजा), सेना, वाहन तथा प्रशस्त सिंहासन से सुशोभित, विश्वविख्यात, यशस्वी तथा मदस्राव करने वाले उत्तम हाथियों से सेवित होता है ॥ १३८ ॥

एकोऽपि केन्द्रभवने नवपञ्चमे वा भास्वान् मयूखविमलीकृतदिग्विभागः ।
निःशेषदोषमपहृत्य शुभप्रसूतं दीर्घायुषं विगतरोगभयं करोति ॥१३९॥

जन्म समय में एक भी शुभग्रह अपनी तेजस्वी किरणों द्वारा समस्त दिशाओं को विमल (प्रकाशमान) कर रहा हो (अर्थात् पूर्ण बली हो) तथा केन्द्र (१, ४, ७, १०) अथवा त्रिकोण (५, ९) में स्थित हो तो समस्त दोषों को दूर कर कर जातक को दीर्घायु और नीरोग बनाता है ॥ १३९ ॥

चन्द्रः पश्येद्यदादित्यं बुधः पश्येन्निशापतिम् ।
अस्मिन् योगे तु यो जातः स भवेद्वसुधाधिपः ॥ १४० ॥

यदि चन्द्रमा सूर्य को देखता हो तथा बुध चन्द्रमा को देखता हो तो इस योग में उत्पन्न व्यक्ति राजा होता है ॥ १४० ॥

यदि भवति च केन्द्री यामिनीनाथ एवं
वितरति प्रियभार्यां पुत्रिणीं वा सुरूपाम् ।
धनकनकसमृद्धिं माणिकं हीररत्नं
रचयति मृगनाभिष्यन्दमोदार्चिताङ्गाम् ॥ १४१ ॥

यदि चन्द्रमा केन्द्र स्थान में हो तो वह प्रिय, पुत्र सन्तान उत्पन्न करने वाली सुन्दरी पत्नी प्रदान करता है । धन, स्वर्ण, सम्पत्ति, माणिक, हीरा, धारण करने वाला तथा मृग की नाभि से प्राप्त कस्तूरी का सेवन करने वाला होता है ।१४१।

शुक्रो यस्य बुधो यस्य यस्य केन्द्रे बृहस्पतिः ।
दशमोऽङ्गारको यस्य स जातः कुलदीपकः ॥ १४२ ॥

जिसके जन्म समय में बुध, शुक्र और बृहस्पति केन्द्र में हों तथा मंगल दशम भाव में स्थित हों वह अपने कुल का दीपक (श्रेष्ठ) होता है ॥ १४२ ॥

हयरथनरनागारामसम्यक्फलेशो
जलधितटनिवासीरत्नतुल्यं च धान्यम् ।

बहुजनकुलमित्रैः सत्यवादी प्रसूतो
भवति यदि च केन्द्री दैत्यपूज्यो बुधश्च ॥ १४३ ॥

जन्म समय में यदि शुक्र अथवा बुध केन्द्र स्थान में स्थित हों तो घोड़ा, रथ, मनुष्य, हाथी, उद्यान और रत्नों से परिपूर्ण, समुद्र के निकट निवास करने वाला, धान्य (अन्न) के समान रत्नों का सञ्चय करने वाला, बहुत से लोगों का मित्र तथा सत्यवक्ता होता है ॥ १४३ ॥

किं कुर्वन्ति ग्रहाः सर्वे यस्य केन्द्रे बृहस्पतिः ।
मत्तमातङ्गयूथानां भिनत्त्येकोऽपि केसरी ॥ १४४ ॥

जिसके केन्द्र स्थान में बृहस्पति पड़ा हो उसका अन्य ग्रह क्या करेंगे ? (अर्थात् कुछ नहीं कर सकते ।) जैसे उन्मत्त हाथियों के झुण्ड को एक ही शेर छिन्न-भिन्न करता है । उसी प्रकार अकेला एक बृहस्पति ही योगकारक हो जाता है ॥ १४४ ॥

एक एव सुरराजपुरोधाः केन्द्रगोऽथ नवपञ्चमगो वा ।
लाभगो भवति यत्र विलग्ने तत्र शेषखचरैरबलैः किम् ॥ १४५ ॥

अकेले एक ही ग्रह बृहस्पति केन्द्र, त्रिकोण (९, ५), लाभ (एकादश) अथवा लग्न में हो तो अन्य ग्रहों के निर्बल होने का कोई प्रभाव नहीं पड़ता । अकेले बृहस्पति ही सुख कारक रहेगा ॥ १४५ ॥

भवति सरलमूर्त्तिर्वल्लभः कामिनीनां
सकलजनसमर्थो दीर्घजन्माविधेयः ।
गजविषयगुणज्ञो द्रव्यमुख्यः प्रधानः
सधनकनक पूर्णो दैत्यपो यस्य केन्द्रे ॥ १४६ ॥

जिसके जन्म समय में शुक्र केन्द्र स्थान में हो वह अत्यन्त सरल स्वभाव वाला, स्त्रियों का प्रिय, समस्त लोगों में समर्थ (सक्षम), दीर्घायु, विनम्र, गजशास्त्र (हाथियों के विषय) एवं उसके गुणों का ज्ञाता, धन को प्रधानता देने वाला, प्रधान (सामान्य लोगों में श्रेष्ठ), धन और स्वर्ण से सम्पन्न होता है ॥ १४६ ॥

धनवान् प्राज्ञः शूरो मन्त्री वा दण्डनायकः पुरुषः ।
दशमस्थे रवितनये वृन्दपुरग्रामनेता वा ॥ १४७ ॥

दशम भाव में यदि शनि बैठा हो तो व्यक्ति धनवान्, बुद्धिमान्, शूर, मन्त्री, दण्डदेने वाला अधिकारी, तथा किसी सामाजिक संगठन या ग्राम का नेता (प्रधान) होता है ॥ १४७ ॥

तुलाकोदण्डमीनस्थो लग्नस्थोऽपि शनैश्चरः ।
करोति भूपतेर्जन्म वंशे च नृपतिर्भवेत् ॥ १४८ ॥

जिसके जन्म समय में शनि तुला, धन, मीन अथवा लग्न में स्थित हों वह राजा होता है। अथवा राजकुल में उत्पन्न होता है ॥ १४८ ॥

दिव्यस्त्रीवरकाञ्चनाम्बरगतामाधारलक्ष्मीमयः
शास्त्रं कौतुकगीतनृत्यरतताव्यापारदीक्षागुरुः।
पुत्रभ्रातृजनान्वितः स्थिरमतिः कर्त्तातिप्रीत्यन्वितो
जीवः केन्द्रगतो भवेन्निजसुखी सत्कर्मकारी नरः ॥ १४९ ॥

जन्म समय में बृहस्पति यदि केन्द्र स्थान में स्थित हों तो वह दिव्य (अत्यन्त सुन्दरी) स्त्री, स्वर्ण, और वस्त्र के आधार से लक्ष्मी के समान अर्थात् अत्यधिक सम्पन्न), शास्त्रों का ज्ञाता, खेलकूद, गीत-नृत्य में आसक्त, व्यापार सम्बन्धी उपदेश देने वाला, श्रेष्ठ, पुत्र, भाई, आदि पारिवारिक जनों से स्थिर बुद्धिवाला, कार्य करने वाला, सभी लोगों से प्रेम करने वाला, स्वयं में सुखी, तथा सत्कर्म करने वाला पुरुष होता है ॥ १४९ ॥

आकाशमन्दिरगतस्तनुपः स्वगेहे कुर्यान्नृपं नृपतिचक्रवरैः सुसेव्यम्।
सैन्यप्रतापदहनाहृतशत्रुपक्षं शक्रो यथा सुरगणैश्च विराजमानः ॥१५०॥

जन्म समय में लग्नेश दशम भाव में अपनी ही राशि में हो तो जातक राजाओं से सेवित श्रेष्ठ राजा, अपनी सेनाओं की प्रताप रूपी अग्निसे शत्रु पक्ष को नष्ट करने वाला, देवताओं से सेवित इन्द्र के समान होता है ॥ १५० ॥

उपचयगृहसंस्थो जन्मिनो यस्य चन्द्रः
स्वगृहमथ नवांशे केन्द्रजाताश्च सौम्याः।
सकलबलवियुक्ताश्चैव पापाभिधानाः
स भवति नरनाथः शक्रतुल्यो बलेन ॥ १५१ ॥

जिसके जन्म समय में चन्द्रमा उपचय स्थानों (३, ६, १०, ११) में स्थित हो तथा शुभग्रह अपनी राशि अथवा नवांश में होकर केन्द्र में स्थित हो तथा सभी पाप ग्रह निर्बल हों तो वह व्यक्ति इन्द्र के समान प्रतापी राजा होता है ॥ १५१ ॥

विद्याकलागुणविराजितकामधेनुर्भोगैः परोच्चयुवतीजितकामराजः।
देशाधिपत्यपुरपर्यटनक्षमार्त्तो मीने सिते सकलमण्डलदीप्तदीक्षः ॥ १५२ ॥

शुक्र यदि मीनराशि में स्थित होकर केन्द्र में गया हो तो जातक विद्या, कला, गुणों से युक्त होकर कामधेनु की तरह (सभी प्रकार) की इच्छाओं की पूर्ति में समर्थ), भोग (आनन्द विहार) द्वारा पराई उच्च कुल की स्त्रियों को वशीभूत करने वाला कामदेव के समान होता है। देश के प्रशासनिकभार तथा नगर

दर्शन के श्रम से थका हुआ तथा समस्त नगरवासियों को अपने प्रखर विचारों से दीप्त (प्रकाशित) करने वाला होता है ॥ १५२ ॥

काऽमेजकन्ये रिपुरन्ध्रसंस्थे केन्द्रत्रिकोणे व्ययगे च राहुः ।
कामी च शूरो बलवान् स भोगी गजाश्वछत्रं बहुपुत्रता च ॥१५३॥

समस्त भाव में मेष और कन्याराशि हो तथा छठें, आठवें, केन्द्र, त्रिकोण अथवा व्यय भाव में राहु हो तो जातक कामी, शूर, बलवान् सुख भोग करने वाला हाथी, घोड़ा, छत्र से युक्त तथा अधिक सन्तान वाला होता है ॥ १५३ ॥

मृगपतिवृषकन्या–कर्कटस्थे च राहौ
भवति विपुललक्ष्मी राजराजाधिपो वा ।
हयगजनरनौकामेदिनोपण्डितश्च
स भवति कुलदोपो राहुतुङ्गी नराणाम् ॥ १५४ ॥

जिसके जन्म समय में राहु सिंह, वृष, कन्या और कर्क राशि में हों तो अपार धन-सम्पत्ति से युक्त राजाओं का भी राजा होता है। यदि राहु अपनी उच्च राशि (मिथुन) में हो तो वह घोड़ा, हाथी, मनुष्य, नौका, तथा भूमि का विशेषज्ञ एवं अपने कुल मे श्रेष्ठ होता है ॥ १५४ ॥

केन्द्रत्रिकोणे बुधजीवशुक्राः स्थिता नराणां यदि जन्मकाले ।
धर्मार्थविद्यायशकीर्तिलाभी शान्तः सुशोलः स नराधिपःस्यात् ॥१५५॥

जन्म समय में यदि बुध, गुरु और शुक्र केन्द्र और त्रिकोण में स्थित हों तो धर्म, अर्थ (धन), विद्या, यश-कीर्ति (जीवितावस्था में यश मृत्यु के बाद कीर्ति) से लाभान्वित, शान्त, सुशील, तथा राजा होता है ॥ १५५ ॥

भृगुसुतसुरपूज्यश्चन्द्रमाः केन्द्रवर्ती
बहुसुखधनवृद्धिः कर्म साध्यं नराणाम् ।
रवि सुतशशिपुत्रे भानुजीवे त्रिकोणे
क्षितिसुतदशमे वै राजयोगा भवन्ति ॥ १५६ ॥

शुक्र, बृहस्पति, चन्द्रमा यदि केन्द्र में हो तो मनुष्य के सुख, एवं धन की वृद्धि तथा कार्यों की सिद्धि होती है। यदि शनि, बुध, सूर्य और गुरु त्रिकोण में तथा मंगल दशम भाव में हों तो राजयोग होता है ॥ १५६ ॥

केन्द्रत्रिकोणेषु भवन्ति सौम्या दुश्चिक्यलाभारिगताश्च पापाः ।
यस्य प्रयाणेऽप्यथ जन्मकाले ध्रुवं भवेत्तस्य महीपतित्वम् ॥ १५७ ॥

जन्म समय में यदि केन्द्र और त्रिकोण में सभी शुभग्रह हों, तृतीय, एकादश,

षष्ठ भावों में पाप ग्रह गये हों तो निश्चय ही उसे राज्य की प्राप्ति होती है। यात्रा काल में यदि यही योग हो तो यात्रा में भी राज्य लाभ होता है ॥ १५७ ॥

लाभे त्रिकोणे यदि शीतरश्मिः करोत्यवश्यं क्षितिपालतुल्यम्।
कुलद्वयानन्दकरं नरेन्द्रं ज्योत्स्नेव दीपस्य तमोऽपहन्त्री ॥ १५८ ॥

चन्द्रमा यदि एकादशभाव में या त्रिकोण में स्थित हो तो जातक अवश्य राजा के समान होता है। तथा वह दोनों कुल (मातृ एवं पितृकुल) को आनन्दित करने वाला (दारिद्रय रूपी) अन्धकार को दूर करने वाले दीपक की तरह राजा होता है ॥ १५८ ॥

शत्रुस्थाने यदा जीवो लाभस्थाने शशी भवेत्।
गृहमध्ये स जातश्च विख्यातः कुलदीपकः ॥ १५९ ॥

छठें भाव में गुरु, एकादश में चन्द्रमा हों तो वह अपने गृह में सर्वश्रेष्ठ तथा कुलका मान बढ़ाने वाला होता है ॥ १५९ ॥

लग्नाधिपो वा जीवो वा शुक्रो वा यत्र केन्द्रगः।
तस्य पुंसश्च दीर्घायुः स भवेद्राजवल्लभः ॥ १६० ॥

लग्नेश, बृहस्पति और शुक्र इनमें से कोई भी ग्रह केन्द्र में स्थित हो तो वह व्यक्ति दीर्घायु तथा राजा का प्रियपात्र होता है ॥ १६० ॥

दशमे बुधसूर्यौ च भौमराहू च षष्ठगौ।
राजयोगोऽत्र यो जातः स पुमान्नायको भवेत् ॥ १६१ ॥

दशम भाव में बुध और सूर्य, षष्ठ भाव में मंगल और राहु स्थित हों तो राजयोग होता है। तथा इस योग में उत्पन्न पुरुष नायक (राजा या राजनेता) होता है ॥ १६१ ॥

आदौ जीवः शनिश्चान्ते ग्रहा मध्ये निरन्तरम्।
राजयोगं विजानीयात्कुटुम्बबलमुत्तमम् ॥ १६२ ॥

आदि (लग्न) स्थान में बृहस्पति, अन्त्य (बारहवें) भाव में शनि हों तथा दोनों के मध्य में सभी ग्रह हों तो कुटुम्ब का सामर्थ्य बढ़ाने वाला राजयोग होता है ॥ १६२ ॥

सहजस्थो यदा जीवो मृत्युस्थानेयदा सितः।
निरन्तरं ग्रहा मध्ये राजा भवति निश्चितम् ॥ १६३ ॥

तृतीय भाव में बृहस्पति और अष्टम भाव में शुक्र स्थित हों तथा इन दोनों के बीच में अन्य सभी ग्रह हों तो जातक अवश्य राजा होता है ॥ १६३ ॥

जीवो वृष सुधारश्मिर्मिथुने मकरे कुजः ।
सिंहे भवति सौरिश्च कन्यायां बुधभास्करौ ॥१६४॥
तुलायामसुराचार्यो राजयोगो भवेदयम् ।
अत्र योगे समुत्पन्नो महाराजो भवेन्नरः ॥१६५॥

वृष में बृहस्पति, मिथुन में चन्द्रमा, मकर में मंगल, सिंह में शनि, कन्या में सूर्य और बुध तथा तुला में शुक्र स्थित हों तो यह राजयोग होता है। इस योग में उत्पन्न व्यक्ति महाराजा होता है ॥ १६४–१६५ ॥

एको जीवो यदा लग्ने सर्वे योगास्तदा शुभाः ।
दीर्घजीवी महाप्राज्ञो जातको नायको भवेत् ॥ १६६ ॥

अकेले बृहस्पति ही यदि लग्न में स्थित हों तो सभी योग शुभकारक हो जाते हैं। तथा जातक दीर्घजीवी, महान्, बुद्धिमान् तथा नायक (नेता) होता है ॥ १६६ ॥

धने शुक्रोऽथ भौमश्च मीने जीवस्तुले बुधः ।
नीचस्थौ शनिचन्द्रौ च राजयोगस्तदा ध्रुवम् ॥ १६७ ॥

धन भाव में शुक्र और मंगल, मीन में बृहस्पति, तुला में बुध तथा चन्द्रमा और अपनी नीच राशियों में स्थित हों तो निश्चित राजयोग होता है ॥ १६७ ॥

अस्मिन् योगे च यो जातः स राजा धनवर्जितः ।
दाता भोक्ता च विख्यातो मान्यो मण्डलनायकः ॥ १६८ ॥

इस (उक्त १६७ श्लोक में वर्णित) योग में उत्पन्न व्यक्ति धनहीन, राजा, दानी, सुखभोग करने वाला, विख्यात, सम्मानित तथा मण्डल (क्षेत्र विशेष) का नेता होता है ॥ १६८ ॥

मीने शुक्रो बुधश्चान्त्ये धने राहुस्तनौ रविः ।
सहजे च भवेद्भौमो राजयोगोऽभिधीयते ॥ १६९ ॥

मीन में शुक्र, द्वादश भाव में बुध, द्वितीय भाव में राहु, लग्न में सूर्य तथा तृतीय भाव में मंगल हो तो राजयोग होता है ॥ १६९ ॥

सहजे च यदा जीवो लाभस्थाने च चन्द्रमाः ।
स राजा गृहमध्यस्थो विख्यातः कुलदीपकः ॥ १७० ॥

जिसके जन्म समय में लग्न से तीसरे भाव में बृहस्पति एकादश भाव में चन्द्रमा स्थित हों, वह अपने गृह में राजा के समान तथा अपने कुल का श्रेष्ठ व्यक्ति होता है ॥ १७० ॥

शुभग्रहाः शुभक्षेत्रे भवन्ति यदि केन्द्रगाः।
तदा शुभानि कर्माणि स करोति हि जातकः ॥ १७१ ॥

शुभग्रह शुभ स्थानों (शुभ ग्रह की राशियों) में हों तथा केन्द्र स्थानों में स्थित हो तो जातक शुभ कर्मों को ही करने वाला होता है ॥ १७१ ॥

उच्चस्थानगताः सौम्याः केन्द्रस्थाने भवन्ति चेत्।
ध्रुवं राज्यं भवेत्तस्य यदि नीचसुतो भवेत् ॥ १७२ ॥

शुभ ग्रह यदि अपनी-अपनी उच्चराशियों में स्थित होकर केन्द्र में हों तो नीच कुल में उत्पन्न व्यक्ति भी अवश्य राजा होता है ॥ १७२ ॥

स्वक्षेत्रस्थो यदा जीवो बुधः सौरिश्च चेद्भवेत्।
तस्य जातस्य दीर्घायुः सम्पत्तिश्च पदे पदे ॥ १७३ ॥

यदि बृहस्पति, बुध, शुक्र और शनि अपनी-अपनी राशियों में स्थित हों तो जातक दीर्घायु तथा पग-पग पर धन-लाभ करने वाला होता है ॥ १७३ ॥

मीने बृहस्पतिः शुक्रश्चन्द्रमाश्च यदा भवेत्।
तस्य जातस्य राज्यं स्यात्पत्नी च बहुपुत्रिणी ॥ १७४ ॥

मीन राशि में यदि बृहस्पति, शुक्र और चन्द्रमा हों तो जातक राजा होता है और उसकी पत्नी बहुत पुत्रों को जन्म देने वाली होती है ॥ १७४ ॥

पञ्चमस्थो यदा जीवो दशमस्थश्च चन्द्रमाः।
स राज्यवान् महाबुद्धिस्तपस्वी च जितेन्द्रियः ॥ १७५ ॥

पञ्चम भाव में बृहस्पति, दशम भाव में चन्द्रमा, जिसके जन्म समय में हों वह राज्य से युक्त, महान् बुद्धिमान्, तपस्वी तथा जितेन्द्रिय होता है ॥ १७५ ॥

सिंहे जीवस्तुलाकीटचापेषु मकरेऽपि च।
ग्रहा यदा तदा जातो देशभोगी भवेन्नरः ॥ १७६ ॥

सिंह में बृहस्पति तथा अन्य सभी ग्रह तुला, कर्क, धनु और मकर राशियों में स्थित हों तो इस योग में उत्पन्न व्यक्ति देश का उपभोग करने वाला अर्थात् देश का उच्चाधिकारी होता है ॥ १७६ ॥

तुलाकोदण्डमीनस्थो लग्नसंस्थोऽपि चेच्छनिः।
करोति भूपतेर्जन्म महापुण्यानुभावतः ॥ १७७ ॥

यदि शनि तुला, धनु, मीन अथवा लग्न में स्थित हो तो इस योग में महान् पुण्य के प्रभाव से राजा का जन्म होता है ॥ १७७ ॥

विद्यास्थाने यदा सौम्यः कर्मस्थाने च चन्द्रमाः।
धर्मस्थाने यदा सौम्या राजयोगस्तदा भवेत् ॥ १७८ ॥

विद्या स्थान (पञ्चम भाव) में बुध, कर्म (दशम) स्थान में चन्द्रमा तथा नवम भाव में शुभग्रह स्थित हों तो राजयोग होता है ॥ १७८ ॥

मकरे च घटे मीने वृषे मिथुनमेषयोः ।
ग्रहास्तदा च विख्यातो राजा भवति मानवः ॥ १७९ ॥

यदि जन्म समय में सभी ग्रह मकर, कुम्भ, मीन, वृष, मिथुन, और मेष राशियों में हों तो वह व्यक्ति प्रसिद्ध राजा होता है ॥ १७९ ॥

बुधभार्गवजीवार्कियुक्तो राहुश्चतुष्टये ।
कुरुते कमलारोग्यपुत्रमानादिकं फलम् ॥ १८० ॥

यदि बुध, शुक्र, बृहस्पति और शनि से युक्त राहु केन्द्र स्थान में हो तो वह कमला (धन), आरोग्य, पुत्र, सम्मान, आदि फल देने वाला होता है ॥ १८० ॥

चतुर्थभवने शुक्रो गुरुचन्द्रधरासुताः ।
रविसौरियुतास्सन्ति राजा भवति निश्चितम् ॥ १८१ ॥

चतुर्थ भाव में शुक्र, गुरु, चन्द्र, मंगल, सूर्य और शनि एक साथ स्थित हों तो जातक निश्चित रूप से राजा होता है ॥ १८१ ॥

अष्टमे च व्यये क्रूरो मध्ये च क्रूरसौम्यकौ ।
राजयोगास्त्रयो जाता महाभूपो भविष्यति ॥ १८२ ॥

अष्टम भाव में और द्वादश भाव में क्रूर ग्रह हों, तथा दोनों के मध्य में (नवम से एकादश पर्यन्त) क्रूर और शुभग्रह दोनों हों तो तीनों स्थितियों से तीन राज योग बनते हैं। इस योग में उत्पन्न व्यक्ति महान राजा होता है। [यहाँ 'मध्य' शब्द का अर्थ कुछ विद्वानों ने दशम भाव लिया है मध्य लग्न होने के कारण] ॥१८२॥

लग्ने सौरिस्तथा चन्द्रस्त्रिकोणे जीवभास्करौ ।
कर्मस्थाने भवेद्भौमो राजयोगोऽभिधीयते ॥ १८३ ॥

लग्न में शनि तथा चन्द्रमा, त्रिकोण में बृहस्पति और सूर्य, तथा दशम भाव में मंगल स्थित हो तो राजयोग होता है ॥ १८३ ॥

नवमे च यदा सूर्यः स्वगृहस्थो भवेत्तदा ।
तस्य जीवात नो भ्राता स्याच्चेकोऽपि नृपैः समः ॥ १८४ ॥

जिसके जन्म समय में नवम भाव मे अपने घर (सिंह राशि) का सूर्य हो तो उसका भाई जीवित नहीं रहता यदि कोई जीवित रह जाय तो वह राजा के समान होता है ॥ १८४ ॥

द्वित्रितुर्ये सुते षष्ठे कर्मण्यपि यदा ग्रहाः ।
राजयोगं विजानीयाज्जातस्तत्र नृपो भवेत् ॥ १८५ ॥

जन्म लग्न से दूसरे, तीसरे, चौथे, पाँचवें, छठें तथा दशवें भाव में यदि समस्त ग्रह हों तो इसे राजयोग समझना चाहिये। इस योग में उत्पन्न व्यक्ति राजा होता है ॥ १८५ ॥

लग्ने क्रूरो व्यये सौम्यो धने क्रूरश्च जायते।
राजयोगेन राजा च भूपतिर्भवति स्फुटम् ॥ १८६ ॥

लग्न में क्रूरग्रह बारहवें भाव में शुभग्रह तथा धन स्थान में क्रूर ग्रह स्थित हों तो इस राजयोग से जातक राजा तथा भूमि का अधिपति होता है ॥ १८६ ॥

लग्ने क्रूरो व्यये क्रूरो धने सौम्यो यदा भवेत्।
सप्तमे भवति क्रूरः परिवारक्षयङ्करः ॥ १८७ ॥

लग्न और व्यय (बारहवें) भाव में क्रूरग्रह, धन भाव में शुभग्रह, तथा सप्तम भाव में क्रूरग्रह हों तो परिवार को नष्ट करने वाला योग होता है ॥ १८७ ॥

धने चन्द्रश्च सौम्यश्च मेषे जीवो यदा भवेत्।
दशमे राहुशुक्रौ च राजयोगोऽभिधीयते ॥ १८८ ॥

धन भाव में चन्द्रमा और बुध, मेष में बृहस्पति, दशम-भाव में राहु और शुक्र हों तो राजयोग होता है ॥ १८८ ॥

सिंहे जीवोऽथ कन्यायां भार्गवो मिथुने शनिः।
स्वक्षेत्रे हिबुके भौमः स पुमान्नायको भवेत् ॥ १८९ ॥

सिंह राशि में बृहस्पति, कन्या में शुक्र, मिथुन में शनि, तथा चतुर्थ भाव में अपनी राशि (मेष, वृश्चिक) में मंगल हो तो वह व्यक्ति नायक (किसी वर्ग का नेता, या अधिकारी होता है ॥ १८९ ॥

शनिचन्द्रौ च कन्यायां सिंहे जीवो घटे तमः।
मकरे च कुजस्तत्र जातः स्याद्विश्वपालकः ॥ १९० ॥

शनि और चन्द्रमा कन्या राशि में, सिंह राशि में बृहस्पति, कुम्भ में राहु तथा मकर राशि में मंगल हो तो इस योग में उत्पन्न व्यक्ति विश्व पालक (महान नेता अथवा महान् परोपकारी) होता है ॥ १९० ॥

शुक्रो जीवो रविर्भौमश्चापे मकरकुम्भयोः।
मीने च वत्सरे त्रिंशे समर्थः सर्वकर्मसु ॥ १९१ ॥

जिसके जन्म समय में शुक्र, गुरु, सूर्य, मंगल (क्रम से) धनु, मकर, कुम्भ और मीन राशियों में स्थित हों तो वह व्यक्ति तीस वर्ष की आयु में ही सभी प्रकार के कार्यों में समर्थ हो जाता है ॥ १९१ ॥

कर्कलग्ने जीवयुक्ते लाभे चन्द्रजभार्गवौ।
मेषे भानुश्च जातो यो योगेऽस्मिन्नृपतिर्भवेत् ॥ १९२ ॥

कर्क लग्न में जन्म हो तथा लग्न (कर्क) में ही बृहस्पति बैठा हो, लाभ (ग्यारहवें) भाव में बुध और शुक्र हों, मेष (अर्थात् दशम भाव) में सूर्य हो तो इस योग में मनुष्य राजा होता है ॥ १९२ ॥

कर्मस्थाने यदा जीवो बुधः शुक्रस्तथा शशी।
सर्वकर्माणि सिद्धयन्ति राजमान्यो भवेन्नरः ॥ १९३ ॥

दशम भाव में बृहस्पति, बुध, शुक्र, तथा चन्द्रमा हों तो ऐसे योग में मनुष्य सभी कार्यों को सिद्ध करने वाला तथा राजाद्वारा सम्मानित होता है ॥ १९३ ॥

षष्ठेऽष्टमे पञ्चमे वा नवमे द्वादशे तथा।
सौम्यक्रूरग्रहैर्योगे राजमान्यो न संशयः ॥ १९४ ॥

छठें, आठवें, पाँचवें, नववें, तथा बारहवें भाव में यदि शुभ और पाप ग्रह (सभी) विद्यमान हों तो वह राजा से सम्मानित होता है, इसमें सन्देह नहीं ॥१९४॥

पञ्चमे च यदा षष्ठे चाष्टमे नवमे क्रमात्।
भौमराहुसितार्काः स्युर्जातकः कुलपालकः ॥ १९५ ॥

पञ्चम, षष्ठ, अष्टम, नवम, भावों मे क्रम से मंगल, राहु, शुक्र और सूर्य स्थित हों तो जातक अपने कुल का पालन करने वाला होता है ॥ १९५ ॥

लग्ने सौरिस्तथा चन्द्रश्चाष्टमे भार्गवो यदा।
जायतेऽत्र नृपो योगे मानी भूरिप्रियः सदा ॥ १९६ ॥

लग्न स्थान में शनि और चन्द्रमा, अष्टम भाव में शुक्र स्थित हों तो इस प्रकार के योग में उत्पन्न व्यक्ति राजा, स्वाभिमानी, तथा सदैव सबका प्रियपात्र होता है ॥ १९६ ॥

मिथुनस्थो यदा राहुः सिंहस्थो भूमिनन्दनः।
अत्र योगे नरो जातो नृपोऽश्वगजनायकः ॥ १९७ ॥

मिथुन में राहु तथा सिंह में मंगल हो तो जातक राजा एवं घोड़े हाथियों का स्वामी होता है ॥ १९७ ॥

चापार्द्धे शशिना युक्तो यदि सूर्यः प्रजायते।
लग्ने च सबलो मंदो मकरे च कुजो भवेत् ॥ १९८ ॥
अत्र योगे समुत्पन्नो महाराजो भवेन्नरः।
दूरादेव नमन्त्यस्य प्रतापैश्चरणौ नृपाः ॥ १९९ ॥

यदि धनु के अर्द्ध भाग में स्थित सूर्य चन्द्रमा से युक्त हो, लग्न में बलवान शनि, तथा मकर में मङ्गल हो तो राजयोग होता है। इस योग में उत्पन्न व्यक्ति महाराजा होता है तथा इसके प्रताप से प्रभावित राजा लोग दूर से ही चरणों में प्रणाम करते हैं ॥ १९८–१९९ ॥

विशेष:—यह योग अमावस्या के आसन्न पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र के आरम्भ में सम्भव है। धनु राशि का अर्ध भाग ४½ चरण=१५° पूर्वाषाढा के प्रथम चरण में १°, ४०′ बीतने पर होता है। यह स्थिति कृष्णपक्ष में १४, ३० तथा शुक्ल प्रतिपदा तिथियों में सम्भव हो सकती है। क्योंकि इन्ही तिथियों मे सूर्य और चन्द्रमा की युति होती है।

उच्चाभिलाषुकः सूर्यस्त्रिकोणस्थो यदा भवेत्।
अपि नीचकुले जातो राजा स्याद्धनपूरितः ॥ २०० ॥

अपनी उच्च राशि में जाने के लिए इच्छुक सूर्य यदि त्रिकोण में स्थित हो तो नीचकुल में उत्पन्न व्यक्ति भी धन से परिपूर्ण राजा होता है ॥ २०० ॥

[उच्चाभिलाषी सूर्य का अभिप्राय यह है कि सूर्य उच्च राशि में संक्रमण करने वाला हो। सूर्य की उच्च राशि मेष है। अतः जब सूर्य मीन के अन्तिम चरण में होगा तभी वह उच्चाभिलाषी होगा।]

धनस्थाने यदा शुक्रो दशमे च बृहस्पतिः।
षष्ठे च सिंहिका पुत्रो राजा भवति विक्रमी ॥ २०१ ॥

धन भाव में शुक्र, दशम में बृहस्पति, तथा छठे भाव में राहु हो तो पराक्रमी राजा होता है ॥ २०१ ॥

चतुर्ग्रहा यदैकत्र स्थाने सौम्या भवन्ति हि।
भ्रातृधीधर्मलग्ने वा राजयोगो भवेदयम् ॥ २०२ ॥

चार शुभग्रह एक साथ यदि तृतीय, पञ्चम, नवम अथवा लग्न में स्थित हों तो यह राजयोग होता है ॥ २०२ ॥

सर्वैर्ग्रहैर्यदा चन्द्रो विना हेलि निरीक्षितः।
षष्ठाष्टमे च यामित्रे स दीर्घायुर्नराधिपः ॥ २०३ ॥

छठें, सातवें तथा आठवें भाव में स्थित चन्द्रमा को सूर्य के अतिरिक्त अन्य सभी ग्रह देखते हों तो मनुष्य राजा एवं दीर्घायु होता है ॥ २०३ ॥

नवमे पञ्चमस्थाने चतुर्थे च यदा ग्रहाः।
आदौ जातश्च नश्यन्ति पश्चाज्जातश्च जीवति ॥ २०४ ॥

विवाहितायान्यस्यामेकपुत्रो भवेत्तदा ।
विख्यातो भुवने त्यागी स दीर्घायुर्महीपतिः ॥ २०५ ॥

जिसके जन्मकाल में सभीग्रह नवम, पञ्चम, और चतुर्थ में स्थित हों उसके आदि कुछ सन्तति नष्ट होती है तथा बाद की सन्तान जीवित रहती है। पुनः दूसरी स्त्री से विवाह करने पर एक पुत्र उत्पन्न होता है जो संसार में विख्यात, त्यागी, दीर्घायु तथा राजा होता है ॥ २०४–२०५ ॥

कन्यायां च यदा राहुः शुक्रो भौमः शनिस्तथा ।
तत्र जातस्य जायेत कुबेरादधिकं धनम् ॥ २०६ ॥

कन्या में यदि राहु, शुक्र, मंगल तथा शनि हों तो जातक के पास कुबेर से भी अधिक धन होता है। (अर्थात् बहुत बड़ा धनिक होता है) ॥ २०६ ॥

लग्ने मीने जीवशुक्रौ मेषेऽर्को मकरे कुजः ।
दासवंशेऽपि जातोऽसौ राजा छत्रधरो भवेत् ॥ २०७ ॥

यदि मीन लग्न में जन्म हो तथा उसी में (लग्न में) गुरु और शुक्र स्थित हों, मेष में सूर्य तथा मकर में मंगल हों तो दासी के वंश में उत्पन्न बालक भी छत्र धारण करने वाला राजा होता है ॥ २०७ ॥

भ्रातृस्थाने यदा जीवो लाभस्थाने यदा शशी ।
स लाभगृहमध्यस्थो जायते कुलदीपकः ॥ २०८ ॥

भ्रातृस्थान (तृतीय भाव) में यदि वृहस्पति तथा एकादश भाव में चन्द्रमा, हो तो अपने समाज एवं गृह में रहता हुआ कुल का दीपक (वंश की मर्यादा बढ़ाने वाला) होता है ॥ २०८ ॥

दशमस्थौ बुधादित्यौ षष्ठे राहुधरासुतौ ।
राजयोगोऽत्र यो जातः स पुमान्नायको भवेत् ॥ २०९ ॥

यदि दशम भाव में बुध-सूर्य तथा छठे भाव में राहु और मंगल स्थित हों तो राजयोग होता है। इस योग में उत्पन्न व्यक्ति नायक (किसी वर्ग का प्रमुख अथवा नेता) होता है ॥ २०९ ॥

चतुर्ग्रहैरेकगृहे च संस्थैर्धीधर्मदुश्चिक्यतनुस्थितैर्वा ।
दासप्रजातः क्षितिपालतुल्यो भवेन्नरेन्द्रोऽर्णवपारगामी ॥ २१० ॥

चार ग्रह एकही साथ यदि पञ्चम, नवम, तृतीय, और लग्न इनमें से किसी एक भाव में स्थित हों तो दासी के कुल में उत्पन्न बालक भी राजा के समान होता है तथा समुद्र-पार की यात्रा करने वाला होता है (अर्थात् समुद्र यात्रा द्वारा विदेश भ्रमण करने वाला होता है।) ॥ २१० ॥

सुरगुरुशशियुक्ते कर्कटे लग्नसंस्थे
भृगुतनयबलिष्ठः केन्द्राजतोऽथ शेषाः।
शिवसहजरिपुस्था यस्य वै जन्मकाले
नियतमिति तदासौ चक्रवर्ती नरेशः ॥ २११ ॥

जिसके जन्म समय मे बृहस्पति और चन्द्रमा एक साथ यदि कर्क राशि में स्थित होकर जन्म लग्न में हों, शुक्र बलवान होकर केन्द्र मे हो तथा अन्य सभी ग्रह एकादश, तृतीय और षष्ठ भाव मे स्थित हों तो वह सदैव चक्रवर्ती राजा होकर रहता है ॥ २११ ॥

तुले मीनमेषे वृषे दैत्यपूज्यो भवेद्राजमानी कलाकौतुकी च।
त्रयं पुत्ररत्नं चिरञ्जीवितं चभवेद्वत्सरे वह्नियुग्मे च तस्य ॥ २१२ ॥

तुला, मीन, मेष और वृष राशियों मे से किसी एक मे शुक्र स्थित हों तो जातक राजा से आदर पाने वाले, कला-कौतुक मे निपुण, होता है। तथा २३ वर्ष की आयु में तीन चिरञ्जीवी पुत्र रत्नों की प्राप्ति होती है ॥ २१२ ॥

लग्नाधिपतिः केन्द्रे बलपरिपूर्णः करोति नृपतुल्यम्।
गोपालकुलेऽपि जातं किं पुनरिह नृपतिसम्भूतम् ॥ २१३ ॥

लग्न का स्वामी केन्द्र स्थान में बलवान् होकर स्थित हो तो गोप (ग्वालों) के कुल मे उत्पन्न व्यक्ति भी राजा के समान होता है यदि राज कुल में उत्पन्न हो तो कहना ही क्या ॥ २१३ ॥

रविस्तृतीये भृगुनन्दनः सुखे बुधो द्वितीये यदि पञ्चमे स्थितः।
न नीचराशौ न च खान्तवेश्मगो भवेन्नरेन्द्रस्त्रिसमुद्रपालकः ॥२१४॥

सूर्य यदि तीसरे भाव में, शुक्र चतुर्थ मे, बुध द्वितीय या पञ्चम में स्थित हो, कोई ग्रह नीच राशिगत न हो तथा दशवाँ और बारहवाँ भाव ग्रह रहित हो तो जातक तीन समुद्र पर्यन्त राज्य करने वाला होता है ॥ २१४ ॥

यदि भवति च केन्द्रे धर्मगः स्वोच्चसंस्थः
सुतभवनगतो वा वाक्पतिर्जन्मकाले।
स भवति नरनाथः सार्वभौमो जितारिः
शशिबुधभृगुपुत्रैरन्वितो वीक्षितो वा ॥ २१५ ॥

यदि बृहस्पति जन्म समय में अपनी उच्च राशि (कर्क) में स्थित होकर केन्द्र स्थान, धर्म (नवम) भाव अथवा पञ्चम भाव मे गया हो तथा चन्द्र बुध और शुक्र से युत अथवा दृष्ट हो तो जातक शत्रुओं को जीतने वाला सार्वभौम राजा होता है ॥ २१५ ॥

विलग्ननाथः सहजास्तसंस्थः सुहृद्गृहे मित्रयुतो यदि स्थितः ।
करोति सर्वं पृथिवीतलस्य दुर्वारवैरिघ्नमहोदयं शुभम् ॥ २१६ ॥

लग्न का स्वामी तृतीय भाव में या सप्तम भाव में अपने मित्र ग्रह की राशि में मित्र ग्रह के साथ स्थित हो तो सभी कठिन शत्रुओं का दमन कर अभ्युदय (उन्नति) प्राप्त करने वाला तथा समस्त भूमण्डल का शुभ करने वाला होता है ॥ २१६ ॥

लग्नं विहाय केन्द्रे सकलकलापूरितो निशानाथः ।
विदधाति महीपालं विक्रमबलवाहनोपेतम् ॥ २१७ ॥

सभी कलाओं से पूर्ण चन्द्रमा यदि लग्न को छोड़कर अन्य केन्द्र स्थानों (४, ७, १०) में स्थित हो तो जातक पराक्रम और वाहन से युक्त राजा होता है ।२१७।

स्वोच्चे स्वकीयभवने क्षितिपालतुल्यो लग्नेऽर्कजे भवति दशपुराधिनाथः ।
दारिद्र्यदुःखपरिपीडित एव लोके शेषेषु सर्वजननिन्द्यशरीरचेष्टः ॥२१८॥

यदि शनि अपनी उच्चराशि में या अपने गृह (१०, ११) मे हो तो जातक राजा के समान धनवान् होता है । यदि शनि लग्न में उच्चस्थ या स्वगृही (७, १०, ११ में) हो तो वह देश अथवा नगर का अधिपति (अधिकारी) होता है । इससे भिन्न स्थिति में शनि हो तो जातक दरिद्र, दुःख से पीड़ित तथा अपनी शारीरिक चेष्टाओं के कारण लोक में निन्दित होता है ॥ २१८ ॥

लग्ने ह्युच्चपदं गते दिनपतौ चन्द्रे धनस्थे भृगौ
दुश्चिक्ये तमसंयुते सुखगते जीवे व्ययस्थे बुधे ।
लाभे सूर्यसुते हि शत्रुभवने जातः कुले भूपते-
र्जातोऽयं मनुजः सदा नृपगणे सम्राट्पदं गच्छति ॥ २१९ ॥

लग्न स्थान मे उच्च (मेष) राशि का सूर्य, धन भाव मे चन्द्रमा, तृतीय में राहु से युक्त शुक्र, चतुर्थ भाव में गुरु, व्यय (बारहवें) भाव में बुध तथा एकादश भाव में या छठे भाव मे शनि स्थित हो तो राजकुल में जन्म होता है । इस योग में उत्पन्न व्यक्ति राजाओं के समूह में सम्राट् पद को प्राप्त करता है अर्थात् सर्वश्रेष्ठ राजा होता है ॥ २१९ ॥

उच्चाभिलाषी सविता त्रिकोणे शशी तथा जन्मनि यस्य जन्तोः ।
सोऽश्नाति पृथ्वीं बहुरत्नपूर्णां बृहस्पतिः केन्द्रगतो यदि स्यात् ॥२२०॥

अपनी उच्च राशि (मेष) में जाने का अभिलाषी अर्थात् मीन राशि के अन्तिम चरण में स्थित सूर्य त्रिकोण (५, ९) भावों में, चन्द्रमा जन्मलग्न में तथा बृहस्पति केन्द्र स्थानों में जिसकी जन्म कुण्डली में स्थित हो वह रत्नों से परिपूर्ण पृथ्वी का उपभोग करता है ॥ २२० ॥

सर्वेऽप्याकाशवासाः स्फटिकविमलताकाशकार्पासवेषा
लग्नं सवीक्ष्यमाणा नरपतितिलकं तं समुत्पादयन्ति।
नीयन्तेऽस्य प्रशस्त्यै वहुविधसुफलान्यन्यभूपालजालै-
र्निःशङ्कः सर्वसौख्यान्यनुभवति नरो भद्रमालार्पितः श्रीः ॥ २२१ ॥

सभी आकाशवासी (ग्रह) स्फटिक के समान निर्मल कान्ति युक्त, काश और कपास के पुष्प के समान श्वेत कान्ति युक्त हों अर्थात् सभी प्रकार से दोष रहित एवं बलवान् हों तथा लग्न को देखते हों तो जातक राजाओं में श्रेष्ठ होता है। उसकी प्रशस्ति हेतु अन्य राजागण विविध प्रकार के उत्तम फलों से युक्त कल्याणकारी माला और राज्यलक्ष्मी को अर्पित करते हैं तथा वह निर्भय होकर सभी प्रकार के सुखों का अनुभव करता है ॥ २२१ ॥

सर्वैर्गगनभ्रमणैर्दृष्टे लग्ने भवेन्महीपालः।
बलिभिः सौख्यार्थयुतो विगतभयो दीर्घजीवी च ॥ २२२ ॥

बल से युक्त सभी ग्रह यदि लग्न को देखते हों तो सुख से सम्पन्न, निर्भय तथा दीर्घजीवी राजा होता है ॥ २२२ ॥

चतुर्थे भवने शुक्रो दशमे च धरासुतः।
रविः सौरियुतो यस्य राजा भवति निश्चितम् ॥ २२३ ॥

जिसके जन्म समय में लग्न से चतुर्थ भाव में शुक्र, दशम मे मंगल तथा सूर्य शनि से युक्त हो तो वह निश्चित राजा होता है ॥ २२३ ॥

मिथुनोऽजे वृषे मीनं कुम्भे च मकरे ग्रहाः।
यो योगेऽस्मिन्नरो जातो जायते गजमानवान् ॥ २२४ ॥

मिथुन, मेष, वृष, मीन, कुम्भ तथा मकर राशियों म सभी ग्रह स्थित हों तो इस योग में उत्पन्न व्यक्ति हाथियों से युक्त तथा सम्मानित होता है ॥ २२४ ॥

जीवनिशाकरसूर्याः पञ्चमनवमतृतीयभावस्थाः।
लग्नाद्यदि भवन्ति तदा कुबेरतुल्यो धनप्रसवैः ॥ २२५ ॥

जन्म लग्न से पञ्चम, नवम, तृतीय भावों म क्रम से बृहस्पति, चन्द्रमा और सूर्य स्थित हों तो जातक धनागम से कुबेर (देवताओं के कोषाध्यक्ष) के समान धनवान् होता है ॥ २२५ ॥

सिंहे जीवस्तुलाकीटधनुर्मकरकेषु च।
ग्रहाश्चान्ये तदा जातो देशभोगी भवेन्नरः ॥ २२६ ॥

सिंह में बृहस्पति तथा तुला, वृश्चिक, धनु और मकर मे अन्य सभी ग्रह स्थित हों तो इस योग में उत्पन्न पुरुष देश का उपभोग करने वाला (प्रशासक) होता है ॥ २२६ ॥

स्वगृहे च भवेत्सूर्यस्तुलायां च भवेत्सितः ।
मिथुने तिष्ठते सौरो राजयोगः प्रजायते ॥ २२७ ॥

अपने गृह (सिंह राशि) में सूर्य, तुला में शुक्र तथा मिथुन राशि में शनि बैठा हो तो राजयोग होता है ॥ २२७ ॥

षष्ठे च पञ्चमे चैव नवमे द्वादशे तथा ।
सौम्यक्रूरग्रहा जातो राजमान्यः सकण्टकः ॥ २२८ ॥

जन्म लग्न से छठें, पाँचवें, नवमें और बारहवें भाव में यदि शुभ और पापग्रह दोनों ही विराजमान हों तो जातक राजा द्वारा सम्मानित परन्तु कठिनाइयों से घिरा होता है ॥ २२८ ॥

त्रिकोणयाता बुधजीवशुक्रास्त्रिषड्गते सोमसुतेऽर्कपुत्रे ।
जायास्थिते चेत्परिपूर्णचन्द्रे नूनं स जातो नृपतेः समानः ॥ २२९ ॥

त्रिकोण भवन (५, ९) में बुध, गुरु और शुक्र गये हों, बुध और शनि तीसरे छठें भाव में हों तथा पूर्ण चन्द्रमा सप्तम भाव में हो तो इस योग में उत्पन्न व्यक्ति राजा के समान अवश्य होता है ॥ २२९ ॥

लग्ने सौरिस्तथा चन्द्रश्चाष्टमे भवने सितः ।
राजमान्यो महाकामो भोग्यपत्नीजनस्तथा ॥ २३० ॥

लग्न में शनि और चन्द्रमा तथा अष्टम भाव में शुक्र हों तो जातक राजा से सम्मानित, अधिक कामवासना युक्त तथा भोग्य (विहार करने योग्य सुन्दरी) स्त्री से युक्त होता है ॥ २३० ॥

धने शुक्रश्च भौमश्च मीने जीवो घटे बुधः ।
नीचे चन्द्रः सूर्ययुक्तो राजयोगोऽभिधीयते ॥ २३१ ॥
अस्मिन् योगे नरो जातो राजा विभववर्जितः ।
दानभोगातिविख्यातः सामान्यः स भवेन्नरः ॥ २३२ ॥

धन (द्वितीय) भाव में शुक्र और मंगल, मीन में बृहस्पति, कुम्भ में बुध, अपनी नीच राशि (वृश्चिक) में चन्द्रमा, सूर्य से युक्त हों तो राजयोग होता है । इस योग में उत्पन्न व्यक्ति धनहीन, राजा, दान एवं सुख-भोग करने में विख्यात तथा सामान्य (न अधिक धनवान् न निर्धन) पुरुष होता है ॥ २३१–२३२ ॥

मीने शुक्रो बुधश्चान्ते लग्ने सूर्यः शशी धने ।
सहजे च भवेद्राहू राजयोगः प्रजायते ॥ २३३ ॥

मीन में शुक्र, बारहवें भाव मे बुध, लग्न में सूर्य, धन भाव में चन्द्रमा तथा तृतीय भाव में राहु हो तो राजयोग होता है ॥ २३३ ॥

मीने जीवस्तथा शुक्रश्चन्द्रमाश्च यदा भवेत् ।
तस्य जातस्य राज्यं स्यात्पत्नी च बहुपुत्रिका ॥ २३४ ॥

यदि मीन में बृहस्पति, शुक्र और चन्द्रमा स्थित हों तो जातक राजा होता है तथा उसकी पत्नी बहुत पुत्रों वाली होती है ॥ २३४ ॥

आयस्थाने यदा सौम्यः क्रूरस्थानीयचन्द्रमाः ।
कर्मस्थाने पुनः सौम्यस्तदा राज्यं विधीयते ॥ २३५ ॥

यदि लाभ स्थान में शुभग्रह हो, क्रूरग्रह की राशि में चन्द्रमा हो तथा पुनः कर्म स्थान (दशम भाव) में शुभग्रह हों तो राजयोग होता है ॥ २३५ ॥

आदौ जीवः पञ्चमे वा दशमे चन्द्रमा भवेत् ।
राजमान्यो महाबुद्धिस्तेजस्वी चातितेजसाम् ॥ २३६ ॥

लग्न (प्रथम) स्थान में बृहस्पति, पञ्चम भाव अथवा दशम भाव में चन्द्रमा हों तो जातक राजा द्वारा सम्मानित, महान् बुद्धिमान्, तेजस्वी पुरुषों में अधिक तेजस्वी होता है ॥ २३६ ॥

अरिष्ट योग---

"सूर्याज्जातस्य नवमश्चन्द्रान्मातुश्चतुर्थगः ।
भौमाद्भ्रातुस्तृतीयो ज्ञाच्चतुर्थो मातुलस्य च ॥ २३७ ॥
पुत्रस्य पञ्चमो जीवाद्भृगोः सप्तमकः स्त्रियः ।
क्रूरः खगोऽरिष्टकरो शनेर्मृत्युप्रदोऽष्टमः ॥ २३८ ॥

सूर्य से नवम स्थान में क्रूर ग्रह हो तो पिता के लिए, चन्द्रमा से चतुर्थ भाव में क्रूर ग्रह माता के लिए, मंगल से तीसरे भाई के लिए, बुध से चौथे मामा के लिए, गुरु से पाँचवें पुत्र के लिए, शुक्र से सप्तम क्रूर ग्रह हो तो स्त्री के लिए कष्टकर होता है । यदि शनि से अष्टम भाव में क्रूरग्रह हो तो स्वयं जातक के लिए मृत्युप्रद (अरिष्ट कर) होता है ॥ २३७–२३८ ॥

सूर्यो भौमस्तथा राहुः शनिर्मूर्तौ यदा स्थितः ।
सन्तापो रक्तपीडा च सौम्यः सर्वनिरोगता ॥ २३९ ॥

सूर्य, भौम, राहु और शनि यदि लग्न में स्थित हों तो मानसिक सन्ताप (क्लेश) एवं रक्तसम्बन्धी विकार होता है । यदि शुभग्रह लग्न में हों तो सभी प्रकार से निरोगता रहती है ॥ २३९ ॥

भौमक्षेत्रे यदा जीवो जीवक्षेत्रे च भूसुतः ।
द्वादशे वत्सरे मृत्युर्बालकस्य न संशयः ॥ २४० ॥

भौम के क्षेत्र (मेष और वृश्चिक राशियों) में यदि बृहस्पति हो तथा बृहस्पति

के क्षेत्र (धनु और मीन) में भौम हो तो बारहवें वर्ष मे जातक की मृत्यु होती है इसमें सन्देह नहीं ।। २४० ।।

धनस्थाने यदा भौमः शनैश्चरसमन्वितः ।
सहजे च भवेद्राहुर्वर्षमेकं स जीवति ।। २४१ ।।

यदि धन स्थान (द्वितीय भाव) म मंगल शनि से युक्त हो तथा तृतीय भाव में राहु हो तो जातक केवल एक वर्ष तक ही जीवित रहता है ।। २४१ ।।

चतुर्थे च यदा राहुः षष्ठे चन्द्रोऽष्टमेऽपि वा ।
सद्यश्चैव भवेन्मृत्युः शङ्करो यदि रक्षति ।। २४२ ।।

यदि चतुर्थ भाव मे राहु, छठें अथवा आठवें भाव मे चन्द्रमा हो तो स्वयं शंकर ही रक्षक हों तो भी उसकी शीघ्र मृत्यु होती है ।। २४२ ।।

अष्टमस्थो निशानाथः केन्द्री पापेन संयुतः ।
चतुर्थे च यदा राहुर्वर्षमेकं स जीवति ।। २४३ ।।

अष्टम भाव मे चन्द्रमा हो, केन्द्र स्थानों मे पापग्रह हो तथा चतुर्थ भाव में राहु स्थित हो तो जातक एक वर्ष तक जीवित रहता है ।। २४३ ।।

लग्ने व्यये धने क्रूरा यदा मृत्यौ व्यवस्थिताः ।
मलावरोधकष्टं स्याद्द्वादशाष्टमवर्षयो ।। २४४ ।।

जन्म लग्न, बारहवें, दूसरे तथा आठवें भाव मे यदि पापग्रह स्थित हों तो आठवें तथा बारहवें वर्ष मे मलावरोध से कष्ट होता है ।। २४४ ।।

सप्तमे भवने भौमो ह्यष्टमे भार्गवो यदा ।
नवमे भवने सूर्यश्चाल्पायुर्जातको भवेत् ।। २४५ ।।

सप्तम भाव मे मंगल अष्टम भाव में शुक्र तथा नवम भाव में सूर्य हो तो जातक अल्पायु होता है ।। २४५ ।।

धने क्रूरः स्वभवने क्रूरः पातालगो यदा ।
दशमे भवने क्रूरः कष्टं जीवति जातकः ।। २४६ ।।

धन स्थान में, क्रूर ग्रह अपनी ही राशि मे ही स्थित हो, तथा चौथे और दशवें भाव में भी क्रूर ग्रह हो तो बालक कष्ट से जीवित रहता है ।। २४६ ।।

स्मरे व्यये सहजे मध्ये क्रूरा यदा ग्रहाः ।
तदा जातस्य बालस्य शरीरे च कष्टमादिशेत् ।। २४७ ।।

सातवें, बारहवें, और दशवें भाग में यदि क्रूर ग्रह हों तो इस योग में उत्पन्न बालक के शरीर में कष्ट होता है ऐसा कहना चाहिये ।। २४७ ।।

लग्नस्थाने यदा भौमो द्वादशे च बृहस्पतिः ।
शुक्रः शत्रुगृहे यस्य मासमेकं स जीवति ॥ २४८ ॥

लग्न में मंगल, बारहवें बृहस्पति, तथा छठें भाव में शुक्र हो तो एक मास तक ही जातक जीवित रहता है ॥ २४८ ॥

क्षीणचन्द्रे गते लग्ने क्रूरग्रहनिरीक्षिते ।
द्वितीये द्वादशे भौमे मासमेकं स जीवति ॥ २४९ ॥

क्षीण चन्द्रमा यदि लग्न मे स्थित हो, तथा उसे क्रूरग्रह देखते हों, दूसरे और बारहवें में मंगल हो तो एक ही मास तक जीवित रहता है ॥ २४९ ॥

मूर्त्तिसप्तमयोः क्रूराः पापा व्ययद्वितीयगाः ।
चतुर्थे च यदा राहुः सप्ताहान्म्रियते तदा ॥ २५० ॥

लग्न और सप्तम में क्रूर ग्रह, बारहवें तथा दूसरे भाव में पाप ग्रह तथा चौथे भाव में राहु स्थित हों तो एक सप्ताह के अन्दर जातक की मृत्यु होती है ॥ २५० ॥

षष्ठाष्टमेऽपि चन्द्रः सद्यो मरणाय पापसंदृष्टः ।
अष्टाभिः शुभदृष्टो वर्षैर्मिश्रैस्तदर्द्धेन ॥ २५१ ॥

छठें और आठवें भाव में चन्द्रमा पापग्रहों से दृष्ट हों तो बालक की शीघ्र मृत्यु होती है । यदि उन्हीं भावों में चन्द्रमा पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो आठ वर्षो में तथा शुभ और पाप ग्रहों की मिश्रित दृष्टि हो तो उसके आधे अर्थात चार वर्ष में मृत्यु होती है ॥ २५१ ॥

द्वादशस्थो यदा सौरिर्लग्नसंस्थश्च भूसुतः ।
चतुर्थः संहिकेयश्च[1] ह्यष्टमासान् स जीवति ॥ २५२ ॥

बारहवें भाव में शनि, लग्न में मगल, तथा चौथे भाव मे राहु हो तो जातक आठ मास तक ही जीवित रहता है ॥ २५२ ॥

शुभलग्ने यदा जीवो ह्यष्टमे च शनैश्चरः ।
रन्ध्रसंस्थे च पापे च सद्यो मृत्युप्रदो भवेत् ॥ २५३ ॥

शुभ लग्नों में बृहस्पति, अष्टम भाव में शनि, तथा आठवें भाव में पाप ग्रह स्थित हों तो शीघ्र ही मृत्यु कारक होता है ॥ २५३ ॥

चतुर्थे नवमे सूर्ये ह्यष्टमे च बृहस्पतौ ।
द्वादशे च शशाङ्के च सद्यो मृत्युकरो भवेत् ॥ २५४ ॥

१. पौरिकेयश्च पाठान्तरम् [पुरुवंश में उत्पन्न चन्द्र और तारा से उत्पन्न बुध]

चतुर्थ भाव अथवा नवम भाव में सूर्य, अष्टम में बृहस्पति, बारहवें चन्द्रमा हों तो शीघ्रही मृत्युकारक होते हैं ॥ २५४ ॥

शशिसूर्यसिते केन्द्रे संयुक्तश्चन्द्र आर्किणा।
हन्ति वर्षद्वयेनैव जातकं शिष्टभाषितः ॥ २५५ ॥

चन्द्र, सूर्य, शुक्र केन्द्र मे हों तथा चन्द्रमा शनि से युक्त हो तो शुभ ग्रहों की अनुकूलता रहने पर भी दो वर्ष के अन्दर जातक की मृत्यु होती है ॥ २५५ ॥

गुरुर्मन्दगृहे वक्री मन्दगौ बुधभास्करौ।
ईप्सितं कुरुते मृत्युं मन्दे चैकादशे ध्रुवम् ॥ २५६ ॥

बृहस्पति शनि के गृह (मकर, कुम्भ) मे वक्री होकर स्थित हो, तथा सप्तम भाव में बुध और सूर्य हों तो जातक की इच्छानुसार मृत्यु होती है। यदि ग्यारहवें भाव में शनि हो तो निश्चित (शीघ्र) मृत्यु होती है ॥ २५६ ॥

सूर्यमन्दगृहे शुक्रो गुरुणा च विलोकितः।
नवभिर्मारयत्येनं वर्षैर्जातं न संशयः ॥ २५७ ॥

सूर्य और शनि के गृह (सिंह, मकर, कुम्भ) मे शुक्र स्थित हो और गुरु से दृष्ट हो तो नव वर्ष बीतने पर निःसन्देह मृत्यु होती है ॥ २५७ ॥

सूर्येण सहितश्चन्द्रो बुधगेहगतः सदा।
न वीक्षितश्च सौम्येन नववर्षेण मृत्युदः ॥ २५८ ॥

सूर्य से युक्त चन्द्रमा बुध की राशि में स्थित हो तथा बुध की दृष्टि उन पर न हो तो नव वर्ष की आयु मे मृत्यु होती है ॥ २५८ ॥

बुधः सूर्येन्दुसंयुक्तो विक्षितोऽपि शुभग्रहैः।
एकादशमिते वर्षे मारयत्येव जातकम् ॥ २५९ ॥

बुध, सूर्य और चन्द्रमा से युक्त हो तथा शुभग्रहों से दृष्ट हो तो भी ग्यारह वर्ष की आयु में जातक की मृत्यु होती है ॥ २५९ ॥

लग्नादष्टमगो राहुः शनिसूर्यावलोकितः।
निरीक्षितः शुभैः कुर्यादष्ट द्वादशाभःक्षयम् ॥ २६० ॥

जन्म लग्न से अष्टम भाव में स्थित राहु, शनि और सूर्य से दृष्ट हो तथा शुभ ग्रहों की भी दृष्टि हो तो जातक बारह वर्ष तक जीवित रहता है ॥ २६० ॥

धने राहुर्बुध शुक्रः सौरिः सूर्यो यदा स्थितः।
तत्र जातो लभेन्मृत्युं मृते पितरि जायते ॥ २६१ ॥

धन (द्वितीय) भाव में यदि राहु, बुध, शुक्र, शनि और सूर्य स्थित हों तो

जातक पिता की मृत्यु के बाद उत्पन्न होता है तथा स्वयं भी कुछ दिनों के बाद मर जाता है ।। २६१ ।।

व्यये राहुः सौरिसौम्यौ जीवो लग्ने च पञ्चमे ।
अत्र योगे च यो जातो जातमात्रः स नश्यति ।। २६२ ।।

बारहवें भाव में राहु, शनि और बुध, लग्न अथवा पञ्चम भाव में बृहस्पति हो तो इस योग में बालक उत्पन्न होते ही मर जाता है ।। २६२ ।।

जीवार्कराहुभौमाः स्युश्चत्वारः क्रूरवेश्मगाः ।
सप्तमे च गृहे शुक्रो देहकष्टकराः सदा ।। २६३ ।।

बृहस्पति, सूर्य, राहु और मंगल चारो ग्रह यदि क्रूर ग्रहों की राशियों में स्थित हों तथा सप्तम भाव में शुक्र स्थित हो तो शरीर के लिए कष्ट कर योग होता है ।। २६३ ।।

गुह्यस्थाने यदा भौमो राहुसौरिसमन्वितः ।
नृपपीडा भवेत्तस्य स्वासने नैव तिष्ठति ।। २६४ ।।

मंगल, छठें भाव में राहु और शनि से युक्त हो तो उसे राजपीडा (राजकीय उलझनों) से कष्ट होता है वह अपने आसन पर नहीं बैठ पाता है । (अर्थात् बार-बार स्थानान्तरण या पदच्युत होता है) ।। २६४ ।।

चतुर्थे राहुसौरार्काः षष्ठे चन्द्रो बुधः कुजः ।
भार्गवश्चात्र यो जातः स गृहस्य क्षयङ्करः ।। २६५ ।।

चतुर्थ भाव में राहु, शनि, और सूर्य, छठें भाव में चन्द्रमा, बुध, मंगल, और शुक्र स्थित हों तो इस योग में उत्पन्न व्यक्ति गृह का क्षय (धन-जन की हानि) करने वाला होता है ।। २६५ ।।

एकः पापोऽष्टमस्थोऽपि शत्रुक्षेत्रे यदा भवेत् ।
पापेन वीक्षितो वर्षान्मारयत्येव बालकम् ।। २६६ ।।

एक भी पाप ग्रह अष्टम भाव में अपने शत्रुग्रह की राशि में स्थित हो तथा पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो बालक की एक वर्ष के अन्दर मृत्यु होती है ।। २६६ ।।

भौमभास्करमन्दाश्च शत्रुक्षेत्रेऽष्टमे यदा ।
यमेन रक्षितोप्येष वर्षमात्रं न जीवति ।। २६७ ।।

मंगल, सूर्य, और शनि अपने शत्रु ग्रह की राशि में अष्टम भाव में स्थित हों तो स्वयं यमराज द्वारा रक्षित बालक भी एक वर्ष तक ही जीवित रहता है ।।२६७।।

वक्री शनिर्भौमगेहे केन्द्रे षष्ठेऽष्टमेऽपि वा ।
कुजेन बलिना दृष्टो हन्ति वर्षद्वये शिशुम् ।। २६८ ।।

शनि वक्री होकर भौम गृह (मेष, वृश्चिक) में स्थित होकर केन्द्र अथवा छठें, आठवें भाव में गया हो तथा बलवान् मंगल से दृष्ट हो तो दो वर्ष के अन्दर उत्पन्न बालक की मृत्यु होती है ॥ २६८ ॥

शनिराहुकुजैर्युक्तः सप्तमे नवमे शशी ।
सप्तमे दिवसे हन्ति मासे वा सप्तमे शिशुम् ॥ २६९ ॥

शनि, राहु और मंगल से युक्त चन्द्रमा सप्तम भाव में अथवा नवम भाव में हो तो उत्पन्न बालक सात दिनों में अथवा सातवें मास में मृत्यु प्राप्त करता है ॥ २६९ ॥

लग्नस्थश्च यदा भानुः पञ्चमस्थो निशाकरः ।
अष्टमस्था यदा पापास्तदा जातो न जीवति ॥ २७० ॥

लग्न में सूर्य, पञ्चम भाव में चन्द्रमा तथा अष्टम भाव में पापग्रह स्थित हों तो जातक जीवित नहीं रहता अर्थात् शीघ्र उसकी मृत्यु होती है ॥ २७० ॥

लग्नपः पापसंयुक्तो लग्ने वा पापमध्यगे ।
लग्नात्सप्तमगः पापस्तदा चात्मवधी भवेत् ॥ २७१ ॥

लग्नेश यदि पाप ग्रहों से युक्त अथवा दो पाप ग्रहों के मध्य लग्न में स्थित हो तथा लग्न से सातवें भाव में पापग्रह स्थित हो तो आत्महत्या करने वाला होता है ॥ २७१ ॥

क्रूरक्षेत्रे यदा जीवो लग्नेशोऽस्तङ्गतो भवेत् ।
अकर्मा च तदा जातः सप्तवर्षाणि जीवति ॥ २७२ ॥

पापग्रहों की राशि में यदि बृहस्पति हो तथा लग्नेश अस्तंगत (सूर्य के साथ समीप के अंशों मे हों) तो जातक अकर्मण्य होता है तथा सात वर्षों तक ही जीवित रहता है ॥ २७२ ॥

अष्टमे च यदा सौरिर्जन्मस्थाने च चन्द्रमाः ।
मन्दाग्न्युदररोगा च गात्रहीनश्च जायते ॥ २७३ ॥

अष्टम भाव मे शनि, जन्म लग्न में चन्द्रमा हो तो जातक मन्दाग्नि, उदर रोग से पीड़ित तथा अङ्गहीन होता है ॥ २७३ ॥

शनिक्षेत्रे यदा भानुर्भानुक्षेत्रे तदा शनिः ।
द्वादशे वत्सरे मृत्युस्तस्य जातस्य जायते ॥ २७४ ॥

शनि के क्षेत्र (मकर, कुम्भ) मे सूर्य तथा सूर्य के क्षेत्र में (सिंह में) शनि हो तो उत्पन्न बालक की बारह वर्ष की आयु में मृत्यु होती है ॥ २७४ ॥

बुधभौमो यदा लग्ने षष्ठस्थानेऽथ वा स्थितौ।
तस्करश्चौरकर्मा स्याद्धस्तपादौ च नश्यतः ॥ २७५ ॥

बुध और भौम लग्न में अथवा छठें भाव में स्थित हों तो जातक चोरी करने वाला होता है तथा उसके हाथ-पांव नष्ट हो जाते हैं ॥ २७५ ॥

षष्ठेऽष्टमे वा मूर्त्तौ च शत्रुक्षेत्रे यदा बुधः।
चतुर्वर्षैर्भवेन्मृत्युर्बालकस्य न संशयः ॥ २७६ ॥

छठें, आठवें, लग्न अथवा शत्रु ग्रह की राशि मे यदि बुध हो तो निःसन्देह चौथे वर्ष में बालक की मृत्यु हो जाती है ॥ २७६ ॥

अष्टमस्थो यदा राहुः केन्द्रस्थाने च चन्द्रमाः।
सद्य एव भवेन्मृत्युर्बालकस्य न संशयः ॥ २७७ ॥

अष्टम भाव में राहु केन्द्र स्थान मे चन्द्रमा हों तो शीघ्र ही बालक की मृत्यु होती है इसमें सन्देह नहीं ॥ २७७ ॥

चतुर्थस्थो यदा राहुः षष्ठाष्टमगृहे शशी।
विंशत्या दिवसैर्मृत्युर्बालकस्य न संशयः ॥ २७८ ॥

चतुर्थ भाव में राहु, छठे, आठवें भाव में चन्द्रमा हो तो निःसन्देह बीस दिनों में ही बालक की मृत्यु होती है ॥ २७८ ॥

सप्तमे नवमे राहुः शत्रुक्षेत्रे यदा भवेत्।
षोडशे वत्सरे मृत्युर्बालकस्य न संशयः ॥ २७९ ॥

सप्तम अथवा नवम भाव में राहु अपने शत्रु ग्रह की राशि में हो तो बालक की सोलहवें वर्ष में मृत्यु होती है इसमें सन्देह नहीं ॥ २७९ ॥

द्वादशस्थो यदा चन्द्रः पापः स्यादष्टमे गृहे।
एकमासे भवेन्मृत्युस्तस्य बालस्य निश्चितम् ॥ २८० ॥

द्वादश भाव में चन्द्रमा तथा अष्टम भाव में पापग्रह हों तो निश्चित रूप से एक मास में बालक की मृत्यु होती है ॥ २८० ॥

जन्मस्थाने यदा राहुः षष्ठस्थाने च चन्द्रमाः।
अपस्मारस्तदा रोगो बालकस्य हि जायते ॥ २८१ ॥

जन्म लग्न में राहु, षष्ठ स्थान में चन्द्रमा हो तो इस योग में उत्पन्न बालक को अपस्मार (मृगी) रोग होता है ॥ २८१ ॥

भार्गवेण युतश्चन्द्रः षष्ठाष्टमगतो भवेत्।
मन्दाग्न्युदररोगी च हीनाङ्गोऽपि च बालकः ॥ २८२ ॥

शुक्र से युक्त चन्द्रमा यदि छठें या आठवें भाव म स्थित हो तो मन्दाग्नि एवं उदर रोग होता है तथा अङ्गहीन बालक होता है ॥ २८२ ॥

षष्ठाऽष्टमे यदा चन्द्रो बुधयुक्तश्च तिष्ठति ।
विषदोषेण बालस्य तदा मरणमुच्यते ॥ २८३ ॥

छठें, आठवें भाव में चन्द्रमा बुध के साथ स्थित हो तो विष दोष से (विषैली वस्तु से या विषपान से) बालक की मृत्यु होती है ॥ २८३ ॥

भानुना संयुतश्चन्द्रः षष्ठाष्टमगतो भवेत् ।
गजदोषेण मृत्युर्वा सिंहदोषेग वा भवेत् ॥ २८४ ॥

सूर्य से युक्त चन्द्रमा छठें, आठवें भाव में गया हो तो जातक की मृत्यु हाथी अथवा शेर द्वारा होती है ॥ २८४ ॥

एकोऽपि यदि मूर्तौ स्याज्जन्मकाले दिवाकरः ।
स्थानहीनो भवेद्बाला दुष्टवृत्तिः सदा पुनः ॥ २८५ ॥

जन्म समय म यदि अकेला सूर्य ही जन्म लग्न म बैठा हो तो जातक स्थान से रहित तथा दुष्ट आचरण वाला होता है ॥ २८५ ॥

लग्नेऽष्टमे यदा राहुश्चन्द्रेणालोकितो भवेत् ।
दशाहैर्जायते तस्य बालस्य मरणं ध्रुवम् ॥ २८६ ॥

लग्न अथवा अष्टम भाव मे स्थित राहु चन्द्रमा से दृष्ट हो तो दशदिनों में ही जातक की मृत्यु होती है ॥ २८६ ॥

लग्नाच्च नवमे सूर्यः सूर्यपुत्रे तथाऽष्टमे ।
एकादशे भार्गवे च मासमेकं स जीवति ॥ २८७ ॥

लग्न से नवम भाव मे सूर्य, अष्टम में शनि, ग्यारहवें भाव में शुक्र हों तो वह एक मास तक जीवित रहता है ॥ २८७ ॥

नवमे दशमे चन्द्रः सप्तमे च यदा सितः ।
पापे पातालसंस्थे च वंशच्छेदकरो नरः ॥ २८८ ॥

नवम अथवा दशम भाव में चन्द्रमा, सप्तम में शुक्र, तथा चतुर्थ भाव में पाप ग्रह हों तो वंश विच्छेद कारक योग होता है अर्थात् उस वंश का अन्त हो जाता है ॥ २८८ ॥

शत्रुक्षेत्रेऽष्टमे षष्ठे द्वितीये द्वादशे रविः ।
स जीवत्यङ्कवर्षाणि बालको नात्र संशयः ॥ २८९ ॥

सूर्य अपने शत्रुग्रह की राशि में स्थित होकर आठवें, छठे दूसरे तथा बारहवें भाव में गया हो तो जातक ९ वर्षों तक जीवित रहता है इसमें सन्देह नहीं ॥२८९॥

शत्रुक्षेत्रेऽष्टमे मूर्तौ बुधः षष्ठे प्रजायते।
बालो जीवति वर्षाणि चत्वार्य्येव न संशयः ॥ २६० ॥

अपने शत्रु ग्रह की राशि में स्थित बुध, लग्न, छठें अथवा आठवें भाव में गया हो तो बालक चार वर्षों तक ही जीवित रहता है ॥ २६० ॥

एकादशे तृतीये च नवमे पञ्चमे गुरौ।
मित्रक्षेत्रेऽष्टपञ्चाशदायुर्भवति निश्चितम् ॥ २६१ ॥

जन्म लग्न से ग्यारहवें, तीसरे, नवें तथा पाँचवें भाव में अपने मित्र ग्रह की राशि मे बृहस्पति हो तो जातक की आयु अट्ठावन वर्ष की होती है ॥ २६१ ॥

नवमे पञ्चमे वापि रिपुक्षेत्रे बृहस्पतिः।
तदा जातस्य षट्त्रिंशद्वर्षाण्यायुर्न संशयः ॥ २६२ ॥

लग्न से नवम अथवा पाँचवे भाव में शत्रु ग्रह की राशि में बृहस्पति हो तो उस मनुष्य की आयु ३६ वर्ष की होती है इसमें सन्देह नहीं ॥ २६२ ॥

मित्रक्षेत्रगतो लाभे दशमे वा यदा गुरुः।
शत्रुक्षेत्रेऽथवा शुक्रो द्वितीये द्वादशे भवेत्।
एकविंशतिवर्षायुर्जायते बालको ध्रुवम् ॥ २६३ ॥

मित्र ग्रह की राशि में स्थित बृहस्पति यदि दशवें या ग्यारहवें भाव में गया हो अथवा शत्रु ग्रह की राशि में स्थित शुक्र यदि दूसरे अथवा बारहवें भाव में गया हो तो बालक निश्चय ही इक्कीस वर्ष तक जीवित रहता है ॥ २६३ ॥

शत्रुक्षेत्रेऽष्टमे षष्ठे द्वितीये द्वादशे शनिः।
अष्टौ दिनान्यष्टमासानष्टवर्षाणि जीवति ॥ २६४ ॥

शत्रु ग्रह की राशि में स्थित होकर शनि यदि छठें, दूसरें, अथवा बारहवें भाव में गया हो तो जातक, आठ दिन, आठ मास अथवा ८ वर्ष तक ही जीवित रहता है ॥ २६४ ॥

चन्द्रक्षेत्रे यदा भौमो जायते मनुजः सदा।
रक्तपित्तेन हीनाङ्गो नानाव्याधिसमन्वितः ॥ २६५ ॥

चन्द्रमा के क्षेत्र (कर्क राशि) में यदि मंगल हो तो मनुष्य सदैव रक्त-पित्त सम्बन्धी विकार से नाना प्रकार की व्यधियों से युक्त तथा अंगहीन होता है ॥२६५॥

चन्द्रक्षेत्रे यदा चान्द्रिर्जायते यस्य जन्मनि।
सः जातः क्षयरोगी स्यात्कुष्ठादिभिरुपद्रुतः ॥ २६६ ॥

चन्द्र क्षेत्र (कर्क राशि) में बुध जिसके जन्म समय में हो वह व्यक्ति क्षय रोग तथा कुष्ठ रोग के उपद्रव से पीड़ित रहता है ॥ २६६ ॥

राहौ च केन्द्रगे मृत्युः पापानां दृष्टिसंयुते।
संवत्सरे तु दशमे षोडशे तु विशेषतः॥ २९७॥

केन्द्रस्थान में राहु पापग्रहों से दृष्ट हो तो जातक की दशवें वर्ष में अथवा विशेषरूप से सोलहवें वर्ष में मृत्यु होती है॥ २९७॥

चन्द्रः सप्तमभवने शनिकुजराहुग्रहैर्युक्तः।
सप्तमदिवसे मृत्युः सप्तममासे न सन्देहः॥ २९८॥

सप्तम भाव में शनि, मंगल और राहु से युक्त चन्द्रमा हो तो सातवें दिन अथवा सातवें मास में निःसन्देह मृत्यु होती है॥ २९८॥

भौमक्षेत्रे यदा जीवो षष्ठेवाप्यष्टमे शशी।
षष्ठेऽष्टमे भवेन्मृत्यू रक्षको यदि शङ्करः॥ २९९॥

भौम के क्षेत्र (मेष, वृश्चिक) में बृहस्पति तथा छठे अथवा आठवें भाव में चन्द्रमा स्थित हों तो छठे या आठवें दिन, मास या वर्ष में जातक की मृत्यु होती है स्वयं भगवान शंकर ही क्यों न रक्षक हों॥ २९९॥

जन्मसप्तमभे सौरिरष्टमे यदि चन्द्रमाः।
ब्रह्मपुत्रावतारोऽपि बालकः स न जीवति॥ ३००॥

यदि जन्म लग्न अथवा सप्तम भाव में शनि, अष्टम भाव में चन्द्रमा स्थित हो तो इस योग में उत्पन्न ब्रह्मा का पुत्र भी जीवित नहीं रहता॥ ३००॥

षष्ठाष्टमे यदा चन्द्रो रविर्भवति सप्तमः।
पितृमातृधनं हन्ति मासमेकं न जीवति॥ ३०१॥

छठें अथवा आठवें भाव में चन्द्रमा तथा सप्तम भाव में सूर्य हो तो जातक माता-पिता के धन का नाश करता है तथा एक ही मास तक जीवित रहता है॥ ३०१॥

द्वादशे जीवशुक्रौ च जन्मतो राहुरेव च।
सप्तमे च यदा सौरिर्वर्षमेकं स जीवति॥ ३०२॥

जन्म लग्न से बारहवें भाव में बृहस्पति, शुक्र और राहु, सप्तम भाव में शनि हो तो वह बालक एक वर्ष तक ही जीवित रहता है॥ ३०२॥

भौमे दिवाकरे छिद्रे जातः शत्रुगृहे यदि।
मासेन म्रियतेऽवश्यं यमोऽपि यदि रक्षकः॥ ३०३॥

मंगल और सूर्य अष्टम भाव में अपनी शत्रुराशि में स्थित हो तो स्वयं यमराज ही रक्षक हों तो भी बालक एक मास में अवश्य मर जाता है॥ ३०३॥

यदा लग्ने ग्रहः क्रूरो षष्ठे वाप्यष्टमे शशी ।
तदा सद्यो भवेन्मृत्युर्जातकस्य न संशयः ।। ३०४ ।।

यदि लग्न में क्रूरग्रह, छठें अथवा आठवें भाव में चन्द्रमा स्थित हों तो शीघ्र ही जातक की मृत्यु हो जाती है । इसमें सन्देह नहीं ।। ३०४ ।।

चतुर्थेपि यदा राहुः केन्द्रे भवति चन्द्रमाः ।
विंशद्वर्षे भवेन्मृत्युर्जातकस्य न संशयः ।। ३०५ ।।

यदि चतुर्थ भाव में राहु तथा केन्द्र स्थान में चन्द्रमा हों तो जातक की बीस वर्ष की आयु में मृत्यु होती है । इसमें सन्देह नहीं ।। ३०५ ।।

सप्तमस्थो यदा राहुर्जन्मकाले यदा तदा ।
दशवर्षैर्भवेन्मृत्युरमृतं यदि पीयते ।। ३०६ ।।

जन्म समय में सप्तम भाव में यदि राहु हो तो जातक यदि अमृत ही पीता रहे तो भी दश वर्ष में उसकी मृत्यु हो जाती है ।। ३०६ ।।

लग्नेऽष्टमे यदा राहुश्चन्द्रो वा यदि पश्यति ।
जातकस्य तदा मृत्युः शक्रेणापि सुरक्षितः ।। ३०७ ।।

लग्न अथवा अष्टम भाव मे राहु चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक की रक्षा यदि इन्द्र करें तो भी उसकी शीघ्र ही मृत्यु हो जाती है ।। ३०७ ।।

दशमेऽपि यदा भौम उच्च शत्रुगृहे स्थितः ।
जातकस्य भवेन्मृत्युर्मातुश्चैव न संशयः ।। ३०८ ।।

दशम भाव में भौम उच्च राशि या शत्रु ग्रह की राशि में स्थित हो तो जातक तथा उसकी माता दोनों की निःसन्देह मृत्यु होती है ।। ३०८ ।।

लग्नस्थितो यदा भानुः पञ्चमस्थो निशापतिः ।
लग्नेऽष्टमे स्थिताः पापास्तदा जातो न जीवति ।। ३०९ ।।

यदि जन्म लग्न में सूर्य, पञ्चम भाव में चन्द्रमा, लग्न अथवा अष्टम भाव में पापग्रह स्थित हों तो जातक जीवित नहीं रहता ।। १०९ ।।

लग्नात्सप्तमशीतांशुः पापोऽष्टमगतो ग्रहः ।
लग्नस्थितो यदा भानुर्मासेन म्रियते शिशुः ।। ३१० ।।

जन्म लग्न से सप्तम भाव में चन्द्रमा, अष्टम भाव में पापग्रह तथा लग्न में सूर्य स्थित हो तो एक मास में ही बालक की मृत्यु हो जाती है ।। ३१० ।।

धने गुरुः सैंहिकेयो भौमः शुक्रश्च सप्तमे ।
अष्टमे रविचन्द्रौ च म्लेच्छः स्याद्यवने स्थितः ।। ३११ ।।

द्वितीय भाव में बृहस्पति और राहु, सप्तम भाव में मंगल और शुक्र तथा अष्टम भाव में सूर्य और चन्द्रमा स्थित हो तो जातक यवन (मुस्लिम) धर्म स्वीकार कर म्लेच्छ हो जाता है ॥ ३११ ॥

लग्नस्थाने यदा भौमो ह्यष्टमें च दिवाकरः।
सौरिश्चतुर्थभवने तदा कुष्ठी भवेन्नरः ॥ ३१२ ॥

यदि जन्म लग्न में भौम, अष्टम भाव में सूर्य तथा चतुर्थ भाव में शनि स्थित हों तो मनुष्य कुष्ठ रोग से पीड़ित होता है ॥ ३१२ ॥

धर्मस्थाने यदा पापो लग्नात् पापश्चतुर्थगः।
कर्मस्थानगतो राहुस्तदा म्लेच्छो भवेद्ध्रुवम् ॥ ३१३ ॥

जन्म लग्न से नवम एवं चतुर्थ भाव में पापग्रह स्थित हों तथा कर्म (दशम) भाव में राहु हो तो जातक अवश्य म्लेच्छ होता है ॥ ३१३ ॥

व्ययस्थानगते चन्द्रे वामं चक्षुर्विनश्यति।
यदा सूर्यो द्वितीयस्थस्तदा ह्यन्धं समादिशेत् ॥ ३१४ ॥

बारहवें भाव में चन्द्रमा हो तो बायाँ नेत्र नष्ट हो जाता है। यदि द्वितीय भाव में सूर्य हो तो दोनों आँखे ज्योतिहीन (अन्धी) हो जाती हैं ॥ ३०४ ॥

सिंहलग्ने यदा जन्म शनिर्मूर्तौ तथा भवेत्।
चक्षुर्हीनो भवेद्बालः शुक्रे जन्मान्धको भवेत् ॥ ३१५ ॥

सिंह लग्न में जन्म हो तथा जन्म लग्न में ही शनि स्थित हो तो बालक नेत्र-हीन होता है। यदि उसी लग्न में शुक्र हो तो जातक जन्मान्ध होता है ॥ ३१५ ॥

होरायां द्वादशे राशौ स्थितौ यदि दिवाकरः।
करोति दक्षिणं काणं वामनेत्रं च चन्द्रमाः ॥ ३१६ ॥

यदि जन्म समय मे मीन राशि का सूर्य लग्न में हो तो दाहिना नेत्र तथा उसी राशि में यदि चन्द्रमा हो तो जातक वाम नेत्र से काण (काना) होता है ॥३१६॥

स्वस्थाने लग्नगः क्रूरः क्रूरः पातालगः पुनः।
दशमे भवने क्रूरः कष्टं जावति जातकः ॥ ३१७ ॥

अस्मिन् योगे हि यो जातो मातुर्दुःखकरो भवेत्।
यदि जीवेदसौ जातो मातृपक्षक्षयङ्करः ॥ ३१८ ॥

लग्न में अपनी ही राशि में क्रूरग्रह स्थित हो, चतुर्थ भाव में तथा दशम भाव में भी क्रूरग्रह स्थित हो तो बालक का जीवित रहना कठिन होता है। इस योग में उत्पन्न बालक माता को कष्ट देने वाला होता है। यदि यह (बालक)

जीवित रह जाय तो माता के पक्ष (मामा, नाना आदि) को नष्ट करने वाला होता है ।। ३१७-३१८ ।।

क्रूरक्षेत्रे भवेत् सूर्यः कन्यायां क्रूरसंस्थितः ।
क्रूरक्षेत्रे भवेद्राहुः कष्टं जीवति जातकः ।। ३१९ ।।

क्रूरग्रह की राशि में सूर्य, कन्या राशि में क्रूर ग्रह तथा क्रूर ग्रह की राशि में राहु स्थित हो तो बालक बहुत कठिनाई से जीवित रहता है ।। ३१९ ।।

शुक्रे च वाक्पतौ सौम्ये नीचे राहुसमन्विते ।
चन्द्रमाश्च न पश्येत सोऽपि बालो न जीवति ।। ३२० ।।

शुक्र, बृहस्पति और बुध इनमें से कोई भी ग्रह अपनी नीच राशि में राहु से युक्त हो तथा चन्द्रमा से दृष्ट न हो तो वह बालक भी जीवित नहीं रहता ।।३२०।।

षष्ठाष्टमे यदा चन्द्रो द्वादशे रविमङ्गलौ ।
सोऽपि जातो न जीवेत रक्षको यदि शङ्करः ।। ३२१ ।।

छठें अथवा आठवें भाव में चन्द्रमा, बारहवें भाव में सूर्य और मंगल स्थित हों तो भगवान शंकर भी यदि रक्षा करें तो भी बालक जीवित नहीं रहता ।। ३२१ ।।

षष्ठाष्टमे यदा केतुः केन्द्री भवति चन्द्रमाः ।
सद्यो बालस्य मृत्युः स्याद्रक्षिता यदि शङ्करः ।। ३२२ ।।

छठें अथवा आठवें भाव में केतु तथा केन्द्रस्थानों में चन्द्रमा हो तो भगवान शंकर से रक्षित बालक भी शीघ्र मर जाता है ।। ३२२ ।।

चन्द्रो बुधस्तथा सूर्यः शनिश्चान्ते यदा भवेत् ।
मध्यस्थाने गतो भौमो हीनदृष्टिस्तदा भवेत् ।। ३२३ ।।

चन्द्रमा, बुध, सूर्य और शनि ये सभी द्वादश भाव में स्थित हों तथा मंगल मध्य (दशम) भाव में स्थित हो तो जातक की मन्द दृष्टि होती है ।। ३२३ ।।

अर्कः सौरिस्तथा भौमः स्वर्भानुः केतुसंयुतः ।
नीचस्थानगतो यस्य स जातो मातृघातकः ।। ३२४ ।।

सूर्य, शनि और मंगल राहु अथवा केतु से युक्त होकर अपनी-अपनी नीच राशियों में स्थित हों तो इस योग में उत्पन्न बालक मातृघातक (माता की मृत्यु का कारण) होता है ।। ३२४ ।।

रविराहू सौरिभौमौ जीवो लग्ने च पञ्चमे ।
योगेऽस्मिन्नपि यो जातो जातमात्रो विनश्यति ।। ३२५ ।।

सूर्य-राहु, शनि-मंगल तथा बृहस्पति लग्न में अथवा पंचम भाव में स्थित हों तो इस योग में उत्पन्न होते ही बालक की मृत्यु हो जाती है ।। ३२५ ।।

क्रूरक्षेत्रगतो जीवो रवि राहुर्धरासुतः ।
सप्तमे भवने शुक्रो देही कष्टं प्रयाति च ।। ३२६ ।।

क्रूर-ग्रह की राशि में यदि बृहस्पति, सूर्य, राहु और मंगल स्थित हों तथा सप्तम भाव मे शुक्र हो तो जातक बहुत कष्ट पाता है ॥ ३२६ ॥

क्रूरे लग्ने भवेज्जातस्तत्स्वामी क्रूरराशिगः ।
आत्मघाती भवेत्तस्य शरीरे कष्टमादिशेत् ॥ ३२७ ॥

क्रूर लग्न (१, ३, ५, ७, ९, ११) मे जन्म हो तथा लग्न का स्वामी भी क्रूर राशियों में ही स्थित हो तो जातक आत्म-हत्या कर लेता है तथा उसके शरीर में बहुत कष्ट होता है ॥ ३२७ ॥

सप्तमे भवने भौमः पञ्चमे च दिवाकरः ।
अरण्ये च भवेज्जन्म वृक्षाधस्तत्र संशयः ॥ ३२८ ॥

सप्तम भाव में मंगल तथा पञ्चम भाव में सूर्य हो तो जंगल में वृक्ष के नीचे जन्म होता है इसमें सन्देह नहीं ॥ ३२८ ॥

एकः पापो यदा लग्ने लग्नेशो वा न पश्यति ।
सूर्यः पश्यति नो लग्नमन्यजातस्तदा भवेत् ॥ ३२९ ॥

एक पापग्रह लग्न में हो तथा लग्नेश उसे न देखता हो तथा सूर्य भी लग्न को न देखता हो तो जातक दूसरे (अन्य-पुरुष) से उत्पन्न होता है ॥ ३२९ ॥

तिथिप्रान्ते दिनान्ते च लग्नस्यान्ते तथैव च ।
चरांशेऽपि च यो जातः सोऽन्यजातः शिशुर्भवेत् ॥ ३३० ॥

तिथि के अन्त में, दिन के अन्त मे, लग्न के अन्त मे तथा चर राशियों (१, ४, ७, १०) के नवमांश में जिसका जन्म हों वह बालक पर-पुरुष से उत्पन्न होता है ॥ ३३० ॥

न पश्यति शशी लग्नं मध्यस्थः सौम्यशुक्रयोः ।
ततः परोक्षे जन्म स्याद्भौमेऽस्ते वा तनौ यमे ॥ ३३१ ॥

बुध और शुक्र के बीच मे स्थित चन्द्रमा लग्न को न देखता हो, सप्तम भाव में मंगल अथवा लग्न में शनि हो तो पिता के परोक्ष में जन्म होता है ॥ ३३१ ॥

जीवक्षेत्रगते चन्द्रे शुक्रे वेतरराशिगे ।
द्रेष्काणे च तदंशे वा न परैर्जात इष्यते ॥ ३३२ ॥

बृहस्पति के क्षेत्र (धनु और मीन) मे चन्द्रमा हो अथवा शुक्र इतर राशियें (धनु और मीन को छोड़कर अन्य किसी राशि) में गया हो अथवा बृहस्पति के द्रेष्काण या नवमांश में स्थित हो तो जातक पर-जात (पर-पुरुष से उत्पन्न) नहीं होता अपितु पिता का औरस पुत्र होता है ॥ ३३२ ॥

न लग्नमिन्दुं न गुरुर्निरीक्षते न वा शशाङ्कं रविणा समागतम् ।
सपापकोऽर्केण युतोऽथवा शशी परेण जातं प्रवदन्ति निश्चयात् ॥३३३॥

जन्मलग्न और चन्द्र (जन्म-राशि) को बृहस्पति न देखता हो, सूर्य और चन्द्रमा की युति न हो अथवा पापग्रह सहित सूर्य से चन्द्रमा युक्त हो तो इन योगों में उत्पन्न बालक पर-पुरुष से उत्पन्न होता है। ऐसा निर्णयपूर्वक कहना चाहिये ॥ ३३३ ॥

लग्नं पश्यति नो गुरुर्न च भृगुर्जारेण जातः शिशुः ।
क्षोणीजः समवेक्षते शशधरं सूर्योऽथवा जारजः ॥
चन्द्रः पापयुतो दिनेशसहितः स्यादेवमप्यन्यजः ।
प्रोक्तं प्राङ्मुनिपुङ्गवै स्फुटमिदं योगत्रयं जायते ॥ ३३४ ॥

जन्मलग्न को न तो गुरु देखता हो न शुक्र, चन्द्रमा को सूर्य अथवा मंगल देखता हो, चन्द्रमा पापग्रह और सूर्य से युक्त हो तो जातक जारज (पर-पुरुष से उत्पन्न) होता है। ये तीनों योग स्पष्ट रूप से प्राचीन श्रेष्ठ मुनियों ने कहा है ॥ ३३४ ॥

यदि वापि भवेच्चन्द्रो जन्माष्टमद्वितीयगः ।
द्वादशैकादशस्थो वा पश्चाज्जातस्तदा शिशुः ॥ ३३५ ॥

यदि चन्द्रमा जन्म लग्न, अष्टम, द्वितीय, द्वादश तथा एकादश भावों में से किसी भी भाव में स्थित हो तो पिता के परोक्ष में जन्म होता है ॥ ३३५ ॥

क्षपाकरः पश्यति नैव लग्नं विदेशसंस्थे जनके प्रसूतः ।
कुजार्किसंसर्गगते विलग्ने कवीज्यकेन्द्रांशविहीनके वा ॥ ३३६ ॥

चन्द्रमा की दृष्टि लग्न पर न हो, मंगल और शनि लग्न में हों अथवा बृहस्पति और शुक्र केन्द्र स्थानों में न जाकर अन्य स्थानों में स्थित हों तो पिता के विदेश (प्रवास काल में) स्थित रहने पर पुत्र का जन्म होता है अर्थात् परोक्ष में जन्म होता है ॥ ३३६ ॥

रविशशियुते सिंहे लग्ने कुजार्किनिरीक्षितो
नयनरहितः सौम्यासौम्यैः सबुद्बुदलोचनः ॥
व्ययगृहगतश्चन्द्रो वामं हिनस्त्यपरं रवि-
र्नशुभा गदिता योगा याप्या भवन्ति शुभेक्षिताः ॥ ३३७ ॥

सिंह लग्न में जन्म हो तथा लग्न में सूर्य चन्द्रमा स्थित हों तथा मंगल और शनि से दृष्ट हों तो जातक नेत्रहीन होता है। यदि लग्न पर शुभ और पाप दोनों प्रकार के ग्रहों की दृष्टि हो तो बुद्-बुद् लोचन (अधखुली आँखों से देखने

वाला) होता है। यदि बारहवें भाव में चन्द्रमा हों तो वामनेत्र, सूर्य हो तो दाहिना नेत्र नष्ट होता है। ये अशुभ योग कहे गये हैं। शुभग्रहों से दृष्ट होने पर उक्त फल में न्यूनता हो जाती है ।। ३३७ ।।

धनभाव विचार—

पापाः सर्वे धनस्थाने धनहानिकरा मताः।
अन्यैः सौम्यैः शुभं सर्वमृद्धिवृद्धिधनादिकम् ।। ३३८ ।।

सभी पापग्रह धन स्थान में धन हानि कारक होते हैं। अन्य शुभग्रहों की युति धन स्थान में हो तो सभी प्रकार से धन-सम्पत्तियों की वृद्धि होती है ।।३३८ ।।

क्रूराश्चतुर्षु केन्द्रेषु तथा क्रूरा धनेऽपि च।
दरिद्रयोगं जानीयात्स्वपक्षस्य भयङ्करम् ।। ३३९ ।।

क्रूरग्रह चारों केन्द्रों में हों तथा धन स्थान में भी क्रूर ग्रह हों तो दरिद्र योग होता है। यह अपने कुल के लिए भी अनिष्टकर योग होता है ।। ३३९ ।।

अष्टमस्थो यदा भौमस्त्रिकोणे नीचगो रविः।
स शीघ्रमेव जातः स्याद्भिक्षाजीवी च दुःखितः ।। ३४० ।।

अष्टमभाव में मंगल, नीचराशिगत (तुला में) सूर्य त्रिकोण (५, ९) भाव में हो तो जातक शीघ्र ही भिक्षा मांगनेवाला तथा दुःखी हो जाता है ।। ३४० ।।

कन्यायां च यदा राहुः शुक्रो भौमः शनिस्तथा।
तत्र जातस्य जायेत कुबेरादधिकं धनम् ।। ३४१ ।।

कन्या राशि में यदि राहु, शुक्र, मंगल और शनि हों तो जातक के पास कुबेर से भी अधिक धन होता है ।। ३४१ ।।

अर्कः केन्द्रे यदा चन्द्रो मित्रांशे गुरुणेक्षितः।
वित्तवान् ज्ञानसम्पन्नो जायते च तदा नरः ।। ३४२ ।।

सूर्य केन्द्र में, चन्द्र अपने मित्र ग्रह के नवांश में स्थित हो तथा बृहस्पति से दृष्ट हो तो इस योग में मनुष्य धनवान एवं ज्ञानसम्पन्न (विद्वान) होता है ।। ३४२ ।।

स्वक्षेत्रस्थो यदा जीवो बुधः सौरिस्तथैव च।
तदा जातस्य दीर्घायुः संपत्तिश्च पदे पदे ।। ३४३ ।।

अपने-अपने क्षेत्र मे यदि बृहस्पति, बुध और शनि स्थित हों तो जातक दीर्घायु होता है तथा पग-पग पर उसे धन की प्राप्ति होती है ।। ३४३ ।।

लग्नं लग्नेशसंयुक्तं यस्य जन्मनि जायते।
न मुञ्चन्ति गृहं तस्य कुलस्त्रिय इव श्रियः ।। ३४४ ।।

जिसके जन्म समय में लग्न लग्नेश से युक्त हो (अर्थात् लग्न का स्वामी लग्न में ही स्थित हो) तो लक्ष्मी उसके गृह को कुलांगना की तरह नहीं छोड़ती ।। ३४४ ।।

चन्द्रेण मङ्गलो युक्तो जन्मकाले यदा भवेत् ।
तस्य जातस्य गेहं तु लक्ष्मीर्नैव विमुञ्चति ।। ३४५ ।।

यदि जन्म समय में चन्द्रमा मंगल से युक्त हो तो जातक के गृह को लक्ष्मी कभी नहीं छोड़ती ।। ३४५ ।।

मासमध्ये तु यत्संख्यदिवसैर्जायते पुमान् ।
तत्संख्यवर्षभुक्तौ तु लक्ष्मीर्भवति निश्चितम् ।। ३४६ ।।

जन्ममास के जितने दिन बीतने पर जन्म होता है जन्म से उतने वर्ष बाद निश्चित रूप से लक्ष्मी (धन) की प्राप्ति होती हैं ।। ३४६ ।।

सहजभाव विचार—

पापैस्तृतीयगैः सर्वैर्बान्धवै रहितो भवेत् ।
सौम्यैश्च भ्रातृसंयुक्तः कीर्तियुक्तो धनप्रियः ।। ३४७ ।।

यदि तृतीय भाव में सभी पापग्रह गये हों तो जातक भाइयों से रहित होता है। यदि शुभग्रहों से युक्त तृतीय भाव हो तो भाइयों से युक्त, कीर्तिसम्पन्न तथा धन का प्रेमी होता है ।। ३४७ ।।

लग्नात्तृतीयभवने शिखिना सह चन्द्रमाः ।
लक्ष्मावाञ्जायते बालो भ्रातृहीनो न संशयः ।। ३४८ ।।

लग्न से तीसरे भाव में चन्द्रमा केतु से युक्त हो तो, उत्पन्न बालक धनवान होता है, परन्तु भाइयों से रहित होता है इसमें सन्देह नहीं ।। ३४८ ।।

आदौ जातं रविर्हन्ति पश्चाद्भौमशनैश्चरौ ।
राहुनामा ह्युभौ हन्ति केतुः सर्वनिवारकः ।। ३४९ ।।

सूर्य यदि तृतीय भाव में हो तो अग्रज (बड़े भाई) का, मंगल और शनि हो तो छोटे भाई का, राहु हो तो बड़े-छोटे दोनों भाइयों का नाश होता है। यदि तृतीय में केतु हो तो उक्त अनिष्टों का निवारक होता है ।। ३४९ ।।

स्वक्षेत्रस्थो यदा राहुर्धनस्थाने बृहस्पतिः ।
बुधेन च समायुक्तस्तस्य बन्धुत्रयं भवेत् ।। ३५० ।।

राहु अपने क्षेत्र (कन्या राशि) में हो, धन (द्वितीय) स्थान में बृहस्पति बुध से युक्त हो तो जातक को तीन भाइयों का योग कहना चाहिये ।। ३५० ।।

लग्ने चन्द्रो धने शुक्रो व्यये च बुधभास्करौ ।
राहुश्चेत् पञ्चमे बालः स भवेद्बन्धकुरसदा ।। ३५१ ।।

लग्न में चन्द्रमा, धन में शुक्र, व्यय भाव मे बुध और सूर्य, तथा पञ्चम भाव में राहु हो तो (भाइयों) को बन्धन (दण्डित) कराने वाला होता है ॥ ३५१ ॥

धनस्थाने यदा क्रूरो भौमः सौरिसमन्वितः ।
सहजे च भवेद्राहुर्भ्राता तस्य न जीवति ॥ ३५२ ॥

धन स्थान मे क्रूरग्रह हो, मंगल शनि से युक्त हो, तथा तृतीय भाव में राहु हो तो उस व्यक्ति का भाई जीवित नहीं रहता ॥ ३५२ ॥

षष्ठे च भवने भौमः सप्तमे राहुसम्भवः ।
अष्टमे च यदा सौरिर्भ्राता तस्य न जीवति ॥ ३५३ ॥

जन्म लग्न से छठें भाव मे मगल, सातवें मे राहु तथा आठवें मे शनि हो तो उस व्यक्ति का भाई जीवित नहीं रहता ॥ ३५३ ॥

विलग्नस्थो यदा जीवो धने सौरिर्यदा भवेत् ।
राहुश्च सहजे स्थाने भ्राता तस्य न जीवति ॥ ३५४ ॥

लग्न मे बृहस्पति, द्वितीय भाव म शनि तथा तीसरे भाव मे राहु यदि हो तो उसका भाई जीवित नहीं रहता ॥ ३५४ ॥

सप्तमे भवने भौमश्चाष्टमेऽपि सितो यदि ।
नवमें च भवेत्सूर्यः स्वल्पायुश्च समूर्जितः ॥ ३५५ ॥

सातवें भाव में मंगल, आठवें मे शुक्र, नवम भाव मे सूर्य हो तो जातक अल्पायु होता है ॥ ३५५ ॥

पुंग्रहो यस्य सहजे ह्युच्चस्थानगतो भवेत् ।
भ्रातृषट्कं विजानीयादन्यथा भगिनी स्मृता ॥ ३५६ ॥

जिसके जन्म लग्न से तृतीय भाव मे पुरुष ग्रह अपनी उच्च राशि में स्थित हों तो उसके छः भाई होते है तथा उच्चराशि गत तृतीय भाव मे स्थित हों तो छः बहने होती हैं ॥ ३५६ ॥

सुखभाव विचार—

तुर्यस्थाने स्थिता पापा बालत्वे मातृकष्टदाः ।
सौख्यं सौम्याः प्रकुर्वन्ति राजसम्मानदायकाः ॥ ३५७ ॥

चतुर्थ भाव में स्थित पापग्रह जातक के बाल्यकाल मे माता के लिए कष्टकर, होते हैं । यदि शुभ ग्रह स्थित हों तो शुभकारक होते हैं तथा 'राजसम्मान दिलाने वाले होते हैं ॥ ३५७ ॥

लग्नाच्चतुर्थगः पापो यदि स्यादबलवत्तरः ।
सदा मातृवधं कुर्यात्केन्द्रे वा न परो यदि ॥ ३५८ ॥

जन्म लग्न से चतुर्थ भाव में यदि बलवान पापग्रह हो तथा केन्द्र स्थानों में अन्य कोई ग्रह न हो तो जातक माता का वध करने वाला होता है। (इस योग में उत्पन्न बालक की माता मर जाती है) ॥ ३५८ ॥

द्वितीये द्वादशे स्थाने यदा पापो व्यवस्थितः।
तदा मातुर्भयं विन्द्याच्चतुर्थे दशमे पितुः ॥ ३५९ ॥

लग्न से दूसरे, बारहवें, स्थान में यदि पाप ग्रह हो तो माता के लिए कष्ट कर, यदि चतुर्थ और दशम भाव में पाप ग्रह हों तो पिता के लिए कष्ट कर होता है ॥ ३५९ ॥

पापमध्यगते लग्ने चन्द्रे वा पापसंयुते।
सौम्ये निधनगे पापे मातृहा सप्तवासरे ॥ ३६० ॥

पाप ग्रहों के मध्य में लग्न हो (अर्थात् दूसरे और बारहवें भाव में पाप ग्रह हों) अथवा पापग्रहों के मध्य में चन्द्रमा हो, शुभ ग्रह पाप ग्रहों से युक्त हों तथा अष्टम भाव में पाप ग्रह हो तो जातक की माता सात दिनों में मर जाती है ॥३६०॥

चतुर्थे हन्यते माता दशमे च तथा पिता।
सप्तमे भवने क्रूरास्तस्य भार्या न जीवति ॥ ३६१ ॥

जिसके जन्म लग्न से चतुर्थ भाव में पाप ग्रह हों उसकी माता की, दशम भाव में पाप ग्रह हों तो पिता की तथा सातवें भाव में पाप ग्रह हो तो पत्नी की शीघ्र मृत्यु होती है ॥ ३६१ ॥

मन्यङ्गारकमध्यस्थः सूर्यः कुर्यात्पितुर्वधम्।
मध्ये वा रजनीनाथो मातुर्मरणमादिशेत् ॥ ३६२ ॥

यदि सूर्य शनि और मंगल के मध्य में स्थित हो तो पिता की मृत्यु, यदि शनि-मंगल के मध्य चन्द्रमा हो तो माता की शीघ्र मृत्यु होती है ॥ ३६२ ॥

चन्द्रादष्टमगे पापे चन्द्रे पापसमन्विते।
पापैर्बलिष्टः संदृष्टे सद्यो भवति मातृहा ॥ ३६३ ॥

चन्द्रमा से अष्टम भाव में यदि पाप ग्रह हो, चन्द्रमा पाप ग्रहों से युक्त हो तथा अन्य पाप ग्रहों से चन्द्रमा दृष्ट हो तो जातक की माता शीघ्र ही मर जाती है ॥ २६३ ॥

लग्नस्थाने यदा जीवो धनस्थाने शनैश्चरः।
राहुश्च सहजस्थाने माता तस्य न जीवति ॥ ३६४ ॥

यदि लग्न में बृहस्पति, द्वितीय में शनि, तृतीय भाव में राहु स्थित हो तो उस व्यक्ति की माता जिवित नहीं रहती अर्थात् शीघ्र ही मर जाती है ॥ ३६४ ॥

सिंहे भौमस्तुले सौरिः कन्यायां वा सितो भवेत् ।
मिथुने च यदा राहुर्जननी तस्य नश्यति ।। ३६५ ।।

सिंह राशि में मंगल, तुला में शनि, अथवा कन्या में शुक्र हो, तथा मिथुन में यदि राहु स्थित हो तो जातक की माता शीघ्र ही मर जाता है ।। ३६५ ।।

चन्द्रः पापग्रहैर्युक्तश्चन्द्रो वा पापमध्यगः ।
चन्द्रात्सप्तमगः पापस्तदा मातृवधो भवेत् ।। ३६६ ।।

चन्द्रमा पाप ग्रहो से युक्त अथवा पाप ग्रहो के मध्य में स्थित हो तथा चन्द्रमा से सातवें भाव में पाप ग्रह हों तो माता की मृत्यु होती है ।। ३६६ ।।

एकादशे यदा क्रूरः पञ्चमे शुक्रशीतगू ।
प्रथमं कन्यका जाता माता तस्यास्तु कष्टगा ।। ३६७ ।।

ग्यारहवे भाव में क्रूरग्रह हों, पञ्चम भाव में शुक्र और चन्द्रमा हो तो पहले कन्या का जन्म तथा माता को अपार कष्ट होता है ।। ३६७ ।।

धने राहुर्बुधः शुक्रः सौरिः सूर्यो यदा ग्रहाः ।
तदा मातुर्भवेन्मृत्युर्मृतोऽस्यं परिजायते ।। ३६८ ।।

धन भाव में राहु, बुध, शुक्र, शनि और सूर्य सभी एक साथ पड़े हों तो माता की मृत्यु होती है तथा मृत बालक ही पैदा होता है। (गर्भ में ही बच्चा मर जाता है उस बालक के जन्म के साथ-साथ माता भी मर जाती है)।। ३६८ ।।

नीचस्थानगते चन्द्रे तिष्ठेद्वै भार्गवात्मजः ।
पापासक्तो महाक्रोधी माता तस्य न जीवति ।। ३६९ ।।

अपनी नीच राशि (वृश्चिक) में चन्द्रमा हो और वहीं (वृश्चिक में) शुक्र भी स्थित हो तो जातक पाप कर्म में आसक्त होता है तथा उसकी माता शीघ्र ही मर जाती है ।। ३६९ ।।

द्वादशे रिपुभावे च यदा पापग्रहो भवेत् ।
तदा मातुर्भयं विन्द्याच्चतुर्थे दशमे पितुः ।। ३७० ।।

द्वादश भाव एवं षष्ठ भाव में यदि पापग्रह हों तो माता को, चतुर्थ तथा दशम भाव में पापग्रह हों तो पिता को भय (कष्ट अथवा मृत्यु भय) होता है ।। ३७० ।।

त्रिसप्तगो दिवानाथो जन्मस्थश्च महीसुतः ।
तस्य माता न जीवेत वर्षमेकं पलद्वयम् ।। ३७१ ।।

जिसके जन्म समय में तीसरे और सातवें भाव में सूर्य, जन्म लग्न में मंगल, हो उसकी माता एक वर्ष से अधिक दो पल भी जीवित नहीं रह सकती अर्थात् एक वर्ष के अन्त तक अवश्य मर जाती है ।। ३७१ ।।

द्यूनाष्टमगते पापे क्रूरग्रहनिरीक्षिते ।
जनन्या सह मृत्युः स्याद् बालकस्य न संशयः ॥ ३७२ ॥

सप्तम और अष्टम भाव में पापग्रह गये हों, क्रूरग्रहों से दृष्ट हों तो माता के साथ-साथ नवजात शिशु की भी मृत्यु हो जाती है ॥ ३७२ ॥

पञ्चमस्थाः शुभाः सर्वे पुत्रसन्तानकारकाः ।
क्रूराः सन्ततिमृत्युं च कुपुत्रं च धरासुतः ॥ ३७३ ॥

पंचम भाव में शुभग्रह स्थित हों तो सन्तान कारक योग होते हैं। यदि क्रूरग्रह हो तो सन्तान की मृत्यु होती है। यदि पञ्चमस्थ मङ्गल हो तो कुपुत्र होते हैं ॥ ३७३ ॥

बालस्य जन्मकाले तु पञ्चमो धरणीसुतः ।
अपुत्रश्च भवेद् बालो नारी चैव विशेषतः ॥ ३७४ ॥

जिस बालक के जन्म काल में पञ्चम भाव में मंगल हो वह सन्तान हीन होता है। यदि किसी स्त्री के पञ्चम भाव में मंगल हो तो विशेष रूप से सन्तान हानिकारक होता है ॥ ३७४ ॥

अपुत्रं कुरुते भानुः पुत्रमेकं निशाकरः ।
सशोकं पुत्रहीनं च पञ्चमो धरणीसुतः ॥ ३७५ ॥

पञ्चम भाव में सूर्य हो तो पुत्रहीन, चन्द्रमा हो तो एकपुत्र, तथा मंगल हो तो शोकयुक्त एवं पुत्रहीन होता है। भाव यह कि पुत्र होकर मर जाता है ॥३७५॥

उच्चे वा यदि वा नीचे पञ्चमः शिखिखेचराः ।
हाहाकारं च कुरुते पुत्रशोकेन पीडितः ॥ ३७६ ॥

उच्च अथवा नीच राशि में पञ्चम भाव में केतु हो तो मनुष्य पुत्रशोक से सन्तप्त होकर हाहाकार करता है ॥ ३७६ ॥

ऋतुरेतोऽप्यदृष्टं स्याद् यदि चैको न पश्यति ।
अप्रसूतो भवेन्नापि बहुस्त्रीपरिणेतृकः ॥ ३७७ ॥

उक्त (पञ्चमस्थ उच्च-नीच राशिगत केतु) ग्रह पर यदि एक भी ग्रह की दृष्टि न हो तो उस जातक की स्त्री को रजोधर्म भी नहीं होगा—सन्तान तो दुर्लभ है। इस योगवाला व्यक्ति कई स्त्रियों से विवाह कर लें तो भी सन्तान नहीं होता ॥ ३७७ ॥

पापः पञ्चमराशौ जातं जातं शिशुं विनाशयति ।
सप्तमराशौ पापा द्वे भार्ये बादरायणेनोक्तम् ॥ ३७८ ॥

यदि पाँचवें भाव में पापग्रह बैठे हों तो उत्पन्न बालक भी मर जाता है। यदि

सप्तम भाव में पापग्रह बैठे हों तो दो भार्या (पत्नी) का योग बादरायण ने बताया है ॥ ३७८ ॥

एकः पुत्रो रवौ वाच्यश्चन्द्रे चैव सुताद्वयम् ।
भौमे पुत्रास्त्रयो वाच्या बुधे पुत्रीचतुष्टयम् ॥ ३७९ ॥

पञ्चम भाव में सूर्य हो तो एक पुत्र, चन्द्रमा हों तो दो कन्यायें, मंगल हो तो तीन पुत्र, बुध हो तो चार पुत्रियाँ होती हैं ॥ ३७९ ॥

विशेष—यहाँ यह विचारणीय है कि पञ्चम भाव में सूर्य और मंगल की उपस्थिति सन्तान के लिए सर्वत्र हानिकर कही गई है परन्तु प्रस्तुत श्लोक में क्रम से एक और तीन पुत्र कारक कहा गया है। परस्पर विरुद्ध बातें हैं। परन्तु स्मरणीय है कि शुक्र और मंगल के योग विना सन्तानोत्पत्ति नहीं होती।
कहा गया है—ऋतुश्च कथितः शुक्रो रेतो भौमः प्रकीर्तितः।
भौमः पश्यति यद्वर्षे, तद्वर्षे गर्भसंस्थितिः ॥

अतः भौम का सम्बन्ध पञ्चम भाव या पञ्चमेश के साथ आवश्यक है। परन्तु केवल मंगल की उपस्थिति, वह भी शत्रुग्रह की राशि में शुभग्रहों का सम्बन्ध न हो तभी मंगल और सूर्य सन्तान के लिए हानिकर होते हैं, अन्यथा नहीं।

गुरौ गर्भ सुताः पञ्च षट् पुत्र्यो भृगुनन्दने ।
शनौ च गर्भपातः स्याद्राहौ गर्भो भवेन्न हि ॥ ३८० ॥

पञ्चम भाव में बृहस्पति हो तो पाँच पुत्र, शुक्र हो तो ६ पुत्रियाँ, शनि हो तो गर्भपात, राहु हो तो गर्भ का अभाव होता है ॥ ३८० ॥

सुतस्थाने द्विपापौ वा त्रिपापाश्चात्र संस्थिताः ।
तदा स्त्री-पुरुषौ बन्ध्यौ विज्ञेयौ सुतवीक्षिते ॥ ३८१ ॥

यदि पञ्चम भाव में दो या तीन पापग्रह बैठें हों तथा उनपर किसी ग्रह की दृष्टि हो तो स्त्री-पुरुष दोनों ही बन्ध्या होते हैं। अर्थात् दोनों सन्तानोत्पादन में अक्षम होते हैं ॥ ३८१ ॥

पुंराशौ लग्नपतिः सुताधिपं वीक्षते वापि ।
सन्ततिबाधां कुरुते केन्द्रे पापान्विते चन्द्रे ॥ ३८२ ॥

लग्नेश पुरुष राशि (१, ३, ५, ७, ९, ११) में स्थित होकर पञ्चम भाव के स्वामी को देखता हो तथा पापग्रह के साथ चन्द्रमा केन्द्र में हो तो सन्तानोत्पत्ति में बाधा होती है ॥ ३८२ ॥

लग्नात् पुत्रकलत्रभे शुभपतिप्राप्तेऽथवाऽलोकिते ।
चन्द्राद्वा यदि संपदस्ति हि तयोर्ज्ञेयोऽन्यथा सम्भवः ॥

पाथोनोदयगे रवौ रविसुते मीनस्थिते दारहा।
पुत्रस्थानगतश्च पुत्रमरणं पुत्रोऽवनेर्यच्छति ॥ ३८३ ॥

लग्न से अथवा चन्द्र से पञ्चम और सप्तम भाव पर किसी शुभग्रह अथवा भावेश की (पञ्चमेश की पञ्चम पर, सप्तमेश की सप्तम पर) दृष्टि या युति हो तो क्रम से सन्तान एवं स्त्रीप्राप्ति का योग समझना चाहिये। इससे भिन्न स्थिति में पुत्र एवं स्त्री का अभाव होगा। यदि कन्या राशि में सूर्य हो तथा मीन राशि में शनि हो तो स्त्रीघातक योग होता है। यदि पञ्चम भाव में मंगल हो तो पुत्र का मरण होता है ॥ ३८३ ॥

लग्ने द्वितीये यदि वा तृतीये विलग्ननाथे प्रथमः सुतः स्यात्।
तुर्यस्थितेऽस्मिंश्च सुतो द्वितीयः पुत्री सुतो वेति पुरःप्रकल्प्यम् ॥ ३८४ ॥

यदि लग्न का स्वामी लग्न में, द्वितीय भाव मे, अथवा तृतीय भाव में हो तो प्रथम सन्तान पुत्र होता है। लग्नेश यदि चतुर्थ भाव में हो तो द्वितीय गर्भ से पुत्र अर्थात् प्रथम कन्या होती है। इस प्रकार पुत्र और पुत्री का निर्णय पहले ही कर लेना चाहिए ॥ ३८४ ॥

धनस्थाने यदा क्रूरः क्रूरग्रहसमन्वितः।
न पश्यति निजक्षेत्रमल्पपुत्रस्तदा भवेत् ॥ ३८५ ॥

धन स्थान (द्वितीय भाव) में यदि क्रूर ग्रह से युक्त क्रूर ग्रह हो तथा वे अपने-अपने क्षेत्र (गृह) को न देखते हों तो अल्प पुत्र (सन्तान) वाला व्यक्ति होता है ॥ ३८५ ॥

सहजे सहजाधीशो लग्ने वाथ धने भवेत्।
जायते न तदा बालो यदि जातो न जीवति ॥ ३८६ ॥

तृतीय भाव का स्वामी तृतीय भाव में ही हो या लग्न मे हो अथवा धन स्थान में हो तो सन्तान नहीं होता, यदि किसी तरह उत्पन्न हो जाय तो भी जीवित नहीं रहता ॥ ३८६ ॥

झषधनुर्धरपञ्चमभावगे प्रसवसौख्यफलं न च दृश्यते।
मृतप्रजः खलु पञ्चमगे गुरौ तदिह दृष्टिफलं शुभमश्नुते ॥ ३८७ ॥

यदि पञ्चम भाव में मीन और धनु राशि हो तो प्रसव-सुख (सन्तानोत्पत्ति का सुख) नहीं होता। यदि पञ्चम भाव में बृहस्पति हो तो सन्तान पैदा होकर नष्ट हो जाता है अथवा मृत बच्चा पैदा होता है। परन्तु बृहस्पति की दृष्टि पञ्चम भाव पर शुभ फल (सन्तान) कारक होती है ॥ ३८७ ॥

लाभे सुतें वा शुक्रेन्दुसुतें भौमोऽथवा क्रमात् ।
शुक्रेन्दू पश्यतः पुत्रं वर्षेऽस्मिन् सन्ततिस्तदा ॥ ३८८ ॥

लाभ भाव (ग्यारहवें) में शुक्र और बुध, अथवा पञ्चम भाव में मंगल हो तो जिस समय शुक्र और चन्द्रमा की दृष्टि पुत्र भाव पर पड़ेगी उसी वर्ष पुत्र लाभ होगा ॥ ३८८ ॥

विशेष—इस श्लोक का उत्तरार्ध विचारणीय है। क्योंकि शुक्र और चन्द्रमा की दृष्टि प्रतिवर्ष पुत्र भाव पर प्रत्येक कुण्डली में पड़ेगी। दोनों शीघ्रगति वाले ग्रह है। चन्द्रमा प्रतिमास तथा शुक्र प्रति वर्ष १२ राशियों का चक्रभ्रमण कर लेता है अतः दोनों की दृष्टि प्रति वर्ष सिद्धान्ततः सम्भव है। परन्तु प्रति वर्ष सन्तान योग कहना अस्वाभाविक होगा। अतः उक्त पद्य का आशय यह है कि जिस समय (वर्ष) सन्तान योग रहेगा उस वर्ष जब शुक्र और चन्द्रमा की दृष्टि सन्तान भाव पर पड़ेगी उसी समय सन्तानोत्पत्ति होगी।

यत्र चैकादशे राहुः पञ्चमे च शिखी स्थितः ।
सुताननं न दृश्येत यदीन्द्रोऽपि च सेव्यते ॥ ३८९ ॥

जिसके जन्म समय ग्यारहवें भाव में राहु तथा पाँचवें भाव मे केतु स्थित हो तो वह व्यक्ति इन्द्र की भी सेवा कर ले तो भी पुत्र का मुख नहीं देखता अर्थात् सर्वथा पुत्र का अभाव रहता है ॥ ३८९ ॥

शत्रुभाव विचार

षष्ठे क्रूरा नरं कुर्युः शत्रुपक्ष विवर्जितम् ।
सौम्याः षष्ठे महारोगान् षष्ठश्चन्द्रश्च मृत्युदः ॥ ३९० ॥

षष्ठ भाव में स्थित क्रूर ग्रह मनुष्य को शत्रुओं से रहित करते हैं। शुभग्रह छठें भाव में हों तो भयङ्कर रोग होते हैं। यदि चन्द्रमा छठें भावमें हो तो मृत्यु कारक होता है ॥ ३९० ॥

स्त्रीभाव विचार

कुभार्यां सप्तमे पापाः सौम्याः सर्वजनप्रियाम् ।
गुरुशुक्रौ शचीतुल्यां रूपलावण्यशालिनीम् ॥ ३९१ ॥

सप्तम भाव में यदि पापग्रह हों तो कुत्सित कर्म करने वाली पत्नी होती है। यदि शुभग्रह सप्तम भाव में हों तो सभी लोगों की प्रियपात्र पत्नी होती है। गुरु और शुक्र सप्तम भाव में हो तो इन्द्राणी (शची) के समान सौन्दर्य एवं कान्ति से युक्त सौभाग्यशालिनी स्त्री होती है ॥ ३९१ ॥

षष्ठे च भवने भौमः सप्तमे सिंहिकासुतः ।
अष्टमे च यदा सौरिर्भार्या तस्य न जीवति ॥ ३९२ ॥

छठे भाव में मंगल, सातवें मे राहु, अष्टम भाव में यदि शनि हो तो स्त्री की मृत्यु हो जाती है ॥ ३९२ ॥

जायागृहे सौरिशशी च राहुर्जायापतिः पश्यति नैजभावम् ।
तस्यालये सम्भवतीह नारी श्यामा च गौरी बहुपुत्रिणी च ॥ ३९३ ॥

जिसके सप्तम भाव में शनि, चन्द्रमा और राहु स्थित हो तथा सप्तमेश सप्तम भाव को देखता हो तो उसके घर में अत्यन्त सुन्दरी गौर वर्ण वाली तथा अधिक पुत्रों वाली स्त्री शोभायमान होती है ॥ ३९३ ॥

लग्ने व्यये च पाताले यामित्रे चाष्टमे कुजे ।
कन्या भर्तुर्विनाशाय भर्ता कन्यां विनाशयेत् ॥ ३९४ ॥

जन्म लग्न, बारहवें, चौथे, सातवें तथा आठवें भाव में मंगल यदि पुरुष की कुण्डली में हो तो स्त्री का, तथा स्त्री की कुण्डली में हो तो पुरुष का विनाश करता है ॥ ३९४ ॥

लग्ने पापग्रहे गौरो दुर्बलः शत्रुपीडितः ।
भवेद्दुर्वाच्यतायुक्तस्तथा परवधूरतः ॥ ३९५ ॥

जिसके जन्म लग्न में पापग्रह बैठे हों वह गौर वर्ण वाला, दुर्बल, शत्रुओं से पीड़ित, अपशब्द बोलने वाला तथा परस्त्री में आसक्त होता है ॥ ३९५ ॥

लग्नाद्व्यये वा रिपुमन्दिरे वा दिवाकरेन्दू भवतस्तदानीम् ।
स्यान्मानवस्यात्मज एक एव भार्यापि चैकेति वदन्ति सन्तः ॥ ३९६ ॥

जन्म लग्न से बारहवें या छठें भाव में सूर्य और चन्द्रमा हों तो उस व्यक्ति को एक पुत्र और एक ही पत्नी होती है ऐसा ज्ञानी पुरुषों का कथन है ॥ ३९६ ॥

गण्डान्तकाले च कलत्रभावे भृगोः सुते लग्नगतेऽर्कजाते ।
वन्ध्यापतिः स्यान्मनुजस्तदानीं शुभेक्षिते नो भवनं खलस्य ॥ ३९७ ॥

गण्डान्त (तिथि गण्डान्त, लग्न गण्डान्त और नक्षत्र गण्डान्त इन तीन गण्डान्तों) में जन्म हो, सप्तम भाव में शुक्र, लग्न में शनि स्थित हो, सप्तम में पाप ग्रह की राशि हो तथा उसपर किसी शुभ ग्रह की दृष्टि न हो तो उस व्यक्ति की पत्नी वन्ध्या होती है ॥ ३९७ ॥

व्ययालये वा मदनालये वा खलेषु बुद्धयालयगे हिमांशौ ।
कलत्रहीनो मनुजस्तनूजैर्विवर्जितः स्यादिति वेदितव्यम् ॥ ३९८ ॥

बारहवें भाव अथवा सातवें भाव में पापग्रह हों तथा पञ्चम भाव में चन्द्रमा हो तो मनुष्य स्त्री और पुत्र से हीन होता है ऐसा जानना चाहिये ॥ ३९८ ॥

प्रसूतिकाले च कलत्रभावे यमे च भूमेस्तनयस्य वर्गे ।
ताभ्यां प्रदृष्टे व्यभिचारिणी स्याद्भार्या स्वयं च व्यभिचारकर्ता ॥ ३९९ ॥

जन्म समय में यदि सप्तम भाव में मङ्गल के षड्वर्ग में शनि स्थित हो अथवा दोनों (शनि और मंगल) से सप्तम भाव दृष्ट हो तो उस व्यक्ति की पत्नी व्यभिचारिणी होती है तथा वह व्यक्ति भी स्वयं व्यभिचारी होता है ॥ ३९९ ॥

शुक्रेन्दुपुत्रौ च कलत्रसंस्थौ कलत्रहीनं कुरुते नरं तौ।
शुभेक्षितौ वा वयसो विरामेऽकामां च रामां लभते मनुष्यः ॥४००॥

शुक्र और बुध सप्तम भाव में स्थित हों तो वे दोनों पुरुष को स्त्री-हीन कर देते हैं। यदि उन पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो अधिक उम्र (वृद्धावस्था) में स्त्रीलाभ होता है परन्तु वह भी मनोनुकूल नहीं होती ॥ ४०० ॥

चन्द्राद्विलग्नाच्च खलाः कलत्रे हन्युः कलत्रं च लयं गतौ तौ।
चन्द्रार्कपुत्रौ च कलत्रसंस्थौ पुनर्भवास्त्रीपरिलब्धिदौ स्तः ॥ ४०१ ॥

चन्द्रमा से या लग्न से सप्तम भाव में या आठवें भाव में पाप ग्रह गये हों तो स्त्री की मृत्यु हो जाती है। यदि बुध और शनि सप्तम भाव में स्थित हों तो पुनर्भू भार्या (विधवा स्त्री) से पुनः विवाह होता है ॥ ४०१ ॥

महीसुते सप्तमभावयाते कान्तावियुक्तः पुरुषस्तदा स्यात्।
मन्देन दृष्टे म्रियतेऽचिरात्तदा सूर्येण दृष्टे बहुदुःखपीडितः ॥ ४०२ ॥

मंगल सप्तम में हो तो पुरुष स्त्री से रहित होता है (अथवा स्त्री से सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है) यदि सप्तमस्थ मंगल को शनि देखता हो तो स्वयं पुरुष ही शीघ्र मर जाता है। सूर्य से दृष्ट हो तो बहुत-दुःख से पीडित होता है ॥ ४०२ ॥

षष्ठे च भवने भौमः सप्तमे राहुसम्भवः।
अष्टमे च यदा सौरिस्तस्य भार्या न जीवति ॥ ४०३ ॥

जिसके छठें भाव में मंगल सातवें में राहु, तथा आठवें में शनि हो तो उसकी पत्नी जीवित नहीं रहती ॥ ४०३ ॥

आयु एवं अरिष्ट विचार

पूर्वमायुः परीक्षेत पश्चाल्लक्षणमादिशेत्।
आयुर्हीननराणां हि लक्षणैः किं प्रयोजनम् ॥ ४०४ ॥

सर्व प्रथम आयु का ही परीक्षण करना चाहिये। तत्पश्चात् शुभाशुभ लक्षणों को बताना चाहिये। आयु हीन पुरुष को लक्षणों से क्या लाभ ॥ ४०४ ॥

खेटाः सर्वे महा दुष्टा अष्टमस्थानमाश्रिताः।
शशाङ्कस्तु विशेषेण जन्मकाले च मृत्युदः ॥ ४०५ ॥

जन्म समय में अष्टम भाव में स्थित सभी ग्रह महान दुष्ट (अनिष्ट कारक) होते हैं। इनमें विशेष रूप से चन्द्रमा अरिष्ट कारक होकर मृत्यु देने वाला होता है ॥ ४०५ ॥

कृष्णपक्षे दिवा जातः शुक्लपक्षे यदा निशि ।
तदा षष्ठाष्टमश्चन्द्रो मातृवत्परिपालकः ।। ४०६ ।।

यदि कृष्णपक्षमें दिन के समय जन्म हो तथा शुक्लपक्ष में रात्रि में जन्म हो तो छठें और आठवें भाव में स्थित चन्द्रमा माता की तरह पालन करने वाला होता है ।। ४०६ ।।

पञ्चमस्थो निशानाथस्त्रिकोणे च बृहस्पतिः ।
दशमे च महीसूनुः शतवर्षं स जीवति ।। ४०७ ।।

जन्म समय में पञ्चम भाव मे यदि चन्द्रमा हो, त्रिकोण (५,९) मे बृहस्पति हो तथा दशम भाव में शनि हो तो सौ वर्षों तक जातक जीवित रहता है ।।४०७।।

शनैश्चरस्तुलाकुम्भमकरे यदि वा भवेत् ।
लग्ने षष्ठे तृतीये वा तदारिष्टं न जायते ।। ४०८ ।।

शनि तुला, मकर, कुम्भ इनमे से किसी राशि मे स्थित हो कर लग्न (प्रथम भाव), षष्ठ, अथवा तृतीय भाव में हो तो अरिष्ट नाशक होता है ।। ४०८ ।।

केन्द्रे शुभो यदैकोऽपि बली विश्वप्रकाशकः ।
सर्वे दोषाः क्षयं यान्ति दीर्घायुश्च भवेन्नरः ।। ४०९ ।।

केन्द्र स्थानों में यदि एक भी बलवान् शुभ ग्रह हो तो जातक विश्व को प्रकाशित करने (प्रभावशाली व्यक्तित्व) वाला होता है । उसके सभी दोष नष्ट हो जाते हैं तथा मनुष्य दीर्घायु होता है ।। ४०९ ।।

एकोऽपि केन्द्रे ज्ञसितेज्यकानां क्रूराः सहस्राणि विरुद्धयुक्ताः ।
तथापि सर्वाण्यपि यान्ति नाशं यथा मृगाः केसरिदर्शनेन ।। ४१० ।।

बुध, शुक्र और बृहस्पति में से कोई एक भी ग्रह केन्द्र में स्थित हो तो हजारों विरुद्ध योगकारक क्रूर ग्रह उसी प्रकार नष्ट हो जाते हैं जैसे सिंह (शेर) को आता देख कर मृग भाग जाते हैं ।। ४१० ।।

पाताले चाम्बरे लग्ने सुते धर्मे तथायगे ।
बृहस्पतिस्तथा शुक्रो नाशयेद्दुरितं बहु ।। ४११ ।।

जन्म लग्न से चतुर्थ, दशम, प्रथम, पञ्चम, नवम तथा एकादश भाव मे बृहस्पति और शुक्र हो तो विविध प्रकार के अरिष्टों का शमन हो जाता है ।।४११।।

एकोऽपि केन्द्रे यदि तुङ्गसंस्थः सर्वे ग्रहा भावगुणेन तुल्याः ।
सर्वेऽप्यरिष्टं च विनाशयन्ति तमो यथा भास्करदर्शनेन ।। ४१२ ।।

एक भी ग्रह अपनी उच्च राशि में स्थित होकर-केन्द्र भावों में गया हो तथा

अन्य सभी ग्रह अपने-अपने भाव के प्रभाव से युक्त हों तो भी अरिष्टों का नाश उसी प्रकार होता है जैसे सूर्य को देख अन्धकार का ॥ ४१२ ॥

शुक्रो दश सहस्राणि बुधो दश शतानि च ।
लक्षमेकं तु दोषाणां गुरुर्लग्ने व्यपोहति ॥ ४१३ ॥

यदि लग्न में शुक्र हो तो दस हजार, बुध हो तो दश सौ (एकहजार) तथा बृहस्पति हो तो एक लाख ग्रह जन्य दोषों को शान्त करता है ॥ ४१३ ॥

केन्द्रत्रिकोणगो जीवः शुक्रो वा चन्द्रनन्दनः ।
तस्य पुंसश्च दीर्घायुः स भवेद्राजवल्लभः ॥ ४१४ ॥

जिसके जन्म लग्न से केन्द्र स्थानों (१, ४, ७, १०) एवं त्रिकोण (५, ९) भावों में बृहस्पति, शुक्र अथवा बुध गया हो तो वह पुरुष दीर्घायु होता है तथा राजा का प्रियपात्र होता है ॥ ४१४ ॥

गुरुर्धनुषि मीने वा तथा कर्कटकेऽपि वा ।
लग्नात्त्रिकोणे केन्द्रे वा तदारिष्टं न जायते ॥ ४१५ ॥

गुरु यदि जन्म लग्न से त्रिकोण या केन्द्र में धनु, मीन अथवा कर्क राशि में स्थित हो तो अरिष्ट नहीं होता ॥ ४१५ ॥

अजवृषकर्कटलग्ने रक्षति राहुः समग्रपीडाभ्यः ।
पृथ्वीपतिः प्रसन्नः कृतापराधं यथा पुरुषम् ॥ ४१६ ॥

मेष, वृष या कर्क लग्न में जन्म हो तथा लग्न में ही राहु स्थित हो तो वह जातक की सभी ग्रह पीडाओं से उसी प्रकार रक्षा करता है जैसे प्रसन्न राजा अपराधी पुरुष की रक्षा करता है ॥ ४१६ ॥

राहुस्त्रिषष्ठलाभे लग्नात्सौम्यैर्निरीक्षितः सद्यः ।
नाशयति सर्वदुरितं मारुत इव तूलसङ्घातम् ॥ ४१७ ॥

जन्म समय में यदि राहु लग्न से तीसरे, छठे और ग्यारहवें भाव में हो तथा शुभग्रहों से दृष्ट हो तो सभी प्रकार के कष्टों को शीघ्र ही इस प्रकार नष्ट करता है जैसे हवा रूई के समूह को नष्ट कर (उड़ा) देती है ॥ ४१७ ॥

विलग्नपो यत्र बलेन युक्तो लाभे तृतीये यदि कण्टके वा ।
सर्वाण्यरिष्टानि प्रयान्ति दूरं दीर्घायुरारोग्यतनुं करोति ॥ ४१८ ॥

लग्नेश बलवान होकर यदि ग्यारहवें, तीसरे अथवा केन्द्र में हो तो सभी प्रकार के अरिष्टों को दूर कर दीर्घायु तथा शरीर को निरोग (स्वस्थ) बनाता है ॥ ४१८ ॥

एकोऽपि यदि केन्द्रस्थो भार्गवोऽथ गिरां पतिः ।
नवमे वा सुतस्थाने सर्वारिष्टं निवारयेत् ॥ ४१९ ॥

शुक्र अथवा बृहस्पति कोई भी एक ग्रह नवम या पंचम भाव में स्थित हो तो सभी प्रकार के अरिष्टों का नाश होता है ॥ ४१९ ॥

बुधभार्गवजीवानामेकतमः केन्द्रमाश्रितो बलवान् ।
क्रूरसहायो यद्यपि सद्योऽरिष्टप्रशमनाय ॥ ४२० ॥

बुध, शुक्र और बृहस्पति में से कोई भी एक ग्रह बलवान् होकर केन्द्र स्थान में स्थित हो तो क्रूर ग्रहों से युक्त होने पर शीघ्र ही अरिष्टों का शमन करने वाला होता है ॥ ४२० ॥

स्वस्थानगोऽधिकबल. सुरराजमन्त्री
केन्द्रोपगः प्रशमयेत्स्फुरदंशुजालः ।
एको बहूनि दुरितानि सुदुस्तराणि
भक्त्या प्रयुक्त इव शूलधरे प्रणामः ॥ ४२१ ॥

अपने गृह (धनु, मीन) में स्थित होकर अधिक बलवान बृहस्पति, केन्द्र स्थानों में गया हो तो अकेला बृहस्पति ही अपने प्रखर तेज से समस्त कठिन विघ्नों को उसी प्रकार समाप्त कर देता है जैसे भगवान शंकर के चरणों में भक्ति पूर्वक प्रणाम करने से ही समस्त दुरितों का नाश होता है ॥ ४२१ ॥

लग्नाधिपोऽतिबलवानशुभैरदृष्टः
केन्द्रस्थितःशुभखगैरथ वीक्ष्यमाणः ।
मृत्युं विहाय विदधाति सुदीर्घमायुः
सम्पूर्यते निजगृहं परया च लक्ष्म्या ॥ ४२२ ॥

लग्नेश अत्यन्त बलवान होकर केन्द्र में स्थित हो, अशुभग्रहों से अदृष्ट तथा शुभग्रहों से दृष्ट हो तो वह मृत्यु को टालकर दीर्घायु प्रदान करता है तथा जातक अपने घर को धन-धान्य से परिपूर्ण कर देता है ॥ ४२२ ॥

लग्नादष्टमसंस्थो गुरुबुधशुक्रद्रेष्काणगश्चन्द्रः ।
मृत्युं प्राप्तमपि नरं परिरक्षत्येव निर्व्याजम् ॥ ४२३ ॥

लग्न से अष्टम भाव में स्थित चन्द्रमा यदि गुरु, बुध और शुक्र के द्रेष्काण में स्थित हो तो मृत्यु योग प्राप्त होते हुये भी चन्द्रमा जातक की रक्षा निःस्वार्थ भाव से करता है (अर्थात् चन्द्र कृत अरिष्ट समाप्त हो जाता है) ॥ ४२३ ॥

चन्द्रः सम्पूर्णतनुः सौम्यर्क्षगतोऽथवा शुभस्यान्तः ।
प्रकरोत्यरिष्टभङ्गं विशेषतः शुक्रसंदृष्टः ॥ ४२४ ॥

पूर्ण चन्द्रमा (बलवान् चन्द्रमा) यदि शुभग्रहों की राशि में अथवा दो शुभ ग्रहों के मध्य में स्थित हो तो अरिष्ट भङ्ग करता है। यदि चन्द्रमा शुक्र से दृष्ट हो तो विशेष रूप से अरिष्टों का नाश होता है ॥ ४२४ ॥

रिपुगः शुभद्रेष्काणे स्थितः शशी सौम्यखेचराः सबला ।
कुर्वन्त्यरिष्टभङ्गं संवितरन्तः शिवं सकलम् ॥ ४२५ ॥

शुभ ग्रहों के द्रेष्काण में स्थित चन्द्रमा षष्ठ भाव में गया हो तथा समस्त शुभ ग्रह बलवान हों तो अरिष्ट भङ्ग कर सभी प्रकार से कल्याण कारक होते हैं ॥ ४२५ ॥

सौम्यद्वयान्तरगतः सम्पूर्णः स्निग्धमण्डलश्चन्द्रः ।
भुनक्त्यशेषारिष्टान् भुजगारिर्भुजगलोकमिव ॥ ४२६ ।

शुभग्रहों के मध्य में स्थित चन्द्रमा पूर्ण बलवान होकर यदि छठे या आठवें भाव में स्थित हो तो वह समस्त अरिष्टों का नाश उसी प्रकार करता है जैसे गरुड़ सर्प समूह का करते हैं ॥ ४२६ ॥

प्रस्फुरितकिरणजाले स्निग्धामलमण्डले बलोपेते ।
सुरमन्त्रिणि केन्द्रगते सर्वारिष्टं क्षयं याति ॥ ४२७ ॥

अपनी किरणों से पूर्णरूपेण प्रकाशमान, स्निग्धमण्डल युक्त अर्थात् पूर्णरूप से उदित एवं बलवान् बृहस्पति केन्द्र में स्थित हों तो सभी प्रकार के अरिष्टों का नाश करते हैं ॥ ४२७ ॥

सौम्यभवनोपयाताः सौम्यांशकसौम्यदृक्काणस्थाः ।
गुरुचन्द्रकाव्यशशिजाः सर्वेऽरिष्टस्य हन्तारः ॥ ४२८ ॥

शुभग्रहों की राशियों में अथवा शुभग्रहों के द्रेष्काण में स्थित बृहस्पति, चन्द्र, शुक्र और बुध सभी प्रकार के अरिष्टों का शमन करते हैं ॥ ४२८ ॥

चन्द्रोपाश्रितराशेरधिपः केन्द्रे शुभग्रहो वापि ।
प्रकरोत्यरिष्टभङ्गं पापानि यथा शिवस्मरणम् ॥ ४२९ ॥

चन्द्रमा जिस राशि पर स्थित हो उस राशि का स्वामी अथवा शुभग्रह यदि केन्द्र स्थित हों तो सभी प्रकार के अरिष्टों का नाश उसी प्रकार होता है जैसे शिव-स्मरण करने से पापों का नाश होता है ॥ ४२९ ॥

पापा यदि शुभवर्गे सौम्यैर्दृष्टाः शुभांशवर्गस्थैः ।
निघ्नन्ति तदारिष्टं पतिं विरक्ता यथा युवतिः ॥ ४३० ॥

समस्त पाप ग्रह शुभग्रहों के वर्ग में स्थित हों तो तथा शुभग्रहों के नवमांश में स्थित शुभग्रहों से दृष्ट हों तो सभी प्रकार के अरिष्टों का नाश करते हैं जैसे पतिता स्त्री अपने पति का नाश करती है ॥ ४३० ॥

शीर्षोदयेषु राशिषु सर्वे गगनाधिवासिनोऽधिगताः ।
प्रतिहन्ति सर्वदुरितं यथा घृतं वाग्निसंयोगात् ॥ ४३१ ॥

यदि सभी ग्रह शीर्षोदय राशियों (३, ५, ६, ७, ८, ११) में स्थित हों तो सभी प्रकार के दुरितों (अरिष्टों) का नाश करते हैं जैसे अग्नि के संयोग से घृत नष्ट होता है ॥ ४३१ ॥

तत्कालयुद्धविजयी शुभः शुभनिरीक्षितश्चापि ।
नाशयति कष्टनिवहं वात्या इव पादपं सकलम् ॥ ४३२ ॥

तात्कालिक ग्रह युद्ध में विजयी[1] शुभ ग्रह यदि शुभग्रहों से दृष्ट हो तो वह कष्ट के समूहों को नष्ट करता है जैसे वायु वेग से वृक्ष उखड़ कर नष्ट हो जाते हैं ॥ ४३२ ॥

गगनविभूषण सौम्यैर्दृष्टो नाशयति सर्वदुरितानि ।
सम्पूर्णमूर्त्तिरुडुपो दुर्नयनः स्वं यथा नाशम् ॥ ४३३ ॥

यदि पूर्ण चन्द्रमा शुभग्रहों से दृष्ट हो तो सभी अरिष्टों का शमन करने वाला होता है जैसे चञ्चल चित्त (चरित्रहीन) व्यक्ति अपने धन का नाश करता है ॥ ४३३ ॥

मूर्त्तेस्तु राहुस्त्रिषडायवर्ती रिष्टं हरत्येव शुभैः प्रदृष्टः ।
शीर्षोदयस्थैर्विकृतिं न याति समस्तखेटैः खलु रिष्टभङ्गः ॥ ४३४ ॥

जन्म लग्न से राहु तृतीय, षष्ठ अथवा एकादश भाव में स्थित हो तथा शुभग्रहों से दृष्ट हो तो समस्त अरिष्टों का नाश होता है। यदि समस्त ग्रह शीर्षोदय राशियों में ही स्थित हो तो भी किसी प्रकार का विकार नहीं आता सभी ग्रह अरिष्ट नाशक होते हैं ॥ ४३४ ॥

तत्र व्यये लाभरिपुत्रिसंस्थःकेतुस्तु हेतुर्निधनोपशान्त्यै ।
परस्परं भार्गवजीवसौम्यास्त्रिकोणगास्तेऽपि हरन्त्यरिष्टम् ॥ ४३५ ॥

लग्न से बारहवें, ग्यारहवें, छठें एवं तीसरे भाव में केतु स्थित हो तो मृत्यु-कष्ट (मारकेश) का निवारण करता है। यदि शुक्र, बृहस्पति और बुध एक दूसरे से त्रिकोण में स्थित हों तो अरिष्ट का नाश करते हैं ॥ ४३५ ॥

चतुष्टये श्रेष्ठबलाधिशाली शुभो नभोगोऽष्टमगो न कश्चित् ।
त्रिशन्मितायुः प्रकरोति नूनं दशान्वितं तच्छुभखेटदृष्टः ॥ ४३६ ॥

१. तारा ग्रहाणामन्योन्यं स्यातां युद्ध समागमो । (सू. सि.)

पञ्चताराग्रहों (मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि) में दो या दो से अधिक ग्रह एक राशि में स्थित हों तो उसे युद्ध कहा जाता है। उसमें उदित, बलवान तथा दीप्त ग्रह विजयी होता है।

सभी बलवान शुभ ग्रह केन्द्र स्थानों में स्थित हों, अष्टम भाव में कोई भी ग्रह न गया हो तो जातक की आयु तीस वर्ष होती है। यदि शुभग्रहों की दृष्टि हो तो दशयुक्त अर्थात् ४० वर्ष की आयु होती है ॥ ४३६ ॥

निजत्रिभागे स्वगृहे गुरुश्चेदायुर्गतिः स्यात्खलु विंशविंशत् ।
बृहस्पतिस्तुङ्गगतो विलग्ने भृगोः सुते केन्द्रगते शतायुः ॥ ४३७ ॥

जन्म समय में बृहस्पति अपने ही द्रेष्काण में अथवा अपने गृह में स्थित हो तो जातक की आयु ४० वर्ष होती है। बृहस्पति यदि अपनी उच्चराशि (कर्क) में हो तथा शुक्र केन्द्र में हो तो सौ वर्ष आयु होती है ॥ ४३७ ॥

लग्ने स्वतुङ्गे बलशालिनीन्दौ सौम्याः स्वभस्थाः खलु षष्ठिरायुः ।
लग्नत्रिकोणेषु शुभेषु तुङ्गे लग्ने गुरावायुरशीतिरेव ॥ ४३८ ॥

अपनी उच्च राशि (वृष) में स्थित चन्द्रमा बलवान होकर लग्न में स्थित हो तथा शुभग्रह अपनी अपनी राशियों में स्थित हों तो जातक की आयु ६० वर्ष होती है। यदि शुभग्रह अपने-अपने मूल त्रिकोण में स्थित हों तथा बृहस्पति अपनी उच्च राशि में स्थित होकर लग्न में गया हो तो आयु सौ वर्ष की होती है ॥४३८॥

लग्नाष्टमारीन्दुयुतिर्न चेत्स्युः क्रूराःस्वभस्था अपि खेचरौ द्वौ ।
बलान्वितावम्बरगौ भवेतां जातः शतायुः कथितो मुनीन्द्रैः ॥ ४३९ ॥

जन्म समय में चन्द्रमा लग्न, अष्टम, षष्ठ भवनों में न हो, क्रूर ग्रह अपनी-अपनी राशियों में स्थित हों तथा दो बलवान ग्रह दशम भाव में स्थित हों तो जातक की आयु १०० वर्ष होती है ऐसा मुनियों का कथन है ॥ ४३९ ॥

शुद्धे रन्ध्रे केन्द्रगैः सौम्यखेटैर्लग्ने जीवे नैधनेन्दूदयश्चेत् ।
नो सदृष्टाः पापखेटैस्तदा स्यादायुर्मानं सप्ततिर्वत्सराणाम् ॥ ४४० ॥

अष्टम भाव शुद्ध (ग्रह हीन) हो, शुभग्रह केन्द्र मे हों, बृहस्पति लग्न में एवं चन्द्रमा नवम भाव में स्थित हो तथा पापग्रहों से दृष्ट हो तो जातक की आयु सत्तर वर्ष होती है ॥ ४४० ॥

भानावग्निभयाच्छशाङ्के उदकाद्भौमे मृतिश्चायुधात् ।
सौम्ये कष्टकराज्ज्वराच्च विषमादज्ञातरोगाद्गुरौ ॥
शुक्रे क्षुद्वमनात्तृषाप्रजनितो मृत्युः शनौ लग्नतो ।
मृत्युस्थानगते खगे समुदितो जातस्य सत्पण्डितैः ॥ ४४१ ॥

जन्म लग्न से अष्टम भाव में सूर्य स्थित हो तो अग्नि से, चन्द्रमा हो तो जल से, भौम हो तो अस्त्र-शस्त्र से, बुध हो तो भयङ्कर ज्वर से, बृहस्पति हो तो विषम (कठिन) अज्ञात रोग से, शुक्र हो तो, क्षुधा और वमन से, शनि हो तो पिपासा

अन्य कष्ट से जातक की मृत्यु होती है। इस प्रकार अष्टम भाव गत सभी ग्रहों का फल पण्डितों ने कहा है ॥ ४४१ ॥

दशमे पञ्चमे जीवो बुधश्चन्द्रश्च भार्गवः।
शतञ्जीवी भवेज्जातो धनाढ्यो वेदपारगः ॥ ४४२ ॥

जन्म लग्न से दशवें और पाँचवें भाव में गुरु, बुध, चन्द्रमा और शुक्र हों तो इस योग में उत्पन्न व्यक्ति सौ वर्षों तक जीवित रहने वाला, धनाढ्य तथा वेद का ज्ञाता होता है ॥ ४४२ ॥

नवमे पञ्चमे जीवो बुधो भवति सप्तमः।
लग्ने भार्गवचन्द्रौ च शतञ्जीवी भवेन्नरः ॥ ४४३ ॥

नवम या पञ्चम भाव मे बृहस्पति, सप्तम भाव मे बुध, लग्न में शुक्र और चन्द्रमा हों तो मनुष्य सौ वर्षों तक जीवित रहता है ॥ ४४३ ॥

सूर्यादिभिर्निधनगैर्हुतवहसलिलायुधज्वरामयजः।
क्षुत्तृट्कृतश्च मृत्युः परदेशे नैधने चरभे ॥ ४४४ ॥

सूर्यादि ग्रह अष्टम भाव में गये हों तो क्रम से अग्नि, जल, आयुध, ज्वर, आमय (उदर रोग), भूख-प्यास से उत्पन्न कष्टों से मृत्यु होती है। यदि अष्टम भाव में चर राशि हो तो परदेश में मृत्यु होती है ॥ ४४४ ॥

यो वा बलवान्निधनं पश्यति तद्धातुकोपजो मृत्युः।
लग्ने त्रिंशांशपातद्द्वाविंशतिहायने मृत्युः ॥ ४४५ ॥

जो बलवान ग्रह लग्न को देखता हो उस ग्रह से सम्बन्धित धातु के प्रकोप से जातक की मृत्यु होती है। लग्न में यदि त्रिंशांश का स्वामी उपस्थित हो तो बाइसवें वर्ष में जातक की मृत्यु होती है ॥ ४४५ ॥

षष्ठाष्टमकण्टकगो गुरुरुच्चे भवति मीनलग्ने वा।
शेषैरबलैर्जन्मनि मरणे वा मोक्षगतिमाहुः ॥ ४४६ ॥

बृहस्पति अपनी उच्चराशि में स्थित होकर छठें, आठवें और केन्द्र में हो अथवा मीनराशि में स्थित होकर जन्म लग्न में हो, अन्य ग्रह निर्बल हों तो मृत्यु के बाद जातक का मोक्ष हो जाता है ॥ ४४६ ॥

गुरुरुडुपतिशुक्रौ सूर्यभौमौ यमज्ञौ
विबुधपितृतिरश्चो नारकीयांश्च कुर्युः।
दिनकरशशिवीर्याधिष्ठितत्र्यंशनाथात्
प्रवरसमनिकृष्टास्तुङ्गह्रासादनूके ॥ ४४७ ॥

सूर्य और चन्द्रमा में जो बलवान हो तथा जिस द्रेष्काण में स्थित हो उसके अधिपति ग्रह के अनुसार, उत्तम, मध्यम और निकृष्ट फल अनूक (पूर्वजन्म के) विचार में होता है। यथा द्रेष्काणेश गुरु हो तो देव योनि से, चन्द्रमा और शुक्र हो तो पितृ लोक से, सूर्य और मङ्गल हो तो तिर्यक् योनि (पक्षियोनि) से और शनि, बुध हो तो नरक से जातक का आगमन होता है॥ ४४७॥

स्थिरश्चरोद्वयङ्गसमाह्वयश्च राशिर्यदा जन्मनि चाष्टमस्थः।
स्वकीयदेशे विषयान्तरे वा मार्गे प्रकुर्यान्मरणं क्रमेण॥ ४४८॥

जन्म काल में अष्टम भाव गत स्थिर, चर और द्विःस्वभाव राशियों से क्रमसे स्वदेश विदेश और मार्ग में मृत्यु का ज्ञान करना चाहिये। यथा—अष्टमभाव में स्थिर राशि हो तो अपने आवास पर, चर हो ता अन्य स्थान अन्य देश में तथा द्विःस्वभाव हो तो यात्रा के समय मार्ग में मृत्यु होती है॥ ४४८॥

आयुर्गृहं खेटविवर्जितं चेद्विलोकयेत्तद्बलवान् ग्रहेन्द्रः।
तद्धेतुजातं प्रवदन्ति मृत्युं बहुप्रकारं बहवो मुनीन्द्राः॥ ४४९॥

यदि आयु (अष्टम) भाव ग्रह से रहित हो तो जिस बलवान ग्रह की दृष्टि अष्टम भाव पर हो उसी ग्रह की धातु के प्रकोप से जातक की मृत्यु होती है।४४९।

पित्तं कफः पित्तमथ त्रिदोषं श्लेष्मानिलो वाप्यनिलः क्रमेणः।
सूर्यादिकेभ्यो मरणस्य हेतुः प्रकल्पितः प्राक्तनजातकज्ञैः॥ ४५०॥

सूर्यादि ग्रहों की पित्त, कफ, पित्त, त्रिदोष (वात-पित्त-कफ), कफ, वायु तथा वायु क्रम से धातुयें बताई गई हैं। यथा-सूर्य की पित्त, चन्द्रमा की कफ, मङ्गल की पित्त, बुध की त्रिदोष (वात-पित्त-कफ), गुरु की कफ, शुक्र की वायु, तथा शनि की वायु प्रधान धातु होती है। जो ग्रह मारक होगा उससे सम्बन्धित धातु विकार से मृत्यु होगी॥ ४५०॥

भाग्यभाव विचार—

विहाय सर्वं गणकैर्विचिन्त्यो भाग्यालयः केवलमत्र यत्नात्।
आयुश्च माता च पिता च बन्धुर्भाग्यान्वितेनैव भवन्ति धन्याः॥ ४५१॥

सभी भावों को छोड़कर ज्योतिषी को विधिपूर्वक केवल भाग्य भाव का ही विचार करना चाहिये क्योंकि आयु, माता, पिता, भाई सभी भाग्यवान व्यक्ति से ही धन्य (सार्थक) होते हैं॥ ४५१॥

यस्यास्ति भाग्यं स नरः कुलीनः स पण्डितः स श्रुतिमान् गुणज्ञः।
स एव वक्ता स च दर्शनीयो भाग्यान्वितः सर्वगुणैरुपेतः॥ ४५२॥

जिसके पास भाग्य है अर्थात् जो भाग्यवान पुरुष है वही कुलीन पण्डित,

यशस्वी, गुणवान, आच्छावक्ता, दर्शनीय (अति सुन्दर), भाग्यशाली तथा सभी गुणों से सम्पन्न है ॥ ४५२ ॥

> द्वाविंशे रविणा च वर्षकथितं चन्द्रे चतुर्विंशति-
> ह्यष्टाविंशतिभूमिनन्दनमतं दन्तैर्बुधे च स्मृतम् ।
> जीवे षोडश पञ्चविंशति-भृगोः षट्त्रिंश-सौरे वदेत्
> कर्मेशात्खलु कर्म चैव कथितं लग्नाधिपे चेत्स्मृतम् ॥ ४५३ ॥

बाइसवें वर्ष मे सूर्य, २४वें वर्ष में चन्द्रमा, अट्ठाइसवें वर्ष में मङ्गल, बत्तीसवें वर्ष में बुध, सोलहवें वर्ष में बृहस्पति, पच्चीसवें वर्ष में शुक्र तथा छत्तीसवें वर्ष मे शनि भाग्योदय कारक होता है। दशम भाव के स्वामी की प्रकृति के अनुसार कार्य (जीविका) का निर्णय करना चाहिये। इस योग में लग्नेश की अनुकूलता आवश्यक है ॥ ४५३ ॥

> भाग्ययोगकरे सौरे स्थिते जन्म यदा भवेत् ।
> लग्नपे तु विशेषेण यावज्जीवं समृद्धिमान् ॥ ४५४ ॥

यदि जन्म समय में शनि भाग्य योग कारक हो तथा स्वयं लग्नेश भी हो तो जीवन पर्यन्त समृद्धिशाली रहता है ॥ ४५४ ॥

> मूर्तेश्चापि निशापतेश्च नवमं भाग्यालयं कीर्तितं ।
> तत्स्व स्वामियुतेक्षितं प्रकुरुते भाग्यं स्वेदेशोद्भवम् ॥
> चेदन्यैर्विषयान्तरेऽत्र शुभदाः स्वोच्चादिगाः सर्वदा ।
> कुर्युर्भाग्यमसाधवो न च बलाद्दुःखोपलब्धि परात् ॥ ४५५ ॥

जन्म लग्न अथवा चन्द्र (जन्म राशि) से नवम भाव भाग्य भाव कहा जाता है। भाग्य भाव यदि अपने स्वामी से युत अथवा दृष्ट हो तो अपने देश में ही भाग्योदय होता है। यदि अन्य ग्रहों से युत एवं दृष्ट हो तो देशान्तर (अपने देश या स्थान के अतिरिक्त किसी अन्य स्थान) में भाग्योदय होता है। यदि शुभ ग्रह अपनी उच्चराशि में अथवा शुभ वर्ग में हो तो सर्वत्र सदैव भाग्योदय होता है। परन्तु पापग्रह उच्चादि में हो तो भाग्योदय नहीं होता अपि तु अनायास दुःखों की प्राप्ति होती है ॥ ४५५ ॥

> भाग्येश्वरो भाग्यगतोऽस्ति किं वा स्वस्थानगः सारविराजमानः ।
> भाग्याश्रितः कोऽस्ति विचार्य सर्वमत्यल्पमल्पं परिकल्पनीयम् ॥ ४५६ ॥

भाग्येश (नवम भाव का स्वामी) यदि भाग्य भाव में हो या अन्यत्र अपनी ही राशि में स्थित हो तथा बलवान हो तो बलानुसार न्यूनाधिक फल जातक को प्राप्त होता है। यदि नवमेश निर्बल हो तो जातक भाग्यहीन होता है ॥ ४५६ ॥

तनुत्रिसूनूपगतो ग्रहस्चेद्यो वाधिवीर्यो नवमं प्रपश्येत् ।
यस्य प्रसूतौ स तु भाग्यशाली विलासशीलो बहुलार्थयुक्तः ॥ ४५७ ॥

जिसके जन्म समय में कोई भी बलवान ग्रह लग्न, तृतीय, पञ्चम भाव में स्थित होकर भाग्य भाव को देखता हो तो वह व्यक्ति भाग्यशाली, विलासी तथा बहुत धन-सम्पत्ति से युक्त होता है ॥ ४५७ ॥

चेद्भाग्यगामी खचरः स्वगेहे सौम्येक्षितो यस्य नरस्य सूतौ ।
भाग्याधिशाली स्वकुलावतंसो हंसो यथा मानसराजमानः ॥ ४५८ ॥

जिस मनुष्य के जन्म समय में भाग्यभाव में गया हुआ ग्रह अपनी ही राशि में हो (अर्थात् भाग्येश भाग्य भाव में हो) तथा शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो वह बहुत भाग्य शाली तथा मानसरोवर में शोभित होने वाले राजहंस की तरह अपने कुल में श्रेष्ठ होता है ॥ ४५८ ॥

पूर्णेन्दुयुक्तो रविभूमिपुत्रौ भाग्यस्थितौ सत्त्वसमन्वितौ च ।
वंशानुमानात्सचिवं नृपं वा कुर्वन्ति ते सौम्यदशं विशेषात् ॥ ४५९ ॥

पूर्ण चन्द्रमा से युक्त सूर्य और मङ्गल यदि भाग्यभाव में स्थित हों तथा बलवान हों तो जातक अपने कुल की स्थिति के अनुसार मन्त्री या राजा होता है। यदि शुभग्रह की दशा भी हो तो विशेष फलदायक होती है ॥ ४५९ ॥

स्वोच्चोपगो भाग्यगृहे न भोगो नरस्य योगं कुरुते च लक्ष्म्या ।
सौम्येक्षितोऽसौ यदि भूमिपालं दन्तावलोत्कृष्टविलासशीलम् ॥ ४६० ॥

अपनी उच्चराशि में स्थित होकर ग्रह भाग्य भाव में गया हो तो जातक लक्ष्मी (धन-सम्पत्ति) से युक्त होता है। यदि वह शुभग्रहों से दृष्ट भी हो तो उत्तम कोटि की हाथियों से युक्त विलासी राजा होता है ॥ ४६० ॥

समुदितमृषिवर्यैर्मानवानां प्रयत्ना-
दिह हि दशमभावे सर्वकर्म प्रकामम् ।
गगनगपरिदृष्ट्या राशिखेटस्वभावैः
सकलमपि विचिन्त्यं सत्त्वयोगात्सुधीभिः ॥ ४६१ ॥

श्रेष्ठ मुनियों ने दशम भाव से सभी प्रकार के कार्यों का प्रयास पूर्वक विचार कर मनुष्यों के हित के लिए कहा है। ग्रहों की दृष्टि, राशियों और ग्रहों के स्वभाव, एवं बल का ज्ञान कर विद्वान को दशम भाव सम्बन्धी विचार करना चाहिये ॥ ४६१ ॥

तनोः सकाशाद्दशमे शशाङ्के वृत्तिर्भवेत्तस्य नरस्य नित्यम् ।
नानाकलाकौशलवाग्विलासैः सर्वोद्यमैः साहसकर्मभिश्च ॥ ४६२ ॥

लग्न से दशम भाव में चन्द्रमा गया हो तो नाना प्रकार के कला कौशल में निपुण होने से, सभी उद्योगों एवं साहसिक कार्यों से उस मनुष्य की सदैव जीविका सुरक्षित रहती है ॥ ४६२ ॥

तनोः शशाङ्काद्दशमे बलीयान् स्याज्जीवनं तस्य खगस्य वृत्त्या ।
बलान्विताद्वर्गपतेस्तु यद्वा वृत्तिर्भवेत्तस्य खगस्य पाके ॥ ४६३ ॥

जन्म लग्न से या चन्द्र से दशम भाव में जो बलवान् ग्रह हो उसी ग्रह की वृत्ति के अनुसार जातक की जीविका होती है। अथवा बलवान वर्गपति (षड्वर्ग के स्वामी) के वृत्ति के अनुसार जीविका होती है तथा उसी ग्रह की दशा में प्राप्त होती है ॥ ४६३ ॥

दिवामणिः कर्मणि चन्द्रतन्वोर्द्रव्याण्यनेकोद्यमवृत्तियोगात् ।
सत्त्वाधिकत्वं च सदा सुरम्यं पुष्टत्वमङ्गे मनसः प्रसादः ॥ ४६४ ॥

जन्म लग्न या जन्मराशि से दशम भाव में सूर्य स्थित हो तो विविध प्रकार के उद्योगों द्वारा अधिक धनलाभ, बल वृद्धि, सुन्दरता, अङ्गों की पुष्टता तथा सदैव मन में प्रसन्नता रहती है ॥ ४६४ ॥

लग्नेन्दुतः कर्मणि चेन्महीजः स्यात्साहसाच्चौर्यनिषादवृत्तिः ।
नूनं नराणां विषयानिशक्तिर्दूरे निवासः सहसा कदाचित् ॥ ४६५ ॥

लग्न या चन्द्र से दशम भाव में मङ्गल हो तो साहसिक कार्य, चोरी, निषाद-वृत्ति (नौका या मछली का व्यापार) से जीविका चलती है। कभी-कभी आकस्मिक कार्यों से घर से दूर निवास करना पड़ता है तथा मनुष्य विषय-वासना में अधिक आसक्त रहता है ॥ ४६५ ॥

लग्नेन्दुभ्यां कर्मगो रौहिणेयः कुर्याद्द्रव्यं नायकत्वं बहूनाम् ।
शिल्पेऽभ्यासः साहसं सर्वकार्ये विद्वद्वृत्त्या जीवनं मानवानाम् ॥ ४६६ ॥

लग्न अथवा चन्द्रमा से दशम भाव में बुध हो तो मनुष्य को द्रव्य लाभ होता है। तथा वह बहुत लोगों का (किसी समाज या पार्टी का) नेता, शिल्प शास्त्र का अभ्यास करने वाला, सभी कार्यों में साहस दिखाने वाला एवं अपनी विद्वत्ता से जीवन यापन करने वाला (अर्थात् शिक्षक या लेखक) होता है ॥ ४६६ ॥

विलग्नतः शीतमयूखतो वाऽऽ-
शास्ये मघोनः सचिवो यदि स्यात् ।
नानाधनान्यागमनानि पुंसां
विचित्रवृत्त्या नृपगौरवं च ॥ ४६७ ॥

लग्न अथवा चन्द्र से दशम भाव में बृहस्पति हो तो मनुष्य विविध प्रकार के

धन सम्पत्ति के आगमन से सम्पन्न विविध वृत्ति (विभिन्न प्रकार से जीविका चलाने वाला तथा राजा से सम्मानित होता है ॥ ४६७ ॥

होरायाश्च निशाकराद्भृगुसुतो मेषूरणे संस्थितो
नानाशास्त्रकलाकलापविलसद्वृत्त्यादिशेज्जीवनम् ।
दाने साधुजने यथा विनयतां कामं धनाभ्यागमं
नानामानवनायकादिविरलं विस्तीर्णशीलं यशः ॥ ४६८ ॥

लग्न अथवा चन्द्र से दशम भाव में यदि शुक्र हो तो जातक विविध शास्त्रों एवं कलाओं में कुशल तथा उसी से जीविका चलाने वाला, साधु-पुरुषों को दान देने वाला विनम्र, इच्छानुकूल धनसंग्रह करने वाला, अनेक लोगों का नेता, शीलवान तथा महान यशस्वी होता है ॥ ४६८ ॥

होरायाश्च सुधाकराद्रविसुतः शैलूषमध्यस्थितो
वृत्तिं हीनतरां नरस्य कुरुते कार्श्यं शरीरे सदा ।
खेदं वादभयं च धान्यधनयोर्हानिं स्वमुच्चैर्मन-
श्चित्तोद्वेगसमुद्भवेन चपलं शीलं च नो निर्मलम् ॥ ४६९ ॥

जन्म लग्न और चन्द्रमा से दशम भाव में यदि शनि हो तो वह व्यक्ति हीन वृत्ति (निकृष्ट जीवन) वाला, सदैव शरीर से दुर्बल, दुःखी, वाद-विवाद के भय से युक्त, धन-सम्पत्ति का हानि करने वाला, अपने उच्च मनोरथों से उद्विग्न, चञ्चल स्वभाव वाला तथा दुष्ट प्रकृति वाला होता है ॥ ४६९ ॥

जीवो द्विजात्माकरदेवधर्मैः शुक्रो महिष्यादिकरोप्यरत्नैः ।
शनैश्चरो नीचतरप्रकारैः कुर्यान्नराणां खलु कर्मवृत्तिम् ॥ ४७० ॥

बृहस्पति यदि जीविका कारक हो तो ब्राह्मण वृत्ति (अध्ययन-अध्यापन) देवकार्य (यज्ञ-यागादि), तथा धर्माचरण से, शुक्र हो तो भैंस आदि पशुओं, चाँदी एवं रत्नों के व्यापार से, शनि हो तो निम्न कार्यों से मनुष्य जीवन-यापन करता है ॥ ४७० ॥

कर्मस्वामी ग्रहो यस्य नवांशे परिवर्तते ।
तत्तुल्यकर्मणा वृत्तिं निर्दिशन्ति मनीषिणः ॥ ४७१ ॥

दशम भाव का स्वामी जिस ग्रह के नवमांश हो उसी ग्रह के अनुसार उस मनुष्य की जीविका का निर्देश विद्वान लोग करते हैं ॥ ४७१ ॥

मित्रारिगेहोपगतैर्नभोगैस्ततस्ततोऽर्थः परिकल्पनीयः ।
तुङ्गे पतङ्गे स्वगृहे त्रिकोणे स्यादर्थसिद्धिर्निजबाहुवीर्यात् ॥ ४७२ ॥

जीविका कारक ग्रह (दशमेश के नवांश का स्वामी) अपने मित्र-शत्रु-सम

ग्रहों की राशियों में से जिसमें स्थित हो उसी के सहयोग से जीविका होती है। यथा मित्र गृह में हो तो मित्रों के सहयोग से, शत्रु गृह में हो तो शत्रु के सहयोग से जीविका का साधन मिलता है। यदि उक्त ग्रह अपनी उच्च राशि, स्वक्षेत्र या मूल त्रिकोण में हो तो अपने बाहुबल से जीविका प्राप्त करता है ॥ ४७२ ॥

बुधभार्गवजीवार्कियुक्तो राहुश्चतुष्टये।
कुरुते कमलारोग्यपुत्रमानादिकं फलम् ॥ ४७३ ॥

बुध, शुक्र, बृहस्पति, शनि और राहु एक साथ केन्द्र स्थानों में स्थित हों तो जातक धन, पुत्र एवं सम्मानादि से युक्त होता है ॥ ४७३ ॥

कर्मस्थाने निजक्षेत्रे भौमशुक्रबुधैर्युतः।
यदि राहुर्भवेत्तस्य क्षणे वृद्धिः क्षणे क्षयः ॥ ४७४ ॥

यदि दशम भाव में अपनी राशि में स्थित राहु मंगल, शुक्र और बुध से युक्त हो तो उस व्यक्ति की क्षण में वृद्धि तथा क्षण में ह्रास होता है अर्थात् जीवन में उत्थान-पतन का क्रम चलता रहता है ॥ ४७४ ॥

पाताले चाम्बरे पापो द्वादशे च यदा स्थितः।
पितरं मातरं हन्ति देशाद्देशान्तरं व्रजेत् ॥ ४७५ ॥

चतुर्थ, दशम और द्वादश भाव म यदि पापग्रह स्थित हों तो माता-पिता की मृत्यु होती है तथा एक देश से दूसरे देश मे जातक भ्रमण करता है। अर्थात् माता-पिता की मृत्यु के बाद जातक गृह छोड़कर अन्यत्र चला जाता है ॥ ४७५ ॥

चापे सूर्यः शनि कुम्भे मेषे भवति चन्द्रमाः।
मकरे च यदा शुक्रो भुंक्ते नाशं पितुर्धनम् ॥ ४७६ ॥

धनु राशि में सूर्य, कुम्भ में शनि, मेष में चन्द्रमा तथा मकर राशि में शुक्र हो तो पिता का नाश होता है, अनन्तर जातक पैतृक धन का उपभोग करता है ॥ ४७६ ॥

सप्तमे भवने भानुर्मध्यस्थो भूमिनन्दनः।
राहुश्चान्ते च तस्यैव पिता कष्टेन जीवति ॥ ४७७ ॥

सप्तम भाव में सूर्य, दशम भाव में मङ्गल तथा बारहवें भाव में राहु हो तो उस व्यक्ति का पिता बहुत कष्ट के साथ जीवित रहता है। (यहाँ पिता की मृत्यु का भी अभिप्राय है) ॥ ४७७ ॥

कन्यायां मिथुने राहुः केन्द्रे षष्ठे व्यये भवेत्।
त्रिकोणे च तदा जातो दाता भोक्ता निरामयः ॥ ४७८ ॥

कन्या या मिथुन में राहु स्थित होकर केन्द्र, छठें बारहवें अथवा त्रिकोण में गया हो तो जातक दानी, सुख भोग करने वाला, तथा निरोग होता है ।। ४७८ ।।

सूर्यः पापेन संयुक्तः सूर्यश्च पापमध्यगः ।
सूर्यात्सप्तमगः पापस्तदा पितृवधो भवेत् ।। ४७९ ।।

यदि सूर्य पापग्रह से युक्त हो अथवा पापग्रहों के बीच में स्थित हो तथा सूर्य से सातवें भाव में पाप ग्रह स्थित हो तो पिता की मृत्यु होती है ।। ४७९ ।।

दशमस्थो यदा भौमः शत्रुक्षेत्रस्थितो यदि ।
म्रियते तस्य बालस्य पिता शीघ्रं न संशयः ।। ४८० ।।

दशम भाव में शत्रुग्रह की राशि में यदि मङ्गल स्थित हो तो उस बालक के पिता की शीघ्र ही मृत्यु होती है इसमें सन्देह नहीं ।। ४८० ।।

लग्ने जीवो धने मन्दो रविर्भौमस्तथा बुधः ।
विवाहसमये तस्य बालस्य म्रियते पिता ।। ४८१ ।।

जन्म लग्न में बृहस्पति, धन भाव में शनि, सूर्य, भौम एवं बुध ये सभी एक साथ स्थित हों तो उस व्यक्ति के विवाह के समय पिता की मृत्यु होती है ।।४८१।।

भ्रातृस्थाने यदा जीवो लाभस्थाने यदा शशी ।
स लोके गृहमध्यस्थो जायते कुलदीपकः ।। ४८२ ।।

यदि तृतीय भाव मे बृहस्पति तथा एकादश भाव मे चन्द्रमा, स्थित हो तो वह व्यक्ति संसार मे (विख्यात) एवं गृह में सर्वश्रेष्ठ तथा अपने कुल को यशस्वी बनाने वाला होता है ।। ४८२ ।।

सिंहे लग्ने यदा भौमः पञ्चमे च निशाकरः ।
व्ययस्थाने यदा राहुः स जातः कुलदीपकः ।। ४८३ ।।

जन्म लग्न सिंह हो उसी मे मंगल तथा उससे पाँचवें भाव में चन्द्रमा तथा बारहवें भाव में राहु गया हो तो जातक अपने वंशका दीपक (वंश का नाम उज्ज्वल करने वाला) होता है ।। ४८३ ।।

एकः पापो यदा लग्ने पापश्चैको रसातले ।
जायते च द्विनाली स्यात्स जातः कुलदीपकः ।। ४८४ ।।

एक पाप ग्रह लग्न में तथा एक पापग्रह चतुर्थ भाव में, स्थित हो तो द्विनाली योग होता है अर्थात् जातक को जन्म समय में दो नाल होती है। तथा वह बालक अपने कुल में श्रेष्ठ एवं यशस्वी होता है ।। ४८४ ।।

लग्ने वा सप्तमे भौमः पञ्चमे च दिवाकरः ।
व्ययस्थाने यदा राहुर्विख्यातः स न संशयः ।। ४८५ ।।

लग्न में अथवा सप्तम भाव में मंगल, पञ्चम भाव में सूर्य, व्यय स्थान में राहु हो तो जातक विख्यात होता है इसमें सन्देह नहीं ॥ ४८५ ॥

केन्द्रे शुभो यदैकोऽपि बलो विश्वप्रकाशकः ।
सर्वदोषाः क्षयं यान्ति दीर्घायुश्च भवेन्नरः ॥ ४८६ ॥

केन्द्र स्थानों में यदि एक भी बलवान् शुभग्रह स्थित हो तो सभी दोष नष्ट हो जाते हैं तथा मनुष्य दीर्घजीवी होता है ॥ ४८६ ॥

एकादश भाव विचार—

लाभस्थाने ग्रहाः सर्वे राज्यलाभफलप्रदाः ।
गजाश्वपतिमोप्सां च सौम्याः कुर्वन्ति निश्चितम् ॥ ४८७ ॥

लाभ स्थान में सभी ग्रह राज्यलाभ एवं शुभ फल दायक होते हैं। यदि शुभग्रह लाभस्थान में हो तो जातक हाथी-घोड़ों से सम्पन्न होते हुये और अधिक की अभिलाषा रखने वाला होता है ॥ ४८७ ॥

सूर्येण युक्तःस्वविलोकितो वा लाभालये तस्य गणोऽत्र चेत्स्यात् ।
भूपालतश्चौरकुलात्कलेर्वा चतुष्पदादेर्बहुधा धनाप्तिः ॥ ४८८ ॥

लाभ स्थान मे सूर्य स्थित हो या लाभ भाव को सूर्य देखता हो तथा लाभ स्थान सूर्य के षड्वर्ग में हो तो राजा से, चोरों से, विवाद तथा चतुष्पद (जानवरों) के सम्बन्ध से प्रायः धन का लाभ होता है ॥ ४८८ ॥

चन्द्रेण युक्तं च विलोकितं वा लाभालयं चन्द्रगणाश्रितं चेत् ।
जलाशयं स्त्रीगजवाजिवृद्धिः पूर्णे भवेत्क्षीणतरे विलोमात् ॥ ४८९ ॥

लाभ भाव चन्द्रमा के षड्वर्ग में स्थित हो, चन्द्रमा से युक्त अथवा दृष्ट हो तो जलाशय निर्माण, स्त्री लाभ एवं हाथी-घोड़ों की वृद्धि होती है। चन्द्रमा के पूर्ण बली होने पर ही उक्त फल सम्भव है। यदि चन्द्रमा क्षीण हो तो युक्त फल का विपरीत प्रभाव होता है। स्त्री-हाथी-घोड़े आदि का ह्रास होता है ॥ ४८९ ॥

लाभालयं मङ्गलयुक्तदृष्टं प्रकृष्टभूषामणिहेमलब्धिः ।
विचित्रयात्रो बहुसाहसी स्यान्नानाकलाकोमलबुद्धियोगैः ॥ ४९० ॥

लाभस्थान मंगल से युक्त अथवा दृष्ट हो तो उत्तम कोटि के आभूषण, मणि, एवं स्वर्ण की प्राप्ति होती है। विचित्र यात्रा करने वाला, अत्यन्त साहसी, तथा अपनी कोमल बुद्धि के द्वारा विविध प्रकार के कला कौशल में निपुण होता है ॥ ४९० ॥

लाभे सौम्यगणाश्रिते सति युते सौम्ये च सद्वीक्षिते
नानाकाव्यकलापविधिना शिल्पेन लिप्या सुखम् ।

युक्तिर्द्रव्यमया भवेद्धनचयः सत्साहसैरुद्यमैः
सख्यं चापि वणिग्जनैर्बहुतरं क्लीबैर्नृणां कीर्तितम् ॥ ४९१ ॥

लाभस्थान बुध के षड्वर्ग में हो, बुध से युक्त या दृष्ट हो, शुभग्रहों से दृष्ट हो तो जातक विविध प्रकार की काव्य रचना से, शिल्प (मूर्ति कला) से लेखन द्वारा, सुख प्राप्त करने वाला तथा, अर्थोपार्जन की दृष्टि से कार्य करने वाला, धन सञ्चय करने वाला, साहसी, उद्योगी, व्यापारी लोगों का तथा नपुंसकों का मित्र होता है ॥ ४९१ ॥

यज्ञक्रियासाधुजनानुयातो राजाश्रितोत्कृष्टकृपी नरः स्यात् ।
द्रव्येण हेमप्रचुरेण युक्तो लाभो गुरौ वर्गनिरीक्षणं चेत् ॥ ४९२ ॥

यदि लाभ भाव में गुरु या गुरु का षड्वर्ग हो अथवा लाभभाव को गुरु देखता हो तो मनुष्य यज्ञ कार्य करने वाला, साधु-सन्तों का अनुगामी, राजा का आश्रय पानेवाला, श्रेष्ठ जनों का कृपापात्र, धन तथा पर्याप्त स्वर्ण से सम्पन्न होता है ॥ ४९२ ॥

लाभालये भार्गववर्गयाते युक्तेक्षिते वा यदि भार्गवेण ।
वेश्याजनैर्वापि गमागमैर्वा सद्रौप्यमुक्ताप्रचुरस्य लब्धिः ॥ ४९३ ॥

लाभस्थान में शुक्र या शुक्र का वर्ग स्थित हो, अथवा शुक्र से दृष्ट हो तो वेश्याओं के संसर्ग से तथा गमनागमन (यात्रा अथवा बाहर के व्यापार) से उत्तम कोटि के मोती तथा चाँदी का प्रचुर मात्रा में लाभ होता है ॥ ४९३ ॥

लाभवेश्मनि शनीक्षितयुक्ते तद्गणेन सहिते सति पुंसाम् ।
नीललोहमहिषीगजलाभो ग्रामवृन्दपुरगौरवमिश्रम् ॥ ४९४ ॥

लाभ (ग्यारहवाँ) भाव शनि या शनि के वर्ग से युक्त अथवा शनि से दृष्ट हो तो मनुष्य को नीलम (नील वर्ण के अन्य पदार्थ भी), लोहा, भैंस और हाथी का लाभ तथा ग्राम, समाज, नगर द्वारा सम्मान प्राप्त होता है । ॥ ४९४ ॥

युक्तेक्षिते लाभगृहे शुभाख्ये वर्गे शुभानां समवस्थिते च ।
लाभो नाराणां बहुधाऽथवास्मिन् सर्वग्रहैर्युक्तनिरीक्षमाणे ॥ ४९५ ॥

लाभ भाव शुभ ग्रहों से युत या दृष्ट हो शुभ ग्रहों के वर्ग में स्थित हो अथवा समस्त ग्रहों से युत-दृष्ट हो तो मनुष्य को प्रायः लाभ होता है ॥ ४९५ ॥

व्यय भाव विचार—

कुशीलं च तथा काणं पापिनं दुःखिनं नरम् ।
महाव्ययं महादुष्टं व्ययभावे यदा ग्रहाः ॥ ४९६ ॥

व्यय भाव में यदि कोई भी ग्रह हों तो मनुष्य दुराचारी, काना (एक नेत्र वाला), पापी, दुःखी, अधिक व्यय करने वाला, तथा अत्यन्त दुष्ट होता है ॥४९६॥

व्ययालये क्षीणकरः कलानां सूर्योऽथवा द्वावपि तत्र संस्थौ।
द्रव्यं हरेद्भूमिपतिस्तु तस्य व्ययालये भूमिजदृष्टियुक्ते ॥ ४९७ ॥

व्यय भाव में क्षीण चन्द्रमा या सूर्य अथवा दोनों ही स्थित हो तथा उन पर मंगल की दृष्टि हो तो उस व्यक्ति का धन राजा छीन लेता है (कुर्की या नीलामी हो जाती है) ॥ ४९७ ॥

पूर्णेन्दुसौम्येज्यसिता व्ययस्थाः कुर्वन्ति संस्थां धनसञ्चयस्य।
प्रान्त्यस्थिते सूर्यसुते कुजेन युक्तेक्षिते वित्तविनाशनं स्यात् ॥ ४९८ ॥

बारहवें भाव में यदि पूर्ण चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति और शुक्र स्थित हों तो धन का संग्रह कराते हैं। यदि द्वादश भाव में शनि मंगल से युक्त हो अथवा दृष्ट हो तो धन का नाश होता है ॥ ४९८ ॥

राजयोग—

उच्चाभिलाषिणः खेटा जन्मकाले भवन्ति चेत्।
स नरो भूपपूज्यः स्याद्वंशस्य नृपतिर्भवेत् ॥ ४९९ ॥

जन्म समय में उच्चाभिलाषी (उच्च राशि एवं परमोच्च अंशों में जाने वाले) ग्रह पड़े हों तो वह व्यक्ति राजाओं से सम्मानित तथा अपने वंश (कुल) का राजा (श्रेष्ठ व्यक्ति) होता है ॥ ४९९ ॥

उच्चाभिलाषी ग्रह लक्षण—

रविर्मीने शशी मेषे भौमे धनुषि संस्थितः।
सिंहे बुधो गुरुर्युग्मे शुक्रः कुम्भे तथैव च।
शनिः कन्यागतो ह्युच्चाभिलाषी परिकीर्तितः ॥ ५०० ॥

सूर्य मीन राशि में, चन्द्रमा कर्क में, मंगल धनु में, बुध सिंह में, गुरु मिथुन में, शुक्र कुम्भ में, तथा शनि कन्या राशि में स्थित हो तो उच्चाभिलाषी कहा जाता है ॥ ५०० ॥

बली ग्रह का लक्षण—

उदितः स्वगृहस्थश्च मित्रगेहे स्थितोऽपि च।
मित्रवर्गेण दृष्टश्च स ग्रहः सबलः स्मृतः ॥ ५०१ ॥

उदित (सूर्य से दूरस्थित), अपनी राशि में मित्र ग्रह की राशि में स्थित तथा मित्रग्रहों से दृष्ट ग्रह बलवान होते हैं ॥ ५०१ ॥

सबल भाव लक्षण—

स्वामिना बलिना दृष्टः सबलैश्च शुभैर्ग्रहैः ।
न दृष्टो न युतः पापैः स भावः सबलः स्मृतः ।। ५०२ ।।

अपने बलवान स्वामी ग्रह एवं बलवान शुभग्रहों से दृष्ट तथा पाप ग्रहों की युति एवं दृष्टि से रहित भाव बलवान होता है ।। ५०२ ।।

दृष्टि विचार—

ज्ञार्केन्दुशुक्रास्त्रिदशं त्रिकोणं तुर्याष्टमद्यूनमथांशवृद्धया ।
पश्यन्ति तुर्याष्टमसप्तमस्थं दशं त्रिकोणं च गुरुः क्रमेण ।। ५०३ ।।

बुध, सूर्य, शुक्र, तृतीय, दशम को एकपाद, पञ्चम, नवम को दो पाद, चतुर्थ अष्टम को तीन पाद तथा सप्तम को ४ पाद (पूर्ण) दृष्टि से देखते हैं । बृहस्पति चतुर्थ-अष्टम को एकपाद, सप्तम को दो पाद, तृतीय-दशम को तीन पाद तथा पञ्चम-नवम भाव को चार पाद (पूर्ण) दृष्टि से देखता है ।। ५०३ ।।

त्रिकोणं चतुरस्रं च सप्तमं त्रिदशं शनिः ।
अस्तं त्रिखं त्रिकोणं च चतुरस्रं क्रमात्कुजः ।। ५०४ ।।

शनि पञ्चम-नवम भाव को एकपाद, चतुर्थ अष्टम को दो पाद, सप्तम को तीन पाद तथा तीसरे और दसवें को चार पाद (पूर्ण) दृष्टि से देखता है । मंगल सप्तम को एक पाद, तृतीय-दशम को दो पाद, पञ्चम नवम को तीनपाद तथा चतुर्थ-अष्टम को चार पाद (पूर्ण) दृष्टि से देखता है ।। ५०४ ।।

अन्धग्रह—

आये व्यये न पश्यन्ति न पश्यन्ति द्वितीयके ।
मूर्तौ ग्रहाः न पश्यन्ति कथ्यन्ते तेऽन्धका ग्रहाः ।। ५०५ ।।

जिन ग्रहों की दृष्टि ग्यारहवें, बारहवें, दूसरे, पहले तथा छठें भावों पर नहीं होती उन ग्रहों को अन्धग्रह कहा जाता है ।। ५०५ ।।

जन्म पत्र के नाम

तिथिवारं च नक्षत्रं नामाक्षरसमन्वितम् ।
वेदेन हरते भागं शेषं नाम तदुच्यते ।। ५०६ ।।

व्योमा सोमा च मूर्द्धा च पद्मा चैव चतुर्थकम् ।
जन्मपत्रीगतं नाम यो जानाति स पण्डितः ।। ५०७ ।।

जन्मकालिक तिथि, दिन और नक्षत्र की संख्या के योग में नामाक्षरों की संख्या जोड़कर चार का भाग देने से शेषांक द्वारा जन्मपत्र का नाम जानना चाहिये । एक शेष हो तो व्योमा, २ शेष पर सोमा, ३ पर मूर्द्धा तथा ४ शेष हो तो पद्म

नाम होता है। इस विधि से जन्म पत्री गत नाम को जो व्यक्ति जानता है वही पण्डित है ॥ ५०६–५०७ ॥

उदाहरण—सं. २०२१ शक १८८६ आषाढ़ कृष्ण ११ रविवार को कृत्तिका नक्षत्र में सरोज का जन्म हुआ।

तिथि संख्या (शुक्ल प्रतिपदा से)	२६
वार संख्या	१
नक्षत्र संख्या	३
नामाक्षर संख्या (स रो ज)	३
योग	३३

३३÷४=८ शेष=१

अतः 'व्योमा' संज्ञक जन्मपत्र हुआ।

जन्मपत्र का नाम-फल

व्योमायां पितृहानिः स्याद्धोमा मातृक्षयङ्करी।
मूर्द्धा ह्यायुःकरी ज्ञेया पद्मा बलप्रदायिनी ॥ ५०८ ॥

व्योमा नामक जन्म फल हो तो पिता की हानि, धोमा हो तो माता का नाश, मूर्द्धा हो तो आयु में वृद्धि तथा पद्मा हो तो बल में वृद्धि करने वाली होती है ॥ ५०८ ॥

शब्द ज्ञान—

शब्दो मेषे वृषे सिंहे मकरे च तुलाधरे।
अर्द्धशब्दो घटे षष्ठे शेषाः शब्दविवर्जिताः ॥ ५०९ ॥

मेष, वृष, सिंह, मकर और तुला में जन्म हो तो बालक उच्चस्वर में, कुम्भ और कन्या लग्न में हो तो अर्द्ध शब्द अर्थात् मन्दस्वर में रोदन करता है। शेष मिथुन, कर्क, वृश्चिक, धनु और मीन लग्न में जन्म हो तो (कुछ समय तक) बालक निःशब्द रहता है (रोदन) नहीं करता ॥ ५०९ ॥

नालवेष्टित लक्षण—

छागे सिंहे वृषे लग्ने वृश्चिके नालवेष्टितः।
नृलग्ने दक्षिणे पार्श्वे स्त्रीलग्ने वामपार्श्वगः ॥ ५१० ॥

यदि मेष, सिंह, वृष, और वृश्चिक लग्न में जन्म हो तो बालक के शरीर में नाल लिपटा हुआ होता है। यदि पुरुष लग्न (१, ५) में जन्म हो तो शरीर के दक्षिण भाग में स्त्री लग्न (वृष और वृश्चिक) में जन्म हो तो शरीर के वाम में नाल लिपटा होता है ॥ ५१० ॥

जन्म ज्ञान—

शीर्षोदये विलग्ने मूर्द्धाप्रसवोऽन्यथोदये चरणौ।
उभयोदये च हस्तौ शुभदृष्टः शोभनोऽन्यथा कष्टम् ॥ ५११ ॥

शीर्षोदय (मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक एवं कुम्भ) लग्न में जन्म हो तो शिर से प्रसव, पृष्ठोदय राशि (मेष, वृष, मिथुन, कर्क, धनु, मकर) में जन्म हो तो बालक का जन्म पैर की तरफ से होता है। यदि उभयोदय (मीन) लग्न में जन्म हो तो प्रथम हाथ की तरफ से जन्म होता है। लग्न पर शुभग्रहों की दृष्टि शुभ पापग्रहों की कष्टकर होती है ॥ ५११ ॥

यमल योग—

सूर्यश्चतुष्पदस्थः शेषा द्विशरीरसंस्थिता बलिनः।
केशैर्वेष्टितदेहौ यमलौ खलु तौ प्रसूयेते ॥ ५१२ ॥

सूर्य चतुष्पद संज्ञक राशियों में हो शेष सभी ग्रह द्विस्वभाव राशियों में स्थित हों तो बालों से लिपटे शरीर वाले दो बच्चों (जुड़वे बच्चे) का जन्म होता है ॥ ५१२ ॥

मूक योग—

क्रूरग्रहसन्धिगते शशिनि वृषे भौमसौरिसंदृष्टे।
मूकः सौम्यैर्दृष्टो वाचं कालान्तरे वदति ॥ ५१३ ॥

जन्म समय में सभी पापग्रह लग्नों की सन्धियों में अन्तिम अंशों में स्थित हों, चन्द्रमा वृष राशि में मंगल और शनि से दृष्ट हो तो जातक मूक (गूंगा) होता है। यदि शुभग्रहों की दृष्टि हो तो कुछ समय बाद बालक बोलने लगता है ॥ ५१३ ॥

राजयोग—

दक्षिणांशे ग्रहाः सर्वे दीप्तानस्तमितेक्षणाः।
तस्य त्रिंशत्तमे वर्षे गजो द्वारेऽवतिष्ठति ॥ ५१४ ॥

जन्म चक्र के दक्षिण भाग में यदि सभी ग्रह तेजस्वी और बलवान होकर पड़े हो तो जातक की ३० वर्ष की आयु होने पर उसके दरवाजे पर हाथी विराजमान हो जाता है। अर्थात् सप्तम से लग्न पर्यन्त सभी ग्रहों की स्थिति हो तो जातक ३० वर्ष की आयु में ही (राजा के समान) धनवान हो जाता है ॥५१४॥

चतुःसागरगे चन्द्रे कोणे चैव दिवाकरे।
अपि दासकुले जातः सोऽपि राजा भविष्यति ॥ ५१५ ॥

केन्द्र स्थानों में यदि चन्द्रमा तथा त्रिकोण भाव में यदि सूर्य हो तो जातक दास कुल में भी उत्पन्न हो तो वह राजा होता है ॥ ५१५ ॥

त्रिभिः स्वस्थैर्भवेन्मन्त्री त्रिभिरुच्चैर्नराधिपः ।
त्रिभिर्नीचैर्भवेद्दासस्त्रिभिरस्तङ्गतैर्जडः ॥ ५१६ ॥

तीन ग्रह स्वक्षेत्री (अपनी-अपनी राशि में स्थित) हों तो जातक मन्त्री, तीन ग्रह उच्चराशि में हो तो राजा, तीन ग्रह नीच के हों तो दास (नौकर) तथा तीन ग्रह अस्तंगत हो तो जातक जड़ होता है ॥ ५१६ ॥

नवग्रहों के पुरुषाकार चक्र

सूर्य पुरुष

लिखित्वा नरचक्रं च यत्र सूर्यो व्यवस्थितः ।
तन्नक्षत्रादि त्रयं तत्र दद्याच्च नरमस्तके ॥ ५१७ ॥

वदने च त्रयं दद्यादेकैकं स्कन्धयोर्द्वयोः ।
बाहुद्वये तथैकैकं पाण्योश्चैकैकमेव च ॥ ५१८ ॥

ऋक्षाणि हृदये पञ्च नाभौ स्यादेकमेव हि ।
ऋक्षं गुह्ये भवेदेकमेकैकं जानुकद्वये ॥ ५१९ ॥

नक्षत्राणि षडन्यानि दद्यात्पादद्वये बुधः ।
पादस्थिते च नक्षत्रं निर्द्धनोऽल्पायुरेव च ॥ ५२० ॥

विदेशगमनो जातो गुह्ये स्यात्पारदारिकः ।
अल्पतोषी भवेन्नाभौ हृदये चेश्वरस्तथा ॥ ५२१ ॥

तस्करः पाणियुग्मे च बाहौ स्यानच्युतो भवेत् ।
स्कन्धे गजस्कन्धगामी मुखे मिष्ठान्नभोजनः ॥ ५२२ ॥

मस्तकस्थे च नक्षत्रे पट्टबन्धो भवेन्नरः ।
सूर्यनक्षत्रतो जन्मनक्षत्रमिति गण्यते ॥ ५२३ ॥

नराकार चक्र बनाकर सूर्याधिष्ठित नक्षत्र से ३ नक्षत्र सिर पर, तीन मुख पर, एक-एक दोनो कन्धेपर, दोनो भुजाओं पर एक-एक, दोनों हथेली में एक-एक, हृदय पर ५, नाभि पर एक, गुह्य भाग में एकनक्षत्र, एक-एक नक्षत्र दोनो घुटनो पर, तथा शेष ६ नक्षत्रों को पैरों मे स्थापित करना चाहिये ।

जन्म नक्षत्र शरीर के जिस भाग में हो उसी के अनुसार उसका फल होता है । यदि जन्म नक्षत्र पैर में हो तो जातक दरिद्र, अल्पायु और विदेश यात्रा करने वाला, गुह्य स्थान में हो तो पारदारिक पर स्त्री में आसक्त, नाभी में हो तो, (स्वल्प) थोड़े में ही सन्तुष्ट, हृदय में हो तो ईश्वर तुल्य, दोनो हाथों में हो तो चोर, भुजाओं में पड़े तो पदच्युत, कन्धों पर हो तो हाथी की सवारी

करने वाला, मुख में हो तो मिष्ठान्न भोजन करने वाला तथा मस्तक पर हो तो राजा होता है। इस प्रकार सूर्य नक्षत्र से जन्म नक्षत्र पर्यन्त गणना की जाती है ॥ ५१७-५२३ ॥

आयु विचार—

शतवर्षाणि जीवेत शिरोजातो न संशयः।
मुखेनाशीतिवर्षाणि स्कन्धाभ्यां च तथैव च ॥ ५२४ ॥
हस्ताभ्यां बाहुयुग्मेन जीवेत सप्तसप्ततिः।
अष्टषष्टिर्हृदि प्रोक्ता नाभावपि तथैव च ॥ ५२५ ॥
गुह्ये च षष्टिवर्षाणि चाष्टौ वर्षाणि जानुनि।
पादयोः षट् च वर्षाणि रविचक्रे क्रमेण हि ॥ ५२६ ॥

जन्म नक्षत्र शिर पर हो तो १०० वर्ष की आयु, मुख और दोनों कन्धों पर हो तो अस्सी वर्ष की, दोनो हाथों एवं भुजाओं पर हो तो ७७ वर्ष, हृदय और नाभि पर हो ६८ वर्ष, गुह्य स्थान में ६० वर्ष, घुटने पर हो तो केवल ८ वर्ष, तथा पैरो पर हो तो ६ वर्ष की आयु होती है। सूर्य चक्र में उक्त प्रकार से आयुज्ञान करना चाहिये ॥ ५२४–५२६ ॥

उदाहरण—जन्म नक्षत्र मघा। जन्म समय में सूर्य वृष राशि में रोहिणी नक्षत्र पर था। अतः

नक्षत्र	संख्या	अङ्ग
रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा	(३)	शिर
पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा	(३)	मुख
मघा, पूर्वाफाल्गुनि	(२)	दोनो स्कन्ध
उत्तराफाल्गुनि, हस्त	(२)	दोनो भुजा
चित्रा, स्वाती	(२)	दोनो हथेली
विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा	(५)	हृदय
उत्तराषाढा	(२)	नाभि
श्रवण	(१)	गुह्य
धनिष्ठा, शतभिषा	(२)	दोनो घुटना
पूर्वाभाद्रपद, उत्तरा भाद्रपद रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका	(६)	दोनों पैर

प्रस्तुत उदाहरण में सूर्य नर चक्र में जन्म नक्षत्र मघा स्कन्ध पर आ रहा है अतः जातक हाथी पर सवारी करने वाला (धनाढ्य) होगा। तथा ८० वर्ष की आयु तक जीवित रहेगा।

चन्द्र पुरुष चक्र—

यदृक्षं पूर्णिमायां तु तदादित्रीणि मस्तके।
मुखे त्रीणि भुजे षट्कं हृदि त्रीण्युदरे त्रयम् ॥ ५२७ ॥
गुह्ये त्रीणि पदे षट्कं न्यसेच्चन्द्रस्य सर्वदा।
यावत्स्वजन्मनक्षत्रं गणनीयमिति क्रमात् ॥ ५२८ ॥
अर्थसिद्धिर्नृपश्रीः कुशलं चाद्भुतं शुभम्।
मार्गमृत्युं श्रियं क्षेममिति चन्द्रफलं वदेत् ॥ ५२९ ॥

जन्म समय से पूर्व पूर्णिमा को जो नक्षत्र हो उस नक्षत्र से आरम्भ कर तीन नक्षत्र मस्तक पर, ३ नक्षत्र मुख पर, ६ नक्षत्र भुजाओं पर, तीन हृदय पर, तीन उदर (पेट) पर, तीन नक्षत्र गुह्य भाग पर तथा ६ नक्षत्र पैरों पर स्थापित कर चन्द्र चक्र का निर्माण करना चाहिये। अपने (जातक के) जन्म नक्षत्र पर्यन्त गणना करने से स्थान के अनुसार क्रम से फल समझना चाहिये—

जन्म नक्षत्र शिर पर हो तो धन लाभ, मुख पर लक्ष्मी प्राप्ति, भुजाओं पर, कुशलता (कल्याण), हृदय पर अत्यन्त शुभकारक, उदरपर मार्ग में मृत्यु, गुह्य स्थान में लक्ष्मी, तथा पैरों पर जन्म नक्षत्र हो तो कल्याण कारक होता है। इस प्रकार चन्द्र पुरुष चक्र का फल कहना चाहिये ॥ ५२७–५२९ ॥

भौम पुरुष चक्र—

यस्मिन्नृक्षे भवेद्भौमस्तदादित्रीणि मस्तके।
मुखे त्रीणि त्रयं नेत्रे कण्ठे द्वे च चतुष्करे ॥ ५३० ॥
पञ्चोदरे त्रीणि गुह्ये पादे चत्वारि दापयेत्।
जन्म-ऋक्षं स्थितं यत्र फलं तत्र वदेत्पुमान् ॥ ५३१ ॥
मुखे रोगं सुखं नेत्रे शिरोराज्यं रुजा करे।
कण्ठे रोगी धनी वक्षे गुह्ये पादे च विभ्रमः ॥ ५३२ ॥

जन्म समय में भौम जिस नक्षत्र पर स्थित हो उस नक्षत्र से तीन नक्षत्र मस्तक पर, मुख पर तीन, नेत्रों में तीन कण्ठ में दो, हाथो में चार, उदर में पाँच, गुह्य में तीन, पैरों में चार नक्षत्रों का स्थापन करना चाहिये। जन्म नक्षत्र जिस स्थान पर स्थित हो उसके अनुसार फल कहना चाहिये। मुख में जन्म नक्षत्र

हो तो रोग, नेत्र में हो तो सुख, शिर में हो तो राज्य लाभ, कर (हाथ) में हो तो रोग, कण्ठ में हो तो रोग, वक्ष में हो तो धनलाभ, गुह्य तथा पैरों में हो तो भ्रान्ति होती है ॥ ५३०–५३२ ॥

बुध पुरुष चक्र—

यस्मिन्नृक्षे भवेत्सौम्यस्तदाद्यं मस्तके चतुः ।
मुखे त्रीणि चतुर्वामे करे दक्षिणके चतुः ॥ ५३३ ॥

हृदये षट् तथा गुह्ये चत्वारि द्वे पदे न्यसेत् ।
जन्म-ऋक्षं स्थितं यत्र फलं तत्र वदेत्पुमान् ॥ ५३४ ॥
मुखेष्टभुक्छिरो राज्यं कष्टं वामकरे तथा ।
वक्षस्यन्यकरे सौख्यं गुह्ये रोगी पदे भ्रमः ॥ ५३५ ॥

जन्म समय में बुध जिस नक्षत्र पर हो उससे चार नक्षत्र सिर पर, तीन नक्षत्र मुख पर, चार नक्षत्र बायें हाथ पर, चार नक्षत्र दाहिने हाथ पर, छः नक्षत्र हृदय पर, चार नक्षत्र गुह्य भाग पर, दो नक्षत्र पैरों पर स्थापित करना चाहिये। जन्म नक्षत्र जिस अंग पर उसी के अनुसार फल कहना चाहिये—मुख पर जन्म नक्षत्र हो तो इच्छानुकूल भोजन, शिर पर हो तो राज्य सुख, बायें हाथ में हो तो कष्ट, वक्षस्थल तथा दाहिने हाथ पर हो तो सुख, गुह्य पर हो तो रोगी, तथा पैरों पर हो तो भ्रम होता है ॥ ५३३–५३५ ॥

गुरुपुरुष चक्र—

शीर्षे चत्वारि राज्यं युगपरिगणितं स्कन्धयुग्मे च लक्ष्मी-
रेकं कण्ठे विभूतिर्मदनपारमितं वक्षसि प्रीतिलाभम् ।
षड्भिः पीडाङ्घ्रियुग्मे जलधिपरिमितं वामहस्ते च मृत्यु-
दृंग्युग्मे त्रीणि कुर्यान्नृपतिसमसुखं वाक्पतेश्चक्रमेतत् ॥ ५३६ ॥

जन्म कालिक बृहस्पति जिस नक्षत्र पर हो उससे चार नक्षत्र सिर पर राज्य देने वाला, चार नक्षत्र दोनों कन्धों पर लक्ष्मी दायक, एक नक्षत्र कण्ठ पर विभूति (ऐश्वर्य) देनेवाला, सात नक्षत्र वक्षस्थल पर प्रीति कारक एवं लाभ देने वाला, छः नक्षत्र दोनों पैरों में पीडाकारक, चार नक्षत्र बाँये हाथ में मृत्यु-कारक, तीन नक्षत्र दोनों आँखों पर राजा के समान सुख देने वाला होता है। इस प्रकार बृहस्पति पुरुष चक्र का निर्माण होता है ॥ ५३६ ॥

भृगु पुरुष

यस्मिन्नृक्षे भवेच्छुक्रस्तदाद्यं च चतुः शिरे ।
कण्ठे च हृदये पञ्च त्रिगुह्ये पञ्च चक्षुषोः ॥ ५३७ ॥

त्रीणि द्वे पादयोर्जातफलं जन्मर्क्षमानतः।
शिरोराज्यं धनं कण्ठे हृदये सौख्यमेव च ॥ ५३८ ॥
शत्रुभीतिर्भवेद्गुह्ये जङ्घायामिष्टभोजनम्।
पादे च सुखसंप्राप्तिः शुक्रचक्रे क्रमेण वै ॥ ५३९ ॥

जन्म समय में जिस नक्षत्र पर शुक्र हों उस नक्षत्र से ४ नक्षत्र शिर पर, कण्ठ और हृदय पर पाँच-पाँच नक्षत्र, तीन नक्षत्र गुह्य भाग पर, पाँच नक्षत्र जाँघों पर, तीन और दो (कुल ५) नक्षत्र दोनो पैरों पर, स्थापित कर अङ्गों के क्रमानुसार शुक्र चक्र के फल का ज्ञान करना चाहिये।

जन्म नक्षत्र शिर पर हो तो राज्य, कण्ठ पर धन, हृदय पर सुख, गुह्य भाग में शत्रुओं से भय, जंघापर इच्छित भोजन, तथा पैरों में सुख की प्राप्ति होती है ॥ ५३७-५३९ ॥

मार्गी शनि पुरुष चक्र—

शनिचक्रं नराकारं लिखित्वा सौरिभादितः।
नाम-ऋक्षं भवेद्यत्र ज्ञेयं तत्र शुभाशुभम् ॥ ५४० ॥
नक्षत्रमेकं च शिरोविभागे मुखे त्रीणि युगं च गुह्ये।
नेत्रे च नक्षत्रयुगं हृदिस्थं त्रयं तथा वामकरे चतुष्कम् ॥ ५४१ ॥
वामे च पादे त्रितयं च भानां भानां त्रयं दक्षिणपादसंस्थम्।
ऋक्षाणि चत्वारि च दक्षिणे करे चक्रं प्रणीतं मुनिनारदेन ॥ ५४२ ॥
रोगो लाभो हानिराप्तिश्च सौख्यं बन्धः पीडा सत्प्रयाणं च लाभः।
मान्दे चक्रे मार्गगे कल्पनीयं तद्वैलोम्याद्वक्रगे स्युः फलानि ॥ ५४३ ॥

मनुष्य के आकार मे शनि चक्र बनाकर शनि के नक्षत्र (जिस नक्षत्र पर शनि हो) से आरम्भकर अंगो में नक्षत्र का स्थापन कर जन्म नक्षत्र जहाँ हो उससे शुभाशुभ का ज्ञान करना चाहिये।

एक नक्षत्र शिर पर, तीन मुख पर, चार गुह्य पर, दो नेत्रों पर, हृदय पर तीन, बायें हाथ में चार, बायें पैर पर तीन, दाहिने पैर पर तीन, चार नक्षत्र दाहिने हाथ पर स्थापित कर मुनिनारद ने चक्र का निर्माण किया। इसका फल अङ्गों के अनुसार क्रम से रोग, लाभ, हानि, लाभ, सुख, बन्धन, पीड़ा, सुखद यात्रा तथा लाभ मार्गी शनि के चक्र का फल कहना चाहिये। यदि वक्री शनि हो तो इससे विपरीत समझना चाहिये ॥ ५४०-५४३ ॥

वक्रीशनि चक्र

यस्मिन्शनिश्चरति वक्रगतिस्तदादि॰
चत्वारि दक्षिणकरेंऽघ्रियुगे च षट्कम्।

चत्वारि वामकरकेऽप्युदरे च पञ्च-
मूर्ध्नि त्रयं नयनयोर्द्वितयं त्रिगुह्ये ॥ ५४४ ॥
रोगो लाभस्तथा द्रव्यलाभो बन्धनमेव च ।
पूजा च धनसौभाग्यमल्पमृत्युः क्रमात्फलम् ॥ ५४५ ॥

जिस नक्षत्र में वक्री शनि हो उससे चार नक्षत्र दाहिने हाथ में, दोनों पैरों में छः, बायें हाथ में चार, उदर में पाँच, सिर में तीन, दोनों नेत्रों में दो, गुह्य में तीन नक्षत्र होते हैं। जन्म नक्षत्र उक्त क्रमानुसार जिस अंग में हो उसका फल क्रम से रोग, लाभ, द्रव्यलाभ, बन्धन, पूजा (सम्मान), लोगों से सुख, तथा अल्पमृत्यु कारक होता है ॥ ५४४-४५ ॥

राहुपुरुष चक्र

यस्मिन्नृक्षे भवेद्राहुस्तदादौ सप्त पादयोः ।
दक्षिणे च भुजे पञ्च शिरसि त्रीणि दापयेत् ॥ ५४६ ॥
ऋक्षे द्वे हृदयें न्यस्य मुखे चैकं नियोजयेत् ।
भपञ्चकं करे ज्ञेयमृक्षमेकं च नाभिगम् ॥ ५४७ ॥
तत्रैव त्रीणि गुह्ये च राहुचक्रं विधीयते ।
धनहानिर्भवेत्पादे सन्तापो दक्षिणे करे ।
शीर्षे शत्रुभयं विद्याद्धृदयें दुर्जनप्रियम् ॥ ५४८ ॥
मुखे दुर्जनसहारो मृत्युर्वामे करे भवेत् ।
नाभिस्थ सर्वनाशाय गुह्ये प्राणविनाशनम् ॥ ५४९ ॥

जन्म समय में जिस नक्षत्र पर राहु हो उससे सात नक्षत्र पैरों पर, दाहिने हाथ पर पाँच, शिर पर तीन, हृदय पर दो, मुख पर एक, पाँच नक्षत्र (बायें) हाथ पर, एक नक्षत्र नाभि पर, तीन नक्षत्र गुह्य स्थान पर स्थापित करने से राहुपुरुष चक्र होता है। जन्म नक्षत्र यदि पैर पर हो तो धनहानि, दाहिने हाथ पर सन्ताप, सिर पर शत्रु भय, हृदय पर हो तो दुष्टों से प्रेम, मुख पर हो तो दुष्टों का नाश, बायें हाथ पर हो तो मृत्यु, नाभि पर हो तो सभी प्रकार से नाश, तथा गुह्य स्थान पर हो तो प्राण का विनाश (मृत्यु) होता है ॥ ५४६-५४९ ॥

केतु पुरुष चक्र

शीर्षे पञ्च द्वे मुखे पञ्च कर्णे द्वे वै वक्षस्यर्णवर्क्षाणि हस्ते ।
अंघ्री बाणा वेदतुल्याश्च बस्त्यां केतोश्चक्रं प्रोदितं बुद्धिमद्भिः ॥ ५५० ॥
मुखे भयं मूर्ध्नि जयं करोति कर्णे भयं पाणियुगे च सौख्यम् ।
पादे सुखं वक्षसि शोकमेव गुह्ये भ्रमं दुःखविकारहेतुम् ॥ ५५१ ॥

केतु जन्म समय में जिस नक्षत्र पर हो उससे पाँच नक्षत्र सिर पर, दो मुख पर, कानों पर पाँच, वक्ष पर दो नक्षत्र, हाथ पर चार, चरण में ५, तथा वस्ति में ४ नक्षत्र केतु चक्र में विद्वानों ने बताया है।

जन्म नक्षत्र मुख में हो तो भय, सिर में हो तो जय, कान पर हो तो भय, हाथों पर हो तो सुख, पैर पर हो तो सुख वक्ष पर हो तो शोक, तथा गुह्य (वस्ति) पर हो तो दुख एवं विकार कारक भ्रमण होता है ॥ ५५०-५५१ ॥

ग्रहों की अवस्था

दीप्तः स्वस्थो मुदितः शान्तः शक्तः प्रपीडितो दीनः।
विकलः खलश्च कथितो नवप्रकारो ग्रहो हरिणा ॥ ५५२ ॥

दीप्त, स्वस्थ, मुदित, शान्त, शक्त, पीड़ित, दीन, विकल, खल, ये नव प्रकार की अवस्थायें ग्रहों की बताई गई हैं ॥ ५५२ ॥

दीप्तस्तुङ्गतः खगो निजगृहे स्वस्थो हिते हर्षितः
शान्तः शोभनवर्गगश्च खचरः शक्तः स्फुरद्रश्मिभाक्।
लुप्तः स्याद्विकलः स्वनीचगृहगो दीनः खलः पापयुक्
खेटो यः परिपीडितश्च खचरैः स प्रोच्यते पीडितः ॥ ५५३ ॥

अपनी उच्चराशि में ग्रह दीप्त, अपनी राशि (गृह) में हो तो स्वस्थ, मित्र ग्रह की राशि में हर्षित, शुभग्रहों के वर्ग में शान्त, बलवान राशि युक्त ग्रह शक्त, अस्तंगत ग्रह लुप्त, अपनी नीच राशि में दीन पाप ग्रह से युक्त ग्रह खल तथा किसी ग्रह से पीड़ित होने पर पीड़ित अवस्था होती है ॥ ५५३ ॥

अवस्था का फल

दीप्ते प्रतापादतितापितारिर्गलन्मदालङ्कृतकुञ्जरेशः।
नरो भवेत्तन्निलये सलीलं पद्मालयालं कुरुते विलासम् ॥ ५५४ ॥

जिसके जन्म समय में ग्रह दीप्तावस्था में हो वह अपने प्रबल प्रताप से शत्रुओं का दमन करने वाला, मदमस्त हाथियों का अधिपति होता है। तथा उसके घर में स्वयं लक्ष्मी ही आकर विलास करती है (अर्थात् सभी प्रकार की धनसमृद्धि से परिपूर्ण होता है) ॥ ५५४ ॥

स्वस्थे महद्वाहनधान्यरत्नविशालशालाबहुलेन युक्तः।
सेनापतिः स्यान्मनुजो महौजा वैरिव्रजाधासजयाधिशाली ॥ ५५५ ॥

ग्रह स्वस्थावस्था में हो तो मनुष्य बहुत अधिक वाहन, धान्य, रत्न एवं विशाल भवनों से युक्त, सेनापति, महान तेजस्वी, तथा शत्रु समूह पर विजय प्राप्त करने वाला होता है ॥ ५५५ ॥

हर्षिते भवति कामिनीजनोऽत्यन्तभूषणमणिव्रजवित्तः ।
धर्मकर्मकरणैकमानसो मानसोद्भवचयो हतशत्रुः ॥ ५५६ ॥

जन्म समय में ग्रह हर्षितावस्था में हो तो मनुष्य कामिनी (स्त्रियों), आभूषण, मणियों के समूह एवं धन से युक्त, धार्मिक कार्यों के सम्पादन में दत्तचित्त, उन्नतिशील विचारों वाला, तथा शत्रुओं का नाश करने वाला होता है ॥ ५५६ ॥

शान्तेऽतिशान्तो हि महीपतीनां मन्त्री स्वतन्त्रो बहु मित्रपुत्रः ।
शास्त्राधिकारि सुतरां नरं स्यात्परोपकारी सुकृतैकचित्तः ॥ ५५७ ॥

शान्तावस्था में ग्रह हों तो मनुष्य अत्यन्त शान्त प्रकृति वाला, राजा का मन्त्री, स्वतन्त्र विचारों वाला, बहुत से मित्रों एवं पुत्रों से युक्त, शास्त्रों का ज्ञाता, सदैव परोपकार करने वाला तथा एक चित्त होकर सत्कार्य करने वाला होता है ॥ ५५७ ॥

शक्तेऽतिशक्तः पुरुषो विशेषात् सुगन्धमाल्याभिरुचिः शुचिश्च ।
विख्यातकीर्तिः सुजनः प्रसन्नो जनोपकर्त्तारिजनप्रहर्ता ॥ ५५८ ॥

जन्म समय में ग्रह शक्त अवस्था में हो तो पुरुष अत्यधिक शक्तिशाली, सुगन्धित वस्तुओं पुष्प-माला आदि में रुचि रखने वाला, पवित्रात्मा, विख्यात यशवाला, सज्जन, प्रसन्नचित्त, लोगों का उपकार करने वाला तथा शत्रुओं पर प्रहार (शत्रु-नाश) करने वाला होता है ॥ ५५८ ॥

हतबलो विकलो मलिनः सदा रिपुकुलप्रबलस्वगलन्मतिः ।
खलसखः स्थलसञ्चरणो नरः कृशतरः परकार्यगतादरः ॥ ५५९ ॥

जन्म समय में विकल अवस्था में ग्रह हों तो मनुष्य शक्तिहीन, मलिन विचारों वाला, सदैव शत्रुकुल की प्रबलता से दुर्बल मति, दुष्टजनों का साथी, भूमि पर भ्रमण करने वाला, दुर्बल, दूसरों का कार्य करने वाला तथा सम्मान से रहित होता है ॥ ५५९ ॥

दीनेऽतिदीनोऽपचयेन तप्तः संग्रामभूमिपतिशत्रुभीतिः ।
संत्यक्तनीतिः खलु हीनकान्तिः स्वजातिवैरं हि नरः प्रयाति ॥ ५६० ॥

जन्म समय में ग्रह दीन अवस्था में हो तो मनुष्य अत्यन्त दीन, निरन्तर ह्रास (आर्थिक हानि) से सन्तप्त, राजकीय उलझनों एवं शत्रुओं से भयभीत, अपनी नीति का परित्याग करने वाला, कान्तिहीन, तथा अपनी जाति (वर्ग) के लोगों द्वारा शत्रुता प्राप्त करने वाला होता है ॥ ५६० ॥

खलाभिधाने हि खलैः कलिः स्यात् कान्तातिचिन्तापरितप्तचित्तः ।
विदेशयानं धनहीनतान्तःकोपी भवेल्लुब्धमतिप्रकाशः ॥५६१॥

खल अवस्था में जन्मकालिक ग्रह पड़े हों तो जातक दुष्टों के साथ विवाद करने वाला, स्त्री सम्बन्धी चिन्ताओं से सन्तप्त, विदेश (अपना स्थान छोड़कर अन्य स्थान) में निवास करने वाला, धनाभाव से ग्रस्त, अन्तःकरण से क्रोधी बाहर से अत्यन्त लोभी के रूप में प्रकट होता है ॥ ५६१ ॥

पीडिते भवति पीडितः सदा व्याधिभिर्व्यसनतोऽपि नितान्तम् ।
याति सञ्चलनतां निजस्थलाद्व्याकुलत्वमपि बन्धुचिन्तया ॥ ५६२ ॥

पीड़ित अवस्थाओं में यदि ग्रह हों तो जातक व्याधि (रोग) तथा दुर्व्यसन से सदैव पीड़ित रहता है । अपने स्थान को छोड़कर इधर-उधर भ्रमण करने वाला, तथा भाई-बन्धुओं की चिन्ता से व्याकुल रहता है ॥ ५६२ ॥

मातङ्ग नायक चक्र

मातङ्गनायकं चक्रं कथयामि समासतः ।
यस्य विज्ञानमात्रेण यात्रायुद्धे जयो भवेत् ॥ ५६३ ॥

गजाकारं लिखेच्चक्रं सर्वावयवसंयुतम् ।
अष्टाविंशति-ऋक्षाणि देयानि सृष्टिमार्गतः ॥ ५६४ ॥

मुखशुण्डाग्रनेत्रे च कर्णशीर्षाङ्घ्रिपुच्छके ।
द्विकं द्विकं च दातव्यं चतुः पृष्ठे तथोदरे ॥ ५६५ ॥

द्विरदव्ययभान्यादौ वदनाद्गण्यते बुधैः ।
ऋक्षे यत्र स्थितः सौरिर्ज्ञेयं तत्र शुभाशुभम् ॥ ५६६ ॥

'मातङ्ग नायक चक्र' को मैं संक्षेप में कह रहा हूं जिसको जानने मात्र से यात्रा और युद्ध में विजय (सफलता) प्राप्त होती है ।

सभी अङ्गों से युक्त हाथी का चित्र बनाकर अभिजित् सहित अट्ठाइस नक्षत्रों का वर्णित क्रमानुसार अङ्गों में न्यास करना चाहिये ।

मुख, शुण्डाग्र, दोनों नेत्र, दोनों कान, सिर, चारो पैर और पुच्छ में अश्विन्यादि दो-दो नक्षत्रों का न्यास करना चाहिये । अनन्तर चार नक्षत्र पीठ पर तथा चार पेट पर स्थापित करने से गजचक्र होता है ।

इस प्रकार हाथी के नाम नक्षत्र से आरम्भ कर मुख आदि क्रम से सभी अङ्गों में २८ नक्षत्रों को स्थापित कर, शनि जिस नक्षत्र पर स्थित हो उस नक्षत्र के अङ्ग के अनुसार शुभाशुभ का ज्ञान करना चाहिये ॥ ५६३-६६ ॥

मातङ्ग नायक चक्र (द्र० भूमिका)

हथिनी का नाम लक्ष्मी, नक्षत्र–अश्विनी

हाथी के अंग	नक्षत्र संख्या	नक्षत्र नाम
मुख	२	अश्विनी , भरणी
शुण्डाग्र	२	कृत्तिका , रोहिणी
दोनों नेत्र	२	मृगशीर्ष , आर्द्रा
दोनों कान	२	पुनर्वसु , पुष्य
	२	आश्लेषा, मघा
दोनों अग्रपाद	२+२	पू० फा०, उ० फा० हस्त , चित्रा
दोनों पृष्ठपाद	२+२	स्वाती , विशाखा अनुराधा ; ज्येष्ठा
पुच्छ	२	मूल, पू० षा०
पृष्ठ	४	उ० षा० , अभिजित श्रवण , धनिष्ठा
उदर	४	शतभिषा , पू० भा० उ० भा० , रेवती

फल—

मुखशुण्डाग्रनेत्रेषु सौरिभं मस्तकोदरे ।
युद्धकाले गते यस्य जयस्तस्य न संशयः ॥ ५६७ ॥
पृष्ठे पादे च पुच्छे च कर्णसंस्थे शनैश्चरे ।
मृत्युर्भङ्गो रणे तस्य ऐरावतसमो यदि ॥ ५६८ ॥

जिस नक्षत्र पर शनि स्थित हो वह नक्षत्र यदि मातङ्गनायक चक्र के मुख, शुण्डाग्र, नेत्र, मस्तक और पेट में स्थित हो तो उस समय युद्ध अथवा यात्रा करने से निःसन्देह विजय होती है ।

यदि शनि का नक्षत्र पीठ, पैर, पुच्छ और कानों में स्थित हो तो (अशुभ होता है) । युद्ध में मृत्यु तथा सेना का भङ्ग (नाश) होता है (चाहे जितनी सशक्त सेना क्यों न हो) ॥ ५६७–६८ ॥

एतेषां दुष्टमङ्गानां तत्काले संस्थितः शनिः ।
तत्काले पट्टबन्धोऽपि वर्जनीयः प्रयत्नतः ॥ ५६९ ॥

इस प्रकार दुर्योग कारक शनि की स्थिति हो तो उस समय पट्टबन्ध (राज्याभिषेक) या युद्ध-यात्रा आदि को प्रयत्न पूर्वक वर्जित करना चाहिये ॥ ५६९ ॥

पृथिव्या भूषणं मेरुः शर्वर्या भूषणं शशी ।
नराणां भूषणं विद्या संग्रामानां भूषणं गजः ॥ ५७० ॥

जैसे पृथ्वी का भूषण (शोभा) मेरु पर्वत, रात्रि का आभूषण चन्द्रमा तथा मनुष्य का भूषण विद्या है। उसी प्रकार सेना का आभूषण गज (मातङ्गनायक) चक्र है ॥ ५७० ॥

अश्वचक्र—

अश्वाकारं लिखेच्चक्रमश्वधिष्ण्यादितारकाः।
वदनात्सृष्टिगा देया अष्टाविंशतिसंख्यया ॥ ५७१ ॥
मुखाक्षिकर्णशीर्षेषु पुच्छाङ्घ्र्योर्युग्मसंख्यया।
पञ्च पञ्चोदरे पृष्ठे सौरिर्यत्र फलं ततः ॥ ५७२ ॥

अश्व (घोड़ा) की आकृति का चक्र बनाकर घोड़े के नाम नक्षत्र से आरम्भ कर २८ नक्षत्रों का न्यास मुख से आरम्भ कर अन्य अंगों में सृष्टि क्रम (अनुक्रम) से करना चाहिये।

मुख, आँख, कर्ण, शीर्ष, पुच्छ और चरणों में दो-दो नक्षत्र तथा पेट और पीठ पर क्रम से पाँच-पाँच नक्षत्र स्थापित कर शनि की स्थिति के अनुसार फल कहना चाहिये ॥ ५७१–७२ ॥

अश्वचक्र (द्र० भूमिका)

अश्व का नाम चेतक, नक्षत्र अश्विनी

अश्व के अङ्ग	नक्षत्र संख्या	नक्षत्र
मुख	२	अश्विनी, भरणी
दोनों नेत्र	२	कृत्तिका, रोहिणी
दोनों कान	२	मृगशीर्ष, आर्द्रा
शीर्ष	२	पुनर्वसु, पुष्य
पुच्छ	२	आश्लेषा, मघा
दोनों पृष्ठ पाद	२+२	पू० फा०, उ० फा, हस्त, चित्रा
दोनों अग्रपाद	२+२	स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा
उदर	५	मूल, पू० षा०, उ० षा०, अभि. श्रवण
पृष्ठ	५	धनिष्ठा, शतभिषा, पू०.भा०, उ.भा. रेवती

फल—

मुखाक्ष्युदरशीर्षस्थो यदा सौरिस्तुरङ्गमे।
तदारिर्भङ्गमायाति रणे शत्रुवशं गतः ॥ ५७३ ॥

अश्व चक्र में शनि यदि मुख, आँख, पेट तथा सिर पर स्थित हो तो शत्रु सेना

नष्ट हो जाती है तथा संग्राम में शत्रु वशीभूत हो जाता है (आत्मसमर्पण कर देता है) ॥ ५७३ ॥

कर्णाङ्घ्रिपृष्ठे पुच्छस्थे अश्वाङ्गेष्वर्कनन्दने ।
विभ्रमं भङ्गहानिं च कुरुतेऽसौ महाहवे ॥ ५७४ ॥

यदि शनि अश्वचक्र में कान, चरण, पूंछ और पीठ पर स्थित हो तो संग्राम में भ्रान्ति, सेना का नाश तथा हानि होती है ॥ ५७४ ॥

एतत्स्थानस्थितः सौरिः सदा काले हयस्य च ।
पट्टबन्धे गमे युद्धे वर्जयेत्तं हयं नृपः ॥ ५७५ ॥

इन (अशुभ) स्थानों में शनि यदि अश्वचक्र में स्थित हो तो राज्याभिषेक, यात्रा और युद्ध में राजा को उस घोड़े का परित्याग कर देना चाहिये ॥ ५७५ ॥

देशान्तरस्थितः सौरि रिपवः सन्ति शङ्किताः ।
तुरङ्गा यस्य भूपस्य विचरन्ति महीतले ॥ ५७६ ॥

अन्य (शुभ) स्थानों में यदि शनि, अश्वचक्र में स्थित हो तो शत्रु लोग सर्वैव उस राजा से सशंकित रहते हैं जिसका वह घोड़ा होता है ॥ ५७६ ॥

शतपदचक्र —

चक्रं शतपदं वक्ष्ये ऋक्षांशाक्षरसम्भवम् ।
नामादिवर्णतो ज्ञेयमृक्षराश्यंशकं तथा ॥ ५७७ ॥

शतपद चक्र को बतला रहा हूँ जिसके द्वारा, नक्षत्रों के प्रत्येक चरणों के अक्षर, नाम का प्रथम अक्षर तथा राशियों का ज्ञान होता है ॥ ५७७ ॥

तिर्यगूर्ध्वगता रेखा रुद्रसंख्या लिखेद्बुधः ।
जायते कोष्ठकं तत्र शतमेकं न संशयः ॥ ५७८ ॥

तिरछी (पूर्वापर) तथा खड़ी (याम्योत्तर) ग्यारह-ग्यारह रेखा खींचने से एक सौ कोष्ठक का चक्र बन जायगा ॥ ५७८ ॥

न्यस्यावकहडादीनि रुद्रादिविदिशः क्रमात् ।
पञ्च पञ्च क्रमेणैव विशद्वर्णान् प्रयोजयेत् ॥ ५७९ ॥

पञ्चस्वरसमायोग एकैकं पञ्चधा कुरु ।
कुर्यात्कुपुमुदुस्थानि त्रीणि त्रीण्यक्षराणि च ॥ ५८० ॥

कुघाङछा भवेत्स्तम्भो रौद्र ईशानगोचरे ।
पुषाणाठा भवेत्स्तम्भो हुस्तमाग्नेयसञ्ज्ञके ॥ ५८१ ॥

भूधाफाढा भवेत्पूर्वे दूथाझात्रास्तथोत्तरे ।
एवं स्तम्भचतुष्कं च ज्ञातव्यं स्वरवेदिभिः ॥ ५८२ ॥

धिष्ण्यानि कृत्तिकादीनि प्रत्येकं चतुरक्षरैः ।
साभिजित्यंशकास्तस्य शतकं द्वादशाधकम् ॥ ५८३ ॥

यद्भांशकोष्ठस्थः क्रूरः सौम्योऽपि वा ग्रहः ।
ततस्तद्वर्जयेन्नित्यं पुंसो नामाद्यमक्षरम् ॥ ५८४ ॥

सौ कोष्ठ वाले (शतपद) चक्र के ईशान कोण से आरम्भ कर अ व क ह ड, म ट प र त, न य भ ज ख, ग स द च ल इन २० वर्णों को बीस कोष्ठों में स्थापित कर अ, इ, उ, ए, ओ इन पांच स्वरों के योग से पाँच प्रकार से लिखें। जहाँ पर कु पु भु डु वर्ण हों वहाँ पर तीन-तीन अक्षर और लिख दें।

ईशान कोण में कु के साथ घ ङ छ जोड़ने से रौद्र स्तम्भ, पु ष ण ठ अग्नि कोण में हस्त स्तम्भ भु ध फ ढ पूर्व स्तम्भ तथा दु थ झ ञ उत्तर स्तम्भ होता है। (ये चारो स्तम्भ क्रम से आर्द्रा, हस्त, पूर्वाषाढ़ तथा उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र के सूचक हैं)। इन चारों स्तम्भों को स्वरशास्त्र के विद्वानों को जानना चाहिये। कृत्तिका नक्षत्र से आरम्भ कर प्रत्येक नक्षत्र के चार-चार अक्षर निर्धारित करने पर अभिजित सहित २८ नक्षत्रों के कुल ११२ अक्षर होते हैं। (शतपद चक्र में भी १००+(३×४)=११२ अक्षर हैं। जिस नक्षत्र के जिस चरण में कोई पाप या शुभग्रह बैठा हो उस चरण से सम्बन्धित अक्षर से पुरुष का नाम नहीं रखना चाहिये ॥ ५७९–८४ ॥

शतपद (अ व क ह डा) चक्र

अ कृत्ति.	व	क	ह	ड	म मघा	ट	प	र	त
इ	वि	कि	हि	डि आश्ले.	मि	टि	पि	रि	ति विशा.
उ	वु	कु घ.ङ.छ आर्द्रा	हु पुष्य	डु	मु	टु	पु षणठ हस्त	रु स्वाति	तु
ए	वे मृ०	के पु०	हे	डे	मे	टे उ.फा	पे चित्रा	रे	ते
ओ रो.	वो	को	हो	डो	मा पू. फा.	टो	पो	रो	तो
न अनु.	य	भ	ज	ख	ग धनि.	स	द	च	ल
नि	यि	भि	जि	खि श्रवण	गि	सि	दि	चि	लि भरणी
नु	यु	पू. षा भु धफढ	जु अभि.	खु	गु	सु	उ.भा दु थझञ	चु अश्वि.	लु
ने	ये मूल	भे उ.षा.	जे	खे	गे	से पू.भा.	दे रेवती	चे	ले
नो ज्ये.	यो	भो	जो	खो	गो शत.	सो	दो	चो	लो

सौम्यैर्विद्धं शुभं ज्ञेयमशुभं पापखेचरैः ।
मिश्रैर्मिश्रफलं तत्र निर्वेधेन शुभाशुभम् ॥ ५८५ ॥

नक्षत्र शुभग्रहों से विद्ध हो तो शुभ, पापग्रहों से विद्ध हो तो अशुभ, मिश्रित (शुभ और पाप दोनों) ग्रहों से विद्ध हो तो मिश्रित (शुभाशुभ) फल होता है। यदि किसी भी ग्रह से विद्ध न हो तो शुभ और अशुभ दोनों प्रकार के फल होते हैं ॥५८५॥

यदुक्तं सर्वतोभद्रे ग्रहोपग्रहवेधतः ।
शुभाशुभफलं सर्वं तदिहापि विचिन्तयेत् ॥ ५८६ ॥

ग्रह और उपग्रह के वेध का शुभाशुभ फल जो सर्वतोभद्र चक्र में कहा गया है वही यहाँ शतपद चक्र में भी विचार करना चाहिये ॥ ५८६ ॥

सूर्यकालानलचक्र—

सूर्यकालानलं चक्रं स्वरशास्त्रोदितं महत् ।
तदहं विशदं वक्ष्ये चमत्कृतिकरं परम् ॥ ५८७ ॥

त्रिशूलकाग्राः सरलाश्च तिस्रः
किलोर्ध्वरेखाः परिकल्पनीयाः ।
रेखात्रयं मध्यगतं च तत्र
द्वे द्वे च कोणोपरिगे विधेये ॥ ५८८ ॥

त्रिशूलकोणान्तरगान्यरेखा
तदग्रयोः शृङ्गयुगं विधेयम् ।
मध्यत्रिशूलाह्वयदण्डमूलात्
सव्येन भान्यर्कभतोऽभिजिच्च ॥ ५८९ ॥

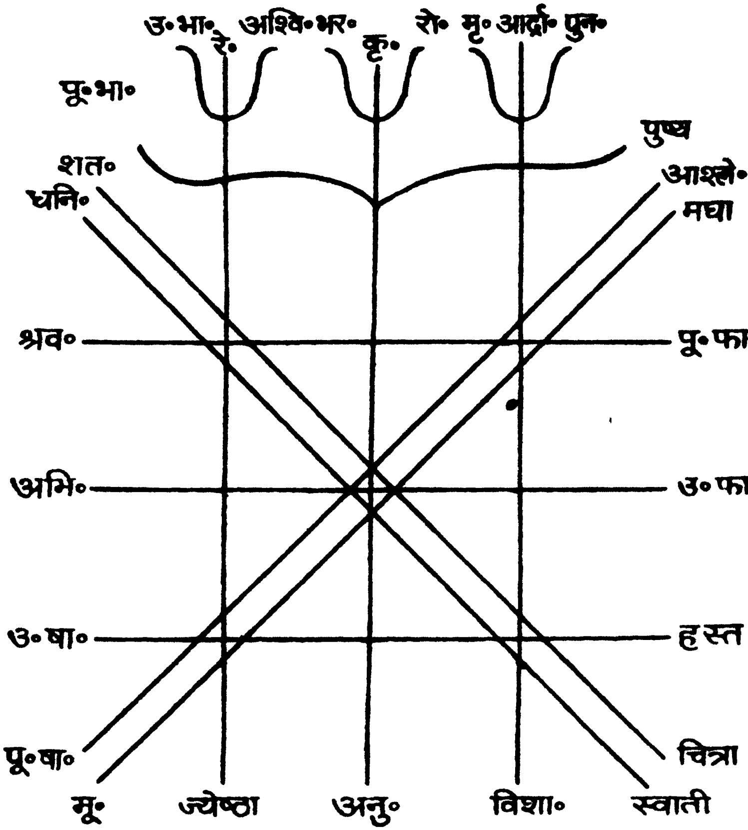
स्वर शास्त्र में कहे गये, चमत्कार प्रदर्शित करने वाले सूर्य कालानलचक्र को मैं विस्तारपूर्वक कह रहा हूँ।

तीन सरल ऊर्ध्वाधः (खड़ी) रेखा बनाकर उनके अग्र भाग में त्रिशूल बनावें, फिर तीन दक्षिणोत्तर (तिरछी) रेखा बनावें। दो-दो रेखायें चारों कोणों में जाने वाली बनाकर कोण और त्रिशूल के बीच में एक अन्य रेखा खींच कर उसमें दो शृंग बनावें। अनन्तर चक्र में नक्षत्रों का न्यास करें।

जिस नक्षत्र पर सूर्य हों उस नक्षत्र को मध्यगत त्रिशूल रेखा के मूल में स्थापित कर वाम क्रम से अभिजित् सहित २८ नक्षत्रों को चक्र में स्थापित करना चाहिये ॥ ५८७–८९ ॥

उदाहरण—सूर्य की स्थिति अनुराधा नक्षत्र में मान कर सूर्यकालानलचक्र का निर्माण किया जा रहा है—

सूर्य कालानल चक्र



शुभाशुभ ज्ञान—

स्वनामभं यत्र गतं च तत्र प्रकल्पनीयं सदसत्फलं हि ।
ततस्य शूलत्रितये क्रमेण चिन्ता वधश्च प्रतिबन्धनानि ।। ५१० ।।

अपना नाम नक्षत्र कालानल चक्र में जहाँ स्थित हो वहीं से शुभाशुभ फल का ज्ञान करना चाहिये । तीनों त्रिशूल रेखा के नीचे यदि नाम (या जन्म) नक्षत्र पड़े तो क्रम से चिन्ता, वध तथा बन्धन होता है ।। ५१० ।।

भृकुटद्वये रुक् च भवेच्च भङ्गं शूलेषु मृत्युं परिकल्पयन्ति ।
शेषेषु धिष्ण्येषु जयश्च लाभोऽभीष्टार्थसिद्धिर्विविधा नराणाम् ।। ५११ ।।

दोनों भृकुटों में नाम नक्षत्र हो तो रोग तथा हानि (सैन्यनाश), तीनों त्रिशूलों में अपना नक्षत्र हो तो मृत्यु की सम्भावना होती है । शेष स्थानों में नाम (या

जन्म) नक्षत्र हो तो विजय, लाभ तथा विविध प्रकार की अभीष्ट सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं ॥ ५११ ॥

श्रीसूर्यकालानलचक्रमेतद्गदे च वादे च रणे प्रयाणे।
प्रयत्नपूर्वं परिचिन्तनीयं पुरातनानां वचनं प्रमाणम् ॥ ५१२ ॥

इस सूर्य कालानलचक्र को रोग, विवाद, संग्राम और यात्रा में प्रयास पूर्वक विचार करना चाहिये। यह प्राचीन आचार्यों का प्रमाण वचन है ॥ ५१२ ॥

वेध फल—

रवेर्वेधे मनस्तापो द्रव्यहानिश्च भूसुते।
रोगपीडाकरो मन्दो राहुः केतुश्च मृत्युदः ॥ ५१३ ॥

सूर्य द्वारा (जन्म राशि पर) वेध हो तो मन में सन्ताप, मंगल, से धनहानि, शनि से रोग पीडा तथा राहु और केतु से वेध हो तो मृत्यु होती है ॥ ५१३ ॥

गुरोर्वेधे भवेल्लाभो रत्नलाभश्च भार्गवे।
स्त्रीलाभश्चन्द्रवेधे च सुखं स्याद्बुधवेधतः।
जन्मराशेश्च वेधस्य फलमेतत्प्रकीर्तितम् ॥ ५१४ ॥

यदि गुरु द्वारा वेध हो तो लाभ, शुक्र से रत्नलाभ, चन्द्र से स्त्री लाभ, बुध से वेध हो तो सुख प्राप्त होता है। वेध का यह फल जन्म राशि के आधार पर कहा गया है ॥ ५१४ ॥

चन्द्रकालानलचक्र—

चन्द्रकालानलं चक्रं व्योमाकारं लिखेद्बुधः।
चतुर्दिक्षु त्रिशूलानि मध्यत्र्यस्राणि कारयेत् ॥ ५१५ ॥
पूर्वं त्रिशूलमध्यस्थं दिवसर्क्षं समालिखेत्।
त्रिशूले च बहिर्मध्ये मध्ये बहिस्त्रिशूलके।
नामर्क्षं च स्थितं यत्र ज्ञेयं तत्र शुभाशुभम् ॥ ५१६ ॥
त्रिशूले च भवेन्मृत्युर्मध्यमं बाहिरष्टके।
आयुः प्रजा जयो लाभश्चन्द्रगर्भे न संशयः ॥ ५१७ ॥

चन्द्र कालानल चक्र को व्योमाकार (वर्तुलाकार) बनाना चाहिये। चारों दिशाओं में इस प्रकार त्रिशूल बनावें जिससे वर्तुल में त्रिभुजों का निर्माण हो जाय।

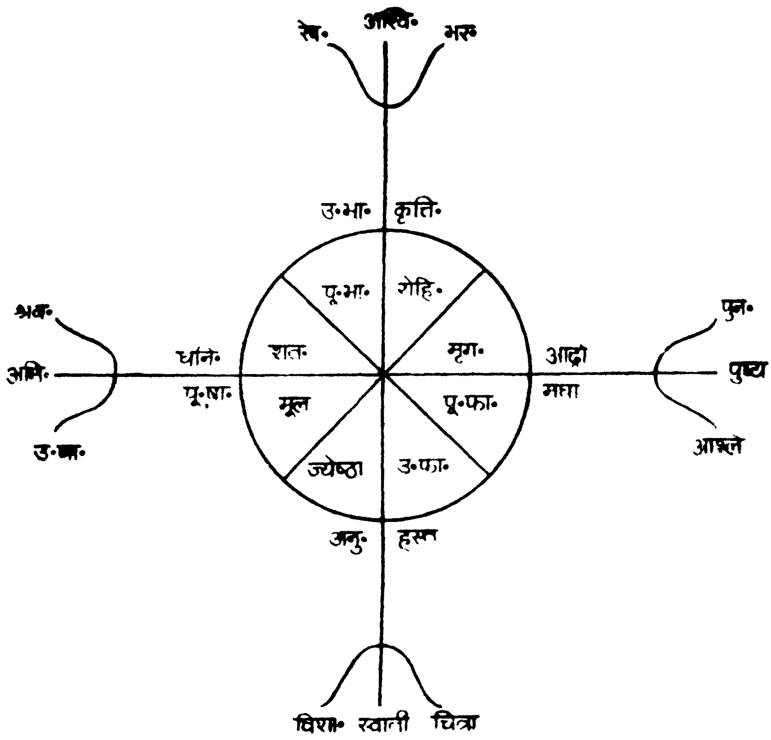
अनन्तर पूर्व दिशा में त्रिशूल के मध्य में अभीष्ट दिन के नक्षत्र को लिख कर फिर अग्रिम नक्षत्रों को क्रम से त्रिशूल पर, वृत्त के बाहर, वृत्त के अन्दर, पुनः अन्दर, वृत्त के बाहर तथा दूसरे त्रिशूल पर लिखना चाहिये। इसी प्रकार अभिजित् सहित अट्ठाइस नक्षत्रों का चक्र में न्यास करना चाहिये।

चक्र में जहाँ पर नाम नक्षत्र हो वहाँ से शुभाशुभ का ज्ञान करना चाहिये।

यदि नाम (या जन्म नक्षत्र त्रिशूल के ऊपर पड़ा हो तो मृत्यु, वृत्त के बाहर आठ नक्षत्रों में हो तो मध्यम फलकारक तथा यदि वृत्त के भीतर नाम नक्षत्र हो तो आयु, सन्तान, जय तथा लाभ देने वाला होता है ॥ ५१५–१७ ॥

उदाहरण—कल्पना किया कि किसी का नाम नक्षत्र मघा है। तथा यात्रा के दिन अश्विनी नक्षत्र है परिणाम—मध्यम फलदायक।

चन्द्र कालानल चक्र



यमदंष्ट्राचक्र—

नवोर्ध्वगानि धिष्ण्यानि नव तिर्यग्गतानि च।
अधोगतानि धिष्ण्यानि नव चैव विनिर्दिशेत् ॥ ५९८ ॥

चतुर्नाडीकृतो वेधो जन्मनक्षत्रयोगतः।
सर्पाकारमिदं चक्रं कालचक्रं प्रजायते ॥ ५९९ ॥

एक सर्पाकार चक्र बनाकर उसमें ९ नक्षत्र ऊपर, ९ नक्षत्र मध्य में तथा ९ नक्षत्र अधो (नीचे) भाग में स्थापित करने से सर्पाकार कालचक्र होता है। जन्म नक्षत्र की स्थिति द्वारा चार नाड़ियों में वेध होता है ॥ ५९८-९९ ॥

त्रीणि मध्यगतर्क्षाणि तानि कालमुखानि च।
कोणस्थिते चन्द्रधिष्ण्ये तच्च दंष्ट्राद्वयं मतम् ॥ ६०० ॥

मध्य भाग स्थित नक्षत्रों में तीन नक्षत्र (क्रम से १३, १४, १५ वाँ) नक्षत्र काल मुख तथा कोण में स्थित अर्थात् मध्यगत नक्षत्रों से पूर्व और पश्चात् (क्रम से १० वाँ ११ वाँ) दो चान्द्र नक्षत्र दोनों दंष्ट्रा (कालसर्प के दाँत) होते हैं ॥६००॥

दिनर्क्षमादिमं कृत्वा नामर्क्षं यत्र संस्थितम् ।
मुखदंष्ट्रागते मृत्युः शुभमन्यत्र संस्थिते ।। ६०१ ।।

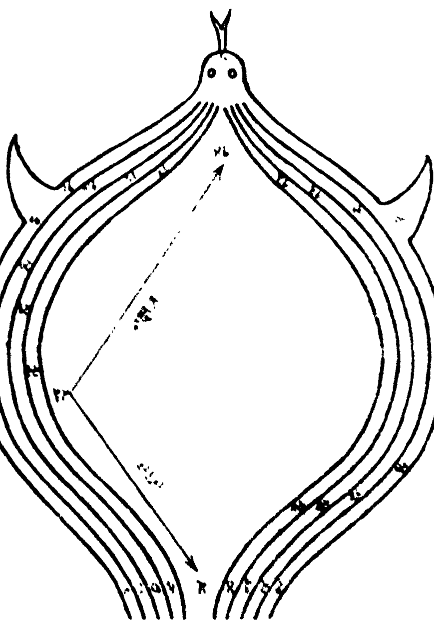
काल (यमदंष्ट्रा) चक्र में नक्षत्रों का स्थापन दिन नक्षत्र (जिस दिन प्रश्न हो या विचार करना हो उस दिन के चान्द्र नक्षत्र) से करना चाहिये। नाम नक्षत्र यदि मुख में अथवा दंष्ट्रा में स्थित हो तो मृत्यु (अशुभ) तथा अन्यत्र कहीं हो तो शुभ होता है ।। ६०१ ।।

ज्वरे च नष्टदंष्ट्रे च विवादे विग्रहे रणे ।
कालदंष्ट्रास्यगं नाम यस्य तस्य महद्भयम् ।। ६०२ ।।

यम (काल) दंष्ट्रा चक्र का उपयोग ज्वर, नष्ट वस्तु, सर्पादि जन्तुओं के दंश, विवाद तथा संग्राम में किया जाता है। जिसका नाम (नक्षत्र) कालदंष्ट्रा या काल मुख में होगा उसके लिए महान भय उपस्थित होता है ।। ६०२ ।।

विशेष—कालदंष्ट्रा या यमदंष्ट्रा चक्र के निर्माण एवं उपयोग विधि में अन्य ग्रन्थों में कुछ मतभेद है। नरपति जयचर्या मे लिखा है कि "चतुर्नाडीमतो वेधो मध्ये ऋक्षत्रयोज्झितः ।।" अर्थात् चार नाडियों में स्थित नक्षत्रों में से मध्यगत तीन नक्षत्रों को छोड़कर अन्य सभी नक्षत्रों में वेध होता है। इसका अर्थ यह भी किया गया है कि तीनों स्थानों में मध्यके तीन-तीन नक्षत्र काल मुख में स्थित होते हैं। परन्तु कुछ लोगों ने मध्य (तिर्यक) स्थान में स्थित ६ नक्षत्रों में से ३ नक्षत्र को कालमुखगत तथा उससे पूर्व और पश्चात् दो नक्षत्रों को यमदंष्ट्रा में स्थित माना है।

यम (काल) दंष्ट्रा चक्र



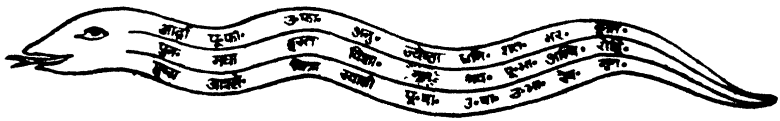
यदि दिन नक्षत्र मघा हो तो मघा से ज्येष्ठा पर्यन्त ६ नक्षत्र ऊर्ध्व भाग में, मूल से रेवती पर्यन्त ६ नक्षत्र तिर्यग भाग (स्थित कालमुख) में तथा अश्विनी से आश्लेषा पर्यन्त ६ नक्षत्र अधो (पृष्ठ) भाग में स्थापित करना चाहिये। प्रश्न-कर्त्ता रमेश का नाम नक्षत्र चित्रा ऊर्ध्व भाग में स्थित हैं अतः शुभ है। गोपाल की नक्षत्र शतभिष १५ वाँ नक्षत्र कालमुख में है अतः अशुभ है।

त्रिनाडी चक्र—

आर्द्रादिं विलिखेच्चक्रं मृगान्तं च त्रिनाडिकम्।
भुजङ्गसदृशाकारं मध्ये मूलं प्रतिष्ठितम् ॥ ६०३ ॥

आर्द्रा से आरम्भ कर मृगशीर्ष पर्यन्त २७ नक्षत्रों को सर्पाकार त्रिनाडी चक्र मे इस प्रकार स्थापित करें कि मूल नक्षत्र मध्य में आ जाय ॥ ६०३ ॥

त्रिनाडी चक्र



यद्दिने एकनाडिस्थाश्चन्द्रनामर्क्षभास्कराः।
तद्दिनं वर्जयेत्तस्य विवादे विग्रहे रणे ॥ ६०४ ॥

जिस दिन नाम नक्षत्र, चन्द्रस्थित नक्षत्र और सूर्यस्थित नक्षत्र एक ही नाडी में स्थित हों तो इस दिन विवाद, विग्रह (विरोध, अलगाव), और संग्राम में भाग नहीं लेना चाहिये ॥ ६०४ ॥

रोगिणो जन्म-ऋक्षस्य एकनाड्यां यदा शशी।
तदा पीडा विजानीयादष्टप्रहरकीं ध्रुवम् ॥ ६०५ ॥

रोगी का जन्म नक्षत्र और बीमारी अवस्था में चन्द्र नक्षत्र यदि एक ही नाडी में स्थित हों तो आठ प्रहर तक (अर्थात् चन्द्रमा जब तक उस नक्षत्र में रहेगा तब तक) रोगी को कष्ट रहता है ॥ ६०५ ॥

रोगिणो जन्म-ऋक्षस्य एकनाड्यां यदा रविः।
यावदृक्षं भवेद्भोग्यं तावत्पीडा विनिर्दिशेत् ॥ ६०६ ॥

रोगी का जन्म नक्षत्र और सूर्य नक्षत्र (जिस नक्षत्र पर सूर्य स्थित हो) यदि एक ही नाडी में स्थित हो तो जब तक सूर्य उस नक्षत्र पर स्थित रहेगा तब तक रोगी को पीड़ा होगी ॥ ६०६ ॥

रोगिणो जन्म-ऋक्षस्य एकनाड्यां यदा भवेत्।
जन्म ऋक्षं रविश्चन्द्रस्तदा मृत्युं समादिशेत् ॥ ६०७ ॥

रोगी का जन्म नक्षत्र, सूर्य नक्षत्र और चन्द्र नक्षत्र यदि एक ही नाडी में हो तो रोगी की मृत्यु होती है ऐसा फलादेश करना चाहिये ॥ ६०७ ॥

जन्म-ऋक्षं रविश्चन्द्रो भवेद्यदि कथञ्चन।
अन्यास्वन्यासु नाडीषु तदा नीरोगता भवेत् ॥ ६०८ ॥

जन्म नक्षत्र, चन्द्र नक्षत्र और सूर्य नक्षत्र यदि किसी प्रकार भिन्न-भिन्न नाडियों में हो तो रोगी स्वस्थ हो जाता है ॥ ६०८ ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि चक्रं त्रैलोक्यदीपकम्[1]।
विख्यातं सर्वतोभद्रं सद्यः प्रत्ययकारकम् ॥ ६०९ ॥

---

1. यह श्लोक नरपतिजयचर्या के सर्वतोभद्रप्रकरण का है। इससे आगे २-९ श्लोक पर्यन्त सर्वतोभद्र चक्र की निर्माण विधि बताई है जिसका उल्लेख प्रस्तुत ग्रन्थ में नहीं किया गया है। केवल फलादेश विधि दी गई है। अतः आवश्यक समझ कर निर्माण विधि भी प्रस्तुत कर रहा हूँ। द्र. नरपति ज. च. २-९ 'ऊर्ध्वगा दश विन्यस्य' इत्यादि नियमानुसार दस रेखा उर्ध्वाधः, दस रेखा तिर्यक् लिखकर ८१ कोष्ठक वाला एक चक्र बना कर ईशान कोण से आरम्भ कर चारों कोणों मे अकारादि १६ स्वरों को स्थापित करना चाहिये। अनन्तर अ स्वर के आगे से कृत्तिकादि २८ नक्षत्रों को लिख कर पूर्वादि दिशाओं से नक्षत्रों के नीचे अवकहडादि अक्षरों का न्यास करना चाहिये। पुनः उसके नीचे पूर्वादि दिशाओं में वृषादि तीन-तीन राशियों का न्यास कर शेष ५ कोष्ठों मे नन्दादि तिथियों एवं सूर्यादि सात वारों का नाम लिखने से सर्वतोभद्रचक्र निर्मित होता है। वारों का नाम तिथियों के साथ इस प्रकार होगा—रविवार, भौमवार-नन्दा, सोमवार, बुधवार—भद्रा, गुरुवार–जया, शुक्रवार–रिक्ता, शनिवार–पूर्णा। वेधज्ञान हेतु नरपति जयचर्या स. भ. प्र. २१-३३ देखें।

सर्वतोभद्र चक्र

अ	कृ.	रो	मृ.	आ.	पु.	पु.	आ.	आ
भ.	उ	अ	व	क	ह.	ड	ऊ	म.
अ.	ल	लृ	वृ	मि.	क.	लॄ	म	पू.फा.
रे.	च	मे.	ओ	नन्दा १.६.११ र. मं.	औ	सि	ट	उ.फा
उ.भा.	द	मी.	रिक्ता ४,९,१४ शु.	पूर्णा ५,१०,१५ श.	भद्रा २,७,१२ सो. बु.	क.	प	ह.
पू.भा.	स	कु	अः	जया ३,८,१३ गु.	अं	तु	र	चि.
श.	म	ऐ	म.	ध	वृ.	ए	त	स्वा.
ध.	ॠ	ख	ज	भ	य	न	ऋ	वि.
ई	श्र	अ.	उ.षा.	पू.षा.	मू.	ज्ये	अनु	इ

एकवेधे भवेद्युद्धं युग्मवेधे धनक्षयः।
त्रिवेधेन भवेद्भङ्गो मृत्युश्चैव चतुर्ग्रहैः॥ ६१० ॥
एकादिक्रूरवेधेन फलं पुंसां प्रजायते।
उद्वेगश्च तथा हानी रोगो मृत्युः क्रमेण च॥ ६११ ॥
भ्रम ऋक्षेऽक्षरे हानिः स्वरे व्याधिर्भयं तिथौ।
राशिवेधे महाविघ्नं पञ्चवेधे न जीवति॥ ६१२ ॥
अर्कवेधे मनस्तापो द्रव्यहानिस्तु भूसुते।
रोगपीडाकरः सौरो राहुः केतुश्च विघ्नदौ॥ ६१३ ॥
चन्द्रा मिश्रफलं पुंसा रिपुश्चैव तु भार्गवे।
बुधवेधे भवेत्प्रज्ञा जीवः सर्वफलप्रदः॥ ६१४ ॥

इन चक्रों के अनन्तर अब मैं तीनों लोक को प्रकाशित (प्रत्यक्ष) करने वाला, प्रसिद्ध, शीघ्र विश्वास उत्पन्न कराने वाला सर्वतोभद्रनामक चक्र का विवेचन करने जा रहा हूँ। यदि इस चक्र मे एक ग्रह से वेध हो तो युद्ध होता है, दो ग्रहों के वेध से धन हानि, तीन ग्रहों के वेध से भङ्ग (सेना का पलायन), चारग्रहों के वेध से मृत्यु होती है।

एक या एक से अधिक क्रूर ग्रहों का वेध हो तो क्रम मे उद्वेग, हानि, रोग और मृत्यु होती है। जन्म नक्षत्र विद्ध हो तो भ्रम (भ्रमण), नामाक्षर विद्ध हो तो हानि, स्वर विद्ध हो तो महान विघ्न तथा यदि पाँचों विद्ध हों तो मनुष्य जीवित नहीं रहता।

सूर्य से वेध हो तो मन में सन्ताप, भौम से वेध हो तो धन की हानि, शनि वेधकारक हो तो रोग और पीड़ा, राहु और केतु वेधकारक हो तो विघ्न, चन्द्र से वेध हो तो शुभ-अशुभ दोनों मिश्रित फल, शुक्र वेधकारक हो तो शत्रु-वृद्धि, बुध से वेध हो तो बुद्धि का विकास, तथा गुरु से वेध हो तो सभी प्रकार का (शुभ) फल प्राप्त होता है॥ ६०९-१४॥

पञ्चस्वर चक्र—

अथादावुदयो यस्यास्तिथेस्तद्भुक्तमानतः।
बालस्वरादिकप्रश्ने फलं तस्य वदाम्यहम्॥ ६१५ ॥

प्रश्न काल में जिस तिथि का उदय हो उसके भुक्त प्रमाण से बाल आदि स्वरों का फल बता रहा हूँ॥ ६१५॥

मृत्युर्बालस्तथा वृद्धः कुमारस्तरुणः स्वरः।
यो यस्य पञ्चमस्थाने स स्वरो मृत्युदायकः॥ ६१६ ॥

मृत्यु, बाल, वृद्ध कुमार और तरुण ये पाँच स्वर होते हैं। जो स्वर जिसके पञ्चम स्थान में होगा वही स्वर उसके लिए मृत्यु कारक होता है ॥ ६१६ ॥

किञ्चिल्लाभकरो बालः कुमारस्त्वर्द्धलाभदः ।
सर्वसिद्धिं युवा दत्ते वृद्धे हानिर्मृते क्षयः ॥ ६१७ ॥

बालस्वर स्वल्प लाभकारी, कुमार स्वर अर्धलाभप्रद, युवा स्वर सभी प्रकार की सिद्धियों को देने वाला, वृद्ध स्वर हानिकारक तथा मृत्यु स्वर कार्य नष्ट करने वाला होता है ॥ ६१७ ॥

स्वर साधन—

तिथिभुक्तघटीसंख्यां कृत्वा पलमयीं ततः ।
एवं बाणहृते शेषः स्वरस्तत्कालसम्भवः ॥ ६१८ ॥

वर्तमान तिथि की भुक्त घटी संख्या का पल बनाकर उसमें पाँच का भाग देने से जो शेष बचे उसी संख्या के अनुसार बाल-कुमार आदि वर्तमान स्वर होता है। यथा १ शेष हो तो बाल, २ कुमार, ३ युवा ४ वृद्ध तथा ५ अर्थात् ० शेष हो तो मृत स्वर होता है ॥ ६१८ ॥

उदाहरण—कल्पना किया ५ तिथि का घट्यादि मान २५।२२ गत तिथि ४ का मान २८।१२ इष्टघटी १५।३०

अतः ६०।००−२८।१२ = ३१।४८ + १५।३०
= ४७।१८ तिथि भुक्तघटी

४७ × ६० = २८२० + १८ = २८३८ पलात्मक भुक्तघटी

```
५ ) २८३८ ( ५६७
    २५
    ——
     ३३
     ३०
     ——
      ३८
      ३५
      ——
       ३
```

शेष ३ है। अतः 'युवा' स्वर हुआ।

यमुद्दिश्य कृतः प्रश्नः फलं तस्य वदाम्यहम् ।
यत्र नो दृश्यते किञ्चित्तत्र प्रश्नं शुभाशुभम् ॥ ६१९ ॥

जिस उद्देश्य से प्रश्न किया गया हो तथा जिस प्रश्न का कोई आधार दृश्य न हो उन प्रश्नों के शुभाशुभ फलों को मैं कह रहा हूँ ॥ ६१९ ॥

बालोदये यदा पृच्छा लाभार्थे स्वल्पलाभदा।
रुग्णार्तं चिररोगं च गमे हानिं क्षयं रणे ॥ ६२० ॥

बाल स्वर के उदय में यदि लाभालाभ का प्रश्न हो तो स्वल्पलाभ; रोगी का प्रश्न हो तो दीर्घ कालिक रोग। यात्रा का प्रश्न हो तो हानि, संग्राम का प्रश्न हो तो युद्ध में विनाश होता है ॥ ६२० ॥

कुमारोदयवेलायां लाभो भवति पुष्कलः।
राज्ये नाशं जयं युद्धे यात्रा सर्वार्थसिद्धिदा ॥ ६२१ ॥

कुमार स्वर के उदय काल में यदि प्रश्न हो तो अधिक लाभ, राज्य सम्बन्धी प्रश्न में नाश (हानि), युद्ध में विजय तथा यात्रा में सभी प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं ॥ ६२१ ॥

युवोदये लभेद्राज्यं क्लेशच्छेदं च तत्क्षणात्।
संग्रामे शत्रुहन्ता च यात्रायां सफलं भवेत् ॥ ६२२ ॥

युवा स्वर के उदय होने पर राज्य लाभ, तत्काल दुःखों का अन्त (रोगों से निवृत्ति), संग्राम में शत्रुओं का नाश, तथा यात्रा में सफलता मिलती है ॥ ६२२ ॥

वृद्धोदये न लाभः स्यात्क्लेशात्क्लेशप्रवर्द्धनम्।
संग्रामे भङ्गमायाति यात्रायां न निवर्तते ॥ ६२३ ॥

वृद्ध स्वर के उदय होने पर लाभ का अभाव (हानि), एक कष्ट के अनन्तर दूसरे कष्टों की वृद्धि, संग्राम में पराजय होती है तथा वृद्धस्वर में यात्रा करने से वापसी नहीं होती अर्थात् यात्री वहीं नष्ट हो जाता है ॥ ६२३ ॥

मृत्यूदये यदा प्रष्टा पृच्छति स्वप्रयोजनम्।
तत्सर्वं मृत्युदं ज्ञेयं युद्धे मृत्युः सभङ्गदः ॥ ६२४ ॥

मृत्यु स्वर के उदय होने पर यदि प्रश्न कर्त्ता किसी उद्देश्य से प्रश्न पूछता है तो प्रश्न का उद्देश्य ही उसकी मृत्यु का कारण होता है। अथवा युद्ध में पराजय के साथ मृत्यु होती है ॥ ६२४ ॥

नरनामादिमो वर्णः स्वराद्यस्मादधः स्थितः।
स स्वरस्तस्य वर्णस्य वर्णस्वर इहोच्यते ॥ ६२५ ॥

मनुष्य के नाम के पहले अक्षर में जो स्वर होता है उस वर्ण (अक्षर) का वही स्वर उस व्यक्ति का वर्ण स्वर होता है। यथा रमेश मे र्+अ=रमेश का 'अ' वर्णस्वर, गोपाल का ग्+ओ=ओ वर्ण स्वर होगा ॥ ६२५ ॥

नक्षत्र संज्ञा विचार

जन्मभं जन्मनक्षत्रं दशमं कर्मसंज्ञकम्।
एकोनविंशमाधानं त्रयोविंशं विनाशकम् ॥ ६२६ ॥

अष्टादशं च नक्षत्रं सामुदायिकसंज्ञितम्।
सांघातिकं च विज्ञेयमृक्षं षोडशसंख्यकम्॥ ६२७॥

जिस नक्षत्र में जन्म होता है उसे जन्म नक्षत्र, उससे दशवाँ नक्षत्र कर्म संज्ञक, उन्नीसवाँ नक्षत्र आधान संज्ञक, तेइसवाँ विनाश संज्ञक, अठारहवाँ नक्षत्र सामुदायिक संज्ञक, तथा सोलहवाँ नक्षत्र सांघातिक संज्ञक होता है॥ ६२६–६२७॥

मृत्युः स्याज्जन्मभे विद्धे कर्मभे क्लेशमेव च।
आधानर्क्षेऽप्रकाशः स्याद्विनाशे बन्धुविग्रहः।
सामुदायिकभे विद्धे कष्टं हानिः सुघातिके॥ ६२८॥

यदि जन्म नक्षत्र विद्ध हो तो मृत्यु, कर्मसंज्ञक नक्षत्र विद्ध हो तो कष्ट, आधान नक्षत्र विद्ध हो तो अज्ञान (बुद्धिनाश), विनाश नक्षत्र विद्ध हो तो भाइयों में विद्रोह, सामुदायिक संज्ञक नक्षत्र विद्ध हो तो कष्ट, सांघातिक नक्षत्र विद्ध हो तो हानि होती है[1]॥ ६२८॥

ग्रहरश्मिसाधन—

नीचोनखेटेऽभ्यधिके च षट्काच्चक्राच्च्युते सप्तहते विभक्तम्।
तर्कैस्तु राश्यादिकमेव लब्धं सूर्यादिकानामिह रश्मिजं च॥ ६२९॥

अपने नीचांश से रहित ग्रह के राश्यादि मान यदि ६ राशि से अधिक हों तो उसे १२ राशि में घटाकर शेष को सात से गुणा कर ६ से भाग देने पर लब्धि सूर्यादि ग्रहों की राश्यादि रश्मि होती है॥ ६२९॥

उदाहरण—स्प० सूर्य ३।६।१२।१० सूर्य का नीच ६।१०।

अतः ३।६।१२।१०–६।१०।०।० = ८।२६।१२।१० शेष ६ राशि से अधिक है

अतः १२ राशि में घटाने से १२।०।०।०–८।२६।१२।१० = ३।३।४७।५०

शेष में ७ का गुणा किया।

१—श्लोक ६२७ के पूर्व तथा पश्चात् अधिक पाठ है दोनों की संगति एक साथ इस प्रकार है—

एवं षड्भिः जनाः सर्वे जातिदेशाभिषेकभैः।
नवमो नृपतिर्ज्ञेयो नाडी ताराः स्मृता अमू॥

इस प्रकार सभी लोगों के जन्म-कर्मादि छः नक्षत्र होते हैं। परन्तु राजा के लिए जाति, देश और अभिषेक संज्ञक तीन नक्षत्र और अधिक होते हैं अर्थात् नव नक्षत्र होते हैं। ये नाडी संज्ञक नक्षत्र होते हैं।

जातिभे कुलनाशं च बन्धनञ्चाभिषेकभे।

जाति संज्ञक नक्षत्र विद्ध हो तो कुल का नाश, अभिषेक विद्ध हो तो बन्धन होता है।

७×३।३।४७।५० = २१।२६।३४।५० गुणन फल में ६ का भाग दिया—

६) २१।२६।३४।५० (३
१८
३×३०+२६
६) ११६ (१९
६
५६
५४
२×६०+३४
६) १५४ (२५
१२
३४
३०
४×६०+५०
६) २९० (४८
२४
५०
४८
२

सूर्य की राश्यादि रश्मि ३।१९।२५।४८ हुई। इसी प्रकार सभी ग्रहों का रश्मि मान निकाला जा सकता है।

रश्मिसंस्कार—

स्वोच्चस्थितस्य त्रिगुणं निरुक्तं स्वे द्वादशे मित्रगृहे द्विनिघ्नम्[1]।
नृपांशकोनाः कथितास्तु नीचे शत्रोः पुनश्चेद्द्विदशांशके च।
वक्रो पुनस्तद्द्विगुणं ददाति तत्त्यागकालेऽष्टमभागहीनः॥ ६३०॥

ग्रह अपनी उच्च राशि में स्थित हो तो साधित रश्मि को तीन से गुणा करने से, अपनी राशि, अपने द्वादशांश, तथा मित्र ग्रह की राशि में हो तो गणितागत

१—"स्वोच्चस्थितस्य द्विगुणं निरुक्तं स्वे द्वादशांशे मित्रगृहे स्वराशौ।" प्राचीन पुस्तके पाठान्तरम्।

अपनी उच्चराशि, गृह, अपना द्वादशांश एवं मित्रग्रह की राशि में स्थित ग्रह हो तो साधित रश्मि को द्विगुणित करने से स्पष्ट रश्मि होती है।" यह मत भी विचारणीय है।

रश्मि को द्विगुणित करने से, यदि ग्रह अपनी नीचराशि या शत्रु के द्वादशांश में स्थित हो तो साधित रश्मि का ⅓ भाग हीन करने से, वक्री ग्रह तो पुनः द्विगुणित करने से तथा वक्र त्याग के समय ½ भाग हीन करने से स्पष्ट रश्मि का मान होता है ॥ ६३० ॥

रश्मि का फल—

एकादिपञ्च यावद्रश्मिभिरतिदुःखिताः कुलविहीनाः ।
पतिता दुष्टदरिद्रा नीचरता सम्भवन्ति नराः ॥ ६३१ ॥

उक्त रीति से साधित सभी ग्रहों की रश्मियों का योग यदि १ से ५ के बीच हो तो मनुष्य अत्यन्त दुःखी, कुल से हीन (परित्यक्त), पतित, दुष्ट, दरिद्र तथा तथा नीच लोगों के साथ रहने वाला होता है ॥ ६३१ ॥

परतो दशकं यावद्भृतकहीना विदेशगमनरताः ।
जायन्ते तत्र पराः सौभाग्यपरिच्युता मलिनाः ॥ ६३२ ॥

इससे (५ से) अधिक और १० से अल्प रश्मियों का योग हो तो मनुष्य परिजनों से रहित, विदेश यात्रा में रुचि रखने वाला (विदेश वासी), भाग्यहीन, तथा मलिन विचारों वाला होता है ॥ ६३२ ॥

पञ्चदशाभ्यो जातास्तत्र प्रधानपूज्ययुताः ।
धर्मारम्भाः सुसुखा कुलतुल्यजनाः प्रजायन्ते ॥ ६३३ ॥

अनन्तर १५ तक रश्मियों का योग हो तो जातक, श्रेष्ठ, सम्मानित पुरुषों के साथ रहने वाला, धर्म का आचरण करने वाला, सुखों से युक्त तथा अपने कुल के अनुरूप व्यक्ति होता है ॥ ३३३ ॥

आविंशतेः कुलश्रेष्ठो धनवाञ्जनविच्युतः ।
भवेत्कीर्तिकरः शश्वत्स्वजनैः परिपूरितः ॥ ६३४ ॥

रश्मियों का योग यदि २० तक हो तो मनुष्य अपने कुल में श्रेष्ठ, धनवान, अन्य जनों से रहित (असामाजिक), कीर्तिकारी कार्यों को करने वाला, निरन्तर आत्मीय जनों से घिरा रहने वाला होता है। (अर्थात् अपने परिवार के ही हित में कार्य करने वाला होता है) ॥ ६३४ ॥

पूज्याः सुभगाः धीरा कृतिनो वीराश्च शरकृति यावत् ।
परतो भवन्ति मनुजाः संसारघत्तसकलकरणीयाः ॥ ६३५ ॥

रश्मियों का योग यदि २५ तक हो तो मनुष्य पूज्य (सम्मानित), सुन्दर, धैर्यवान, कार्यकुशल, वीर तथा संसार में प्रचलित सभी प्रकार के कार्यों को करने में उद्यत होता है ॥ ६३५ ॥

अत उत्तरेण चण्डा नृपाश्रिता नृपतिलब्धधनसौख्याः ।
त्रिंशद्यावत्सचिवाः पूज्याश्च भवन्ति भूतानाम् ॥ ६३६ ॥

इससे (२५) से अधिक तथा ३० तक यदि रश्मियों का योग हो तो मनुष्य अत्यन्त उग्र स्वभाव वाला, राजाओं के आश्रित रहने वाला, राजा से प्राप्त धन द्वारा सुखी, मन्त्री तथा लोगों से पूजित होता है ॥ ६३६ ॥

एकत्रिंशद्भिरथ प्रचुराः ख्याता महीभुजो निपुणाः ।
द्वात्रिंशद्भिः पुरुषाः पञ्चशतग्रामपतयः स्युः ॥ ६३७ ॥

यदि राशियों का योग ३१ हो तो पुरुष अतीव विख्यात् एवं चतुर राजा होता है । यदि ३२ योग हो तो ५०० ग्रामों का अधिपति (मुखिया) होता है ।६३७।

ग्रामसहस्राधिपतिमधिकात्करोति रश्मीनाम् ।
त्रिसहस्रग्रामाणां पुरुषं सूते चतुस्त्रिंशत् ॥ ६३८ ॥

इससे अधिक अर्थात् ३३ योग हो तो १००० ग्रामों का अधिपति तथा रश्मियों का योग ३४ हो तो ३००० गावों का अधिपति पुरुष होता है ॥ ६३८ ॥

परतो मण्डलभाजो बहुकोशपरिग्रहा महत्सत्त्वाः ।
प्रख्यातकीर्त्तियशसो भवन्ति सुभगाश्च लोकानाम् ॥ ६३९ ॥

इसके अनन्तर (अर्थात् ३५ रश्मि योग हो तो) मण्डल का अधिपति, बहुत अधिक धनवान्, महान् शक्तिशाली, अपनी कीर्ति और यश से लोक में विख्यात तथा सुन्दर होता है ॥ ६३९ ॥

त्रिंशत्षड्भिः सहिता रश्मीनां यस्य जन्मसमये स्यात् ।
सार्द्धं भुनक्ति लक्षं ग्रामाणां स तु पुमान्नियतम् ॥ ६४० ॥

जिसके जन्म समय में ३६ रश्मि संख्या हो वह व्यक्ति निश्चय ही लाखों गाँवों का उपभोग करने वाला होता है ॥ ६४० ॥

त्रिंशत्सप्तकसहिता रश्मीनां सञ्चयो भवेदेवम् ।
लक्षत्रितयपतित्वं ग्रामाणां जायते पुंसाम् ॥ ६४१ ॥

यदि रश्मियों के योग की संख्या ३७ हो तो मनुष्य तीन लाख ग्रामों का अधिपति होता है ॥ ६४१ ॥

त्रिंशद्वसुभिः सहिता रश्मियैषां भवेद्धि पुरुषाणाम् ।
मुनिसंमतलक्षाणां ग्रामाणां तेऽधिपा ज्ञेयाः ॥ ६४२ ॥

यदि रश्मियों का योग ३८ हो तो ७ लाख ग्रामों का अधिपति वह व्यक्ति होता है ॥ ६४२ ॥

त्रिंशत्सनवकसंख्या जन्मनि येषां गृहे स्थिताः सन्ति ।
ते तोषितसकलजना भवन्ति पृथिवीश्वराः पुरुषाः ॥ ६४३ ॥

जिसके जन्मकाल में ३९ रश्मि संख्या हो तो वह व्यक्ति सभी लोगों को सन्तुष्ट करने वाला समस्त पृथ्वी का स्वामी होता है ॥ ६४३ ॥

खाब्धिप्रमाणैः किरणैः प्रसूतः क्षोणीपतिस्तद्विजयप्रयाणे ।
भवन्ति सेनागजगर्जितानां प्रतिस्वनाः खे घनगर्जितानि ॥ ६४४ ॥

यदि रश्मियों से उत्पन्न योग संख्या ४० हो तो जातक पृथ्वी का अधिपति (राजा) होता है । विजय यात्रा के प्रसंग में सेना के साथ चलने वाले हाथियों की गर्जना से उत्पन्न प्रतिध्वनि मेघों की गर्जना के समान सुनाई पड़ती हैं । भाव यह कि वह व्यक्ति बहुत प्रभावशाली एवं प्रतापी होता है ॥ ६४४ ॥

शशिजलनिधिसंख्यै रश्मिभिः सूर्यतेजा
जलनिधिसहितायाः पार्थिवः स्यात्सुभूमेः ।
द्विजलधिरसनायाः पक्षवेदाख्यसंख्यै-
स्त्रिजलधिरसनाया रामवेदैस्तथैव ॥ ६४५ ॥

यदि रश्मियों का योग ४१ हो तो मनुष्य सूर्य के समान तेजस्वी समुद्र सहित पृथ्वी का शासक (राजा) होता है । यदि ४२ रश्मि संख्या हो तो दो समुद्रों के मध्य की पृथ्वी का स्वामी होता है । यदि ४३ योग हो तो तीन समुद्र पर्यन्त पृथ्वी का राजा होता है ॥ ६४५ ॥

वेदाब्धितुल्यैश्च मयूखजालैर्जाता नरेन्द्राः खलु सार्वभौमाः ।
सौम्याः सुरब्राह्मणभक्तियुक्ता दीर्घायुषः सत्त्वयुता भवन्ति ॥ ६४६ ॥

यदि समस्त रश्मियों का योग ४४ हो तो मनुष्य सरल स्वभाव वाला, देव और ब्राह्मणों में आस्था रखने वाला, दीर्घायु सम्पन्न एवं शक्तिशाली सार्वभौम राजा होता है ॥ ६४६ ॥

परतः किरणैर्द्वीपान्तरपालकाः पुरुषसर्वगुणसत्त्वाः ।
सर्वनमस्याः सुभगा महेन्द्रतुल्यप्रतापाश्च ॥ ६४७ ॥

इसके बाद अर्थात् रश्मियों का योग ४५ हो तो पुरुष एक द्वीप से दूसरे द्वीप तक का पालन-पोषण करने वाला (राजा), सभी प्रकार के सद्‌गुणों से सम्पन्न, शक्तिशाली, सभी लोगों द्वारा नमस्य (सम्मानित), सुन्दर तथा इन्द्र के समान पराक्रमी होता है ॥ ६४७ ॥

चत्वारिंशद्युक्ताः षड्भिश्चैवं प्रसूतिजाः किरणाः ।
तस्य स्यात्संदिष्टं सर्वक्षितिपालकं भुक्त्वा ॥ ६४८ ॥

जन्म समय में रश्मियों का योग यदि ४६ हो तो सभी राजाओं को छोड़कर उसी व्यक्ति का आदेश सर्वत्र मान्य होता है। अर्थात् सर्वश्रेष्ठ राजा होता है ।६४८।

भुवनभरसहिष्णोः सर्वतः क्षीणशत्रो-
स्त्रिदशपतिनिभस्यः सर्वलोकस्तु तस्य ।
विदधति विहगानां रश्मयो यस्य सूतौ
तुरगकृतिसमानाश्चक्रवर्तित्वमेवम् ॥ ६४९ ॥

जिसके जन्म समय में सभी ग्रहों की रश्मियों का योग ४७ हो वह व्यक्ति समस्त देशों (संसार) का भार वहन करने वाला, सभी तरह से शत्रुओं से हीन, लोक में इन्द्र के समान आदर पाने वाला चक्रवर्ती राजा होता है ॥ ६४९ ॥

अभिमुखकरप्रवाहैः फलं प्रयच्छन्ति पुष्टतरमाशु ।
तद्विपरीतं पुंसां पराङ्मुखस्थग्रहेन्द्राणाम् ॥ ६५० ॥

यदि ग्रह रश्मियों का प्रवाह सम्मुख[1] दिशा में हो तो पूर्वकथित फल पुष्ट होते हैं (अर्थात् पूर्ण रूप से फल प्राप्त होता है ।) यदि किरणों का प्रवाह विपरीत दिशा में हो तो फल भी विपरीत होते हैं ॥ ६५० ॥

जन्मसमये रश्मीनां संक्षये क्षयो भवति ।
वृद्धे वृद्धिर्नृणामेवं मोक्षेऽपि तत्क्रमेणैव ॥ ६५१ ॥

जन्म समय में रश्मियों के ह्रास होने से फल में क्षीणता होती है। तथा रश्मियों की वृद्धि से फल में वृद्धि होती है। मोक्ष अवस्था में भी ग्रहों की रश्मि के क्रमानुसार फल समझना चाहिये ॥ ६५१ ॥

बल-विवेचन—

बलावबोधेन विना दशादिक्रमाववोधो न भवेत्ततोऽत्र ।
तत्स्थानदिक्कालनिसर्गचेष्टादृग्भेदभिन्नं कथयाम्यशेषम् ॥ ६५२ ॥

ग्रहों के बल के ज्ञान विना दशा-अन्तर्दशा के फल-क्रम का ज्ञान नहीं हो पाता। अतः ग्रहों के स्थान दिक्, काल, नैसर्गिक, चेष्टा तथा दृष्टि भेद से उत्पन्न समस्त बलों को कह रहा हूँ ॥ ६५२ ॥

स्थान फल—

स्वोच्चे सुहृद्भे स्वनवांशकेऽपि स्वर्क्षे दृकाणे द्विरसांशकेऽपि ।
कलांशकाद्यंशयुतेऽपि चैवमुपैति तत्स्थानबलं ग्रहेन्द्रः ॥६५३॥

१. सम्मुख–विमुख रश्मियों का अभिप्राय यह है कि ग्रह यदि बाल्यावस्था से युवावस्था की तरफ अग्रसर हो तो रश्मियाँ सम्मुख होंगी, यदि युवावस्था से मृत अवस्था की तरफ बढ़ रही हों तो विपरीत होती है।

ग्रह अपनी उच्च राशि, मित्रग्रह की राशि, अपने नवमांश, द्रेष्काण एवं द्वादशांश में कलात्मक या अंशात्मक मान से भी स्थित ग्रह स्थान बल प्राप्त करता है ॥ ६५३ ॥

उच्चबल—

नीचोनं खचरं भार्द्धाधिकं चक्राद् विशोधयेत् ।
भागीकृत्य त्रिभिर्भक्तं लब्धमुच्चबलं भवेत्[1] ॥ ६५४ ॥

स्पष्ट ग्रह के राश्यादि मान से उस ग्रह का नीचांश घटाने से शेष यदि ६ राशि से अधिक हो तो उसे १२ राशि में घटाकर शेष के अंशादि मान को ३ से भाग देने पर लब्धि उच्च बल होता है ॥ ६५४ ॥

उदाहरण—स्पष्ट सूर्य ७।२६।४।२५ नीच ६।१०

७।२६।४।२५
६।१०
———
१।१६।४।२५ शेष ६ राशि से अल्प है अतः इसके अंशादि मान (३०+१६)=४६।४।२५ में ३ का भाग दिया—

```
३)४६।४।२५(१५।२१।२८
  ३
  —
  १६
  १५
  —
   १×६०+४
   ६४
   ६
   —
    ४
    ३
    —
    १×६०+२५
    ८५
    ६
    —
    २५
    २४
    —
     १
```

लब्धि फल १५।२१।२८ अंशादि सूर्य का उच्च बल हुआ ।

———

१. श्लोक सं० ६५३ बृहत्पाराशरहोरा (२८।१.२) का पाठ है। यहाँ पं० अनूपमिश्र ने निम्नलिखित अपना पद्य उद्धृत किया था—

नीचोनखेटो रसभाधिकश्चेच्चक्राद्विशोध्योऽथ कलीकृतश्च ।
खखाष्टदिग्भिर्विहृतस्तदुच्चबलं भवेत् स्थानबलप्रसङ्गे ॥

मूलत्रिकोणादि बल[1]—

मूलत्रिकोण स्वर्क्षाधिमित्र मित्र समारिषु।
अधिशत्रुगृहे चापि स्थितानां क्रमशो बलम्।
पञ्चाब्धि खाग्निनखर तिथिदिग् युगदृष्टयः॥ ६५५॥

ग्रह यदि अपने मूल त्रिकोण में हो तो ४५ कला, अपनी राशि (गृह) में हो तो ३० कला, अधिमित्र ग्रह की राशि में हो तो २० कला, मित्र ग्रह की राशि में हो तो १५ कला, सम ग्रह की राशि में हो तो १० कला, शत्रु ग्रह की राशि में हो तो ४ कला, तथा अधिशत्रु की राशि में हो तो २ कला बल प्राप्त करता है॥ ६५५॥

केन्द्रादि-द्रेष्काण बल—

कण्टाकद्युपगतेषु विधेया रूपकार्धचरणा निजवीर्ये।
मान्तमध्यमुखगेषु च पादः स्त्रीनपुंसकनरेषु विधेयः॥ ६५६॥

केन्द्र (१,४,७,१०,) स्थानों में स्थित ग्रह १° (=६०′) पणफर (२,५,८,११) स्थानों में स्थित ग्रह ३०′, आपोक्लिम (३,६,७,१२,) स्थानों में स्थित ग्रह १५′ बल प्राप्त करते हैं।

स्त्री ग्रह (चन्द्रमा और शुक्र) तृतीय द्रेष्काण में, नपुंसक ग्रह (बुध, शनि)

अर्थात् नीचरहित ग्रह यदि ६ राशि से अधिक हो तो १२ राशि में घटाकर शेष राश्यादि मान को कलात्मक बनाकर १०८०० से भाग देने पर लब्धि उच्च बल होगा।

वस्तुतः सिद्धान्त एक ही है। यहाँ पर केवल द्रविड प्राणायाम किया गया है। ६ राशि का कलात्मक मान १०८०० मानकर उक्त विधि लिखी गई है।

1. यहाँ बल विचार पराशर के मत से दिया गया है। पं० अनूपमिश्र ने अपना विचार निम्नलिखित अपने पद्य में इस प्रकार दिया है—

मूलत्रिकोणे शरवेदसंख्याः क्षेत्रे रदाः सार्धकरद्वितुल्याः।
निजेऽधिमित्रे तिथयश्च मित्रे समे सखण्डा नगलिप्तिकाश्च।
पादोन वेदाश्च रिपौ तथाधिशत्रौ कलैका द्विशरा विलिप्ताः।
बलं परं जातकशास्त्रतत्त्वविद्भिर्निरुक्तं गणितप्रवीणैः॥

अर्थात्	मूलत्रिकोण	में ४५′ बल	सम में	७′।३०″ बल
	स्वक्षेत्र	में ३२ ,,	शत्रु में	३′।४५″ ,,
	अधिमित्र	में २२।३०″	अधिशत्रु में	१′।५२″ ,,
	मित्र	में १५ ,,		

द्वितीय द्रेष्काण में तथा पुरुष ग्रह (सूर्य, मंगल, बृहस्पति) प्रथम द्रेष्काण में हों तो एक-एक पाद (१५ कला) बल प्राप्त करते हैं ॥ ६५६ ॥

दिग्बल—

स्थानवीर्यमिदमेवमिहोक्तं दिग्बलं शृणु पूर्वदिशातः ।
विद्गुरू रविकुजौ रविसूनुः शुक्रशीतकिरणौ बलिनौ स्तः ॥ ६५७ ॥

उक्त पद्यों में स्थान बल बताया गया है अब पूर्वादि दिशाओं के क्रम से ग्रहों के दिग्बल सुनो—

पूर्वदिशा (लग्न) में बुध और गुरु, दक्षिण दिशा (दशम भाव) में सूर्य, मंगल, पश्चिम दिशा (सप्तम भाव) मे सूर्य और शनि तथा उत्तर दिशा (चतुर्थ भाव) में शुक्र और चन्द्रमा हों तो बलवान् होते हैं अर्थात् उन्हें दिग्बल मिलता है ॥६५७॥

दिग्बल साधनविधि—

अर्कात्कुजात्स्वाम्बुगृहं विशोध्य जीवाद्बुधाच्चापि कलत्रभावम् ।
मेषूरणं भार्गवचन्द्रमाभ्यां प्राग्लग्नमुष्णांशुजतोऽवशेषम् ॥ ६५८ ॥
षड्भादिकञ्चेद्भगणाद्विशोध्यं लिप्तीकृतं खाभ्रगजाभ्रभूमिः ।
भजेत्तदाप्तं हि ककुब्बलं स्यादतः परं कालबलं वदामि[1] ॥ ६५९ ॥

सूर्य और मंगल के स्पष्ट राश्यादि मान से चतुर्थ भाव को, गुरु और बुध से सप्तम भावको, शुक्र और चन्द्रमा से दशम भाव को तथा स्पष्ट शनि से लग्न को घटाने से शेष यदि छ राशि से अधिक हो तो उसे १२ राशि में घटाकर शेष की कला बनाकर १०८०० से भाग देने पर दिग्बल होता है। इसके उपरान्त काल बल को बता रहा हूँ ॥ ६५८-५९ ॥

उदाहरण—स्पष्ट सूर्य ३।५।१२।२८ चतुर्थ भाव ०।१९।१३।५ ३।५।१२।२८-०।१९।१३।५=२।१५।५९।२३ शेष के कलादि मान ४५५९।२३ में १०८०० का भाग देने से लब्धि ०।२५।१९ सूर्य का दिग्बल हुआ। इसी प्रकार सभी ग्रहों का बल साधन किया जाता है।

---

१. अर्कात् कुजात् सुखं जीवाज्ज्ञाच्चास्तं लग्नमार्कितः ।
मध्यलग्नं भृगोश्चन्द्राद् हित्वा षड्भाधिके सति ।
चक्राद् विशोध्य भागास्तु रामाप्तास्तद्दिशो बलम् ॥ बृ. पा. हो. २८.७

सूर्य-मंगल से चतुर्थ, गुरु-बुध से सप्तम, शनि से लग्न शुक्र और चन्द्र से दशम भाव को घटाने से शेष छ राशि से अधिक हो तो १२ राशि में घटाकर शेष के अंशादि मान में ३ से भाग देने पर दिग्बल होता है। यथा—सूर्य ३।५।१२।२८-च. भा. ०।१९।१३।५=२।१५।५९।२३ शेष अंशादि ७५।५९।२३÷३=२५।१९।४७ दिग्बल हुआ।

नतोन्नत बल—

नक्तं बला भौमशशाङ्कमन्दा गुर्वर्कशुक्राद्युबलाः खगाः स्युः ।
सौम्याः सदा वासरनक्तभाजो ग्राह्यो बुधैरुन्नतसंज्ञकालः ॥ ६६० ॥
नतश्च तत्कालभवः पलीकृतः खखाष्टचन्द्रैर्विहृतो बलं भवेत् ।
बुधस्य रात्रिन्दिवमेकमेव विधेयमेतत्समयोद्भवं बलम्[1] ॥ ६६१ ॥

मंगल, चन्द्रमा और शनि ये तीनों ग्रह रात्रि में तथा बृहस्पति सूर्य और शुक्र दिन में बलवान् होते हैं। बुध सदैव दिन और रात्रि दोनों में समान बली होते हैं। दिनबली ग्रहों का बल उन्नतकाल तथा रात्रिबली ग्रहों का बल नतकाल से सिद्ध किया जाता है।

तात्कालिक नत या उन्नतकाल को पलात्मक बनाकर १८०० से भाग देने पर लब्धि नत एवं उन्नत बल होता है। बुध का रात्रि एवं दिन में एक ही बल माना गया है। इसी प्रकार कालबल का आनयन किया जाता है ॥ ६६०-६१ ॥

उदाहरण—नतकाल ४।२० इसे पलात्मक बनाने पर ४×६०=२४०+२०=२६० हुआ इसमें १८०० से भाग देने पर लब्धि ०।८।४० नतकाल का बल हुआ। इसी प्रकार उन्नतकाल से उन्नतबल का ज्ञान किया जायगा। बुध का बल निरन्तर ६० कला होता है।

पक्षबल—

त्र्यर्कः शशी षड्भवनाधिकश्चेच्चक्राद्विशोध्योऽस्य कलीकृतोऽसौ ।
चक्राद्र्धलिप्ताविहृतो बलक्षपक्षे बलं स्यादथ कृष्णपक्षे ॥ ६६२ ॥
तदेव रूपाच्च्युतमेव कृत्वा जगुर्बुधाः पक्षबलं ग्रहाणाम् ।
बलक्षपक्षे शुभखेचराणां पापग्रहाणामसिते च पक्षे[2] ॥ ६६३ ॥

---

१. बृहत्पाराशर होरा में नतोन्नत बल का साधन अतीव सरल विधि से किया गया है—

भौमचन्द्रशनीनां तु नताघटयो द्विसंगुणाः ।
शुद्धास्ताः षष्टितोऽन्येषां कलाद्यं तद्बलं भवेत् ।
बौधं नतोन्नतबलं रूपं ज्ञेयं सदा बुधैः ॥

मंगल, चन्द्रमा और शनि का नतबल तात्कालिक नतघटी को दो से गुणा करने पर अर्थात् नतकाल का द्विगुणित मान मंगल, चन्द्रमा और शनि का नतबल होता है। नतबल को ६० घटी में घटाने से शेष अन्य सूर्य, गुरु और शुक्र का बल होता है। बुध का बल ६० कला होता है।

२. चन्द्राच्छुद्धो रविः षड्भादूनः शोध्यस्तु चक्रतः ।
शेषांशाः वह्निविहृताः शुभानामुदितं द्विज ।
पक्षजं बलमिन्द्वज्ञशुक्रार्याणां तु षष्टितः ।
शोध्यं तदेव विज्ञेयमिनारार्कि समुद्भवम् ॥

सूर्य से रहित चन्द्रमा (स्पष्टचन्द्र से स्पष्टसूर्य को घटाने से शेष) यदि ६ राशि से अधिक हो तो उसे १२ राशि में घटा कर शेष को कलात्मक बनाकर चक्रार्धकला (६×३०×६०)=१०८०० से भाग देने पर लब्धि शुक्लपक्ष में ग्रहों का बल होता है। एक मे उक्तबल को घटाने से शेष कृष्ण पक्ष में बल होता है। शुक्ल पक्ष में शुभ ग्रहों का तथा कृष्ण पक्ष में पाप ग्रहों का बल होता है ॥ ६६२-६३ ॥

उदाहरण—स्पष्ट चन्द्र ६।२२।१८।३० स्पष्ट सूर्य ०।१३।२२।२५।

(६।२२।१८।३०)–(०।१३।२२।२५)=६।८।५६।५ शेष ६ राशि से अधिक है। अतः १२ राशि में घटाने से १२।०।०।०–६।८।५६।५=२।२१।३।५५ शेष के कलात्मक मान ८४६३ में १०८०० का भाग देने से लब्धि ०।४७।१ शुक्ल पक्ष का बल अर्थात् शुभग्रहों का बल हुआ। १–०।४७।१=०।१२।५६ कृष्ण पक्ष एवं पाप ग्रहों का बल हुआ।

दिनरात्रिबल—

अह्नि त्रिभागेषु बलं क्रमेण सौम्यार्कितिग्मांशुनभश्चराणाम्।
रात्रौ तुषारांशुसितासृजाश्च रूपं सदैवामरपूजितस्य ॥ ६६४ ॥

दिन के (दिनमान के तुल्य तीन भाग में से) प्रथम तृतीय अंश में बुध को, द्वितीय में शनि को तथा तृतीय भाग में सूर्य को पूर्ण बल प्राप्त होता है। इसी प्रकार रात्रि के प्रथम तृतीयांश में चन्द्रमा, द्वितीय में शुक्र तथा तृतीय भाग में मंगल को पूर्ण बल मिलता है। बृहस्पति को सदैव पूर्ण बल प्राप्त होता है ॥६६४॥

वर्षेश साधन—

शस्यश्विभवविहीनो द्युगणः खरसाग्निभाजितस्त्रिघ्नः।
सैकः सप्त सुतष्टः सावनवर्षाधिपोऽर्कादिः ॥ ६६५ ॥

जन्म दिन के अहर्गण में ११२१ घटाकर शेष को ३ से गुणाकर ३६० से भाग देने पर जो लब्धि प्राप्त हो उसमें एक जोड़कर सात से भाग देने पर शेष तुल्य सूर्यादि क्रम से वर्षेश होते हैं ॥ ६६५ ॥

स्पष्ट चन्द्र से स्पष्ट सूर्य को घटाकर शेष को ६ राशि से अल्प करने के लिए १२ राशि में घटा लें। शेष के अंशादि मान को ३ से भाग देने पर लब्धि चन्द्र, बुध, शुक्र और गुरु का पक्ष बल होता है। उक्त बल को ६० में घटाने से सूर्य, मंगल और शनि का पक्ष बल होता है।

उदाहरण—चन्द्र-सूर्य = ६।८।५६।५। १२–६।८।५६।५=२।२१।३।५५ अंशादि ८१।३।५५ तीन से भाग देने पर लब्धि २७।१।१८ चन्द्र, बुध, गुरु और शुक्र का पक्ष बल तथा ६०–२७।१।१८=३२।५८।४२ सूर्य, मंगल, शनि का पक्ष बल हुआ।

उदाहरण—सं २०३१ शक १८६६ कार्तिक शुक्ल १५ शुक्रवार को अहर्गण १४०६ है।

अतः १४०६—११२१ = २८८ × ३ = ८६४

$$८६४ \div ३६० = \frac{८६४}{३६०} = लब्धि\ २$$

२ + १ = ३ सात से अल्प है यही वर्षेश संख्या हुई। सूर्यादि क्रम से तीसरा ग्रह मंगल वर्षेश हुआ।

मासपति का साधन—

शशिमुनिहीनो द्युगणस्त्रिंशद्भुक्तः फलं द्विगुणम्।
सैकं सप्त सुतष्टं सावनमासाधिपोऽर्कादिः॥ ६६६॥

अहर्गण से ७१ घटाकर शेष में ३० का भाग देकर लब्धि को दो से गुणा कर एक जोड़ कर ७ से भाग देने पर शेष तुल्य सूर्यादि ग्रह मासपति होते हैं॥६६६॥

उदाहरण—अहर्गण १४०६

$$१४०६—७१ = १३३८ ।\ १३३८ \div ३० = \frac{१३३८}{३०} = लब्धि\ ४४ ।$$

$४४ \times २ = ८८ + १ = ८९ \quad ८९ \div १ = \frac{८९}{७} =$ शेष ५ अतः सूर्यादि क्रम से पांचवां ग्रह गुरु मासेश हुआ।

विशेष:—वर्षेश और मासेश का साधन यहां बताया गया परन्तु वर्षेश और मासेश का बलसाधन नहीं किया गया। अतः बृहत्पाराशर होरा शास्त्र से वर्षेश और मासेश का बल उद्धृत कर रहा हूँ—

वर्षमासदिनेशानां तिथित्रिंशच्छराणंवाः।
होराधिपबलं पूर्णमिति ज्ञेयं विचक्षणैः॥

वर्षेशका का बल १५ कला, मासेश का ३० कला, वारेश का ४५ कला तथा होरापति का बल पूर्ण अर्थात् ६० कला होता है।

ज्याखण्ड—

तत्त्वाश्विनोऽक्कांग्निकृता रूपभूमिधरर्तवः।
खाङ्काष्टौ पञ्चशून्येशा बाणरूपगुणेन्दवः॥ ६६७॥
शून्यलोचनपञ्चैकाश्छिद्ररूपमुनीन्दवः।
वियच्चन्द्रातिधृतयो गुणरन्ध्राम्बलोचनः॥ ६६८॥
मुनिषड्यमनेत्राणि चन्द्रत्रियुगलोचनाः।
पञ्चाष्टविषयाक्षीणि कुञ्जराश्विनगाश्विनः॥ ६६९॥

रन्ध्रपञ्चाष्टकयमा वस्वद्र्यङ्कयमास्ततः ।
कृताष्टशून्यज्वलना नागाद्रिशशिवह्नयः ॥ ६७० ॥
षट्पञ्चलोचनगुणाश्चन्द्रनेत्राग्निवह्नयः ।
यमाद्रिवह्निज्वलना रन्ध्रशून्यार्णवाग्नयः ॥ ६७१ ॥
रूपाग्निसागरगुणा वसुत्रिकृतवह्नयः ।
प्रोज्झ्योत्क्रमेण व्यासार्द्धादुत्क्रमज्यार्द्धपिण्डकाः ॥ ६७२ ॥

एक वृत्तपाद में २४ ज्याखण्ड होते है। इन खण्डों का साधन कर इनका कलात्मक मान पठित किया गया है।

पहली जीवा	२२५	दूसरी जीवा	४४९	तीसरी जीवा	६७१
चौथी जीवा	८९०	पाचवीं जीवा	११०५	छठी जीवा	१३१५
सातवीं जीवा	१५२०	आठवीं जीवा	१७१९	नवम जीवा	१९१०
दशवीं जीवा	२०९३	ग्यारहवीं जीवा	२२६७	बारहवी जीवा	२४३१
तेरहवीं जीवा	२५८५	चौदहवीं जीवा	२७२८	पन्द्रहवीं जीवा	२८५०
सोलहवीं जीवा	२९७८	सत्रहवीं जीवा	३०८४	अठरहवीं जीवा	३१७८
उन्नीसवीं जीवा	३२५६	बीसवीं जीवा	३३२१	इक्कीसवीं जीवा	३३७२
बाइसवीं जीवा	३४०८	तेइसवीं जीवा	३४३१	चौबीसवीं जीवा	३४३८

इन ज्यार्धपिण्डों को त्रिज्या में उत्क्रम से घटाने पर उत्क्रमज्यार्द्ध पिण्ड होते हैं ॥ ६६७–७२ ॥

इष्ट क्रान्ति साधन—

परमापक्रमज्या तु सप्तरन्ध्रगुणेन्दवः ।
तद्गुणा ज्या त्रिजीवाप्ता तच्चापं क्रान्तिरुच्यते ॥ ६७३ ॥

परम क्रान्तिज्या का मान १३९७ कला है। इष्टकालिक क्रान्ति साधन के लिए परम क्रान्ति के मान को इष्टज्या से गुणा कर त्रिज्या से भाग देना चाहिये। लब्धि क्रान्तिज्या होती है इसका चाप (ज्या से चाप) निकालने से क्रान्ति अंशात्मक होती है ॥ ६७३ ॥

विशेष :—सिद्धान्त ग्रन्थों में ज्या ज्ञात हो जाने पर क्रान्ति निकालने के लिए यही अनुपात दिया गया है—

$$\text{क्रान्तिज्या} = \frac{\text{परमक्रांज्या} \times \text{इष्टज्या}}{\text{त्रिज्या}}$$ । यही अनुपात यहां भी किया गया

$$\frac{१३९७ \times \text{इष्टज्या}}{\text{त्रिज्या}} = \frac{१३९७ \times \text{इष्टज्या}}{३४३८} = \text{क्रान्तिज्या} ।$$

चाप करने से अंशात्मक क्रान्ति होगी।

ग्रहलाघव में सरल रीति से क्रान्ति साधन इस प्रकार किया गया है।

षट्षडिषुदधियुक्कुभिरर्के: खेट भुजांशदिनांशमितैक्यम्।
शेषहतैष्य दिनांशयुतं वांशाद्यपमः सुधसंख्यखहृत्यी ॥ ग्र.ला. ४।१२

६, ६, ५, ४, २, १ क्रान्ति साधन हेतु अंक पठित है। सायनग्रह के भुजांश में १५ का भाग देकर लब्धितुल्यपठित अंको के योग कर लें। शेष को अग्रिम संख्या से गुणा कर गुणनफल में १५ का भाग देकर लब्धि को अंकों के योग में जोड़ने से अंशादि क्रान्ति होती है।

यथा—सायनसूर्य ८।६।४८।१ भुज २।६।४८।१ भुजांश ६६।४८।१÷१५—लब्धि ४, शेष ६।४८।१ को अग्रिम संख्या २ से गुणा कर १५ से भाग देने पर प्राप्त लब्धि ०।५४।२४ को ४ चार संख्याओं के योग (६+६+५+४)=२१ में जोड़ने से २१।५४।२४ क्रान्ति हुई। सायनसूर्य दक्षिण गोल का है अतः क्रान्ति भी दक्षिणा हुई।

अयन और चेष्टाबल—

क्रान्तिः सौम्या स्वमिह परमापक्रमे दक्षिणाखं
शुक्रादित्यक्षितिसुतमरुत्पूजितानां विधेया।
व्यस्ता शीतद्युतिरविजयोस्तस्य नित्यं विधेया
चान्द्रेश्चैवं तदनु परमापक्रमेणाभ्युपेता ॥ ६७४ ॥
ग्राह्यं राशिप्रभृति च फलं तत्कलीभूतमेत-
द्व्योमाकाशद्विरदकुभिर्भाजयेदायनं स्यात्।
द्विघ्नं भानोरयनजबलं पक्षवीर्यं तथेन्दो-
र्युद्धे बाणान्तरसुविहृतं खेटवीर्यान्तरं हि[1] ॥ ६७५ ॥

शुक्र, सूर्य, मंगल और बृहस्पति की उत्तरा क्रान्ति हो तो परम क्रान्ति में धन, यदि दक्षिणा क्रान्ति हो तो परम क्रान्ति में ऋण करना चाहिये। चन्द्र और शनि में विपरीत अर्थात् उत्तरा क्रान्ति में ऋण एवं दक्षिणा क्रान्ति में धन करना चाहिये। बुध की क्रान्ति उत्तरा हो या दक्षिणा दोनों स्थितियों में धन ही करना चाहिये। अनन्तर क्रान्ति की कला बनाकर १०८०० से भाग देने पर आयन बल होता है।

सूर्य का आयन बल द्विगुणित करने पर सूर्य का स्पष्ट चेष्टा बल तथा चन्द्र के चेष्टा बल को द्विगुणित करने पर चन्द्र का स्पष्ट चेष्टा बल होता है।[2]

---

१. आयन बल साधन की विधि बृहत्पाराशर होरा में इससे भिन्न है।

२. यद्रवेरायनं वीर्यं चेष्टाख्यं तावदेव हि।
विधोः पक्षबलं यावत् तावच्चेष्टाबलं स्मृतम् ॥

ग्रहों के परस्पर युद्ध[1] काल में दोनों ग्रहों के बलान्तर को शरान्तर से भाग देने पर स्पष्ट युद्ध बल होता है ॥ ६७४–७५ ॥

उदाहरण—स्प० सूर्य ९।१३।४४।१० दक्षिणक्रान्ति १८।५४ परमक्रान्ति २३।३०–१८।५४ = ४।३६ शेष ४×६० = २४०+३६=२७६ कलात्मक २७६÷१०८००=लब्धि ०।१।३२ आयनबल।

आयनबल ०।१।३२×२=०।३।४ सूर्य का चेष्टाबल।

भौमादि ग्रहों का चेष्टाबल—

मध्यस्पष्ट्युचरविवरार्धेन युक्तं चलोच्चं
चेष्टाकेन्द्रं भगणपतितं षड्गृहेभ्योधिकं चेत्।
लिप्तीकृत्वा खखगजखभूमिर्भजेल्लब्धिमानं
चेष्टावीर्यं तदिह गदितं हौरिकैर्बुद्धिमद्भिः[2] ॥ ६७६ ॥

मध्यम ग्रह और स्पष्ट ग्रह के अन्तर के आधे को शीघ्रोच्च मे जोड़ने से चेष्टा केन्द्र होता है। केन्द्र यदि ६ राशि से अधिक हो तो उसे १२ राशि में घटा देना चाहिये। केन्द्र को कलात्मक बनाकर उसमे १०८०० का भाग देने से प्राप्त लब्धि चेष्टा बल होता है होरा-शास्त्र के ज्ञाता विद्वानों का कथन है ॥ ६७६ ॥

उदाहरण—मध्यममंगल ६।२८।३७।४३ स्पष्टमंगल ६।२९।३८।२५। दोनो का अन्तर ०।२।८।१८ आधा ०।१।४।९ मंगल का शीघ्रकेन्द्र ०।१५।९।४०+०।१।४।९=०।१६।१३।४९ चेष्टा केन्द्र हुआ। बारह राशि से अल्प है। अतः इसके कलादि मान ९७३।४९ को १०८०० से भाग देने पर लब्धि ०।५।२४ मंगल का चेष्टाबल हुआ।

नैसर्गिक बल—

मन्दावनीसूनुशशाङ्कपुत्रवागीशशुक्रेन्द्रदिवाकराणाम्।
एकोत्तरं रूपनगैर्विभक्तं नैसर्गिकं वीर्यमुदाहरन्ति ॥ ६७७ ॥

एकादि सात संख्याओं को अलग-अलग ७ सात से भाग देने पर क्रम से शनि, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र और सूर्य का नैसर्गिक बल होता है। यथा—

---

१. तारा ग्रहाणामन्योन्यं स्यातां युद्ध समागमौ। सू. सि.

२. बृहत्पाराशर होरा तथा अन्य ग्रन्थों में भौमादि ग्रहों के चेष्टाबल साधन के लिए इससे विपरीत नियम मिलता है। यथा—मध्यम और स्पष्ट ग्रहों के योग का आधा अपने-अपने शीघ्रोच्च में घटाकर शेष को अंशात्मक बनाकर ३ का भाग देने से लब्धि ग्रह का चेष्टा बल होता है।

शनि	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	चन्द्र	सूर्य
१/७	२/७	३/७	४/७	५/७	६/७	७/७

अर्थात् शनि का ०°।८'।३४', मंगल का ०°।१७'।८", बुध का ०°।२५'।४२", गुरु का ०°।३४'।१७", शुक्रका ०°।४२'।५१", चन्द्र का ०°।५१'।२५" तथा सूर्य का १।०।० नैसर्गिक बल होता है ॥ ६७७ ॥

दृष्टि बल—

उक्तानि यस्माद्बहुधा फलानि व्योमौकसां दृष्टिसमुद्भवानि ।
तस्मात् प्रवच्म्यानयन हि दृष्टेर्होराविदां दृक्फलनिर्णयार्थम् ॥ ६७८ ॥

विविध प्रकार से ग्रहों के दृष्टि जन्य फल कहे गये हैं। अतः मैं भी दैवज्ञों द्वारा दृश्य फल-के निर्णय के लिए दृष्टि साधन विधि को कह रहा हूँ ॥ ६७८ ॥

दृष्टि साधन—

अपास्य पश्यन्निजदृश्यखेटा-
देकादिशेषे ध्रुवलिप्तिकाः स्युः ।
पूर्णं खवेदास्तिथयोऽक्षवेदाः
खं षष्टिरभ्रं शरवेद संख्या ॥ ६७९ ॥
तिथ्यः खचन्द्रा वियदभ्रतर्काः
शेषांकघातैष्य विशेषघातात्
लब्धं खरामैरधिकोनकैष्ये
स्वर्णं ध्रुवेताः स्फुटदृष्टिलिप्ताः[1] ॥ ६८० ॥

दृश्य (जिस पर दृष्टि हो) ग्रह से द्रष्टा (जो ग्रह देखता हो) ग्रह को घटाने से राशि स्थान में एक आदि शेष रहने पर दृष्टि का कलात्मक ध्रुवा इस प्रकार होता है—

१ शेषपर ०, २ पर ४०, ३ पर १५, ४ पर ४२, ५ पर ०, ६ पर, ६०, ७ पर ०, ८ पर ४५, ९ पर १५, १० पर १०, ११ पर, ०, १२ (या०) शेष पर ६० ध्रुवा होता है।

---

१. नीलकण्ठी १.२.११-१२ (दृष्टि साधन हेतु विविध प्रकार के नियम ग्रन्थों में मिलते हैं। मानसागरी की आधार प्रति में दृष्टि साधन हेतु जातक पद्धति का निम्नलिखित पद्य मुद्रित था जो सुस्पष्ट नहीं है।)

वैकाग्निद्विखवेदरामयममूलाप्राप्नमेकादिभे ।
द्रष्टावर्जितदृश्यकस्य गुरुणा चेदष्टवेदे कृताः ।
मन्देनाङ्कयमेऽसृजा नवगुणेङ्का मादिजाः संस्कृताः ।
मागघ्नक्षयवृद्धि खानललवेनाप्युद्धृतो दृग्भवेत् ॥

इस प्रकार प्राप्त ध्रुवा और अग्रिम (ऐष्य) ध्रुवा के अन्तर से दृश्य और द्रष्टा ग्रहों के अंशादि अन्तर को गुणा कर ३० से भाग देने पर जो लब्धि प्राप्त हो उसे ऐष्य ध्रुवा अधिक होने पर गत ध्रुवा में जोड़ने तथा ऐष्य ध्रुवा अल्प होने पर गत ध्रुवा में घटाने से ग्रहों की स्पष्ट दृष्टि होती है ।। ६७६–६८० ।।

उदाहरण—स्पष्ट बृहस्पति ६।७।१३।२५ स्पष्ट चन्द्रमा ३।१६।१२।३० । बृहस्पति को चन्द्रमा पूर्ण दृष्टि से देख रहा है अतः द्रष्टा चन्द्रमा तथा दृश्य ग्रह बृहस्पति हुआ । चन्द्रमा की स्पष्ट कलात्मक दृष्टि का साधन उक्त रीति से इस प्रकार होगा—

दृश्य बृहस्पति	६।७ ।१३।२५
द्रष्टा चन्द्रमा	३।१६।१२।३०
	२।२१।००।५५ शेष

शेष राशि स्थान में २ है अतः द्वितीय गत ध्रुवा ४० तथा ऐष्य ध्रुवा १५ का अन्तर (४०-१५)= २५ से अंशादि शेष २१।०।५५ को गुणा किया—

```
 २१। ०।१५
     ×।२५
 ५२५। ०।३७५
```

६० से अपवर्तित गुणनफल ५२५। ६ । १५ में ३० का भाग दिया ।

```
३०) ५२५।६ (१७।३०
    ३०
    २२५
    २१०
     १५×६०
     ९००
       ६
     ९०६
     ९०
       ६
```

यहाँ गत ध्रुवा ४० ऐष्य ध्रुवा १५ से अल्प है अतः ४०–१७।३०=२२।३० बृहस्पति पर चन्द्रमा की कलात्मक दृष्टि हुई ।

भाव बल—

भावानां बलमीशजं च नृचतुपादाख्यकीटम्बुजाः
जायाम्ब्वायखभोनिताः खलु ततो दिग्वीर्यंवत्तद्युतम् ।
तद्दृष्टपर्क्षप्रियुगुप्रदृष्टिचरणोनं ज्ञेज्यदृग्युक्पुनः ।। ६८१ ।।

प्रत्येक भाव के स्वामी ग्रह का बल उस भाव का भी बल होता है । (इसके

अतिरिक्त विशेषबल) यदि किसी भाव में नृ (द्विपद) संज्ञक राशि हो तो उसमें सप्तम भाव, चतुष्पद संज्ञक राशि हो तो चतुर्थ भाव, कीट संज्ञक राशि हो तो लग्न को, तथा जलचर संज्ञक राशि हो तो उसमें दशम भाव को घटाने से जो शेष बचे उससे दिग्बल साधन की रीति से बलानयन करना चाहिये। (अर्थात् शेष यदि ६ राशि से अधिक हो तो उसे १२ राशि में घटाकर शेष के अंशादि मान को ३ से भाग देने पर लब्धि उक्त बल होगा।) इस साधित बल को भावेश ग्रह के बल में जोड़ें। अनन्तर भाव पर जिन-जिन शुभ ग्रहों की दृष्टि हो उन ग्रहों के बल योग का चतुर्थांश उक्त योग जोड़ने तथा जितने पापग्रहों की दृष्टि हो उन ग्रहों के बल योग चतुर्थांश घटाने से भाव का स्पष्ट बल होता है। यदि बुध और बृहस्पति की दृष्टि हो तो इनके पूर्ण बल का योग करना चाहिये ॥ ६८१ ॥

अष्टक वर्ग—

सूर्यः सौरिश्च जीवश्च शुक्रो भौमो बुधस्तथा।
चन्द्रो लग्नं क्रमात्स्थाप्या अष्टवर्गे बुधैर्ग्रहाः ॥ ६८२ ॥

अष्टक वर्ग में सूर्य, शनि, गुरु, शुक्र, मंगल बुध, चन्द्र तथा लग्न को क्रम से स्थापित करना चाहिये ॥ ६८२ ॥

विशेष—सात ग्रहों एवं लग्न को मिलाकर आठ वर्ग होते हैं अतः अष्टक वर्ग कहा जाता है। परन्तु उक्त क्रम से स्थापित करने का कोई औचित्य नहीं प्रतीत होता। इन चक्रों के निर्माण हेतु प्रत्येक ग्रह एवं लग्न से रेखाप्रद स्थानों का उल्लेख किया गया है। उसी के अनुसार प्रत्येक ग्रह एवं लग्न का पृथक्-पृथक् चक्र बनाकर विहित स्थानों में रेखा तथा विन्दुओं का स्थापन करना चाहिये। सौविध्य हेतु रेखाप्रद एवं विन्दुप्रद स्थानों का विवरण प्रस्तुत है। विशेष ज्ञान हेतु देखें बृहत्पाराशरहोराशास्त्र उ० भा० अ० ६६–७२)

सूर्याष्टक वर्ग–

रेखाप्रद स्थान ४८								विन्दुप्रद स्थान ४८							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०
१	३	१	३	५	६	१	३	३	१	१	१	१	१	३	१
२	६	२	५	६	७	२	४	५	२	५	२	२	२	५	२
४	१०	४	६	९	१२	४	६	६	४	६	४	३	३	६	५
७	११	७	९	११		७	१०	१२	५	१२	७	४	४	१२	७
८		८	१०			८	११		७		८	७	५		८
९		९	११			९	१२		८			८	८		९
									९				९		
१०		१०	१२			१०			१२			१०	१०		
११		११				११						१२	११		

चन्द्राष्टकवर्ग—

रेखा प्रद स्थान ४९

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	ल.
३	१	२	१	१	३	३	३
६	३	३	३	४	४	५	६
७	६	५	४	७	५	६	१०
८	७	६	५	८	७	११	११
१०	१०	९	७	१०	९		
११	११	१०	८	११	१०		
		११	१०	१२	११		
			११				

विन्दु प्रद स्थान ४७

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	ल.
१	२	१	२	३	१	१	१
२	४	४	६	५	२	२	२
४	५	७	९	६	६	४	४
५	८	८	१२	९	८	७	५
९	१२	९		१२	१२	८	७
१२		१२				९	८
						१०	९
						१२	१२

भौमाष्टक वर्ग—

रेखा प्रद स्थान ३९

सू.	चं	मं	बु.	गु.	शु.	श.	ल.
३	३	१	३	६	६	१	१
५	६	२	५	१०	८	४	३
६	११	४	६	११	११	७	६
१०		७	११	१२	१२	८	१०
११		८				९	११
		१०				१०	
		११				११	

विन्दु प्रद स्थान ५७

सू.	चं.	म.	बु.	गु.	शु.	श.	ल.
१	१	३	१	१	१	२	२
२	२	५	२	२	२	३	४
४	४	६	४	३	३	५	५
७	५	९	७	४	४	६	७
८	७	१२	८	५	५	१२	८
९	८		९	७	७		९
१२	९		१०	८	९		१२
	१०		१२	९	१०		
	१२						

बुधाष्टक वर्ग—

रेखा प्रद स्थान ५४

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	ल.
५	२	१	१	६	१	१	१
६	४	२	३	८	२	२	२
९	६	४	५	११	३	४	४
११	८	७	६	१२	४	७	६
१२	१०	८	९		५	८	८
	११	९	१०		८	९	१०
		१०	११		९	१०	११
		११	१२		११	११	

विन्दु प्रद स्थान ४२

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	ल.
१	१	३	२	१	६	३	३
२	३	५	४	२	७	५	५
३	५	६	७	३	१०	६	७
४	७	१२	८	४	१२	१२	९
७	९			५			१२
८	१२			७			
१०				९			
				१०			

जीवाष्टक वर्ग—

रेखा प्रद स्थान ५६

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	ल.
१	२	१	१	१	२	३	१
२	५	२	२	२	५	५	२
३	७	४	४	३	६	६	४
४	९	७	५	४	९	१२	५
७	११	८	६	७	१०		६
८		१०	९	८	११		७
९		११	१०	१०			९
१०			११	११			१०
११							११

विन्दु प्रद स्थान ४०

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	ल.
५	१	३	३	५	१	१	३
६	३	५	७	६	३	२	८
१२	४	६	८	९	४	४	१२
	६	९	१२	१२	७	७	
	८	१२			८	८	
	१०				१२	९	
	१२					१०	
						११	

शुक्राष्टक वर्ग—

रेखा प्रद स्थान ५२

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	ल.
८	१	३	३	५	१	३	१
११	२	५	५	८	२	४	२
१२	३	६	६	९	३	५	३
	४	९	९	१०	४	८	४
	५	११	११	११	५	९	५
	८	१२			८	१०	८
	९				९	११	९
	११				१०		११
	१२				११		

विन्दु प्रद स्थान ४४

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	ल.
१	६	१	१	१	६	१	६
२	७	२	२	२	७	२	७
३	१०	५	४	३	१२	६	१०
४		७	७	४		७	१२
५		८	८	६		१२	
६		१०	१०	७			
७			१२	१२			
९							
१०							

शन्यष्टक वर्ग—

रेखा प्रद स्थान ३९

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	ल.
१	३	३	६	५	६	३	१
२	६	५	८	६	११	५	३
४	११	६	९	११	१२	६	४
७		१०	१०	१२		११	६
८		११	११				१०
१०		१२	१२				११
११							

विन्दु प्रद स्थान ५७

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	ल.
३	१	१	१	१	१	१	२
५	२	२	२	२	२	२	५
६	४	४	३	३	३	४	७
९	५	७	४	४	४	७	८
१२	७	८	५	७	५	८	९
	८	९	७	८	७	९	१२
	९			९	८	१०	
	१०			१०	९	१२	
	१२				१०		

लग्नाष्टक वर्ग—

रेखा प्रद स्थान ४९

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	ल.
१	३	१	१	१	१	१	१
४	६	३	२	२	२		६
६	१०	६	४	४	३	४	१०
१०	११	१०	६	५	४	६	११
११	१२	११	८	६	५	१०	
१२			१०	७	८	११	
			११	६	९		
				१०			
				११			

विन्दु प्रद स्थान ४७

सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	ल.
१	१	२	३	३	६	२	१
२	२	४	५	८	७	५	२
५	४	५	७	१२	१०	७	४
७	५	७	९		११	८	५
८	७	८	१२		१२	९	७
९	८	९				१२	८
	९	१२					९
							१२

रेखा एवं विन्दुओं का फल—

सूर्य रेखा फल—

वर्त्तते रविरेखा च शत्रूणां च पराजयः ।
सहसा सिद्धिरेवात्र भावजेयमुपस्थिता ॥ ६८३ ॥

जहाँ पर सूर्य की रेखा हो उस भाव में सूर्य के जाने से शत्रुओं की पराजय, अकस्मात् कार्य सिद्धि तथा भाव से सम्बन्धित फल प्राप्त होता है ॥ ६८३ ॥

सूर्य विन्दु फल—

विन्दुः सकष्टफलदो महाव्यसनकारकः ।
रोगशोकप्रदाता च नृपोद्वेगमकारणात् ॥ ६८४ ॥

जिस भाव में सूर्य के विन्दु हों (उस भाव में सूर्य के जाने पर) कष्ट की प्राप्ति, दुर्व्यसन में प्रवृत्ति, रोग और शोक की प्राप्ति तथा अकारण राजकीय उलझने आती है ॥ ६८४ ॥

चन्द्र रेखा फल—

ददाति शशिरेखा च वस्त्राभरणभूषणम् ।
लभते प्रभुसम्मानं कर्मप्राप्तिमिवाम्बरम् ॥ ६८५ ॥

जिस भाव में चन्द्रमा की रेखा हो (उसमें चन्द्र युति होने पर) वस्त्र और आभूषणों से सौन्दर्य वृद्धि, राजकीय सम्मान तथा सभी कार्यों में सिद्धि प्राप्त होती है ॥ ६८५ ॥

चन्द्र विन्दु फल—

विन्दुः कष्टफलं चैव कलहं वैरिभिः सह।
दुःस्वप्नदर्शनं नित्यं धननाशमवाप्नुयात् ॥ ६८६ ॥

चन्द्रमा के विन्दु जिन भावों में होगें वहाँ चन्द्रमा के जाने पर कष्ट, शत्रुओं के साथ विवाद, दुःस्वप्नों का दर्शन तथा प्रतिदिन धन का नाश होता है ॥६८६॥

भौम रेखा फल—

ददाति भौमजा रेखा-अर्थप्राप्ति सदैव हि।
आरोग्यमायुर्वृद्धि च कायकान्ति प्रदापयेत् ॥ ६८७ ॥

भौम से उत्पन्न रेखायें निरन्तर धन लाभ कराने वाली आयु एवं आयु की वृद्धि करने वाली होती है तथा शरीर में कान्ति की वृद्धि करती हैं ॥ ६८७ ॥

भौम विन्दु फल—

विन्दुस्तस्य फलं शश्वदुदराग्निरुजस्सदा।
शिरः शूलः प्रजायेत रक्तपित्तरुजार्दितः ॥ ६८८ ॥

निरन्तर मन्दाग्नि प्रभृति उदर रोग, सिर पीडा तथा रक्त-पित्त सम्बन्धी रोग की प्राप्ति ही भौम के विन्दुओं का फल है ॥ ६८८ ॥

बुध रेखा फल—

बुधस्य रेखया सौख्यं मिष्ठान्नं लभते सदा।
दानधर्मरतश्चैव द्विजदेवाग्निपूजकः ॥ ६८९ ॥

बुध की रेखाओं से जातक सदैव सुख तथा मिष्ठान्न का भोजन करता है तथा दान-धर्म की क्रियाओं में अनुरक्त एवं ब्राह्मण, देवता और अग्नि की पूजा करने वाला होता है ॥ ६८९ ॥

बुध विन्दु फल—

विन्दुर्भङ्गप्रदश्चैव कलहं वैरिभिः सह।
दुःस्वप्नदर्शनं नित्यमवेलाभोजनं तथा ॥ ६९० ॥

बुध अपने विन्दु युक्त भावों में हो तो कार्यों की हानि, शत्रुओं से कलह, दुस्वप्न दर्शन एवं निरन्तर असमय में भोजन प्राप्त होता है ॥ ६९० ॥

गुरु रेखा फल—

रेखा जैवी जनयति सदा वित्तसौख्यादिपुष्टि
जायाभोगं जनयतितरां शत्रुहन्त्री च नित्यम्।
मानोत्साहो विभवमतुलं वस्त्रहेमादिवृद्धि
प्राप्यं सौख्यं सकलमतुलं बन्धुवर्गोपहारम् ॥ ६९१ ॥

बृहस्पति अपनी रेखाओं से युक्त भावों में हो तो सदैव, धन-धान्य सुख की प्रबलता, स्त्री का अतिशय सुख, निरन्तर शत्रुओं का नाश, सम्मान, उत्साह वृद्धि, अतुल सम्पत्ति, वस्त्र एवं स्वर्ण की वृद्धि, सभी प्रकार के उत्कृष्ट सुख तथा अपने बन्धु वर्गों से आदर प्राप्त होता है ।। ६६१ ।।

गुरु विन्दु फल—

विन्दुः कष्टं विगतधनधीर्मानसे वित्तचिन्ता
मार्गे भङ्गं जनयति सदा पातनं वाहनाद्वा ।
लोकादिष्टं भवति कलहं वाङ्मयेनापमानं
शत्रुद्वेषं व्ययमपि सदा साहसात्कार्यहानिः ।। ६६२ ।।

बृहस्पति यदि अपने विन्दु प्रधान भावों से युक्त हो तो कष्ट, धन हानि, बुद्धि हीनता, मन में धन की चिन्ता सदैव मार्ग में हानि, वाहन से पतन (वाहन-दुर्घटना), लोगों के संकेत पर कलह, बोलने मात्र से अपमान शत्रु से द्वेष, सदैव व्यय की वृद्धि तथा साहस से कार्य का नाश होता है ।। ६६२ ।।

शुक्र रेखा फल—

शौक्री रेखा जनयति नरं राज्यसम्मानवृद्धि
कन्यालाभं सुसुखवपुषं दीर्घमायुश्च धत्ते ।
कैश्चित्क्रीडा भवति बहुधा ज्ञानमेकार्थसिद्धि
लक्ष्मीलाभं जनयति सुखं सौख्यसंपत्तिवृद्धिम् ।। ६६३ ।।

शुक्र अपनी रेखाओं में युक्त भाव में हो तो मनुष्य को राजकीय सम्मान में वृद्धि, कन्या लाभ, शारीरिक सुख, दीर्घायु, किसी क्रीडा में निपुणता, ज्ञान की वृद्धि, मनोभिलाषाओं की सिद्धि, लक्ष्मी लाभ, तथा सुख एवं सम्पत्ति की वृद्धि होती है ।। ६६३ ।।

शुक्र विन्दु फल—

विन्दुः कष्टं भवति हि रिपोर्वित्तनाशप्रदाता
जायापीडा कलहमतुलं भूमिनाशं च कष्टम् ।
बुद्धिभ्रंशं व्ययमपि सदा पातनं वाजिभिर्वा
मार्गे भङ्गं जनयति सदा सर्वकालं जनानाम् ।। ६६४ ।।

शुक्र अपने विन्दु युक्त भाव में हो तो शत्रुओं द्वारा कष्ट, धन नाश स्त्री को कष्ट, भीषण कलह, भूमि की हानि, विविध कष्ट, बुद्धि का विभ्रम अपव्यय घोड़े से गिरने (वाहन दुर्घटना) का भय तथा मार्ग में हानि होती है। इसी प्रकार के कष्ट मनुष्यों को सदैव हुआ करते हैं ।। ६६४ ।।

शनि रेखा फल—

सौरी रेखा जनयति फलं भृत्यहेत्वर्थसम्पत्
कार्ये प्राप्तिं नृपतिसचिवं साधुसम्पर्कदात्री ।
भूमिप्राप्तिं कितवजयिता स्नानदानार्च्चनेषु
मिष्टान्नं स्यान्नृपतिवरदं धान्यसस्येषु वृद्धिः ॥ ६१५ ॥

शनि की रेखा दास कर्म से अथवा दासों (नौकरों) द्वारा सम्पत्ति, कार्य में लाभ, राजा का मन्त्री पद, साधु पुरुषों का सान्निध्य दिलाने वाली, भूमि लाभ, धूर्तों पर विजय, स्नान-दान-पूजन में रुचि, मिष्ठान्न भोजन राज्य सम्मान तथा धन-धान्य की वृद्धि करने वाली होती है ॥ ६१५ ॥

शनि का विन्दु फल—

विन्दुः कष्टं नृपतिभयदो बन्धुपीडाविवृद्धयै
घातः शस्त्रैर्विषमपतितैर्वित्तसंहारकर्ता ।
चित्तोद्वेगो भवति बहुधा भूमिनाशः कलिर्वा
बुद्धिभ्रंशो भवति च सदा वाहने हानिरेव ॥ ६१६ ॥

शनि अपने विन्दु युक्त भाव में हो तो राजा से भय, बन्धुओं के क्लेश में वृद्धि, शस्त्र से आघात, ऊँचाई से पतन, धन का नाश, प्रायः मन की अशान्ति, भूमि नाश अथवा कलह, बुद्धि हीनता तथा सदैव वाहनों से हानि होती है ॥ ६१६ ॥

सर्वाष्टक वर्ग[1] में रेखा फल—

कष्टं स्याच्चैकरेखायां द्वाभ्यामर्थक्षयो भवेत् ।
त्रिभिःक्लेशं विजानीयाच्चतुर्भिः समता मता ॥ ६१७ ॥

समुदायाष्टक वर्ग में यदि एक रेखा हो तो कष्ट, दो रेखा हो तो धन नाश, तीन रेखा हो तो क्लेश, तथा चार रेखा हो तो सम अर्थात् लाभ-हानि तुल्य होती है ॥ ६१७ ॥

पञ्चभिःक्षेममारोग्यं षड्भिरर्थागमो भवेत् ।
सप्तभिः परमानन्दमष्टाभिः सर्वकामदम् ॥ ६१८ ॥

पांच रेखायें हो तो कल्याण, छः में धन का आगम, सात हों तो परम आनन्द की प्राप्ति, आठ रेखा हो तो सभी प्रकार की इष्ट सिद्धि होती है ॥६१८॥

---

१. सर्वाष्टक वर्ग में सूर्यादि ग्रहों के एवं लग्नाष्टक वर्ग में जिस भाव या राशि पर जितनी रेखायें प्राप्त हुई है। उन समस्त रेखाओं का योग कर सभी भावों में रख देने से सर्वाष्टक वर्ग होता है।

मरणं चतुर्दशभिः सक्रूरैः पञ्चदशभिर्वा ।
षोडशभिरङ्गपीडा भवति शरीरे महाव्याधिः ॥ ६९९ ॥

चौदह रेखा हो या क्रूर ग्रहों से युक्त १५ रेखा हो तो मृत्यु (अथवा मृत्यु तुल्य पीड़ा) होती है। सोलह रेखायें हो तो अङ्गों में कष्ट तथा भयङ्कर रोग होता है ॥ ६९९ ॥

सप्तदशभिर्दुःखमष्टादशभिर्धनक्षयः प्रोक्तः ।
बान्धवपीडा बह्वी भवति तथैकोनविंशत्या ॥ ७०० ॥

सत्रह रेखायें हो तो दुःख, १८ रेखायें हो तो धन की क्षति, तथा उन्नीस रेखायें हो तो भाई-बन्धुओं को अधिक पीड़ा होती है ॥ ७०० ॥

व्ययकलहो विंशतिभिर्गदो दुःखं तथैकविंशत्या ।
कुमतिर्द्वाविंशतिभिर्दैन्यं च पराभवो विफलम् ॥ ७०१ ॥

यदि बीस रेखायें हो तो कलह तथा अधिक व्यय, इक्कीस रेखायें हो तो रोग और दुःख बाइस रेखायें हो तो दुर्बुद्धि पराजय एवं असफलता मिलती है ॥ ७०१॥

नूनं त्रिवर्गहानिर्भवति नराणां त्रिविंशतिभिर्नित्यम् ।
द्रव्यक्षयस्त्वकस्माद्विंशतिभिश्चतुर्भिरधिकाभिः ॥ ७०२ ॥

रेखाओं का योग यदि तेइस हो तो त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ और काम) की निश्चित हानि होती है। यदि कुल २४ रेखायें हो तो आकस्मिक द्रव्य का नाश होता है ॥ ७०२ ॥

करतलगतमपि च धनं नश्यति नराणां पञ्चविंशतिभिः ।
षड्विंशतिभिः क्लेशः समता स्यात्सप्तविंशतिभिः ॥ ७०३ ॥

पचीस रेखाओं का योग हो तो हाथ में आया हुआ धन भी नष्ट हो जाता है। छब्बिस रेखायें हो तो क्लेश तथा सत्ताइस योग हो तो समता (हानि-लाभ तुल्य) होती है ॥ ७०३ ॥

अष्टाधिकविंशत्या द्रव्यागमनं यथासुखं भवति ।
एकोनत्रिंशतिभिर्लोकेषु नरः पूज्यतामेति ॥ ७०४ ॥

अट्ठाइस योग हो तो सुख पूर्वक द्रव्य लाभ, उनतिस हो तो मनुष्य लोक में पूजित होता है ॥ ७०४ ॥

मानं सुकृतव्याप्तिस्त्रिंशत्या नास्ति संदेहः ।
सुकीर्ति सौख्यं नृणामेकाभिरधिकाभिः स्यात् ॥ ७०५ ॥

यदि रेखाओं का योग तीस हो तो निःसन्देह सम्मान तथा कीर्ति की वृद्धि होती है। इकतिस योग हो तो सत्कीर्ति एवं सुख से युक्त मनुष्य होता है ॥७०५॥

राज्यादिफलप्राप्तिः कथिता शरकृति यावत् ॥ ७०६ ॥

रेखाओं का योग ३२ से अधिक ४५ तक हो तो राज्य की प्राप्ति होती है ॥ ७०६ ॥

रेखास्थाने तु सम्प्राप्ता यदा पापशुभग्रहाः ।
शुभास्ते च विजानीयाद्विन्दुस्थाने च दुःखदाः ॥ ७०७ ॥

रेखा स्थान (जहाँ शुभ प्रद रेखायें हो) में पाप ग्रह और शुभ ग्रह दोनों ही शुभ फल देते हैं । इसी प्रकार विन्दु प्रधान भाव में पाप और शुभ दोनों प्रकार के ग्रह दुःख कारक अशुभ फल प्रदान करते हैं ॥ ७०७ ॥

शुभा च कथिता रेखा विन्दुश्च कथितोऽशुभः ।
समैः समफलं ज्ञेयं गोचरे यदि नान्तरम् ॥ ७०८ ॥

रेखायें शुभप्रद तथा विन्दु अशुभ फल कारक कहे गये हैं । यदि दोनों की संख्या समान हो तो फल में भी शुभाशुभ की समानता रहती है । इस प्रकार का फल तभी मिलता है जब गोचर मे किसी प्रकार का अन्तर (विपरीत योग कारक स्थिति) न हो ॥ ७०८ ॥

यदि संस्थितरेखायां फलं पुंसां प्रजायते ।
लक्ष्मीभोगस्तथा सौख्यं सार्वभौमजनेशता ॥ ७०९ ॥

यदि रेखाओं के स्थान में स्थित ग्रहों की दशा हो (अथवा किसी ऐसे ग्रह का विचार कर रहे हों जिसके स्थान पर रेखायें अधिक हों) तो लक्ष्मी (धन), का उपभोग, सुख तथा समस्त भूमण्डल मे लोकप्रियता प्राप्त होती है ॥ ७०९ ॥

यदि संस्थितविन्दूनां फलं पुंसां प्रजायते ।
उद्वेगहानी रोगश्च मृत्युश्चास्य क्रमेण च ॥ ७१० ॥

विन्दु युक्त ग्रह अथवा विन्दु युक्त भाव का फल मनुष्य के लिए क्रम से उद्वेग, हानि, रोग और मृत्यु कारक होता है ॥ ७१० ॥

यो ग्रहो गोचरे श्रेष्ठस्त्वष्टवर्गेषु मध्यमः ।
अधमस्तु दशायां हि स ग्रहो ह्यधमाधमः ॥ ७११ ॥

जो ग्रह गोचर मे श्रेष्ठ, अष्टक वर्ग में मध्यम तथा दशा में अधम हो तो वह ग्रह अधमाधम होता है ॥ ७११ ॥

आयु विचार—

पिण्डायु साधन—

नन्देन्दवो बाणयमाःशरक्ष्मा दिवाकराः पञ्चभुवः कुपक्षाः ।
नखाश्च भास्करप्रमुखग्रहाणां पिण्डायुषोऽब्दा निजतुङ्गगानाम् ॥ ७१२ ॥

अपनी-अपनी उच्च राशियों में स्थित सूर्यादि ग्रहों के क्रम से १९, २५, १५, १२, १५, २१, २० पिण्डांक कहे गये हैं। अर्थात् सूर्य का १९ वर्ष, चन्द्र का २५ वर्ष, मंगल का १५ वर्ष, बुध का १२ वर्ष, गुरु का १५ वर्ष, शुक्र का २१ वर्ष तथा शनि का २० वर्ष पिण्डाङ्क होता है ॥ ७१२ ॥

निजोच्चशुद्धः खचरो विशोध्यो भमण्डलात्षड्भवनोनकश्चेत् ।
यथास्थितः षड्भवनाधिकश्चेल्लिप्तीकृतः संगुणितो निजाब्दैः ॥ ७१३ ॥
तत्र खाभ्ररसचन्द्रलोचनैरुद्धृते सति यदाप्यते फलम् ।
वर्षमासदिननाडिकादिकं तद्धि पिण्डभवमायुरुच्यते ॥ ७१४ ॥

स्पष्ट ग्रह के राश्यादि से उस ग्रह के उच्च राश्यादि मान को घटाने से शेष यदि ६ राशि से अल्प हो तो उसे १२ राशि में घटाकर, यदि ६ राशि से अधिक हो तो यथावत् शेष को कलात्मक बनाकर अपने ही पिण्डाङ्क वर्ष से गुणा कर २१६०० से भाग देने पर लब्धि वर्ष, मास, दिन, घटी, पल ग्रह की पिण्डायु होती है ॥ ७१३-१४ ॥

(सभी ग्रहों की आयु का योग मनुष्य की आयु होती है)।

उदाहरण—स्पष्ट सूर्य ९।१०।२९।४५ उच्च ०।१० पिण्डाङ्क १९

```
 ९।१०।२९।४५
−०।१०।
 ९। ०।२९।४५
```

शेष ६ राशि से अधिक है अतः इसे १२ राशि में नहीं घटाया। इसके कलात्मक मान १६२२९।४५ को सूर्य के पिण्डाङ्क १९ गुणाकर २१६०० से भाग दिया—

```
              १६२२९।४५
                 ×।१९
२१६००)३०८३६५।१५(१४।३।९।२६।१५
       २१६००
        ९२३६५
        ८६४००
         ५९६५           २०३८५०          ५४००
         ×१२+१५         १९४४००           ×६०
        ७१५९५             ९४५०        ३२४०००
        ६४८००              ×६०        २१६००
         ६७९५           ५६७०००        १०८०००
          ×३०            ४३२००        १०८०००
       २०३८५०           १३५०००           ×
                        १२९६००
                          ५४००
```

सूर्य की पिण्डायु १४ वर्ष ३ मास ९ दिन २६ घटी १५ पल हुई।

दीर्घायु पुरुष का लक्षण—

ये धर्मकर्मनिरता विजितेन्द्रिया ये ये पथ्यभोजनरता द्विजदेवभक्ताः ।
लोके नरा दधति ये कुलशीललीलास्तेषामिदं कथितमायुरुदारधीभिः ॥७१५॥

उदार बुद्धिवाले विद्वानों के कथनानुसार जो धर्म कर्म में निरत, इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखने वाला, अपने स्वास्थ्य के अनुरूप सन्तुलित आहार लेने वाला, ब्राह्मण और देवता का भक्त, एवं अपने कुल परम्परागत आचार-विचार का अनुसरण करने वाला होता है वही व्यक्ति संसार में उक्त गणितागत आयु का पूर्ण भोग करता है ॥ ७१५ ॥

ये पापलुब्धाश्चौराश्च देवब्राह्मणनिन्दकः ।
परदाररतास्तेषामकाले मरणं ध्रुवम् ॥ ७१६ ॥

जो व्यक्ति पापी, लोभी, चोर, देवताओं और ब्राह्मणों की निन्दा करने वाले, परस्त्री में आसक्त होते हैं उनकी अकाल (समय से पूर्व) मृत्यु निश्चित रूप से होती है ॥ ७१६ ॥

अंशोद्भवं लग्नबलात्प्रसाध्यमायुश्च कर्मोद्भवमर्कवीर्यात् ।
नैसर्गिकं चन्द्रबलाधिकत्वादायुर्निरुक्तं हि मया विचार्या ॥ ७१७ ॥

लग्न बलवान हो तो अंशायु, सूर्य बलवान हो तो कर्मज (पिण्ड) आयु एवं चन्द्र बलवान हो तो नैसर्गिक आयु ग्रहण करनी चाहिये । इस प्रकार बल विचार कर आयु साधन करना चाहिये ॥ ७१७ ॥

नैसर्गिक आयु—

विंशतिरेकं द्वावथ नवधृतिविंशच्च पञ्चाशत् ।
अब्दाः क्रमशो ज्ञेयाः सूर्यादीनां निसर्गभवाः ॥ ७१८ ॥

नैसर्गिक आयु ज्ञान के लिए सूर्यादि ग्रहों के वर्ष प्रमाण क्रम से २०, १, २, ९, १८, २०, ५० बताये गये हैं । अर्थात् सूर्य का २० वर्ष, चन्द्र का १ वर्ष, मंगल का २ वर्ष, बुध का ९ वर्ष, गुरु का १८ वर्ष, शुक्र का २० वर्ष तक शनि का ५० वर्ष नैसर्गिक वर्ष प्रमाण होता है ॥ ७१८ ॥

विधि—पिण्डायु की तरह निसर्गायु का भी साधन कुछ विद्वानों ने किया है । परन्तु वास्तविक निसर्गायु का प्रमाण १२० वर्ष होता है । जो प्रत्येक ग्रहों में विभक्त करके रखा गया है । इसका अभिप्राय यह है कि मनुष्य की स्वाभाविक आयु १२० वर्ष होती है ।

अंशायु साधन—

नवांशयो ग्रहाः स्थाप्यास्तन्मध्ये विग् वियोजयेत् ।
शेषं यत्तत् त्रिभिर्गुण्यं चाकुमध्ये पुनस्त्यजेत् ॥ ७१९ ॥

विंशोत्तरीदशावर्षैः स्वकीयैर्गुणयेत्पुनः ।
भागो नवत्या दातव्यो लब्धाङ्को वर्षसंज्ञकः ॥ ७२० ॥

ग्रहों के अंशादि मान में १० घटाकर शेष को ३ से गुणाकर गुणनफल को ९० में घटाकर शेष को अपने विंशोत्तरी दशा वर्ष से गुणा कर ९० से भाग देने पर अंशायु होती है ॥ ७१९–२० ॥

उदाहरण—स्प. सूर्य. ६।१०।२६।४५

```
 १०।२६।४५          ९०।  ०।  ०
−१०                −१।२६।१०

 ०।२६।४५           ८८।३०।४५ शेष
     ×३
 १।२१।१५
```

शेष को सूर्य की विंशोत्तरी महादशा वर्ष ६ से गुणा कर ९० से भाग दिया—

```
      ८८।३०।४५
           ×६
९० ) ५३१। ४।३० ( ५।१०।२५।४०
     ४५०
      ८१×१२
      ९७२
        ४
      ९७६
      ९०
       ७६×३०
       २२८०
          ३०
       २३१०
       १८०
        ५१०
        ४५०
         ६०×६०
        ३६००
        ३६०
```

सूर्य की अंशायु ५ वर्ष १० मास २५ दिन ४० घटी हुई । इसी प्रकार सभी ग्रहों की अंशायु का साधन कर योग करने से स्पष्ट अंशायु होती है ।

ग्रह आयु साधन—

तत्स्पांशकला गुणिता द्वादशनवभिर्ग्रहस्य भगणेभ्यः ।
द्वादशहृतावशेषेऽब्दमासदिननाडिकाः क्रमशः ॥ ७२१ ॥

ग्रहों के राश्यादि मान को १२ से तथा ६ से गुणा कर गुणनफल के भगणादि मान में १२ से भाग देने पर शेष ग्रह की वर्षात्मक आयु होती है ॥ ७२१ ॥

उदाहरण—स्पष्ट सूर्य (६।१०।२६।४५) १२×६—६६०।५३।३३।०। ६६०में १२का भाग देनेसे भगण ८२ शेष ६ बचा अतः भगणादि मान ८२।६।५३।३३ हुआ ८२ में १२ का भाग देने से शेष १०।६।५३।३३ वर्षादि आयु हुई। दिन ५३ को मास बनाने पर आयुमान १० वर्ष ७ मास २३ दिन ३३ घटी हुआ।

लग्नायु साधन—

होरादायोऽप्येवं बलयुक्तान्यानि राशितुल्यानि।
वर्षाणि सम्प्रयच्छन्त्यनुपाताच्चांशकादिफलम् ॥ ७२२ ॥

इसी प्रकार बल युक्त लग्न भी अपनी राशि तुल्य वर्ष आयु के रूप में प्रदान करता है। मासादि का ज्ञान लग्न के भुक्त अंशों के आधार पर करना चाहिये। (राशि तुल्य वर्ष प्रमाण होता है। अतः ३० अंश में १२ मास होंगे। इसी आधार पर भुक्त अंशो से अनुपात द्वारा मास और दिन का साधन करना चाहिये)॥७२२॥

आयु साधन में विशेष—

वर्गोत्तमस्वराशिद्रेष्काणनवांशके सकृद्द्विगुणम्।
वक्रोच्चयोस्त्रिगुणितं द्वित्रिगुणत्वे सकृत्त्रिगुणम् ॥ ७२३ ॥

जो ग्रह अपने वर्गोत्तम, स्वराशि, द्रेष्काण, एवं नवमांश में हो उनको आयु को दूना तथा जो ग्रह वक्री या अपनी उच्च राशि में हो उनके आयु मान को तीन गुना कर देना चाहिये। जिन ग्रहों को दूना और तीन गुना दोनों की आवश्यकता पड़े उसे केवल एक बार तीन गुना करने से स्पष्ट आयु होती है ॥ ७२३ ॥

पुनः विशेष—

शत्रुक्षेत्रे त्र्यंशं नीचेऽर्द्धं सूर्यलुप्तकिरणाश्च।
क्षपयन्ति स्वायुर्दायान्नास्तं यातौ रविजशुक्रौ ॥ ७२४ ॥

इति जन्मपत्रीपद्धतौ भावचक्रानयनभावाध्यायद्वित्रिचतुः
पञ्चग्रहषड्ग्रहसप्तग्रहफलाध्यायो चतुर्थः ॥ ४ ॥

जो ग्रह अपने शत्रु की राशि में स्थित होते हैं वे अपनी आयु का तृतीयांश तथा जो सूर्य के सान्निध्य से अस्त हो जाते हैं वे अपनी आयु का आधा भाग नष्ट कर देते हैं। आयुर्दाय प्रसङ्ग में शनि और शुक्र अस्तगत नहीं माने जाते। (इस प्रकार स्पष्टायु से उक्त नियमानुसार संशोधन करने से स्पष्ट आयु सिद्ध होती है।)॥७२४॥

मानसागरी पद्धति के चतुर्थ अध्याय का मनोरमा
हिन्दी अनुवाद समाप्त ॥ ४ ॥

पञ्चमोऽध्यायः

मंगलाचरण

प्रणम्य सर्वज्ञमनन्यचेतसं लसत्तमं ज्ञानमणि महोदधिम् ।
दशाफलं वच्मि महर्षिभाषितं स्वबोधरूपं स्वगुरूपदेशात् ।। १ ।।

सर्वज्ञ, एक मात्र हृदयगम्य, प्रकाशमान (तेजस्वी), ज्ञानरूपी मणियों के महासागर, उस परब्रह्म को प्रणाम कर गुरुओं से प्राप्त ज्ञान के आधार पर महर्षियों द्वारा कहे गये दशा फल को अपनी समझ के अनुसार लिख रहा हूं ।।१।।

युग के अनुसार दशा—

कृते नैसर्गिकायुः स्यात् त्रेतायां पैण्डमेव च ।
अंशायुर्द्वापरे प्रोक्तं नक्षत्रायुः कलौ युगे ।। २ ।।

सत्य युग में नैसर्गिक आयु, त्रेता में पिण्डायु, द्वापर में अंशायु तथा कलियुग में नक्षत्रायु का साधन करना चाहिये ।। २ ।।

विंशोत्तरी दशा वर्ष प्रमाण—

सूर्ये विंशत्तमो भागः शशिनि द्वादशः स्मृतः ।
सूर्यषड्भागयुग्भौमदशा चान्तर्दशा भवेत् ।। ३ ।।
आदित्यात्त्रिगुणो राहु रविचन्द्रयुतो गुरुः ।
सूर्यस्तु द्विगुणो भौमे-मिलितस्तु शनिर्भवेत् ।। ४ ।।
बुधश्चन्द्रयुतो भौमः केतुर्मङ्गलवत्सदा ।
चन्द्रमा द्विगुणः शुक्रः परमायुः प्रकीर्तितम् ।। ५ ।।

मनुष्य के परमायु का बीसवां ($\frac{1}{20}$) भाग सूर्य का दशा वर्ष, बारहवां भाग चन्द्रमा का, सूर्य के दशा का छठां भाग सूर्य दशा में जोड़ने से मंगल का दशा वर्ष, सूर्य से तीनगुना राहु का, सूर्य और चन्द्रमा के योग तुल्य वर्ष गुरु का, सूर्य का दो गुना मंगल से युक्त होकर शनि का, चन्द्र और भौम के योग तुल्य बुध का, मंगल की तरह केतु का तथा चन्द्रमा का दो गुना शुक्र का दशा वर्ष प्रमाण होता है ।। ३–५ ।।

स्पष्ट ज्ञानार्थ उदाहरण देखें—

मनुष्य की परमायु—१२० वर्ष ।

$$\frac{\text{परमायु}}{२०} = \frac{१२०}{२०} = ६ \text{ वर्ष सूर्य की दशा}$$

$$\frac{\text{मरमायु}}{१२} = \frac{१२०}{१२} = १० \text{ वर्ष चन्द्रमा की दशा}$$

$$\frac{\text{सूर्य}}{६} + \text{सूर्य} = \frac{६}{६} + ६ = १ + ६ = ७ \text{ वर्ष मंगल की दशा}$$

सूर्य × ३ = ६ × ३ = १८ वर्ष राहु की दशा

सूर्य + चन्द्र = ६ + १० = १६ वर्ष गुरु की दशा

(सूर्य × २) + भौम = ६ × २ + ७ = १९ वर्ष शनि की दशा

चन्द्र + भौम = १० + ७ = १७ वर्ष बुध की दशा

भौम = केतु = ७ = ७ वर्ष केतु की दशा

चन्द्रमा × २ = १० × २ = २० वर्ष शुक्र की दशा

साधित दशावर्ष—

षड् दश सप्ताष्टादश षोडशनन्देन्दवो मुनिखशाङ्काः ।
सप्त नखा वर्षाणि हि रव्यादीनां यथाक्रमतः ॥ ६ ॥

सूर्य की ६ वर्ष, चन्द्रमा की १० वर्ष, मंगल की ७ वर्ष, राहु की १८ वर्ष, गुरु की १६ वर्ष, शनि की १९ वर्ष, बुध की १७ वर्ष, केतु की ७ वर्ष तथा शुक्र की २० वर्ष विंशोत्तरी क्रम से दशा होती है ॥ ६ ॥

जन्म समय मे दशा ज्ञान—

कृत्तिकातः समारभ्य भरण्यवधि गण्यते ।
विंशोत्तरीदशाचक्रं षड्त्रिंशद्भिश्च कोष्ठकैः[1] ॥ ७ ॥

---

१. जन्म नक्षत्र से दशाज्ञान की दूसरी रीति—

दास्रादितो जन्म भसंख्यका या द्वयूनिता साङ्कहृतावशेषात् ।
अर्केन्दुराजीशबुकेशु पूर्वाः दशाधिपाः संकथिता मुनीन्द्रैः ॥

जन्मनक्षत्र की अश्विन्यादि क्रम से जो संख्या हो उसमें दो घटाकर शेष में ९ का भाग देने से एक आदि शेष संख्या के अनुसार क्रम से सूर्य-चन्द्र-मंगल-राहु-गुरु-शनि-बुध-केतु और शुक्र की दशा होती है। (अर्थात् १ शेष हो तो सूर्य, दो हो तो चन्द्र आदि ।)

उदाहरण—कल्पना किया किसी का जन्म नक्षत्र पुष्य है।

छत्तिस कोष्ठकों वाला चक्र बनाकर प्रथम पंक्ति के नव कोष्ठकों में विंशोत्तरी क्रम से सूर्यादि नव ग्रहों को स्थापित कर नीचे वाले कोष्ठकों में कृत्तिका से आरम्भ कर भरणी पर्यन्त २७ नक्षत्रों को तीन पंक्तियों (प्रत्येक पंक्ति में क्रम से ९ नक्षत्र) में स्थापित करने से दशा बोधक चक्र बनेगा। (इस प्रकार प्रत्येक ग्रह

अश्विनी से पुष्य तक ८ संख्या हुई। ८–२–६ ६ में ९ का भाग देने से लब्धि० तथा शेष ६ बचा अतः उक्त क्रमानुसार छठी दशा शनि की हुई। दशाज्ञान हो जाने पर दशा का भुक्त भोग्य काल साधन कर दशा चक्र का निर्माण किया जाता है। अतः प्रसङ्गानुसार भुक्त भोग्य साधन विधि भी प्रदर्शित कर रहा हूं।

दशाब्दमानेन हतं भयातं भभोगमानेन हृतं फलं यत्।
वर्षादिकं भुक्तमुशन्ति धीरा भोग्यं दशाब्दान्तरितं दशायाः॥

जन्म नक्षत्र के गतमान (भयात) को दशावर्ष से गुणाकर नक्षत्र के भोग प्रमाण (भभोग) से भाग देने पर वर्ष-मास-दिन-घटी में दशा का भुक्त मान होता है। दशाप्रमाण में भुक्तमान को घटाने से दशा का भोग्य वर्षादि मान होता है।

उदाहरण—पुष्य नक्षत्र का भयात २५।२० भभोग ५९।३५ दशापति शनि वर्ष प्रमाण १९

भयात २५।२० का पलात्मक मान १५२० को दशा वर्ष १९ से गुणा कर गुणन फल (१५२०×१९)=२८८८० को भभोग के पलात्मक मान ३५७५ से भाग दिया—

```
३५७५)२८८८०(८।०।२८
     २८६००
     -----
       २८०
      ×१२
      -----
      ३३६०
         ०
      -----
      ३३६०
       ×३०
     ------
    १००८००
      ७१५०
     ------
     २९३००
     २८६००
     ------
       ७००
```

लब्धि ८ वर्ष ० मास २८ दिन भुक्त मान
अतः दशा वर्ष १९।०।०
−८।०।२८
१०।११।२

भोग्य मान १० वर्ष ११ मास २ दिन

के नीचे तीन-तीन नक्षत्र होवेंगे। जिस नक्षत्र में जन्म हो उस नक्षत्र की पंक्ति का ग्रह दशा का स्वामी होता है) ॥ ७ ॥

दशा बोधक चक्र

सूर्य ६व.	चन्द्र १०व.	भौम ७व.	राहु १८व.	गुरु १६व.	शनि १९व.	बुध १७व.	केतु ७व.	शुक्र २०व.
कृत्ति.	रोहि.	मृग.	आर्द्रा	पुन.	पुष्य	आश्ले.	मघा	पू.फा.
उ.फा.	हस्त	चित्रा	स्वाती	विशा.	अनु.	ज्येष्ठा	मूल	पू.षा.
उ.षा.	श्रव.	धनि.	शत.	पू. भा.	उ.भा.	रेव.	अश्वि.	भर

अन्तर्दशा साधन—

दशा दशाहता कार्या दशभिर्भागमाहरेत्।
यल्लब्धं सो भवेन्मासस्त्रिंशघ्निघ्नं दिनं भवेत् ॥ ८ ॥

जिस ग्रह की महा दशा मे जिस ग्रह की अन्तर्दशा अभीष्ट हो उन दोनों ग्रहों के महादशा वर्ष का परस्पर गुणा कर १० से भाग देने पर लब्धि मास तथा शेष को ३० से गुणाकर पुनः दश का भाग देने से दिन होता है। इस प्रकार अभीष्ट ग्रह की अन्तर्दशा का मान मास और दिन में आ जाता है ॥ ८ ॥

विशेष—३० से गुणा कर १० का भाग देने का अभिप्राय केवल ३ से गुणा करने पर भी सिद्ध हो सकता है क्योंकि $\frac{\text{शेष} \times ३०}{१०}$ = शे० × ३ होता है।

उदाहरण—सूर्य की महादशा में सूर्यादि ग्रहों का अन्तर ज्ञात करना है।

अतः $\frac{६ \times ६}{१०} = \frac{३६}{१०}$ = १०)३६(३।१८
३०
६ × ३०
१८० (अथवा शेष ६ × ३=१८ दिन)
१०
८०
८०
×

सूर्य का अन्तर ३ मास १८ दिन

इसी प्रकार $\frac{६ \times १०}{१०} = \frac{६०}{१०}$ = ६ मास चन्द्रमा का अन्तर

$\frac{६ \times ७}{१०} = \frac{४२}{१०}$ = लब्धि ४, शेष २ अतः २ × ३=६ दिन

४ मास ६ दिन मंगल का अन्तर

इसी प्रकार सभी ग्रहों की अन्तर्दशा सिद्ध होगी।

उपदशा (प्रत्यन्तर) साधन—

स्वान्तर्दशादिनवृन्दं च हन्यात् स्वस्वाब्दैर्ग्रहस्य च ।
विंशोत्तरशतेनाप्तं फला घटयोऽवशेषकम् ॥ ९ ॥

अन्तर्दशा को दिनात्मक बनाकर जिस ग्रह की उपदशा ज्ञात करनी हो उसके महादशा वर्ष से गुणा कर १२० वर्ष से भाग देने पर दिन-घटी-पल में उपदशा का मान आता है ॥ ९ ॥

उदाहरण—सूर्य की महादशा एवं सूर्य और चन्द्रमा की अन्तर्दशा में दोनों की उपदशा ज्ञात करनी है ।

सूर्यान्तर ३ मास १८ दिन ।

दिनात्मक ३ × ३० + १८ = १०८

$\frac{१०८ \times ६}{१२०}$ = लब्धि ५ दिन २४ घटी सूर्यान्तर में सूर्य की उपदशा हुई ।

चन्द्रान्तर = ६ मास । ६ × ३० = १८० दिनात्मक ।

$\frac{१८० \times १०}{१२०} = \frac{१८०}{१२}$

```
१२)१८०(१५
   १२
   ६०
   ६०
   ×
```

अतः चन्द्रान्तर में चन्द्र की उपदशा १५ दिन होती है ।

फल दशा साधन—

स्वदशाया घटीवृन्दं हतं स्वाब्दैर्ग्रहस्य च ।
विंशोत्तरशतेनाप्तं घटयः शेषं फलादिकम् ॥ १० ॥

उपदशा में ग्रह के दिनादि मान को घट्यात्मक बनाकर अभीष्टग्रह की महादशा वर्ष से गुणाकर १२० का भाग देने पर लब्धि घटी पलात्मक फल दशा होती है ॥ १० ॥

उदाहरण— सूर्यान्तर में सूर्य की उपदशा ५ दिन २४ घटी । घट्यात्मक मान (५ × ६०) + २४ = ३२४ घटी

$\frac{३२४ \times ६}{१२०}$ सू. द. वर्ष = लब्धि १६ घटी, १२ पल सूर्य की उप दशा में सूर्य की फल दशा ।

इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह की उपदशा में सभी ग्रहों की फल दशा का साधन करना चाहिये ।

विंशोत्तरी दशा काल निर्णय—

कृष्णपक्षे दिवा जन्म शुक्लपक्षे यदा निशि ।
विंशोत्तरी दशा तस्य शुभाशुभफलप्रदा ॥ ११ ॥

यदि कृष्ण पक्ष के दिन में तथा शुक्ल पक्ष की रात्रि में जन्म हो तो उस जातक के लिए विंशोत्तरी दशा ही शुभ एवं अशुभ फल दायक होती है । अर्थात् उक्त समय में विंशोत्तरी दशा का ही प्रभाव होता है ॥ ११ ॥

विशेष—उक्त श्लोक के अनुसार सभी व्यक्तियों के लिए विंशोत्तरी दशा फलदायक नहीं होती । शुक्ल पक्ष के दिन तथा कृष्ण पक्ष की रात्रि में जिसका जन्म हो उसके लिए यहाँ कोई निर्देश नहीं है । परन्तु अन्य ग्रन्थों के आधार पर ऐसी स्थिति में अष्टोत्तरी दशा का ग्रहण किया है । इस सम्बन्ध में बहुत विवाद हैं । कुछ विद्वानों का मत है कि विन्ध्य पर्वत के उत्तर में विंशोत्तरी तथा दक्षिण में अष्टोत्तरी दशा का निरन्तर व्यवहार करना चाहिये ।

नक्षत्रायु साधन—

जन्मऋक्षगतनाडिकागणो विंशताधिकशतेन गुण्यते ।
भज्यते नवतिसंख्यया ततो लब्धशुद्धपरमायुषः स्फुटम् ॥ १२ ॥

जन्म नक्षत्र के गत घटीपल (भयात) को १२० से गुणाकर ९० से भाग देने पर जो वर्षादि लब्धि प्राप्त हो उसे परमायु १२० वर्ष में घटाने से शेष स्पष्ट नक्षत्रायु होती है ॥ १२ ॥

उदाहरण—मृगशीर्ष जन्मनक्षत्र का भयात् २५।३० को १२० से गुणा किया—

२५।३० × १२०=३०६०

३०६०÷९०= ९०)३०६०(३४
२७०
———
३६०
३६०
———
×

१२०—३४= ८६ वर्ष नक्षत्रायु हुई

ध्रुवाङ्क से दशासाधन—

दशभिर्वर्षैर्मासो मासचतुष्केण लभ्यते दिवसः ।
दिवसद्वयेन घट्यो घटिकायुग्मेन पलमेकम् ॥ १३ ॥

दसवर्षों में एक मास, चार मासों मे एक दिन, दो दिनों में एकघटी तथा दो घटी में एक पल अन्तर्दशा का ध्रुव ाङ्क मिलता है । (अर्थात् दशा वर्ष को १०

से भाग देने पर लब्धि मास, शेष को मास बनाकर ४ से भाग देने पर लब्धि दिन, पुनः दिनात्मक शेष में २ से भाग देने पर घटी तथा घट्यात्मक शेष में २ का भाग देने पर लब्धि पलात्मक ध्रुवाङ्क होता है। ध्रुवाङ्क को अपने-अपने दशा वर्षों से गुणा करने पर प्रत्येक ग्रह की अन्तर्दशा का मान होता है) ॥ १३ ॥

उदाहरण—सूर्य का महादशा वर्ष ६

६ ÷ १० = १०)६(० मास
०
६ × १२
४)७२(१८ दिन
४
३२
३२
×

सूर्य का ध्रुवाङ्क ०।१८ सूर्य की महादशा में सूर्यादि ग्रहों का अन्तर ज्ञात करने के लिए प्रत्येक ग्रह के दशा वर्ष से ध्रुवाङ्क १८ दिन को पृथक्-पृथक् गुणा किया—

सूर्य ६ × १८ = १०८ दिन सूर्यान्तर, वर्षादिमान = ०।३।१८

चन्द्र १० × १८ = १८० दिन चन्द्रान्तर। वर्षादिमान = ०।६।०

भौम ७ × १८ = १२६ दिन भौमान्तर। वर्षादिमान = ०।४।६

राहु १८ × १८ = ३२४ दिन राह्वन्तर। वर्षादिमान = ०।१०।२४

इसी प्रकार सभी ग्रहों की अन्तर दशाओं का साधन होगा। सौविध्य के लिए प्रत्येक ग्रह का ध्रुवा तथा अन्तर्दशा का मान दिया जा रहा है—

सूर्यान्तर				चन्द्रान्तर				भौमान्तर			
ध्रुवा ०।०।१८				ध्रुवा ०।१।०				ध्रुवा ०।०।२१			
ग्र.	व.	मा.	दि.	ग्र.	व.	मा.	दि.	ग्र.	व.	मा.	दि.
सू	०	३	१८	च.	०	१०	०	मं.	०	४	२७
च.	०	६	०	मं.	०	७	०	रा.	१	०	१८
मं	०	४	६	रा.	१	६	०	गु	०	११	६
रा.	०	१०	२४	गु.	१	४	०	श.	१	१	९
गु.	०	९	१८	श.	१	७	०	बु.	०	११	२७
श.	०	११	१२	बु.	१	५	०	के.	०	४	२७
बु.	०	१०	६	के.	०	७	०	शु.	१	२	०
के.	०	४	६	शु.	१	८	०	सू.	०	४	६
शु.	१	०	०	सू.	०	६	०	च.	०	७	०

राह्वन्तर

ध्रुवा ०।१।२४

ग्र.	व.	मा.	दि.
रा.	२	८	१२
गु.	२	४	२४
श.	२	१०	६
बु.	२	६	१८
के.	१	०	१८
शु.	३	०	०
सू.	०	१०	२४
च.	१	६	०
मं.	१	०	१८

गुर्वन्तर

ध्रुवा ०।१।१८

ग्र.	व.	मा.	दि.
गु.	२	१	१८
श.	२	६	१२
बु.	२	३	६
के.	०	११	६
शु.	२	८	०
सू.	०	९	१८
च.	१	४	०
मं.	०	११	६
रा.	२	४	२४

शन्यन्तर

ध्रुवा ०।१।१८

ग्र.	व.	मा.	दि.
श.	३	०	३
बु.	२	८	९
के.	१	१	९
शु.	३	२	०
सू.	०	११	१२
च.	१	७	०
मं.	१	१	९
रा.	२	१०	६
गु.	२	६	१२

बुधान्तर

ध्रुवा ०।१।२१

ग्र.	व.	मा.	दि.
बु.	२	४	२७
के.	०	११	२७
शु.	२	१०	०
सू.	०	१०	६
चं.	१	५	०
मं.	०	११	२७
रा.	२	६	१८
गु.	२	३	६
श.	२	८	९

केत्वन्तर

ध्रुवा ०।०।२१

ग्र.	व	मा.	दि.
के.	०	४	२७
शु.	१	२	०
सू.	०	४	६
चं.	०	७	०
मं.	०	४	२७
रा.	१	०	१८
गु.	०	११	६
श.	१	१	९
बु.	०	११	२७

शुक्रान्तर

ध्रुवा ०।२।०

ग्र.	व.	मा.	दि.
शु.	३	४	०
सू.	१	०	०
चं.	१	८	०
मं.	१	२	०
रा.	३	०	०
गु.	२	८	०
श.	३	२	०
बु.	२	१०	०
के.	१	२	०

विंशोत्तरी सूर्य महादशा वर्ष ६

सूर्यान्तर (०।३।१८) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
सू.	०	५	२४
चं.	०	९	०
मं.	०	६	१८
रा.	०	१६	१२
गु.	०	१४	२४
श.	०	१७	६
बु.	०	१५	१८
के.	०	६	१८
शु.	०	१८	०

चन्द्रान्तर (०।६।०) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
चं.	०	१५	०
मं.	०	१०	३०
रा.	०	२७	०
गु.	०	२४	०
श.	०	२८	३०
बु.	०	२५	३०
के.	०	१०	३०
शु.	१	०	०
सू.	०	९	०

भौमान्तर (०।४।६) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
मं.	०	७	२१
रा.	०	१८	५४
गु.	०	१६	४८
श.	०	१९	५७
बु.	०	१७	५१
के.	०	७	२१
शु.	०	२१	०
सू.	०	६	१८
चं.	०	१०	३०

राह्वन्तर (०।१०।२४) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
रा.	१	१८	३६
गु.	१	१३	१२
श.	१	२१	१८
बु.	१	१५	५४
के.	०	१८	५४
शु.	१	२४	०
सू.	०	१६	१२
चं.	०	२७	०
मं.	०	१८	५४

गुर्वन्तर (०।९।१८) म उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
गु.	१	८	२४
श.	१	१५	३६
बु.	१	१०	४८
के.	०	१६	४८
शु.	१	१८	०
सू.	०	१४	२४
चं.	०	२४	०
मं.	०	१६	४८
रा.	१	१३	१२

शन्यन्तर (०।११।१२) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
श.	१	२४	९
बु.	१	१८	२७
के.	०	१९	५७
शु.	१	२७	०
सू.	०	१७	६
च.	०	२८	३०
मं.	०	१९	५७
रा.	१	२१	१८
गु.	१	१५	३६

बुधान्तर (०।१०।६) मे उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
बु.	१	१३	२१
के.	०	१७	५१
शु.	१	२१	०
सू.	०	१५	१८
चं.	०	२५	३०
मं.	०	१७	५१
रा.	१	१५	५४
गु.	१	१०	४८
श.	१	१८	२७

केत्वन्तर (०।४।६) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
के.	०	७	२१
शु.	०	२१	०
सू.	०	६	१८
चं.	०	१०	३०
मं.	०	७	२१
रा.	०	१८	५४
गु.	०	१६	४८
श.	०	१९	५७
बु.	०	१७	५१

शुक्रान्तर (१।०।०) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
शु.	२	०	०
सू.	०	१८	०
चं.	१	०	०
मं.	०	२१	०
रा.	१	२४	०
गु.	१	१८	०
श.	१	२७	०
बु.	१	२१	०
के.	०	२१	०

विंशोत्तरी चन्द्र महादशा वर्ष १०

चन्द्रान्तर (०।१०।०) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
चं.	०	२५	०
मं.	०	१७	३०
रा.	१	१५	०
गु.	१	१०	०
श.	१	१७	३०
बु.	१	१२	३०
के.	०	१७	३०
शु.	१	२०	०
र.	०	१५	०

भौमान्तर (०।७।०) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
मं.	०	१२	१५
रा.	१	१	३०
गु.	०	२८	०
श.	१	३	१५
बु.	०	२९	४५
के.	०	१२	१५
शु.	१	५	०
सू.	०	१०	३०
चं.	०	१७	३०

राह्वन्तर (१।६।०) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
रा.	२	२१	०
गु.	२	१२	०
श.	२	२५	३०
बु.	२	१६	३०
के.	१	१	३०
शु.	३	०	०
सू.	०	२७	०
चं.	१	१५	०
मं.	१	१	३०

गुर्वन्तर (१।४।०) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
गु.	२	४	०
श.	२	१६	०
बु.	२	८	०
के.	०	२८	०
शु.	२	२०	०
सू.	०	२४	०
चं.	१	१०	०
मं.	०	२८	०
रा.	२	१२	०

शन्यन्तर (१।७।०) म उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
श.	३	०	१५
बु.	२	२०	४५
के.	१	३	१५
शु.	३	५	०
सू.	०	२८	३०
चं.	१	१७	३०
मं.	१	३	१५
रा.	२	२५	३०
गु.	२	१६	०

बुधान्तर (१।५।०) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
बु.	२	१२	१५
के.	०	२९	४५
शु.	२	२५	०
सू.	०	२५	३०
चं.	१	१२	३०
मं.	०	२९	४५
रा.	२	१६	३०
गु.	२	८	०
श.	२	२०	४५

केत्वन्तर (०।७।०) म उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
के.	०	१२	१५
शु.	१	५	०
सू.	०	१०	३०
चं.	०	१७	३०
मं.	०	१२	१५
रा.	१	१	३०
गु.	०	२८	०
श.	१	३	१५
बु.	०	२९	४५

शुक्रान्तर (१।८।०) म उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
शु.	३	१०	०
सू.	१	०	०
चं.	१	२०	०
मं.	१	५	०
रा.	३	०	०
गु.	२	२०	०
श.	३	५	०
बु.	२	२५	०
के.	१	५	०

सूर्यान्तर (०।६।०) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
सू.	०	९	०
चं	०	१५	०
मं.	०	१०	३०
रा.	०	२७	०
गु.	०	२४	०
श.	०	२८	३०
बु.	०	२५	३०
के.	०	१०	३०
शु.	१	०	०

विंशोत्तरी भौम महादशा वर्ष ७

भौमान्तर (०।४।२७) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
मं.	०	८	३५
रा.	०	२२	३
गु.	०	१९	३६
श.	०	२३	१६
बु.	०	२०	५०
के.	०	८	३४
शु.	०	२४	३०
सू.	०	७	२१
चं.	०	१२	१५

राह्वन्तर (१।०।१८) में उपदशा

ग्र०	मा.	दि.	घ.
रा.	१	२६	४२
गु.	१	२०	२४
श.	१	२९	५१
बु.	१	२३	३३
के.	०	२२	३
शु.	२	३	०
सू.	०	१८	५४
चं.	१	१	३०
मं.	०	२२	३

गुर्वन्तर (०।११।६) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ०
गु.	१	१४	४८
श.	१	२३	१२
बु.	१	१७	३६
के.	०	१९	३६
शु.	१	२६	०
सू.	०	१६	४८
चं.	०	२८	०
मं.	०	१९	३६
रा.	१	२०	२४

शन्यन्तर (१।१।९) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
श.	२	३	१०	३०
बु.	१	२६	३१	३०
के.	०	२३	१६	३०
शु.	२	६	३०	०
सू.	०	१९	५७	०
चं.	१	३	१५	०
मं.	०	२३	१६	३०
रा	१	२९	५१	०
गु.	१	२३	१२	०

बुधान्तर (०।११।२७) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
बु.	१	२०	३४	३०
के.	०	२०	४९	३०
शु.	१	२९	३०	०
सू.	०	१७	५१	०
च.	०	२९	४५	०
मं.	०	२०	४९	३०
रा.	१	२३	३३	०
गु.	१	१७	३६	०
श.	१	२६	३१	३०

केत्वन्तर (०।४।२७) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
के.	०	८	३४	३०
शु.	०	२४	३०	०
सू.	०	७	२१	०
च.	०	१२	१५	०
मं.	०	८	३४	३०
रा.	०	२२	३	०
गु.	०	१९	३६	०
श.	०	२३	१६	३०
बु.	०	२०	४९	३०

शुक्रान्तर (१।२।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
शु.	२	१०	०
सू.	०	२१	०
चं.	१	५	०
मं.	०	२४	३०
रा.	२	३	०
गु.	१	२६	०
श.	२	६	३०
बु.	१	२९	३०
के.	०	२४	३०

सूर्यान्तर (०।४।६) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
सू.	०	६	१८
चं.	०	१०	३०
मं.	०	७	२१
रा.	०	१८	५४
गु.	०	१६	४८
श.	०	१९	५७
बु.	०	१७	५१
के.	०	७	२१
शु.	०	२१	०

चन्द्रान्तर (०।७।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
च.	०	१७	३०
मं.	०	१२	१५
रा.	१	१	३०
गु.	०	२८	०
श.	१	३	१५
बु.	०	२९	४५
के.	०	१२	१५
शु.	१	५	०
सू.	०	१०	३०

विंशोत्तरी राहु महादशा वर्ष १८

राह्वन्तर (२।८।१२) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
रा.	४	२५	४८
गु.	४	९	३६
श.	५	३	५४
बु.	४	१७	४२
के.	१	२६	४२
शु.	५	१२	०
सू.	१	१८	३६
चं.	२	२१	०
मं.	१	२६	४२

गुर्वन्तर (२।४।२४) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
गु.	३	२५	१२
श.	४	१६	४८
बु.	४	२	२४
के.	१	२०	२४
शु.	४	२४	०
सू.	१	१३	१२
चं.	२	१२	०
मं.	१	२०	२४
रा.	४	९	३६

शन्यन्तर (२।१०।६) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
श.	५	१२	२७
बु.	४	२५	२१
के.	१	२९	५१
शु.	५	२१	०
सू.	१	२१	१८
चं.	२	२५	३०
मं.	१	२९	५१
रा.	५	३	५४
गु.	४	१६	४८

बुधान्वतर (२।६।१८) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
बु.	४	१०	३
के.	१	२३	३३
शु.	५	३	०
सू.	१	१५	५४
चं.	२	१६	३०
मं.	१	२३	३३
रा.	४	१७	४२
गु.	४	२	२४
श.	४	२५	२१

केत्वन्तर (१।०।१८) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
के.	०	२२	३
शु.	२	३	०
सू.	०	१८	५४
चं.	१	१	३०
मं.	०	२२	३
रा.	१	२६	४२
गु.	१	२०	२४
श.	१	२९	५१
बु.	१	२३	३३

शुक्रान्तर (३।०।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
शु.	६	०	०
सू.	१	२४	०
चं.	३	०	०
मं.	२	३	०
रा.	५	१२	०
गु.	४	२४	०
श.	५	२१	०
बु.	५	३	०
के.	२	३	०

सूर्यान्तर (०।१०।२४) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
सू.	०	१६	१२
चं.	०	२७	०
मं.	०	१८	५४
रा.	१	१८	३६
गु.	१	१३	१२
श.	१	२१	१८
बु.	१	१५	५४
के.	०	१८	५४
शु.	१	२४	०

चन्द्रान्तर (१।६।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
चं.	१	१५	०
मं.	१	१	३०
रा.	२	२१	०
गु.	२	१२	०
श.	२	२५	३०
बु.	२	१६	३०
के.	१	१	३०
शु.	३	०	०
सू.	०	२७	०

भौमान्तर (१।०।१८) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
मं.	०	२२	३
रा.	१	२६	४२
गु.	१	२०	२४
श.	१	२९	५१
बु.	१	२३	३३
के.	०	२२	३
शु.	२	३	०
सू.	०	१८	५४
चं.	१	१	३०

विंशोत्तरी गुरुमहादशा चक्र १६

गुर्वन्तर (२।१।१८) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
गु.	३	१२	२४
श.	४	१	३६
बु.	३	१८	४८
के.	१	१४	४८
शु.	४	८	०
सू.	१	८	२४
चं.	२	४	०
मं.	१	१४	४८
रा.	३	२५	१२

शन्यन्तर (२।६।१२) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
श.	४	२४	२४
बु.	४	९	१२
के.	१	२३	१२
शु.	५	२	०
सू.	१	१५	३६
च.	२	१६	०
मं.	१	२३	१२
रा.	४	१६	४८
गु.	४	१	३६

बुधान्तर (२।३।६) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
बु.	३	२५	३६
के.	१	१७	३६
शु.	४	१६	०
सू.	१	१०	४८
च.	२	८	०
मं.	१	१७	३६
रा.	४	२	२४
गु.	३	१८	४८
श.	४	९	१२

केत्वन्तर (०।११।६) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
के.	०	१९	३६
शु.	१	२६	०
सू.	०	१६	४८
चं.	०	२८	०
मं.	०	१९	३६
रा.	१	२०	२४
गु.	१	१४	४८
श.	१	२३	१२
बु.	१	१७	३६

शुक्रान्तर (२।८।०) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
शु.	५	१०	०
सू.	१	१८	०
चं.	२	२०	०
मं.	१	२६	०
रा.	४	२४	०
गु.	४	८	०
श.	५	२	०
बु.	४	१६	०
के.	१	२६	०

सूर्यान्तर (०।९।१८) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
सू.	०	१४	२४
चं.	०	२४	०
मं.	०	१६	४८
रा.	१	१३	१२
गु.	१	८	२४
श.	१	१५	३६
बु.	१	१०	४८
के.	०	१६	४८
शु.	१	१८	०

चन्द्रान्तर (१।४।०) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
चं.	१	१०	०
मं.	०	२८	०
रा.	२	१२	०
गु.	२	४	०
श.	२	१६	०
बु.	२	८	०
के.	०	२८	०
शु.	२	२०	०
सू.	०	२४	०

भौमान्तर (०।११।६) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
मं.	०	१९	३६
रा.	१	२०	२४
गु.	१	१४	४८
श.	१	२३	१२
बु.	१	१७	३६
के.	०	१९	३६
शु.	१	२६	०
सू.	०	१६	४८
चं.	०	२८	०

राह्वन्तर (२।४।२४) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
रा.	४	९	३६
गु.	३	२५	१२
श.	४	१६	४८
बु.	४	२	२४
के.	१	२०	२४
शु.	४	२४	०
सू.	१	१३	१२
चं.	२	१२	०
मं.	१	२०	२४

विशोत्तरी शनिमहादशा वर्ष १७

शन्यन्तर (३।०।३) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
श.	५	२१	२८	३०
बु.	५	३	२५	३०
के.	२	३	१०	३०
शु.	६	०	३०	०
सू.	१	२४	९	०
चं.	३	०	१५	०
मं.	२	३	१०	३०
रा.	५	१२	२७	०
गु.	४	२४	२४	०

बुधान्तर (२।८।९) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
बु.	४	१७	३६	३०
के.	१	२६	३१	३०
शु.	५	११	३०	०
सू.	१	१८	२७	०
चं.	२	२०	४५	०
मं.	१	२६	३१	३०
रा.	४	२५	३१	०
गु.	४	९	१२	०
श.	५	३	२५	३०

केत्वन्तर (१।१।९) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
के.	०	२३	१६	३०
शु.	२	६	३०	०
सू.	०	१९	५७	०
चं.	१	३	१५	०
मं.	०	२३	१६	३०
रा.	१	२९	५१	०
गु.	१	२३	१२	०
श.	२	३	१०	३०
बु.	१	२६	३१	३०

शुक्रान्तर (३।२।०) में उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
शु.	६	१०	०
सू.	१	२७	०
चं.	३	५	०
मं.	२	६	३०
रा.	५	२१	०
गु.	५	२	०
श.	६	०	३०
बु.	५	११	३०
के.	२	६	३०

सूर्यान्तर (०।११।१२) मे उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
सू.	०	१७	६
चं	०	२८	३०
मं.	०	१९	५७
रा.	१	२१	१८
गु.	१	१५	३६
श.	१	२४	९
बु.	१	१८	२७
के.	०	१९	५७
शु.	१	२७	०

चन्द्रान्तर (१।७।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
चं.	१	१७	३०
मं.	१	३	१५
रा.	२	२५	३०
गु.	२	१६	०
श.	३	०	१५
बु.	२	२०	४५
के.	१	३	१५
शु.	३	५	०
सू.	०	२८	३०

भौमान्तर (१।१।९) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
मं.	०	२३	१६	३०
रा.	१	२९	५१	०
गु.	१	२३	१२	०
श.	२	३	१०	०
बु.	२	२६	३१	३०
के.	०	२३	१६	३०
शु.	२	६	३०	०
सू.	०	१९	५७	०
चं.	१	३	१५	०

राह्वन्तर (२।१०।६) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
रा.	५	३	५४
गु.	४	१६	४८
श.	५	१२	२७
बु.	४	२५	२१
के.	१	२९	५१
शु.	५	२१	०
सू.	१	२१	१८
च.	२	२५	३०
मं.	१	२९	५१

गुर्वन्तर (२।६।१२) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
गु.	४	१	३६
श.	४	२४	२४
बु.	४	९	१२
के.	१	२३	१२
शु.	५	२	०
सू.	१	१५	३६
चं.	२	१६	०
मं.	१	२३	१२
रा.	४	१६	४८

विंशोत्तरी बुध महादशा वर्ष १७

बुधान्तर (२।४।२७) उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
बु.	४	२	४९	३०
के.	१	२०	३४	३०
शु.	४	२४	३०	०
सू.	१	१३	२१	०
चं.	२	१२	१५	०
मं.	१	२०	३४	३०
रा.	४	१०	३	०
गु.	३	२५	३६	०
श.	४	१७	१६	३०

केत्वन्तर (०।११।२७) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
के.	०	२०	४९	३०
शु.	१	२९	३०	०
सू.	०	१७	५१	०
चं.	०	२९	४५	०
मं.	०	२०	४९	३०
रा.	१	२३	३३	०
गु.	१	१७	३६	०
श.	१	२६	३१	३०
बु.	१	२०	३४	३०

शुक्रान्तर (२।१०।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
शु.	५	२०	०
सू.	१	२१	०
चं.	२	२५	०
मं.	१	२९	३०
रा.	५	३	०
गु.	४	१६	०
श.	५	११	३०
बु.	४	२४	३०
के.	१	२९	३०

सूर्यान्तर (०।१०।६) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
सू.	०	१५	१८
चं.	०	२५	३०
मं.	०	१७	५१
रा.	१	१५	५४
गु.	१	१०	४८
श.	१	१८	२७
बु.	१	१३	२१
के.	०	१७	५१
शु.	१	२१	०

चन्द्रान्तर (१।५।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
चं.	१	१२	३०
मं.	०	२९	४५
रा.	२	१६	३०
गु.	२	८	०
श.	२	२०	४५
बु.	२	१२	१५
के.	०	२९	४५
शु.	२	२५	०
सू.	०	२५	३०

भौमान्तर (०।११।२७) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
मं.	०	२०	४९	३०
रा.	१	२३	३३	०
गु.	१	१७	३६	०
श.	१	२६	३१	३०
बु.	१	२०	३४	३०
के.	०	२०	४९	३०
शु.	१	२९	३०	०
सू.	०	१७	५१	०
चं.	०	२९	४५	०

राह्वन्तर (२।६।१८) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
रा.	४	१७	४२
गु.	४	२	२४
श.	४	२५	२१
बु.	४	१०	३
के.	१	२३	३३
शु.	५	३	०
सू.	१	१५	५४
चं.	२	१६	३०
मं.	१	२३	३३

गुर्वन्तर (२।३।६) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
गु.	३	१८	४८
श.	४	९	१२
बु.	३	२५	३६
के.	१	१७	३६
शु.	४	१६	०
सू.	१	१०	४८
चं.	२	८	०
मं.	१	१७	३६
रा.	४	२	२४

शन्यन्तर (२।८।९) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
श.	५	३	२५	३०
बु.	४	१७	१६	३०
के.	१	२६	३१	३०
शु.	५	११	३०	०
सू.	१	१८	२७	०
चं.	२	२०	४५	०
मं.	१	२६	३१	३०
रा.	४	२५	२१	०
गु.	४	९	१२	०

विंशोत्तरी केतु महादशा चक्र—७

केत्वन्तर (०।४।२७) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
के.	०	८	३४	३०
शु.	०	२४	३०	०
सू.	०	७	२१	०
चं.	०	१२	१५	०
मं.	०	८	३४	३०
रा.	०	२२	३	०
गु.	०	१९	३६	०
श.	०	२३	१६	३०
बु.	०	२०	४९	३०

शुक्रान्तर (१।२।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ०
शु.	२	१०	०
सू.	०	२१	०
चं.	१	५	०
मं.	०	२४	३०
रा.	२	३	०
गु.	१	२६	०
श.	२	६	३०
बु.	१	२९	०
के.	०	२४	३०

सूर्यान्तर (०।४।६) मे उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
सू.	०	६	१८
चं.	०	१०	३०
मं.	०	७	२१
रा.	०	१८	५४
गु.	०	१६	४८
श.	०	१९	५७
बु.	०	१७	५१
के.	०	७	२१
शु.	०	२१	०

चन्द्रान्तर (०।७।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
चं.	०	१७	३०
मं.	०	१२	१५
रा.	१	१	३०
गु.	०	२८	०
श.	१	३	१५
बु.	०	२९	४५
के.	०	१२	१५
शु.	१	५	०
सू.	०	१०	३०

भौमान्तर (०।४।२७) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
मं.	०	८	३४	३०
रा.	०	२२	३	०
गु.	०	१९	३६	०
श.	०	२३	१६	३०
बु.	०	२०	४९	३०
के.	०	८	३४	३०
शु.	०	२४	३०	०
सू.	०	७	२१	०
चं.	०	१२	१५	०

राह्वन्तर (१।०।१८) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
रा.	१	२६	४२
गु.	१	२०	२४
श.	१	२९	५१
बु.	१	२३	३३
के.	०	२२	३
शु.	२	३	०
सू.	०	१८	५४
चं.	१	१	३०
मं.	०	२२	३

गुर्वन्तर (०।११।६) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
गु.	१	१४	४८
श.	१	२३	१२
बु.	१	१७	३६
के.	०	१९	३६
शु.	१	२६	०
सू.	०	१६	४८
चं.	०	२८	०
मं.	०	१९	३६
रा.	१	२०	२४

शन्यन्तर (१।१।९) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
श.	२	३	१०	३०
बु.	१	२६	३१	३०
के.	०	२३	१६	३०
शु.	२	६	३०	०
सू.	०	१९	५७	०
चं.	१	३	१५	०
मं.	०	२३	१६	३०
रा.	१	२९	५१	०
गु.	१	२३	१२	०

बुधान्तर (०।११।२७) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
बु.	१	२०	३४	३०
के.	०	२०	४९	३०
शु.	१	२९	३०	०
सू.	०	१७	५१	०
चं.	०	२९	४५	०
मं.	०	२०	४९	३०
रा.	१	२३	३३	०
गु.	१	१७	३६	०
श.	१	२६	३१	३०

विंशोत्तरी शुक्र महादशा वर्ष २०

शुक्रान्तर (३।४।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
शु.	६	२०	०
सू.	२	०	०
चं.	३	१०	०
मं.	२	१०	०
रा.	६	०	०
गु.	५	१०	०
श.	६	१०	०
बु.	५	२०	०
के.	२	१०	०

सूर्यान्तर (१।०।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
सू.	०	१८	०
चं.	१	०	०
मं.	०	२१	०
रा.	१	२४	०
गु.	१	१८	०
श.	१	२७	०
बु.	१	२१	०
के.	०	२१	०
शु.	२	०	०

चन्द्रान्तर (१।८।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
चं.	१	२०	०
मं.	१	५	०
रा.	३	०	०
गु.	२	२०	०
श.	३	५	०
बु.	२	२५	०
के.	१	५	०
शु.	३	१०	०
सू.	१	०	०

भौमान्तर (१।२।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
मं.	०	२४	३०
रा.	२	३	०
गु.	१	२६	०
श.	२	६	३०
बु.	१	२९	३०
के.	०	२४	३०
शु.	२	१०	०
सू.	०	२१	०
चं.	१	५	०

राह्वन्तर (३।०।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
रा.	५	१२	०
गु.	४	२४	०
श.	५	२१	०
बु.	५	३	०
के.	२	३	०
शु.	६	०	०
सू.	१	२४	०
चं.	३	०	०
मं.	२	३	०

गुर्वन्तर (२।८।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
गु.	४	८	०
श.	५	२	०
बु.	४	१६	०
के.	१	२६	०
शु.	५	१०	०
सू.	१	१८	०
चं.	२	२०	०
मं.	१	२६	०
रा.	४	२४	०

शन्यन्तर (३।२।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
श.	६	०	३०
बु.	५	११	३०
के.	२	६	३०
शु.	६	१०	०
सू.	१	२७	०
चं.	३	५	०
मं.	२	६	३०
रा.	५	२१	०
गु.	५	२	०

बुधान्तर (२।१०।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
बु.	४	२४	३०
के.	१	२९	३०
शु.	५	२०	०
सू.	१	२१	०
चं.	२	२५	०
मं.	१	२९	३०
रा.	५	३	०
गु.	४	१६	०
श.	५	११	३०

केत्वन्तर (१।२।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
के.	०	२४	३०
शु.	२	१०	०
सू.	०	२१	०
चं.	१	५	०
मं.	०	२४	३०
रा.	२	३	०
गु.	१	२६	०
श.	२	६	३०
बु.	१	२९	३०

अष्टोत्तरी दशा साधन

अष्टादशांशः क्रियतेंऽशुमाली
लब्धं द्विसार्द्धं क्रियते हिमांशुः ।
त्रिभागयुक्तः सकलश्च भौम-
स्तस्य त्रिभागः सशशी बुधःस्यात् ॥ १४ ॥

भानोस्त्रिभागः कुजयुक्तसौरी-
रर्द्धं कुजश्चन्द्रयुतः गुरुश्च ।
भानोर्द्विगुण्यः क्रियते च राहु-
र्हिमांशुभानू सहितो च शुक्रः ॥ १५ ॥

अष्टोत्तरी प्रमाण से परमायु १०८ वर्ष का $\frac{१}{१८}$ (अठारहवाँ) भाग ६ वर्ष सूर्य की दशा, सूर्य का ढाइ गुना (६ × $\frac{५}{२}$) = १५ वर्ष चन्द्रमा की दशा, अपने तृतीयांश ($\frac{६}{३}$) से युक्त सूर्य दशा तुल्य ($\frac{६}{३}$ + ६ = ८ वर्ष) मंगल की दशा, सूर्य के तृतीयांश से युक्त चन्द्रमा के तुल्य ($\frac{६}{३}$ + १५) = १७ वर्ष बुध की दशा, सूर्य के तृतीयांश को मंगल से युक्त करने पर ($\frac{६}{३}$ + ८) = १० वर्ष शनि की दशा, मंगल का आधा चन्द्रमा से युक्त करने पर ($\frac{८}{२}$ + १५) = १९ वर्ष बृहस्पति की दशा, सूर्य का दो गुना (६ × २) = १२ वर्ष राहु की दशा तथा सूर्य और चन्द्रमा के योग तुल्य (१५ + ६) = २१ वर्ष शुक्र की दशा होती है ॥ १४-१५ ॥

नक्षत्र द्वारा दशापति का ज्ञान—

चतुष्कं त्रितयं तस्माच्चतुष्कं त्रितयं पुनः ।
यावत्स्वजन्मभं तावद्गणयेद्रौद्रभादितः[1] ॥ १६ ॥

आर्द्रानक्षत्र से आरम्भ कर आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा इन चार नक्षत्रों में सूर्य की, मघा, पूर्वा फाल्गुनि, उ० फा० इन तीन नक्षत्रों मे चन्द्रमा की, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा इन चार नक्षत्रों में मंगल की, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल इन तीन नक्षत्रों में बुध की, पू. षा. उ. षा, अभिजित्, श्रवण इन चारो नक्षत्रों में शनि की, धनिष्ठा, शतभिष, पूर्वाभा., इन तीन नक्षत्रों में बृहस्पति की उ. भा., रेवती, अश्विनी, भरणी, इन चार नक्षत्रों में राहु की तथा कृत्तिका, रोहिणी मृगशिरा इन तीन नक्षत्रों मे शुक्र की अष्टोत्तरी दशा होती है । (इस प्रकार च. बु. गु. और शु. शुभ शुभग्रहों को ३-३ नक्षत्र तथा र. मं. श. और राहु इन पाप ग्रहों को ४-४ नक्षत्र प्राप्त होते हैं ।) आर्द्रा से अपने जन्म नक्षत्र पर्यन्त गणना कर दशा का ज्ञान करना चाहिये ॥ १६ ॥

१. शिवादिकृत्तिकादितः । पाठान्तरम्

अष्टोत्तरी दशा क्रम एवं प्रमाण—

षडादित्ये च वर्षाणि चन्द्रे पञ्चदशैव च ।
मङ्गले चाष्टवर्षाणि बुधे सप्तदशैव च ॥ १७ ॥
शनौ च दशवर्षाणि गुरावेकोनविंशतिः ।
राहोर्द्वादश वर्षाणि शुक्रस्याप्येकविंशतिः ॥ १८ ॥

अष्टोत्तरी मत से सूर्य की ६ वर्ष, चन्द्रमा की १५ वर्ष, मंगल की ८ वर्ष, बुध की १७ वर्ष, शनि की १० वर्ष, गुरु की १९ वर्ष राहु की १२ वर्ष तथा शुक्र की २१ वर्ष क्रम से महादशा होती है ॥ १७–१८ ॥

अष्टोत्तरी दशा में केवल आठ ग्रहों की ही दशा होती है। राहु और केतु दोनों पात ग्रहों का समावेश एक ही ग्रह राहु में कर लिया गया है। अतः अष्टोत्तरी क्रम में केतु का स्थान नहीं होता। दशाधीशों का क्रम निम्नलिखित प्रक्षिप्त श्लोक से भी ज्ञात होता है—

सूर्यश्चन्द्रः कुजः सौम्यः, शनिर्जीवस्तमो भृगुः ।
अष्टोत्तरीदशाधीशाः केतुहीना नवग्रहाः ॥

अन्तर्दशा साधन—

दशा दशाहता कार्या नवभिर्भागमाहरेत् ।
यल्लब्धं सो भवेन्मासस्त्रिंशन्निघ्नं दिनं भवेत् ॥ १९ ॥

अष्टोत्तरी महादशा में अन्तर्दशा जानने के लिए महादशा में अभीष्ट ग्रह की महादशा से गुणा कर ९ से भाग देने पर लब्धि मास, शेष को ३० से गुणा कर ९ से भाग देने पर दिन होता है। (इस प्रकार 'अन्तर्दशा का मासादि मान होता है।) ॥ १९ ॥

उदाहरण—सूर्य की महादशा में सूर्य और चन्द्र का अन्तर ज्ञात करना है। सूर्य दशा वर्ष ६, चन्द्रदशा वर्ष १५,

$$\frac{६ \times ६}{९} = \frac{३६}{९} = ४ \text{ मास सूर्यान्तर}$$

$$\frac{६ \times १५}{९} = \frac{९०}{९} = १० \text{ मास चन्द्रान्तर}$$

इसी प्रकार सभी ग्रहों की महादशा में सभी ग्रहों अन्तर ज्ञात हो सकता है।

अष्टोत्तरी दशान्तर्दशा बोधक चक्र

सूर्य ६ वर्ष
(आ., पु. पुष्य. आश्ले.)

ग्र.	व.	मा.	दि.	घ.
सू.	०	४	०	०
च.	०	१०	०	०
मं.	०	५	१०	०
बु.	०	११	१०	०
श.	०	६	२०	०
गु.	१	०	२०	०
रा.	०	८	०	०
शु.	१	२	०	०

चन्द्र १५ वर्ष
(म., पू. फा., उ. भा.)

ग्र.	व.	मा.	दि.	घ.
च.	२	१	०	०
मं.	१	१	१०	०
बु.	२	४	१०	०
श.	१	४	२०	०
गु.	२	७	२०	०
रा.	१	८	०	०
शु.	२	११	०	०
सू.	०	१०	०	०

भौम ८ वर्ष
(ह., चि., स्वा. विशा.)

ग्र.	व.	मा.	दि.	घ.
मं.	०	७	३	२०
बु.	१	१	३	२०
श.	०	८	२६	४०
गु.	१	४	२६	४०
रा.	०	१०	२०	०
शु.	१	६	२०	०
सू.	०	५	१०	०
चं.	१	१	१०	०

बुध १७ वर्ष
(अनु., ज्ये., मू.)

ग्र.	व.	मा.	दि.	घ.
बु.	२	८	३	२०
श.	१	६	२६	४०
गु.	२	११	२६	४०
रा.	१	१०	२०	०
शु.	३	३	२०	०
सू.	०	११	१०	०
चं.	२	४	१०	०
मं.	१	३	३	२०

शनि १० वर्ष
(पू. षा, उ. षा., अभि., श्रव.)

ग्र.	व.	मा.	दि.	घ.
श.	०	११	३	२०
गु.	१	९	३	२०
रा.	१	१	१०	०
शु.	१	११	१०	०
सू.	०	६	२०	०
चं.	१	४	२०	०
मं.	०	८	२६	४०
बु.	१	६	२६	४०

गुरु १९ वर्ष
(ध०, शत. पू. भा.)

ग्र.	व.	मा.	दि.	घ.
गु.	३	४	३	२०
रा.	२	१	१०	०
शु.	३	८	१०	०
सू.	१	०	२०	०
चं.	२	७	२०	०
मं.	१	४	२६	४०
बु.	२	११	२६	४०
श.	१	९	३	२०

राहु १२ वर्ष
(उ. भा., रे. अ. भर.)

ग्र.	व.	मा.	दि.	घ.
रा.	१	४	०	०
शु.	२	४	०	०
सू.	०	८	०	०
च.	१	८	०	०
मं.	०	१०	२०	०
बु.	१	१०	२०	०
श.	१	१	१०	०
गु.	२	१	१०	०

शुक्र २१ वर्ष
(कृ., रो., मृ.)

ग्र.	व.	मा.	दि.	घ.
शु.	४	१	०	०
र.	१	२	०	०
चं.	२	११	०	०
मं.	१	६	२०	०
बु.	३	३	२०	०
श.	१	११	१०	०
गु.	३	८	१०	०
रा.	२	४	०	०

उपदशा (प्रत्यन्तर) साधन

अन्तर्दशाऽहर्गण एव गुण्यः स्वमूलवर्षैर्वसुखैकभक्तः ।
पुनः पुनः षष्टिगुणावशेषे दिनादयश्चोपदशाक्रमोऽयम् ॥ २० ॥

ग्रहों के अन्तर्दशा को दिनात्मक बनाकर प्रत्येक ग्रह के महादशा मान से पृथक् पृथक् गुणाकर गुणनफल में १०८ का भाग देने से लब्धि दिनात्मक तथा शेष को ६० से गुणा कर पुनः १०८ से भाग देने पर लब्धि घटयादि उपदशा होती है ॥ २० ॥

उदाहरण—सूर्य महादशा के चन्द्रान्तर में भौम की उपदशा अभीष्ट है। चन्द्रान्तर ०।१०।० भौम महादशा वर्ष ८ चन्द्रान्तर दिनात्मक १०×३०=३००

$$\frac{३००\times८}{१०८}=\frac{२४००}{१०८}$$

```
१०८)२४००(२२
    २१६
    ---
     २४०
     २१६
     ---
     २४×६०
१०८)१४४०(१३।२०
     १०८
     ---
     ३६०
     ३२४
     ---
      ३६×६०
     २१६०
     २१६
```

लब्धि २२।१३।२० दिनादि सूर्य महादशा में चन्द्रान्तर में भौम की उपदशा (प्रत्यन्तर) सिद्ध हुई।

×

फलदशा साधन

उपदशादिवसाः खरसाहता निजघटीसहिताः स्वदशाहताः ।
वसुखचन्द्रहृता घटिकादयः फलदशाक्रम एव पुनः पुनः ॥ २१ ॥

ग्रहों की उपदशा में फल दशा ज्ञात करनी हो तो उपदशा के दिनों को ६० से गुणाकर गुणनफल में उपदशा की घटी जोड़कर (अर्थात् उपदशा को घटयात्मक बनाकर) अलग-अलग सभी ग्रहों की महादशा से गुणा कर गुणन फल में १०८ का भाग देने से घटयादि ग्रहों की फल दशा होती है ॥ २१ ॥

उदाहरण—चन्द्रान्तर में भौम उपदशा २२ दिन १३ घटी २० पल है।

२२×६०=१३२०+१३=१३३३ घटी २० पल

$$\frac{१३३३।२०\times८}{१०८}$$ भौम दशा वर्ष

$$=\frac{१०६६६।४०}{१०८}=$$ लब्धि घटयादि ९८।४५।५५ दिनादि १।३८।४५।५५ फलदशा

(इस दशा को निःशेष करने में १।३८।४५।५५।११।४० लब्धियाँ आती हैं जो व्यवहार योग्य नहीं है ।)

अष्टोत्तरी सूर्य महादशा वर्ष ६

सूर्यान्तर (०।४।०) में उपदशा

ग्र.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.
मा.	०	०	०	०	०	०	०	०
दि.	६	१६	८	१८	११	२१	१३	२३
घ.	४०	४०	५३	५३	६	६	२०	२०
प.	०	०	२०	२०	४०	४०	०	०

चन्द्रान्तर (०।१०।०) में उपदशा

ग्र.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.
मा.	१	०	१	०	१	१	१	०
दि.	११	२२	१७	२७	२२	३	२८	१६
घ.	४०	१३	१३	४६	४६	२०	२०	४०
प.	०	२०	२०	४०	४०	०	०	०

भौमान्तर (०।५।१०) में उपदशा

ग्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.
मा.	०	०	०	०	०	१	०	०
दि.	११	२५	१४	२८	१७	१	८	२२
घ.	५१	११	४८	८	४६	६	५३	१३
प.	६	६	५३	५३	४०	४०	२०	२०
वि.	४०	४०	२०	२०	०	०	०	०

बुधान्तर (०।११।१०) में उपदशा

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.
मा.	१	१	१	१	२	०	१	०
दि.	२३	१	२९	७	६	१८	१७	२५
घ.	३१	२८	४८	४३	६	५३	१३	११
प.	६	५३	५३	४०	४०	२०	२०	६
वि.	४०	२०	२०	०	०	०	०	४०

शन्यन्तर (०।६।२०) में उपदशा

ग्र.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.
मा.	०	१	०	१	०	०	०	१
दि.	१८	५	२२	८	११	२७	१४	१
घ.	३१	११	१३	५३	६	४६	४८	२८
प.	६	६	२०	२०	४०	४०	५३	५३
वि.	४०	४०	०	०	०	०	२०	२०

गुर्वन्तर (१।०।२०) में उपदशा

ग्र.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.
मा.	२	१	२	०	१	०	१	१
दि.	६	१२	१३	२१	२२	२८	२९	५
घ.	५१	१३	५३	६	४६	८	४०	११
प.	६	२०	२०	४०	४०	५३	५३	६
वि.	४०	०	०	०	०	२०	२०	४०

राह्वन्तर (०।८।०) में उपदशा

ग्र.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	०	१	०	१	०	१	०	१
दि.	२६	१६	१३	३	१७	७	२२	१२
घ.	४०	४०	२०	२०	४६	४६	१३	१३
प.	०	०	०	०	४०	४०	२०	२०

शुक्रान्तर (१।२।०) में उपदशा

ग्र.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	२	०	१	१	२	१	२	१
दि.	२१	२३	२८	१	६	८	१३	१६
घ.	४०	२०	२०	६	६	५३	५३	४०
प.	०	०	०	४०	४०	२०	२०	०

अष्टोत्तरी चन्द्र महादशा वर्ष १५

चन्द्रान्तर (२।१।०) में उपदशा

ग्र.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु	सू.
मा.	३	१	३	२	४	२	४	१
दि.	१४	२५	२८	९	११	२३	२५	११
घ.	१०	३३	३	२६	५६	२०	५०	४०
प.	०	२०	२०	४०	४०	०	०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

भौमान्तर (१।१।१०) में उपदशा

ग्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.
मा.	०	२	१	२	१	२	०	१
दि.	२९	२	७	१०	१४	१७	२२	२५
घ.	३७	५७	२	२२	२६	४६	१३	३३
प.	४६	४६	१३	१३	४०	४०	२०	२०
वि.	४०	४०	२०	२०	०	०	०	०

बुधान्तर (२।४।१०) मे उपदशा

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.
मा.	४	२	४	३	५	१	३	२
दि.	१३	१८	२९	४	१५	१७	२८	२
घ.	४७	४२	३२	२६	१६	१३	३	५७
प.	४६	१३	१३	४०	४०	२०	२०	४६
वि.	४०	२०	२०	०	०	०	०	४०

शन्यन्तर (१।४।२०) में उपदशा

ग्र.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.
मा.	१	२	१	३	०	२	१	२
दि.	१६	२७	२५	७	२७	९	७	१८
घ.	१७	५७	३३	१३	४६	२६	२	४२
प.	४६	४६	२०	२०	४०	४०	१३	१३
वि.	४०	४०	०	०	०	०	२०	२०

गुर्वन्तर (२।७।२०) में उपदशा

ग्र.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.
मा.	५	३	६	१	०	२	४	२
दि.	१७	१५	४	२२	११	१०	२९	२७
घ.	७	३३	४३	४६	५६	२२	३२	५७
प.	४६	२०	२०	४०	४०	१३	१३	४६
वि.	४०	०	०	०	०	२०	२०	४०

राह्वन्तर (१।८।०) मे उपदशा

ग्र.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	२	३	१	२	१	३	१	३
दि.	६	२६	३	२३	१४	४	२५	१५
घ.	४०	४०	२०	२०	२६	२६	३३	३३
प.	०	०	०	०	४०	४०	२०	२०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

शुक्रान्तर (२।११।०) म उपदशा

ग्र	शु.	सू.	च.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	६	१	४	२	५	३	६	३
दि.	२४	२८	२५	१७	१५	७	४	२६
घ.	१०	२०	५०	४६	१६	१३	४३	४०
प.	०	०	०	४०	४०	२०	२०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

सूर्यान्तर (०।१०।०) में उपदशा

ग्र.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.
मा.	०	१	०	१	०	१	१	१
दि.	१६	११	२२	१७	२७	२२	३	२८
घ.	४०	४०	१३	१३	४६	४६	२०	२०
प.	०	०	२०	२०	४०	४०	०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

अष्टोत्तरी भौम महादशा वर्ष ८

भौमान्तर (०।७।३।२०) में उपदशा

ग्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु	सू.	च.
मा.	०	१	०	१	१	१	०	०
दि.	१५	३	१९	७	२३	११	११	२९
घ.	४८	३४	४५	३१	४२	२८	५१	३७
प.	८	४८	११	५१	१३	५३	६	४६
वि.	५३	५३	७	७	२०	२०	४०	४०

बुधान्तर (१।३।३।२०) में उपदशा

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु	सू.	च.	मं.
मा.	२	१	२	१	२	०	२	१
दि.	११	११	१९	२०	२८	२५	२	३
घ.	२१	५८	४५	२२	८	११	५७	३४
प.	५८	३१	११	१३	५३	६	४६	४८
वि.	५३	७	७	२०	२०	४०	४०	५३

शन्यन्तर (०।८।२६।४०) में उपदशा

ग्र.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.
मा.	०	१	०	१	०	१	०	१
दि.	२४	१६	२९	२१	१४	७	१९	११
घ.	४१	५४	३७	५१	४८	२	४५	५८
प.	२८	४८	४६	६	५३	१३	११	३१
वि.	५३	५३	४०	४०	२०	२०	७	७

गुर्वन्तर (१।४।२६।४०) मे उपदशा

ग्र.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.
मा.	२	१	३	०	२	१	२	१
दि.	२९	२६	८	२८	१०	७	१९	१६
घ.	८	१७	३१	८	२२	३१	४५	५४
प.	८	४६	६	५३	१३	५१	११	४८
वि.	५३	४०	४०	२०	२०	७	७	५३

राह्वन्तर (०।१०।२०) में उपदशा

ग्र.	रा.	शु.	सू.	च.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	१	२	०	१	०	१	०	१
दि.	५	२	१७	१४	२३	२०	२९	२६
घ.	३३	१३	४६	२६	४२	२२	३७	१७
पं.	२०	२०	४०	४०	१३	१३	४६	४६
वि.	०	०	०	०	२०	२०	४०	४०

शुक्रान्तर (१।६।२०) मे उपदशा

ग्र.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	३	१	२	१	२	१	३	२
दि.	१८	१	१७	११	२८	२१	८	२
घ.	५३	६	४६	२८	८	५१	३१	१३
प.	२०	४०	४०	५३	५३	६	६	२०
वि.	०	०	०	२०	२०	४०	४०	०

सूर्यान्तर (०।५।१०) में उपदशा

ग्र.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.
मा.	०	०	०	०	०	०	०	१
दि.	८	२२	११	२५	१४	२८	१७	१
घ.	५३	१३	५१	११	४८	८	४६	६
प.	२०	२०	६	६	५३	५३	४०	४०
वि.	०	०	४०	४०	२०	२०	०	०

चन्द्रान्तर (१।१।१०) में उपदशा

ग्र.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.
मा.	१	०	२	१	२	१	०	०
दि.	२५	२९	२	७	१०	१४	१७	२२
घ.	३३	३७	५७	२	२२	२६	४६	१३
प.	२०	४६	४६	१३	१३	४०	४०	२०
वि.	०	४०	४०	२०	२०	०	०	०

अष्टोत्तरी बुध महादशा वर्ष १७

बुधान्तर (२।८।३।२०) में उपदशा

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.
मा.	५	२	५	३	६	१	४	२
दि.	१	२९	१९	१७	७	२३	१३	११
घ.	३८	११	२८	२	१८	३१	४७	२१
प.	८	५१	३१	१३	५३	६	४६	२८
वि.	५३	७	८	२०	२०	४०	४०	५३

शन्यन्तर (१।६।२६।४०।) में उपदशा

ग्र.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	च.	मं.	बु.
मा.	१	३	२	३	१	२	१	२
दि.	२२	९	२	२०	१	१८	११	२९
घ.	२८	४१	५७	११	२८	४२	५८	११
प.	८	२८	४६	६	५३	१३	३१	५१
वि.	५३	५३	४०	४०	२०	२०	७	७

गुर्वन्तर (२।११।२६।४०) मे उपदशा

ग्र.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.
मा.	६	३	६	१	४	२	५	३
दि.	९	२९	२९	२९	२९	१९	१९	९
घ.	२४	३७	२१	४८	३२	४५	२८	४१
प.	४८	४६	६	५३	१३	११	३१	२८
वि.	५३	४०	४०	२०	२०	७	७	५३

राह्वन्तर (१।१०।२०) में उपदशा

ग्र.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	२	४	१	३	१	३	२	३
दि.	१५	१२	७	४	२०	१७	२	२९
घ.	३३	१३	४६	२६	२२	२	५७	३७
प.	२०	[illegible]०	४०	४०	१३	१३	४६	४६
वि.	०	०	०	०	२०	२०	४०	४०

शुक्रान्तर (३।३।२०) में उपदशा

ग्र.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	७	२	५	२	६	३	६	४
दि.	२१	६	१५	२८	७	२०	२९	१२
घ.	२३	६	१६	८	१८	११	२१	१३
प.	२०	४०	४३	५३	५३	६	६	२०
वि.	०	०	०	२०	२०	४०	४०	०

सूर्यान्तर (०।११।१०) में उपदशा

ग्र.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.
मा.	०	१	०	१	१	१	१	२
दि.	१८	१७	२५	२३	१	२९	७	६
घ.	५३	१३	११	३१	२८	४८	४६	६
प.	२०	२०	६	६	५३	५३	४०	४०
वि.	०	०	४०	४०	२०	२०	०	०

चन्द्रान्तर (२।४।१०) में उपदशा

ग्र.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.
मा.	३	२	४	२	४	३	५	१
दि.	२८	२	१३	२८	२९	४	१५	१७
घ.	३	५७	१७	४२	३२	२६	१६	१३
प.	२०	४६	४६	१३	१३	४०	४०	२०
वि.	०	४०	४०	२०	२०	०	०	०

भौमान्तर (१।३।३।२०) में उपदशा

ग्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.
मा.	१	२	१	२	१	२	०	२
दि.	३	११	११	१९	२०	२८	२५	२
घ.	३४	२१	५८	४५	२२	८	११	५७
प.	३८	२८	३१	११	१३	५३	६	६
वि.	५३	५३	७	७	२०	२०	४०	४०

अष्टोत्तरी शनि महादशा वर्ष १०

शन्यन्तर (०।११।३।२०) में उपदशा

प्र.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.
मा.	१	१	१	२	०	१	०	१
दि.	०	२८	७	४	१८	१६	२४	२२
घ.	५१	३८	२	४८	३१	१७	४१	२८
प.	५१	३१	१३	५३	६	४६	२८	८
वि.	७	७	२०	२०	४०	४०	५३	५३

गुर्वन्तर (१।९।३।२०) मे उपदशा

प्र.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.
मा.	३	२	४	१	२	१	३	१
दि.	२१	१०	३	५	२७	१६	९	२८
घ.	२५	२२	८	११	५७	५४	४१	३८
प.	११	१३	५३	६	४६	४८	२८	३१
वि.	७	२०	२०	४०	४०	५३	५३	७

राह्वन्तर (१।१।१०) में उपदशा

प्र.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	१	२	०	१	०	२	१	२
दि.	१४	१७	२२	२५	२९	२	७	१०
घ.	२६	४६	१३	३३	३७	५७	२	२२
प.	४०	४०	२०	२०	४६	४६	१३	१३
वि.	०	०	०	०	४०	४०	२०	२०

शुक्रान्तर (०।११।१०) मे उपदशा

प्र.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	०	१	३	१	३	२	४	२
दि.	४	८	७	२१	२०	४	३	१७
घ.	१६	५३	१३	५०	११	४८	८	४६
प.	६	२०	२०	६	६	५३	५३	४०
वि.	४०	०	०	४०	४०	२०	२०	०

सूर्यान्तर (०।६।२०) में उपदशा

प्र.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.
मा.	०	०	०	१	०	१	०	१
दि.	११	२७	१४	१	२८	५	२२	८
घ.	६	४६	४८	२८	३१	११	१३	५३
प.	४०	४०	५३	५३	६	६	२०	२०
वि.	०	०	२०	२०	४०	४०	०	०

चन्द्रान्तर (१।४।२०) मे उपदशा

प्र.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.
मा.	२	१	२	१	२	१	३	०
दि.	९	७	१८	१६	२७	२५	७	२७
घ.	२६	२	४२	१७	५७	३३	१३	४६
प.	४०	१३	१३	४६	४६	२०	२०	४०
वि.	०	२०	२०	४०	४०	०	०	०

भौमान्तर (०।८।२६।४०) में उपदशा

प्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.
मा.	०	१	०	१	०	१	०	१
दि.	१९	११	२४	१६	२९	२१	१४	७
घ.	४५	५८	४१	५४	३७	५१	४८	२
प.	११	३१	२८	४८	४६	६	५३	१३
वि.	७	७	५३	५६	४०	४०	२०	२०

बुधान्तर (१।६।२६।४०) में उपदशा

प्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.
मा.	२	१	३	२	३	१	२	१
दि.	२९	२२	९	२	२०	१	१८	११
घ.	११	२८	४१	५७	११	२८	४२	५८
प.	५१	८	२८	४६	६	५३	१३	३१
वि.	७	५३	५३	४०	४०	२०	२०	७

अष्टोत्तरी गुरु महादशा वर्ष १९

गुर्वन्तर (३।४।३।२०) में उपदशा

प्र.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.
मा.	७	४	७	२	५	२	६	३
दि.	१	१३	२३	६	१७	२९	९	२१
घ.	४१	४२	५८	५१	७	८	२४	२५
प.	५१	१३	५३	६	४६	८	४८	११
वि.	७	२०	२०	४०	४०	५३	५३	७

राह्वन्तर (२।१।१०) में उपदशा

प्र.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	२	४	१	३	१	३	२	४
दि.	२४	२७	१२	१५	२६	२९	१०	१३
घ.	२६	४६	१३	३३	१७	३७	२२	४२
प.	४०	४०	२०	२०	४६	४६	१३	१३
वि.	०	०	०	०	४०	४०	२०	२०

शुक्रान्तर (३।८।१०) मे उपदशा

प्र.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	८	२	६	३	६	४	७	४
दि.	१८	१३	४	८	२९	३	२३	२७
घ.	३६	५३	४३	३१	२१	८	५३	४६
प.	४०	२०	२०	६	६	५३	५८	४०
वि.	०	०	०	४०	४०	२०	२०	०

सूर्यान्तर (१।०।२०) में उपदशा

प्र.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.
मा.	०	१	०	१	१	२	१	२
दि.	२१	२२	२८	२९	५	६	१२	१३
घ.	६	४६	८	४८	११	५१	१३	५३
प.	४०	४०	५३	५३	६	६	२०	२०
वि.	०	०	२०	२०	४०	४०	०	०

चन्द्रान्तर (२।७।२०) मे उपदशा

प्र.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.
मा.	४	२	४	२	५	३	६	१
दि.	११	१०	२९	२७	१७	१५	४	२२
घ.	५६	२२	३२	५७	७	३३	४३	४६
प.	४०	१३	१३	४६	४६	२०	२०	४०
वि.	०	२०	२०	४०	४०	०	०	०

भौमान्तर (१।४।२६।४०) में उपदशा

प्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	च.
मा.	१	२	१	२	१	३	०	२
दि.	७	१९	१६	२९	२६	८	२८	१०
घ.	३१	४५	५४	८	१७	३१	८	२२
प.	५३	११	४८	८	४६	६	५३	१३
वि.	७	७	५३	५३	४०	४०	२०	२०

बुधान्तर (२।११।२६।४०) में उपदशा

प्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.
मा.	५	३	६	३	६	१	४	२
दि.	१९	९	९	२९	२९	२९	२९	१९
घ.	२८	४१	२४	३७	२१	४८	३२	४५
प.	३१	२८	४८	४६	६	५३	१३	११
वि.	७	५३	५३	४०	४०	२०	२०	७

शन्यन्तर (१।९।३।२०) में उपदशा

प्र.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.
मा.	१	३	२	४	१	२	१	३
दि.	२८	२१	१०	३	५	२७	१६	९
घ.	३८	२५	२२	८	११	५७	५४	४१
प.	३१	११	१३	५३	६	४६	४८	२८
वि.	७	७	२०	२०	४०	४०	५३	५३

अष्टोत्तरी राहु महादशा वर्ष १२

राहुन्तर (१।४।०) में उपदशा

ग्र.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	१	३	०	२	१	२	१	२
दि.	२३	३	२६	६	५	१५	१४	२४
घ.	२०	२०	४०	४०	३३	३३	२६	२६
प.	०	०	०	०	२०	२०	४०	४०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

शुक्रान्तर (२।४।०) में उपदशा

ग्र.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	५	१	३	२	४	२	४	३
दि.	१३	१६	२६	२	१२	१७	२७	३
घ.	२०	४०	४०	१३	१३	४६	४६	२०
प.	०	०	०	२०	२०	४०	४०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

सूर्यान्तर (०।८।०) में उपदशा

ग्र.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.
मा.	०	१	०	१	२	१	०	१
दि.	१३	३	१७	७	२२	१२	२६	१६
घ.	१०	२०	४६	४६	१३	१३	४०	४०
प.	०	०	४०	४०	२०	२०	०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

चन्द्रान्तर (१।८।०) में उपदशा

ग्र.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.
मा.	२	१	३	१	३	२	३	१
दि.	२३	१४	४	१५	१५	६	२६	३
घ.	२०	२६	२६	३३	३३	४०	४०	२०
प.	०	४०	४०	२०	२०	०	०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

भौमान्तर (०।१०।२०) में उपदशा

ग्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.
मा.	०	१	०	१	१	२	०	१
दि.	२३	२०	२८	२६	५	२	१७	१४
घ.	४२	२२	३७	१७	३३	१३	४६	२६
प.	१३	१३	४६	४६	२०	२०	४०	४०
वि.	२०	२०	४०	४०	०	०	०	०

बुधान्तर (१।१०।२०) में उपदशा

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.
मा.	३	२	३	२	४	१	३	१
दि.	१७	२	२८	१५	१२	७	४	२०
घ.	२	५७	३७	३३	१३	४६	२६	२२
प.	१३	४६	४६	२०	२०	४०	४०	१३
वि.	२०	४०	४०	०	०	०	०	२०

शन्यन्तर (१।१।१०) में उपदशा

ग्र.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.
मा.	१	२	१	२	०	१	०	२
दि.	७	१०	१४	१७	२२	२५	२८	२
घ.	२	२२	२६	४६	१३	३३	३७	५७
प.	१३	१३	४०	४०	२०	२०	४६	४६
वि.	२०	२०	०	०	०	०	४०	४०

गुर्वन्तर (२।१।१०) में उपदशा

ग्र.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.
मा.	४	२	४	१	३	१	३	२
दि.	१३	२४	२७	१२	१५	२६	२८	१०
घ.	४२	२६	४६	१३	३३	१७	३७	२२
प.	१३	४०	४०	२०	२०	४६	४६	१३
वि.	२०	०	०	०	०	४०	४०	२०

अष्टोत्तरी शुक्र महादशा वर्ष १८

शुक्रान्तर (४।१।०) में उपदशा

प्र.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	१	२	६	३	७	४	८	५
दि.	१५	२१	२४	१८	२१	१६	१६	१३
घ.	५०	४०	१०	५३	२३	६	३८	२०
प.	०	०	०	२०	२०	४०	४०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

सूर्यान्तर (१।२।०) में उपदशा

प्र.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.
मा.	०	१	१	२	१	२	१	२
दि.	२३	२८	१	६	८	१३	१६	२१
घ.	२०	२०	६	६	५३	५३	४०	४०
प.	०	०	४०	४०	२०	२०	०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

चन्द्रान्तर (२।११।०) में उपदशा

प्र.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.
मा.	४	२	५	३	६	३	६	१
दि.	२५	१७	१५	७	४	२६	२४	२८
घ.	५०	४६	१६	१३	४३	४०	१०	२०
प.	०	४०	४०	२०	२०	०	०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

भौमान्तर (१।६।२०) में उपदशा

प्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.
मा.	१	२	१	३	२	३	१	२
दि.	११	२८	२१	८	२	१८	१	१७
घ.	२८	८	५१	३१	१३	५३	६	४६
प.	५३	५३	६	६	२०	२०	४०	४०
वि.	२०	२०	४०	४०	०	०	०	०

बुधान्तर (३।३।२०) में उपदशा

प्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.
मा.	६	३	६	३	७	२	५	२
दि.	१७	२०	२९	१२	२१	६	१५	२८
घ.	१८	११	२१	१३	२३	६	१६	८
प.	५३	६	६	२०	२०	४०	४०	५३
वि.	२०	४०	४०	०	०	०	०	२०

शन्यन्तर (१।११।१०) में उपदशा

प्र.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.
मा.	२	४	२	४	१	३	१	३
दि.	४	३	१७	१६	८	७	२१	२०
घ.	४८	८	४६	६	५३	५३	५१	११
प.	५३	५३	४०	४०	२०	२०	६	६
वि.	२०	२०	०	०	०	०	४०	४०

गुर्वन्तर (३।८।१०) में उपदशा

प्र.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.
मा.	७	४	८	२	६	३	६	४
दि.	२३	२७	१८	१३	४	८	२९	३
घ.	५८	४६	३६	५३	४३	४१	२१	८
प.	५३	४०	४०	२०	२०	६	६	५३
वि.	२०	०	०	०	०	४०	४०	२०

राह्वन्तर (२।४।०) में उपदशा

प्र.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	३	५	१	३	२	४	२	४
दि.	३	१३	१६	२६	२	१२	१७	२७
घ.	२०	२०	४०	४०	१३	१३	४६	४६
प.	०	०	०	०	२०	२०	४०	४०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

दशाकाल निर्णय—

दशाप्यष्टोत्तरी शुक्ले कृष्णे विंशोत्तरी मता ।
गणनीया दशा सुज्ञैस्तदुमेश्वरसम्मतम् ॥ २२ ॥

शुक्ल पक्ष में जन्म हो तो अष्टोत्तरी दशा कृष्णपक्ष में जन्म हो तो विंशोत्तरी दशा का साधन बुद्धिमान गणितज्ञ को करना चाहिए। ऐसा उमा-महेश्वर का मत है ॥ २२ ॥

नक्षत्र-आयु साधन—

मासाश्चतुर्दश तथा दिनानि द्वादशैव हि ।
एवं कृतेऽब्दमानं यत्तत्त्याज्यं परमायुषः ॥ २३ ॥

विंशोत्तरी दशाक्रम से साधित नक्षत्रायु से १४ मास १२ दिन घटा देने से शेष अष्टोत्तरी मत से आयु प्रमाण होता है ॥ २३ ॥

नक्षत्रभोगनाडीभिर्युता त्रिंशद्धता रसैः ।
बाणभक्तेन चाब्दानामष्टोत्तर्यादि सूरिभिः ॥ २४ ॥

जन्म नक्षत्र के भोगघटी में ३० जोड़कर ६ से गुणाकर ५ से भाग देने पर लब्धि अष्टोत्तरी मत से नक्षत्रायु होती है ॥ २४ ॥

दशा का ध्रुवाङ्क साधन—

नवभिर्वर्षैर्मासः शेषमर्कगुणं कुरु ।
मासान् क्षिप्त्वा ततस्त्रिंशद्गुणं तत्र दिनं क्षिपेत् ॥ २५ ॥
अष्टोत्तरशतेनाप्तं दिनं तद्ध्रुवका बुधाः ।
तच्च षष्टिगुणं कृत्वा तन्मध्ये घटिकाः क्षिपेत् ॥ २६ ॥
अष्टोत्तरशतैर्भागं लब्धाङ्के घटिका वदेत् ।
शेषं षष्टिगुणं कृत्वा स्वहरैर्भागमाहरेत् ॥ २७ ॥
लब्धाङ्के च पलं ज्ञेयं शेषं षष्टिगुणं कुरु ।
अष्टोत्तरशतैर्भागं लब्धं तद्विपलं वदेत् ॥ २८ ॥

नव वर्षों में एक मास होता है अर्थात् महादशा वर्ष को ९ से भाग देनेपर लब्धि मास, शेष को १२ से गुणाकर अन्तर्दशा के मास को जोड़कर पुनः ३० से गुणा करें तथा दिन संख्या जोड़कर १०८ से भाग देने पर लब्धि दिन, शेष को ६० से गुणाकर घटी जोड़कर १०८ से भाग देने पर लब्धि घटी, पुनः शेष को ६० से गुणाकर पल जोड़कर १०८ से भाग देनेपर लब्धि पल तथा शेष को पुनः ६० से गुणाकर अन्तर में विपल हों तो उसे जोड़कर १०८ का भाग देने से लब्धि विपल होती हैं। इस प्रकार मास, घटी, पल. विपल में ग्रहों का ध्रुवाङ्क आता है ॥ २५-२८ ॥

उदाहरण:-

सूर्य दशा वर्ष ६

६÷१-१) ६ (०

०

६×१२

७२×३०

१०८)२१६०(२०

२१६

×०

०

×

सूर्य का ध्रुवाङ्क ०।२० इसमे प्रत्येक ग्रहों के महादशामान से गुणा करने पर सूर्य महादशा में सभी ग्रहों का अन्तर आयेगा। यथा- (०।२०)×६=१।४।०० अर्थात् ४ मास० दिन सूर्य में सूर्य का अन्तर (०।२०)×१५=१०।०० अर्थात् १० मास० दिन सूर्य में चन्द्रमा का अन्तर हुआ। इसी प्रकार सभी ग्रहों का अन्तर ज्ञात होगा। इसी प्रकार अन्तर्दशाओं का भी ध्रुवाङ्क लाया जायगा।

सन्ध्यादशा --

परमायुर्द्वादशांशः स्फुटं सन्ध्या भवेत्ततः।
स्वलग्नाधिपतेरादौ तदादीनां दशा ततः ॥ २९ ॥

परमायु १२० वर्ष के द्वादशांश (१० वर्ष) तुल्य सन्ध्यादशा होती है प्रथम दशा (लग्न) लग्नाधिपति[1] की अनन्तर क्रम से द्वितीयादि भावों में स्थित राशियों की दशा होती है। (सभी राशियों की दशा तुल्य १०-१० वर्षों की ही होती है) ॥ २९ ॥

यावद्वर्षाणि चन्द्रस्य दशा विंशोत्तरीमते।
तावद्वर्षप्रमाणा च सन्ध्या भवति निश्चितम् ॥ ३० ॥

विंशोत्तरी मान से जितने वर्षों की चन्द्रमा की महादशा होती है उतने ही वर्ष प्रमाण आयु की सन्ध्या होती है। (चन्द्रदशा १० वर्ष की होती है अतः आयु की सन्ध्या का मान भी १० वर्ष ही होगा ॥ ३० ॥

---

१. "स्वलग्नाधिपतेरादौ" इससे स्पष्ट होता है कि प्रथम दशा लग्नेश की अनन्तर अन्य भावेशों की सन्ध्यादशा होगी। परन्तु यह असंगत है। यहाँ १२ राशियों की दशा बताई गई है।
"दशानां तन्मिताब्दाः स्युर्लग्नराशिक्रमामता।"

उदाहरण— जन्मलग्न मकर, जन्मतिथि ३० जुलाई १९८२

अतः सर्व प्रथम मकर राशि की दशा १० वर्ष तक अनन्तर कुम्भ-मीन आदि राशियों की १०-१० वर्षों की दशा होगी। यथा—

सन्ध्यादशा चक्र वर्ष १२०

राशि०	व०	मा०	दि०	दि०	मा०	सन्०
	×	×	×	३०	७	१९८२ ई०
मकर	१०	०	०	३०	७	१९९२
कुम्भ	१०	०	०	३०	७	२००२
मीन	१०	०	०	३०	७	२०१२
मेष	१०	०	०	३०	७	२०२२
वृष	१०	०	०	३०	७	२०३२
मिथुन	१०	०	०	३०	७	२०४२
कर्क	१०	०	०	३०	७	२०५२
सिंह	१०	०	०	३०	७	२०६२
कन्या	१०	०	०	३०	७	२०७२
तुला	१०	०	०	३०	७	२०८२
वृश्चिक	१०	०	०	३०	७	२०९२
धनु	१०	०	०	३०	७	२१०२

पाचक दशा—

सन्ध्या रसगुणा कार्या चन्द्रवह्निहृता फलम्।
प्रथमे कोष्ठके स्थाप्यमर्द्धमर्द्धं त्रिकोष्ठके ॥ ३१ ॥
त्रिभागं वसुकोष्ठेषु लिखेद्विद्वान् प्रयत्नतः।
एवं द्वादशभावेषु पाचकानि प्रकल्पयेत् ॥ ३२ ॥

सन्ध्यादशा प्रमाण को ६ से गुणाकर ३१ से भाग देने पर जो वर्षादि लब्धि प्राप्त हो उसे प्रथम कोष्ठक में रखना चाहिये। अनन्तर लब्धि के आधे वर्षादि मान को अग्रिम तीन कोष्ठकों में रखना चाहिये। पुनः लब्धि के तृतीयांश को शेष आठ कोष्ठकों में रखने से पाचक दशा होती है। (पाचक दशा का अभिप्राय अन्तर्दशा से है। एक राशि की महादशा में सभी राशियों की अन्तर्दशा का ही साधन पाचकदशा में किया जाता है) ॥ ३१-३२ ॥

उदाहरण–मकर राशि की दशा का प्रमाण १० वर्ष

१० × ६–६०÷३१–

३१) ६० (१
३१
२९ × १२

लब्धि १।११।६।४६ प्रथम कोष्ठ में

आधा ०।११।१८।२३ तीन कोष्ठकोंमें

३१) ३४८ (११
३१
३८
३१
७ × ३०

तृतीयांश ०।७।२२।२३ आठ कोष्ठकों में

३१) २१० (६
१८६
२४ × ६०

३१) १४४० (४६
१२४
२००
१८६
३४

मकर राशि की सन्ध्यादशा में पाचकदशा

	व०	मा०	दि०	घ०		दि.	मा०	सन्
ग०	×	×	×	×	×	३०	७	१९८२ ई०
मकर	१	११	६	४६	४६	६	७	१९८४
कुम्भ	०	११	१८	३	४९	२४	६	१९८५
मीन	०	११	१८	३	५२	१२	६	१९८६
मेष	०	११	१८	३	५५	३०	५	१९८७
वृष	०	७	२२	२३	१८	२३	१	१९८८
मिथुन	०	७	२२	२३	४१	१५	९	१९८८
कर्क	०	७	२२	२३	४	८	५	१९८९
सिंह	०	७	२२	२३	२७	३०	१२	१९८९
कन्या	०	७	२२	२३	५०	२२	८	१९९०
तुला	०	७	२२	२३	१३	१५	४	१९९१
वृश्चिक	०	७	२२	२३	३६	७	१२	१९९१
धनु	०	७	२२	२३	५९	३०	७	१९९२
					६०			

दशा वाहन—

स्वकीयजन्मनक्षत्राद्गणयेत्पाकमावधि ।
नवभिस्तु हरेद्भागं शेषं तु पाकवाहनः ॥ ३३ ॥
गर्दभो घोटको हस्ती महिषो जम्बुसिंहकौ ।
काको हंसो मयूरश्च नवैते नरवाहना ॥ ३४ ॥

अपने जन्म नक्षत्र से दशा नक्षत्र पर्यन्त गिनने से जो संख्या प्राप्त हो उसमें ९ का भाग देने से शेष तुल्य दशा का वाहन होता है। गर्दभ, घोड़ा, हाथी भैंसा शृगाल, शेर, कौआ, हंस तथा मोर, ये क्रम से दशाओं के नव वाहन होते हैं ॥ ३३-३४ ॥

वाहन फल—

गर्दभ वाहन फल—

दशाप्रवेशे यदि गर्दभः स्यात् उत्पन्नभोगी जडतासमेतः ।
लज्जाविहीनो धनधान्यहीनः स्यान्मानवो वस्त्रविवर्जितश्च ॥ ३५ ॥

दशा प्रवेश काल में यदि गर्दभ वाहन हो तो उपलब्ध समस्त वस्तुओं को उपभोग करने वाला, जड़, लज्जा से रहित, धन-धान्य से हीन, तथा वस्त्रों से रहित मनुष्य होता है ॥ ३५ ॥

घोटक फल—

चपलचञ्चलताबहुभक्षकः प्रकटबुद्धिसघोषचमूपतिः ।
दृढतनुर्बहुकार्यकरो नरो तुरगयोर्यदि वाहनसंस्थिताः ॥ ३६ ॥

दशा वाहन यदि घोटक (अश्व) हो तो, मनुष्य, चञ्चल, अधिक भक्षण करने वाला, अत्यन्त बुद्धिमान, गम्भीर वाणी से युक्त, सेनापति, दृढ शरीर वाला, तथा बहुत से कार्यों को करने वाला मनुष्य होता है ॥ ३६ ॥

गजवाहन फल—

नानाकार्यकृते हि सौख्यजननो देवाधिपो वाहनः ।
संतृप्तो बहुमानता शुभगतिः सेनापतिः शोभनः ।
सर्वः सौख्यकरः सुभूषणधरः स्याच्चञ्चलो दुष्टता
पाकाऽयं यदि वाहनो गजपतेर्नानाकलाकौशलः ॥ ३७ ॥

यदि दशापति का गज वाहन हो तो जातक विविध प्रकार के सुख कारक कार्यों को करने वाला, सन्तुष्ट, सम्मानित, शुभ कार्यों में रुचि रखने वाला, सेनापति, आकृति से सुन्दर, सभी प्रकार से सुखकारक, सुन्दर आभूषणों को धारण करने वाला, चञ्चल तथा विविध प्रकार के कलाकौशलों में निपुण होता है ॥३७॥

महिष वाहन फल—

महिषयोर्बलबुद्धिविहीनता जयमल्पं प्रबलाग्निभयातुरम् ।
शकटयोः प्रबले बलसंयुतो महिषयोर्यदि वाहनता भवेत् ॥ ३८ ॥

यदि दशाधीश का वाहन महिष हो तो जातक बल-बुद्धि से हीन, स्वल्प विजय पाने वाला, प्रचण्ड अग्नि से भयभीत, गाड़ियों से युक्त तथा बलवान होता है ॥३८॥

जम्बुक वाहन फल—

जम्बुके बहुतरैव चञ्चला व्याधिदुःखपरिपीडाताङ्गना ।
क्लेशता रिपुजनाच्च पीडिता धान्यनाशमतिसंक्षयो भवेत् ॥ ३९ ॥
जम्बुकोत्पन्नभोगी च लाभभक्षस्तथैव च ।
श्वेताङ्गं श्वेतवस्त्रं च हानिः स्यात्क्रयविक्रयोः ॥ ४० ॥

दशाधीश का वाहन यदि जम्बुक हो तो उस व्यक्ति की स्त्री अत्यन्त चञ्चला, व्याधि एवं दुःख से पीडित होती है, स्वयं भी क्लेश युक्त, शत्रुओं से पीड़ित तथा सम्पत्ति के नाश से क्षीण होता है।

जम्बुक वाहन वाली दशा में उत्पन्न व्यक्ति प्राप्त सुखों का भोग करने वाला, लाभांश का भक्षण (उपभोग) करने वाला, श्वेत वर्ण (विशेष गौर वर्ण) तथा श्वेत वस्त्रों से युक्त तथा क्रय-विक्रय में हानि उठाने वाला होता है ॥ ३९-४० ॥

सिंह वाहन का फल—

दशाप्रवेशे यदि वाहनश्च सिंहो बलिष्ठो विविधैः प्रकारैः ।
उत्पन्नभोगी रिपुनाशकारी स्याद्वाहने केसरिणो विशेषः ॥ ४१ ॥

दशा प्रवेश के समय यदि दशाधीश का वाहन सिंह हो तो जातक विविध प्रकार से बलिष्ठ होता है, अपने पौरुष से अर्जित वस्तु का उपभोग करने वाला, तथा शत्रुओं का दमन करने वाला होता है ॥ ४१ ॥

काक वाहन फल—

काके वाहनसंस्थिते यदि दशा स्याच्चञ्चलो निर्भयो
स्थूलाङ्गो मलिनः कुवेषधरितो नीचैर्जनैः पूजितः ।
स्थाने राजभयं तथा रिपुभयं मानापमानं नराद्-
दुष्टार्तिः कलहं कुचेष्टिततरः स्त्रीद्वेषकारी भवेत् ॥ ४२ ॥

दशाधीश का वाहन यदि काक (कौआ) हो तो मनुष्य चञ्चल, निर्भय मोटे चर्मवाला, मलिन, कुत्सित (भद्दा) वस्त्र पहनने वाला, नीच लोगों से पूजित (सम्बन्धित), स्वदेश में राजभय, शत्रुभय, लोगों से अपमान, दुष्टों से कष्ट, कलह, निन्दित कर्मों की चेष्टा करने वाला तथा स्त्री से द्वेष करने वाला होता है ॥ ४२ ॥

हंसवाहन का फल—

जनकलानिधिकेलिसमन्वितो द्विजपतेर्बहुआत्यसुखान्वितः।
सदशने च मति प्रबलायतासुगतिताचतुराननवाहनः॥ ४४॥

यदि दशापति का वाहन हंस हो तो जातक विविध कथाओं में प्रवीण (कलाकारों) की संगति करने वाला, क्रीडा प्रेमी, ब्राह्मणों द्वारा सुख और सम्मान पाने वाला, विस्तृत यश से युक्त तथा सुन्दर गति से चलने वाला होता है॥ ४३॥

मयूर वाहन का फल—

मयूरवाहनतो बहुलं सुखं धृतिकलाकुशलो मखकेलिकृत्।
मधुरवाक्ययुतो मधुरप्रियः सदशनेन नरश्च समन्वितः॥ ४४॥

दशाधीश का मयूर वाहन हो तो जातक अत्यधिक सुखों से युक्त, धैर्यवान, कलाओं में निपुण, यज्ञकार्य एवं क्रिड़ाओं का आयोजन करने वाला, मधुरभाषी, मधुर पदार्थों का प्रेमी तथा सुन्दर दांतों से युक्त होता है॥ ४४॥

महादशा-अन्तर्दशाफल—

सूर्य महादशा फल

उद्विग्नचित्तपरिखेदितवित्तनाशं
क्लेशप्रवासगदपोडमहाभिघातम्।
संक्षोभितः स्वजनबन्धुवियोगमेति
सौरी दशा भवति राजकुलाभिघातः॥ ४५॥

सूर्य की महादशा में चित्त में उद्वेग, खिन्नता, धन हानि, कष्ट, प्रवास (दूसरे स्थानों में निवास), रोग पीडा, मानसिक आघात, भाई-बन्धुओं के वियोग से क्षोभ, एवं राजकीय अभिघात (दण्ड) प्राप्त होता है॥ ४५॥

सूर्यान्तर फल—

सूर्ये राजकुलाल्लाभः पीडा स्यात्पित्तसम्भवा।
विपत्तथा बान्धवानां व्ययमेव हि सर्वतः॥ ४६॥

सूर्य महादशा में सूर्य का अन्तर हो तो राजकुल से लाभ, पित्तप्रकोप से उत्पन्न पीडा, बन्धुओं के ऊपर विपत्ति तथा सर्वत्र व्यय ही होता है॥ ४६॥

चन्द्रान्तर फल—

नृपाल्लाभः सुवर्णानि मणिरत्नप्रवालकम्।
प्राप्यते यानमानं तु सूर्यस्यान्तर्दशा कुजे॥ ४८॥

शत्रुओं से सन्धि (युद्ध या विवाद में सन्धि), यात्रा, धन लाभ, तथा सुखानुभूति होती है ॥ ४७ ॥

भौमान्तर फल—

नृपाल्लाभः सुवर्णानि मणिरत्नप्रवालकम् ।
प्राप्यते यानमानं तु सूर्यस्यान्तर्दशां कुजे ॥ ४८ ॥

सूर्य की महादशा में मंगल का अन्तर हो तो राजा से लाभ, स्वर्ण, मणि, मूंगा आदि रत्नों का लाभ, यात्रा और सम्मान-प्राप्ति होती है ॥ ४८ ॥

राह्वन्तर फल—

शङ्काऽमानं व्याधिकोपं वित्तनाशं जनक्षयम् ।
सर्वमत्राशुभं विद्यात्सूर्यस्यान्तर्गते तमे ॥ ४९ ॥

सूर्य महादशा में राहु का अन्तर हो तो प्रायः कार्यों में शंका, अपमान, व्याधि, क्रोध, धन नाश, जनहानि, तथा सभी प्रकार से अशुभ फल ही होता है ॥ ४९ ॥

गुर्वन्तर फल—

गतव्याधिशरीरश्च अलक्ष्म्या त्यज्यते नरः ।
प्राप्नोति धर्मपदवीं भानोरन्तर्गते गुरौ ॥ ५० ॥

सूर्य की महादशा के अन्तर्गत यदि गुरु का अन्तर हो तो शारीरिक व्याधियों का अन्त (अर्थात् स्वास्थ्य लाभ), निर्धनता का परित्याग (धनलाभ) धार्मिक कार्यों में अभिरुचि तथा धार्मिक पद की प्राप्ति होती है ॥ ५० ॥

शन्यन्तर फल—

राज्यभङ्गः शक्तिहानिः सुहृद्बन्धुविवर्जितः ।
जायते तत्र वैकल्यं सूर्यस्यान्तर्गते शनौ ॥ ५१ ॥

सूर्य महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो तो राज्यभङ्ग (सत्ता का पतन) शक्ति का ह्रास, मित्रों और भाइयों का वियोग तथा विकलता होती है ॥ ५१ ॥

बुधान्तर फल—

क्लेशः कष्टं च दारिद्र्यं पामाविचर्चिकादिभिः ।
धनधान्यस्य[1] निक्षिप्तं सूर्यस्यान्तर्गते बुधे ॥ ५२ ॥

सूर्य महादशा मे बुध का अन्तर हो तो क्लेश, कष्ट, दरिद्रता, पामा (खुजली) एवं विचर्चिका (अपरस) जैसे रोगों के कारण (चिकित्सा हेतु) धन-धान्य सभी निक्षिप्त (धरोहर या गिरवी) हो जाता है ॥ ५२ ॥

केत्वन्तर फल—

देशत्यागं बन्धुनाशमर्थनाशं कुल[1]क्षयम् ।
केत्वन्तरे सूर्यगते सर्वं चैवाशुभं वदेत् ॥ ५३ ॥

---

१. 'धन०' पाठान्तरम् ।

सूर्य महादशा में केतु का अन्तर हो तो देश त्याग, बन्धुओं एवं धन का नाश तथा कुल का क्षय (ह्रास) होता है ।। ५३ ।।

शुक्रान्तर फल—

शिरोरोगप्रबलेभ्यो ज्वरातीसारशूलतः ।
शरीरे क्लेशमाप्नोति सूर्यस्यान्तर्गते भृगौ ।। ५४ ।।

सूर्य की महादशा में शुक्र का अन्तर हो तो प्रबल दोषों के कारण शिर में रोग, ज्वर, अतिसार एवं शूल (उदर पीड़ा) से शारीरिक कष्ट होता है ।। ५४ ।।

चन्द्रमहादशा-अन्तर्दशाफल

चन्द्रमहादशाफल—

सम्यग्विभूतिवरवाहनछत्रयानं
क्षेमप्रतापबलवीर्यसुखानि यस्य
मिष्टान्नपानशयनासनभोजनानि
चन्द्रो ददाति धनकाञ्चनभूमिलाभम् ।। ५५ ।।

चन्द्रमा की महादशा में भलीभाँति सम्पत्ति का लाभ, उत्तम कोटि के वाहन एवं छत्र से विभूषित यात्रा, कल्याण प्राप्ति, प्रताप, बल एवं सुख की वृद्धि, मिष्ठान्न, मधुरपेय, सुखद शय्या एवं आसन (सोने बैठने का स्थान), रुचिकर भोजन, धन, स्वर्ण तथा भूमि का लाभ होता है ।। ५५ ।।

चन्द्रान्तरफल—

चन्द्रान्तः स्त्रीपुत्रलाभ वस्त्राभरणसंयुतम् ।
स्वपक्षगंश्च कल्याणमात्मनिद्रारतिर्भवेत् ।। ५६ ।।

चन्द्रमा की महादशा में चन्द्रमा का ही अन्तर हो तो, वस्त्र एवं आभूषण से युक्त स्त्री एवं पुत्र का लाभ, अपने पक्ष के लोगों (मित्रों-अनुयायियों) से कल्याण प्राप्ति तथा सुख पूर्वक निद्रा लेने में रुचि होती है ।। ५६ ।।

भौमान्तर फल—

अग्निपित्तकृता पीडा वह्निचौरभवा तथा ।
पदच्युतिश्च नियता भौमे चन्द्रगते नृणाम् ।। ५७ ।।

चन्द्रमा की महादशा में भौम का अन्तर हो तो अग्नि ज्वर सम्बन्धी और पित्त सम्बन्धी पीड़ा, अग्नि और चोर से भय, तथा पद से च्युति (परित्याग) होता है ।। ५७ ।।

राह्वन्तर फल—

रिपुरोगाग्निरुद्वेगो[1] बन्धुनाशो धनक्षयः ।
न किञ्चित्सुखमाप्नोति चन्द्रे राहुर्यदानुगः ।। ५८ ।।

१. "रिपु रोगाग्निभिः पीडा" पाठान्तरम् ।

चन्द्रमा की महादशा में यदि राहु का अन्तर हो तो शत्रु, रोग और अग्नि से कष्ट, उद्वेग, बन्धुओं का नाश एवं धन हानि होती है तथा मनुष्य थोड़ा भी सुख नहीं पाता है ॥ ५८ ॥

गुर्वन्तर फल—

धर्माधर्माप्तिसौख्यानि वस्त्रालङ्करणैर्जयः ।
प्राप्नोत्यन्तर्दशायां हि गुरोश्चन्द्रगतस्य च ॥ ५९ ॥

गुरु का अन्तर यदि चन्द्रमा की महादशा में हो तो धर्म और अधर्म के उपदेश (प्रवचन) से धन लाभ एवं सुख, वस्त्राभूषण की प्राप्ति, तथा विजय प्राप्ति होती है ॥ ५९ ॥

शन्यन्तर फल—

बन्धूद्वेगं शोकभयं हानिव्यसनदोषगम् ।
भवन्ति तत्र सन्देहाश्चन्द्रस्यान्तर्गते शनौ ॥ ६० ॥

चन्द्रमा की महादशा में शनि का अन्तर हो तो बन्धुओं से उद्वेग, शोक, भय, हानि एवं दुर्व्यसन प्रभृति दोषों की प्राप्ति होती है तथा सदैव सन्देह की स्थिति बनी रहती है ॥ ६० ॥

बुधान्तर फल—

सर्वत्र लभते सौख्यं गजाश्वैर्गोधनादिकैः ।
भवत्यन्तर्दशायां हि चन्द्रस्यान्तर्गते बुधे[1] ॥ ६१ ॥

चन्द्रमा की महादशा में बुधका अन्तर हो तो हाथी, घोड़ा, गौ, धन आदि से सर्वत्र सुख की प्राप्ति होती है ॥ ६१ ॥

केत्वन्तर फल—

चापल्यं चोद्वेगसत्ता बन्धुहानिर्धनक्षयः ।
जायतेऽन्तर्गते केतौ चन्द्रस्यैव नरस्य हि ॥ ६२ ॥

चन्द्रमा की महादशा में केतु का अन्तर हो तो मनुष्य चञ्चल स्वभाव वाला एवं उद्विग्न होता है। तथा उसके भाइयों की हानि एवं धन का नाश होता है ॥६२॥

शुक्रान्तर फल—

बहुस्त्रीसंगमं चाथ कन्यकाजन्म एव च[2] ।
मुक्ताहीरमणिप्राप्तिश्चन्द्रस्यान्तर्गते सिते ॥ ६३ ॥

चन्द्रमा की महादशा में शुक्र का अन्तर हो तो बहुत सी स्त्रियों के साथ समागम, कन्या का जन्म तथा मोती-हीरा-मणि आदि की प्राप्ति होती है ॥ ६३ ॥

सूर्यान्तर फल—

जन्मप्रभावसौख्यं च व्याधिनाशं रिपुक्षयम् ।
ऐश्वर्यं सौख्यमतुलमर्कं चन्द्रगते यदि ॥ ६४ ॥

---

१. 'फलं चन्द्रगतस्यान्तर्दशायां शशिजस्य हि' पाठान्तरम् ।
२. निश्चितम् ।

चन्द्रमा की महादशा में सूर्य का अन्तर हो तो जातक जन्मजात प्रभाव शाली और सुखी होता है। व्याधियों का नाश (आरोग्य प्राप्ति), शत्रुओं का शमन, धन-सम्पत्ति एवं अतुलनीय सुख की प्राप्ति होती है ॥ ६४ ॥

मङ्गलमहादशा-अन्तर्दशा फल—

महादशा फल—

शस्त्राभिघातो नृपतेश्च पीडा चौर्याग्निरोगाश्च धनस्य हानिः।
कार्याभिघातश्च नरस्य दैन्यं भवेद्दशायां धरणीसुतस्य ॥ ६५ ॥

मंगल की महादशा में शस्त्र से घात (चोट), राजकीय पीड़ा, चोर अग्नि और रोग से धन हानि, एवं कार्यों का नाश होता है, तथा मनुष्य दरिद्र हो जाता है ॥ ६५ ॥

भौमान्तर फल—

कौज्यां शत्रु विमर्दश्च विग्रहो बन्धुभिः सह।
रक्तपित्तकृता पीडा परस्त्रीसङ्गमो भवेत् ॥ ६६ ॥

मंगल की महादशा में मंगल का अन्तर हो तो रक्त-पित्त जन्य पीडा तथा परायी स्त्रियों के साथ समागम होता है ॥ ६६ ॥

राह्वन्तर फल—

शस्त्राग्निचौरशत्रूणामापदां च भयं भवेत्।
अर्थनाशो रुजा पीडा राहौ मङ्गलवर्तिनि ॥ ६७ ॥

मङ्गल की महादशा में राहु का अन्तर हो तो शस्त्र, अग्नि, चोर, और शत्रु कृत आपत्ति एवं भय धन हानि तथा रोग से कष्ट होता है ॥ ६७ ॥

गुर्वन्तर फल—

पुण्यतीर्थाभिगमनं देवब्राह्मणपूजनम्।
कुजे जीवान्तरे प्राप्ते नृपात्किञ्चिद्भयं भवेत् ॥ ६८ ॥

मंगल की महादशा में गुरु का अन्तर हो तो पुण्यतीर्थों की यात्रा, देवताओं और ब्राह्मणों का पूजन (सत्कार), तथा राजा की तरफ से कुछ भय (राजकीय उलझन) प्राप्त होता है ॥ ६८ ॥

शन्यन्तर फल—

उपर्युपरि जायन्ते दुःखान्यपि सहस्रशः।
जनक्षयं कुजस्यार्कीयां प्राप्तान्तर्दशा यदा ॥ ६९ ॥

मंगल की महादशा में शनि का अन्तर हो तो एक के ऊपर एक हजारों कष्ट जातक के ऊपर आते हैं तथा आत्मीय (पारिवारिक) सदस्यों का भी क्षय होता है ॥ ६९ ॥

बुधान्तर फल—

रिपुशस्त्राग्निचौरेभ्यो नाशं प्राप्नोति मानवः ।
महाक्रूरकृता पीडा कुजस्यानुगते बुधे ॥ ७० ॥

भौम की महादशा में बुध का अन्तर हो तो शत्रु, शस्त्र, अग्नि और चोर से मनुष्य का नाश होता है। तथा महान क्रूर व्यक्ति से पीड़ित होता है ॥ ७० ॥

केत्वन्तर फल—

मेघाशनिभयं घोरं शस्त्राग्नितस्करैस्तथा ।
क्लेशमाप्नोति भौमस्य केतुरन्तर्गतो यदा ॥ ७१ ॥

भौम की महादशा में यदि केतु का अन्तर हो तो बादल, उपलवृष्टि (अथवा विद्युत् पात), शस्त्र, अग्नि एवं चोर से भयंकर भय प्राप्त होता है ॥ ७१ ॥

शुक्रान्तर फल—

शस्त्रकोपभयं व्याधिर्धनक्षयमुपद्रवम् ।
प्रवासगमनानि स्युः कुजस्यान्तर्गते सिते ॥ ७२ ॥

मंगल की महादशा में शुक्र का अन्तर हो तो जातक को शस्त्र से, किसी (विशेष रूप से राजा) के क्रोध से भय, व्याधि (रोग), धनक्षय, उपद्रव, प्रवास तथा यात्रायें होती हैं ॥ ७२ ॥

सूर्यान्तर फल—

प्रचण्डशासनं याति नृपाद्धयजयान्वितम् ।
क्षुवतेऽनर्थयुक्तं च भौमस्यान्तर्गते रवौ ॥ ७३ ॥

मंगल की महादशा में सूर्य का अन्तर हो तो जातक राजा के कठोर शासन में रहता हुआ घोड़ा तथा विजय (अभियान में सफलता) प्राप्त करता है। स्वतन्त्र होने पर अनर्थकारी कार्यों में लिप्त हो जाता है ॥ ७३ ॥

चन्द्रान्तर फल—

नानावित्तसुहृत्सौख्ययुक्तं मुक्तामणिः प्रभोः ।
भौमस्यान्तर्दशां प्राप्तश्चन्द्रमाः कुरुते भृशम् ॥ ७४ ॥

भौम की महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो तो जातक विविध प्रकार की धन-सम्पत्ति, एवं मित्रों के सुख से युक्त होता है तथा स्वामी (राजा) से मुक्ता और मणि प्राप्त करता है ॥ ७४ ॥

राहुमहादशा-अन्तर्दशा फल—

महादशा फल—

क्षुद्भया विहीनमतिविभ्रमसर्वशून्यं
विश्वं भयातिविषमापदमृत्युतुल्यम् ।

व्याधिर्वियोगधनहानि विषानि चैवं
राहोर्दशा सृजति जीवितसंशयं च ॥ ७५ ॥

राहु की महादशा में जातक बुद्धि (विवेक) से रहित होकर बुद्धि विभ्रम (अर्द्धविक्षिप्तावस्था) का अनुभव करता है। समस्त संसार शून्य (निरर्थक) प्रतीत होता है। भयङ्कर, कठिन एवं मृत्युतुल्य कष्ट देनेवाली आपदायें सामने आती हैं। रोग, स्वजनों से वियोग, धनहानि, तथा विष प्रयोग से कष्ट प्राप्त होता है। इस प्रकार राहु की महादशा जीवन के प्रति सन्देह उत्पन्न कर देती है ॥ ७५ ॥

राह्वन्तर फल—

स्वभ्रातृतातमरणं बन्धुनाशात्मकं रुजा।
अर्थनाशो विदेशस्य गमनं गौरवाल्पता ॥ ७६ ॥

राहु की महादशा में राहु का अन्तर हो तो अपने भाई और पिता की मृत्यु, बन्धुओं (कुटुम्बियों) का रोग द्वारा नाश, धनहानि, विदेश यात्रा तथा सम्मान में कमी (न्यूनता) आती है ॥ ७६ ॥

गुर्वन्तर फल—

व्याधिदुःखपरित्यक्तो देवब्राह्मणपूजकः।
भवत्यर्थयुतश्चात्र राहोरन्तर्गते गुरौ ॥ ७७ ॥

राहु महादशा में गुरु का अन्तर हो तो जातक व्याधि (रोग) और दुःखों से मुक्त होकर देवता और ब्राह्मणों का पूजन करने वाला तथा धनवान हो जाता है ॥ ७७ ॥

शन्यन्तर फल—

रक्तपित्तकृता पीडा कलहः स्वजनैःसह।
देहभंगः कृतत्यागो राहोरन्तर्गते शनौ ॥ ७८ ॥

राहु की महादशा में शनि का अन्तर हो तो रक्त-पित्त जन्य पीडा, आत्मीय जनों से कलह, अंग-भंग (दुर्घटना या विवाद में किसी अंग में गम्भीर चोट), तथा अपने कार्य का परित्याग होता है ॥ ७८ ॥

बुधान्तर फल—

सुहृद्बन्धुजनायोगं बुद्धिभोगधनागमम्।
किञ्चित्क्लेशमवाप्नोति स्वर्भान्वन्तर्गते बुधे ॥ ७९ ॥

राहु की महादशा में बुध का अन्तर हो तो, मित्रों एवं बन्धुजनों का समागम, बुद्धि (विवेक), सुख, एवं धन में वृद्धि होती है। इसके साथ-साथ थोड़ा कष्ट भी प्राप्त होता है ॥ ७९ ॥

केत्वन्तर फल—

ज्वराग्निरिपुशस्त्रेण मृत्युं प्राप्नोति जातकः ।
राहोरन्तर्गते केतौ नास्त्यत्र संशयः क्वचित् ॥ ८० ॥

राहु की महादशा में केतु का अन्तर हो तो जातक की मृत्यु ज्वर, अग्नि, शत्रु अथवा शस्त्र के आघात से होती है इसमें सन्देह नहीं ॥ ८० ॥

शुक्रान्तर फल—

सुहृत्तापः कामचिन्ता स्त्रीलाभो वित्तसञ्चयः ।
कलहो बान्धवैः सार्द्धं राहोरन्तर्गते सिते ॥ ८१ ॥

राहु की महादशा में शुक्र का अन्तर हो तो जातक अपने मित्रों से सन्तप्त, कामवासना के प्रति चिन्तित (लालायित), स्त्रीलाभयुक्त, धन संग्रह करने वाला तथा बन्धुओं से कलह करने वाला होता है ॥ ८१ ॥

सूर्यान्तर फल—

शस्त्ररोगभयं घोरमर्थनाशं नृपाद्भयम् ।
अग्निचोरभयं चात्र दैत्यस्यान्तर्गते रवौ ॥ ८२ ॥

राहु की महादशा के अन्तर्गत सूर्य की अन्तर्दशा हो तो शस्त्र और रोग से भयंकर भय, धनहानि, राजा से भय तथा अग्नि और चोर से भी भय होता है ॥ ८२ ॥

चन्द्रान्तर फल—

स्त्रीलाभं कलहं चैव वित्तनाशमनिर्वृतिम् ।
बान्धवैः सह संक्लेशो राहोरन्तर्गतः शशी ॥ ८३ ॥

राहु की महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो तो स्त्रीलाभ, कलह, धननाश, अनावश्यक लोभ, तथा बन्धुओं के साथ कलह होता है ॥ ८३ ॥

भौमान्तर फल—

रिपुशस्त्राग्निचोराणां भयमाप्नोति सर्वदा ।
स्वर्भान्वन्तर्गते भौमे निश्चितं नात्र संशयः ॥ ८४ ॥

राहु की महादशा में मंगल की अन्तर्दशा हो तो शत्रु, अग्नि, और चोरों से सर्वदा भय बना रहता है इसमें सन्देह नहीं ॥ ८४ ॥

गुरुमहादशा-अन्तर्दशा फल—

महादशा फल—

नृपप्रसादं धनधान्यपुत्रकलत्रमन्त्रादिसुरत्नलाभम् ।
नियोगतां शत्रुजयं च सौख्यं गुरोर्दशा वाञ्छितमातनोति ॥ ८५ ॥

बृहस्पति की महादशा हो तो राजा की कृपा, धन-धान्य, पुत्र, स्त्री, अच्छी मन्त्रणा (सलाह), तथा उच्चकोटि के रत्नों की प्राप्ति, आरोग्यवृद्धि, शत्रुओं पर विजय, सुख तथा अभीष्ट कार्यों की सिद्धि होती है ॥ ८५ ॥

गुर्वन्तर फल—

जैव्यान्तरे सुतोत्पत्तिर्धनधर्मार्थगौरवम् ।
हेम्नश्चाम्बरलाभश्च वर्णेभ्यो ह्यतिसञ्चयः ॥ ८६ ॥

बृहस्पति की महादशा में बृहस्पति का ही अन्तर हो तो पुत्र की उत्पत्ति, धर्म और अर्थ (धन) की वृद्धि, स्वर्ण और वस्त्रों का लाभ, वर्णों (अक्षरों) द्वारा अधिक लाभ (अर्थात् लेखन क्रिया से धनलाभ) होता है ॥ ८६ ॥

शन्यन्तर फल—

वेश्यास्त्रीमद्यपानैश्च भूषितः सुखवर्जितः ।
विलुप्तधर्मवस्त्रोऽसौ सौरिर्गुर्वनुगो यदा ॥ ८७ ॥

गुरु की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो तो वेश्या स्त्री एवं सुरापान में लिप्त, सुख से रहित, धर्माचरण का परित्याग कर वस्त्र से भी रहित हो जाता है ॥ ८७ ॥

बुधान्तर फल—

स्वस्थो मित्रयुतो भोगी गुरुदेवाग्नि भक्तिकृत् ।
सुकृताचरणे शक्तो जीवस्यान्तर्गते बुधे ॥ ८८ ॥

गुरु की महादशा में बुध का अन्तर हो तो जातक शरीर से स्वस्थ, मित्रों से युक्त, सुख-भोग करने वाला, देवता और अग्नि के प्रति श्रद्धा रखने वाला तथा सत्कार्य में (समर्थ) निरत होता है ॥ ८८ ॥

केत्वन्तर फल—

पुत्रबन्धुक्षतो योगो युक्तः स्वस्थानवर्जितः ।
परिभ्रमते सर्वत्र केतावन्तर्गते गुरोः ॥ ८९ ॥

गुरु की महादशा में केतु का अन्तर हो तो पुत्र एवं बन्धु क्षत (चोट आदि से) युक्त, अपने स्थान (नीजी गृह) से रहित, सर्वत्र भ्रमण करने वाला होता है ॥८९॥

शुक्रान्तर फल—

कलहं शत्रुवैरं च वित्तमानसनिर्वृतिः ।
स्त्रीभ्यो विघातमाप्नोति जीवस्यान्तर्गते सिते ॥ ९० ॥

गुरु की महादशा में शुक्र का अन्तर हो तो कलह (विवाद), शत्रु से वैर, धन के प्रति उदासीनता, तथा स्त्रियों से आघात (या अपमान) का भय होता है ॥ ९० ॥

सूर्यान्तर फल—

शत्रूणां विजयं सौख्यं नृपपूजा च लभ्यते ।
प्रचण्डसाहसाङ्गंश्च जीवस्यान्तर्गते रवौ ॥ ९१ ॥

गुरु की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा हो तो शत्रुओं पर विजय, सुख, राजाओं से सम्मान, उग्र एवं साहसिक कार्यों को करने वाला होता है ॥ ९१ ॥

चन्द्रान्तर फल—

बहुस्त्रीपरिभोगश्च रिपुर्भोगविवर्जितः ।
नृपतुल्यो भवेन्नित्यं चन्द्रे गुर्वन्तरं गते ॥ ९२ ॥

गुरु की महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो तो जातक राजा के समान होकर बहुत सी स्त्रियों के साथ सुखोपभोग करता है परन्तु उसके शत्रु सुख-भोग से रहित होते हैं ॥ ९२ ॥

भौमान्तर फल—

तीक्ष्णशौर्यंरिपुं जित्वा धनं कीर्त्तिं लभेन्नरः ।
सुखसौभाग्यमारोग्यं गुरोरन्तर्गते कुजे ॥ ९३ ॥

बृहस्पति की महादशा में भौम का अन्तर हो तो जातक उग्र और (प्रबल प्रतापी), शत्रुओं को जीतकर धन और कीर्ति को प्राप्त करता है तथा सुख सौभाग्य और आरोग्य से युक्त होता है ॥ ९३ ॥

राहन्तर फल—

बन्धूद्वेगं रुजश्चैव कलहं मरणाद्भयम् ।
स्वस्थानच्युतिमाप्नोति राहावन्तर्गते गुरोः ॥ ९४ ॥

राहु का अन्तर गुरु की महादशा में हो तो बन्धुओं को उद्वेग, रोग, कलह-मृत्यु का भय तथा स्थान से अलगाव (पदच्युत, पद हानि) होता है ॥ ९४ ॥

शनिमहादशा-अन्तर्दशा फल

महादशा फल—

मिथ्यापवादवधबन्धनिराश्रयं च
मित्रातिवैरधनधान्यकलत्रशोकम् ।
आशानिराशकृतनिष्फलसर्वशून्यं
कुर्याच्छनैश्चरदशा सततं नराणाम् ॥ ९५ ॥

शनि की महादशा मनुष्यों को सर्वदा झूठा अपवाद (अपयश), मृत्युभय, बन्धन (कारागार), आश्रय-हीनता (नौकरी से निलम्बन, अथवा बेसहारा), मित्रों से शत्रुता स्त्री पुत्र और धन से सम्बन्धित शोक, प्रत्याशित कार्यों में निराशा तथा असफलताओं के कारण सर्वत्र शून्यता (अभाव) ही प्रदान करती है ॥ ९५ ॥

शन्यन्तर फल—

शनैश्चराद्देहपीडा पुत्रदारैश्च विग्रहः ।
स्त्रीकृते बुद्धिनाशश्च विदेशगमनं भवेत् ।। ९६ ।।

शनि की महादशा में शनि का ही अन्तर हो तो शारीरिक पीड़ा, पुत्र और स्त्री में विरोध, स्त्री के कारण (स्त्री के व्यवहार से) बुद्धि का नाश, तथा विदेश यात्रा होती है ।। ९६ ।।

बुधान्तर फल—

सौभाग्यं सौख्यविजयं बोधसंस्थानमानतः ।
सुहृद्वित्तप्रदं सौख्यं सौरस्यान्तर्गते बुधे ।। ९७ ।।

शनि की महादशा में बुध का अन्तर हो तो ज्ञान एवं संस्थाओं द्वारा प्रदत्त सम्मान से सौभाग्य, सुख, विजय तथा धन देने वाले मित्रों एवं सुख की प्राप्ति होती है ।। ९७ ।।

केत्वन्तर फल—

रक्तपित्तकृता पीडा चित्तवित्तानुसंग्रहः ।
दुःस्वप्नं बन्धनं चैव केतावन्तर्गते शनेः ।। ९८ ।।

शनि की महादशा में केतु का अन्तर हो तो रक्त-पित्त जन्य पीड़ा मनोनुकूल धन का संग्रह, दुःस्वप्न दर्शन तथा बन्धन की प्राप्ति होती है ।। ९८ ।।

शुक्रान्तर फल—

सुहृद्बन्धुवशीयुक्तं भार्यावित्तजयान्वितम् ।
सुखसौभाग्यवात्सल्यं सौरस्यान्तर्गते सिते ।। ९९ ।।

शनि की महादशा में शुक्र का अन्तर हो तो मित्र-बन्धुओं के वशीभूत पत्नी, धन, विजय, सुख, सौभाग्य और स्नेह से युक्त होता है ।। ९९ ।।

सूर्यान्तर फल—

पुत्रदारधनैर्नाशं करोति समयं महत् ।
सौरस्यान्तर्गते भानौ जीवितस्याऽपि संशयः ।। १०० ।।

शनि की महादशा में सूर्य का अन्तर हो तो जातक स्त्री-पुत्र और धन के बीच अत्यधिक समय नष्ट करता है (अर्थात् धन का अपव्यय और स्त्री-पुत्र के साथ मनोरञ्जन में समय नष्ट करता है ।) कभी-कभी जीवन का भय (प्राण संकट) भी उत्पन्न हो जाता है ।। १०० ।।

चन्द्रान्तर फल—

मरणं स्त्रीवियोगश्च बन्धुभङ्गोऽसुखं नृणु ।
क्रुद्धमारुतजो रोगं विधावन्तर्गते शनेः ।। १०१ ।।

शनि की महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो तो मृत्यु, (मृत्यु तुल्य कष्ट), स्त्री वियोग, बन्धुओं से उद्वेग (विवाद आदि), सुख का अभाव, क्रोध की वृद्धि तथा वायुजन्य विविध रोगों से कष्ट होता है ॥ १०१ ॥

भौमान्तर फल—

देशभ्रंशं तथा दुःखं कुरुते बुद्धिभ्रंशताम् ।
अन्तर्दशायां सौरस्य कोज्यां प्राणमहद्भयम् ॥ १०२ ॥

शनि महादशा में भौम का अन्तर हो तो स्थान परित्याग दुःख, (व्याधियों या उलझनों से) बुद्धि का नाश तथा प्राणों का संकट उत्पन्न होता है ॥ १०२ ॥

राह्वन्तर फल—

श्वभ्रावाताङ्गभेदश्च ज्वरातीसारपीडनम् ।
शत्रुभङ्गोऽर्थनाशश्च राहावन्तर्गते शनेः ॥ १०३ ॥

शनि की महादशा में राहु का अन्तर हो तो चर्म रोग, अङ्गों में भेद (लकवा आदि रोग) ज्वर-अतिसार, आदि रोगों से कष्ट, शत्रुओं से पराजय तथा धन हानि होती है ॥ १०३ ॥

गुर्वन्तर फल—

द्विजदेवार्चनं सौख्यं बहुभृत्यगुणैर्युतम् ।
स्थानप्राप्तिं गुरुः कुर्यात्सौरस्यान्तर्गतो यदि ॥ १०४ ॥

शनि की महादशा में गुरु की अन्तर्दशा हो तो ब्राह्मण और देवताओं के पूजन में रुचि, सुख, बहुत से नौकरों एवं गुणों से युक्त तथा नूतन स्थान की प्राप्ति होती है ॥ १०४ ॥

बुधमहादशा-अन्तर्दशा फल—

महादशा फल—

दिव्याङ्गनावदनपङ्कजषट्पदस्य
लीलाविलासवरभोगसमन्वितस्य ।
नानाप्रकारविभवागमकोशवृद्धिं
क्षिप्रं पुनर्बुधदशाभिमतार्थसिद्धिम् ॥ १०५ ॥

बुध की महादशा में जातक परम सुन्दरी स्त्रियों के मुख कमल के साथ भ्रमर की तरह लीला विलास द्वारा उत्तम सुख-भोग से युक्त होता है तथा विविध प्रकार की सम्पत्तियों का लाभ, धन वृद्धि, एवं शीघ्र ही मनोभिलषित कार्यों में सिद्धि प्राप्त करता है ॥ १०५ ॥

बुधान्तर फल—

बुद्धिधर्म समायोगो मित्रबन्धुसमागमः ।
प्राप्तिर्ज्ञानस्य विपुला देहपीडाप्रकोपनम् ॥ १०६ ॥

बुध की महादशा में बुध का ही अन्तर हो तो बुद्धि धार्मिक चिन्तन में संलग्न, मित्र बन्धुओं का समागम, विशद ज्ञान की प्राप्ति, शारीरिक कष्ट तथा धातुओं (वात-पित्त-कफ) का प्रकोप होता है ॥ १०६ ॥

केत्वन्तर फल—

दुःखशोकाकुलं नित्यं शरीरं क्लेशसंयुतम् ।
भवत्यन्तर्दशायां हि केतोर्बुधगतस्य च ॥ १०७ ॥

बुध की महादशा में केतु का अन्तर हो तो जातक निरन्तर दुःख और शोक से व्याकुल, तथा शारीरिक कष्ट से युक्त होता है ॥ १०७ ॥

शुक्रान्तर फल—

गुरुवस्त्राणि लभ्यन्ते धनं धर्मप्रियं तथा ।
वस्त्रालंकरणैर्युक्तं बुधस्यान्तर्गते सिते ॥ १०८ ॥

बुध की महादशा में शुक्र का अन्तर हो तो उच्च कोटिके वस्त्रों की प्राप्ति, धन एवं धार्मिक प्रवृत्ति की वृद्धि, तथा विविध वस्त्र एवं आभूषणों से युक्त होता है ॥ १०८ ॥

सूर्यान्तर फल—

स्वर्णादिकं भवेत्प्राप्तं यशः प्राप्नोति सर्वतः ।
जायास्वस्त्रीभवोद्वेगो बुधस्यान्तर्गते रवौ ॥ १०९ ॥

बुध की महादशा में सूर्य का अन्तर हो तो स्वर्ण आदि मूल्यवान वस्तुओं की प्राप्ति, सर्वत्र यश लाभ, स्त्री तथा अपनी पत्नी द्वारा क्लेश की प्राप्ति होती है ॥ १०९ ॥

चन्द्रान्तर फल—

कुष्ठगण्डविकारैश्च क्षयरोगभगन्दरैः ।
गजादिवाहनैर्भीतिर्बुधस्यान्तर्गते विधौ ॥ ११० ॥

बुधकी महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो तो, कुष्ठ, गण्डमाला (तापगण्ड) सम्बन्धी विकार, क्षय (टी. बी.), भगन्दर रोग एवं हाथी आदि वाहनों से भय होता है ॥ ११० ॥

भौमान्तर फल—

शिरोगलगतै रोगैर्नानाक्लेशविमर्दनम् ।
चौरभङ्ग भयं चाथ बुधस्यान्तर्गते कुजे ॥ १११ ॥

बुध की महादशा में भौम का अन्तर हो तो सिर और गले के रोगों से विविध प्रकार के कष्ट एवं शारीरिक क्षीणता तथा चोरों से विनाश का भय होता है ॥ १११ ॥

राह्वन्तर फल—

अकस्माच्छत्रु निर्घातमकस्मादर्थनाशनम् ।
सम्पर्कादग्निदाहं च राहोरन्तर्गते बुधे ॥ ११२ ॥

बुध की महादशा में राहु का अन्तर हो तो अकस्मात् शत्रुओं का आक्रमण, आकस्मिक धनहानि तथा अग्नि के सम्पर्क से अग्निदाह (गृह आदि आग से जल जाने) का भय होता है ॥ ११२ ॥

गुर्वन्तर फल—

व्याधिशत्रुभयैर्युक्तो ब्रह्मिष्ठो नृपवल्लभः ।
पूतात्मा धार्मिकश्चैव बुधस्यान्तर्गते गुरौ ॥ ११३ ॥

बुध की महादशा में गुरु का अन्तर हो तो रोग और शत्रुओं के भय से युक्त, ब्रह्मज्ञान में लीन, राजा का प्रियपात्र, पवित्रात्मा तथा धार्मिक होता है ॥ ११३ ॥

शन्यन्तर फल—

धर्मार्थभोगी गम्भीरः क्लीबो मित्रार्थलुब्धकः ।
सर्वकार्येष्वनुत्साही बुधे सौरो यदानुगः ॥ ११४ ॥

बुध की महादशा में शनि का अन्तर हो तो धर्म और अर्थ का उपभोग करने वाला, गम्भीर, नपुंसक, मित्रों के धन के प्रति लोभ करने वाला तथा सभी कार्यों में उत्साह न दिखाने वाला (आलसी) होता है ॥ ११४ ॥

केतुमहादशा-अन्तर्दशाफल—

महादशा फल—

विषादकर्त्री धनधान्यहर्त्री सर्वापदां मूलमनर्थदात्री ।
भयङ्करी रोगविपद्विधात्री केतोर्दशा स्यात्किल जीवहन्त्री ॥ ११५ ॥

केतु महादशा अनेक प्रकार के कष्ट, धन-धान्य का नाश, सभी प्रकार की आपदाओं की मूल, अनर्थ करने वाली, भयङ्कर, रोग एवं विपत्ति को देने वाली तथा जीव (प्राणी) का नाश करने वाली होती है ॥ ११५ ॥

केत्वन्तर फल—

केतौ कन्यापुत्रनाशधनरोगाग्निविग्रहाः ।
भयं राजकुलाद्दुष्टस्त्रीभिः सह कलिर्भवेत् ॥ ११६ ॥

केतु की महादशा में केतु का अन्तर हो तो कन्या, और पुत्र का नाश, रोग, अग्नि, विरोध, एवं राजकुल से भय तथा दुष्ट स्त्री से कलह होता है ॥ ११६ ॥

शुक्रान्तर फल—

केतोरन्तर्गते शुक्रे प्रियया च कलिर्भवेत् ।
अग्निदाहं ज्वरं तीव्रं स्त्रीत्यागं कन्यकाजनिः ॥ ११७ ॥

केतु की महादशा में केतु का अन्तर हो तो अपनी स्त्री (अथवा प्रेमिका) से कलह, अग्निदाह भयंकर ज्वर, स्त्री का परित्याग तथा कन्या की उत्पत्ति होती है ॥ ११७ ॥

सूर्यान्तर फल—

केतोरन्तर्गते सूर्ये राजभङ्गोऽरिविग्रहः ।
अग्निदाहो ज्वरस्तीव्रो विदेशगमनं भवेत् ॥ ११८ ॥

केतु की महादशा में सूर्य का अन्तर हो तो राजभङ्ग, (राज्य का नाश), शत्रुओं से विरोध, अग्निदाह, तीव्र ज्वर, तथा विदेश यात्रा होती है ॥ ११८ ॥

चन्द्रान्तर फल—

अर्थलाभोऽर्थहानिश्च सुखं दुःखं तथैव च ।
स्त्रीलाभो धनहानिश्च केतोरन्तर्गते विधौ ॥ ११९ ॥

केतु की महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो तो धनलाभ, और धन हानि, सुख और दुख, स्त्रीलाभ तथा धन-हानि होती है ॥ ११९ ॥

भौमान्तर फल—

गोत्रजैः सह संवादश्चौराणां च भयं तथा ।
शरीरपीडां प्राप्नोति केतोरन्तर्गते कुजे ॥ १२० ॥

केतु की महादशा में मंगल का अन्तर हो तो अपने कुटुम्बियों के साथ कलह, चोरों का भय तथा शारीरिक पीडा प्राप्त होती है ॥ १२० ॥

राह्वन्तर फल—

चौरैश्च शत्रुभिर्वापि देहभङ्गः प्रजायते ।
दुर्जनैः सह संवादो राहु केतोर्यदानुपः ॥ १२१ ॥

केतु की महादशा में राहु का अन्तर हो तो चोर अथवा शत्रु द्वारा शरीर भङ्ग (हाथ-पैर आदि अंगों में आघात), तथा दुष्टों के साथ वाद विवाद होता है ॥ १२१ ॥

गुर्वन्तर फल—

दुर्जनैः सह संयोगो राजमान्यैः सहाऽथवा ।
भूलाभो जन्म पुत्रस्य केतोरन्तर्गते गुरौ ॥ १२२ ॥

केतु की महादशा में गुरु का अन्तर हो तो दुर्जनों (दुष्ट लोगों) के साथ मित्रता अथवा सम्मानित राजपुरुषों के साथ मित्रता होती है। भूमिलाभ तथा पुत्र की उत्पत्ति होती है ॥ १२२ ॥

शन्यन्तर फल—

वातपित्तभवा पीडा स्वजनैः सह विग्रहः ।
विदेशगमनं चापि केतोरन्तर्गते शनौ ॥ १२३ ॥

केतु की महादशा में शनि का अन्तर हो तो वायु एवं पित्त जन्य विकारों से पीड़ा, आत्मीय जनों से विद्रोह तथा विदेश यात्रा होती है ॥ १२३ ॥

बुधान्तर फल—

सुहृद्बन्धुसमायोगो बुद्धिवृद्धिर्धनागमः ।
न किञ्चित्क्लेशमाप्नोति केतोरन्तर्गते बुधे ॥ १२४ ॥

केतु की महादशा में बुध का अन्तर हो तो मित्र एवं बन्धुओं का समागम, बुद्धि की वृद्धि (विस्तार) एवं धनागम (धन-लाभ) तथा किसी प्रकार का थोड़ा भी कष्ट नहीं होता है ॥ १२४ ॥

शुक्रमहादशा-अन्तर्दशा फल—

महादशा फल—

मित्रोपचारमतुलं प्रमदाविलासं
श्वेतातपत्रनृपपूजितदेशलाभम् ।
हस्त्यश्वयानपरिपूर्णमनोरथश्च
शौक्रो दशा सृजति निश्चलराज्यलक्ष्मीम् ॥ १२५ ॥

शुक्र की महादशा में मित्रों का अतुलनीय सद्व्यवहार, स्त्रियों के साथ आनन्द, (क्रीडा सुख), श्वेत वर्ण का छत्र, राजाओं से सम्मान, देश (राज्य) की प्राप्ति, हाथी, घोड़ा, वाहन की प्राप्ति (सुख), अभिलाषाओं की पूर्ति, तथा अचल राज्य लक्ष्मी की प्राप्ति होती है ॥ १२५ ॥

शुक्रान्तर फल—

शौक्रे स्त्रीसङ्गमो लाभो धर्मकामार्थसंयुतः ।
कौशल्यं च महाकीर्तिर्निधिलाभश्च जायते ॥ १२६ ॥

शुक्र की महादशा मे शुक्र का ही अन्तर हो तो स्त्री सहवास, लाभ, धर्म-काम और अर्थ की प्राप्ति, कुशलता (चातुर्य), महान यश तथा अपार धन (खजाना) की प्राप्ति होती है ॥ १२६ ॥

सूर्यान्तर फल—

गण्डोदरक्षये रोगैर्नृपबन्धादिकैतवैः ।
उपहासो भवेन्नूनं शुक्रस्यान्तर्गते रवौ ॥ १२७ ॥

शुक्र की महादशा में सूर्य का अन्तर हो तो गण्ड (तापगण्ड), उदर विकार, क्षय (टी० बी०) आदि रोगों से कष्ट, राजकीय बन्धन (जेलयात्रा) तथा छल प्रपञ्च के द्वारा निश्चय ही उपहास होता है ॥ १२७ ॥

चन्द्रान्तर फल—

नखास्थिजशिरोरोगैः कामलाद्यामयैर्दशाम् ।
शरीरे क्लेशमाप्नोति शुक्रस्यान्तर्गते विधौ ॥ १२८ ॥

शुक्र की महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो तो नाखून, हड्डी एवं शिर से उत्पन्न रोगों तथा कामला (पीलिया) आदि विविध रोगों से शरीर को कष्ट होता है ॥ १२८ ॥

भौमान्तर फल—

वातपित्तक्षयो रोगो मदोत्साहो न संशयः ।
भूयः स्याद्भूमिलाभश्च शुक्रस्यान्तर्गते कुजे ॥ १२९ ॥

शुक्र की महादशा में मंगल का अन्तर हो तो वायु-पित्त विकार एवं क्षय (टी० बी०) रोग, अभिमान, उत्साहवृद्धि तथा बार-बार भूमि लाभ होता है इसमें सन्देह नहीं ॥ १२९ ॥

राह्वन्तर फल—

अन्त्यजैः सह संक्लेशो बन्धूद्वेगः सुहृद्वधः ।
अकस्माद्भयमाप्नोति राहौ शुक्रदशां गते ॥ १३० ॥

राहु का अन्तर शुक्र की महादशा में हो तो अन्त्यज (निम्न जातियों) से क्लेश प्राप्ति, बन्धुओं को उद्वेग (घबराहट, परेशानी), मित्र का वध (हत्या); एवं आकस्मिक भय की प्राप्ति होती है ॥ १३० ॥

गुर्वन्तर फल—

धान्यरत्नसमृद्धिं च भूमिपुत्रसुखावहम् ।
श्रियं प्रभुत्वमाप्नोति जीवे शुक्रदशां गते ॥ १३१ ॥

शुक्र की महादशा में गुरु का अन्तर हो तो धन-धान्य, रत्नों की बहुलता से सम्पन्न, भूमि-पुत्र और सुखों की प्राप्ति, तेज (प्रताप) और अधिकार की प्राप्ति होती है ॥ १३१ ॥

शन्यन्तर फल—

वृद्धस्त्रीभिः सह क्रीडा पुत्रनाशो विपत्पदम् ।
धनुनाशः सुखप्राप्तिः सौरे शुक्रदशां गते ॥ १३२ ॥

शुक्र की महादशा में शनि का अन्तर आने पर वृद्ध स्त्रियों के साथ क्रीडा (विलास सुख), पुत्र का नाश, विपत्तियों की प्राप्ति, शत्रुओं का शमन, तथा सुख की प्राप्ति होती है ॥ १३२ ॥

बुधान्तर फल—

धनागमश्च सौख्यं च मनोरथयशःश्रियः ।
नृपवल्लभतां शौर्यं शुक्रस्यान्तर्गते बुधे ॥ १३३ ॥

शुक्र की महादशा में बुध का अन्तर हो तो धन लाभ, सुख, मनोरथ (अभिलाषाओं) की पूर्ति, यश और धन (कान्ति) की प्राप्ति, राजा का स्नेह और विश्वास प्राप्त होता है ॥ १३३ ॥

केत्वन्तर फल—

कलहो बान्धवैः सार्द्धं रिपुनाशोऽरिविग्रहः ।
चलाचलं समग्रं च केतावन्तर्गते भृगोः ॥ १३४ ॥

शुक्र की महादशा में केतु का अन्तर हो तो भाई-बन्धुओं के साथ कलह, शत्रुओं का नाश, शत्रुओं म आपसी द्वेष, तथा चल-अचल सम्पत्तियों में भी व्यवधान उपस्थित होता है ॥ १३४ ॥

अष्टोत्तरी दशा-अन्तर्दशा फल

सूर्य महादशा फल—

रवेर्दशायामतितीक्ष्णभोज्यं प्राप्नोति मानोपचयं महान्तम् ।
धनानि चामीकरसम्प्रशान्तं संजायते बन्धुसुखं शुभं च ॥ १३५ ॥

अष्टोत्तरी मान से यदि सूर्य की महादशा हो तो, अत्यन्त तीक्ष्ण (तिक्त) भोजन मे रुचि, सम्मान मे विशेष वृद्धि, धन लाभ, सुवर्ण (आदि के संग्रह) से गम्भीर, बन्धुओं के सुख एवं शुभकार्यों से युक्त जातक होता है ॥ १३५ ॥

सूर्यान्तर फल—

बन्धूनां स्वान्तरे भानोः बन्धूनां मरणं भवेत् ।
प्रत्यन्तरे चान्तरादौ सर्वमेव फलं वदेत् ॥ १३६ ॥

सूर्य की महादशा में सूर्य का अन्तर हो तो भाइयों के सम्मान में वृद्धि तथा भाइयों की मृत्यु भी होती है। इस प्रकार का फल अन्तर एवं प्रत्यन्तर दोनों में होता है ॥ १३६ ॥

चन्द्रान्तर फल—

शत्रुनाशोऽर्थलाभश्च चिन्तानाशः सुखागमः ।
सूर्यस्यान्तर्गते चन्द्रे व्याधिनाशश्च जायते ॥ १३७ ॥

सूर्य की अष्टोत्तरी महादशा में चन्द्रमा का अन्तर होतो शत्रुओं, का नाश, धन लाभ, चिन्ताओं की समाप्ति, सुख में वृद्धि, तथा व्याधियों का नाश होता है ॥ १३७ ॥

भौमान्तर फल—

प्रवालमुक्ताहेमादिधनं प्राप्नोति भूपतेः ।
रवेरन्तर्गते भौमे विभूतिः सुखमद्भुतम् ॥ १३८ ॥

सूर्य की महादशा में मंगल का अन्तर हो तो प्रवाल (मूंगा) मोती, स्वर्ण, आदि धनों की प्राप्ति किसी राजा के सम्पर्क से होती है तथा सम्पत्ति और अद्भुत सुख का लाभ भी होता है ॥ १३८ ॥

बुधान्तर फल—

ग्रहवातव्याधिहानिर्द्रव्यनाशः कुलक्षयः ।
अविश्वासी भवेल्लोके रवेन्तरगते बुधे ॥ १३९ ॥

सूर्य की महादशा में बुध का अन्तर हो तो ग्रह एवं वायु अन्य व्याधियों से कष्ट, धनहानि, कुलक्षय (पारिवारिक सदस्यों का नाश), तथा लोक में अविश्वासी व्यक्ति होता है (अर्थात् झूठा और अपमानित होता) है ॥ १३९ ॥

शन्यन्तर फल—

महादुःखानि जायन्ते पुत्रमित्रविनाशनम् ।
रवेरन्तर्गते मन्दे शत्रुतश्च भयं भवेत् ॥ १४० ॥

सूर्य की महादशा में शनि का अन्तर हो तो भयङ्कर दुःखों की प्राप्ति, पुत्र और मित्रों का विनाश, तथा शत्रुओं से भय उत्पन्न होता है ॥ १४० ॥

गुर्वन्तर फल—

विपद्रोगविनाशश्च लक्ष्मीमेधे सुखानि च ।
रवेरन्तर्गते जीवे शत्र्वमङ्गलमुत्सवः ॥ १४१ ॥

सूर्य की (अष्टोत्तरी) महादशा में गुरु का अन्तर हो तो विपत्ति एवं रोग का विनाश, धन, बुद्धि (विवेक) और सुख की प्राप्ति, शत्रुओं के लिए अमङ्गल (शत्रुओं की हानि), तथा अपने गृह में उत्सव होता रहता है ॥ १४१ ॥

राह्वन्तर फल—

शोको भङ्गो महाभीतिर्विपत्तिरशुभं नृणाम् ।
रवेन्तर्गते राहौ सर्वत्रामङ्गलक्रिया ॥ १४२ ॥

सूर्य की महादशा मे राहु का अन्तर हो तो शोक, भङ्ग (कार्य या राज्य का नाश), महानभय, विपत्ति, तथा सर्वत्र अमङ्गल कार्यों द्वारा मनुष्य के लिए अशुभ समय होता है ॥ १४२ ॥

शुक्रान्तर फल—

गात्रपीडाभयं त्रासो ज्वरातीसारशूलके ।
द्रव्यादिहानिं प्राप्नोति रवेरन्तर्गते सिते ॥ १४३ ॥

सूर्य की महादशा में शुक्र का अन्तर हो तो शरीर में पीड़ा, भय, ज्वर, अतिसार एवं शूल (उदरपीडा) से कष्ट तथा द्रव्य (धन) आदि की हानि होती है ॥ १४३ ॥

अष्टोत्तरी चन्द्र महादशा-अन्तर्दशा फल—

महादशा फल—

नित्यं विभूषामणिवस्त्रलाभं मिष्टान्नपानं प्रमदानुरागम् ।
चान्द्री दशा साधुफलं नराणां ददाति पूजां नृपतेः सदैव ॥ १४४ ॥

चन्द्रमा की (अष्टोत्तरी) महादशा में मनुष्य को निरन्तर वस्त्र, मणि, आभूषण का लाभ, मधुर भोजन, स्त्रियों से अनुराग (प्रीति), एवं अन्य शुभ फलों की प्राप्ति तथा राजा से निरन्तर सम्मान मिलता है ॥ १४४ ॥

चन्द्रान्तर फल—

चन्द्रे स्वान्तर्गते सौख्यं सर्वत्र विजयो भवेत् ।
स्वपक्षवैरं कन्यानां जन्म निद्रारतिर्भवेत् ॥ १४५ ॥

चन्द्रमा की महादशा में चन्द्रमा का ही अन्तर हो तो सुख, सर्वत्र विजय (सफलता), अपने पक्ष के सदस्यों से विरोध, कन्या की प्राप्ति तथा निद्रा में प्रीति (अधिक सोने की अभिलाषा) होती है ॥ १४५ ॥

भौमान्तर फल—

शस्त्ररोगभयैर्युक्तो वह्निचौरधनक्षयः ।
विधोरन्तर्गते भौमे मनोदुःखं भवेन्नृणाम् ॥ १४६ ॥

चन्द्रमा की महादशा में भौम का अन्तर हो तो मनुष्य को शस्त्रों एवं रोगों से भय, अग्नि और चोरों से धन-नाश, तथा मन में अधिक दुःख (मानसिक क्लेश) होता है ॥ १४६ ॥

बुधान्तर फल—

सर्वत्र लभते लाभं गजाश्वैर्गोधनादिकम् ।
जायते कन्यकालाभश्चन्द्रस्यान्तर्गते बुधे ॥ १४७ ॥

चन्द्रमा की महादशा में बुध का अन्तर हो तो सर्वत्र हाथी, घोड़ा, गौ, आदि धन का लाभ तथा कन्या की उत्पत्ति होती है ॥ १४७ ॥

शन्यन्तर फल—

बन्धुवैरं स्थानहानिः शोको वा कलहो विपत् ।
विधोरन्तर्गते मन्दे सन्दिग्धो भवति ध्रुवम् ॥ १४८ ॥

चन्द्रमा की महादशा में शनि का अन्तर हो तो भाइयों से वैर, स्थान हानि (पद त्याग), शोक अथवा कलह एवं विपत्तियाँ प्राप्त होती है तथा पग-पग पर सन्देह होता है ॥ १४८ ॥

गुर्वन्तर फल—

धर्मवित्तसुखानि स्युर्वसनाभरणादिकम् ।
विजयो राजसम्मानो विधोरन्तर्गते गुरौ ॥ १४९ ॥

चन्द्रमा की महादशा में गुरु का अन्तर हो तो धर्म, धन और सुख, वस्त्र, आभूषण आदि की प्राप्ति, विजय (सफलता) तथा राजकीय सम्मान प्राप्त होता है ॥ १४९ ॥

राह्वन्तर फल—

बन्धुनाशः स्थानहानिः शत्रोर्बहुभयं तथा ।
न कुत्रापि सुखं राहौ विधोरन्तर्गते सति ॥ १५० ॥

चन्द्रमा की महादशा में राहु का अन्तर हो तो भाइयों का नाश, स्थान हानि (पदच्युति), शत्रुओं से अधिक भय, तथा कहीं भी सुख की प्राप्ति नहीं होती ॥ १५० ॥

शुक्रान्तर फल—

कन्याजन्म सुखप्राप्तिः स्त्रीसङ्गो विजयः सुखम् ।
मुक्ताहेममणिप्राप्तिश्चन्द्रस्यान्तर्गते सिते ॥ १५१ ॥

चन्द्रमा की महादशा में शुक्र का अन्तर हो तो कन्या की उत्पत्ति, सुख-लाभ, स्त्री का साहचर्य, विजय (सफलता), सुख, मोती-सोना-मणि आदि रत्नों का लाभ होता है ॥ १५१ ॥

सूर्यान्तर फल—

भूपाश्रयसुखं राज्यं रिपुरोगक्षयो भवेत् ।
ऐश्वर्यसौख्यमतुलं चन्द्रस्यान्तर्गते रवौ ॥ १५२ ॥

चन्द्रमा की महादशा के अन्तर्गत सूर्य का अन्तर हो तो राजा के आश्रय से सुख, राज्य प्राप्ति, शत्रु और रोगों का नाश, सम्पत्ति तथा अतुल सुख की प्राप्ति होती है ॥ १५२ ॥

अष्टोत्तरी भौम महादशा-अन्तर्दशा फल

महादशा फल—

शस्त्राभिघातवधबन्धनरेन्द्रपीडा-
चिन्ताग्रहो विकलरुक्च गृहाश्रमेषु ।
चौराग्निभीतिधननाशयशः प्रणाशं
कुर्याद्विघातभयमत्र दशा कुजस्य ॥ १५३ ॥

अष्टोत्तरी मान में मंगल की महादशा हो तो शस्त्र से आघात, वध (हत्या), बन्धन (जेल), राजकीय पीड़ा, घरेलू चिन्ताओं के आधिक्य से व्यग्र, रुग्ण, चोर और अग्नि से भय, धन और यश की हानि, तथा सदैव आघात का भय विद्यमान रहता है ॥ १५३ ॥

भौमान्तर फल

भौमे शत्रुविमर्दः स्यात्कलहो बन्धुभिर्नृणाम् ।
स्वान्तरे बहुपीडा स्याद्वृद्धस्त्रीगणिकारतिः ॥ १५४ ॥

भौम की महादशा में भौम का ही अन्तर हो तो मनुष्य शत्रुओं का मर्दन, और भाई-बन्धुओं से कलह करने वाला, विविध पीडाओं से युक्त, वृद्धा स्त्री एवं वेश्या में आसक्त होता है ॥ १५४ ॥

बुधान्तर फल –

भूपाग्निनृपचौरेभ्यो भयं पीडा ज्वरादिभिः ।
भूमिजान्तर्गते सौम्ये कलहो दुर्जनादिभिः ॥ १५५ ॥

भौम की महादशा में बुध का अन्तर हो तो राजा, अग्नि, अधिकारी एवं चोरों से भय, ज्वर आदि रोगों से कष्ट तथा दुष्टों से कलह होता है ॥ १५५ ॥

शन्यन्तर फल—

महादुःखादि जायन्ते जलभीतिर्मतिर्नृणाम् ।
भौमस्यान्तर्गते मन्दे राजपीडाभयं नृणाम् ॥ १५६ ॥

भौम की महादशा में शनि का अन्तर हो तो महान कष्ट जल से भय, तथा राजकीय पीड़ा का भय मनुष्य को होता है ॥ १५६ ॥

गुर्वन्तर फल—

पुण्यतीर्थादिगमनं देवब्राह्मणपूजनम् ।
भौमस्यान्तर्गते जीवे लभते वित्तमुत्कटम् ॥ १५७ ॥

भौम की महादशा में गुरु का अन्तर हो तो पवित्र तीर्थों की यात्रा, देवता और ब्राह्मणों का पूजन सत्कार तथा अतुल सम्पत्ति का लाभ होता है ॥ १५७ ॥

राह्वन्तर फल--

शस्त्राग्निनृपचौराणां भीतिर्मृत्युर्नृपाद्भयम् ।
भौमस्यान्तर्गते राहौ मनोदुःखं प्रवर्तते ॥ १५८ ॥

भौम की महादशा में राहु का अन्तर होता है तो शस्त्र-अग्नि-राजा और चोरों से भय, मृत्यु, राजा से भय, तथा मानसिक क्लेश में वृद्धि होती है ॥१५८॥

शुक्रान्तर फल—

शत्रुभीतिर्महाक्लेशो धर्महानिः सुखक्षयः ।
भौमस्यान्तर्गते शुक्रे भयं भूपात्स्वबन्धनम् ॥ १५९ ॥

भौम की महादशा में शुक्र का अन्तर हो तो शत्रुओं से भय, महान क्लेश, धर्म से भ्रष्ट, सुख का नाश, राजा से भय तथा बन्धन होता है ॥ १५९ ॥

सूर्यान्तर फल—

सम्मतो नृपतेर्भूरिप्रचण्डैः सह सङ्गतिः ।
मङ्गलान्तर्गते भानौ भवेत्कुस्त्रीसमागमः ॥ १६० ॥

भौम की महादशा में सूर्य का अन्तर हो तो जातक राजा का विश्वास पात्र, अत्यधिक उग्र (भयंकर) लोगों का मित्र, तथा कुत्सित (दुश्चरित्रा, भ्रष्टा एवं कुरूपा) स्त्री के साथ समागम करने वाला होता है ॥ १६० ॥

चन्द्रान्तर फल—

बहुवित्तं सुहृत्सौख्यं मुक्ताहेममणिश्रियम् ।
भौमस्यान्तर्गते चन्द्रे प्राप्नोति परमं पदम् ॥ १६१ ॥

भौम की महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो तो वित्त की बहुलता (धनाढ्य), मित्रों से सुख, मोती, स्वर्ण, मणि प्रभृति ऐश्वर्य लाभ तथा उच्च पद की प्राप्ति होती है ॥ १६१ ॥

अष्टोत्तरी बुध महादशा-अन्तर्दशा फल—

महादशा फल--

प्राप्नोति सौम्यस्य दशाविपाके शुभे शुभानि प्रियमित्रसङ्गम् ।
सुवर्णहेमाम्बरपूर्णलाभं विद्यार्थलाभं मनसः प्रमोदम् ॥ १६२ ॥

अष्टोत्तरी क्रम से बुध की महादशा हो तो शुभ कार्यों में सभी प्रकार से शुभ, प्रिय मित्रों का समागम, स्वर्ण जटित वस्त्रों का पूर्ण रूप से लाभ, विद्या एवं धन का लाभ तथा मानसिक आनन्द प्राप्त होता है ॥ १६२ ॥

बुधान्तर फल—

स्वदशान्तर्गते सौम्ये बुद्धिवृद्धिः समागमः ।
शरीरे युवतेः सौख्यं नानावित्तं सुखं यशः ॥ १६३ ॥

बुध की महादशा में बुध का ही अन्तर हो तो बौद्धिक विकास, सज्जनों का समागम शारीरिक एवं स्त्री जन्य सुख, नाना प्रकार के धन, सुख और यश का लाभ होता है ॥ १६३ ॥

शन्यन्तर फल—

मित्रार्थसाधकः सिद्धो गुणधर्मार्थसाधकः ।
सर्वकार्योद्यमी भास्वान् बुधस्यान्तर्गते शनौ ॥ १६४ ॥

बुध की महादशा में शनि का अन्तर हो तो मित्रों की अभिलाषा (कार्य) पूर्ण करने वाला, साधक, गुण, धर्म और अर्थ की साधना करने वाला, सभी प्रकार के कार्यों में उद्योग (प्रयत्न) करने वाला तथा तेजस्वी होता है ॥ १६४ ॥

गुर्वन्तर फल—

रिपुरोगभयैस्त्यक्तो धर्मज्ञो नृपवल्लभः ।
हेमादिजनशोभाढ्यो बुधस्यान्तर्गते गुरौ ॥ १६५ ॥

बुध की महादशा में गुरु का अन्तर हो तो शत्रु और रोग के भय से रहित, धर्म का ज्ञाता, राजा का प्रिय, स्वर्ण आदि (मूल्यवान वस्तुओं) तथा सुहृदजनों से शोभायमान होता है ॥ १६५ ॥

राह्वन्तर फल—

अकस्माद्बन्धुभेदो वा ह्यकस्माद्व्रजतो नृपात् ।
भयं वा ह्यर्थनाशो वा राहौ सौम्यान्तरे सति ॥ १६६ ॥

बुध की महादशा में राहु का अन्तर हो तो अचानक बन्धुओं से विद्वेष एवं अकस्मात् राजा से विरोध, भय तथा धनहानि होती है ॥ १६६ ॥

शुक्रान्तर फल—

गुरुदेवद्विजार्चासु दानधर्मपरो भवेत् ।
वस्त्रालङ्काररक्तस्य लाभो ज्ञस्यान्तरे सिते ॥ १६७ ॥

बुध की महादशा मे शुक्र का अन्तर हो तो गुरु-देवता और ब्राह्मणों की पूजा (सम्मान) में अनुरक्त, दान-धर्म में प्रवृत्त, वस्त्र-आभूषण में रुचि रखने वाला तथा लाभयुक्त होता है ॥ १६७ ॥

सूर्यान्तर फल—

सुवर्णहयमाणिक्यं विजयं लभते सुखम् ।
राज्यं श्रियं बलं तेजो बुधस्यान्तर्गते रवौ ॥ १६८ ॥

बुध की महादशा मे सूर्य का अन्तर हो तो स्वर्ण, घोड़ा, माणिक्य की प्राप्ति, विवाद या संग्राम में विजय, सुख, राज्य, ऐश्वर्य, बल तथा तेज की वृद्धि होती है ॥ १६८ ॥

चन्द्रान्तर फल—

आचारवान् बहुधनो गजाश्वादिसुखाश्रयः।
बुधस्यान्तर्गते चन्द्रे पर्यङ्कच्छत्रसम्पदः ॥ १६९ ॥

बुध की महादशा मे चन्द्रमा का अन्तर हो तो जातक आचारवान् (सदाचारी), धनवान्, हाथी-घोड़ा आदि सुख-सामग्री से युक्त तथा पर्यंक (उत्तम बिस्तर), छत्र एवं सम्पत्ति से सम्पन्न होता है ॥ १६९ ॥

भौमान्तर फल—

शिरोगुदरुजा पीडा वह्नि चौरनृपाद्भयम्।
बुधस्यान्तर्गते भौमे बन्धुपुत्रादिपीडनम् ॥ १७० ॥

बुध की महादशा में मंगल का अन्तर हो तो शिर और गुदा सम्बन्धी रोग से कष्ट, अग्नि, चोर और राजा से भय तथा बन्धु-पुत्र आदि पारिवारिक सदस्यों को कष्ट होता है ॥ १७० ॥

अष्टोत्तरी शनि महादशा-अन्तर्दशा फल

महादशा फल—

प्राप्नोति सौरस्य दशाविपाके दुर्गादिसीमागिरिनिर्झरेण।
सुधान्यजीर्णाम्बरभूमिलाभं संयुज्यतेऽश्वैर्महिषादिभिश्च ॥ १७१ ॥

अष्टोत्तरी मान से शनि की महादशा हो तो जातक दुर्ग (किला), देश की सीमा, पर्वत, झरना आदि का रक्षक, उत्तम कोटि के अन्न, पुराने वस्त्र, भूमि लाभ तथा घोड़ा, भैंस आदि पशुओं से सम्पन्न होता है ॥ १७१ ॥

शन्यन्तर फल—

बन्धुदारसुतार्थानां नाशो वा पीडनं भवेत्।
विदेगमनं दुःखं सौरे स्वान्तरसंस्थिते ॥ १७२ ॥

शनि की महादशा में शनि का ही अन्तर हो तो बन्धु, स्त्री, पुत्र और धन का नाश अथवा इनसे सम्बन्धित कष्ट, विदेश यात्रा तथा दुःख प्राप्त होता है ॥१७२॥

गुर्वन्तर फल—

देवद्विजार्चनं सौख्यं धनवृद्धिर्गुणोदयः।
स्थानाप्तिः कामनासिद्धिः शनेरन्तर्गते गुरौ ॥ १७३ ॥

शनि की महादशा में गुरु का अन्तर हो तो देवता और ब्राह्मण के पूजन में

अनुरक्त, सुखी, धन की वृद्धि एवं गुणों के उदय से युक्त, स्थान लाभ एवं कामनाओं की पूर्ति से सम्पन्न होता है॥ १७३ ॥

राह्वन्तर फल—

वातरोगः कुक्षिपीडा देशान्तरगतिर्भवेत् ।
बुधद्वेषः सुखाभावो राहौ शनिदशां गते ॥ १७४ ॥

शनि की महादशा में राहु का अन्तर हो तो वायु रोग, कुक्षि (लीवर-किडनी) से सम्बन्धित कष्ट, दूसरे देश अथवा अन्य प्रदेशों में निवास, विद्वानों से द्वेष तथा सुख का अभाव होता है ॥ १७४ ॥

शुक्रान्तर फल—

बन्धुमित्रकलत्रार्थसुखसम्पत्समागमः ।
सौहार्दं नृपतेर्लक्ष्मीः शनेरन्तर्गते सिते ॥ १७५ ॥

शनि की महादशा में शुक्र का अन्तर हो तो बन्धु-मित्र-स्त्री-धन-सुख और सम्पत्ति का समागम (लाभ) तथा राजा के सौहार्द (मित्रता) से धन प्राप्ति होती है ॥ १७५ ॥

सूर्यान्तर फल—

दारासुतधनार्थानां भीतिर्जीवितसंशयः ।
शनेरन्तर्गते भानौ सर्वत्राशुभदर्शनम् ॥ १७६ ॥

शनि की महादशा में सूर्य का अन्तर हो तो स्त्री-पुत्र-धन और रुपये-पैसे के नाश का भय, जीवन के प्रति सन्देह तथा सभी स्थानों में अशुभ (अनिष्ट) दर्शन ही होता है ॥ १७६ ॥

चन्द्रान्तर फल—

स्त्रीलाभं विजयं सौख्यं महिषीगोधनादिकम् ।
लभते कन्यकाजन्म शनेरन्तर्गते विधौ ॥ १७७ ॥

शनि की महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो तो स्त्री लाभ, विजय, सुख, भैंस, गाय एवं धन आदि की प्राप्ति होती है तथा गृह में कन्या का जन्म होता है ।१७७।

भौमान्तर फल—

बन्धुस्त्रीसुतनाशो वा विद्युत्पातभवं भयम् ।
महाव्याधिररिष्टं वा शनेरन्तर्गते कुजे ॥ १७८ ॥

शनि की महादशा से मंगल का अन्तर हो तो बन्धु, स्त्री और पुत्र का नाश, विद्युत उत्पात (प्राकृतिक प्रकोप) से उत्पन्न भय तथा भयङ्कर व्याधियों से कष्ट होता है ॥ १७८ ॥

बुधान्तर फल—

सौख्यं सौभाग्यमारोग्यं यशः सन्तोषवृद्धयः ।
सुहृत्स्थानादिलाभः स्याच्छनेरन्तर्गते बुधे ॥ १७९ ॥

शनि की महादशा में बुध का अन्तर हो तो सुख, सौभाग्य, आरोग्य (निरोग), यश (सम्मान) और सन्तोष में वृद्धि मित्रों तथा स्थान का लाभ होता है ॥ १७९ ॥

अष्टोत्तरी गुरुमहादशा-अन्तर्दशा फल—

महादशा फल—

गुरोर्दशायां लभतेऽतिसौख्यं गुणोदयं बुद्ध्यवबोधनाग्रयम् ।
स्त्रीवित्तलाभं गतिकान्तिभोगान् महात्मचेष्टाफलमुत्तमं च ॥ १८० ॥

गुरु की अष्टोत्तरी महादशा में अत्यधिक सुखों की प्राप्ति, गुणों का उदय, बुद्धि और ज्ञान में अग्रणी, स्त्री और धन का लाभ, उत्तम गति (गम्भीर चाल), कान्ति (तेज; सौन्दर्य), और भोगों से युक्त, महात्माओं के अनुरूप चेष्टा तथा उत्तम फल की प्राप्ति होती है ॥ १८० ॥

गुर्वन्तर फल—

स्वदशान्तर्गते जीवे धर्मार्थहयलब्धयः ।
लाभो हेमस्थावराणां राजपूजा गुणोदयम् ॥ १८१ ॥

अपनी ही (गुरु की) महादशा में गुरु का अन्तर हो तो धर्म-अर्थ और अश्व की प्राप्ति, स्वर्ण तथा स्थावर वस्तुओं (भूमि, बाग, भवन आदि) का लाभ, राजाओं द्वारा सम्मान तथा गुणों की वृद्धि होती है ॥ १८१ ॥

राह्वन्तर फल—

अन्त्यजैः सह सम्प्रीतिर्वातपित्तभयावहम् ।
गुरोरन्तर्गते राहौ सर्वकार्यविनाशनम् ॥ १८२ ॥

गुरु की महादशा में राहु की अन्तर्दशा हो तो अन्त्यजों (निम्न कार्य करने वाली जातियों) के साथ प्रेम, वात-पित्त जन्य रोगों से भय, तथा सभी प्रकार के कार्यों का नाश होता है ॥ १८२ ॥

शुक्रान्तर फल—

रिपुभीतिर्वित्तनाशो बन्धनं कलहो गदः ।
स्त्रीवियोगमवाप्नोति जीवस्यान्तर्गते सिते ॥ १८३ ॥

गुरु की महादशा में शुक्र का अन्तर हो तो शत्रुओं से भय, धन का नाश, बन्धन (जेल), कलह (घरेलू विवाद), रोग तथा स्त्री से वियोग होता है ॥ १८३ ॥

सूर्यान्तर फल—

नृपतुल्यक्रियायुक्तो व्याधिरोगविवर्जितः ।
बहुस्त्रीसुखसन्तोषी गुरोरन्तर्गते रवौ ॥ १८४ ॥

गुरु की महादशा में सूर्य का अन्तर हो तो राजा के तुल्य कार्य करने वाला, व्याधि रोग से रहित, बहुत सी स्त्रियों के सुख से युक्त तथा सन्तोषी होता है ॥ १८४ ॥

चन्द्रान्तर फल—

शत्रुहानिः सुखं पुण्यं शरीरे पुष्टिरुत्तमा ।
स्वजनैः सह संवासो गुरोरन्तर्गते विधौ ॥ १८५ ॥

गुरु की महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो तो शत्रुओं की हानि, सुख, पुण्य, शरीर में पूर्ण रूपेण पुष्टता, तथा आत्मीय जनों के साथ निवास होता है ॥१८५॥

भौमान्तर फल—

धनं कीर्तिः शत्रुहानिर्बन्धुकीर्तिः सुखान्वितः ।
निरोगो सुभगः श्रीमान् गुरोरन्तर्गते कुजे ॥ १८६ ॥

गुरु की महादशा म मंगल का अन्तर हो तो धन और यश का लाभ, शत्रु हानि, बन्धुओं की कीर्ति, सुख से युक्त, स्वस्थ, सौभाग्यशाली, लक्ष्मी से युक्त अर्थात् धनवान होता है ॥ १८६ ॥

बुधान्तर फल—

समदुःखसुखः श्रीमान् गुरुदेवाग्निपूजकः ।
गुरोरन्तर्गते सौम्ये शत्रुर्मित्रसमो भवेत् ॥ १८७ ॥

गुरु की महादशा में बुध का अन्तर हो तो जातक दुःख और सुख में समान रूप से रहने वाला, कान्ति युक्त (अथवा धनवान) गुरु देवता और अग्नि का पूजन करने वाला तथा शत्रु और मित्र दोनों के साथ समान व्यवहार करने वाला होता है ॥ १८७ ॥

शन्यन्तर फल—

वारस्त्रीसङ्गमं दुःखं कुवृत्तिर्धर्मनाशनम् ।
कामलोभौ नीचसख्यं गुरोरन्तर्गते शनौ ॥ १८८ ॥

बृहस्पति की महादशा में शनि का अन्तर हो तो वेश्या स्त्री के साथ सहवास करने वाला, दुःखी कुत्सित वृत्ति वाला, धर्मनाशक, कामी, लोभी, नीचों का साथ करने वाला पुरुष होता है ॥ १८८ ॥

अष्टोत्तरी राहुमहादशा-अन्तर्दशा फल—

महादशा फल—

धर्मव्ययः कामरतेर्विनाशः स्त्रीपुत्रमित्रादिविदेशयानम् ।
मतिभ्रमं स्यात्कलिकुष्ठरोगभयं भवेद्राहुमहादशायाम् ॥ १८९ ॥

अष्टोत्तरी मत से राहुमहादशा हो तो धर्म का (धार्मिक मनोवृत्ति का) ह्रास, काम वासना तथा रति का विनाश (नपुंसकता), स्त्री-पुत्र-मित्र आदि का विदेश प्रवास, मतिभ्रम (मानसिक भ्रान्ति), कलह तथा कुष्ठ रोग से भय होता है ॥ १८९ ॥

राह्वन्तर फल—

भयं स्यान्तर्गते राहौ रोगार्तः पापपीडितः ।
स्त्रीपुत्रमित्रनाशो वा कलहो वा स्वबन्धुभिः ॥ १९० ॥

राहु की महादशा में राहु का अन्तर हो तो भय, रोग से दुःखी पाप से पीड़ित, स्त्री, पुत्र और मित्रों का नाश, अथवा बन्धुओं से क्लेश होता है ॥ १९० ॥

शुक्रान्तर फल—

सौहार्दं विप्रभूपाभ्यां सङ्गः स्त्रीवित्तसञ्चयः ।
कलहे विजयः ख्यातो राहोरन्तर्गते सिते ॥ १९१ ॥

राहु के महादशा के अन्तर्गत यदि शुक्र का अन्तर हो तो ब्राह्मणों एवं राजाओं द्वारा सौहार्द (मित्रता और सहयोग) की प्राप्ति, स्त्रियों का साथ, धन का संग्रह, विवाद में विजय तथा विख्यात होता है ॥ १९१ ॥

सूर्यान्तर फल—

रिपुरोगभयं घोरं द्रव्यनाशो महद्भयम् ।
अग्निचोरभयं चैव राहोरन्तर्गते रवौ ॥ १९२ ॥

राहु की महादशा में सूर्य का अन्तर हो तो शत्रु और रोग का भयंकर भय, धनहानि, अन्य प्रकार के महान भय, अग्नि और चोर का भय होता है ॥ १९२ ॥

चन्द्रान्तर फल—

रिपुव्याधिर्महाभीतिर्बन्धुवित्तविनाशनम् ।
कलहो बन्धुविद्वेषो राहोरन्तर्गते विधौ ॥ १९३ ॥

राहु की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो तो शत्रु, रोग, महान भय, भाइयों के धन का नाश, कलह, एवं बन्धुओं द्वारा विद्रोह होता है ॥ १९३ ॥

भौमान्तर फल—

विषशस्त्राग्निचौरेभ्यो महाभीतिः पुनः पुनः ।
राहोरन्तर्गते भौमे वित्तस्त्रीबन्धुनाशनम् ॥ १९४ ॥

राहु की महादशा में मंगल का अन्तर हो तो विष-शस्त्र अग्नि और चोरों से बार-बार महान भय, धन, स्त्री और बन्धुओं का विनाश होता है ॥ ११४ ॥

बुधान्तर फल—

बन्धुमित्रकलत्रादिवित्तभृत्यसुखान्वितः ।
न कुत्रापि भयं तस्य राहोरन्तर्गते बुधे ॥ ११५ ॥

राहु की महादशा में बुध का अन्तर हो तो जातक के बन्धुवर्ग, मित्र, स्त्री आदि निकटतम सम्बन्धी धन-नौकर और सुखों से युक्त होते हैं ॥ ११५ ॥

शन्यन्तर फल—

वातपित्तभवा रोगाः कलहो बान्धवैः सह ।
देशत्यागो धनभ्रंशो राहोरन्तर्गते शनौ ॥ ११६ ॥

राहु की महादशा में शनि का अन्तर हो तो वात-पित्त से उत्पन्न रोग, बन्धुओं के साथ कलह, देश का परित्याग, तथा धन का नाश होता है ॥ ११६ ॥

गुर्वन्तर फल —

नीरोगैः स्वगणैर्युक्तो देवद्विजमतो भवेत् ।
राहोरन्तर्गते जीवे धर्मतीर्थरतो भवेत् ॥ ११७ ॥

राहु की महादशा में गुरु का अन्तर हो तो जातक निरोग (स्वस्थ), अपने गणों (सहचरों) से युक्त, ब्राह्मण और देवताओं की तरफ झुकाव रखने वाला, तथा धर्म और तीर्थ में अनुरक्त होता है ॥ ११७ ॥

अष्टोत्तरी शुक्र महादशा-अन्तर्दशा फल—

महादशा फल—

शौर्यं गीतरतिप्रमोदविभवो द्रव्यान्नपानाम्बर-
स्त्रीरत्नं मतिमन्महोपकरणैरर्थाश्च नानाविधाः ।
स्वाध्यायौषधमन्त्रशिल्पकरणैरर्थस्य सिद्धिर्भवेत्
सौख्यं चेक्षुविकारभोजनरुचिः ख्यातिः प्रतापोन्नतिः ॥ ११८ ॥

अष्टोत्तरी क्रम से यदि शुक्र की महादशा हो तो शौर्य (वीरता), संगीत, प्रमोद, सम्पत्ति, धन, अन्न, पेय पदार्थ, वस्त्र, स्त्रीरत्न (सुन्दर स्त्री), सद् बुद्धि, महत्वपूर्ण उपकरणों (वस्तुओं) तथा अनेक प्रकार के धन-सम्पत्तियों से युक्त होता है। स्वाध्याय (अध्ययन), औषधि निर्माण, मन्त्र-साधना, शिल्प (चित्र-काष्ठ-पाषाण कला) सम्बन्धी कार्यों की सिद्धि, सुख, इक्षु विकार गुड़ आदि मधुर पदार्थों के भोजन में रुचि, ख्याति, प्रभाव में वृद्धि तथा उन्नति होती है ॥ ११८ ॥

शुक्रान्तर फल—

लाभः स्वान्तरगे शुक्रे स्त्रीसङ्गो धर्मजं सुखम् ।
अभिलाषार्थयुक्तश्च कीर्तिकौशल्ययुग्भवेत् ॥ १९९ ॥

शुक्र की महादशा में शुक्र का ही अन्तर हो तो स्त्री से संसर्ग, धर्म से उत्पन्न सुख, अभिलाषाओं की पूर्ति, यशलाभ, एवं चातुरी से युक्त होता है ॥ १९९ ॥

सूर्यान्तर फल—

नेत्रगण्डभवै रोगैः पीडयतें नृपबान्धवैः ।
उत्पातश्च महद्दुखं शुक्रस्यान्तर्गते रवौ ॥ २०० ॥

शुक्र की महादशा में सूर्य का अन्तर हो तो नेत्र और कपोल में उत्पन्न रोग से तथा राजा के बन्धुओ से पीड़ित, उत्पात, एवं महान दुःख होता है ॥ २०० ॥

चन्द्रान्तर फल—

उद्वेगोऽकुशलं हानिरश्वादीनां धनक्षयः ।
बहुक्लेशमनोदुःखं शुक्रस्यान्तर्गते विधौ ॥ २०१ ॥

शुक्र की महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो तो उद्वेग (घबराहट) कुशलता का अभाव (अर्थात् अमंगल), घोड़े आदि पशुओं की हानि, धन का ह्रास तथा अत्यधिक कष्ट से मन में दुःख होता है ॥ २०१ ॥

भौमान्तर फल—

नखोदरशिरोव्याधिः कलहो बन्धुसंक्षयः ।
दौर्बल्यं च शरीरस्य कुजे शुक्रदशां गते ॥ २०२ ॥

शुक्र की महादशा में मंगल का अन्तर हो तो नख, उदर, एवं शिर की व्याधि (रोग), विवाद, बन्धुओं का क्षय, एवं शरीर में दुर्बलता रहती है ॥२०२॥

बुधान्तर फल—

धनं धान्यं सुखं लाभो मानो धर्मो यशो बलम् ।
महाजनेन सौहार्दं शुक्रस्यान्तर्गते बुधे ॥ २०३ ॥

शुक्र की महादशा में बुध का अन्तर हो तो धन-धान्य एवं सुख का लाभ, सम्मान धर्म-यश और बल की वृद्धि एवं महान् पुरुषों से मित्रता, का लाभ होता है ॥ २०३ ॥

शन्यन्तर फल—

वृद्धस्त्रीगमनं पीडा पुत्रनाशो विपत्पदम् ।
शत्रुनाशः सुहृत्प्राप्तिः सौरे शुक्रदशां गते ॥ २०४ ॥

शुक्र की महादशा में शनि का अन्तर हो तो वृद्ध स्त्री के साथ समागम, पीड़ा,

पुत्र नाश, बार-बार विपत्तियों का आगमन, शत्रुनाश, तथा मित्रों की प्राप्ति होती है ॥ २०४ ॥

गुर्वन्तर फल—

धनधान्यसमृद्धिश्च धर्मशीलसुखानि च ।
स्त्रीसुखं कीर्तिमाप्नोति गुरौ शुक्रदशां गते ॥ २०५ ॥

शुक्र की महादशा में गुरु का अन्तर हो तो धन-धान्य एवं सम्पत्तियों की वृद्धि, धर्म-शीलता (सदाचारी) और सुख, स्त्रीसुख, तथा कीर्ति को मनुष्य प्राप्त करता है ॥ २०५ ॥

राह्वान्तर फल—

विदेशगमनं बन्धुद्वेषः सङ्गमशुद्धयः ।
स्ववंशनाशमाप्नोति राहौ शुक्रदशां गते ॥ २०६ ॥

शुक्र की महादशा में राहु का अन्तर हो तो विदेश यात्रा, भाई-बन्धुओं से विरोध, साथ के कारण अशुद्ध (निन्दित कर्म करने वालों का साथी), तथा अपने कुल का नाश करने वाला होता है ॥ २०६ ॥

सर्व ग्रह दशा फल—

क्रूरग्रहदशायां च क्रूरस्यान्तर्दशा यदि ।
शत्रुयोगे भवेन्मृत्युर्मित्रयोगे न संशयः ॥ २०७ ॥

शत्रु ग्रहों से अथवा मित्र ग्रहों से युक्त क्रूरग्रहों की महादशा में क्रूर ग्रह का अन्तर हो तो मृत्यु (या मृत्यु तुल्य कष्ट) होता है इसमें सन्देह नहीं ॥२०७॥

मङ्गलस्य दशायां च शनेरन्तर्दशा यदि ।
म्रियते च चिरञ्जीवी का कथा स्वल्पजीविनः ॥ २०८ ॥

मंगल की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो तो चिरञ्जीवी (दीर्घायु) व्यक्ति की भी मृत्यु होती है । अल्प जीवी (अल्पायु वाले) व्यक्तियों के लिए क्या कहना है ? (अर्थात् वे अवश्य मरेंगे) ॥ २०८ ॥

क्रूरराशिस्थितः पापः षष्ठे वा निधनेऽपि वा ।
सितेन रविणा दृष्टः स्वपाके मृत्युदो ग्रहः ॥ २०९ ॥

क्रूर ग्रह की राशि में पाप ग्रह छठें अथवा आठवें भाव में स्थित हों तथा शुक्र या सूर्य से दृष्ट हो तो अपनी दशा-अन्तर्दशा में मारक होते हैं ॥ २०९ ॥

लग्नस्याधिपतेः शत्रुर्लग्नेशान्तर्दशां गतः ।
करोत्यकस्मान्मरणं सत्याचार्येण भाषितम् ॥ २१० ॥

लग्नेश की महादशा में लग्नेश के शत्रु ग्रह की अन्तर्दशा हो तो अकस्मात् मृत्यु होती है ऐसा सत्याचार्य का कथन है ॥ २१० ॥

प्रवेशे बलवान् खेटः शुभैर्वा स निरीक्षितः ।
सौम्याधिमित्रवर्गस्थो रिष्टभङ्गो भवेत्तदा ॥ २११ ॥

दशा प्रवेश के समय यदि ग्रह बलवान हो अथवा शुभग्रहों से दृष्ट हो, शुभ एवं अधिमित्र, ग्रहों के वर्ग में हो तो अरिष्टों का नाशक होता है ॥ २११ ॥

उपदशा फल—

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ग्रहस्योपदशाफलम् ।
सौम्यक्रूरविभिन्नस्य पूर्वाचार्यादिसम्मतम् ॥ २१२ ॥

दशा-अन्तर्दशा के फल के अनन्तर सौम्य (शुभ), क्रूर (पाप) ग्रहों के भेद से पूर्वाचार्यों के मतानुसार ग्रहों की उपदशा का फल कह रहा हूँ ॥ २१२ ॥

सूर्यान्तर में उपदशा फल—

सूर्य का उपदशा फल—

ज्वरः शिरोऽर्तिः पीडा च कलिरुद्वेगकारकः ।
विग्रहश्च विवादश्च सूर्ये स्वोपदशां गते ॥ २१३ ॥

सूर्य अपनी उपदशा मे हो तो ज्वर, शिर मे कष्ट, पीडा, कलह, उद्वेग, विरोध तथा विवाद होता है ॥ २१३ ॥

चन्द्र का उपदशा फल—

धननाशोदरे रोगं कुर्यात् पामां चतुष्पदात् ।
क्षीरं स्नेहं विना भुङ्क्ते चन्द्रः स्वोपदशां गतः ॥ २१४ ॥

चन्द्र की उपदशा हो तो धन नाश, उदर में रोग, पशुओं के संसर्ग से 'पामा' नामक रोगयुक्त तथा दुग्ध-घृत के विना भोजन करने वाला (अर्थात् घी-दूध का अभाव) होता है ॥ २१४ ॥

मंगल का उपदशा फल—

राज्ञो भयं विकारश्चोपद्रवो रिपुविग्रहः ।
कुधान्यभोजनं सूर्ये भौमस्योपदशाफलम् ॥ २१५ ॥

सूर्य की अन्तर्दशा में मंगल की उपदशा हो तो राजा का भय, शारीरिक विकार, उपद्रव, शत्रुओं में परस्पर विरोध, एवं कुत्सित अन्न का भोजन करने वाला होता है ॥ २१५ ॥

राहु का उपदशा फल—

वातश्लेष्मं शत्रुभयं तीक्ष्णं क्षारं कुभोजनम् ।
राजपीडा वने हानी राहावुपदशां गते ॥ २१६ ॥

सूर्य की अन्तर्दशा में राहु की उपदशा हो तो वायु, कफ विकार, शत्रुओं से भय, तीक्ष्ण (तिक्त), नमकीन कुत्सित भोजन, राजकीय पीड़ा, तथा धन की हानि होती है ॥ २१६ ॥

शनि उपदशाफल—

हेमाम्बरजयैर्वृद्धिः शत्रुनाशं महासुखम् ।
मिष्ठान्नभोजनं सूर्ये शनेरुपदशा यदि ॥ २१७ ॥

सूर्य की अन्तर्दशा में शनि की उपदशा हो तो स्वर्ण, वस्त्र, और विजय की वृद्धि, शत्रुओं का नाश, महान् सुख, तथा मिष्ठान्न (मधुर) भोजन प्राप्त होता है ॥ २१७ ॥

बुध उपदशा फल—

नृपपूजा धनं कीर्तिविद्याबन्धुसमागमः ।
भोजनं मधुरान्नस्य रवौ ज्ञोपदशां गते ॥ २१८ ॥

सूर्य की, अन्तर्दशा में बुध की उपदशा हो तो राजसम्मान, धन, कीर्ति, विद्या मित्रों का समागम, मधुर अन्न का भोजन होता है ॥ २१८ ॥

केतु उपदशा फल —

दैन्यं परान्नभोजी स्याद्राजपीडा महद्भयम् ।
शत्रुद्वेषश्चरेत्सूर्योपदशायां यदा शिखी ॥ २१९ ॥

सूर्य की अन्तर्दशा में केतु की उपदशा हो तो दीनता, परान्न भोजन, (दूसरों के घर में भोजन करने वाला), राजकीय पीडा, महान भय एवं शत्रुओं से द्वेष होता है ॥ २१९ ॥

शुक्र उपदशा फल—

सुखवृद्धिसमानानि धनलाभो महोत्सवः ।
स्त्रीविलासः सदा सौख्यं रविः सितदशां गतः ॥ २२० ॥

सूर्यान्तर में शुक्र की उपदशा हो तो समान रूप से सुखों की वृद्धि, धन लाभ, महान् (बड़े-बड़े) उत्सव, स्त्री-सुख तथा सदैव सभी प्रकार का सुख प्राप्त होता है ॥ २२० ॥

चन्द्रान्तर में उपदशा फल—

चन्द्र उपदशा फल—

धनलाभो महासौख्यं स्त्रीलीलापुत्रसम्पदः ।
वस्त्रान्नपानलाभश्चोपदशासु यदा शशी ॥ २२१ ॥

चन्द्रमा की अन्तर्दशा में चन्द्रमा की ही उपदशा हो तो धनलाभ, महान सुख, स्त्रियों की लीला (मनोविनोद), पुत्र प्राप्ति, सम्पत्ति, वस्त्र, अन्न तथा पेय पदार्थों का लाभ होता है ॥ २२१ ॥

भौम उपदशा फल—

ऋद्धिर्धनागमो बुद्धिर्बन्धुस्वजनसौहृदः ।
रक्तवस्तुकृतो लाभश्चन्द्रस्योपदशां कुजः ॥ २२२ ॥

चन्द्रमा के अन्तर में भौम की उपदशा हो तो सभी प्रकार की सम्पदा एवं धन का आगमन, सद्बुद्धि का विकास, बन्धुवर्ग एवं अन्य आत्मीय जनों में सौहार्द एवं रक्त वस्तुओं से लाभ होता है ॥ २२२ ॥

राहु उपदशा फल—

राजमानो महासौख्यं भतिकल्याणवर्द्धनम् ।
चन्द्रस्योपदशां प्राप्तो राहुः शत्रुभयावहः ॥ २२३ ॥

चन्द्रान्तर में राहु की उपदशा हो तो राजदरबार में आदर महान् सुख, सम्पत्ति एवं जन कल्याण की वृद्धि तथा शत्रु के लिए भयकारक होता है ॥ २२३ ॥

गुरु उपदशा फल—

धनधर्मो महत्तेजो मित्रलाभः सुभोजनम् ।
सौख्यं च वस्त्रलाभं च चन्द्रस्योपगते गुरौ ॥ २२४ ॥

चन्द्रान्तर में गुरु की उपदशा हो तो जातक धनी, धार्मिक, महान् तेजस्वी, मित्रों से युक्त, सुन्दर भोजन, सुख, एवं वस्त्रलाभ करने वाला होता है ॥ २२४ ॥

शनि उपदशा फल—

पुत्रबन्धुकृतोद्वेगयुक्तः स्वस्थानवर्जितः ।
चन्द्रस्योपगते सौरे तुषधान्यादिभोजनम् ॥ २२५ ॥

चन्द्रान्तर में शनि की उपदशा हो तो पुत्र एवं बन्धुओं द्वारा उद्विग्न, अपने स्थान से रहित, भूसी सहित (अथवा मोटे) अन्न का भोजन करने वाला दुःखी व्यक्ति होता है ॥ २२५ ॥

बुध उपदशा फल—

शुक्लवस्त्रस्त्रिया लाभो माङ्गल्यं पुत्रसम्पदः ।
हयभूलाभदश्चैव चन्द्रस्योपगतो बुधः ॥ २२६ ॥

चन्द्रान्तर में बुध की उपदशा हो तो श्वेत वस्त्र एवं स्त्री का लाभ, मङ्गल कार्य, पुत्रोत्पत्ति, सम्पत्तिलाभ, तथा घोड़ा एवं भूमि का लाभ होता है ॥२२६॥

केतु उपदशा फल—

विरोधः सर्वधर्माणां जीवितं बहुसंशयम् ।
सर्पाम्बुविषजा भीतिः शिखी चोपदशां गतः ॥ २२७ ॥

चन्द्रान्तर में केतु की उपदशा हो तो सभी धर्मों से विरोध, जीवन के प्रति अधिक सन्देह, सर्प, जल तथा विष से भय होता है ॥ २२७ ॥

शुक्र उपदशा फल—

जलोदरादिरोगैस्तु रिपुचौरैर्धनक्षयः ।
अक्षीरं भोजनं रूक्षमिन्दोरुपगते सिते ॥ २२८ ॥

चन्द्रान्तर में शुक्र की उपदशा हो तो जलोदर आदि रोगों से, शत्रु और चोरों से धन का नाश होता है तथा घृत-दुग्ध रहित रूक्ष भोजन प्राप्त होता है ॥ २२८ ॥

सूर्य उपदशा फल—

विजयं धनसौख्यं च वस्त्रपानान्नलाभकृत् ।
चन्द्रस्योपदशां भानुः कुरुते नात्र संशयः ॥ २२९ ॥

चन्द्रान्तर में सूर्य की उपदशा हो तो निःसन्देह विजय, धन, सुख, वस्त्र, पेय पदार्थ एवं अन्न का लाभ होता है ॥ २२९ ॥

भौमान्तर में उपदशा फल—

भौम उपदशा फल—

पीडा शत्रुनरेन्द्राणां रक्तस्रावो भगन्दरः ।
अकस्माज्जायते भौमोपदशासु स्वयं कुजे ॥ २३० ॥

भौम की अन्तर्दशा में भौम की ही उपदशा हो तो शत्रुओं एवं राजा (राज-पुरुषों) से कष्ट, तथा अकस्मात् रक्तस्राव एवं भगन्दर रोग से कष्ट होता है ॥ २३० ॥

राहु उपदशा फल—

कलहं बन्धनं रोगं राजभङ्गं कुभोजनम् ।
अपमृत्युदशा राहुर्जायते शत्रुपीडिता ॥ २३१ ॥

भौमान्तर में राहु की उपदशा हो तो कलह, बन्धन, रोग, सत्ता (या अधिकार) का पतन, निकृष्ट भोजन, अकालमृत्यु तथा शत्रुओं से पीड़ा प्राप्त होती है ॥ २३१ ॥

गुरु उपदशा फल—

कुबुद्धिर्दूषितो रोगी देशे देशे परिभ्रमः ।
भौमस्योपदशा जीवे स्वर्णं भवति मृत्तिका ॥ २३२ ॥

भौमान्तर में गुरु की उपदशा हो तो कुबुद्धि (दुष्ट), अपमानित; रोगी, इधर-उधर भ्रमण करने वाला होता है । इस दशा में मनुष्य सोना को स्पर्श करे तो मिट्टी हो जाता है ॥ २३२ ॥

शनि उपदशा फल—

रक्तवासो महात्रासो बन्धनं धनपीडनम् ।
कोद्रवं च तिलं भोज्यं भौमस्योपदशां शनिः ॥ २३३ ॥

मंगल के अन्तर में यदि शनि की उपदशा हो तो लाल वस्त्र पहनने वाला, भय एवं बन्धन से युक्त, धन का अभाव होने से कोदो तथा तिल का भोजन करने वाला होता है ॥ २३३ ॥

बुध उपदशा फल—

ज्वरार्तिः सुहृदासीनो विलम्बेन धनक्षयः ।
भौमस्योपदशां सौम्यस्त्वन्नवस्त्रादिनाशनः ॥ २३४ ॥

भौमान्तर में बुध की उपदशा हो तो ज्वर से कष्ट, मित्रों का अतिथि, विलम्ब से (धीरे-धीरे) धन-नाश, तथा अन्न एवं वस्त्र का ह्रास हो जाता है ॥२३४॥

केतु उपदशा फल—

जृम्भणं च शिरःपीडा रोगमृत्युनृंपाद्भयम् ।
तन्द्रालस्यं कुभोज्यं च केतौ भूसुतमध्यगे ॥ २३५ ॥

मंगल के अन्तर में केतु की उपदशा हो तो जमांई (उबासी) आना, शिर मे पीड़ा, रोग-मृत्यु और राजा से भय, तन्द्रा (अर्ध निद्रा), आलस्य एवं निकृष्ट भोजन प्राप्त होता है ॥ २३५ ॥

शुक्र उपदशा फल—

राजशत्रुभयं त्रासो वम्यतीसारतो भयम् ।
व्रणो जीर्णमयाद्दुःखं भौमस्योपदशां सिते ॥ २३६ ॥

भौमान्तर में शुक्र की उपदशा हो तो राजा और शत्रु से भय, त्रास (आन्तरिक भय), वमन और अतिसार (बार-बार शौच होना) से कष्ट, व्रण (फोड़ा), एवं जीर्ण (पुराने) रोगों से कष्ट होता है ॥ २३६ ॥

सूर्य उपदशा फल—

भूमेश्च मणिलाभं च धनमित्रसुखावहम् ।
तीक्ष्णं वं मधुरं भुङ्क्ते भौमस्योपदशा रवौ ॥ २३७ ॥

मंगल की अन्तर्दशा में सूर्य की उपदशा हो तो भूमि और मणि (रत्नों) का लाभ, धन एवं मित्रों से सुख, तीक्ष्ण-तिक्त और मधुर पदार्थों का भोजन करने वाला, होता हैं ॥ २३७ ॥

चन्द्र उपदशा फल—

मौक्तिकं शुक्लवस्त्रं च लभते च सुखं यशः ।
क्षीरमिष्टान्नभोज्यं स्यात् कुजस्योपदशां शशी ॥ २३८ ॥

मंगल की अन्तर्दशा में चन्द्रमा की उपदशा हो तो मुक्ता श्वेत-वस्त्र, सुख, यश, दुग्ध तथा मधुर भोजन की प्राप्ति होती है ॥ २३८ ॥

राह्वन्तर्दशा में उपदशा

राहु उपदशा फल—

बन्धव्याधिस्तथा रोगः पीडा भवति दारुणा ।
स्थानच्युतिः कुभोज्यं च राहुः स्वोपदशां गतः ॥ २३९ ॥

राहु की अन्तर्दशा में राहु की उपदशा हो तो बन्धन, रोग-व्याधि, भयङ्कर पीड़ा, स्थान का परित्याग एवं कुत्सित भोजन (अरुचिकर भोजन) की प्राप्ति होती है ॥ २३९ ॥

गुरु उपदशा फल—

ज्ञानधर्मार्थनाशश्च कलहं व्यसनं भवेत् ।
कटुकं मिष्टभोज्यं च राहोरुपगते गुरौ ॥ २४० ॥

राहु की अन्तर्दशा में गुरु की उपदशा हो तो ज्ञान (विवेक), धर्म (धार्मिक क्रियाओं), एवं धन का नाश, कलह, दुर्व्यसन में प्रवृत्ति, कड़वे तथा मीठे भोजन के प्रति रुचि होती है ॥ २४० ॥

शनि उपदशा फल—

लङ्घनं गृहभङ्गश्च हस्तपादाक्षिपीडनम् ।
बन्धनं बहुजीवश्च राहोरुपगते शनौ ॥ २४१ ॥

राहु की अन्तर्दशा में शनि की उपदशा हो तो, यात्रा (अथवा उपवास), गृह का नाश, हाथ-पैर और आँखों में कष्ट एवं बन्धन होता है तथा जातक दीर्घजीवी होता है ॥ २४१ ॥

बुध उपदशा फल—

धनवस्त्रादिहानिश्च पदबुद्ध्योर्विनाशकृत् ।
भोजनं फलशाकादि राहोरुपगते बुधे ॥ २४२ ॥

राहु की अन्तर्दशा में बुध की उपदशा हो तो धन, वस्त्र आदि वस्तुओं की हानि, पद एवं बुद्धि का विनाश, तथा फल और शाक का ही भोजन करने वाला होता है ॥ २४२ ॥

केतु उपदशा फल—

अर्थनाशो विदेशश्च मृत्युचौरनृपाद्भयम् ।
राहोरुपदशां केतुर्बन्धनं विग्रहो भवेत् ॥ २४३ ॥

राह्वन्तर में केतु की उपदशा हो तो धन हानि, विदेश यात्रा, मृत्यु, चोर और राजा से भय, बन्धन तथा विरोध होता है ॥ २४३ ॥

शुक्र उपदशा फल—

स्त्रीनाशः कुलनाशश्च योगिनीभूतमातृभिः ।
पीडनं च कुभोज्यं स्याद्राहोरुपदशां सितः ॥ २४४ ॥

राहु की अन्तर्दशा में शुक्र की उपदशा हो तो स्त्री एवं पारिवारिक सदस्यों का नाश योगिनी-प्रेतबाधा अथवा कुल माताओं (कुल देवियों) के प्रकोप से होता है । विविध प्रकार की पीड़ा, एवं अरुचिकर भोजन प्राप्त होता है ॥ २४४ ॥

सूर्य उपदशा फल—

सुहृत्पुत्रमहापीडा ज्वररोगान्नहानिकृत् ।
राहोरुपदशां सूर्यः कुरुते नात्र संशयः ॥ २४५ ॥

राहु की अन्तर्दशा में सूर्य की उपदशा हो तो मित्रों और पुत्रों से महान् कष्ट, ज्वर, रोग और अन्न से निःसन्देह हानि होती है ॥ २४५ ॥

चन्द्र उपदशा फल—

चित्तभ्रमो मनोभङ्ग उद्वेगोऽथ कलिर्भयम् ।
भोज्यं स्नेहं हविष्यान्नं राहोरुपदशां शशी ॥ २४६ ॥

राहु की अन्तर्दशा में चन्द्रमा की उपदशा हो तो चित्त में भ्रम, उत्साह भङ्ग (हृदय पर आघात पहुँचना), उद्वेग (विकलता) एवं कलह होता है । तथा मनुष्य हविष्यान्न (हवन सामग्री), और घृत का भोजन करता है ॥ २४६ ॥

मंगल उपदशा फल—

रोगमृत्यू प्रमादश्च रक्तपित्तभगन्दरौ ।
कुभोजनं मानहानी राहोरुपदशां कुजः ॥ २४७ ॥

राहु की अन्तर्दशा में मंगल की उपदशा हो तो रोग से मृत्यु, प्रमाद (पागल-पन), रक्त-पित्त विकार एवं भगन्दर, जैसे रोगों से कष्ट, कुत्सित भोजन की प्राप्ति तथा मान हानि होती है ॥ २४७ ॥

गुर्वन्तर में उपदशा फल—

गुरु उपदशा फल—

यशोदयो महावृद्धिर्धनहेमसमागमः ।
सुखमिष्टान्नभोज्यं च गुरौ स्वोपदशां गते ॥ २४८ ॥

गुरु की अन्तर्दशा में गुरु की उपदशा हो तो यश का उदय (सम्मान वृद्धि), सम्पत्ति का विस्तार, धन और स्वर्ण का संचय (लाभ), सुख तथा मधुर भोजन की प्राप्ति होती है ॥ २४८ ॥

शनि उपदशा फल--

हयभूमिपशुप्राप्तिः सर्वत्र सुखमाप्नुयात् ।
सुभोज्यं बहुधान्यानि जीवस्योपदशां शनिः ॥ २४९ ॥

गुरु की अन्तर्दशा में शनि की उपदशा हो तो घोड़ा, भूमि, और पशुओं का लाभ, सर्व सुख-प्राप्ति, सुन्दर भोजन, तथा अधिक अन्न (खेती में अच्छी उपज) का लाभ होता है ॥ २४९ ॥

बुध उपदशा फल--

विद्यामौक्तिकशस्त्राणां लाभो मित्रभयागमः ।
अशन स्नेहपक्वादि जीवस्योपदशां बुधः ॥ २५० ॥

गुरु की अन्तर्दशा में बुध की उपदशा हो तो विद्या, मोती और शस्त्रों का लाभ एवं मित्रों से भय की आशंका होती है। तथा घृतपक्व भोजन का लाभ होता है ॥ २५० ॥

केतु उपदशा फल--

बन्धूनां तस्करादीनां कलितो मृत्युतो भयम् ।
कुधान्यमशन जीवे केतोरुपदशां गते ॥ २५१ ॥

गुरु की अन्तर्दशा में केतु की उपदशा हो तो अपने भाइयों से, चोर आदि दुष्टजनों से, विवाद एवं मृत्यु से भय तथा भोजन। में निन्दित अन्न प्राप्त होता है ॥ २५१ ॥

शुक्र उपदशा फल--

हेमवस्त्रधनप्राप्तिः क्षेमवृद्धिर्विभूषणः ।
भोजनं मधुरं क्षीरं जीवस्योपदशां सितः ॥ २५२ ॥

गुरु की अन्तर्दशा में शुक्र की उपदशा हो तो स्वर्ण, वस्त्र और धन का लाभ, कल्याण वृद्धि, सुन्दर आभूषणों से सुसज्जित होता है तथा दुग्ध निर्मित मधुर भोजन को ग्रहण करता है ॥ २५२ ॥

सूर्य उपदशा फल--

मातृपितृधनं भुङ्क्ते राजपूज्यश्च जायते ।
ध्रुवमत्यादरप्राप्तिर्जीवस्योपदशां रवौ ॥ २५३ ॥

गुरु की अन्तर्दशा में सूर्य की उपदशा हो तो जातक माता-पिता द्वारा अर्जित धन का उपभोग करने वाला, राजाओं से पूजित, तथा निश्चय ही अत्यधिक आदर प्राप्त करने वाला होता है ॥ २५३ ॥

चन्द्र उपदशा फल—

दधिमधुघृतक्षीरमणिमुक्ता सुलाभदा ।
जीवस्योपदशा चन्द्रे कुक्षिपादप्रपीडनम् ।। २५४ ।।

गुरु की अन्तर्दशा में चन्द्रमा की उपदशा हो तो दधि, मधु, घृत, दुग्ध, मणि और मोती के सम्बन्ध से अधिक लाभ होता है तथा कुक्षि और पैरों में पीड़ा होती है ।। २५४ ।।

भौम उपदशा फल—

शस्त्रशत्रुकृता पीडा गण्डमन्दाग्न्यजीर्णता ।
कुधान्यभोजनं भौमे जीवस्योपदशां गते ।। २५५ ।।

गुरु की अन्तर्दशा में भौम की उपदशा हो तो शस्त्र और शत्रु से पीड़ा, खुजली, मन्दाग्नि, एवं अजीर्ण से कष्ट, तथा कुत्सित अन्न का भोजन होता है ।। २५५ ।।

राहु उपदशा फल—

चाण्डालव्याधिशत्रुभ्यः पीडनं वमनं भयम् ।
कटुक्षारं च सम्भोज्यं जीवस्योपदशां तमः ।। २५६ ।।

गुरु की अन्तर्दशा में राहु की उपदशा हो तो चाण्डाल (वधिक, निन्द्य कर्म करने वाला), रोग और शत्रुओं से पीड़ा, वमन (उल्टी) रोग का भय, तथा कटु (कड़वा) और नमक मिश्रित खट्टे पदार्थों के भोजन में रुचि होती है ।। २५६ ।।

शन्यन्तर में उपदशा फल—

शनि उपदशा फल—

जलौका देहपीडा च विदेशगमनं भवेत् ।
कुधान्यतिलमश्नाति शनौ स्वोपदशां गते ।। २५७ ।।

शनि की अन्तर्दशा में शनि की उपदशा हो तो शरीर को कष्ट और विदेश यात्रा होती है । भोजन में कुत्सित अन्न और तिल ही खाने को मिलता है ।।२५७।।

बुध उपदशा फल—

धनबुद्धी रिपोः पीडा अन्नपानादिहानिकृत् ।
स्नेहं रसं विना भुङ्क्ते सौरस्योपदशां बुधः ।। २५८ ।।

शनि की अन्तर्दशा में बुध की उपदशा हो तो अर्थ (धन) प्रधान बुद्धि, शत्रुओं से पीड़ा, अन्न एवं पेय पदार्थों के सेवन से हानि, तथा स्नेह (घृत) रहित

रूखा भोजन करने वाला होता है। (अर्थात् उदर व्याधि से अधिक परहेज करना पड़ता है।) ॥ २५८ ॥

केतु उपदशा फल—

शत्रुचित्तभयं त्रासो दारिद्र्यं च बहुक्षुधा।
नीचसङ्गो कुभक्षी च सौरस्योपदशां शिखी ॥ २५९ ॥

शन्यन्तर में केतु की उपदशा हो तो शत्रुओं द्वारा चित्त में भय, त्रास, दरिद्रता, अत्यधिक भूख का लगना, नीच जनों की संगति, तथा निम्न पदार्थों के भक्षण में रुचि होती है ॥ २५९ ॥

शुक्र उपदशा फल—

द्यूतवेश्याभवं द्रव्यं महिषीकृष्यलाभदः।
कन्याजन्म तदा गर्भे सौरस्योपदशां सितः ॥ २६० ॥

शनि की अन्तर्दशा में शुक्र की उपदशा हो तो द्यूत (जूआ) और वेश्याओं के संसर्ग से द्रव्यलाभ, भैंस एवं कृषि कर्म से भी लाभ होता है। यदि इस दशा में स्त्री को गर्भ हो तो कन्या का जन्म होता है ॥ २६० ॥

सूर्य उपदशा फल—

राजाधिकारस्तेजस्वी व्याधिः पीडा ज्वरो व्यथा।
कलत्रकलहं चौर्यं सौरस्योपदशां रविः ॥ २६१ ॥

शनि की अन्तर्दशा में सूर्य की उपदशा हो तो मनुष्य राजकीय अधिकार से युक्त, तेजस्वी, रोग-पीडा और ज्वर-व्यथा से युक्त होता है। स्त्री के साथ कलह तथा गृह में चोरी भी होती है ॥ २६१ ॥

चन्द्र उपदशा फल—

प्रमाणबुद्धिप्राधान्यं बहुस्त्रीभोगवान् धनी।
हविर्मधुक्षीरभोक्ता सौरस्योपदशां शशी ॥ २६२ ॥

शनि की अन्तर्दशा में चन्द्रमा की उपदशा हो तो जातक बुद्धि प्रधान (बौद्धिक श्रम करने वाला) एवं प्रामाणिक पुरुष होता है। बहुत सी स्त्रियों के साथ सुख-भोग करने वाला, धनवान, हविष्यान्न, मधु, तथा दुग्ध युक्त भोजन करने वाला होता है ॥ २६२ ॥

भौम उपदशा फल—

शस्त्रवह्निरिपोर्भीतिर्वातरक्तार्तिमान् नरः।
भोजनं मधुसर्पिभ्यां सौरस्योपदशां कुजे ॥ २६३ ॥

शनि की अन्तर्दशा में मंगल की उपदशा हो तो मनुष्य को शस्त्र, अग्नि

और शत्रु से भय, वायु-रक्त जनित पीड़ा, मधु और घृत युक्त भोजन प्राप्त होता है ॥ २६३ ॥

राहु उपदशा फल—

धनभूमिपशूनां नाशं कटुतीक्ष्णाम्लभोजनम् ।
मृत्युर्विदेशगमनं सौरस्योपदशां तमः ॥ २६४ ॥

शनि की अन्तर्दशा में राहु की उपदशा हो तो धन-भूमि और पशुओं का नाश, कटु तिक्त एवं खट्टे भोजन की प्राप्ति, मृत्यु (मृत्यु तुल्य कष्ट) तथा विदेश यात्रा होती है ॥ २६४ ॥

गुरु उपदशा फल—

गृहध्वंसो भवेत्स्त्रीभिः क्लेशपीडानिरुद्यमः ।
किञ्चित्सौख्यमवाप्नोति सौरस्योपदशां गुरुः ॥ २६५ ॥

शनि की अन्तर्दशा में गुरु की उपदशा हो तो स्त्रियों (के पारस्परिक कलह) द्वारा गृह का नाश, मानसिक क्लेश, पीडा तथा निष्क्रियता (बेकारी) तथा कभी-कभी स्वल्प सुख की भी प्राप्ति हो जाती है ॥ २६५ ॥

बुधान्तर में उपदशा फल

बुध उपदशा फल—

विद्याबुद्धिधनप्राप्तिः स्वर्णं रूप्यं च माणिकम् ।
लभते धान्यरत्नानि बुधे स्वोपदशां गते ॥ २६६ ॥

बुध अपनी ही अन्तर्दशा एवं उपदशा हो तो विद्या बुद्धि और धन की प्राप्ति, सोना, चाँदी माणिक्य तथा उच्च कोटि के धान्यों (अन्न) की प्राप्ति होती है ॥२६६॥

केतु उपदशा फल—

रक्तपित्तकृता पीडा कुख्यातोदरपीडनम् ।
वस्त्रार्थशस्त्रहानिश्च सौम्यस्योपदशां शिखी ॥ २६७ ॥

बुध की अन्तर्दशा में केतु की उपदशा हो तो रक्त पित्त जन्य पीडा, कुख्यात (दुष्ट के रूप में प्रसिद्ध), एवं उदर से पीड़ित होता है तथा वस्त्र, धन और शस्त्र की हानि (चोरी) होती है ॥ २६७ ॥

शुक्र उपदशा फल—

सौम्यदिक्षु भवेल्लाभः पदप्राप्तिर्महत्सुखम् ।
भुङ्क्ते मिष्टान्नमाहारं सौम्यस्योपदशां सितः ॥ २६८ ॥

बुधान्तर में शुक्र की उपदशा हो तो जातक को उत्तर दिशा में लाभ, अच्छा पद एवं महान् सुख की प्राप्ति होती है तथा मिष्ठान्न एवं मधुर पदार्थों का भोजन करता है ॥ २६८ ॥

सूर्य उपदशा फल—

तेजोहानिः शिरःपीडा चोद्वेगश्चलचित्तकः ।
दृष्टिदोषो भवेच्छर्दी सौम्यस्योपदशां रविः ॥ २६९ ॥

बुध की अन्तर्दशा में सूर्य की उपदशा हो तो तेज की हानि, शिर-पीडा, उद्वेग, चित्त में चचलता, नेत्र विकार, तथा वमन (उल्टी) से कष्ट होता है ॥ २६९ ॥

चन्द्र उपदशा फल—

श्रियो लाभस्तथा कन्यासौम्यार्थं पुत्रपौत्रकः ।
मिष्टान्नभोज्यवस्त्राणि बुधस्योपदशां विधुः ॥ २७० ॥

बुध की अन्तर्दशा में चन्द्रमा की उपदशा हो तो लक्ष्मीलाभ, कन्याप्राप्ति, शुभकार्य हेतु धनसंग्रह, पुत्र-पौत्र की वृद्धि, मिष्ठान्न मधुर खाद्य पदार्थ एवं वस्त्रोंकी प्राप्ति होती है ॥ २७० ॥

भौम उपदशा फल—

आममृत्युश्चातिसारं चौराग्निशस्त्रपीडनम् ।
ज्ञानधर्मधनप्राप्तिः सौम्यस्योपदशां कुजः ॥ २७१ ॥

बुध की अन्तर्दशा में भौम की उपदशा हो तो आम (अजीर्ण) रोग से मृत्यु-तुल्य कष्ट, अतिसार रोग, चोर, अग्नि और शस्त्र से पीडा, ज्ञान, धर्म एवं धन की प्राप्ति होती है ॥ २७१ ॥

राहु उपदशा फल—

राजशत्रुभयं त्रासः कलहः स्त्री निरुत्सहा ।
स्नेहक्षीरं विना भुङ्क्ते बुधस्योपदशां तमः ॥ २७२ ॥

बुध की अन्तर्दशा में राहु की उपदशा हो तो राजा और शत्रु से भय, त्रास (आतंक) एवं कलह (विवाद) होता है । स्त्री साहसहीन होती है तथा जातक घी-दूध से रहित रूखा भोजन करता है ॥ २७२ ॥

गुरु उपदशा फल—

प्रधानपुरुषं राज्ये विद्याबुद्धिविवर्द्धनम् ।
अन्नपानादिसौख्यं च बुधस्योपदशां गुरुः ॥ २७३ ॥

बुध की अन्तर्दशा में गुरु की उपदशा हो तो राज्य में प्रधान पुरुष की तरह सम्मान, विद्या एवं बुद्धि का विस्तार, अन्न एवं पेय पदार्थों का सुख प्राप्त होता है ॥ २७३ ॥

शनि उपदशा फल—

विकलं वातपातानां वातपीडामहद्भयम् ।
अन्नपानादिहानिश्च बुधस्योपदशां शनिः ॥ २७४ ॥

बुध की अन्तर्दशा में शनि की उपदशा हो तो आघात (चोट) एवं पात तथा (ऊँचाई से गिरने) से विकलता, वायुजन्य पीड़ा से महान भय, एवं खान-पान का भी अभाव हो जाता है ॥ २७४ ॥

केत्वन्तर में उपदशा फल

केतु उपदशा फल—

धननाशोपघातश्च विदेशे दुःखपूरितम् ।
सर्वत्र विफलं विन्द्यात्केतोरुपदशां शिखी ॥ २७५ ॥

केतु की अन्तर्दशा में केतु की ही उपदशा हो तो धन-नाश, आघात, विदेश प्रवास में विविध प्रकारके कष्ट होते हैं तथा सर्वत्र असफलता ही प्राप्त होती है ॥ २७५ ॥

शुक्र उपदशा फल—

चतुष्पाद्धनहानिर्नेत्ररोगः शिरो व्यथा ।
श्लेष्मभीरर्थहानिश्च केतोरुपदशां भृगुः ॥ २७६ ॥

केतु की अन्तर्दशा में शुक्र की उपदशा हो तो पशुओं से धन-हानि, नेत्र रोग, शिर में व्यथा, कफ विकार एवं धन की हानि होती है ॥ २७६ ॥

रवि उपदशा फल—

मित्रस्वजनजोद्वेगो ह्यल्पमृत्युः पराजयः ।
भोजनं तक्रहीनं च केतोरुपदशां रवौ ॥ २७७ ॥

केतु की अन्तर्दशा में सूर्य की उपदशा हो तो अपने मित्रों एवं परिजन (आश्रितों) से मन में उद्विग्नता, अल्पायु में मृत्यु का भय, एवं पराजय होती है तथा तक्र (मट्ठा)से रहित भोजन मिलता है ॥ २७७ ॥

चन्द्र उपदशा फल—

अन्नपानादिनाशं च व्याधिस्तस्य च विभ्रमः ।
मिष्ठान्नभोजनप्राप्तिः केतोरुपदशां शशी ॥ २७८ ॥

केतु की अन्तर्दशा में चन्द्रमा की उपदशा हो तो अन्न और दुग्ध आदि पेय पदार्थों का नाश (अभाव), व्याधि (रोग) एवं विभ्रम (विक्षिप्तावस्था) होता है परन्तु भोजनार्थ मिष्ठान्न की प्राप्ति होती रहती है ॥ २७८ ॥

भौम उपदशा फल—

वह्निः शत्रो रणे भीतिर्वातकष्टं भयं नृपात् ।
कुधान्यं मत्स्यमांसानि केतोरुपदशां कुजः ॥ २७९ ॥

केत्वन्तर में भौम की उपदशा हो तो अग्नि, शत्रु और संग्राम से भय, वायुजन्य पीडा एवं राजा से भय होता है । निकृष्ट अन्न और मत्स्य-मांस आदि के भक्षण में अभिरुचि होती है ॥ २७९ ॥

राहु उपदशा फल—

शत्रुतो हि भयं स्त्रीणां नीचेभ्योऽधिकपीडनम् ।
बुभुक्षितं पराधीनं केतोरुपदशां तम: ॥ २८० ॥

केतु के अन्तर में राहु की उपदशा हो तो शत्रुओं से भय, नीच व्यक्तियों से स्त्री को कष्ट, भूख से पीड़ित तथा पराधीन व्यक्ति होता है ॥ २८० ॥

गुरु उपदशा फल—

विवादो धनहानिश्च वस्त्रमन्त्रादिनाशनम् ।
केतोरुपदशां जीवो रूक्षधान्यादिभोजनम् ॥ २८१ ॥

केत्वन्तर में गुरु की उपदशा हो तो विवाद, धन हानि, वस्त्र एवं मन्त्र (उपदेश और साधना) का नाश, तथा रूखा-सूखा भोजन प्राप्त होता है ॥ २८१ ॥

शनि उपदशा फल—

वस्त्रान्नपानहानिश्च सुखमाश्रमपीडनम् ।
गोमहिष्यादिनाशं च केतोरुपदशां शनि: ॥ २८२ ॥

केतु की अन्तर्दशा में शनि की उपदशा हो तो वस्त्र, अन्न पेय (दुग्ध आदि) की हानि, सुख (मानसिक शान्ति) और आश्रम (सामाजिक बन्धनों से) पीड़ा, गो-भैंस आदि पशुओं का नाश होता है ॥ २८२ ॥

बुध उपदशा फल—

शत्रुपीडा महोद्वेगो विद्याबन्धुधनक्षय: ।
केतोरुपदशां हि जन्तो: सौम्ये न संशय: ॥ २८३ ॥

केतु की अन्तर्दशा में बुध की उपदशा हो तो शत्रुओं से पीड़ा, महान् उद्वेग (उलझन), विद्या का ह्रास, बन्धु एवं धन का नाश होता है इसमें संशय नहीं ॥ २८३ ॥

शुक्रान्तर में उपदशा फल—

शुक्र उपदशा फल—

माणिक्यसुन्दरीप्राप्तिर्मध्वाज्यपयभोजनम् (?) ।
श्वेतवस्त्रस्य सम्प्राप्तिर्भृगु: स्वोपदशां गत: ॥ २८४ ॥

शुक्रान्तर में शुक्र की उपदशा हो तो माणिक्य (रत्न), सुन्दरी-स्त्री, मधु-घृत और दुग्ध मिश्रित भोजन तथा श्वेत वस्त्र की प्राप्ति होती है ॥ २८४ ॥

सूर्य उपदशा फल—

राजशत्रुज्वरात्पीडा हृदि जंघाशिरोव्यथा ।
स्वल्पाशनश्च लाभश्च शुक्रस्योपदशां रवि: ॥ २८५ ॥

शुक्रान्तर मे सूर्य की उपदशा हो तो राजा-शत्रु और ज्वर से पीडा, हृदय-जंघा, एवं सिर में कष्ट (रोग), स्वल्प भोजन तथा स्वल्प लाभ होता है ॥२८५॥

चन्द्र उपदशा फल—

राज्याधिकप्रदो राज्ये लभते वस्त्रकाञ्चनम् ।
कन्याजन्मफलप्राप्तिः शुक्रस्योपदशां शशी ॥ २८६ ॥

शुक्रान्तर में चन्द्रमा की उपदशा हो तो राजकीय अधिकारों में वृद्धि, वस्त्र एवं स्वर्ण का लाभ, तथा कन्या की उत्पत्ति होती है ॥ २८६ ॥

भौम उपदशा फल—

अलाभं ताडनं क्लेशो रक्तपित्तप्रपीडनम् ।
अन्नपानादिसौख्यं च शुक्रस्योपदशां कुजः ॥ २८७ ॥

शुक्र की अन्तर्दशा में मंगल की उपदशा हो तो हानि, मार-पीट (अपमान), क्लेश, रक्त-पित्त जन्य पीडा तथा खान-पान का सुख प्राप्त होता है ॥ २८७ ॥

राहु उपदशा फल—

राजशत्रुभवा पीडा स्त्रीशत्रुकलहो भवेत् ।
भोजने कटुकक्षारं सितस्योपदशां तमः ॥ २८८ ॥

शुक्रान्तर में राहु की उपदशा हो तो राजा और शत्रुओं से कष्ट, स्त्री एवं शत्रुओं से कलह होता है। कड़वे तथा क्षार पदार्थों के भोजन में रुचि होती है ॥ २८८ ॥

गुरु उपदशा फल—

वज्रमुक्तापदप्राप्तिर्गजाश्वादिगवां (?) लभेत् ।
कर्पूरमिष्टमाहारं शुक्रस्योपदशां गुरुः ॥ २८९ ॥

शुक्र की अन्तर्दशा में गुरु की उपदशा हो तो वज्र (हीरा), मोती और उच्च पद की प्राप्ति, हाथी-घोड़ा और गाय का लाभ, कर्पूर तथा अभीष्ट वस्तुओं का (इच्छानुकूल) भोजन प्राप्त होता है ॥ २८९ ॥

शनि उपदशा फल—

गव्युष्ट्रखरलोहादि लभते स्वल्पलाभकृत् ।
भोजने तिलमाषाश्च शुक्रस्योपदशां शनिः ॥ २९० ॥

शुक्रान्तर में शनि की उपदशा हो तो गाय, ऊँट, गधा आदि पशुओं एवं लोहा प्रभृति धातुओं से स्वल्प लाभ, तथा भोजन में तिल और उड़द ही प्राप्त होता है। (प्रायः इन्हीं वस्तुओं में रुचि होती है) ॥ २९० ॥

बुध उपदशा फल—

बुद्धिविज्ञानराज्यश्रीनिध्यधिकारलाभकृत् ।
भोजनं हविस्तक्राभ्यां शुक्रस्योपदशां बुधः ॥ २११ ॥

शुक्र की अन्तर्दशा में बुधकी उपदशा हो तो बुद्धि-विज्ञान, राज्यलक्ष्मी (राजकीय उच्च पद), खजाना, और अधिकार की वृद्धि तथा घृत एवं मट्ठा युक्त भोजन में अभिरुचि होती है ॥ २११ ॥

केतु उपदशा फल—

भ्रमणं देशग्रामाणं रोगमृत्युमहद्भयम् ।
लभते द्रव्यधान्यादि शुक्रस्योपदशां शिखी ॥ २१२ ॥

शुक्रान्तर में केतु की उपदशा हो तो विभिन्न देशों (स्थानों) एवं ग्रामों में भ्रमण, रोग और मृत्यु से भयङ्कर भय, तथा द्रव्य (रूपये-पैसे) और धन का लाभ होता है ॥ २१२ ॥

सन्ध्या दशाफल—

रविसन्ध्या फल—

सन्ध्या दिनेशस्य विपाककाले धनागमं शौर्यनरेन्द्रसौख्यम् ।
धर्मोद्यमं सौख्यमतीवतीक्ष्णं भूपादिसौख्यं विभवादिमानम् ॥ २१३ ॥

सूर्य की सन्ध्या दशा काल में धन का आगमन, शौर्य (पराक्रम), राजा से सुख, धर्म के आचरण में संलग्न, प्रबल सुख, राजाओं से सुख तथा सम्पत्ति आदि से सम्मान प्राप्त होता है ॥ २१३ ॥

प्रचण्डवित्तं स्वकुलाधिकारं सुवर्णताम्राश्वरथादिप्राप्तिः ।
आरोग्यताविद्रुमरत्नलाभं प्राप्नोति कीर्तिं रिपुसंक्षयं च ॥ २१४ ॥

अत्यधिक धनलाभ, अपने कुल का अधिकार, स्वर्ण, ताम्र, अश्व, रथ, आदि की प्राप्ति, निरोगता (स्वास्थ्य लाभ), मूँगा, और रत्नों का लाभ यश वृद्धि तथा शत्रुओं का नाश होता है ॥ २१४ ॥

तुङ्गादिसंस्थः फलमेव सन्ध्या नीचारिसंस्थोऽप्यशुभं फलं च ।
तदर्थनाशं पितृबन्धुहानिं हृदक्षिपीडाकरपित्तरोगम् ॥ २१५ ॥

सूर्य अपनी उच्च राशि (मेष) में स्थित हो तो उक्त फल होते हैं । यदि अपनी नीच राशि (तुला) या शत्रु ग्रह की राशि (वृष, मकर, कुम्भ) में हो तो अशुभ फल होता है यथा धन-नाश, पिता एवं बन्धुओं की हानि, हृदय और आँखों में पीड़ा तथा पित्त जन्य विकार उत्पन्न होता है ॥ २१५ ॥

चन्द्र सन्ध्याफल—

निशेशसन्ध्यापरिपाककाले प्राप्नोति वित्तं द्विजमन्त्रिसौख्यम् ।
स्वविक्रमाच्च स्वगुणैः सुवर्णं सुगन्धिद्रव्यादि सुकार्यलाभम् ॥ २९६ ॥

चन्द्रमा की सन्ध्या हो तो धन, ब्राह्मण, और मन्त्री से सुख, अपने पराक्रम और गुणों से स्वर्ण एवं सुगन्धित द्रव्य का लाभ तथा सत्कार्यों में सफलता मिलती है ॥ २९६ ॥

प्रबोधकल्याणधनात्मजाप्तिरभीष्टसिद्धिर्धनधर्मलाभम् ।
सत्साधुसम्पर्ककथानुरक्तं कुलाधिमुख्यं नृपपूजितं च ॥ २९७ ॥

विशेष-ज्ञान, कल्याण, धन और पुत्र की प्राप्ति, अभीष्ट कार्यों में सिद्धि, धन और धर्म का लाभ, सत्पुरुषों (उच्च कोटि के महात्माओं) के संसर्ग एवं उनके उपदेशों में अनुरक्त, अपने कुल में श्रेष्ठ, तथा राजाओं से पूजित होता है ॥ २९७ ॥

नीचारिसंस्थे कृषकस्वरूपो मित्रारिहर्ता दुहितुः प्रसूतिः ॥
अर्थक्षयं शोकरुजादिकष्टं क्रोधोद्भवं विद्रवमृत्युकारी ॥ २९८ ॥

चन्द्रमा यदि अपनी नीच (कर्क) राशि अथवा शत्रु राशि में स्थित हो तो कृषिकार्य करने वाला, मित्रों के शत्रुओं का दमन करने वाला होता है। कन्या सन्तति की उत्पत्ति, धन का नाश शोक और रोग से कष्ट तथा क्रोध से उत्पन्न कार्यों द्वारा मृत्यु तुल्य कष्ट होता है ॥ २९८ ॥

भौम सन्ध्या फल—

स्वपाककाले धरणीसुतस्य सन्ध्या समाप्नोति महाप्रतापम् ।
शौर्यं हविस्तस्करपापकर्मा दोर्दण्डतेजा रणसाहसी च ॥ २९९ ॥

मंगल की सन्ध्या दशा हो तो जातक महान् प्रतापी, शूर, चोर एवं पापकर्म करने वालों के लिए अग्नि के समान, अपने बाहुबल और तेज से विख्यात् तथा संग्राम में साहसी होता है ॥ २९९ ॥

नृपेश्वरः शस्त्रविषाग्निकर्मनेतातथाप्नोति कुलस्यधर्मम् ।
कान्तादिकार्ये सततार्थलाभं हेमाङ्गनाताम्रहिरण्यलाभम् ॥ ३०० ॥

राजाओं में श्रेष्ठ, शस्त्र, विष और अग्नि के कार्यों में निपुण, अपने कुलोचित आचरण को अपनाने वाला, स्त्री आदि से सम्बन्धित कार्यों को करने वाला, निरन्तर धन लाभ सुवर्ण, स्त्री, ताम्र तथा स्वर्ण (स्वर्ण की वस्तुओं) का लाभ करने वाला होता है ॥ ३०० ॥

बुधसन्ध्यादशा फल—

बुधस्य सन्ध्या विदधाति शश्वद्धनागमं मित्रकलत्रपुत्रैः ।
वणिक्प्रयोगादखिलैः सुकाव्यैर्महेन्द्रजालैः कुहकादिभिश्च ॥ ३०१ ॥

बुध की सन्ध्यादशा हो तो मित्र-स्त्री और पुत्रों द्वारा निरन्तर धन लाभ होता है। इसके अतिरिक्त व्यापारसे, विविध प्रकार के काव्यों की रचना से, इन्द्रजाल (जादूगरी) से, तथा छल-प्रपञ्च से भी धनोपार्जन होता है ॥ ३०१ ॥

द्यूतप्रयोगाद् द्विपकर्ममन्त्रैर्दैवज्ञसिद्धान्तरसायनाद्यैः ।
भूहेमलोहस्वनृपात्मजेभ्यो लाभो धनानां सुखसौख्यवृद्धिः ॥ ३०२ ॥

जुआ खेलने, हाथियों से सम्बन्धित कार्य (क्रय-विक्रय आदि), मन्त्रों के प्रयोग (तान्त्रिक वृत्ति), ज्योतिष विद्या, आयुर्वेद (चिकित्सा), भूमि, लोहा, स्वर्ण, राजा एवं पुत्रों के सहयोग से धन लाभ तथा सुख की वृद्धि होती है ॥ ३०२ ॥

नीचारिसंस्थोऽस्तमितश्च सौम्यस्त्रिधातुपीडां कुरुतेऽर्थनाशनम् ।
कलत्रहानिं नृपबन्धनाप्तिं परस्वदुःखं नृपपीडितश्च ॥ ३०३ ॥

यदि बुध नीचराशि (मीन) या, शत्रुराशि में स्थित हो अथवा अस्तंगत हो तो त्रिधातु (वात-पित्त-कफ) जन्य पीडा, धनहानि, स्त्री हानि, राजकीय बन्धन पराये धन के कारण कष्ट तथा राजा से पीडा होती है ॥ ३०३ ॥

गुरुसन्ध्यादशा फल--

गुरुः स्वसन्ध्यां लभतेऽतिसौख्यं हेमाम्बरं रत्नगजाश्वजातम् ।
धनं लभेत्पुत्रसमुच्चयं च स्वधर्म सिद्धिं द्विजदेवपूजाम् ॥ ३०४ ॥

गुरु अपनी सन्ध्या दशा में अत्यधिक सुख, स्वर्ण, वस्त्र, रत्न-अश्व-और हाथियों के सम्बन्ध से धन लाभ, पुत्रों की उत्पत्ति एवं धर्माचरण में वृद्धि तथा विप्र और देवताओं के पूजन में सिद्धि (सफलता) प्रदान करता है ॥ ३०४ ॥

जनागमं च त्रिदिवेश्वरत्वं वेश्मप्रवेशस्त्वपि चार्थसिद्धिः ।
स्वजातिसन्मानमतिप्रहर्षं भूपालसौख्यं विविधार्थलाभम् ॥ ३०५ ॥

जनागम (अतिथियों का आगमन), इन्द्र के तुल्य पराक्रमी, गृह प्रवेश (नूतन गृह में प्रवेश), धन लाभ, अपनी जाति में सम्मान, अत्यन्त प्रसन्नता, राजकीय सुख, तथा विविध प्रकार के धन का लाभ होगा ॥ ३०५ ॥

विदेशनिम्ने कृतगोविवर्णैर्गुरुः स्वपाके सुहृदर्थनाशम् ।
भूपालभङ्गं सुतकष्टरोगं करोति पाके बहुदुःखकारी ॥ ३०६ ॥

गुरु अपनी नीच राशि (मकर) में हो तो विदेश प्रवास, निन्दित कार्य,

मित्रों के धन का नाश, राजाओं की हानि, पुत्र को कष्ट, रोग तथा विविध प्रकार के दुःखों को प्राप्ति होती है ॥ ३०६ ॥

शुक्रसन्ध्यादशा फल—

दैत्येन्द्रपूज्यस्य करोति सन्ध्या महार्थसम्प्राप्तिमतोवसौख्यम् ।
नृपेश्वरत्वं स्वकुलाधिकारं प्राप्नोति वित्तं मणिमौक्तिकानि ॥ ३०७ ॥

शुक्र की सन्ध्या हो तो अपार धन की प्राप्ति, अत्यधिक सुख, राजाओं का अधिपति, अपने कुल के अधिकार से युक्त, धन, मणि और मुक्ता की प्राप्ति होती है ॥ ३०७ ॥

गजाश्वयानासनमानहर्षैः प्रख्यातकर्मा क्रयविक्रयाणाम् ।
धनागमं भूकृषिणा महोक्षैः कलत्रवृद्धि सुखसौख्यजातम् ॥ ३०८ ॥

(यदि शुक्र अपनी उच्च राशि में हो तो) हाथी-घोड़ा-वाहन-आसन, सम्मान और प्रसन्नता से युक्त क्रय-विक्रय के कार्य में सुप्रसिद्ध, भूमि कृषिकर्म और बैलों से धन लाभ, स्त्रियों में वृद्धि तथा सुख प्राप्त होता है ॥ ३०८ ॥

शुक्रगते निम्नगृहेऽरिगेहे योधैर्जितो वा रविलिप्तगुप्तिः ।
दुष्टाङ्गनासङ्गमसौख्यहर्त्ता धनक्षयं स्त्रीसुतधर्मनाशम् ॥ ३०९ ॥

शुक्र अपनी नीचराशि या शत्रु राशि में स्थित हो या सूर्य की किरणों में अस्त हो तो योद्धाओं से पराजित, दुष्टा स्त्रियों के सहवास से सुख का नाश, धन हानि, तथा स्त्री-पुत्र का नाश होता है ॥ ३०९ ॥

शनिसन्ध्यादशा फल—

सदैव तीक्ष्णांशुसुतस्य सन्ध्या ददाति लाभं स्वकुलाधिकारम् ।
खरोष्ट्रगोपाक्षिकधान्यवस्त्रकुलित्थमाषादिककोद्रवाप्तिः ॥ ३१० ॥

शनि की सन्ध्यादशा सदैव लाभ, अपने कुल का अधिकार, गधा, ऊँट, गाय, पक्षी, अन्न, वस्त्र, कुलथी, उड़द एवं कोदो से लाभ प्रदान करती है ॥ ३१० ॥

वृन्देश्वरं ग्रामपदाधिपत्यं कुलोन्नतिं हीनजनप्रमाणम् ।
लोहायसीसत्रपुसन्महिष्यैर्धनागमं मर्त्यचतुष्पदाच्च ॥ ३११ ॥

(शनि अपनी उच्चराशि में हो तो) जन समूह (किसी पार्टी) का नेता, ग्राम का पदाधिकारी (सभापति), अपने कुल में उन्नतिशील, निम्नवर्ग का प्रामाणिक व्यक्ति, लोहा, सीसा, त्रपु (रांगा), उत्तम नस्ल की भैंसों के व्यापार से एवं अन्य चतुष्पदों से धन का लाभ होता है ॥ ३११ ॥

नीचारिसंस्थास्तमितोदितस्य सौरस्य पाके कुरुते च कष्टम् ।
सद्बन्धुभार्यार्थसुपुत्रनाशं देहे रुजा तीव्रज्वरानिलोत्था ॥ ३१२ ॥

शनि यदि अपनी नीच या शत्रुराशि में हो या अस्तंगत हो तो कष्ट, अपने भाई-स्त्री-धन एवं पुत्र का नाश, शरीर में रोग, तथा वायु विकार से तीव्र ज्वर होता है ॥ ३१२ ॥

उक्तान्यतो द्वादशभिः प्रकारैर्नैसर्गिकादीनि दशान्तराणि ।
तत्रापि सन्ध्याफलपाक उक्तः स चिन्तनीयः सदृशः फलेन ॥ ३१३ ॥

नैसर्गिक आदि बारह प्रकार से दशा-अन्तर्दशाओं का फल कहा गया । इसके अनन्तर सन्ध्या दशा का फल कहा गया है । इस दशा का भी विचार उसी प्रकार करना चाहिये जैसे अन्य दशाओं का करते हैं ॥ ३१३ ॥

सूर्यदशा में पाचकदशा फल—

सूर्य-सूर्यदशा फल—

राजमानं सुखं चैव सम्मान शत्रुनाशनम् ।
लभते सौख्यलाभं च रविमध्ये स्वयं रविः ॥ ३१४ ॥

सूर्य की दशा मे सूर्य की पाचक दशा हो तो राजसम्मान, सुख, प्रतिष्ठा, शत्रुओं का नाश, एवं सुख-लाभ होना है ॥ ३१४ ॥

सूर्य-चन्द्रदशा फल—

रोगादिनाशं धनधान्यलाभं शत्रुक्षयं प्रीतिसुखोदयं च ।
सूर्यस्य चन्द्रान्तरसन्धिपाके तत्रास्तभाद्द्वित्रिशुभं करोति ॥ ३१५ ॥

सूर्य में चन्द्रमा की पाचक दशा आने पर रोगादि कष्टों का नाश, धन-धान्य लाभ, शत्रुओं का नाश, प्रीति, एवं सुख का लाभ होता है । अस्त ग्रह की अपेक्षा (उच्चस्थ ग्रह) द्विगुणित-त्रिगुणित फल प्रदान करता है ॥ ३१५ ॥

सूर्य-मङ्गलदशा फल—

दिवाकरस्यान्तरगः कुजश्चेल्लाभो भयं विक्रमहेमताम्रम् ।
संग्रामधुर्याजयवाहनानि प्रचण्डतां भूपसुखं करोति ॥ ३१६ ॥

सूर्य की दशा में मंगल की पाचक दशा हो तो लाभ, भय, पराक्रम, स्वर्ण, ताम्र का लाभ, संग्राम में विजय, वाहन, स्वभाव में उग्रता तथा राजा से सुख प्राप्त होता है ॥ ३१६ ॥

सूर्य-बुधदशा फल—

देहे च कष्टं ज्वररोगदौस्थ्यं करोति शोकक्षयशत्रुवैरम् ।
अर्थक्षयं रोगरुजाप्रवासं बुधो विपाके दिवसेश्वरस्य ॥ ३१७ ॥

सूर्यदशा में बुध की पाचक दशा हो तो शरीर में कष्ट, ज्वर, रोग, क्षय,

शोक, शत्रुओं से वैर, धन हानि, रोग के कारण विदेश में निवास करना पड़ता है ।। ३१७ ।।

सूर्य-गुरुदशा फल—

पापादिरोगव्यसनादिमुक्तोर्धर्मोदयं ज्ञानसुखागमं च ।
सूर्यः सुरेज्यान्तरगो विपाके करोति लक्ष्मीं धनवर्धनं च ।। ३१८ ।।

सूर्यदशा में गुरु की पाचक दशा हो तो पाप-रोग-व्यसन आदि से मुक्ति धार्मिक क्रियाओं का उदय, ज्ञान-सुख में वृद्धि, लक्ष्मी (सभी प्रकार की सम्पत्ति) तथा धन का लाभ होता है ।। ३१८ ।।

सूर्य-शुक्रदशा फल—

दद्रूशिरोगान् (?) गलरोगदोषाच्छूलं ज्वरं वा सुहृदः स्वहर्ता ।
शस्त्राद्भयं मृत्युसमानकष्टं सूर्यान्तरे दैत्यगुरुः करोति ।। ३१९ ।।

सूर्य में शुक्र की दशा होने से दाद (दिनाय), शिर एवं गले से सम्बन्धित रोगों के कारण शूल, ज्वर, मित्र के धन का अपहरण करने वाला, शस्त्र से भय, तथा मृत्यु तुल्य कष्ट होता है ।। ३१९ ।।

सूर्य-शनिदशा फल—

कार्यार्थनाशं क्षितिपालभङ्गं देहे रुजापित्तसमुद्भवं च ।
विद्युद्भयं बुद्धिविनाशदैन्यं सन्ध्या तु सौरेर्दिवसेश्वरस्य ।। ३२० ।।

सूर्य में शनि की दशा हो तो अभीष्ट कार्य एवं धन का नाश, राजा की पराजय, शरीर में पित्तजन्य पीडा, विद्युत (बिजली) से भय, बुद्धि का नाश तथा दीनता (निर्धनता) होती है ।। ३२० ।।

चन्द्रदशा में पाचक दशा फल—

चन्द्र-चन्द्रदशा फल—

मणिमुक्ताफलं चैव सौख्यानि विविधानि च ।
वस्त्रप्राप्तिः सुखप्राप्तिः स्वपाके तु यदा शशी ।। ३२१ ।।

चन्द्रमा में चन्द्रमा की ही पाचक दशा हो तो मणि-मुक्ता (मोती प्रभृति रत्न), विविध प्रकार की सुख सामग्री वस्त्र तथा सुख का लाभ होता है ।। ३२१ ।।

चन्द्र-मङ्गलदशा फल—

रक्तवस्तुभवो लाभो विदेशगमनं भवेत् ।
सुखसन्तानमाप्नोति चन्द्रे भौमस्य पाचके ।। ३२२ ।।

चन्द्र में भौम की पाचक दशा हो तो लाल-वस्तुओं से सम्बन्धित लाभ, विदेश यात्रा, सुख एव सन्तान की प्राप्ति होती है ।। ३२२ ।।

चन्द्र-बुधदशा फल—

दुःखं सुखं समं चैव लाभहानी तथैव च।
उद्वेगवशगो नित्यं चन्द्रस्यान्तर्गते बुधे॥ ३२३॥

चन्द्रमा में बुध की पाचक दशा हो तो दुःख और सुख लाभ एवं हानि दोनों समान रूप से मिलता है। तथा प्रतिदिन जातक उद्विग्न रहता है॥ ३२३॥

चन्द्र-गुरुदशा फल—

स्वर्णलाभं पुत्रजन्म ह्यानन्दं हर्षसंयुतम्।
मणिर्मुक्ताफलं चैव चन्द्रस्यान्तर्गते गुरौ॥ ३२४॥

चन्द्रमा में गुरु की दशा हो तो स्वर्ण लाभ, पुत्र जन्म, आनन्द, प्रसन्नता, मणि, मुक्ताफल (मोती) आदि का लाभ होता है॥ ३२४॥

चन्द्र-शुक्रदशा फल—

उत्तमस्त्रीजनैर्योगो दिव्यकन्यासमुद्भवः।
धर्मयुक्ता धनप्राप्तिश्चन्द्रस्यान्तर्गते सिते॥ ३२५॥

चन्द्रमा की दशा में शुक्र की पाचक दशा हो तो उत्तम स्त्रियों से सम्बन्ध, दिव्य (परम सुन्दरी) कन्याओं का जन्म, धार्मिक प्रवृत्ति तथा धन का लाभ होता है॥ ३२५॥

चन्द्र-शनिदशा फल—

वेश्यागमं करोत्येव विवादं स्त्रीसमागमः।
अकस्माद्धनलाभश्च चन्द्रमध्ये शनिर्यदा॥ ३२६॥

चन्द्रमा में शनि की दशा हो तो वेश्याओं के साथ समागम, विवाद, स्त्री समागम तथा आकस्मिक धन लाभ होता है॥ ३२६॥

चन्द्र-सूर्यदशा फल—

मणिविद्रुमलाभं च सर्वसौख्यसुखागमम्।
प्रतापं गन्धसंयुक्तं कर्पूरादि शशो रवेः॥ ३२७॥

चन्द्रमा की दशा में सूर्य की पाचक दशा हो तो मणि, मूंगा (सदृश रत्नों) का लाभ, सभी प्रकार के सुख, प्रताप, सुगन्ध युक्त कर्पूर आदि पदार्थों का लाभ होता है॥ ३२७॥

भौमदशा में पाचकदशा फल—

भौम-भौमदशा फल—

भौमे शत्रुविमर्दः स्यात्कलहो बन्धुभिर्नृणाम्।
स्वान्तरे बहुपीडा स्याद्वृद्धस्त्रीगणिकारतिः॥ ३२८॥

भौम की सन्ध्या दशा में भौम की ही पाचक दशा हो तो शत्रुओं का दमन, भाई-बन्धुओं के साथ कलह, शारीरिक कष्ट, वृद्धा स्त्री एवं वेश्याओं के साथ प्रीति होती है ॥ ३२८ ॥

भौम-बुध दशाफल—

बलं मानं सुखं चैव धनलाभसुखागमम् ।
लभते मानवो नित्यं भौममध्ये बुधो यदा ॥ ३२९ ॥

भौम की दशा में बुध की पाचक दशा हो तो बल (शक्ति), सम्मान, सुख, धन और सुख का लाभ मनुष्य को नित्यप्रति प्राप्त होता है ॥ ३२९ ॥

भौम-गुरु दशा फल—

सौभाग्यं सौख्यमतुलं नानाशत्रुविमर्दनम् ।
लभते सुखसौभाग्यं भौममध्ये गुरुर्यदा ॥ ३३० ॥

भौम की दशा में गुरु की पाचक दशा हो तो सौभाग्य, अपार सुख, अनेक शत्रुओं का दमन तथा सुख-सौभाग्य की प्राप्ति होती है ॥ ३३० ॥

भौम-शुक्र दशा फल—

स्वदेहपीडां धनमानहानिं महत्प्रतापं सुखवर्जितं च ।
ददाति भौमान्तरगो भृगुश्च धर्मार्थसिद्धिं विजयं तथैव ॥ ३३१ ॥

भौमदशान्तर्गत शुक्र की पाचक दशा हो तो अपने शरीर में पीड़ा, धन एवं सम्मान की हानि, महान् प्रताप (प्रभाव वृद्धि) एवं सुख का अभाव होता है। इसके अतिरिक्त धर्म-अर्थ और काम की सिद्धि तथा विजय भी प्राप्त होती है ॥ ३३१ ॥

भौम शनि दशा फल—

स्वदेशभंगं कुरुते शनी कुजो विपाककाले सुखवर्जितं च ।
धनागमं ह्यर्थविनाशनं च सेवा भवेन्नीचजनप्रतापे ॥ ३३२ ॥

भौमदशा में शनि की पाचक दशा हो तो अपने देश (स्थान) का नाश, सुख का अभाव, धन की प्राप्ति तथा धन का नाश तथा नीच जनों के संसर्ग से सेवा कार्य करता है ॥ ३३२ ॥

भौम सूर्यदशा फल—

सूर्यो रोगविनाशं च श्वेतवस्तुफलप्रदम् ।
सम्मानं चैव भूपालात् सर्वसौख्यं धनागमम् ॥ ३३३ ॥

मंगल में सूर्य की पाचक दशा हो तो रोग का नाश, श्वेत वस्तुओं से लाभ, राजा से सम्मान, सभी प्रकार का सुख तथा धन का लाभ होता है ॥ ३३३ ॥

भौम-चन्द्रदशा फल—

ददाति हेमाम्बरसौख्यलाभं धनं तथा भोगसुखं च सन्ततिम् ।
मित्रागमं मातृपितुश्च भक्ति ददाति चन्द्रोऽन्तरगः कुजस्य ।। ३३४ ।।

भौम की दशा में चन्द्रमा की पाचक दशा हो तो स्वर्ण, वस्त्र, सुख, लाभ, धन, भोग-सुख और सन्तान की प्राप्ति होती है। मित्रों का आगमन तथा माता-पिता के प्रति श्रद्धा भाव उत्पन्न होता है ।। ३३४ ।।

बुधदशा में पाचक दशाफल—

बुध-बुधदशा फल—

स्वबोधबुद्धिदं चैव शत्रूणां च क्षयङ्करम् ।
द्रव्यलाभं धनं सौख्यं स्वपाके बुधगे सदा ।। ३३५ ।।

बुध की दशा मे बुध की ही पाचक दशा हो तो ज्ञान और बुद्धि में वृद्धि, शत्रुओं का नाश, द्रव्यलाभ, धन और सुख की प्राप्ति होती है ।। ३३५ ।।

बुध-गुरुदशा फल—

हेमाम्बरादिलब्धिः स्याद्विदेशगमनं भवेत् ।
बुधस्यान्तर्गते जीवे धनधान्यसुखं भवेत् ।। ३३६ ।।

बुधदशान्तर्गत गुरु हो तो स्वर्ण-वस्त्र की प्राप्ति, विदेश-यात्रा, तथा धन-धान्य का सुख प्राप्त होता है ।। ३३६ ।।

बुध-शुक्रदशा फल—

बुधमध्ये यदा शुक्रो भवत्येव सुखागमः ।
धनधान्यसमृद्ध स्याद्‍बहुसौख्यं करोति च ।। ३३७ ।।

बुध की दशा में शुक्र की पाचक दशा हो तो सुख की प्राप्ति, धन-धान्य-समृद्धि एवं विविध सुखों की प्राप्ति होती है ।। ३३७ ।।

बुध-शनिदशा फल—

बुधस्यान्तर्गतो यस्य सौरपाको भवेदसौ ।
तदा राजा भवेन्मानसुखसन्तानकारकः ।। ३३८ ।।

बुध की दशा में शनि की पाचक दशा हो तो जातक सम्मानित, सुखी एवं सन्तानयुक्त राजा होता है ।। ३३८ ।।

बुध-रविदशा फल—

वातपित्तकृता पीडा हानिकारी नरो भवेत् ।
पाककाले बुधस्यापि यदा ह्यन्तरतो रविः ।। ३३९ ।।

बुध की दशा में सूर्य की पाचकदशा हो तो वात-पित्तजन्य पीडा मनुष्य के शरीर के लिए हानिकारक होती है ॥ ३३९ ॥

बुध-चन्द्रदशा फल—

देहपीडा तथोद्वेगः कलहश्च गृहे भवेत् ।
अत्यन्तहानिकारी च बुधमध्ये तु चन्द्रमाः ॥ ३४० ॥

बुध की दशा में चन्द्र का अन्तर देहपीडा, उद्वेग (घबराहट), एवं घर में कलह पैदा करने वाला तथा अत्यन्त हानिकारक होता है ॥ ३४० ॥

बुध-भौमदशा फल—

अग्निदाह ज्वरं तीव्रं भवेद्रक्तविकारकम् ।
शत्रुघातरुजं चैव बुधमध्ये कुजे सदा ॥ ३४१ ॥

बुधदशा में भौम के अन्तर में अग्निदाह (आग लगने से क्षति), तीव्रज्वर, रक्तविकार, शत्रुओं द्वारा आघात तथा रोग उत्पन्न होता है ॥ ३४१ ॥

गुरुदशा में पाचकदशा फल—

गुरु-गुरुदशा फल—

पापैश्च रोगैश्च भवेद्विमुक्तो धर्मोदयं प्राप्य समस्तकाले ।
जीवे स्वपाके फलमातनोति धनागमे मित्रकलत्रपुत्रैः ॥ ३४२ ॥

गुरु की दशा में गुरु की ही पाचक दशा हो तो पाप और रोग से मुक्ति, धार्मिक क्रियाओं के अभ्युदय से निरन्तर शुभ फलों की प्राप्ति, तथा मित्र-स्त्री और पुत्रों के सहयोग से धन लाभ होता है ॥ ३४२ ॥

गुरु-शुक्रदशा फल—

कार्यार्थनाशं च महाविरोधं विशेषमाप्नोति नरोऽतिसौख्यम् ।
शृङ्गारकोशस्य नरैश्च सौख्यं यदा भवेज्जीवगतो भृगुश्च ॥ ३४३ ॥

गुरु की दशा में शुक्र की पाचक दशा हो तो कार्य और धन का नाश एवं महान विरोध होता है। फिर भी मनुष्य के वैशिष्ट्य एवं सुख में वृद्धि, शृंगार और धन का सुख मनुष्यों के संसर्ग से प्राप्त होता है ॥ ३४३ ॥

गुरु-शनिदशा फल—

शनैश्चरे पाकगतेऽथ जीवे दानं करोत्येव हि सर्वसौख्यम् ।
द्रव्यापहारं व्यसनादियुक्तं ज्वराभिघातं व्यसने च सौख्यम् ॥ ३४४ ॥

गुरु की दशा में शनि की पाचक दशा हो तो मनुष्य दानी, सभी प्रकार से सुखी, व्यसन (जूआ आदि) से युक्त, ज्वर से पीड़ित तथा व्यसन (नशा, मादक

वस्तुओं के सेवन) से सुखी होता है। तथा उसके धन का अपहरण भी हो जाता है ॥ ३४४ ॥

गुरु-सूर्यदशा फल—

सन्ध्या गुरोः पाकरविः स्वकाले धनागमं मित्रकलत्रकं च।
चिरं वसेद्देशविदूर एव लभेत्प्रतापं विजयं च सौख्यम् ॥ ३४५ ॥

गुरु की सन्ध्या दशा में सूर्य की पाचक दशा हो तो दशाकाल में धनलाभ, मित्र और स्त्री का सुख, चिरकाल तक विदेश में प्रवास, प्रभाव में वृद्धि तथा सुख प्राप्त होता है ॥ ३४५ ॥

गुरु-चन्द्रदशा फल—

तीर्थागमे भवेत्सौख्यं पुत्रमित्रसमागमः।
धनलाभो भवेच्चैव गुरुपाके यदा शशी ॥ ३४६ ॥

गुरु की दशा में चन्द्रमा की पाचक दशा हो तो तीर्थयात्रा, सुख-प्राप्ति, पुत्र एवं मित्रों का समागम तथा धनलाभ होता है ॥ ३४६ ॥

गुरु-भौम दशा फल—

अग्निचोरभयं नास्ति धनप्राप्तिः पदे पदे।
राजमानं गृहे सौख्यं जीवमध्ये कुजे गतिः ॥ ३४७ ॥

बृहस्पति की दशा में मंगल की पाचक दशा हो तो अग्नि और चोरों के भय से रहित, पग-पग पर धन लाभ, राजकीय सम्मान, तथा गृह में सुख की वृद्धि होती है ॥ ३४७ ॥

गुरु-बुध दशा फल—

जीवान्तरगते सौम्ये पुत्रधान्यं गृहे सुखम्।
माङ्गल्ये च भवेन्नित्यं वस्त्रप्राप्तं सुखं भवेत् ॥ ३४८ ॥

यदि गुरु की सन्ध्या दशा में बुध की पाचकदशा हो तो पुत्र और धान्य की वृद्धि, गृह में सुख, नित्य मंगल कार्य, वस्त्र की प्राप्ति तथा सुख-लाभ होता है ॥ ३४८ ॥

शुक्रदशा में पाचकदशा फल—

शुक्र-शुक्र पाचकदशा फल—

स्वपाककाले भृगुनन्दनोऽपि हेमाम्बरं सौख्यचयं ददाति।
वस्त्रादिप्राप्तिं च सुखागमं च धनं लभेत्पुत्रसमन्वितं च ॥ ३४९ ॥

शुक्र की सन्ध्या दशा में शुक्र की ही पाचक दशा हो तो सुवर्ण, वस्त्र, और सुख की वृद्धि, वस्त्र आदि की प्राप्ति, सुख का आगम तथा धन और पुत्र की एक-साथ प्राप्ति होती है ॥ ३४९ ॥

शुक्र-शनिदशा फल—

राज्याभिमानं सुखसम्पदं च परोपकारव्ययमातनोति।
शनैश्चरे शुक्रगते समेति माङ्गल्यकार्यं च सुखावहं च ॥ ३५० ॥

शुक्र की दशा और शनि की पाचक दशा में राज्य सम्बन्धी अभिमान, सुख एवं सम्पत्ति, परोपकार में व्यय तथा सुखदायक मंगल कार्य होते हैं ॥ ३५० ॥

शुक्र-सूर्य दशा फल—

कार्यनाशं गृहे सौख्यं भुञ्जन्ति प्रभवः सदा।
विपाके सूर्यशुक्रे च मानवो लभते फलम् ॥ ३५१ ॥

सूर्य की पाचक दशा यदि शुक्र दशा में हो तो कार्य का नाश, एवं गृह में सुख प्राप्त होता है। तथा मनुष्य सदैव अपने प्रभाव और शक्ति के बल पर फल प्राप्त करता है ॥ ३५१ ॥

शुक्र-चन्द्र दशा फल—

ददाति वित्तं बहुसौख्ययुक्तं वस्त्राम्बरं रत्नसमुच्चयं च।
सौख्यार्थलाभं स्वगृहे च सौख्यं यदा भवेच्छुक्रगतो हिमांशुः ॥ ३५२ ॥

शुक्र की दशा में चन्द्रमा की पाचक दशा हो तो अत्यन्त सुख के साथ धन लाभ, वस्त्र-आभूषण, रत्नों का ढेर सुख एवं धन का लाभ तथा गृह में सदैव सुख प्राप्त होता है ॥ ३५२ ॥

शुक्र-भौमदशा फल—

भृगोर्विपाके धरणीसुतोऽपि कार्यार्थलाभं बहुलार्थयुक्तम्।
महत्प्रतापं सुखसङ्गमं च ददाति प्राप्नोति भयं कुतश्च ॥ ३५३ ॥

शुक्र की दशा में मंगल की पाचक दशा कार्य में सफलता, धनलाभ, अत्यधिक धनप्राप्ति, प्रभाव में वृद्धि एवं सुख-समागम प्रदान करती है। ऐसी स्थिति में भय कहाँ से हो सकता है? अर्थात् भय का अभाव होता है ॥ ३५३ ॥

शुक्र-बुधदशा फल—

ददाति मौक्तिकं चैव सुखसौभाग्यपुत्रकम्।
कन्याजन्म गृहे सौख्यं भृगुमध्यगते बुधे ॥ ३५४ ॥

शुक्र की दशा में बुध की पाचक दशा हो तो मुक्ता (मोती) सुख, सौभाग्य और पुत्र की प्राप्ति होती है तथा गृह में कन्या का जन्म तथा सुख होता है ॥ ३५४ ॥

शुक्र-गुरुदशा फल—

सुखं करोति सौभाग्यं व्यवहारे महासुखम्।
लाभः कार्यस्य सिद्धिः स्याच्छुक्रमध्यगते गुरौ ॥ ३५५ ॥

शुक्र की दशा में गुरु की पाचक दशा होने पर सुख, सौभाग्य, व्यवहार में महान् सुख, लाभ तथा कार्यों की सिद्धि होती है ॥ ३५५ ॥

शनिदशा में पाचकदशा फल—

शनि-शनिदशा फल—

शनेर्विपाके कुरुतेऽभिमानं महत्सुखं लोहगताभिवृद्धिः ।
लाभं प्रतापं च शरीरकष्टं प्रान्ते ददात्येव हि सूर्यपुत्रः ॥ ३५६ ॥

शनि की सन्ध्या दशा में शनि की पाचक दशा अभिमान, महान् सुख, लोहे के व्यापार से धनवृद्धि, लाभ, प्रभाव में वृद्धि तथा शारीरिक कष्ट प्रदान करती है ॥ ३५६ ॥

शनि-सूर्य दशा फल—

धनहानिर्भवेन्नित्यं हानिश्शोकौ भयं तथा ।
विदेशभ्रमणं शीलं शनेः पाके गतो रविः ॥ ३५७ ॥

शनि की दशा में सूर्य की पाचक दशा हो तो नित्य-प्रति धन की हानि, (जनहानि), शोक और भय तथा विदेश यात्रा होती है ॥ ३५७ ॥

शनि-चन्द्रदशा फल—

सुखदं रोगनिर्मुक्तं लाभदं हानिदं तथा ।
करोति शनिपाके चेच्चन्द्रमाः सुव्यवस्थितः ॥ ३५८ ॥

यदि शनि की दशा और अपनी पाचक दशा में चन्द्रमा स्थित हो तो सुख प्राप्ति, रोग से मुक्ति, लाभ और हानि दोनों ही प्राप्त होती है ॥ ३५८ ॥

शनि-मंगलदशा फल—

महीसुतेऽन्तरगते कलहं समुपद्रवः ।
अग्निदाहं ज्वरं तीव्रं विफलं सुकृतं भवेत् ॥ ३५९ ॥

शनि की दशा में मंगल की पाचक दशा हो तो कलह, उपद्रव, अग्नि से दाह, तीव्र ज्वर तथा सत्कार्य में असफलता होती है ॥ ३५९ ॥

शनि-बुधदशा फल—

सौराम्तरगते सौम्ये राजमानं करोति च ।
मध्यसम्पत्तिमद्गेहं कार्यप्राप्तिः सुवस्त्रदम् ॥ ३६० ॥

शनि की दशा में बुध की पाचक दशा हो तो राजकीय सम्मान प्राप्त होता है। गृह में मध्यम स्तर की सम्पत्ति होती है। कार्यों में सफलता तथा सुन्दर वस्त्रों का लाभ होता है ॥ ३६० ॥

शनि-गुरुदशा फल—

करोति जीवो बहुबुद्धिसौख्यं राज्याभिधं देशपुराधिपत्यम् ।
परोपकारं सुखसम्पदश्च करोति सौरे च गुरुः सदैव ॥ ३६१ ॥

शनि की दशा में गुरु की पाचक दशा हो तो मनुष्य बुद्धिमान्, सुखी, राज्य अथवा देश का अधिकारी, परोपकारी, सुखी एवं सम्पत्तिशाली होता है ॥ ३६१ ॥

शनि-शुक्रदशा फल—

ददाति वित्तं भृगुनन्दनः सुखं सुखार्थविद्यागमनं भवेत्स्वयम् ।
सुनिर्मलं बाहुप्रतापयुक्तं विदेशयाने च नरः सुखं लभेत् ॥ ३६२ ॥

शनि की दशा मे शुक्र की पाचक दशा हो तो मनुष्य को धन, सुख देने वाली विद्या का स्वयमेव ज्ञान, निर्मल आचरण, बाहुबल तथा विदेश यात्रा में सुख प्राप्त होता है ॥ ३६२ ॥

योगिनी-दशा

नत्वा गणेशं गिरमब्जयोनिं विष्णुं शिवं सूर्यमुखान् ग्रहेन्द्रान् ।
वक्ष्ये स्फुटं सूर्यकृताद्यशास्त्राद्दशाक्रमं वा किल योगिनीजम् ॥ ३६३ ॥

गणेश, सरस्वती, ब्रह्मा, विष्णु, शिव एवं सूर्यादि नवग्रहों को प्रणाम कर भगवान् सूर्य द्वारा विरचित पूर्ववर्ती शास्त्रों के आधार पर योगिनी से सम्बन्धित दशाक्रम को कह रहा हूं ॥ ३६३ ॥

योगिनी दशा साधन—

आदौ जनस्य विधिवत् प्रसवं विचार्य
संवत्सरर्त्वयनमासदिनर्क्षकालैः ।
यस्मिन् दिने भवति जन्म जनस्य सम्यक् ।
तद्भं पिनाकनयनैः सहितं विधेयम् ॥ ३६४ ॥
गौरीशमूर्त्या विभजेच्च शेषं यत्संख्यकं सैव दशा जनस्य ।
यया जनः कर्मफलस्य पंक्तिः शुभाशुभस्य स्फुटतामुपैति ॥ ३६५ ॥

सर्व प्रथम मनुष्य के जन्म सम्बन्धी वर्ष, ऋतु, अयन, मास, दिन, नक्षत्र और समय का ज्ञान करना चाहिये । जिस दिन जिस नक्षत्र में मनुष्य का जन्म हो उस के नक्षत्र की अश्विन्यादि नक्षत्र संख्या में ३ जोड़ देना चाहिये । योगफल को ८ से भाग देने पर शेष तुल्य योगिनी की दशा होती है । (शेषाङ्क जितना हो उतनी ही क्रमसंख्या वाली योगिनी की दशा जन्म समय में होती है) ॥ ३६४-६५ ॥

योगिनी दशा के नाम—

मङ्गला पिङ्गला धान्या भ्रामरी भद्रिका तथा ।
उल्का सिद्धा सङ्कटा च-एतासां नामवत्फलम् ॥ ३६६ ॥

१. मङ्गला, २. पिङ्गला, ३. धान्या, ४. भ्रामरी, ५. भद्रिका, ६. उल्का, ७. सिद्धा, ८. संकटा। इन आठ योगिनियों के नाम पर दशायें होती है। इनके नाम के अनुरूप ही इनका फल भी होता है ॥ ३६६ ॥

दशावर्ष एवं अन्तर्दशा विधि—

एकं द्वौ गुणवेदबाणरससप्ताष्टाङ्कसंख्याः क्रमात्
स्वीयस्वीयदशा विपाकसमये ज्ञेयं शुभं वाऽशुभम्।
षट्त्रिंशैर्विभजेद्दिनोकृतमथैकद्वित्रिवेदेषुषट्
सप्ताष्टघ्नदशा भवेयुरिति ता एवं दशान्तर्दशाः ॥ ३६७ ॥

योगिनियों के दशावर्ष प्रमाण क्रम से १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, वर्ष हैं। अर्थात् मंगला की १ वर्ष, पिगला की २ वर्ष, धान्या की ३ वर्ष, भ्रामरी की ४ वर्ष, भद्रिका की ५ वर्ष, उल्का की ६ वर्ष, सिद्धा की ७ वर्ष तथा संकटा की ८ वर्ष दशा होती है। अपनी-अपनी दशाओं में इनके शुभाशुभ फल प्राप्त होते हैं। अन्तर्दशा ज्ञान के लिए योगिनी के महादशा वर्ष के दिन बनाकर ३६ से भाग देने पर लब्धि अन्तर्दशा का ध्रुवा होता है। ध्रुवा को क्रम से १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८ से गुणा करने पर क्रम से मङ्गला-पिङ्गला आदि की अन्तर्दशा होती है ॥ ३६७ ॥

उदाहरण—जन्म समय संवत् २०२१ शके १८८६ आषाढ़ कृष्ण ११ रविवार इष्टघटी ४३।३० जन्म नक्षत्र कृत्तिका, भयात् ३।५३ भभोग ५४।३५ (श्लोक ३६४,६५) अश्विनी नक्षत्र से कृत्तिका की संख्या ३

३+३=६ ६÷८=०=शेष ६

अतः छठीं उल्का योगिनी दशा में जन्म हुआ।

योगिनी दशा बोधक चक्र—

योगिनी	मंगला	पिंगला	धान्या	भ्रमरी	भद्रिका	उल्का	सिद्धा	संकटा
दशा वर्ष	१	२	३	४	५	६	७	८
नक्षत्र	आर्द्रा चित्रा श्रवण	पुनर्वसु स्वाती धनिष्ठा	पुष्य विशा. शत.	अश्विनी आश्लेषा अनुराधा पू.भा.पदा	भरणी मघा ज्येष्ठा उ.भा.पदा	कृत्तिका पूर्वा फा. मूल रेवती	रो. उ.फा. पू.षाढ़ा	मृगशीर्ष हस्त उ० षाढ़ा

श्लोक (३६७) उल्का दशा में अन्तर्दशा ज्ञात करना है। उल्का दशा दिनात्मक ६ X ३६०=२१६०

२१६०÷३६= ३६) २१६० (६०
२१६
X

उल्का दशा का ध्रुवा ६० दिन या २ मास

अतः ०।२।० X ६=१।०।० उल्का का अन्तर

०।२।० X ७=१।२।० सिद्धा का अन्तर

०।२।० X ८=१।४।० संकटा का अन्तर

इसी प्रकार सभी दशावर्षों से गुणा करने पर सभी योगिनियों की अन्तर्दशा आयेगी।

अन्तर्दशा बोधक चक्र—

मंगला व. १

यो.	व.	मा.	दि.
मंगला	०	०	१०
पिंगला	०	०	२०
धान्या	०	१	००
भ्रामरी	०	१	१०
भद्रिका	०	१	२०
उल्का	०	२	००
सिद्धा	०	२	१०
संकटा	०	२	२०

पिङ्गला व. २

यो.	व.	मा.	दि.
पिंगला	०	१	१०
धान्या	०	२	००
भ्रामरी	०	२	२०
भद्रिका	०	३	१०
उल्का	०	४	००
सिद्धा	०	४	२०
संकटा	०	५	१०
मंगला	०	०	२०

धान्या व. ३

यो.	व.	मा.	दि.
धान्या	०	३	०
भ्रामरी	०	४	०
भद्रिका	०	५	०
उल्का	०	६	०
सिद्धा	०	७	०
संकटा	०	८	०
मंगला	०	१	०
पिंगला	०	२	०

भ्रामरी व. ४

यो.	व.	मा.	दि.
भ्रामरी	०	५	१०
भद्रिका	०	६	२०
उल्का	०	८	०
सिद्धा	०	९	१०
संकटा	०	१०	२०
मंगला	०	१	१०
पिंगला	०	२	२०
धान्या	०	४	००

भद्रिका व. ५

यो.	व.	मा.	दि.
भद्रिका	०	८	१०
उल्का	०	१०	००
सिद्धा	०	११	२०
संकटा	१	१	१०
मंगला	०	१	२०
पिंगला	०	३	१०
धान्या	०	५	०
भ्रामरी	०	६	२०

उल्का व. ६

यो.	व.	मा.	दि.
उल्का	१	००	०
सिद्धा	१	०२	०
संकटा	१	४	०
मंगला	०	२	०
पिंगला	०	४	०
धान्या	०	६	०
भ्रामरी	०	८	०
भद्रिका	०	१०	०

सिद्धा ७			
यो.	व.	मा.	दि.
सिद्धा	१	४	१०
संकटा	१	६	२०
मंगला	०	२	१०
पिंगला	०	४	२०
धान्या	०	७	००
भ्रामरी	०	९	१०
भद्रिका	०	११	२०
उल्का	१	२	००

संकटा ८			
यो.	व.	मा.	दि.
संकटा	१	९	१०
मंगला	०	२	२०
पिंगला	०	५	१०
धान्या	०	८	०
भ्रामरी	०	१०	२०
भद्रिका	१	१	१०
उल्का	१	४	००
सिद्धा	१	६	२०

मुक्त-भोग्य दशा साधन—

गतर्क्षनाडी गुणिता दशाब्दैः सर्वर्क्षनाडीविहृता फलं यत् ।
वर्षादिकं भुक्तफलं ततश्च भोग्यं दशाब्दात्प्रविशोध्य लेख्यम् ॥ ३६८ ॥

जन्म नक्षत्र के भयात् (पलात्मक) को दशा वर्ष से गुणा कर पलात्मक भभोग से भाग देने पर लब्धि मुक्त दशा प्रमाण होती है । मुक्त दशा को दशा वर्ष में घटाने से भोग्यदशा होती है ॥ ३६८ ॥

उदाहरण—भयात् ३।५३ भभोग ५४।३५
महादशा उल्का वर्ष—६

३×६०=१८०+५३=२३३ पलात्मक भयात्
५४×६०=३२४०+३५=३२७५ पलात्मक भभोग
भयात् २३३×६ दशावर्ष=१३९८

३२७५)१३९८(०
००

१३९८×१२

३२७५)१६७७६(५
१६३७५
४०१×३०

१२०३०(३
९८२५
२२०५

मुक्त दशा ०।५।३

६।०।०
— ०।५।३
५।६।२७ भोग्य दशा

योगिनी महादशा फल—

मंगला फल—

सद्धर्मं द्विजदेवगोपुरजनोत्कर्षप्रदात्री नृणां
नानाभोगयशोऽर्थसन्नृप-पराश्वेभाङ्गजाप्तिप्रदा।
सन्माङ्गल्यविभूषणाम्बरचयस्त्री भोगउदयिनी
ज्ञानानन्दकरी दशा भवति सा ज्ञेया यदा मङ्गला ॥ ३६९ ॥

मङ्गला योगिनी दशा अच्छे धार्मिक कार्य, ब्राह्मण, देवता गो तथा पुरजनों के लिए उत्कर्ष कारक, मनुष्यों के लिए नाना प्रकार के सुख-भोग, यश और धन देने वाली, सदाचारी राजा द्वारा उत्तम घोडे एवं हाथी दांत (दांत के कीमती सामान), प्रदान कराने वाली, मांगलिक वस्तुओं, आभूषण एवं वस्त्रों का संग्रह, सभी प्रकार के सुख प्रदान करने वाली स्त्री, तथा सदैव ज्ञान एवं आनन्द बढाने वाली होती है ॥ ३६९ ॥

पिङ्गला-दशा फल—

स्यात्पुंसा यदि पिङ्गला प्रसवतो हृद्रोगशोकप्रदा
नानारोगकुसंगदेहमनसो व्याध्यार्दितार्तिप्रदा।
तृष्णासृग्ज्वरपित्तशूलमलिनस्त्रीपुत्रभृत्यात्मस-
न्मानध्वंशकरी धनव्ययकरी सत्प्रेमहन्त्री खला ॥ ३७० ॥

जन्म काल में ही पिङ्गला दशा हो तो हृदय रोग, शोक, विविध रोग, कुसंग, शारीरिक एवं मानसिक व्याधि लोभ, रक्तविकार, ज्वर, पित्त प्रकोप, शूल (अङ्ग में पीड़ा), आदि रोगों से कष्ट एवं मलिन (खिन्नता) एवं शिथिलता प्राप्त होती है। स्त्री-पुत्र और नौकरों से प्राप्त होने वाला आदर नष्ट हो जाता है (अर्थात् स्त्री पुत्रादि उपेक्षा करते हैं), धन का अपव्यय एवं प्रेम-व्यवहार का अभाव हो जाता है। यह दशा अशुभ फल ही देती है ॥ ३७० ॥

धान्या-दशा फल—

धान्या धन्यतमा धनागम सुखव्यापारभोगप्रदा
पुंसां मानविवृद्धिदा रिपुगणप्रध्वंसिनी सौख्यदा।
विद्याराजजनप्रबोधसुरतज्ञानांकुरोद्वर्द्धिनी
सत्तीर्थामरसिद्धसेवनरतिलंभ्या दशा भाग्यतः ॥ ३७१ ॥

धान्या योगिनी दशा धन्य (कृत-कृत्य) करने वाली होती है। इसमें मनुष्य को धन का लाभ, सुख, व्यापार, भोग (भौतिक-सुख) की प्राप्ति, मनुष्यों के सम्मान में वृद्धि, शत्रुओं के समूह का नाश, सुख, विद्या और राजकीय पुरुषों का सान्निध्य, ज्ञान की वृद्धि, सुन्दर तीर्थ, देवताओं और सिद्धों की सेवा में अनुराग उत्पन्न होता है। ऐसी दशा भाग्य से प्राप्त होती है ॥ ३७१ ॥

भ्रामरीदशाफल—

दुर्गारण्यमहीधरोपगहनारामातपव्याकुला
दूराद्दूरतरं भ्रमन्ति मृगवत्तृष्णाकुलाः सर्वतः।
भूपालान्वयजा दशामधिगता ये वै नृपा भ्रामरी
स्वं राज्यं प्रविहाय ते स्फुटतरं क्ष्मायां लुठन्ते मुहुः॥ ३७२॥

भ्रामरी दशा में मनुष्य दुर्ग (किला या बीहड़ स्थान), जंगल, पर्वत, एवं सघन बागों में धूप से व्याकुल होकर अभीष्ट सिद्धि के लोभ से दूर-दूर तक उसी प्रकार घूमता है जैसे चिलचिलाती धूप को जल समझकर प्यासा मृग दौड़ता है। (अर्थात् निरर्थक दौड़ता है।) यदि राजकुल में उत्पन्न व्यक्ति हो तो वह भ्रामरी दशा आनेपर राज्य को छोड़कर पृथ्वी पर इधर-उधर भटकने लगता है॥ ३७२॥

भद्रिका दशाफल—

सौहार्दं निजवर्गभूसुरसुरेशानां सुहृन्मान्यता
मांगल्यं गृहमण्डलेऽखिलसुखव्यापारसक्तं मनः।
राज्यं चित्रकपोलपालितिलकासक्तांगनाभिः समं
क्रीडामोदभरो दशा भवति चेत्पुंसां हि भद्राभिधा॥ ३७३॥

भद्रिका दशा में अपने वर्ग (जाति) के लोगों, ब्राह्मणों और राजाओं के साथ मित्रता, मित्रों द्वारा आदर, गृह में माङ्गलिक कार्य, सभी प्रकार के सुखों की प्राप्ति एवं व्यापार में पूर्णरूप से रुचि होती है। राज्यलाभ, तथा कपोलों के चित्राङ्कन (कुंकुमादि से कपोलों का शृंगार) एवं तिलक (बिन्दी) आदि प्रसाधनों में आसक्त विलासिनी स्त्रियों के साथ क्रीडा करते हुए मनुष्य आनन्द का अनुभव करता है॥ ३७३॥

उल्का दशाफल—

उल्का चेदिह योगिनी गुरुदशामानार्थगोवाहन-
व्यापाराम्बरहारिणी नृपजनक्लेशप्रदा नित्यशः।
भृत्यापत्यकलत्रवैरजननी रम्यापहन्त्री नृणां
हृन्नेत्रोदरकर्णदन्तपदजो रोगः स्वदेहे भृशम्॥ ३७४॥

यदि उल्का योगिनी की महादशा हो तो सम्मान, धन, गौ, वाहन, व्यापार एवं वस्त्र की हानि, राजाओं अथवा राजपुरुषों द्वारा निरन्तर कष्ट, नौकर-पुत्र-स्त्री आदि आत्मीयजनों से शत्रुता, अन्य सुन्दर कार्यों की हानि, तथा हृदय, उदर, नेत्र, कान, दाँत और पैरों से सम्बन्धित शरीर में रोग होता है॥ ३७४॥

सिद्धा दशाफल—

सिद्धा सिद्धिकरी सुभोगजननी मानार्थसंदायिनी
विद्याराजजनप्रतापधनसद्धर्मासिसज्ज्ञानदा।

व्यापाराम्बरभूषणादिकसुतोद्वाहादिमांगल्यदा
सत्सङ्गान्नृपदत्तराज्यविभवो लभ्या दशा पुण्यतः ॥ ३७५ ॥

सिद्धा दशा में कार्यों की सिद्धि, उत्तम भोग (सुख) का लाभ, सम्मान, धन, विद्या, राजकीय अधिकारियों द्वारा प्रभाव (या अधिकार) प्राप्ति, धन, अच्छे धामिक कार्यों द्वारा ज्ञान प्राप्ति, व्यापार वस्त्र, आभूषण आदि का लाभ, पुत्र के विवाह आदि मांगलिक कार्य तथा सत्पुरुषों के सहयोग से राजाओं द्वारा सम्पत्ति का लाभ होता है। इस प्रकार की दशा बड़े पुण्य से प्राप्त होती है ॥ ३७५ ॥

संकटा दशाफल—

राज्यभ्रंशाग्निदाहो गृहपुरनगरग्रामगोष्ठेषु पुंसां
तृष्णारोगाङ्गधातु क्षयविकृतिरथो पुत्रकान्तावियोगः ।
चेत्स्यान्मोहोऽरिभीतिः कृशतनुर्लतिकासङ्कटाया विरोधो
नो मृत्युर्जन्मकालाद्यमपि हि विना सङ्कटं योगिनीजम् ॥ ३७६ ॥

संकटा दशा मे राज्य का नाश अग्नि से गृह, पुर, नगर, ग्राम और गोष्ठ (गोशाला) में विनाश, लोभ, रोग, अङ्गों में धातुक्षीणता, क्षयविकार (टी०बी) पुत्र और स्त्री का वियोग, मोह (मूर्च्छा), शत्रुओं से भय, शरीर में दुर्बलता, एवं विरोध होता है। बिना संकटा योगिनी की दशा के जन्मकाल के अनन्तर मृत्यु नहीं होती। अर्थात् मृत्यु या मृत्युतुल्य कष्ट संकटा दशा अन्तर्दशा आने पर ही होता है ॥ ३७६ ॥

भ्रामर्यां च तथोल्कायां सङ्कटान्तर्दशा यदि ।
तदा तु यमराजस्य सदनं प्राप्यते नृभिः ॥ ३७७ ॥

भ्रामरी महादशा मे और उल्का महादशा में यदि संकटा की अन्तर्दशा हो तो मनुष्य अवश्य यमराज के गृह में जाता है अर्थात् उसकी मृत्यु हो जाती है ॥३७७॥

मङ्गलामहादशा में अन्तर्दशा फल—

मङ्गला फल—

मित्रपुत्रकलत्राङ्गव्यापारसुखदायिनी ।
मङ्गलान्तर्गता जाता मङ्गला मङ्गलप्रदा ॥ ३७८ ॥

मङ्गला महादशा में मंगला की ही अन्तर्दशा मित्र, पुत्र कलत्र (स्त्री), शारीरिक सुख एवं व्यापार में लाभ देने वाली एवं मंगलप्रद होती है ॥ ३७८ ॥

पिङ्गला फल—

कलहः स्वजनैः सार्धं मानसोद्वेग एव हि ।
विविधार्तिप्रदा नित्यं पिंगला मंगलां गता ॥ ३७९ ॥

मङ्गला महादशा में पिङ्गला का अन्तर हो तो आत्मीय जनों के साथ कलह, मानसिक उद्वेग (व्याकुलता), तथा विविध प्रकार के कष्ट सामने आते हैं ॥ ३७९ ॥

धान्या फल—

गजाश्वगोधनप्राप्तिः सुखमित्रसुखं महत् ।
विलासो विविधः पुंसां धान्या चेन्मङ्गलां गता ॥ ३८० ॥

मंगला की महादशा में धान्या की अन्तर्दशा हो तो हाथी, घोड़ा, गौ और धनकी प्राप्ति, सुख, मित्रों का अत्यधिक सुख, तथा विविध प्रकार की क्रिडाओं में आनन्द प्राप्त होता है ॥ ३८० ॥

भ्रामरीफल—

स्त्रीमित्रकलहो नित्यं प्रवासो धननाशनम् ।
नरेन्द्रैः सह सांगत्यं भ्रामरी मंगलां गता ॥ ३८१ ॥

मंगला की महादशा में भ्रामरी की अन्तर्दशा हो तो स्त्री, और मित्रों के साथ निरन्तर कलह, घर मे पृथक किसी अन्य स्थान में निवास, धन का नाश, तथा राजाओं के साथ संगति होती है ॥ ३८१ ॥

भद्रिका फल—

धनधान्यसुतस्त्रीभिः प्रीतिः स्यात्स्वजनैः सह ।
प्रमोदः सुरभिज्ञो वा भद्रा चेन्मंगलां गता ॥ ३८२ ॥

मंगला महादशा मे भद्रिका का अन्तर हो तो धन-धान्य, पुत्र, स्त्री और अन्य आत्मीय जनों के साथ अनुराग, प्रसन्नता, तथा विविध सुगन्धों के ज्ञान से युक्त होता है ॥ ३८२ ॥

उल्काफल—

धनकीर्तिसुतोद्वेगस्त्रीमित्रपशुपीडनम् ।
भूपतेर्हानिदा नित्यमुल्का स्यान्मंगलां गता ॥ ३८३ ॥

मंगला महादशा में उल्का अन्तर्दशा हो तो धन, यश और पुत्रों के कारण मानसिक क्लेश, मित्र और पशुओं को पीड़ा तथा राजा की तरफ से भी निरन्तर हानि होती रहती है ॥ ३८३ ॥

सिद्धाफल—

भवेत्पुत्रधनस्त्रीभिर्विलासो विविधं सुखम् ।
बन्धुमित्रसमायोगः सिद्धा चेन्मङ्गलां गता ॥ ३८४ ॥

मंगला की महादशा मे सिद्धा की अन्तर्दशा हो तो पुत्र, धन और स्त्री से सम्बन्धित आनन्द, विविध सुख तथा बन्धुओं एवं मित्रों का समागम होता है ॥ ३८४ ॥

संकटा फल—

जलाग्निचोरभूपालपीडनं कलिवर्द्धनम् ।
मृत्युतुल्यं तथा ज्ञेयं सङ्कटा मङ्गलां गता ॥ ३८५ ॥

जल-अग्नि-चोर और राजा द्वारा पीड़ा, लड़ाई-झगड़े में विस्तार, तथा मृत्यु तुल्य कष्ट होता है ॥३८५ ॥

पिङ्गलामहादशा में अन्तर्दशा फल—

पिङ्गलाफल—

पिङ्गला स्वदशां प्राप्ता रुक्शीतव्यसनार्तिदा ।
मानसोद्वेगसन्तापक्लेशभ्रमणदा मता ॥ ३८६ ॥

पिङ्गला महादशा में पिङ्गला का ही अन्तर हो तो रोग (ज्वर) शीत, दुर्व्यसन और दुःख, मानसिक व्याकुलता, सन्ताप, क्लेश, कष्ट तथा भ्रमण (यात्रा) होता है ॥ ३८६ ॥

धान्याफल—

धान्या धान्यार्थदात्री च विलाससुतकामदा ।
पिङ्गलान्तर्गतारण्यरमणीसुखदा नृणाम् ॥ ३८७ ॥

पिङ्गला महादशा में धान्या का अन्तर हो तो अन्न और धन का लाभ, विलास, पुत्रसुख, एवं इच्छाओं की पूर्ति होती है तथा जंगल से (सम्बन्धित) एवं सुन्दरी स्त्री से सुख प्राप्त होता है ॥ ३८७ ॥

भ्रामरीफल—

देशत्यागो गृहग्रामपुरलोकधनक्षतिः ।
कलहः स्वजनैः सार्द्धं भ्रामरी पिङ्गलां गता ॥ ३८८ ॥

पिङ्गला की महादशा में भ्रामरी की अन्तर्दशा हो तो देश का परित्याग, घर, गाँव, पुर और लोगों के धन की हानि, तथा आत्मीय व्यक्तियों के साथ कलह होता है ॥ ३८८ ॥

भद्रिकाफल—

भद्रा भद्रकरी प्रोक्ता पिङ्गलान्तर्गता यदा ।
स्थानान्तरात्पुत्रकीर्तिव्यापारे धनलाभदा ॥ ३८९ ॥

पिङ्गला महादशा में भद्रायोगिनी की अन्तर्दशा कल्याणकारक कही गई है । दूर-दूर तक पुत्र का यश तथा धन का लाभ होता है ॥ ३८९ ॥

उल्का फल—

उल्कादशा यदा पुंसां पिङ्गलामध्यतो भवेत् ।
विग्रहो बन्धुभिः सार्द्धं राजचौरजनार्दनम् ॥ ३९० ॥

पिङ्गला दशा में उल्का का अन्तर हो तो बन्धुओं के साथ कलह, राजा चोर एवं अन्य जनों द्वारा मनुष्य को कष्ट होता है ॥ ३१० ॥

सिद्धा फल—

सिद्धिदा मन्त्रयन्त्राणां सिद्धा धान्यधनप्रदा ।
पिङ्गलामध्यगा पुंसां कासश्वासप्रमेहदा ॥ ३११ ॥

पिङ्गला के अन्तर में यदि सिद्धा दशा हो तो मन्त्र-यन्त्रों की सिद्धि एवं धन-धान्य का लाभ होता है। तथा खाँसी, दमा और मूत्ररोग (प्रमेह) से कष्ट होता है ॥ ३११ ॥

संकटा फल—

पिङ्गलान्तर्यदा जाता सङ्कटा धनहानिदा ।
दुष्टव्याधिविरोधित्वं शत्रुराजभयं तथा ॥ ३१२ ॥

पिङ्गला महादशा में संकटा की अन्तर्दशा हो तो धनहानि, दुष्ट (बुरी) व्याधि (रोग), विरोध, शत्रु और राजा का भय होता है ॥ ३१२ ॥

मङ्गला फल—

मङ्गला त्रिविधव्याधिशोकमोहभयार्तिदा ।
पिङ्गलान्तर्गता पुंसामायुःक्षयकरी तथा ॥ ३१३ ॥

पिङ्गला के अन्तर्गत यदि मङ्गला की अन्तर्दशा हो तो नाना प्रकार की व्याधि, शोक, मोह (मूर्च्छा) और कष्ट होता है। तथा मनुष्य की आयु क्षीण होती है ॥ ३१३ ॥

धान्यामहादशा में अन्तर्दशा फल—

धान्या फल—

धान्या स्वीयदशा प्राप्ता भूग्रामधनधान्यदा ।
नृपस्वजनपुत्रस्त्रीसुखं स्याद्विविधं नृणाम् ॥ ३१४ ॥

धान्या महादशा में धान्या की अन्तर्दशा हो तो भूमि, ग्राम, और धन-धान्य की प्राप्ति, राजा, आत्मीय बन्धुवर्ग, पुत्र, स्त्री तथा अन्य विविध प्रकार के सुखों से मनुष्य युक्त होता है ॥ ३१४ ॥

भ्रामरी फल—

धान्यान्तर्भ्रामरी चेत्स्याद्भ्रमणक्लेशहानिदा ।
अन्यस्थानाश्रयाल्ल स्वजनैश्च विरोधिता ॥ ३१५ ॥

धान्या योगिनी महादशा में भ्रामरी की अन्तर्दशा हो तो संसार का भ्रमण, कष्ट, हानि, अन्य स्थान के आश्रय से लाभ (अन्यत्र आवास) तथा अपने आत्मीय जनों से विरोध होता है ॥ ३१५ ॥

भद्रिका फल—

भद्रा सौभाग्यजननी गृहमित्रसुखप्रदा ।
धान्यान्तनृ॑पमन्त्रीशवाहनाम्बरभूमिदा ॥ ३९६ ॥

धान्या महादशा में भद्रा की अन्तर्दशा हो तो सौभाग्य, गृह और मित्रका सुख, राजमन्त्रियों में श्रेष्ठ, वाहन, वस्त्र एवं भूमि का लाभ होता है ॥३९६ ॥

उल्का फल—

विविधं कष्टमुत्पातमुल्का धान्यान्तरं मता ।
तत्र हृत्कटिशूलादिपीडनं धननाशनम् ॥ ३९७ ॥

धान्या की महादशा में उल्का का अन्तर हो तो विविध प्रकार के कष्ट, उत्पात, हृदय और कटि में पीड़ा आदि अन्य कष्ट तथा धन का नाश होता है ॥ ३९७ ॥

सिद्धाफल—

सिद्धा धान्यान्तरं याता सुतमित्रोत्सवप्रदा ।
नानाभोगप्रदा नित्यं ज्ञेया सा तु विचक्षणैः ॥ ३९८ ॥

धान्या महादशा में सिद्धा का अन्तर हो तो सुत और मित्रों से सम्बन्धित उत्सव, नाना प्रकार के सुख-भोग की निरन्तर प्राप्ति होती है, ऐसा बुद्धिमान पुरुषों को जानना चाहिये ॥ ३९८ ॥

संकटा फल —

धान्यासूपगता यत्र सङ्कटा बन्धनप्रदा ।
नीतिव्यापारभूपालमानसोत्साहदा मता ॥ ३९९ ॥

धान्या महादशा अन्तर्गत यदि संकटा की अन्तर्दशा हो तो बन्धन, नीति (राजनीति), व्यापार, राजकीय सम्मान तथा उत्साह की वृद्धि होती है ॥३९९॥

मङ्गला फल—

भूपाज्जयं क्षितिविकारविचित्रभोगं
प्रौढप्रतापनिहितारिगणं सुपुण्यम् ।
द्रव्यस्वलाभयुतमत्र च तीर्थलाभ-
मङ्गाधिपा यदि च धान्यदशां प्रपन्ना:[1] ॥ ४०० ॥

यदि धान्या की महादशा में मंगला की अन्तर्दशा हो तो राजा के सहयोग से सफलता, भूमिविकार (मिट्टी से बनी वस्तु ईंट आदि) का अद्भुत सुख, प्रबल प्रताप, शत्रुओं का नाश, पुण्य लाभ, धन-सम्पत्ति एवं तीर्थाटन का लाभ प्राप्त होता है ॥ ४०० ॥

१. योगिनीजातकम् (मंगलान्तर्दशा का फल मूल पुस्तक में नहीं था ।)

पिङ्गला फल—

पिङ्गला यदि धान्यान्तर्बहुधाहस्तभूधनः (?)।
सोत्साहो नृपतेर्भीति शिरोरुक्‌शूलभाजनः॥ ४०१॥

धान्या महादशा में पिङ्गला की अन्तर्दशा हो तो जातक के हाथों (अधिकार) में भूमि और धन होता है। उत्साहयुक्त, राजा से भयभीत, सिर में रोग तथा दर्द (कष्ट) होता है॥ ४०१॥

भ्रामरीमहादशा में अन्तर्दशा फल—

भ्रामरी फल—

भ्रामरी स्वदशामध्ये भीतिमोहविषार्तिदा।
स्वस्थाने स्वजने शैले वैरिदुष्टजलार्तिदा॥ ४०२॥

भ्रामरी योगिनी की महादशा में भ्रामरी की ही अन्तर्दशा हो तो भय, मोह और विष से कष्ट, अपने गृह में आत्मीयजनों के बीच में अथवा पर्वतीय प्रदेशों में शत्रुओं, दुष्टजनों एवं जल से भय उत्पन्न होता है॥ ४०२॥

भद्रिका फल—

भद्रायां भ्रामरीमध्ये विदेशगमनं भवेत्।
निजमित्रसमायोगो विद्यासम्मानभूपतिः॥ ४०३॥

भ्रामरी महादशा में भद्रा की अन्तर्दशा हो तो विदेश यात्रा, अपने मित्रों का समागम एवं विद्या द्वारा राजा के समान सम्मानित होता है॥ ४०३॥

उल्का फल—

उल्का तु भ्रामरीमध्ये ज्वरशूलासृगार्तिदा।
धनपुत्रकलत्राङ्गपीडा हानिकरी मता॥ ४०४॥

भ्रामरी महादशा में उल्का अन्तर्दशा हो तो ज्वर, शूल एवं रक्तविकार से कष्ट, धन-पुत्र-स्त्री और अपने अङ्गों से सम्बन्धित कष्ट होता है, यह दशा हानिकारक ही होती है॥ ४०४॥

सिद्धा फल—

सिद्धा सिद्धिप्रदा नित्यं भ्रामरीमध्यगा यदा।
विवेकविद्यानिधिदा भयरोगार्तिनाशिका॥ ४०५॥

सिद्धा दशा नित्य सिद्धि देने वाली होती है। यदि भ्रामरी महादशा के अन्तर्गत सिद्धा का अन्तर हो तो विवेक, विद्या और धन का लाभ तथा भय, रोग और कष्ट का नाश होता है॥ ४०५॥

संकटा फल—

सङ्कटा मरणं क्लेशः शोकं मोहं गतं गदः।
राजचोरजनख्यातिप्रदा भ्रामरिमध्यगा ॥ ४०६ ॥

संकटा की अन्तर्दशा यदि भ्रामरी महादशा हो में तो मरणसदृश क्लेश, शोक मोह (मूर्छा) से सम्बन्धित रोग होता है। तथा राजा और चोरों द्वारा ख्याति प्राप्त करता है ॥ ४०६ ॥

मंगला फल—

विलासो विविधं सौख्यं नृपसेवातिपुष्टता।
भ्रामर्यन्तर्गता यत्र मङ्गला सह मङ्गला ॥ ४०७ ॥

भ्रामरी महादशा के अन्तर्गत मंगला की अन्तर्दशा हो तो विलास, विविध प्रकार के सुख, राजकीय सेवा, पुष्टता (उत्तम स्वास्थ्य) एवं निरन्तर मंगल कार्य होते हैं ॥ ४०७ ॥

पिङ्गला फल—

पिंगला भ्रामरीमध्ये गुदाङ्घ्रिमुखरोगदा।
गजाश्वमहिषव्याघ्रव्रणभीतिप्रदा भवेत् ॥ ४०८ ॥

पिङ्गला की अन्तर्दशा भ्रामरी महादशा के अन्तर्गत हो तो गुदा, पैर एवं मुख में रोग, हाथी, घोड़ा, भैंस और बाघ से आघात (चोट) का भय होता है ॥ ४०८ ॥

धान्या फल—

भ्रामर्युपगता धान्या धनवाहनभोगदा।
नृपैः प्रीतिकरी भिल्लैर्वैरहानिकरी मता ॥ ४०९ ॥

भ्रामरी महादशा में धान्या की अन्तर्दशा हो तो धन, वाहन और सुख की प्राप्ति, राजा से प्रेम तथा भिल्ल (जंगली जातियों) से वैर द्वारा हानि होती है ॥ ४०९ ॥

भद्रिकामहादशा में अन्तर्दशा फल—

भद्रिका फल—

भद्रा भद्रां गता यत्र यशोभद्राश्वगोमतो।
व्यसनार्तिहरा पुण्यमार्गवरोधकरो मता ॥ ४१० ॥

भद्रिका महादशा में भद्रिका की अन्तर्दशा यश, कल्याण, घोड़ा और गाय प्रदान करने वाली, व्यसन (नशा एवं अन्य बुरी आदतों) को नष्ट करने वाली तथा पुण्यमार्ग में अवरोध उपस्थित करने वाली होती है ॥ ४१० ॥

उल्का फल—

उल्का भद्रान्तरं गता विवादकृतरोगदा ।
स्थानभ्रंशद्रव्यहानिकारिण्युद्वेगदायिनी ॥ ४११ ॥

भद्रिका महादशा में उल्का का अन्तर हो तो कलह एवं रोग की उत्पत्ति, स्थान भ्रष्ट (पदच्युत), धनहानि, तथा उद्वेग (विकलता) पैदा करने वाली होती है ॥ ४११ ॥

सिद्धा फल—

सिद्धा भद्रान्तरं गता द्विजदेवार्चने रतिः ।
पुत्रमित्रकलत्राङ्गगृहग्रामजनोत्सवान् ॥ ४१२ ॥

भद्रा महादशा के अन्तर्गत सिद्धा की अन्तर्दशा हो तो ब्राह्मण और देवताओं के पूजन में, पुत्र, मित्र, स्त्री, शरीर गृह, ग्राम तथा जनता से सम्बन्धित (सामाजिक) उत्सवों में जातक की रुचि होती है ॥ ४१२ ॥

संकटा फल—[1]

भद्रादशां समायाता सङ्कटा सङ्कटार्तिदा ।
मोहशोकादिव्यसनभ्रान्तिदेशगमार्तिदा ॥ ४१३ ॥

भद्रिका महादशा में संकटा का अन्तर आनेपर संकट, क्लेश, मोह (मूर्च्छा), शोक, दुर्व्यसन, भ्रान्ति (सन्देह वाली प्रवृत्ति, शक्की), तथा भिन्न-भिन्न स्थानों की यात्रा होती है ॥ ४१३ ॥

मंगला फल—

सम्मानधनभूकीर्तिव्यापारे सुतसौख्यदा ।
मङ्गला भद्रिकामध्ये पितृवंशविवृद्धिदा ॥ ४१४ ॥

भद्रिका दशा में मंगला की अन्तर्दशा हो तो व्यापारमें सम्मान, धन, भूमि और कीर्ति का लाभ पुत्रों से सुख तथा पितरों के वंश की वृद्धि होती है ॥ ४१४ ॥

पिङ्गला फल—

यदा मध्ये तु भद्रायाः पिङ्गला पित्तरोगदा ।
कृषिवाणिज्यभूवृद्धाश्रयतो विविधप्रदा ॥ ४१५ ॥

भद्रिका महादशा में पिङ्गला की अन्तर्दशा हो तो पित्तजन्य विकार, कृषि, व्यापार और भूमिविस्तार के आश्रय से विविध प्रकारका लाभ होता है ॥ ४१५ ॥

धान्या फल—

कलत्रसौख्यं महिषीसुधेनुर्द्रव्यागमं शत्रुजयं विवादे ।
नृपेन्द्रमान्यं कुरुते च धान्या भद्रादशायां यदि चेत् प्रतिष्ठा[1] ॥ ४१६ ॥

१. योगिनी जातकम् श्लो. ७ पृ. १८

भद्रिका दशा में धान्या की अन्तर्दशा हो तो स्त्री सुख, भैंस, उत्तम नस्लकी गाय, और धनका लाभ, विवाद या मुकदमा में शत्रुओं पर विजय, तथा राजा से सम्मान प्राप्त होता है ॥ ४१६ ॥

भ्रामरी फल—

रुधिराग्नियमाप्नोतिर्भद्रायां भ्रामरी यदा ।
गृहक्षेत्ररिपुध्वंसी निजबन्धुजनैः सुखम् ॥ ४१७ ॥

भद्रिका महादशा में भ्रामरी की अन्तर्दशा हो तो गृह, खेत एवं शत्रुओं का नाश, रक्त, अग्नि, और यमराज से भय, (अर्थात् रक्त विकार, अग्निभय किसी की मृत्यु से कष्ट) तथा अपने भाई-बन्धुओं के साथ सुखी होता है ॥ ४१७ ॥

उल्कामहादशा में अन्तर्दशा फल—

उल्का फल—

शत्रुभिः सहसा हानिर्द्रव्यस्य महती व्यथा ।
उल्कामध्ये यदोल्का च राज्यभ्रंशात्तु भीतिदा ॥ ४१८ ॥

उल्का महादशा में उल्का की ही अन्तर्दशा हो तो शत्रुओं द्वारा अचानक हानि, अर्थसंकट, राज्यनाश या राज्यपरिवर्तन से भय उपस्थित होता है ॥४१८॥

सिद्धा फल—

सिद्धा तु स्वफलं त्यक्त्वा परस्य फलदायिनी ।
उल्कान्तरं समायाता विदेशगमनप्रदा ॥ ४१९ ॥

उल्का की महादशा में सिद्धा की अन्तर्दशा हो तो सिद्धा दशा अपने शुभ फलों का परित्याग कर अन्य अशुभ योगिनियों का अशुभ फल देने लगती है। तथा विदेश यात्रा होती है ॥ ४१९ ॥

संकटा फल—

उल्काया मध्यगा यत्र सङ्कटा मरणप्रदा ।
स्त्रीपुत्रभृत्यादिमित्रजनहानिकुलक्षयः ॥ ४२० ॥

उल्का महादशा में संकटा की अन्तर्दशा हो तो मृत्यु या मृत्युतुल्य कष्ट का भय, स्त्र , सेवक, मित्र आदि जनों की हानि तथा कुल का ह्रास होता ॥ ४२० ॥

मङ्गला फल—

उल्काया मध्यगा यत्र मङ्गला मोहकारिणी ।
धनमित्रविवेकस्त्रीसुखदा मलहारिणी ॥ ४२१ ॥

उल्का की महादशा मे मङ्गला की अन्तर्दशा हो तो मनुष्य सीधा-सादा होता है, धन, मित्र, विवेक (बुद्धिमत्ता) और स्त्री से सुखी तथा मल (विकार) के नष्ट होने से स्वस्थ होता है ॥ ४२१ ॥

पिङ्गला फल—

कुष्ठकम्बुशिरोरोगैः पीडितो धरणी तले ।
भ्रमते नात्र सन्देहो यद्युल्कायां तु पिंगला ॥ ४२२ ॥

उल्का की महादशा में पिङ्गला की अन्तर्दशा हो तो कुष्ठ, कम्बु (रंग बिरंगे दाग या नाडी) एवं शिर रोग से पीड़ित, तथा पृथ्वी पर इधर से उधर भ्रमण करने वाला होता है इसमें सन्देह नहीं ॥ ४२२ ॥

धान्या फल—

न लाभो न सुखं किञ्चिद्वातव्याधिकफादयः ।
धान्योल्कायां समायाता स्त्रीपुत्रस्वजनैः कलिः ॥ ४२३ ॥

उल्का महादशा में धान्या की अन्तर्दशा हो तो लाभ एवं सुख का अभाव, वायु-कफ आदि विकारों से कष्ट, स्त्री, पुत्र, और अन्य पारिवारिक व्यक्तियों से कलह होता है ॥ ४२३ ॥

भ्रामरी फल—

उद्विग्नमानसं मोहो भ्रमः पुंसोऽरिजं भयम् ।
नानाक्लेशसमायोगो भ्रामर्युल्कान्तरं गता ॥ ४२४ ॥

उल्का की महादशा मे भ्रामरी की अन्तर्दशा हो तो मन में उद्वेग, मूर्च्छा, भ्रान्ति, शत्रुओं से भय तथा विविध प्रकार के कष्ट होते हैं ॥ ४२४ ॥

भद्रिका फल —

उल्कामध्ये तु सम्प्राप्ता भद्रा भद्रार्थदायिनी ।
भूषणाम्बरहानिः स्यात्कुलमित्रजनात्सुखम् ॥ ४२५ ॥

उल्का महादशा के अन्तर्गत भद्रा की अन्तर्दशा कल्याणकारक होती है, इसमें वस्त्र और आभूषण की हानि तथा पारिवारिक सदस्यों एवं मित्रों से सुख प्राप्त होता है ॥ ४२५ ॥

सिद्धामहादशा में अन्तर्दशा फल—

सिद्धा फल—

सिद्धा सिद्धार्थसंदात्री स्वजनैस्सह सौख्यदा ।
सिद्धायामथवैश्वर्यं सुतमित्रसुखप्रदा ॥ ४२६ ॥

सिद्धा महादशा में सिद्धा की ही अन्तर्दशा हो तो कार्यों की सिद्धि, अर्थलाभ, परिवार के साथ सुख, सम्पत्तिलाभ, पुत्र और मित्रों के साथ सुख प्राप्त होता है ॥ ४२६ ॥

संकटा फल—

बन्धनं नृपचौरेभ्यो धनहानिर्महद्भयम् ।
देशत्यागो भवेन्नूनं सिद्धायां सङ्कटा यदा ॥ ४२७ ॥

यदि सिद्धा महादशा में संकटा की अन्तर्दशा हो तो राजा अथवा चोरों द्वारा बन्धन, धनहानि, महान भय तथा निश्चय ही देशपरित्याग होता है ॥ ४२७ ॥

मंगला फल—

विलासः स्वजनैः सौख्यं धनलब्धिर्नृपाद्भवेत् ।
मंगला सिद्धिदा सिद्धा संगता विविधा यदा ॥ ४२८ ॥

सिद्धा की महादशा में मंगला की अन्तर्दशा हो तो विलास, आत्मीय जनों के साथ सुख, राजा से धनलाभ तथा विविध प्रकार के कार्यों में सिद्धि प्राप्त होती है ॥ ४२८ ॥

पिङ्गला फल—

सिद्धायां पिंगलायां तु मानं क्रोधाग्निदाहिका ।
वैरोदयो निजैः सार्द्धं परद्रव्याभिधारणम् ॥ ४२९ ॥

सिद्धा महादशा में पिङ्गला की अन्तर्दशा हो तो स्वाभिमान, क्रोधाग्नि को शमन करने की शक्ति, आत्मीयजनों से शत्रुता का आरम्भ तथा पराये धन का उपभोग होता है ॥ ४२९ ॥

धान्या फल—

पुंसां धान्या तु सिद्धायां प्राक्पुण्यनिचयो भवेत् ।
मनःप्रकल्पितं सर्वं सिद्धिमायाति सर्वतः ॥ ४३० ॥

सिद्धा महादशा में धान्या की अन्तर्दशा हो तो प्राक्तन (पूर्वजन्म के) पुण्यों का संग्रह (उदय) होता है तथा मन में सोचे हुये कार्यों की पूर्ति होती है ॥ ४३० ॥

भ्रामरी फल—

भ्रामरी यदि सम्प्राप्ता सिद्धायां यस्य जन्मनि ।
स्वस्थानाद्व्यसनैस्त्यागान्ननु राजकुलाद्भयम् ॥ ४३१ ॥

जिसके जन्मकाल में सिद्धा महादशा में भ्रामरी अन्तर्दशा होती है उसे अत्यधिक व्यसन द्वारा अपने स्थान का परित्याग करना पड़ता है तथा राजकुल से भय प्राप्त होता है ॥ ४३१ ॥

भद्रिका फल—

मांगल्यभोगजननी विधा सौख्यगुणप्रदा ।
नराणां सिद्धिदा भद्रा सिद्धायामुपजायते ॥ ४३२ ॥

सिद्धा महादशा में भद्रिका का अन्तर हो तो मंगल कार्य, भोग, विद्या, सुख और गुणों की प्राप्ति तथा मनुष्यों के सभी कार्यों की सिद्धि होती है ॥ ४३२ ॥

उल्का फल—

उल्का सिद्धां समापन्ना धनधान्यविनाशिनी ।
क्लेशशोकव्यसनदा गुदरुग्मोहकारिणी ॥ ४३३ ॥

सिद्धा महादशा में उल्का का अन्तर हो तो धन-धान्य का नाश, कष्ट, शोक और व्यसन की प्राप्ति, तथा गुदा सम्बन्धी रोग और मूर्छा उत्पन्न होती है ॥४३३॥

सङ्कटामहादशा में अन्तर्दशा फल—

संकटा फल—

सङ्कटा स्वदशां प्राप्ता करोति मरणं ध्रुवम् ।
राजवंशाच्च हानिश्च देशत्यागो धनक्षयः ॥ ४३४ ॥

संकटा की महादशा में संकटा की अन्तर्दशा हो तो निश्चय ही मृत्यु होती है। राजकुल से हानि, देश का परित्याग तथा धन नाश होता है ॥ ४३४ ॥

मंगला फल—

शिरोरुग्विविधैः रोगैर्व्याधिभिर्व्यसनैस्तथा ।
कलत्रं सीदति यदा मंगला सङ्कटां गता ॥ ४३५ ॥

संकटा की महादशा में मंगला की अन्तर्दशा हो तो शिर में रोग तथा अन्य विविध प्रकार के रोग-व्याधियों से स्त्री पीड़ित रहती है ॥ ४३५ ॥

पिङ्गला फल—

अकस्माद्धनहानिः स्यात्पुत्रशोकोऽरिजं भयम् ।
पिङ्गला सङ्कटां याता वियोगः स्वजनैः सह ॥ ४३६ ॥

संकटा की महादशा में पिङ्गला की अन्तर्दशा हो तो अकस्मात धन की हानि, पुत्रशोक, शत्रुभय, तथा स्वजनों (पारिवारिक सदस्यों) से वियोग होता है ॥४३६॥

धान्या फल—

गुल्मोदरकृता पीडा निजपुत्रसुखं महत् ।
स्वदेशजनताकीर्तिर्धान्या तु सङ्कटां गता ॥ ४३७ ॥

संकटा की महादशा में धान्या की अन्तर्दशा हो तो गुल्म (वायुगोला), उदरपीडा, अपने पुत्र से अधिक सुख, तथा अपने देश में लोगों (जनता) द्वारा सम्मान प्राप्त होता है ॥ ४३७ ॥

भ्रामरी फल—

भ्रामरी सङ्कटामध्ये भ्रमणं पृथिवीतले ।
देशग्रामपुरद्वारराज्यभ्रंशोऽरिजं भयम् ॥ ४३८ ॥

संकटा महादशा में भ्रामरी का अन्तर हो तो पृथ्वी पर भ्रमण, देश, ग्राम, पुर, द्वार, और राज्य का नाश तथा शत्रुभय होता है ॥ ४३८ ॥

भद्रिका फल —

विद्यालंकारवस्त्राणि विविधानि महद्यशः ।
विग्रहोऽन्यजनैः सार्द्धं भद्रा चेत्संकटां गता ॥ ४३९ ॥

संकटा महादशा में भद्रिका की अन्तर्दशा हो तो विविध प्रकार की विद्या-अलंकार (आभूषण) एवं वस्त्रों की प्राप्ति, महान यश तथा अन्य लोगों के साथ विरोध होता है ॥ ४३९ ॥

उल्का फल —

उल्का प्राप्तधनग्राममहारिणो मृत्युकारिणो ।
संकटान्तर्गता नित्यं पशुमात्रकुलार्दनः ॥ ४४० ॥

संकटा महादशा में उल्का की अन्तर्दशा हो तो पूर्व सञ्चित धन और ग्राम (स्थायी सम्पत्ति) का नाश, मृत्यु (या मृत्युतुल्य कष्ट) होती है । तथा जातक पशुओं और अपने कुल को पीड़ित करने वाला होता है ॥ ४४० ॥

सिद्धा फल—

उत्साहो विविधः पुंसां निजपुष्टिसुखादिजम् ।
मनःप्रसान्नतामेति सिद्धा चेत्सङ्कटां गता ॥ ४४१ ॥

संकटा महादशा में सिद्धा की अन्तर्दशा आने पर मनुष्य के हृदय में विविध प्रकार के उत्साह, शारीरिक पुष्टता (स्वास्थ्य), आदि सुख तथा मानसिक प्रसन्नता प्राप्त होती है ॥ ४४१ ॥

योगिनी-दशा संकलन-कर्त्ता का परिचय—

आसीद्गुर्जरमण्डले द्विजवरः शाण्डिल्यगोत्रोद्भवः।
श्रीमद्याज्ञिकवंशमण्डनमणिर्ज्योतिर्विदामग्रणीः ।
श्रौतस्मार्तरतो जनार्दन इति ख्यातः स्वकीयैर्गुणै-
स्तत्सूनुर्हरजी दशां स्फुटतरां चक्रे परां योगिनीम् ॥ ४४२ ॥

गुजरात प्रान्त में ब्राह्मणों में श्रेष्ठ शाण्डिल्य गोत्र में उत्पन्न याज्ञिक वंश के भूषण दैवज्ञों में अग्रणी श्रौत-स्मार्त कर्म में निरत अपने गुणों से विख्यात श्री जनार्दन नामक प्रख्यात पण्डित थे । उनके पुत्र श्री हरजी दैवज्ञ ने योगिनी दशा को स्पष्ट रूप से संकलित किया ॥ ४४२ ॥

योगिनीदशा के स्वामी—

चन्द्रः सूर्यो वाक्पतिर्भूमिपुत्र-
श्चान्द्रिर्मन्दो भार्गवः सैंहिकेयः।
एते नाथा मङ्गलादिप्रदिष्टाः
सौम्याः सौम्यानामनिष्टाः खलानाम् ॥ ४४३ ॥

चन्द्र, सूर्य, बृहस्पति, मंगल, बुध, शनि, शुक्र और राहु क्रम से मंगला आदि योगिनियों के स्वामी होते हैं। अर्थात् मंगला का स्वामी चन्द्रमा, पिङ्गला का सूर्य, धान्या का बृहस्पति, भ्रामरी का मंगल, भद्रिका का बुध, उल्का का शनि, सिद्धा का शुक्र तथा संकटा का स्वामी राहु होता है। शुभ योगिनियों के स्वामी शुभ तथा अशुभ योगिनियों के स्वामी पापग्रह होते हैं ॥ ४४३ ॥

मतान्तर से ग्रहों की उत्पत्ति—

पिंगलातो भवेत्सूर्यो मङ्गलातो निशाकरः।
भ्रामरीतो भवेत्क्ष्माजो धान्यातोऽभूद्विधो सुतः ॥ ४४४ ॥
भद्रिकातो गुरुरभूत्सिद्धातः कविसम्भवः।
उल्कातो भानुतनयः सङ्कटातस्त्वभत्तमः ॥
अस्या एव दशान्ते च केतुरेवं विधीयते ॥ ४४५ ॥

पिङ्गला नामक योगिनी से सूर्य की, मङ्गला से चन्द्रमा की, भ्रामरी से मंगल की, धान्या से बुध की, भद्रिका से गुरु की, सिद्धा से शुक्र की, उल्का से शनि की तथा संकटा से राहु की उत्पत्ति हुई है। तथा इसी (संकटा) दशा के अन्तमे केतु की उत्पत्ति हुई। अर्थात् संकटा से ही दोनों राहु और केतु की उत्पत्ति हुई ॥ ४४४-४५ ॥

ग्रहों का बलानुसार फल—

यः खेटोऽस्तगृहं तथारिभवनं नीचं प्रयातो यथा
दायेशाद्रिपुगो[1] हि तस्य गदिता सर्वाऽधमा मध्यमा।
यश्चोच्चस्थलमाश्रितः स्वभवने मूलत्रिकोणे खगो
मित्रागारमुपागतो निगदिता तस्याऽखिला सौख्यदा ॥ ४४६ ॥

जो ग्रह अस्त हो, शत्रुग्रह की राशि मे हो, नीच राशि मे तथा दशाधीश से छठें भाव में स्थित हो उन ग्रहों का दशापरिणाम अधम और मध्यम होता है। (शुभग्रहों से मध्यम तथा पापग्रहों से अधम फल होता है)। यदि उच्चराशि, अपनी राशि (स्वक्षेत्र), मूलत्रिकोण अथवा मित्रग्रह की राशि में स्थित हों तो उन ग्रहों की सम्पूर्ण दशा सुख प्रदान करनेवाली होती है ॥ ४४६ ॥

---

१. "वर्षेशाद्रिपुगो हि तस्य गदिता सर्वा दशा मध्यमा।" पाठान्तरम्

वर्ष-प्रवेश-वारादि साधन—

इष्टः शको जन्मशकेन हीन-
स्त्रिधा सपादो दलितश्च सार्धम् ।
समन्वितो जन्मगवारपूर्वैः
स्फुटो भवेदब्दनिवेशवेला ॥ ४४७ ॥

मानसागरी पद्धतिः समाप्ता

इष्ट शकाब्द में जन्म शकाब्द को घटाने से शेष गतवर्ष संख्या होती है । उसे तीन स्थानों में रखकर क्रम से प्रथम स्थान में सपाद (चतुर्थांश युक्त), द्वितीय स्थान में आधा तथा तृतीय स्थान में सार्ध (आधे से युक्त) करने से जो वारादि संख्या प्राप्त हो उसमें जन्मके वार तथा इष्ट घटी पल की संख्या जोड़ने से वर्ष-प्रवेश-कालिक वार और इष्ट घटी होती है ॥ ४४७ ॥

उदाहरण—जन्म शकाब्द १८९४ वैशाख शुक्ल ५ बुधवार इष्ट घटी १२।४२। वर्तमान (इष्ट) शकाब्द १९०४ । इष्ट-शकाब्द १९०४−१८९४ जन्म-शकाब्द = १० गतवर्ष को तीन स्थानों में रखकर "सपादार्धकसार्धकीकृते" इस नियम से चौथाई से युक्त, आधा तथा आधे से युक्त करने पर—

	$१० + \frac{१०}{४}$	$\frac{१०}{२}$	$१० + \frac{१०}{२}$
=	१२।३०	५	१५

तीनों को एक साथ जोड़ने पर	१२।३०
	५।१५
	१२।३५।१५
जन्म कालिक वारादि जोड़ने पर	५।१२।४२
	१७।४७।५७

वार संख्या १७ को सात से विभक्त करने पर शेष ३ वार संख्या । अतः वर्ष प्रवेश-वारादि ३।४७।५७ अर्थात् मंगलवार को ४७।५७ इष्ट घटी पर ११ वाँ वर्ष प्रवेश हुआ ।

मनोरमा हिन्दी व्याख्या सहित मानसागरी का
पञ्चम अध्याय समाप्त ॥ ५ ॥

डॉ० रामचन्द्रपाण्डेय कृत मानसागरी पद्धति
का मनोरमा नामक सोदाहरण
हिन्दी भाषानुवाद समाप्त

परिशिष्टम्

[मानसागरी की उपलब्ध प्रतियोंमें 'मानसागरी-परिशिष्टम्,' के अन्तर्गत कुछ प्रारम्भिक ज्योतिषशास्त्रीय विषय दिये गये हैं। परन्तु सभी संस्करणों में अलग-अलग विषय हैं। अतः यह स्पष्ट है कि मानसागरी का परिशिष्ट टीकाकार या सम्पादकों द्वारा प्रारम्भिक ज्ञान हेतु दिया गया। इस परम्परा का पालन करते हुये यहाँ भी कुछ आवश्यक सामग्री का संकलन किया जा रहा है। आशा है पाठकगण इस परिशिष्ट से लाभान्वित होंगे।]

इष्टकाल साधन—

भारतीय ज्योतिष-सिद्धान्त के अनुसार वार-प्रवृत्ति सूर्योदय से मानी गई है। एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय के मध्य का काल एक सावन (भूमि सम्बन्धी) दिन होता है। सूर्योदय से जन्म-समय तक के घटयादि अन्तर को इष्टकाल कहते है। सौविध्य हेतु इष्टकाल-साधन के लिये तीन नियम दिये जा रहे हैं।

१. सूर्योदय के पश्चात् तथा दिन में १२।५९ के पूर्व जन्म हो तो जन्म-समय में सूर्योदय घटाकर शेष का ढाई गुना करने से इष्टकाल होता है।

उदाहरण— जन्म-समय पूर्वाह्न १०।४५ सूर्योदय ६।१५

१०।४५—६।१५=४।३०

शेष ४।३० का ढाई गुना=४।३०×$\frac{५}{२}$=११।१५

अथवा (४।३०+४।३०+२।१५)=११।१५ इष्टकाल।

२. मध्याह्न १ बजे से रात्रि में १२।५९ बजे तक किसी का जन्म हो तो जन्म समय में १२ जोड़कर सूर्योदय घटाकर शेष का ढाई गुना करने से इष्टकाल होता है।

उदाहरण— जन्म-समय सायं ७।४२ सूर्योदय ६।१५।

अतः ७।४२
+१२
१९।४२
—६।१५ सूर्योदय
१३।२७ शेष का ढाई गुना करने से

१३।२७×२$\frac{१}{२}$=३३।३७।३० इष्टकाल

३. मध्यरात्रि एक बजे के बाद तथा प्रातः सूर्योदय से पूर्व किसी का जन्म हो तो जन्म समय में २४ जोड़कर, सूर्योदय घटाकर शेष का ढाई गुना करने से इष्टकाल होता है।

उदाहरण— जन्म-समय रात्रि में ३।१२ सूर्योदय ६।१५

अतः जन्म-समय ३।१२
+२४
२७।१२
−६।१५ सूर्योदय
२०।५७

शेष का ढाई गुना २०।५७×२½=५२।२२।३० इष्टघटी

भयात-भभोग साधन—

जन्म नक्षत्र के गत घटी-पल को भयात तथा नक्षत्र के सम्पूर्ण भोग (मान) को भभोग कहते हैं।

गतर्क्षनाडी खरसेषु शुद्धा
सूर्योदयादिष्ट घटीषु युक्ता
भयातसंज्ञा भवतीह तस्य
निजर्क्षनाड्या सहितो भभोगः ॥ १ ॥

गतनक्षत्र के घटी-पल को ६० घटी में घटाकर शेष को दो स्थानों में रखकर एक स्थान में इष्टकाल जोड़ने से भयात तथा दूसरे स्थान में वर्तमान नक्षत्र के घटी-पल जोड़ने से भभोग होता है।

उदाहरण— सं० २०३६ चैत्र कृष्ण ८ सोमवार, पूर्वाषाढ़ा

४७।३१ गतनक्षत्र मूल ४१।४३ इष्टघटी ३३।३७

६०—ग० न० ४१।४३—१८।१७ शेष

	१८।१७	१८।१७	
इष्टघटी	३३।३७	४७।३१	वर्तमान (जन्म) नक्षत्र
भयात्	५१।५४	६५।५६	भभोग

विशेष—सूर्योदय-कालिक नक्षत्र यदि जन्म-समय से पूर्व समाप्त हो जाय तो इष्टघटी में सूर्योदय-कालिक नक्षत्र के घटीपल को घटाने से भयात तथा ६० में औदयिक नक्षत्र को घटाकर शेष में वर्तमान (अग्रिम दिनके) नक्षत्र के मान को जोड़ने से भभोग होता है।

यथा—औदयिक नक्षत्र पूर्वाषाढ़ा ४७।३१ इष्टघटी ५२।२२ अग्रिम दिन उ० षा० का मान ५४।५

इष्टघटी ५२।२२
४७।३१ औदयिक नक्षत्र
४।४६ भयात्

६०।००
४७।३१
१२।२१
५४।५ अग्रिम दिन उ० षा०
६६।२६ भभोग

चन्द्र-साधन की सुगम विधि—

गत नक्षत्र संख्या को १३°.२०' से गुणाकर गुणनफल में द्विगुणित भयात को ९ से भाग देकर लब्धि अंशादि जोड़ने से अंशादि चन्द्रमा होता है। अंश में ३० का भाग देने पर राश्यादि स्पष्ट चन्द्र होता है।

उदाहरण—पूर्वाषाढा भयात ५१।५४, भभोग ६५।५६ गत नक्षत्र मूल,

गत नक्षत्र संख्या १९

१९×१३।२०=२५३।२०

भयात् ५१।५४×२=१०३।४८

```
९)१०३।४८(११
   ९
   १३
    ९                    २५३।२०
   ४×६०+४८               ११।३२
  ९)२८८(३२               २६४।५२
    २७
     १८            ३०)२६४(८
     १८               २४०
      ×                 २४
```

स्प. चं. ८।२४।५२

यह विधि सुगम है परन्तु स्थूल है।

चन्द्रमा द्वारा दशा साधन—

एक नक्षत्र का मान १३°।२०' कला होता है। चन्द्रमा जिस नक्षत्र पर हो उस नक्षत्र के गत अंश कला को सम्बन्धित ग्रह के दशावर्ष से गुणाकर ८०० कला से भाग देने पर ग्रह की भुक्तदशा वर्ष-मास-दिन में आती है दशावर्ष से भुक्तदशा को घटाने से भोग्यदशा होती है।

उदाहरण—चन्द्रमा ८।२४।५२

चन्द्रमा के राशि अंशों से ज्ञात होता है कि धनु राशि में २४°।५२' कला पर चन्द्रमा है अर्थात् पूर्वाषाढा नक्षत्र के ११°।३२' बीतने पर जन्म हुआ है। क्योंकि १३°।२०' कला से पूर्वाषाढ़ा का आरम्भ होता है। अतः (२४।५२-१३।२०. =११।३२)। पूर्वाषाढा का दशाधीश शुक्र है।

११×६०=६६०+३२=६९२

६९२×२०=१३८४०

```
८००)१३८४०(१७
    ८००
    ----
    ५८४०
    ५६००
    ----
     २४०
    ×१२
८००)२८८०(३
    २४००
    ----
     ४८०
    ×३०
    ------
८००)१४४००(१८
     ८००
     ----
    ६४००
    ६४००
```

	२०।०।०
भुक्त वर्ष	१७।३।१८
भोग्य वर्ष	२।८।१२

नक्षत्रों के प्रारम्भिक एवं अन्तिम अंशों का ज्ञान निम्नलिखित तालिका से सरलता पूर्वक किया जा सकता है।

नक्षत्र-बोधक तालिका—

राशि		अंश	नक्षत्र	दशाधीश	दशावर्ष
		००-००			
मेष	०	१३-२०	अश्विनी	केतु	७
मेष	०	२६-४०	भरणी	शुक्र	२०
मेष	०	३०-००	कृत्तिका १	सूर्य	६
वृष	१	१०-००	कृत्तिका ३	सूर्य	६
वृष	१	२३-२०	रोहिणी	चन्द्र	१०
वृष	१	३०-००	मृगशिरा २	भौम	७
मिथुन	२	६-४०	मृगशिरा २	भौम	७
मिथुन	२	२०-००	आर्द्रा	राहु	१८
मिथुन	२	३०-००	पुनर्वसु ३	गुरु	१६
कर्क	३	३-२०	पुनर्वसु १	गुरु	१६
कर्क	३	१६-४०	पुष्य	शनि	१९
कर्क	३	३०-००	आश्लेषा	बुध	१७
सिंह	४	१३-२०	मघा	केतु	७
सिंह	४	२६-४०	पू. फा.	शुक्र	२०
	४	३०-००	उ. फा. १	सूर्य	६

राशि		अंश	नक्षत्र	दशाधीश	दशावर्ष
कन्या	५	१०-००	उ. फा. ३	सूर्य	६
कन्या	५	२३-२०	हस्त	चन्द्र	१०
कन्या	५	३०-००	चित्रा २	भौम	७
तुला	६	६-४०	चित्रा २	भौम	७
तुला	६	२०-००	स्वाती	राहु	१८
तुला	६	३०-००	विशाखा ३	गुरु	१६
वृश्चिक	७	३-२०	विशाखा १	गुरु	१६
वृश्चिक	७	१६-४०	अनुराधा	शनि	१९
वृश्चिक	७	३०-००	ज्येष्ठा	बुध	१७
धनु	८	१३-२०	मूल	केतु	७
धनु	८	२६-४०	पूर्वा षा.	शुक्र	२०
धनु	८	३०-००	उ. षा. १	सूर्य	६
मकर	९	१०-००	उ. षा. ३	सूर्य	६
मकर	९	२३-२०	श्रवण	चन्द्र	१०
मकर	९	३०-००	धनिष्ठा २	भौम	७
कुम्भ	१०	६-४०	धनिष्ठा २	भौम	७
कुम्भ	१०	२०-००	शतभिष	राहु	१८
कुम्भ	१०	३०-००	पू. भा. ३	गुरु	१६
मीन	११	३-२०	पू. भा. १	गुरु	१६
मीन	११	१६-४०	उ. भा.	शनि	१९
मीन	११	३०-००	रेवती	बुध	१७

ग्रह-स्पष्टीकरण

आजकल प्रायः सभी पञ्चाङ्गों में दैनिक सूर्योदय-कालिक या प्रातः ५।३० बजे अथवा मिश्रमान कालिक ग्रह दिये रहते हैं।

यदि उदयकालिक ग्रह हो तो इष्टकाल और ग्रह की गति का परस्पर गुणाकर ६० से भाग देकर पंचांगस्थ ग्रह की कला-विकला में जोड़ने से इष्ट-कालिक ग्रह होता है।

यदि मिश्रमान-कालिक या प्रातः ५।३० के ग्रह हों तो जन्म-समय और मिश्रमान या प्रातः ५।३० का अन्तर कर शेष घटयादि मान को ग्रहगति से गुणाकर ६० से भाग देकर लब्ध-फल को ग्रह से पूर्व जन्म-समय होने पर घटाने तथा पश्चात् होने पर जोड़ने से स्पष्ट-ग्रह होते हैं।

उदाहरण—(१) औदयिक सूर्य ११।२१।२।३०

गति ५९।४ इष्टघटी ३३।३७

```
        ५१।४
        ३३।३७
      ---------
     १९४७|२१८३|
       ३८| १३२|१४८
              २|१२०
   ---------------------
३३। १९८५|२३१७   २८
    १८०  |१८०
   ---------------
     १८५   ५१७
     १८०   ४८०
    -----  -----
       ५    ३७              सूर्य ११।२१।२।३०
```

६० से भाग देने पर लब्धि ३३।५ — ३३। ५

इष्टकालिक स्पष्ट सू. ११।२१।३५।३५

(२) मिश्रमान ४६।३४ सूर्य ११।२१।४८।२६ गति ५९।५ इष्ट ३३।३७

४६।३४—३३।३७=१२।५७ ऋण चालन

```
  ५९। ५
  १२।५७
 -----------
७०८।  ६०
    ३३६३|२८५ सभी गुणनफलों को
   ------
    ३४२३
```

६० से भाग देने पर अन्तिम लब्धि १२ तथा शेष ४५।७।४५। मिश्रमान से इष्टकाल अल्प है अतः मिश्रमानकालिक ग्रह से लब्धफल घटाने से इष्टकालिक स्पष्टग्रह होगा।

```
यथा  ११।२१।४८।२६
        −   १२।४५
    -----------------
     ११।२१।३५।४१  स्पष्ट सूर्य।
```

इसी प्रकार सभी ग्रहों का स्पष्टीकरण होता है। यदि वक्री ग्रह हो तो लब्ध फल का विपरीत संस्कार करना चाहिये। यदि फल धन हो तो ऋण, ऋण हो तो धन करें।

त्रैराशिक-सिद्धान्त से भी इष्टकालिक ग्रह का ज्ञान किया जा सकता है। यथा—२४ घण्टे में ग्रह की गति तो अभीष्ट घण्टे में क्या ?

$$\frac{\text{ग्रहगति} \times \text{अभीष्टकाल}}{२४} = \text{इष्ट घण्टा सम्बन्धी ग्रहगति ।}$$

= गतिफल

पञ्चाङ्गस्थ ग्रह जन्मसमय से पूर्व हो तो उसमें गतिफल को जोड़ने तथा जन्मसमय से बाद में हो तो गतिफल को घटाने से इष्टकालिक स्फुटग्रह होता है।

भयात-भभोग से दशा साधन—

गतर्क्षनाडी निहता दशाब्दैः सर्वक्षनाडी विहृता फलं यत् ।
वर्षादिकं भुक्तमिति प्रकल्प्य, स्वाब्दादपास्यं भवतीह भोग्यम् ॥ २ ॥

भयात को पलात्मक बनाकर दशावर्ष (जिसकी दशा में जन्म हो उस ग्रह के दशावर्ष) से गुणाकर पलात्मक भभोग से भाग देने पर लब्धि भुक्त दशा वर्ष, शेष को १२ से गुणाकर भभोग से भाग देने पर मास तथा पुनः शेष को ३० से गुणाकर भभोग से भाग देने पर लब्धि दिन होता है। भुक्त वर्ष-मास-दिन को दशावर्ष में घटाने से वर्षादि भोग्यदशा होती है।

अन्तर्दशा साधन—

दशा दशाहता कार्या विहृता परमायुषा ।
लब्धमन्तर्दशामानं वर्षादिकमिहेरितम् ॥ ३ ॥

जिस ग्रह की महादशा में जिस ग्रह का अन्तर ज्ञात करना हो उन दोनों ग्रहों के महादशा वर्षों का परस्पर गुणाकर १२० का भाग देने से लब्धि वर्षादि अन्तर्दशा का मान होता है।[1] यथा—

सूर्य में चन्द्र का अन्तर अभीष्ट है। अतः

$$\frac{६ \times १०}{१२०} = \frac{६०}{१२०} = १२०)६०(०।६$$

```
१२०)६०(०।६
     ०
   ------
   ६०×१२
   ७२०
   ७२०
   ---
    ×
```

सूर्य में चन्द्रान्तर ० वर्ष ६ मास ० दिन

द्वादशभाव साधन—

ग्रह लाघव[2] की रीति से लग्न साधन की विधि मानसागरी पृ. ९३ पर दी गयी है। इस विधि से लग्न साधन करना चाहिये अथवा आधुनिक रीति से साम्पातिक अथवा नाक्षत्र काल (Sidereal Time) से लग्नसाधन करना चाहिये। लग्न ही प्रथम भाव होता है। लग्न के अंशों में १५ अंश जोड़ने से लग्न की सन्धि, सन्धि में १५ अंश जोड़ने से द्वितीय भाव होता है। इसी प्रकार लग्न में १५-१५ अंश जोड़ते रहने से सन्धि सहित द्वादश भाव हो जाते हैं। यह आर्ष मत है। यथा—

---

१. दशान्तर्दशा सम्बन्धी विशद विवेचन पञ्चम अध्याय में किया गया है।
२. ग्र. ला. मि. अ. श्लोक २, ३।

लग्न ३। ४।२२।३०	तृ. भा. ५। ४।२२।३०
१५	१५
सन्धि ३।१९।२२।३०	सं. ५।१९।२२।३०
१५	१५
द्वि० भा० ४। ४।२२।३०	चं. भा. ६। ४।२२।३०
१५	१५
सन्धि ४।१९।२२।३०	सं. ६।१९।२२।३०
१५	१५
	पं. भा. ७। ४।२२।३०

इसी प्रकार सन्धिसहित बारह भावों की सिद्धि होती है। कुछ विद्वानों ने इसे स्थूल बतलाया है परन्तु सिद्धान्ततत्त्वविवेककार कमलाकर भट्ट ने इसे ही प्रमाण माना है—

महर्षिभिः स्वीयकृतौ निरुक्ता
लग्नांशतुल्या रविसंख्यका ये।
भावाः समा एव सदा फलार्थं
ग्राह्यास्त एव ग्रहगोलविद्भिः॥ ४॥
लोकेषु मूर्खोदरपूरणार्थं
मूर्खैर्विलग्नाद्रविसंख्यका ये।
भावा निरुक्ताः स्वधिया स्वनार्थाः
सम्यक् फलार्थं नहि तेऽवगम्याः॥ ५॥
(सि० त० वि०)

मान्दि एवं गुलिक साधन—

चाह: पारिजटाक्यो नटतनूक्तं द्युमानं हतं
षाड्प्राप्तं रविवासरादिघटिकास्तत्कालभे मन्दजः।
रात्रेर्मानमहःप्रमाणमहिहृत्खण्डप्रमाणं भवे-
दर्काद्यावनिवासरान्तदिवसे वारेशवर्गात् खण्डपा[1]॥ ६॥

रविवासरादि दिवसों के दिनमान को क्रम से २६, २२, १८, १४, १०, तथा ६ से गुणाकर गुणनफल को ६० से भाग देने पर मान्दि इष्ट होता है। इस इष्ट के आधार पर साधित लग्न मान्दि लग्न होता है।

रात्रिमान तथा दिनमान को आठ भागों में विभक्त करने से वारखण्ड होता है। प्रथम खण्ड का स्वामी वारेश तथा द्वितीयादि खण्डोंके स्वामी वारेश से अग्रिम वारों के स्वामी होते हैं। अष्टम खण्ड निरीश्वर होता है।

1. उ. का.

"अस्यांशो हि निरीश्वरस्तु गुलिकः शम्यंशकस्तत्सितोः ।
वारेशादिह पञ्चमादित अयं खण्डान्तमेंशे भवेत् ॥" ७ ॥

शनि का अंश 'गुलिक' होता है। रात्रि में प्रथम खण्ड का स्वामी वारेश से पञ्चम ग्रह होता है। तथा पञ्चमेश से अग्रिम ग्रह अग्रिम खण्डों के स्वामी होते हैं। मान्दि और गुलिक बहुत अशुभ माने जाते हैं। मान्दि से लग्नशुद्धि का भी ज्ञान किया जाता है।

अनिष्ट ग्रहों के निवारणार्थ रत्न

वज्रं शुक्रेऽब्जे सुमुक्ता प्रवालं भौमेऽगौ गोमेदमार्की सुनीलम् ।
केतौ वैदूर्यं गुरौ पुष्पकं ज्ञे पाचिः प्राङ्माणिक्यमर्के तु मध्यमे[1] ॥ ८ ॥

अनिष्ट ग्रहों की शान्ति के लिए नवरत्न की अंगूठी धारण करनी चाहिये। अंगूठी में रत्नों का स्थापन इस प्रकार करना चाहिये–पूर्व में हीरा, अग्नि कोण में मोती, दक्षिण में मूंगा, नैर्ऋत्य में गोमेद, पश्चिम में नीलम, वायव्य में वैदूर्य, उत्तर में पुखराज, तथा ईशान में पन्ना। स्पष्टार्थ चक्र देखें–

उ.

प.	वैदूर्य	पुष्पक (पुखराज)	पन्ना	पू.
	नीलम	माणिक्य	हीरा	
	गोमेद	मूंगा	मोती	

द.

ग्रहों के रत्न—

माणिक्यमुक्ताफलविद्रुमाणि गारुत्मकं पुष्पकवज्रनीलम् ।
गोमेदवैदूर्यकमर्कतः स्युः रत्नान्यथो ज्ञस्य मुदे सुवर्णम्[2] ॥ ९ ॥

सूर्य के लिए माणिक्य, चन्द्र के लिए मोती, मंगल के लिए मूंगा, बुध के लिए गारुत्मक (पन्ना), गुरु के लिए पुखराज, शुक्र के लिए हीरा, शनि के लिए नीलम, राहु के लिए गोमेद तथा केतु के लिए वैदूर्य (लहसुनियां) धारण करना चाहिये। बुध की प्रसन्नता हेतु केवल सोना भी धारण कर सकते हैं।

इन महर्घ रत्नों के स्थान पर अल्प मूल्य के रत्न तथा काष्ठ-औषधियों को भी धारण करने का विधान है सौविध्य हेतु उन औषधियों एवं रत्नों की सूची ग्रहों के साथ निम्नलिखित है—

१. २. मु. चि. पी. प्र.

ग्रह	रत्न	धातु	काष्ठ औषधि
सूर्य	मूंगा	सोना	बेंत
चन्द्र	चांदी	चांदी	खिरनी
मंगल	मूंगा	तांबा	नागजिह्वा
बुध	सोना	सोना	विधायरा
गुरु	मोती	सोना	भारङ्गी
शुक्र	चांदी	सोना	अरण्डी या बायष्टी
शनि	लोहा	सोना	बिच्छू या वच्छोल
राहु	लाजावर्त्त	सोना	चन्दन
केतु	लाजावर्त	सोना	अश्वगन्धा

ग्रहशान्त्यर्थ स्नान

लाजा-कुष्ठबला-पियङ्गुघन-सिद्धार्थनिशादारुभिः ।
पुन्ना-लोध्रयुतैर्जलैर्निगदितं स्नानं ग्रहोत्थापहृत्[1] ॥ १० ॥

लाजवन्ती, कूठ, बला, (बरियारा), मालकांगनी, मोथा, सरसो, हल्दी, दारुहल्दी, सरपुन्ना, तथा लोध । इन सभी औषधियों को जल में मिलाकर स्नान करने से भी ग्रहजन्य विकार नष्ट होते हैं

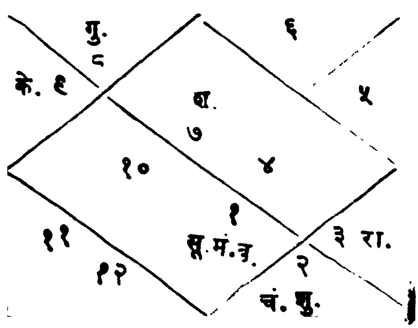
१. बृ. चि. सो. प्र. १५

फल-निर्देश सम्बन्धी आवश्यक विषय

जन्मचक्र में बारह भाव होते हैं। १. तनु, २. धन, ३. सहज, ४. सुहृद, ५. सुत, ६. रिपु, ७. जाया, ८. मृत्यु, ९. धर्म, १०. कर्म, ११. आय, १२. व्यय। इन बारह भावों में मनुष्य के जीवन से सम्बन्धित सभी विषयों का विवेचन किया गया है। इन बारह भावों का सम्बन्ध १२ राशियों से है जो लग्न के रूप में ग्रहण की जाती हैं।[1] जिस लग्न में जन्म हो उस लग्न की क्रमसंख्या को जन्माङ्ग चक्र के प्रथम भाव में रख कर वामक्रम से अग्रिम राशियों की संख्याओं को लिखना चाहिये। पञ्चाङ्ग में स्थित ग्रहों के आधार पर जन्मकालिक ग्रहों के राश्यादि मान निकाल कर जिस राशि पर जो ग्रह स्थित हों जन्मचक्र के अन्तर्गत उसी राशि में उन ग्रहों का स्थापन करने से जन्मचक्र का निर्माण होता है। जिस भाव में जो राशि होती है उस राशि का स्वामी-ग्रह उस भाव का स्वामी होता है।

यथा—जन्मलग्न ६।८।१० सूर्य ०।१।३७ चन्द्र १।१।४१ भौम ०।१२।४२ बुध ०।१७।४४ गुरु ७।२२।३३ शुक्र १।११।३५ शनि ६।२।४७ राहु २।८।३१ केतु ८।८।३१

जन्माङ्ग चक्र



तुला लग्न में जन्म होने से प्रथम भाव में तुला (७) को स्थापित किया गया। अनन्तर सभी ग्रहों को अपनी-अपनी राशि में स्थापित कर जन्माङ्ग चक्र का निर्माण किया।

---

१. लग्न और राशि में थोड़ा-सा सैद्धान्तिक अन्तर है। राशि-चक्र के १२ भागों

लग्न (तनु भाव) में तुला लग्न है अतः तुला का स्वामी शुक्र लग्न या प्रथम भाव (तनु) का स्वामी होगा। इसी प्रकार अन्य भावों के स्वामियों को भी समझना चाहिये। सरलता हेतु राशियों के स्वामी, उच्च, नीच और मूलत्रिकोण राशियों की तालिका निम्न लिखित है।

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु
राशि स्वक्षेत्र	सि. ५	क. ४	मे. १ वृ. ८	मि. ३ क. ६	ध. ९ मी.१२	वृ. २ तु. ७	म.१० कु.११	क. ६	मी. १२
उच्च राशि	मे.	वृष	म.	क.	वर्क	मी.	तु.	मि.	ध.
अंश	१०	३	२८	१५	५	२७	२०	१५	१५
नीच राशि	तु. १०°	वृ. ३°	क. २८°	मी. १५°	म. ५°	क. २७	मे. २०	ध. १५	मि. १५
मूल त्रिकोण	सि.	वृ.	मे.	क.	ध.	तु.	कु.	कु.	सि.

दृष्टि—

सभी ग्रह अपने स्थान से सातवें भाव को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं। सप्तम भाव के अतिरिक्त मंगल चौथे और आठवें भाव को, गुरु पाँचवें और नवम भाव को तथा शनि तीसरे एवं दशम भाव को भी पूर्ण दृष्टि से देखता है।[1] शेष ग्रहों की इन स्थानों पर आंशिक दृष्टि होती है। यथा—

३ और १० भाव को एक पाद ¼ दृष्टि से

५ और ९ भाव को द्विपाद ½ दृष्टि से

४ और ८ भाव को तीन पाद ¾ दृष्टि से ग्रह देखते हैं।

में चन्द्रमा के भोग-काल (जब तक चन्द्रमा एक राशि पर होता है तब तक के काल) को राशि कहते हैं। चन्द्रमा एक राशि में लगभग २¼ दिन रहता है। पूर्व क्षितिज पर बारह राशियों के दैनिक उदय-काल को लग्न कहते हैं। एक लग्न का समय लगभग २ घण्टे का होता है।

१. पश्यन्ति सप्तमं सर्वे शनिजीवकुजाः पुनः।
विशेषतश्च त्रिदशत्रिकोणचतुरष्टमान् ॥ ल. पा.

ताजिक शास्त्र में दृष्टियों का विवेचन इस प्रकार किया गया है—

दृष्टिः स्यान्नवपञ्चमे बलवती प्रत्यक्षतः स्नेहदा
पादोनाऽखिलकार्यसाधनकरी मेलापकाख्योच्यते।
गुप्तस्नेहकरी तृतीयनवमे कार्यस्य संसिद्धिदा
अंशोना कथिता तृतीयभवने षड्भागदृष्टिर्भवे॥
दृष्टिः पादमिता चतुर्थदशमे गुप्तारिभावा स्मृता
अन्योन्य सप्तमभे तथैकभवने प्रत्यक्षवैराखिला।
दुष्टं दृक् त्रितयं क्षुताह्वयमिद कार्यस्य विध्वंसदं
सङ्ग्रामादिकलिप्रदं दृश इमाः स्युर्द्वादशांशान्तरे॥[1]

ग्रहों की अपने स्थान से नवम, पञ्चमभाव में ४५ कला की दृष्टि प्रत्यक्ष रूप से स्नेह देनेवाली तथा कार्यों को सिद्ध करनेवाली होती है। तृतीय स्थान की दृष्टि गुप्तरूप से स्नेह करने वाली ४० कला होती है। ग्यारहवें स्थान में १० कला की शुभ दृष्टि होती है।

चतुर्थ और दशम भाव मे गुप्तरूप से शत्रुता करनेवाली १५ कला की, सप्तमस्थानमें पूर्ण ६० कला की प्रत्यक्ष शत्रुता करनेवाली दृष्टि होती है। इन तीनों स्थानों की दृष्टि अशुभ एवं कार्यों का नाश करनेवाली होती है।

कारक ग्रह—प्रत्येक भाव के कारक ग्रह पृथक्-पृथक् होते हैं। किसी भी भाव से सम्बन्धित परिणाम जानने के लिए भाव, भाव का स्वामी ग्रह तथा भाव का कारक ग्रह विचारणीय होता है। यथा–सन्तान का विचार करना है तो लग्न से पञ्चम भाव (सन्तान) को देखेंगे उसपर किसकी दृष्टि है, किस ग्रह का योग है, तथा पञ्चमेश किस भाव में किस अवस्था में है। इसी प्रकार पञ्चम भाव के कारक ग्रह बृहस्पति से भी पञ्चम स्थान को सन्तान भाव मानकर उस भाव से भी विचार करेंगे।

प्रत्येक भाव के कारक ग्रह इस प्रकार हैं—

भाव	कारक ग्रह	भाव	कारक ग्रह
तनु (लग्न) (१)	सूर्य	सहज (३)	मंगल
धन (२)	गुरु	सुहृद् (४)	चन्द्र, बुध

1. ताजिक नीलकण्ठी १. ६. १०

भाव	कारक ग्रह	भाव	कारक ग्रह
सुत (५)	गुरु	धर्म (९)	सूर्य, गुरु
रिपु (६)	मंगल, शनि	कर्म (१०)	बुध, सूर्य, गुरु, शनि
जाया (७)	शुक्र	आय (११)	गुरु
मृत्यु (८)	शनि	व्यय (१२)	शनि

फलादेश विधि—भाव, भावेश और कारक ग्रहों की स्थिति, दृष्टि एवं युति के अनुसार शुभाशुभ परिणाम होते हैं। एक सामान्य नियम है कि जो भाव अपने स्वामी-ग्रह से या शुभ-ग्रह से युक्त अथवा दृष्ट होगा वह भाव शुभ एवं भाव से सम्बन्धित फल भी उत्तम एवं अनुकूल होगा। इसी प्रकार जिस भाव का स्वामी अशुभ ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो उससे सम्बन्धित भाव का अशुभफल होता है। भावेश त्रिक में हो अथवा त्रिक का स्वामी अभीष्ट भाव में गया हो, शुभ ग्रहों से दृष्ट-युत न हो तो उस भाव से सम्बन्धित परिणाम को अशुभ कर देता है।

यथा—शारीरिक अवस्था के सम्बन्ध में जानना है। जन्म-चक्र में शरीर का स्थान प्रथम भाव है। यदि जन्मलग्न का स्वामी त्रिक (६, ८, १२) में गया हो उसपर पाप ग्रहों की दृष्टि हो। अथवा ६, ८, १२ स्थानों के स्वामी-ग्रह लग्न में स्थित हों तो जातक व्याधियों से युक्त होकर विविध प्रकार के कष्टों को झेलता है। यदि लग्नेश लग्न में हो अथवा शुभ-ग्रह लग्न में हो और लग्नेश शुभ ग्रहों की राशि में स्थित हो तो शारीरिक सुख प्राप्त होता है।

इसी प्रकार सभी भावों के सम्बन्ध में विचार करना चाहिये। इस सामान्य नियम के अतिरिक्त कुछ विशेष योग भी होते हैं जिनका विस्तृत विवेचन इस ग्रन्थ में किया गया है। उन विषयों के अवलोकन से फलादेश का अभ्यास हो सकता है। फलादेश करते समय ग्रहों के पारस्परिक सम्बन्ध, प्रकृति तथा सम्बद्ध राशियों की प्रकृति एवं स्वरूप का ध्यान अवश्य रखना चाहिये।

आवश्यक पारिभाषिक शब्द—

केन्द्र — १, ४, ७, १० भाव (इन भावों को कण्टक और चतुष्टय भी कहा जाता है।)

त्रिकोण – ५, ९ भाव, (कुछ मतों के अनुसार त्रिकोण १, ५, ९ भावों से होता है।)

त्रिक	–	६,	८,	१२	भाव
त्रिषडाय	–	३,	६,	११	भाव
पणफर	– २,	५,	८,	११	भाव
आपोक्लिम	– ३,	६,	९,	१२	भाव
उपचय	– ३,	६,	१०,	११	भाव

नो संक्षिप्तं न च बहु वृथा विस्तरं शास्त्र तत्त्वम् ॥